कृषि भूमि उपयोग, पोषण स्तर एवं मानव स्वास्थ्य

(जनपद इटावा, उ० प्र० के विशेष सन्दर्भ में)

भूगोल विषय में

पी-एच० डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

पर्यवेक्षक

डा० आर० एस० त्रिपाठी

रीडर, भूगोल विभाग

अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज, अतर्रा (बांदा)

शोधकर्ता

कोतवाल सिंह भदौरिया

अध्यक्ष, भूगोल विभाग

जनता महाविद्यालय, अजीतमल (इटावा)
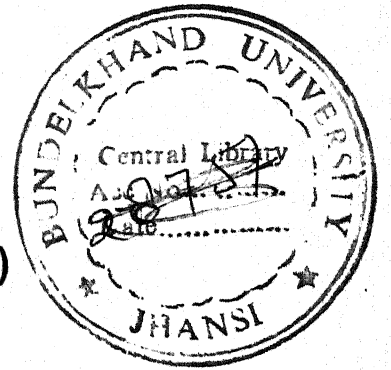
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी

१९९८

पूज्यनीय
पिता जी
एवं
माता जी
को
सादर समर्पित
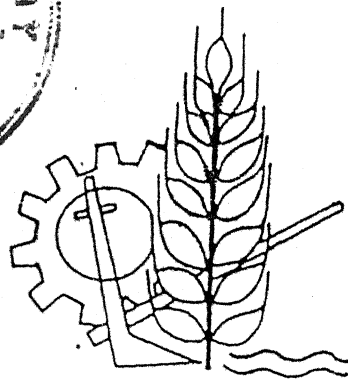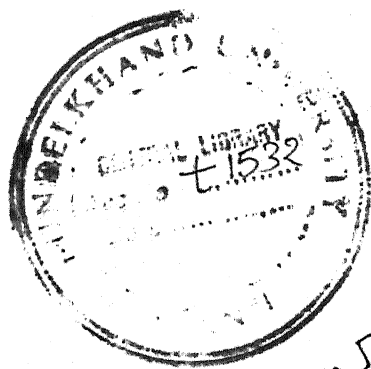
डा0 आर0 एस0 त्रिपाठी
एम.ए., पी-एच.डी.

भूगोल विभाग
अतर्रा पोस्टग्रेजुएट कालेज अतर्रा,
(बांदा)

प्रमाण पत्र

****

प्रमाणित किया जाता है कि **श्री कोतवाल सिंह भदौरिया** ने मेरे निर्देशन में **"कृषि भूमि उपयोग पोषण स्तर एवं मानव स्वास्थ्य"** (जनपद--इटावा, उ0प्र0 के विशेष सन्दर्भ में) शीर्षक पर पी-एच0डी0 उपाधि हेतु शोध कार्य किया है। **श्री भदौरिया** ने अभीष्ट समयावधि की उपस्थिति के उपरान्त शोध ग्रन्थ स्वयं सम्पन्न किया है और यह इनकी मौलिक कृति है ।

मैं **श्री भदौरिया** के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

R.S. Tripathi

(आर0 एस0 त्रिपाठी)
भूगोल विभाग, अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज,
अतर्रा, (बांदा)

आभार

प्रस्तुत शोध कार्य "कृषि भूमि उपयोग, पोषण स्तर एवं मानव स्वास्थ्य" मूल रूप से पिछड़े एवं ग्रामीण अंचल की ज्वलन्त समस्याओं को रेखांकित करने की दिशा में किया गया अकिंचन प्रयास है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के पर्यवेक्षक डा0 आर0एस0 त्रिपाठी, रीडर भूगोल विभाग, अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज, अतर्रा (बांदा) का आभार शब्दों में व्यक्त करना मेरे लिये असम्भव सा है। उनके अनवरत प्रोत्साहन, सुस्पष्ट मार्गदर्शन, शोध सम्बन्धी जटिलताओं का सूक्ष्म विश्लेषण एवं सम्यक निराकरण आदि के अभाव में यह कार्य पूर्णता को प्राप्त न कर पता। मैं श्रद्धेय डा0 त्रिपाठी का हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

इस प्रसंग में परम श्रद्धेय स्व0 डा0 एल0 के0 एस0 चौधरी, अध्यक्ष, भूगोल विभाग, वी0 एस0 एस0 डी0 कालेज कानपुर एवं स्व0 डा0 जे0 पी0 सक्सेना, अध्यक्ष, भूगोल विभाग, एम0 एल0वी0 शासकीय महाविद्यालय, ग्वालियर (म0प्र0) का स्मरण मेरे लिए अपरिहार्य है, जिनकी अविरल प्रेरणा एवं सतत् आशीर्वाद के द्वारा ही प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से मेरे मस्तिष्क में शोधात्मक अभिरुचियों का अंकुरण सम्भव हुआ और प्रस्तुत शोध प्रबन्ध उन्हीं अभिरुचियों की स्वाभाविक परिणति है।

शोध प्रबन्ध के प्रेरणाश्रोत डा0 आर0 वी0 वर्मा, अवकाश प्राप्त, रीडर, भूगोल विभाग, वी0 एस0 एस0 डी0 कालेज कानपुर, डा0 आर0 वी0 सिंह भदौरिया, रीडर, अर्थशास्त्र विभाग, अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कालेज अतर्रा (बांदा) एवं डा0 एल0 एस0 चौहान, अध्यक्ष, शस्य विज्ञान विभाग, जनता महाविद्यालय, अीजतमल (इटावा) का हृदय से आभारी हूँ जिनके सहयोग एवं प्रोत्साहन से इस शोध कार्य को सम्पन्न करने में सफल हुआ।

डा0 आर0 के0 कटियार, अध्यक्ष, भूगोल विभाग, वद्रीविशाल डिग्री कालेज, फर्रुखाबाद, डा0 पी0एन0 शुक्ला, अवकाश प्राप्त, अध्यक्ष भूगोल विभाग, तिलक डिग्री कालेज औरैया, डा0 रामपाल सिंह, रीडर, भूगोल विभाग, वी0 एस0 एस0 डी0 कालेज कानपुर, स्व0 प्रो0 वारीश कुमार राठौर, भूगोल विभाग, जनता महाविद्यालय एवं ज0 म0 वि0 अजीतमल के सभी विभागीय सदस्यों का भी हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने शोध कार्य में अत्यन्त महत्वपूर्ण शोध सामग्री के संकलन में अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया। समय–समय पर उनसे हुए गवेषणात्मक विमर्श शोध के निष्कर्षों को खोजने में बहुत उपयोगी सिद्ध हुए।

मैं अपने भतीजे चि0 वीरेश सिंह भदौरिया, शोध छात्र, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर का भी उल्लेख यहां आवश्यक समझता हूँ जिन्होंने अपने अथक परिश्रम के द्वारा शोध

प्रबन्ध के टंकण आदि की व्यवस्था कर मुझे इस कार्य के सम्पादन में पूर्ण सहयोग दिया। इसके अतिरिक्त मैं अपने अपने अनुज डा0 आर0 बी0 सिंह भदौरिया के परिवार के सहयोग की भी हृदय से सराहना करता हूँ। उनके प्रति धन्यवाद ज्ञापन तो मात्र औपचारिकता है। मैं अपनी पत्नी श्रीमती कमला भदौरिया एवं अपनी पुत्रियों के प्रति भी प्रशंसा एवं स्नेह व्यक्त करना आवश्यक समझता हूँ जिन्होंने मुझे पारिवारिक दायित्वों से मुक्त रखते हुए अपना महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया।

इसके अतिरिक्त इस कार्य को सम्पन्न करने में शोधकर्ता को जिन विविध श्रोतों से सहयोग एवं स्नेह प्राप्त हुआ, ऐसे सभी प्रशासकीय विभागों से सम्बन्धित अधिकारियों एवं कर्मचारियों का हृदय से धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ, विशेष रूप से जिला सांख्याधिकारी, जनपद इटावा एवं सभी विकास खण्ड अधिकारी तथा चयनित ग्रामों के पंचायत प्रधानों का आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने विषय वस्तु सम्बन्धी आंकड़े, सूचनाएं एवं साहित्य संकलन में अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया।

अन्त में शोध प्रबन्ध के आकर्षक एवं सुस्पष्ट टंकण हेतु मैं श्री अशोक कुमार कटियार, टाइपिस्ट, कार्यालय अधिष्ठाता, कृषि संकाय, चन्द्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, कानपुर का आभार व्यक्त करता हूँ।

K.S. Bhadauria

(के0 एस0 भदौरिया)
अध्यक्ष, भूगोल विभाग,
जनता महाविद्यालय, अजीतमल
(इटावा)

दिनांक :

विषय सूची

मानचित्र सूची

प्रस्तावना

प्रस्तावना

भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए कृषि का विशेष महत्व है। यह मनुष्य का अतिप्राचीन व्यवसाय है, यद्यपि इसका ढंग और इसकी प्रणालियां समय -समय पर बदलती रही हैं। कृषि का उपभोग मानव के लिए खाद्य, वस्त्र, तथा गृह निर्माण का साधन मात्र ही नहीं प्रदान करता, अपितु यह आवासीय विकास उद्योग, और व्यापार का भी उद्‌बोधक है। पृथ्वी की सतह कृषि एवं खाद्यान्न उत्पादन का प्रमुख स्थल है जिस पर मानव का भरण पोषण निर्भर करता है, इसीलिए मनुष्य अनादि काल से धरती की पुजा करता आ रहा है । वास्तव में यह मनुष्य के आर्थिक विकास की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करती है। यह उसके सामाजिक, सांस्कृतिक एवं सर्वांगीण विकास की जननी है ।

पृथ्वी का सम्पूर्ण धरातल कृषि योग्य नही है और न सम्पूर्ण धरातल को कृषि योग्य बनाया ही जा सकता है, क्योंकि इसका एक बड़ा भाग समुद्र जल, जलाशय, पर्वत, पठार, मरूभूमि, दलदल, तथा जंगल आदि से आच्छादित है। कृषि के लिए तो धरातल का केवल वही भाग उपयोगी है जो किसी न किसी रूप में उपजाऊ है । मानवीय प्रयासों ने अयोग्य भूमि का एक भाग कृषि योग्य बनाया भी है परन्तु अभी भी उसका अधिकांश भाग कृषि की दृष्टि से अनुपयुक्त ही है। अतः मनुष्य को सीमित कृषि योग्य भूमि से ही अपने भरण पोषण के लिए पर्याप्त साधन जुटाना पड़ता है,यही उसके अनेक उद्यमों का स्रोत भी है । इन उददेश्यों की सफलता भूमि के समुचित उपयोग, उसकी उत्पादन क्षमता, उससे प्राप्त उपलब्धियों तथा अन्य लाभों पर निर्भर है। तात्पर्य यह है कि भूमि संसाधनों के यथा सम्भव अधिकतम उपयोग तथा उनके नियोजन द्वारा ही मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति सम्भव है।[1] यद्यपि भूमि संसाधन में भारत एक समृद्ध देश है तथापि उसे विकसित करने की अब भी आवश्यकता है । इसीलिए भूमि उपयोग की योजनाओं को अधिक महत्व देना आवश्यक हो गया है ।

वास्तव में कृषि भूमि अनेक देशों के आर्थिक विकास का प्रमुख आधार है, परन्तु जहां कहीं कृषि योग्य भूमि अधिक है वहां तो इसका महत्व और भी बढ़ जाता है, भारत एक ऐसा ही देश है परन्तु आश्चर्य तो यह है कि भारत जैसे कृषि प्रधान देश को भी कभी-कभी खाद्यान्न संकट का सामना करना पड़ता है । भारत सरकार द्वारा आमंत्रित -फोर्ड फाउण्डेशन कृषि उत्पादन दल' ने सन 1959 में अपने अन्तिम प्रतिवेदन में जो उसने सम्पूर्ण देश का भ्रमण करने के उपरान्त तैयार किया था, उसमें उसने कृषि भूमि उपयोग में ह्रास को भारतीय खाद्य संकट का प्रमुख कारण बताया था।[2] तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या, जीवन स्तर का क्रमिक उत्थान, आवश्यकताओं का बदलता हुआ स्वरूप, पौधों और जैविक पदार्थों के औद्योगिक उपयोग में अप्रत्याशित वृद्धि, खाद्यान्न, ' तथा अन्य कृषि उपजों के बीच भूमि उपयोग में उत्पन्न होने वाली प्रतिस्पर्धा, नागरिक एवं औद्योगिक विकास में प्रगति तथा यातायात मार्गों का विस्तार आदि कृषि भूमि का अभाव उत्पन्न करते जा रहे हैं किन्तु तकनीकी परिवर्तनों से उत्पादन में वृद्धि की जा रही है। अतः जनसंख्या में निरंतर वृद्धि होने के बाद भी खाद्यान्न के अभाव को कुछ हद तक रोका जा सका है । किन्तु वास्तविकता यह है कि भोजन, कपड़ा, गृह और ईंधन जैसी समस्याएं सर्वथा विद्यमान रहेगी क्यों कि जनसंख्या की अनियन्त्रित एवं अप्रत्याशित वृद्धि को देखते हुए, कृषि साधनों के विकास से इन समस्याओं का आंशिक समाधान ही सम्भव है, किन्तु इसके लिए हमें प्रयत्नशील रहना अत्यन्त आवश्यक है ।

भारत जैसे विशाल भू भाग वाले देश में कृषि भूमि के समुचित उपयोग से ही राष्ट्रीय समृद्धि तथा व्यक्तिगत विकास सम्भव है। इन उददेश्यों की पूर्ति हेतु भूमि की क्षमता, उर्वरता, तथा उसके समुचित उपयोग का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि ऐसे अध्ययनों से ही भूमि उपयोग सम्बन्धी तथ्यों का ज्ञान प्राप्त होता है जिनके आधार पर कृषि भूमि नियोजन सम्बन्धी योजनाएं बनाई जा सकती हैं। हमारे देश में कृषि भूमि उपयोग से सम्बन्धित जो भी तथ्यात्मक ज्ञान अभी तक प्राप्त हुआ है, वह राष्ट्रीय कृषि नीति निर्धारण में अपूर्ण एवं अपर्याप्त सिद्ध हुआ है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह स्पष्ट रूप से कहा गया था कि 'भूमि उपयोग और वर्तमान फसल उत्पादनों में सुधार के विस्तृत उददेश्यों के लिए देश में मृदा एवं भूमि उपयोग

सर्वेक्षण सर्वाधिक आवश्यक है।"[3] फिर भी इस योजना ने इस सम्बन्ध में न तो कोई कार्यविधि प्रस्तुत की और न किसी प्रायोगिक स्वरूप का ही विश्लेषण किया । दूसरी योजना के अन्तर्गत मार्च 1958 में केन्द्रीय मृदा सर्वेक्षण परिषद ने भारत में मृदा और भूमि उपयोग सर्वेक्षण हेतु एक योजना प्रारम्भ की जिसके संचालन हेतु नागपुर, कलकत्ता, बंगलौर, और दिल्ली में क्षेत्रीय केन्द्र स्थापित किए गये जो मृदा सर्वेक्षण अधिकारियों के देखरेख में कार्य करने लगे । 1960-61 में 120 लाख एकड़ भूमि का सर्वेक्षण भी किया गया जिसमें 20 लाख एकड़ भूमि नदी घाटी योजनाओं के क्षेत्र में थी। द्वितीय योजना के अन्त तक इस प्रकार के सवेक्षणों के अन्तर्गत क्षेत्रफल बढ़ाकर 2000 लाख एकड़ हो गया । तृतीय पंचवर्षीय योजना की रचना के समय भूमि उपयोग की जिस योजना का विश्लेषण किया गया था वह मुख्यतः भूमि उपयोग के दोषपूर्ण समायोजनों के निर्धारण और निराकरण की दिशा में ही किया गया जिसमें कृषित भूमि जंगल, और चारागाह ही सम्मिलित थे। परन्तु सर्वेक्षण पर आधारित विस्तृत आकडों के अभाव में यह केवल भूमि उपयोग के असन्तुलन के कुछ वृहद क्षेत्रों का ही निर्धारण एवं निराकरण इंगित कर सकता था । चतुर्थ पंचवर्षीय योजना की अवधि में 390 लाख एकड़ भूमि को खाद्यान्नों की अधिक उपजाऊ किस्म के बीजों द्वारा बोने का और 250 लाख एकड़ भूमि को बहुफसली योजना के अन्तर्गत लाने का लक्ष्य प्रस्तावित किया गया था जिसमें पर्याप्त सफलता भी मिली। पांचवी योजना में 131 लाख हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि को सिंचाई के अधीन लाने का प्रस्ताव किया गया था जिसमें इस लक्ष्य की अधिकांश पूर्ति की गई। सन 1980 तक भूमि सुधार के रूप में लगभग 4.5 लाख हेक्टेयर भूमि की चकबन्दी भी की गई। पांचवीं योजना की तुलना में छठी योजना में कृषि एवं सम्बन्धित कार्यक्रमों में ढाई गुना और सिंचाई तथा बाढ़ नियंत्रण पर लगभग साढ़े तीन गुना व्यय बढाने का प्रस्ताव किया गया । छठी योजना के अन्तर्गत सरकार ने बढती हुई जनसंख्या के भरण पोषण के लिये सघन कृषि हेतु अधिक उपज देने वाली किस्मों तथा नवीनतम उत्पादन तकनीकों की जानकारी के लिए अनेक प्रोग्राम संचालित किए गये जिनमें मृदा संरक्षण की व्यवस्था, उर्वरक की प्रचुरता, उत्तम बीजों की उपलब्धि, कृषक सेवा संस्थाओं, की वृद्धि, कृषि अनुसंधान-शालाओं एवं शिक्षण प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थापना आदि प्रमुख हैं ।

सातवीं योजना में कृषि विकास के लिए अधिक तीव्र दर का लक्ष्य रखा गया ताकि बढ़े हुए उपभोग स्तर पर खाद्यान्न और खाद्य तेलों की मांग पूरी की जा सके और इनमें आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली जाये। अब कृषि नीति सामाजिक न्याय के साथ उत्पादन बढाने के अतिरिक्त पर्यावरण संरक्षण के प्रति भी सजग हो गई क्योंकि भूमि और जल संसाधन को प्रदूषण से बचाना आवश्यक हो गया । सांतवी योजना में कृषि विकास नीति में निम्नलिखित प्रमुख तत्व रहे हैं -

1. हरित क्रान्ति का नवीन क्षेत्रों में प्रसार तथा पूर्वी क्षेत्र में धान उत्पादन और शुष्क कृषि क्षेत्रों में कृषि के सुधार के विशेष प्रयास करना ।
2. जोत सीमा बन्दी कानूनों को अधिक तत्परता से लागू करना तथा नवीन सिंचित क्षेत्र में तत्परता से और अधिक वृद्धि करना ।
3. शुष्क कृषि क्षेत्रों में उत्पादकता बढाने तथा लघु एवं सीमान्त कृषकों को दलहन और तिलहन उत्पादन के लिए प्रोत्साहित करना ।
4. अधिक उपजाऊ किस्मों के अन्तर्गत क्षेत्र बढ़ाना, रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग में वृद्धि, फसलों की बीमारियों की रोकथाम तथा कृषि प्रसार कार्यक्रम को बढावा देना ।
5. सिंचाई सुविधा के प्रसार पर जोर तथा पहले से चल रही सिंचाई योजनाओं को वरीयता के आधार पर पूरा करना ।

जुलाई 1991 में नई औद्योगिक नीति की घोषणा के बाद कृषि जैसे विशाल क्षेत्र के लिए कोई राष्ट्रीय नीति न हो तो अर्थव्यवस्था में भारी शून्यता का अनुभव होता है क्योंकि कृषि राष्ट्र का गौरव ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की प्राण वायु भी है । इसी को मद्देनजर कर कृषि मंत्री डॉ0 बलराम जाखड़ ने राष्ट्रीय कृषि नीति का मसौदा तैयार किया जिसे कुछ संशोधन के बाद केन्द्रीय मंत्रिमण्डल ने स्वीकृति दे दी । इस मसौदे में दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य में कृषि क्षेत्र के लिए नीतिगत प्रयासों की रूपरेखा प्रस्तुत की गई, इसमें इस बात के संकेत हैं कि यह नीति सैद्धान्तिक आदर्शों के बजाय वास्तविकताओं पर आधारित है । कृषि नीति में कुल 14

मसौदे हैं। ये मसौदे कृषि के विभिन्न अवयवों से सम्बन्धित हैं जैसे भू स्वामित्व, विपणन, भण्डारण, कृषि में निवेश, उत्पादन और उत्पादकता, उन्नत बीज, सहकारी संस्थाओं को पुनर्जीवित करना, कृषि अनुसंधान, कृषि मशीनरी, फसल बीमा, उत्पादों का प्रसंस्करण, कृषि का औद्योगीकरण, जल संसाधन तथा कृषि का विविधीकरण आदि । जिन मसौदों से कृषक तथा कृषि लाभान्वित होगी उनमें दो अत्यन्त महत्वपूर्ण है - प्रथम मसौदे का सम्बन्ध फसल तथा पशुधन बीमा योजना से और दूसरे का सम्बन्ध 'कृषि को उद्योग का दर्जा' देने से हैं। उक्त दोनों मसौदों के अतिरिक्त नयी कृषि नीति में दो बिन्दुओं पर विशेष ध्यान दिया गया है ये हैं - (1) बढ़ती हुई आबादी के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु कृषि उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि करना (2) उन क्षेत्रों का विकास करना जिनकी क्षमता का दोहन अभी तक नहीं किया जा सका है ।

स्वतंत्रता के बाद खाद्यान्नों के उत्पादन में सराहनीय प्रगति के बावजूद भी भारत में प्रति व्यक्ति दैनिक उपलब्धता 475 ग्रा0 ही थी जबकि 600 ग्राम पौष्टिकता का माप चलाऊ स्तर पर माना जाता है । यदि पिछले बीस वर्षों का औसत देखे तो प्रति व्यक्ति खाद्यान्नों की उपलब्धता लगभग 450 ग्राम है । यदि हम हर भारतीय को औसतन 500 ग्राम खाद्यान्न भी न दे सके तो कृषि क्षेत्र में हमारी उपलब्धि का कोई अर्थ नहीं है । 1980-81 और 1988-89 के मध्य कृषि में प्रयुक्त आदान की उत्पादकता के सूचकांक में 1.6 प्रतिशत का ह्रास हुआ है। राष्ट्रीय कृषि आयोग ने अनुमान लगाया है कि वर्ष 2000ई0 तक खाद्यान्नों की मांग 22 करोड़ 50लाख टन होगी । यदि खाद्यान्नों की उत्पादकता इसी तरह घटती रही और बीच में कभी बाढ़ या सूखा आ गया तो देशवासियों की खाद्यान्न की न्यूनतम आवश्यकता की पूर्ति कठिन हो जायेगी ऐसी स्थिति में न फसल बीमा योजना काम करेगी और न कृषि को उद्योग का दर्जा देने की नीति । हमें उन क्षेत्रों का विकास करना चाहिए जिनकी क्षमता का अभी तक पूर्णतया दोहन नहीं हुआ है, अनुमान है कि भारत में कृषि क्षमता का 40 प्रतिशत से अधिक का प्रयोग नहीं हो पाया है। लगभग 10 करोड़ हेक्टेयर भूमि गैर बंजर भूमि है । इसका प्रयोग करना अत्यावश्यक है।[4]

कृषि भूमि उपयोग को अधिक लाभप्रद बनाने के लिए शोधकर्ता के दृष्टिकोण से निम्नलिखित कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करना ही नहीं वास्तविकता का जामा पहनाना होगा -

1. मृदा सर्वेक्षण तथा मृदा संरक्षण ।
2. अधिकाधिक कृषकों को खेती की नयी तकनीक का ज्ञान कराकर लाभान्वित कराना ।
3. भूमिगत जल के वैज्ञानिक प्रयोग को बढावा देना ।
4. जल संसाधन के दुरूपयोग को रोकना ।
5. कृषकों को समुचित प्रशिक्षण प्रदान करना ।
6. मोटे अनाजों के क्षेत्रफल में विस्तार करना ।
7. दलहनी तथा तिलहनी फसलों का अधिक उत्पादन ।
8. मुद्रादायिनी फसलों का परम्परागत फसलों के साथ समायोजन ।
9. नहरों की सुरक्षा एवं उनके उचित प्रबन्ध की व्यवस्था करना ।
10. जैविक उर्वरकों के प्रयोग को प्रोत्साहन ।
11. पशुओं की नस्लों में सुधार ।
12. पशुओं के चारे के लिए फसलों के उत्पादन को प्रोत्साहन ।

1. अध्ययन की आवश्यकता -

भारत की अर्थव्यवस्था की बुनियादी समस्या आर्थिक विकास की आवश्यकता है। आर्थिक विकास से अभिप्राय है सर्वजन को उनकी न्यूनतम आवश्यकताओं को पूरा करने के साधन उपलब्ध कराना । इस स्वप्न को मूर्तरूप देने के लिए आवश्यक है कि उपलब्ध संसाधनों का कुशलतम उपयोग किया जाये । भारत एक कृषि प्रधान देश है जहां पर जनसंख्या के एक बड़े भाग की आवश्यकताओं को पूरा करने का दायित्व भूमि संसाधन पर निर्भर है । जनसंख्या की उत्तरोत्तर वृद्धि के फलस्वरूप प्रति व्यक्ति भू क्षेत्र में निरंतर ह्रास होता जा रहा है, दूसरी तरफ

निर्धनता व निम्न जीवन स्तर के फलस्वरूप जनसंख्या के एक बड़े भाग का पोषण स्तर अति निम्न है । एक अनुमान के अनुसार लगभग 40 प्रतिशत जनसंख्या भूख और कुपोषण जैसी समस्याओं का शिकार है तथा लगभग 30 प्रतिशत जनसंख्या के पास पर्याप्त भोजन नहीं है । कतिपय क्षेत्रों में उक्त समस्याएं अधिक उग्र रूप धारण कर चुकी है । कृषि भूमि की भू क्षरण, खारीपन, बीहडों का निर्माण, आदि अनेक समस्याओं से ग्रसित है । किसी देश की जनसंख्या तभी प्रगतिशील होती है जब उनका भरपूर पोषण होता है । अतः पोषण स्तर में सुधार लाने हेतु कृषि उत्पादन में वृद्धि करना आवश्यक हो जाता है जो दो ही विधियों द्वारा सम्भव है (क) कृषिगत क्षेत्र में वृद्धि करके (ख) वर्तमान कृषिगत क्षेत्र की उत्पादकता में वृद्धि करके । किसी भी विधि को अपनाने के लिए भूमि उपयोग का गहन अध्ययन आवश्यक हो जाता है, साथ ही जनसंख्या के सह सम्बन्ध के सन्दर्भ में भूमि उपयोग का अध्ययन करके भूमि संसाधन पर जनसंख्या भार का मूल्यांकन करना आवश्यक हो जाता है तभी कृषि विकास की ठोस योजना तैयार किया जाना सम्भव है ।

सामान्यतः यह देखा गया है कि विकसित देशों में शहरी क्षेत्र का प्रभुत्व बना रहता है जबकि आर्थिक दृष्टि से पिछडे देशों में ग्रामीण क्षेत्र प्रधान होता है । भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था की बागडोर ग्रामीण क्षेत्र को ही सभांलनीहोती है , इसी क्षेत्र में उन सब परिस्थितियों का निर्माण होता है जो सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को आगे बढाने में समर्थ होती है । इस पृष्ठभूमि में अगर देखा जाये तो अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा की अर्थव्यवस्था में ग्रामीण क्षेत्र की प्रधानता स्पष्ट होती है । अध्ययन क्षेत्र ने ग्रामीण समुदाय के प्रभुत्व की जानकारी तालिका 1.1 में दिए गये तथ्यों से स्पष्ट होती है ।

तालिका प्र0 - 1

अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण समुदाय की प्रधानता 1991

संकेतक	कुल	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण क्षेत्र की कुल में प्रतिशत भागीदारी
1. जनसंख्या	2124655	1790954	333701	84.29
2. कृषि कर्मकार	447381	430406	16975	96.21
3. अन्य कर्मकार	133560	65794	67766	49.26

क्रमशः

4. कुल श्रमशक्ति	580941	496200	84741	85.41
5. कुल शुद्ध उत्पाद (करोड़ रूपये) (1980-81 के भावों पर)	171.67	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध	—
6. कुल शुद्ध उत्पाद (करोड़ रूपये) (प्रचलित भावों पर)	318.15	298.91	22.24	93.95

स्रोतः- सांख्यिकी पत्रिका, जनपद इटावा, 1992 तथा 1993

तालिका प्र. 1 से अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण क्षेत्र के प्रभुत्व का आभास मिलता है जहां पर अभी भी 84 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या ग्रामीण है तथा श्रम शक्ति का 85 प्रतिशत से अधिक भाग ग्रामीण क्षेत्रों से प्राप्त होता है। अध्ययन क्षेत्र की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को दो उपक्षेत्रों में बांटा जा सकता है - (अ) कृषि क्षेत्र और (ब) गैर कृषि क्षेत्र । कृषि क्षेत्र में वे सभी व्यक्ति शमिल किए जाते हैं जिनके जीवन निर्वाह का साधन कृषि पर निर्भर है व गैर कृषि क्षेत्र में अन्य सभी ग्रामीण समुदाय को शमिल किया जाता है। अध्ययन क्षेत्र के इस ग्रामीण स्वरूप को तालिका 1.2 के माध्यम से स्पष्ट किया जा रहा है -

तालिका प्र0 - 2

ग्रामीण समाज का स्वरूप और उनकी साधन उपलब्धि

क्र	कृषि क्षेत्र	भूमि श्रम अनुपात	रोजगार का स्वरूप
	1. बड़े कृषक	भूमि > श्रम	प्रमुखतः नियोजक
	2. मध्यम कृषक	भूमि ≥ श्रम	अनियमित नियोजक
	3. लघु कृषक	भूमि ≧ श्रम	अनियमित श्रमिक
	4. सीमान्त कृषक	भूमि < श्रम	प्रमुखतः श्रमिक
	5. भूमिहीन श्रमिक	मात्र श्रम	पूर्णतः श्रमिक

ख - गैर कृषि क्षेत्र -

1. व्यापरी वर्ग

(अ) सामान्य वस्तुओं का व्यापार करने वाले

(ब) कृषि आदानों का व्यापार करने वाले

2. दशतकार

(अ) सामान्य सेवाएं उपलब्ध करवाने वाले

(ब) कृषि क्षेत्र की आवश्यकताएं पूरी करने वाले

तालिका प्र0 - 2 से स्पष्ट है कि ग्रामीण समुदाय में अनेक तरह के कार्य जुड़े हैं इनमें उत्पादन साधन के रूप में प्रधान साधन भूमि ही है । जिससे ग्रामीण समुदाय की न केवल उदरपूर्ति ही होती है बल्कि अन्य अनेक आधुनिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी होती है।

परम्परागत ग्रामीण समुदाय आत्म सम्पन्न और आत्म निर्भर रहे हैं, एक गांव या आसपास बसे कुछ गांव एक आर्थिक इकाई के रूप में रहते थे जिनका उस इकाई के बाहर किसी तरह का लेन देन नहीं होता था । जहां इस पिछड़े पन के कुछ लाभ भी थे तो कुछ नुकसान भी थे। गांव आर्थिक पिछड़ेपन तथा जड़ता में धंसते जा रहे थे । पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से इस स्थिति को बदलने के प्रयास किए गये हैं । इन प्रयासों के परिणाम स्वरूप भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अनेक तरह के परिवर्तन प्रकाश में आये हैं । ये परिवर्तन ग्रामीण जीवन के अनेक पहलुओं से सम्बन्धित हैं जैसे भू-सुधार, कृषि, पशुपालन, वित्त विपणन सेवाएं, ग्रामीण उद्योग, कल्याणकारी सेवाएं, ग्रामीण नेतृत्व, तथा ग्रामीण प्रशासन आदि। अनेक नये स्कूलों का खोला जाना, प्राथमिक चिकित्सा केन्द्रों की स्थापना, परिवार कल्याण एवं नियोजन सेवाओं का विस्तार, बहुउददेशीय स्वास्थ्य कर्मचारियों की बड़े पैमाने पर नियुक्ति और इन सबसे बढ़कर परिवहन संचार व आकाशवाणी तथा दूरदर्शन का विस्तार आदि अनेक ऐसी बातें है जिनसे ग्रामीण जीवन में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन आये हैं। इन सबके प्रभाव से ग्रामीण समुदाय का जो चित्र उभरकर सामने आया है उसकी विशेषताएं निम्नलिखित हैं -

1. कृषि का व्यवसायीकरण -

खेतीबाड़ी अथवा कृषि जो ग्रामीण समुदाय का प्रमुख व्यवसाय है अब मात्र जीवन निर्वाह का साधन नही रह गई हैं बल्कि इसे लाभ कमाने के साधन के रूप में देखा जा रहा है। इस क्रम को व्यवसायीकरण का नाम दिया जा रहा है। कृषि का व्यवसायीकरण, कृषि के बदलते हुए स्वरूप तथा इस क्षेत्र में हुए विकास का भी परिचायक है। आज किसान मात्र अपनी तथा अपने परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति के वास्ते ही फसलों का उत्पादन नहीं करता है, बल्कि किसान अब सोच समझकर उन फ़सलों को चुनता है जिन्हें बेचकर उसे अधिक धन प्राप्त होता है। व्यवसायीकरण के लिए जिम्मेदार प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं -

1. पिछले 40 वर्षों में कृषि के उत्पादन के तरीकों में महत्त्वपूर्ण सुधार हुए हैं, परिणामस्वरूप कृषि उत्पादकता पहले की तुलना में बहुत अधिक बढ़ चुकी है। अतः किसान भूमि को मात्र निर्वाह का साधन न मान उससे अधिक से अधिक आय प्राप्त करना चाहता है।
2. कृषि उत्पादन में सुधार के लिए उन्नत कृषि तकनीकी जिम्मेदार है जिसमें उन्नत किस्म के बीज, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाइयां, सिंचन सुविधाएं प्रमुख हैं। इस तकनीकी के प्रयोग के कारण फसलों की पकने की अवधि कम हो गई है साथ ही उन्नत कृषि आदानों को क्रय करने के लिए कृषक को नकद मुद्रा की आवश्यकता होती है। अतः आजकल कृषक जल्दी से जल्दी फसल बाजार में बेचने को तैयार रहता है ।
3. सड़कों और यातायात के साधनों के विकास के कारण गांवों से दूर स्थित शहरी मण्डियों में जाना भी सम्भव हो गया है।
4. नियंत्रित मण्डियों, सहकारिता तथा वाणिज्य बैंकों और अन्य सामाजिक संस्थाओं के विकास से यह भी सम्भव हो पाया है कि कृषक अपने आपको ग्रामीण साहूकारों की जंजीरों से कुछ हद तक मुक्त करवा सके है। इस मुक्त वातावरण में वह बाजार के लिए अधिक उत्पादन करने के लिए प्रेरित होता है।

5. कृषि के व्यवसायीकरण का वित्तीय संस्थाओं पर भी प्रभाव पड़ा है जहां एक ओर उनकी जिम्मेदारी बढ़ी है वहीं दूसरी ओर उन्हें आगे बढने और अपने कार्यक्षेत्र में विस्तार करने का अवसर मिला है। व्यवसायीकरण और वित्तीय संस्थाओं के विकास में एक सीधा प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है, एक के विकास के साथ दूसरे का विस्तार जुडा है, एक की भी शिथिलता दूसरे के लिए घातक सिद्ध हो सकती है।

2. ग्रामीण शहरीवाद -

पिछले चार दशकों के दौरान गाँवों में शहरी जीवन और शहरी तौर-तरीकों की घुसपैठ होती रही है जिससे ग्रामीण जीवन प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका है। विजातीयता, व्यक्तित्वहीन सम्बन्ध, व्यक्तिगत स्वार्थ, विषयपरकता, व्यावहारिकता, आदि से कुछ समय पहले तक ग्रामीण जीवन इन सब बातों से अलग और दूर था, किन्तु इनका रंग ग्रामीण जीवन पर धीरे-धीरे चढ़ता जा रहा है और आज की पीढ़ी बहुत कुछ इसी रंग में ढलती जा रही है, इस नये मिश्रण को हम ग्रामीण शहरीवाद का नाम दे सकते हैं। ग्रामीण शहरीवाद से जुडी आधुनिकता ने ग्रामीण समुदाय के सामाजिक व्यवहार, जीवन दर्शन और उनकी इच्छाओं एवं मांग के स्वरूप में आमूल चूक परिवर्तन कर दिया है। ग्रामीण शहरीवाद के कारण जातिप्रथा धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही है। जाति प्रथा के ह्रास के परिणामस्वरूप श्रम की गतिशीलता बढ़ी है, पैतृक धन्धों का स्वरूप बदला है।

आधुनिकीकरण का ही एक दूसरा पहलू ग्रामीण जन द्वारा उपभोग की जाने वाली वस्तुओं का स्वरूप है। परम्परागत ग्रामीण जीवन स्थानीय निर्मित वस्तुओं से ही जुड़ा रहता था। उद्योगों द्वारा निर्मित कुछ गिनी चुनी वस्तुओं जैसे साबुन, माचिस, नमक आदि ही ग्रामीण जीवन का अंश थी। परन्तु पिछले चार दशकों से स्थिति पूर्णतया परिवर्तित सी प्रतीत होने लगी है। आकाशवाणी और दूरदर्शन व अन्य माध्यमों से उद्योगों द्वारा निर्मित उपभोक्ता वस्तुओं के बारे में जानकारी दूर-दराज के ग्रामीण क्षेत्रों में भी अब पहुँच चुकी है जिसके परिणामस्वरूप ऐसी वस्तुओं

की मांग ग्रामीण क्षेत्रों में निरन्तर बढ़ती जा रही है। ये वस्तुएं ग्रामीण जीवन की अभिन्न अंग बनती जा रही है। आधुनिकता के इस पहलू का परिणाम यह हुआ है कि आज उपभोक्ता वस्तुओं के निर्माताओं द्वारा ग्रामीण बाजारों में अपना सामान बेचने की होड़ सी लग गई है ।

स्वतंत्रता के बाद से ही सरकार ने गाँवों के पुनर्निमाण और विकास की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली है, सरकार ने ऐसे अनेक कदम उठाए हैं जिनसे ग्रामीण जीवन के विभिन्न पहलू अछूते और अप्रभावित नहीं रहे हैं। सर्वप्रथम सरकार ने भू-सम्बन्धों में सुधार के लिए आवश्यक कानून बनाए । इन कानूनों का सम्बन्ध विचौलयों का उन्मूलन, काश्तकारी की सुरक्षा, जोतों की उच्चतम सीमा का निर्धारण आदि से हैं। कानून बनाने के अलावा सरकार ने अनेक ऐसी संस्थाओं की स्थापना की है जो ऐसा वातावरण बनाने में अपना योगदान दे रही हैं जो कि ग्रामीण विकास के अनुकूल हैं। इन संस्थाओं में सहकारी समितियां, वेयर हाउसिंग कारपोरेशन, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, व्यावसायिक बैंकों का विस्तार, आदि उल्लेखनीय है । इसके अतिरिक्त सरकार ने ग्रामीण उत्थान के कई कार्यक्रम बनाए हैं , इन्हें दो वर्गो में विभाजित किया जा सकता है (अ) क्षेत्र लक्ष्य प्रधान कार्यक्रम (ब) वर्गलक्ष्य प्रधान कार्यक्रम । इन विभिनन विकास कार्यक्रमों का ही योगदान है कि ग्रामीण जीवन में आधुनिकता का बोलबाला होता जा रहा है।

संक्षेप में पिछले पाँच दशकों के दौरान भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अनेक परिवर्तन देखने को आये हैं, निस्संदेह ये परिवर्तन विकास के परिचायक है अतः इनका स्वागत है, किन्तु इनके पीछे छिपी हुई कुछ गम्भीर समस्याओं की ओर भी हमें अपना ध्यान आकर्षित करना होगा, अन्यथा भविष्य में ये विकास के मार्ग में गम्भीर बाधा सिद्ध हो सकती है। ये समस्यायें निम्नलिखित हैं -

(क) बढ़ती हुई जनसंख्या के परिणाम स्वरूप भूमि पर दबाव बढ़ता जा रहा है। परम्परागत ग्रामीण अर्थव्यवस्था में संयुक्त परिवार प्रणाली बढ़ती जनसंख्या का भार सहन करने में

समर्थ थी। व्यावसायीकरण के परिणाम स्वरूप संयुक्त परिवार प्रणाली का ह्रास हुआ है। संयुक्त परिवार के टूटने के साथ ही भूमि के खण्डन और उपविभाजन की क्रिया बढ़ती जा रही है जिससे जोतों की इकाई छोटी होती जा रही है यह उन्नत कृषि के अनूकूल नही हैं।

(ख) कृषक की अब बाजार शक्तियों पर निर्भरता बढ़ती जा रही है, परम्परागत व्यवस्था में कृषक पूरी तरह स्वतंत्र और आत्म निर्भर होता था । अनुभव यह बताता है कि पर निर्भरता जोखिम पूर्ण होती है और हमारा परम्परावादी कृषक समुदाय इन जोखिमों से संघर्ष करने में समर्थ नहीं हो पाया है परिणाम स्वरूप बाजार की शक्तियां उसके शोषण का माध्यम बनती जा रही है।

(ग) कृषि में नई तकनीकी प्रयोग से कृषि आय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई हैं, किन्तु इस आय का बड़ा भाग ग्रामीण समुदाय के उन्नत और समृद्ध वर्ग के हाथों ही केन्द्रित हुआ है। गरीब और निर्बल वर्ग को इस नई टेक्नोलोजी के कोई लाभ प्राप्त नहीं हुए है, परिणाम स्वरूप ग्रामीण जीवन में आर्थिक विषमताएं पहले से कहीं ज्यादा बढ़ गई है। जहां एक ओर ग्रामीण समुदाय की औसत आय तेजी से बढ़ी है वहीं दूसरी ओर गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले व्यक्तियों की संख्या भी बढ़ती जा रही है।

(घ) शहरीपन ग्रामीण समाज पर पूरी तरह छाया हुआ है, परिणाम स्वरूप ग्रामीण समुदाय के व्यवहार और तौर तरीकों में परम्परागत सादगी समाप्त होती जा रही है। यह परिस्थितियां निर्बल वर्ग के लिए किसी तरह अनुकूल नहीं है।

(ङ.) ग्रामीण रोजगार की स्थिति क्रमशः बिगड़ती जा रही है, जहां एक ओर काम मांगने वालों की संख्या बढ़ती जा रही है वहीं गैर कृषि क्षेत्रों में रोजगार के नये अवसरों के निर्माण की दर बहुत धीमी है। अतः भूमि हीन और सीमान्त कृषक गरीबी में और अधिक धंसते जा रहे हैं।

संक्षेप में पिछले पाँच दशकों के दौरान निस्संदेह ग्रामीण समाज ने महत्वपूर्ण परिवर्तन

हुए हैं। कृषि उत्पादन की मात्रा और प्रति हेक्टेयर उत्पादकता में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, किन्तु इन सबका लाभ साधन सम्पन्न वर्ग को ही अधिक प्राप्त हुआ है । साधन विहीन तथा निर्बल वर्ग की स्थिति सोचनीय तथा पहले से अधिक खराब हुई है।

ऐसी स्थिति में जनपद इटावा जो उत्तर प्रदेश के दक्षिण मध्य में स्थित है, जिसका कि कुल भौगोलिक क्षेत्र 436727 हेक्टेयर है, जिसमें कृषि के लिए उपलब्ध शुद्ध भूमि केवल 66.33 प्रतिशत है और प्रति व्यक्ति कृषि भूमि की उपलब्धता मात्र .14 हेक्टेयर है। यह आवश्यक प्रतीत होता है कि कृषि भूमि का उपयोग सर्वोत्तम विधि से किया जाना चाहिए जिससे कि बढ़ती हुई जनसंख्या की न केवल उदर पूर्ति ही की जा सके बल्कि वर्तमान भौतिक तथा आर्थिक युग में व्यक्तियों की अधिक से अधिक उपभोग आवश्यकताओं को सन्तुष्ट किया जा सके । अतः आवश्यकता इस बात की अनुभव की गई कि कृषि भूमि उपयोग से सम्बन्धित अध्ययन क्षेत्र का एक व्यापक सर्वेक्षण करके कृषि भूमि की उपलब्धता, उसकी उर्वराशक्ति, प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता, तथा प्रति व्यक्ति उपभोग की मात्रा आदि तथ्यों का ज्ञान प्राप्त किया जाये, बिना इन तथ्यों की जानकारी किए कृषि भूमि नियोजन सम्बन्धी योजनाएं बना भले ही ली जायें, परन्तु उनकी सफलता संदिग्ध होगी । वर्तमान समय में इस लघु क्षेत्र की जनसंख्या तथा कृषि संबंधी समस्याओं के अध्ययन की नितान्त आवश्यकता है जिससे उन समस्याओं के हल के लिए कृषि एवं मानव संसाधन के विकास की योजनाएं बनाई जा सके। प्रस्तावित अध्ययन द्वारा जनपवद इटावा की कृषि जनसंख्या का पोषण स्तर तथा मानव स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का विश्लेषण किया जायेगा ।

2. अध्ययन का महत्व -

किसी देश का कुल क्षेत्रफल उस सीमा को निर्धारित करता है जहां तक विकास प्रक्रिया के दौरान उत्पत्ति के साधन के रूप में भूमि कर समतल विस्तार सम्भव होता है। जैसे-जैसे विकास प्रक्रिया आगे बढ़ती है और नये मोड़ लेती है, समतल भूमि की मांग बढ़ती है।

नये कार्यो एवं उद्योगों के लिए भूमि की आवश्यकता होती है व परम्परागत उपयोगों में अधिक मात्रा में भूमि की मांग की जाती है। सामान्यतः इन नये उपयोगों तथा परम्परागत उपयोगों में बढ़ती हुई भूमि की मांग की आपूर्ति के लिए कृषि के अन्तर्गत भूमि को काटना पड़ता है और इस प प्रकार से भूमि कृषि उपयोग से गैर कृषि कार्यो में प्रयुक्त होने लगती है। एक विकासशील अर्थव्यवस्था के लिए जिसकी मुख्य विशेषताएं श्रम अतिरेक व कृषि उत्पादों के अभाव की स्थिति का बना रहना हो वहां कृषि उपयोग से गैर कृषि उपयोगों में भूमि का चला जाना गम्भीर समस्या का रूप धारण कर सकता है। जहां इस प्रक्रिया से एक ओर सामान्य कृषक के निर्वाह स्रोत का विनाश होता है, दूसरी ओर समग्र अर्थव्यवस्था की दृष्टि से कृषि पदार्थो की मांग पूर्ति में गम्भीर असन्तुलन उत्पन्न हो सकते हैं। कृषि पदार्थो की आपूर्ति में कमी अर्थव्यवस्था में अन्य अनेक समस्याओं को जन्म दे सकती है। इसीलिए यह आवश्यक समझा जाता है कि विकास प्रक्रिया के दौरान जैसे- जैसे समतल भूमि की मांग बढ़ती है, उसी के साथ बंजर, परती, तथा बेकार पड़ी भूमि को कृषि अथवा गैर कृषि कार्यो के योग्य बनाने के लिए प्रयास करने चाहिए । कोशिश यह होनी चाहिए कि खेती वाड़ी के लिए उपलब्ध भूमि के क्षेत्र में किसी प्रकार की कमी न आये, वरन जहां तक सम्भव हो कृषि योग्य परती भूमि में सुधार करें । खेती वाड़ी के लिए उपलब्ध भूमि क्षेत्र में वृद्धि ही करनी चाहिए ।

किसी क्षेत्र में उपलब्ध भूमि को इसके विभिन्न उपयोगों के आधार पर दो भागों में बांटा जा सकता है - (1) कृषि भूमि (2) गैर कृषि भूमि ।

(1) कृषि भूमि -

कृषि भूमि में हम निबल जोते गये क्षेत्र, वर्तमान परती क्षेत्र तथा वृक्षों उपवनों के अन्तर्गत क्षेत्र को शामिल करते हैं। इस दृष्टि से देखें तो भारत का कुल भौगोलिक क्षेत्र 32.88 करोड़ हेक्टेयर है जिसमें से लगभग 30.41 करोड़ हेक्टेयर भूमि उपयोग का सूचित क्षेत्र है इस सूचित क्षेत्र का लगभग 50 प्रतिशत भाग कृषि भूमि वर्ग के अन्तर्गत आता है । दूसरे बड़े आकार

अथवा मध्यम आकार वाले देशों की तुलना में यह अनुपात सर्वाधिक है, अमेरिका में यह अनुपात 40 प्रतिशत, सोवियत संघ में 27 प्रतिशत, और ब्राजील में लगभग 16 प्रतिशत है। यदि सारे विश्व के हिसाब से आकलन किया जाये तो इस कोटि में आने वाली भूमि 32 प्रतिशत के लगभग होगी।[5]

कुल क्षेत्रफल में कृषि योग्य भूमि का ऊँचा अनुपात कुछ महत्वपूर्ण बातों का संकेत देते हैं जैसे (क) भौतिक तत्व विकास के अनुकूल है। इन तत्वों में (1) विस्तृत क्षेत्र (2) मैदानी क्षेत्र का विस्तृत आकार (3) अनुर्बर भूमि का सीमित क्षेत्र आदि प्रमुख है। (ख) कृषि योग्य भूमि के बड़े हिस्से पर कृषि कार्य किया जाना सम्भव होना । यह सच है कि कृषि भूमि का कुल क्षेत्रफल में अनुपात काफी ऊँचा है किन्तु, यदि बढ़ती हुई जनसंख्या के सन्दर्भ में इस तथ्य पर गौर किया जाय तो हम पाते हैं कि उपलब्ध प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि केवल 0.25 हेक्टेयर ही है, जो विश्व के बाकी सब विकसित तथा विकासशील जैसे देशों की तुलना में बहुत ही कम है। देश में कुल जोती गई भूमि के लगभग 15 प्रतिशत भाग पर एक से अधिक फसलें बोई जाती है जब कि लगभग 40 प्रतिशत भूमि पर सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध है। सिंचाई के अधीन भूमि कम होने के कारण कृषि गत क्षेत्र का अधिकांश भाग प्राकृतिक वर्षा पर निर्भर करता है, भारत में पानी के इस साधन पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। समय, स्थान, मात्रा आदि हर दृष्टि से वर्षा बहुत अनिश्चित और अनियमित है इसके सहारे खेती की पानी की आवश्यकता भली प्रकार पूरी नहीं की जा सकती है ।

(2) गैर कृषि भूमि -

इस वर्ग में उस भूमि को सम्मिलित किया जाता है जहां खेती वाड़ी नहीं की जाती - जैसे जंगल, वन तथा स्थाई चारागाह एवं अनेक गैर कृषि कार्यो जैसे शहर, गांव, सड़क, रेल, इमारत मकान आदि में उपयोग की जाने वाली भूमि ।

वर्तमान शताब्दी के पांचवें दशक के दौरान जब देश से जमीदारी और जागीरदारी प्रथा

की समाप्ति की गई, बंजर क्षेत्रों और परती भूमि पर सुधार के बड़े विस्तृत कार्यक्रम अमल में लाये गये। जमीदारों के पास निजी खेती के लिए छोडी गई भूमि में जो बंजर भूमि थी उस पर उनके द्वारा सुधार के सभी प्रयास किए गये। इसी प्रकार पुराने काश्तकारों जिनको बंजर और परती भूमि पर नये अधिकार प्राप्त हुए थे, इस प्रकार की भूमि को सुधारने के लिए उत्सुक थे । अतः देश में पहली बार बंजर और परती भूमि को सुधारने का कार्य विशाल स्तर पर किया गया । इस कार्य में सरकार ने भी अनुदान और ऋण के माध्यम से आवश्यक योगदान दिया, किन्तु इसके बाद इस कार्य की गति बहुत धीमी पड़ गई है बल्कि अब वस्तु स्थिति यह है कि (क) जनसंख्या बढने तथा बढ़ते हुए औद्योगीकरण व अन्य विकास कार्यक्रमों में भूमि की मांग निरन्तर बढ़ती जा रही है। (ख) निवल जोते गये क्षेत्र में किसी प्रकार की वृद्धि होना लगभग असम्भव सा प्रतीत होता है। इसके साथ ही एक से अधिक बार जोते गये क्षेत्र की भी वृद्धि दर अब धीमी पड़ती जा रही है जिससे इतने विशाल आकार वाले देश में भी भूमि तत्व विकास प्रक्रिया में अकुंश बनता नजर आ रहा है।

उपरोक्त सन्दर्भ में भू-उपयोग के ढांचे का अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता है भू-उपयोग के ढांचे से सम्बद्ध आकड़ों का अध्ययन कर हम यह जान सकते हैं कि भावी विकास प्रक्रिया में भूमि तत्व की क्या भूमिका हो सकती है, कितनी अतिरिक्त भूमि किस क्षेत्र और कहां से प्राप्त करवाई जा सकती है ।

3. अध्ययन का उददेश्य -

भूमि समस्त गतिविधियों का आधार है। इस पर ही समस्त गतिविधियां और आर्थिक क्रियाओं का सृजन और विकास होता है। यह आवासीय औद्योगिक और परिवहन व्यवस्था का आधार होने के साथ-साथ खनिजों का स्रोत फसल एवं वनोपज का आधार और उनमें विविधता का पोषक है। इस बहुमूल्य संसाधन के समुचित उपयोग और प्रबन्ध की आवश्यकता है। समुचित भूमि उपयोग द्वारा क्षेत्रीय आवश्यकताओं को पूरा करते हुए तथा उसके गुण धर्म को अक्षुण्ण रखते हुए इसे अगली पीढी को हस्तान्तरित किया जा सकता है । समुचित भूमि उपयोग और प्रबन्ध इसलिए भी आवश्यक है क्यों कि बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण प्रति व्यक्ति भौगोलिक क्षेत्रफल कम होता जा रहा है।

भूमि उपयोग का अध्ययन विद्यमान भूमि क्षेत्र का प्रयोगवार विवरण प्रस्तुत करता है और यह स्पष्ट करता है कि किसी भूखण्ड को सक्षमतापूर्वक कैसे कृषि योग्य या उपजाऊ बनाया जा सकता है। भूमिउपयोग का अध्ययन इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित करता है कि किसी क्षेत्र की भूमि की प्रकृति कृषित भूमि की ओर बढने की है अथवा चारागाह या वनों के अन्तर्गत बढ़ने की है । उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध अध्ययन का मुख्य उददेश्य कृषि प्रधान एवं पूर्ण रूपेण ग्रामीण जनपद इटावा के भूमि उपयोग की समुचित व्याख्या प्रस्तुत करना है जिससे भौतिक एवं मानवीय कारकों के संदर्भ में वर्तमान भूमि उपयोग एवं उसकी सम्भावित क्षमता का मूल्यांकन किया जा सके, साथ ही जनपद वासियों की आवश्यकताओं एवं उनके आर्थिक एवं पोषण स्तर को ऊँचा उठाने हेतु भूमि उपयोग के समन्वित वैज्ञानिक कार्यक्रम प्रस्तावित किए जा सकें। इस शोध अध्ययन में उक्त मुख्य उददेश्य को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित उपलक्ष्य निर्धारित किये गये हैं ।

1. सामान्य भूमि उपयोग तथा कृषि भूमि उपयोग का अध्ययन करना ।
2. कृषि भूमि उपयोग में प्रचलित नवीन प्राविधिकों का उपयोग तथा वर्तमान प्रचलित शस्य प्रतिरूप का अध्ययन करना ।

3. उपलब्ध कृषि भूमि पर जनसंख्या के अधिभार का मापन करना ।
4. जनसंख्या के पोषण स्तर का निर्धारण करना तथा मानव स्वास्थ्य के मध्य सम्बन्ध स्थापित करना ।
5. अल्प पोषण तथा कुपोषण से उत्पन्न बीमारियों का विश्लेषण करना ।
6. भूमि उपयोग तथा जनसंख्या की पोषण सम्बन्धी समस्याओं के समाधान हेतु सुझाव प्रस्तुत करना ।

उपर्युक्त लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु शोधकर्ता ने निम्न परिकल्पनाओं को आधार बनाया है।

1. भूमि सम्पदा से सम्पन्न होते हुए भी अध्ययन क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से राज्य का एक पिछडा हुआ क्षेत्र है जहां के भूमि उपयोग में पारम्परिक पद्धतियों की प्रधानता है।
2. अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि उपयोग में खाद्य फसलों की प्रधानता है और व्यावयासिक फसलों का नितान्त अभाव है।
3. खाद्य फसलों के उत्पादन में भी वैज्ञानिक कृषि पद्धति, रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशक औषधियों तथा उन्नतिशील बीजों का प्रयोग अत्यन्त सीमित क्षेत्र में किया जाता है।
4. यद्यपि सिंचाई साधनों के विकास के कारण सकल कृषि क्षेत्र तथा शस्य गहनता में वृद्धि हुई है परन्तु बढती हुई जनसंख्या के कारण आवासीय तथा परिवहन सुविधाओं में वृद्धि के कारण शुद्ध बोया गया क्षेत्र घट रहा है।
5. परिवहन तथा बाजार सुविधाओं में विस्तार के कारण कृषि के व्यवसायीकरण को प्रोत्साहन मिल रहा है, तथा नई कृषि पद्धतियों में मुद्रादायिनी फसलों के उत्पादन पर बल दिया जा रहा है।
6. अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि उपयोग में आवश्यक सुधार कर या तो प्रति व्यक्ति कृषि भूमि उपलब्धता को बढ़ाया जा सकता है अथवा प्रति हेक्टेयर उत्पादन में वृद्धि करके क्षेत्रवासियों के आर्थिक स्तर को ऊँचा उठाया जा सकता है।
7. क्षेत्र वासियों के सामान्य प्रचलित आहार में खाद्यान्नों की प्रधानता पाई जाती है।

जिसके कारण अधिकांश लोगों के भोजन में शरीर की सामान्य आवश्यकता के पोषक तत्वों का अभाव रहता है।

8. अधिकांश लोग संतुलित भोजन में आवश्यक पोषक तत्वों की कमी के कारण कुपोषण जनित बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

9. यदि लोगों को सन्तुलित भोजन में शरीर के लिए आवश्यक पोषक तत्वों का ज्ञान तथा ग्रामीण क्षेत्रों में सरलता से सुलभ विभिन्न खाद्य पदार्थों में उपलब्ध पोषक तत्वों की जानकारी करायी जाये तो लोगों को प्रचलित आहार स्वरूप में मात्रात्मक एवं गुणात्मक समन्वय स्थापित करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है ।

10. भोजन में मात्रात्मक तथा गुणात्मक समन्वय स्थापित करके कुपोषण जनित बीमारियों से बचा जा सकता है।

11. कुपोषण जनित बीमारियों की चिकित्सा पर होने वाले व्यय को बचाकर और बचने वाले धन को अन्यत्र व्यय करके उपभोग स्तर में वृद्धि की जा सकती है।

4. शोध विधि -

प्रस्तुत शोध अध्ययन का क्षेत्र उत्तर प्रदेश के दक्षिण मध्य में गंगा यमुना के दोआब में स्थित जनपद इटावा है, जो भौगोलिक दृष्टि से गंगा यमुना के मध्य स्थित मैदान का अभिन्न भाग है। इस जनपद के दो विकास खण्डों का अधिकांश हिस्सा यमुना तथा चम्बल नदियों के मध्य स्थित है यें विकास खण्ड चकरनगर तथा बढ़पुरा है। इन दोनों विकास खण्डों के अतिरिक्त जसवन्त नगर, महेवा, अजीतमल तथा औरैया, विकास खण्डों की दक्षिणी सीमा यमुना नदी निर्धारित करती है। दोनों नदियों के मध्य अथवा यमुना के किनारे स्थित विकास खण्डों की भूमियों का एक बड़ा हिस्सा असमतल तथा ऊबड़-खाबड़ है। जनपद के उत्तर में मैनपुरी तथा फर्रुखाबाद जनपद, दक्षिण-पश्चिम में मध्य प्रदेश का भिण्ड जनपद तथा उत्तर प्रदेश का जनपद जालौन, पूर्व में कानपुर देहात तथा पश्चिम में फिरोजाबाद तथा आगरा जनपद स्थित हैं।

इस शोध अध्ययन की इकाई विकास खण्ड है ।

1. प्रथम उपक्रम -

इस अध्ययन के अन्तर्गत प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों ही प्रकार के संमकों का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक संमकों को राज्य तथा जनपद मुख्यालय से प्राप्त विभिन्न प्रकार के प्रकाशित एवं अप्रकाशित कार्यालय अभिलेखों, प्रतिवेदनों, तथा सांख्यिकी पत्रिकाओं से प्राप्त किया गया है। भूमि उपयोग से सम्बन्धित तथ्यों की जानकारी हेतु अपेक्षित सांख्यिकी आंकड़े मुख्यतः राजस्व अभिलेखों तथा पंजियों से प्राप्त किए गये हैं। जनपद इटावा उत्तर प्रदेश के ऐसे जनपदों में से एक हैं जिसे राजस्व अधिकारियों द्वारा विभिन्न समस्याओं (जैसे बाढ़, अधिक जनसंख्या, गरीबी, अविकसित परिवहन के साधन तथा सेवाएं, बेरोजगारी, औद्योगीकरणका नितान्त अभाव, निम्न जीवन स्तर तथा शिक्षा का निम्न स्तर आदि) से उलझा हुआ माना गया है। भूमि उपयोग की सूचनाओं का मुख्य स्रोत लेखपाल होता है। लेखपाल अपने निरीक्षणों के विवरण का जिसे खसरा (निरीक्षण पुस्तिका) कहा जाता है, वार्षिक लेखा जोखा तैयार करता है जिससे खरीफ रबी तथा जायद में

बोई जाने वाली विभिन्न फसलें, सिंचाई के साधन, सिंचित एवं असिंचित क्षेत्र तथा फसलों का बाढ़ अथवा सूखा या अन्य किसी प्राकृतिक आपदा के कारण क्षतिग्रस्त हुए क्षेत्र का भी उल्लेख करता है। ये विवरण लेखपालों के खसरे से प्राप्त हो जाते हैं । राजस्व विभाग द्वारा ये सभी आंकड़ें पूर्णतया शुद्ध और विश्वासनीय समझे जाते हैं। समस्त विकास खण्डों से चयनित 14 गाँवों (प्रत्येक विकास खण्ड से एक गाँव) के मानचित्र विकास खण्ड मुख्यालयों से प्राप्त किए गये हैं, इन्हें प्रतिदर्श गांवों के रूप में चयनित किया गया है, इन प्रतिदर्श गांवों के मानचित्रों पर खेतों की सीमाएं, उनकी संख्या, मार्ग, नहरों की शाखाएं कुएँ, आबादी के क्षेत्र, तथा अन्य विवरण प्रस्तुत किए गये हैं। धरातल के स्वरूप, उच्चावच, ढाल, अपवाह, सिंचाई, बाग और झाडियों आदि से सम्बन्धित विश्वसनीय और उपयोगी आंकड़े जनपद मुख्यालय के कृषि एवं सांख्यिकी कार्यालय से प्राप्त किए गये हैं।

2. **द्वितीय उपक्रम** -

इस उपक्रम में भूमि उपयोग, पोषण स्तर, तथा लोगों में कुपोषण से उत्पन्न बीमारियों से सम्बन्धित आवश्यक जानकारी के लिए प्राथमिक समंकों का संग्रहण किया गया है । इसके लिए एक अनुसूची तथा प्रश्नावली तैयार की गई जिसमें कृषकों से सम्बन्धित आवश्यक सूचनाएं व्यक्तिगत सम्पर्क करके प्राप्त की गई हैं, यद्यपि कृषकों की अशिक्षा तथा उनके द्वारा आय व्ययक तैयार न किए जाने के कारण पारिवारिक उपभोग से सम्बन्धित वांछित सूचनाओं के एकत्रण में भ्रामक स्थितियां उत्पन्न हुई, इस कठिनाई को विभिन्न प्रकार के सरल एवं व्यावहारिक प्रश्न पूछकर, तथा आपस में तर्क वितर्क करके दूर कर लिया गया जिससे व्यक्तिगत आधारित सूचनाओं में आवश्यक संशोधन भी करने पड़े । प्राथमिक समंकों के संकलन में निम्न उपक्रम अपनाए गये -

(क) गांवों का चयन -

इस उपक्रम में सर्वप्रथम प्रत्येक विकास खण्ड के गांवों की एक सूची तैयार की गई और प्रत्येक विकास खण्ड में सम्मिलित गांवों की संख्या के आधार पर उनके क्रमांकों का कोड देते

हुए उतनी ही पर्चियां तैयार की गई और उन समस्त पर्चियों की गोलियां तैयार करके एक डिब्बे में डालकर भली प्रकार मिला दिया गया तत्पश्चात उस डिब्बे से एक पर्ची निकाली गई और उस पर्ची में अंकित क्रमांक वाले ग्राम को अध्ययन के लिए चुना गया । यह क्रिया चौदह विकास खण्डों से सम्बन्धित चौदह बार की गई और इस प्रकार दैव निदर्शन पद्धति का प्रयोग करते हुए प्रत्येक विकास खण्ड से सम्बन्धित एक गांव का चयन सम्पन्न किया गया । इस प्रकार इस अध्ययन की विश्वसनीय और निष्कर्षों में शुद्धता के स्तर को उच्च बनाए रखने के लिए कुल चौदह ग्रामों का चयन किया गया है ।

(ख) कृषकों का चयन -

इस उपक्रम में भी दैव निदर्शन पद्धति का प्रयोग किया गया है । प्रत्येक विकास विकास खण्ड से एक ग्राम के चयन के उपरान्त सम्बन्धित ग्राम के प्रधान से सम्पर्क करके गांव के समस्त कृषकों की एक सूची तैयार की गई और तैयार सूची से गाँवों की चयन प्रक्रिया के आधार पर प्रत्येक गांव से 20 कृषकों को चयनित किया गया है, और चयनित कृषकों से व्यक्तिगत सम्पर्क करके आवश्यक वांछित सूचनाओं से सम्बन्धित प्रश्नों से छपी हुई अनुसूची एवं प्रश्नावली को भरकर तथ्यों की जानकारी प्राप्त की गई है । आवश्यक सूचनाओं में परिवार के सदस्यों की संख्या, सदस्यों की उम्र, सदस्यों की शिक्षा, भूमि का आकार, खेतों की संख्या, कृषि से सम्बन्धित क्रियाओं का स्वरूप, कृषि का स्वरूप, फसल प्रतिरूप, सिंचाई के साधन, सिंचित क्षेत्र, विभिन्न आगतों का स्वरूप, एवं मात्रा, विभिन्न फसलों का उत्पादन, उपभोग का स्तर तथा सदस्यों के स्वास्थ्य से सम्बन्धित जानकारियाँ प्राप्त की गई हैं ।

शोधकर्ता द्वारा लेखपालों, विकास खण्ड अधिकारियों, ग्राम विकास अधिकारियों, तथा सम्बन्धित गांव के आस पास के चिकित्सकों से भी व्यक्तिगत सम्पर्क करके कृषकों से सम्बन्धित समस्याओं, कुपोषणजनित बीमारियों, तथा कृषि विकास के लिए किए गये सरकारी तथा गैर सरकारी

प्रयासों की भी जानकारी प्राप्त की गई है । कृषि उत्पादन में वृद्धि तथा कृषकों की समस्याओं के समाधान हेतु उनके व्यक्तिगत दृष्टिकोणों से भी परिचय प्राप्त किया गया है। प्रतिचयित कृषकों से प्राप्त सूचनाओं का सावधानी पूर्वक वर्गीकरण, तथा सारणीयन किया गया है । यथास्थान आवश्यक सांख्यिकी विधियों का प्रयोग करते हुए अध्ययन परिणाम प्राप्त किए गये हैं। अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों को आवश्यक चित्रों, मानचित्रों, एवं ग्राफों द्वारा प्रस्तुत किया गया है ।

प्रस्तुत शोध में निष्कर्षों की शुद्धता के लिए जिन प्रविधियों का प्रयोग किया गया है उनका विवरण इस प्रकार है -

(1) खाद्य पदार्थों में खाद्ययोग हिस्सा -

1956 में जब प्रो0 एल0 डी0 स्टाम्प के रियोडीजेनेरो में ' खाद्य एवं पोषण' विषय पर सम्पन्न होने वाली 'अन्तर्राष्ट्रीय भूगोल कांफ्रेंस में अध्यक्षीय सम्बोधन के बाद विभिन्न विद्वानों द्वारा विभिन्न ~~बिभिन्न~~ खाद्य पदार्थों में कैलोरिक ऊर्जा के लिए खाद्य योग्य हिस्से की गणना के अनेकों प्रयास किए गये हैं । प्रो0 एल0 डी0 स्टाम्प ने स्वयं विभिन्न खाद्यान्नों के उत्पादन में से 10 प्रतिशत घटाकर शेष हिस्से से कैलोरिक ऊर्जा प्राप्ति की गणना की, जबकि सिंह जसवीर (1971:48) ने 16.80 प्रतिशत तथा तिवारी पी0 डी0 (1988:2) ने 15 प्रतिशत तथा कुछ अन्य विद्वानों ने 20 प्रतिशत तक घटाकर कैलोरिक ऊर्जा प्राप्ति की गणना की है । परन्तु वास्तव में उपलब्ध कृषि उत्पादन समंकों की दृष्टि से देखा जाये तो विभिन्न खाद्यान्न फसलों के उत्पादन को पहले खाद्य योग्य बनाया जाता है तत्पश्चात उपभोग किया जाता है, उपभोग योग्य बनाने में विभिन्न खाद्य पदार्थों का कुछ हिस्सा नष्ट हो जाता है । अतः विभिन्न फसलों से प्राप्त उत्पादन के खाद्य योग्य हिस्से की गणना प्रस्तुत शोध में निम्न प्रकार से की गई है -

खाद्य फसलों में खाने योग्य भाग

खाद्य फसलें	बीज एवं भण्डारण क्षय (प्रतिशत)	शुद्ध उत्पादन (प्रतिशत)	खाने योग्य भाग (प्रतिशत)
1. धान	10	90	60
2. ज्वार	10	90	90
3. बाजरा	10	90	90
4. मक्का	10	90	90
5. गेहूँ	10	90	95
6. जौ	10	90	90
7. अरहर	10	90	65
8. चना	10	90	65
9. मटर	10	90	70
10. उर्द/मूंग	10	90	70
11. लाही	2	98	36
12. गन्ना	10	90	12
13. आलू	10	90	83

सारिणी में विभिन्न खाद्य फसलों में खाने योग्य भाग को दर्शाया गया हैं। विभिन्न फसलों के कुल उत्पादन में सर्वप्रथम बीज एवं भण्डारण क्षय को घटाकर शुद्ध उत्पादन प्राप्त किया गया है इसके उपरान्त शुद्ध उत्पादन में से उनके सामने अंकित खाने योग्य भाग की गणना करके कैलोरिक ऊर्जा प्राप्ति की गणना की गई है ।

2) पोषण स्तर की गणना -

भारतीय चिकित्सा शोध परिषद 1968 के पोषण विशेष दल द्वारा एक औसत भारतीय

के लिए आवश्यक कैलोरिक ऊर्जा की गण्ना की गई है जिसे विभिन्न आयु तथा लिंग के अनुसार सारणी में दर्शाया गया है -

प्रतिदिन औसत कैलोरिक ऊर्जा की आवश्यकता		
पुरूष	हल्का कार्य	2400
	मध्यम कार्य	2800
	भारी कार्य	3900
स्त्री	हल्का कार्य	1900
	मध्यम कार्य	2200
	भारी कार्य	3000
	गर्भवती	3300
	दूध पिलाने वाली	3700
बच्चे	(1 वर्ष से 3 वर्ष)	1200
	4 से 6 वर्ष	1500
	7 से 9 वर्ष	1800
	10 से 12 वर्ष	2100
	13 से 15 वर्ष (लड़के)	2500
	(लड़कियां)	2200
	16 से 18 वर्ष (लडके)	3000
	(लड़कियां)	2200
	औसत	2481.25

स्रोतः एम0 स्वामीनाथन 'हयूमन न्यूट्रीशन एण्ड डाइट 1983 पृष्ठ - 57

उपर्युक्त सारणी में विभिन्न आयु वर्ग के लोगों के लिए प्रतिदिन न्यूनतम कैलोरिक आवश्यकता को दर्शाया गया है, परन्तु विभिन्न वर्ग के व्यक्तियों द्वारा सम्पन्न किए जाने वाले कार्यों को केवल हल्के तथा भारी कार्यों में ही विभाजित नहीं किया जा सकता है बल्कि विभिन्न लोगों द्वारा प्रतिदिन विभिन्न कार्य सम्पन्न किए जाते हैं और लोगों द्वारा किए जाने वाले कार्यों के आधार पर प्रतिव्यक्ति न्यूनतम कैलोरिक आवश्यकता भी भिन्न-भिन्न होती है । विभिन्न कार्यों को सम्पन्न करने में कितनी कैलोरिक आवश्यकता होती है इसे आगे सारणी में दर्शाया गया है -

तालिका प्र0 - 3

विभिन्न कार्यों के लिए प्रतिघंटे प्रति किलोग्राम भार वाले शरीर की कैलोरिक आवश्यकता

कार्य का विवरण	प्रति घंटे प्रति कि0ग्रा0 शारीरिक भार पर कैलोरिक आवश्यकता
1. सोना	0.9
2. विश्राम के लिए लेटने पर	1.1
3. सोचने पर	1.2 से 1.25
4. अध्ययन (शान्ति से)	1.22
5. ताश खेलना	1.26
6. भोजन करना	1.4
7. कक्षा का कार्य	1.47
8. अध्ययन (चिल्लाकर)	1.5
9. लिखना	1.6
10. बुनाई करना	1.6
11. गीत गाना	1.74
12. कार्यालय का कार्य	1.74
13. टंकण	1.93

14. फर्श पर झाड़ू लगाना	2.40
15. कार चलाना	2.63
16. टहलना (4कि0 मी0 प्रतिघंटे की चाल)	2.86
17. मोटर साइकिल चलाना	3.20
18. वृक्षारोपण तथा लकड़ी काटना	4.20
19. साइकिल चलाना (16 कि0 मी0 प्रतिघंटे की गति)	4.40
20. कपड़े धोना	4.90
21. निराई गुडाई	5.17
22. गेंद फेंकना	5.80
23. घोड़े पर चढ़ना	5.30
24. हल चलाना	5.88
25. तैरना	7.10
26. दौड़ना (9 कि0 मी0 प्रति घंटे की गति)	8.17
27. मिटटी खोदना	8.20
28. तेज गति से टहलना	9.80
29. दैनिक सामान्य कार्य	2.5

स्रोत - आर0 एस0 थापर अँवर फूड, पृष्ठ - 8

गणना विधि - उदाहरण

एक व्यक्ति जिसका शारीरिक भार 70 किलोग्राम है।

1. एक कृषक जो हल चलाने का कार्य करता है:-

(अ)	प्रातः 5 बजे से 8 बजे तक दैनिक कार्य तथा पशुओं को चारा	2.5×3×70	= 525.00
(ब)	प्रातः 8 बजे से मध्यान्ह 12 बजे तक हल चलाना	5.88×4×70	= 1646.40
(स)	अपरान्ह 12 से 3 बजे तक दैनिक कार्य	2.5×3×70	= 525.00
(द)	अपरान्ह 3 बजे से 6 बजे तक हल चलाना	5.88×3×70	= 1234.80
(य)	सायं 6बजे से 10बजे तक दैनिक कार्य तथा पशुओं को चारापानी	2.5×4×70	= 700.00
(र)	रात्रि 10 बजे से प्रातः 5 बजे तक सोना	0.9×7×70	= 441.00
		योग	= 5072.20

2. एक श्रमिक जो सड़क निर्माण कार्य पर लगा हुआ है - (सड़क से निवास की दूरी 4 कि0 मी0 है)

(अ)	प्रातः 5 बजे से 7 बजे तक दैनिक कार्य	2.5×2×70	= 350.00
(ब)	प्रातः 7 से 8 बजे तक सड़क तक पहुँचना	2.86×1×70	= 200.20
(स)	प्रातः 8 से 12 बजे तक मिटटी खनन	8.2×4×70	= 2296.00
(द)	12 बजे से 12.30 बजे तक भोजन करना	1.4×.5×70	= 49.00
(य)	12.30 बजे से 2 बजे तक विश्राम	1.1×1.5×70	= 115.50
(र)	2 बजे से 6 बजे तक मिटटी खनन	8.2×4×70	= 2296.00
(ल)	6 बजे से 7 बजे तक घर वापसी	2.86×1×70	= 200.20
(व)	7 बजे से 9 बजे तक दैनिक कार्य	2.5×2×70	= 350.00
(स)	9 बजे से प्रातः 5 बजे तक सोना	0.9×8×70	= 504.00
		योग	= 6360.90

3. एक टाइपिस्ट जो अपने कार्यालय से 2 कि0 मी0 दूर निवास करता है -

(अ)	प्रातः 6 से 9.30 बजे तक दैनिक कार्य	2.5×3.5×70	= 612.50
(ब)	9.30 बजे से 10 बजे तक कार्यालय पहुँचना (साइकिल से)	4.4×.5×70	= 154.00
(स)	10 बजे से 4 बजे सायं तक		
	टाइपिंग कार्य 4 घंटे	1.93×4×70	= 540.40
	दोपहर का भोजन .5 घंटे	1.4×.5×70	= 49.00
	विश्राम 1 घंटे	1.1×1×70	= 77.00
(द)	4 बजे से 4.30 बजे तक घर वापसी	4.4×.5×70	= 154.00
(य)	4.30 बजे से 10 बजे तक दैनिक कार्य	1.6×4×70	= 448.00
(र)	10 बजे से प्रातः 6 बजे तक	0.9×8×70	= 504.00
		योग	= 2666.90

उपर्युक्त गणना विधि के आधार पर अध्ययन क्षेत्र में दैवनिदर्शन पद्धति के आधार पर समस्त 14 विकास खण्डों में प्रत्येक से एक ग्राम सभा का निर्वाचन करके तथा प्रत्येक ग्राम सभा से 20 कृषक परिवारों का चुनाव किया गया है। इस प्रकार 280 कृषक परिवारों का चुनाव करके इन्हें भूमि हीन, सीमान्त कृषक, लघु कृषक, मध्यम कृषक तथा बड़े कृषकों के पाँच वर्गों में बांटा गया है तथा इन पांचों वर्गों की न्यूनतम कैलोरिक आवश्यकता की अलग-अलग गणना की गई है। गणना से प्राप्त परिणाम के आधार पर भूमिहीन परिवार में प्रतिव्यक्ति 2547 कैलोरी, सीमान्त कृषक परिवार में प्रति व्यक्ति 2512 कैलोरी, लघु कृषक परिवारों में प्रति व्यक्ति 2516 कैलोरी आकार वाले कृषक परिवार को 2480 कैलोरी तथा बड़े आकार वाले कृषक परिवार को 2414 कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न वर्ग के लोगों को औसत रूप में प्रति व्यक्ति 2502 कैलोरी प्रतिदिन की दर से ऊर्जा की आवश्यकता है, अध्ययन की सुविधा के लिए अध्ययन क्षेत्र में प्रति व्यक्ति, प्रतिदिन कैलोरिक आवश्यकता का पैमाना 2500 कैलोरी माना गया है। यद्यपि यह सत्य है कि किसी क्षेत्र के निवासियों की न्यूनतम कैलोरिक आवश्यकता की गणना करने में प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्रत्येक चौबीस घंटे में सम्पन्न किए जाने वाले विभिन्न कार्यों के स्वभाव का विवरण, शारीरिक भार, आयु, लिंग, आदि को ध्यान में रखना पड़ता है जो कि एक सरल कार्य नहीं है, परन्तु विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों का सामना करते हुए यह एक कठिन कार्य सम्पन्न करके अध्ययन क्षेत्र में न्यूनतम कैलोरिक आवश्यकता 2500 कैलोरी गणना की गई है।

3. भूमि की अनुकूलतम भार वहन क्षमता का निर्धारण -

किसी क्षेत्र की भूमि की अनुकूलतम भार वहन क्षमता उस क्षेत्र की जनसंख्या की पोषण क्षमता को प्रदर्शित करती है, अर्थात कृषि भूमि के किसी निश्चित क्षेत्रफल से प्राप्त उत्पादन द्वारा कितनी जनसंख्या के आवश्यक पोषण स्तर को बनाए रखा जा सकता है। अनुकूलतम भार वहन क्षमता को ज्ञात करने के लिए अध्ययन क्षेत्र की तेरह प्रमुख फसलों की औसत उत्पादकता

विकास खण्ड स्तर पर ज्ञात की गई है, औसत उत्पादन में से बीज तथा भण्डारण क्षय घटाने के बाद विभिन्न फसलों का शुद्ध उत्पादन प्राप्त किया गया है। प्रत्येक फसल के शुद्ध उत्पादन में से खाद्य योग्य हिस्से की गणना की गई है तत्पश्चात प्राप्त उत्पादन को कैलोरी में परिवर्तित किया गया है, इस प्रकार तेरह फसलों के खाद्य योग्य हिस्से को अलग-अलग कैलारी में परिवर्तित करके सभी फसलों के उत्पादन से प्राप्त होने वाली कैलोरिक उपलब्धता का योग किया गया है। प्रति वर्ग किलोमीटर कृषि क्षेत्र में कुल कैलोरिक उपलब्धता की गणना निम्न सूत्र द्वारा की गई है।

$$\text{प्रति वर्ग किलोमीटर कृषि क्षेत्र में कैलोरिक उपलब्धला} = \frac{\text{विभिन्न फसलों के उत्पादन से प्राप्त कुल कैलारी}}{\text{सकल जोत का प्रतिशत}} \times 100$$

प्रतिवर्ग कि0 मी0 या 100 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र में कैलोरिक उपलब्धता की गणना करने के पश्चात प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष कैलोरिक आवश्यकता का आकंलन किया गया है, इसके लिए अध्ययन क्षेत्र की विभिन्न आयु वर्ग की जनसंख्या तथा लिगानुसार जनसंख्या के प्रतिशत के आधार पर प्रतिदिन कैलोरिक आवश्यकता की गणना की गई है जिसे 365.25 से गुणा करके तथा गुणनफल को 100 से विभाजित करके प्रति व्यक्ति वार्षिक कैलोरिक आवश्यकता की गणना की गई है।

$$\text{अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता} = \frac{\text{प्रति वर्ग कि0 मी0 कृषि क्षेत्र में कुल कैलोरिक उपलब्धता}}{\text{प्रति व्यक्ति वार्षिक कैलोरिक आवश्यकता}}$$

$$4.\ \text{शस्यक्रम गहनता} = \frac{\text{सकल कृषि क्षेत्र}}{\text{शुद्ध कृषि क्षेत्र}} \times 100$$

5. शस्य संयोजन - शस्य संयोजन के लिए दोई, थामस, तथा रफीउल्लाह की विधियों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

6. **कार्य संगठन -**

प्रस्तुत शोध प्रमुख उददेश्य उन आधार भूत तथ्यों की व्याख्या करना है जो किसी देश अथवा क्षेत्र की आर्थिक स्थिरता के लिए उत्तरदायी हैं। हमारे योजना निर्माता यह आरोप लगाते हैं कि हमारी तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या हमारे सामाजिक आर्थिक विकास में एक बड़ा अवरोध उत्पन्न कर रही है, परन्तु यदि हमारा पड़ोसी चीन यदि अपनी जनसंख्या वृद्धि दर को 1.4 प्रतिशत तक घटा सकता है तो भारत वर्ष के लिए क्या यह सम्भव नही है? क्या भारतीय कृषक अपने पड़ोसी चीन की भांति चावल तथा गेहूँ उत्पन्न नहीं कर सकता है। क्यों हमारा सार्वजनिक क्षेत्र सकल घरेलू उत्पाद को बढाने में सहायक न होकर अधिकांश हानि की स्थिति ही प्रदर्शित करते रहते हैं। स्वतंत्रता के पश्चात धनी और निर्धन के बीच की खाई क्यों और अधिक चौड़ी होती जा रही हैं? भारत में निर्धनता तथा भ्रष्टाचार का क्यों बोलवाला दिखाई देता है? जनपद इटावा के अध्ययन के माध्यम से शोधकर्ता द्वारा ऐसे प्रश्नों के उत्तर खोजने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत शोध ग्रंथ अध्ययन को सरल बनाने के लिए 9 भागों में विभक्त है जिसकी प्रस्तावना में प्रस्तुत अध्ययन की आवश्यकता, अध्ययन का महत्व, अध्ययन के उददेश्य, शोध विधि आदि का विवरण प्रस्तुत किया गया है। अध्याय प्रथम अध्ययन क्षेत्र की वर्तमान भौगोलिक तथा सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से सम्बन्धित है, जिसमें अध्ययन क्षेत्र की अवस्थिति, प्रशासनिक संगठन, उच्चावच प्रवाह प्रणाली, मिटटी, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, आदि भौगोलिक जानकारियों के साथ-साथ जनसंख्या का वितरण बैंकिंग तथा भण्डारण सुविधाएं, औद्योगिक स्थिति से सम्बन्धित वर्तमान स्थिति को प्रस्तुत किया गया है। अध्याय द्वितीय सामान्य भूमि उपयोग तथा कृषि भूमि

उपयोग से सम्बन्धित हैं जिसमें अध्ययन क्षेत्र के विकास खण्ड स्तर पर सामान्य भूमि उपयोग यथा वन, कृषि के लिए अनुपलब्ध भूमि, परती के अतिरिक्त अन्य अकृषित भूमि, परती भूमि, कृषि योग्य बंजर भूमि, तथा कृषि भूमि उपयोग से सम्बन्धित तथ्यों का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है साथ ही साथ इसी अध्याय में कृषि भूमि उपयोग को प्रभावित करने वाले कारणों की व्याख्या की गई है।

तृतीय अध्याय कृषि में तकनीकी परिवर्तन का चित्र प्रस्तुत करता है क्यों कि भूमि एक स्थिर संसाधन है जिसे समाज के प्रयोग की दृष्टि से घटाया बढ़ाया नही जा सकता है इसलिए विस्तृत खेती की सम्भावनाएं अब लगभग नगण्य है, तो बढ़ती हुई जनसंख्या की उदरपूर्ति के लिए आवश्यक खाद्यान्न, उत्पन्न करने का अब एकमात्र उपाय गहरी खेती ही है जिसके लिए कृषि में यंत्रीकरण का सुझाव दिया जाता है जिसमें सिंचन सुविधाएं, रासायनिक उर्वरकों का संतुलित प्रयोग, कीट नाशक तथा फसलों को रोग से बचाने हेतु औषधियों का प्रयोग तथा उन्नत किस्म के बीजों का अधिकाधिक प्रयोग सम्मिलित हैं। उक्त तथ्यों से सम्बन्धित अध्ययन क्षेत्र में गहरी खेती की वर्तमान स्थिति तथा भावी सम्भावनाओं पर विचार किया गया है। चतुर्थ अध्याय फसल प्रतिरूप से सम्बन्धित है जिसमें अध्ययन क्षेत्र में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल का विवरण प्रस्तुत किया गया है, प्रमुख फसलें कौन-कौन सी है? रबी, खरीफ तथा जायद फसलों में क्या खाद्यान्न फसलों की प्रधानता है? नकद मुद्रादायिनी फसलों की क्या स्थिति है आदि प्रश्नों के साथ-साथ व्यावसायिक कृषि की सम्भावनाओं को भी खोजने का प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त इसी अध्याय में विकास खण्ड स्तर पर शस्य संयोजन की भी गणना की गई है तथा शस्य विभेदीकरण को जानने के लिए विभिन्न विकास खण्डों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

पंचम अध्याय में विभिन्न फसलों के कुल उत्पादन के साथ-साथ वर्तमान औसत उत्पादकता को भी प्रस्तुत किया गया है। इस अध्याय में विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत कृषि उत्पादन मापन विधियों का उल्लेख करते हुए अध्ययन क्षेत्र में कृषि उत्पादकता के वर्तमान स्तर

को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। साथ ही साथ वर्तमान कृषि भूमि से उपलब्ध उत्पादन तथा जनसंख्या के भरण - पोषण की स्थिति का भी तुलनात्मक अध्ययन किया गया है और यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया है कि विकास खण्ड स्तर पर वार्षिक कृषि उत्पादन से उस विकास खण्ड में निवास करने वाली जनसंख्या का आवश्यक भरण-पोषण सम्भव है, एक विकास खण्ड का सम्पूर्ण कृषि क्षेत्र कितनी जनसंख्या के आवश्यक पोषण स्तर को बनाए रखने में सक्षम है, आदि तथ्यों की जानकारी की गई हैं।

अध्याय छः तथा अध्याय सात प्रतिचयति ग्रामों तथा प्रतिचयित कृषकों के कृषि भूमि उपयोग, उपभोग स्तर, तथा कुपोषण जनित बीमारियों से सम्बन्धित है। अध्याय षष्टम में प्रतिचयति कृषकों के कृषि प्रारूप, कृषक परिवार के आहार प्रचलन उनकी भोजन सामग्री में खाद्य पदार्थो की मात्रा तथा खाद्य पदार्थो में पोषक तत्वो की मात्रा का आकलन किया गया है। प्रतिचयति कृषकों को पांच वर्गो में भूमिहीन, सीमान्त कृषक, लघु कृषक, मध्यम कृषक, तथा बड़े कृषक परिवारों में विभाजित करके विभिन्न वर्गो द्वारा प्रतिदिन प्रति व्यक्ति उपभोग किए जाने वाले खाद्य पदार्थो की मात्रा तथा उपभोग किए जाने वाले खाद्य पदार्थो में पोषक तत्वों की उपलब्ध मात्रा की गणना करके प्रति व्यक्ति मानक पोषण स्तर से तुलना करके अल्प पोषण तथा अति पोषण का आकलन किया गया है ।

अध्याय सप्तम प्रतिचयित कृषक परिवारों के स्वास्थ्य का चित्रण करता है, जिसमें लोगों की भोजन सामग्री में मानक स्तर से कम पोषक तत्वों के ग्रहण करते रहने से उत्पन्न बीमारियों का विश्लेषण किया गया है साथ ही सर्वेक्षण द्वारा यह ज्ञात करने का प्रयास किया गया है कि विभिन्न वर्गो के कृषक परिवारों में मानक स्तर से कम पोषक तत्वों के ग्रहण करने के कारण बालक, व्यस्क, तथा वृद्ध किन - किन कुपोषण जनित बीमारियों से ग्रसित हैं, इस अध्याय में यह भी ज्ञात करने का प्रयास किया गया है कि विभिन्न वर्गो के लोग कुपोषण के शिकार हैं अथवा नहीं? कुपोषण के कौन - कौन से कारण है। अन्तिम अध्याय अष्टम में अध्ययन के

निष्कर्ष, एवं सुझाव प्रस्तुत किए गये हैं। इन सभी अध्यायों में अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि उपयोग, अध्ययन क्षेत्र के लोगों के पोषण स्तर तथा उनके स्वास्थ्य से सम्बन्धित तथ्यों की जानकारी देने का प्रयास किया गया है, साथ ही अध्ययन क्षेत्र के सन्तुलित विकास के लिए कुछ ऐसे आवश्यक सुझाव प्रस्तुत किए गये है जिनको ध्यान में रखते हुए यदि विकास की योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाये तो अध्ययन क्षेत्र में निवास करने वाली जनसंख्या का मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों ही दृष्टियों से सन्तुलित पोषण सम्भव बनाया जा सकता है।

सन्दर्भ।

1. शर्मा एस0 सी0 (1966) 'लैण्ड यूटीलाइजेशन इन सादाबाद तहसील (मथुरा) यू0 पी0, इण्डिया, अप्रकाशित शोध ग्रंथ, आगरा विश्वविद्यालय पृष्ठ - 2

2. रिपोर्ट आन इण्डियाज फूड क्राइसिस एण्ड स्टेप्स टु मीट इट दि एग्रीकल्चरल प्रोडक्शन' टीम स्पोन्सोर्ड वाई दि फूड फाउण्डेशन दि गोवर्नमेन्ट आफ इण्डिया 1959 पृष्ठ - 1 - 22

3. फर्स्ट फाइव इयर प्लान पृष्ठ - 30।

4. सिंह सुदामा (1994) भारतीय अर्थव्यवस्था समस्याएं एवं नीतियां, नील कमल प्रकाशन गोरखपुर, पृष्ठ - 269-70

5. ईश्वर धींगरा (1991) ' ग्रामीण अर्थव्यवस्था' सुल्तान चन्द एण्ड सन्स नई दिल्ली पृष्ठ - 159

6. स्टाम्प एल0 डी0 (1962) दि लैण्ड ऑफ ब्रिटेन इटस यूजेन एण्ड मिसयूजेज लन्दन

प्रथम अध्याय

अध्याय प्रथम

अध्ययन क्षेत्र की भौगोलिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि

(अ) भौतिक पृष्ठ भूमि :

किसी क्षेत्र के निवासियों की आर्थिक एवं सामाजिक क्रियाएं वहाँ की भौतिक परिस्थितियों द्वारा प्रत्यक्षरूप से निर्देशित एवं नियंत्रित होती है । भौतिक वातावरण के प्रमुख अंग जैसे प्रादेशिक स्थिति, भूमि की बनावट, जलवायु, मिट्टियां, जलराशियां, प्राकृतिक वनस्पति एवं खनिज पदार्थ किसी भी भूभाग के सम्पूर्ण सांस्कृतिक पर्यावरण को प्रमाणित करते हुए उसके स्वरूप को निश्चित कहते हैं । जलवायु एवं मिट्टी वातावरण के सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है जिनका कि प्रभाव कृषि एवं उससे सम्बन्धित अन्य क्रियाकलापों पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है । भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है जो कि मुख्यरूप से जलवायु एवं मिट्टी पर निर्भर है । मिट्टी भारतीय कृषक की अमूल्य सम्प्रदा है जिसका कि प्रभाव मानव के भोजन, वस्त्र एवं निवास जैसी मूल आवश्यकताओं पर पड़ता है । अतः उपर्युक्त तत्वों द्वारा मानव की आर्थिक क्रियाएं , शिक्षा. सामाजिक स्वर आदि प्रभावित होते हैं ।

भौतिक परिस्थितियां जहाँ मानव के अनुकूल होती है उस क्षेत्र में मनुष्य की आर्थिक क्रियायें जैसे कृषि, पशुपालन, खनन, लकड़ी काटना, मत्स्यय व्यवसाय एवं व्यापार आदि वातावरण से प्रभावित होती है एवं इसका प्रभाव वहाँ के निवासियों के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक जीवनस्तर पर स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है । इसके विपरीत प्रतिकूल भौगोलिक परिस्थितियों वाले क्षेत्रों में मानव मात्र निर्वाहक स्थिति में रहता है । उन्नति सामाजिक आर्थिक क्रियाओं के क्षेत्रों में पोषण स्तर उच्च होता है जिसका प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर पड़ता है । प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र का विश्लेषण कृषि भूमि उपयोग पोषण स्तर एवं मानव स्वास्थ्य से सम्बन्धित है अतः अध्ययन क्षेत्र की भौतिक परिस्थितियों का ज्ञान आवश्यक है ।

स्थिति , विस्तार एवं प्रशासनिक संगठन :

प्रस्तावित अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद मण्डल के अन्तरगत आता है । यह जनपद $26^{0}21'$ से $27^{0}1'$ उत्तरी अक्षांस तथा $78^{0}45'$ से $79^{0}45'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है । जनपद

LOCATION MAP
ETAWAH DISTRICT
78° 45' E
15'
79° 30' E
27° N
26° 45'
26° 30' N
STATE BOUNDARY
DISTRICT BOUNDARY
TAHSIL BOUNDARY
BLOCK BOUNDARY
BLOCK HQ.
RIVER
ROAD
RAILWAY LINE
0
10
km
MAINPURI
FARRUKHABAD
FROM AGRA
FROM DELHI
AGARA
JASWANT NAGAR
BASRAHAR
TAKHA
AIRWAKATARA
BIDHUNA
SAHAR
BHARTHANA
ACHALDA
MAHEWA
BHAGYA NAGAR
AJITMAL
AURAIYA
CHAKAR NAGAR
BADHPURA
RIVER CHAMBAL
RIVER YAMUNA
MADHYA PRADESH
JALAUN
KANPUR DEHAT
TO KANPUR
TO KANPUR
ETAWAH DISTRICT
ETAWAH IN KANPUR REGION
STUDY AREA
0
100
km
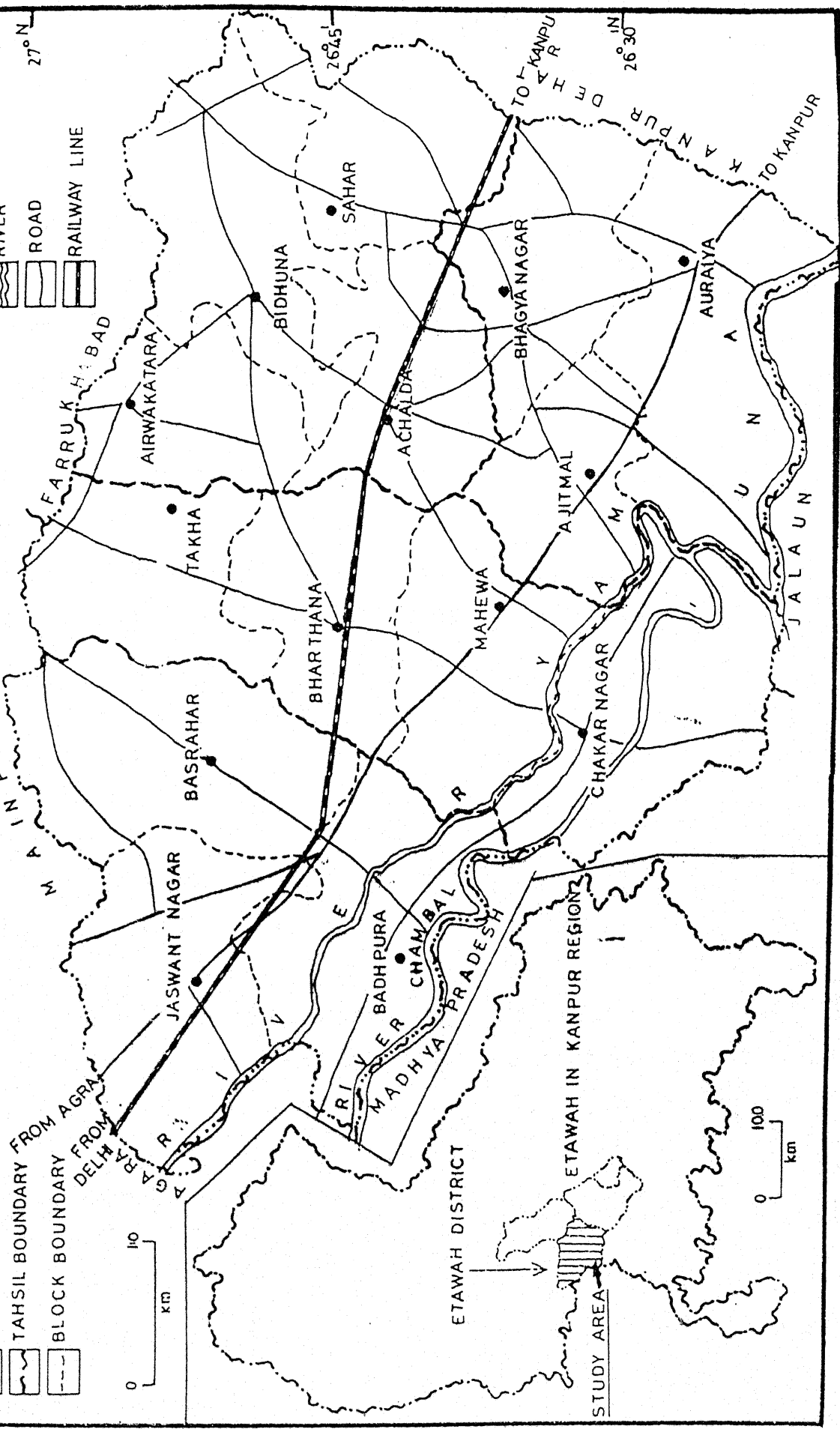
FIG. NO. 1

का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 4364.17 वर्ग किलोमीटर है ।[1] इसके उत्तर में मैनपुरी , फरुखाबाद , पूर्व में कानपुर देहात, दक्षिण में जालौन तथा मध्य प्रदेश का जनपद भिण्ड, पश्चिम में आगरा एवं फिरोजाबाद जिले स्थित हैं । प्रशासनिक दृष्टि से सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र 4 तहसीलों एवं 14 विकास खण्डों में विभाजित है ।

सारिणी क्रमांक 1.1 अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा का प्रशासनिक संगठन ।

तहसील मुख्यालय	सामुदायिक विकास खण्ड
1.इटावा	1. जसवन्त नगर, 2. बढ़पुरा 3. वसरेहर
2. भरथना	1.भरथना 2. ताखा 3. महेवा 4.चकरनगर
3. विधूना	1. अछल्दा 2. विधूना 3. एरवाकटरा 4. सहार
4. औरैया	1.औरैया 2. अजीतमल 3.भाग्यनगर ।

भौमिकीय संरचना :

संरचना की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र भारत के उत्तरी मैदानी भाग का एक अभिन्न अंग है जो कि दक्षिण में स्थित प्रायद्वीपीय भाग एवं उत्तर के हिमालय क्षेत्र के मध्य विस्तृत है । इस विस्तृत मैदानी भाग का पुरातन भूगर्भ, प्लीस्टोसीन युगीन अवसाद व गंगा यमुना क्रम की नदियों द्वारा लाई गई जलोढ़ मिट्टी के निक्षेप से आवृत्त है । हिमालय के पादप प्रदेश में स्थित इस मैदानी भाग की भूगर्भिक संरचना का अनेक भूगर्भशास्त्रियों ने अध्ययन किया है । भूगर्भशास्त्रियों का विश्वास है कि इस मैदानी भाग की रचना हिमालय के दक्षिण में स्थित एक विशाल गर्त में अबसाद के निक्षेपीकरण से हुई है । एडवर्ड स्येस के अनुसार " हिमालय की रचना के बाद, हिमालय ~~एवं प्रायद्वीपीय भारत के मध्य स्थित एक विशाल गर्त में निक्षेपण द्वारा इस मैदानी भाग की रचना हुई ।~~"

एवं प्रायद्वीपीय भारत के मध्य स्थित एक विशाल गर्त में निक्षेपण द्वारा इस मैदानी भाग की रचना हुई।'[2] एस0 जी0 बुर्राड के अनुसार ' यह मैदान एक भ्रंश घाटी के रूप में है। भारतीय विद्वान डा0 एम0 एस0 कृष्णन ने इस भ्रंश घाटी को अवतलित घोल (slag) के नाम से पुकारा है। डा0 कृष्णन के अनुसार - 'इस अवतलित घोल का निर्माण भारतीय उपमहाद्वीप के उत्तर की ओर खिसकने और हिमालय के उत्थान के समय हुआ ।'[3] संक्षेप में कहा जा सकता है कि यहां पर एक भूसंनति के आकार का एक गर्त था, जिसे डा0 डी0 एन0 वाडिया ने[4] सिनक्लाइनोरियम' (cynclinorium) के नाम से पुकारा है। डा0 एस0 जी0 बुर्राड के मतानुसार भ्रंशघाटी का निर्माण दरार के भूभाग के नीचे धसक जाने से हुआ होगा और उसमें जल भर जाने से इस गर्त की रचना हुई होगी। उनके अनुसार इस बड़े भ्रंश की रचना 2400 किलोमीटर की लम्बाई में एवं हजारों मीटर की गहरायी में हुई होगी तथा इसके निर्माण में हिमालय का भी योगदान रहा होगा।

गंगा-यमुना द्वारा निर्मित मैदान के अवसाद की गहराई का अभी तक निश्चित ज्ञान नहीं है। परन्तु पाताल तोड़ कुएँ बनाने एवं खनिज तेल की खोज के लिए की गयी खुदाई से इस मैदानी भाग की गहराई पृथ्वी की सतह से 1380 मीटर से 1400 मीटर तक सिद्ध होती है।[5] ओल्डहम के अनुसार - सबसे गहरा छिद्र लखनऊ के निकट जो कि जनपद इटावा की पूर्वी सीमा से 168 किलोमीटर की दूरी पर है, वहां की गहराई 3920 मीटर नापी गयी हैं और यह गहराई चटटानी तक ~~तक~~ नहीं थी।'[6] संरचना की दृष्टि से ओल्डहम'[7] ने इस मैदान की गहराई 4500 मीटर तक बतायी है। कोवी[8] ने उन्हीं आकडों का प्रयोग करके कुछ अधिक गहराई बतायी है। ग्लीनी[9] ने इस मैदानी भाग की गहराई कुछ कम बताई है। आपके अनुसार इन अवसादों की गहराई 1950 मीटर है।

अतः स्पष्ट है कि नदियों द्वारा लाई गई जलोढ़ मिटटी से बना यह मैदान उत्तर में हिमालय पर्वत एवं दक्षिण में गोडवाना भूखण्ड के मध्य स्थित है। संरचना की दृष्टि से यह मैदानी भाग एक नवीन रचना है। प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र जलोढ़ मिटिटयों के निक्षेप से बना एक मैदानी भूभाग है जो यमुना गंगा मैदानी भाग का ही एक हिस्सा है। इसकी रचना बालू, क्ले तथा सिल्ट

ETAWAH DISTRICT
DISTRIBUTION OF BANGAR AND KHADAR LAND
BANGAR
KHADAR
0
10
km
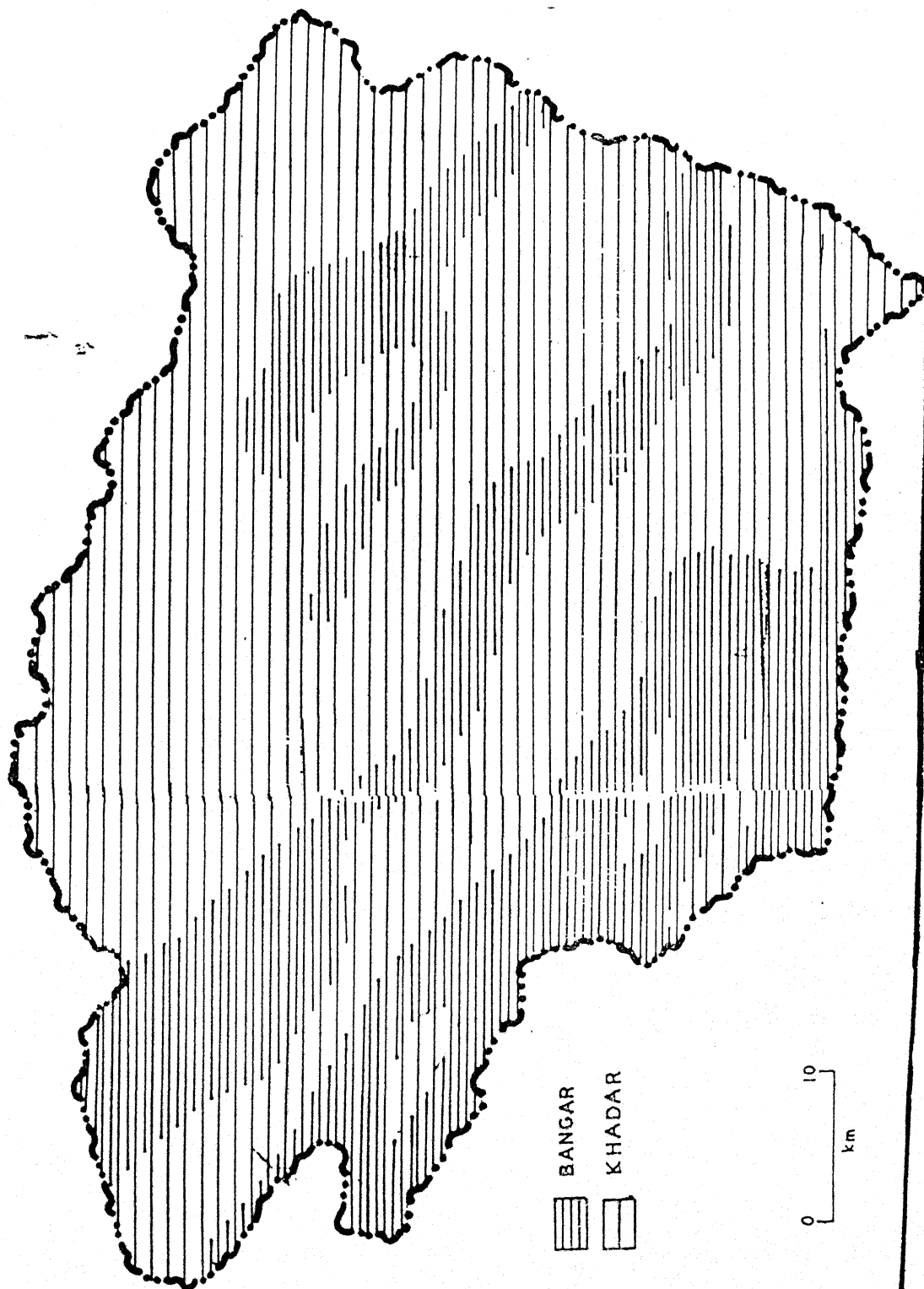
FIG.2

से हुई है, कहीं - कहीं बजरी तथा कंकड भी पाये जाते हैं। जलोढ़ मिटटी से निर्मित इस मैदानी भाग को संरचना की दृष्टि से दो भागों मे विभाजित किया गया है।

1. पुरातन जलोढ़
2. नवीन जलोढ़

पुरातन जलोढ़ -

पुरातन जलोढ़ को स्थानीय भाष में 'बांगर' कहा जाता है जो प्राचीन कांप से निर्मित अपेक्षाकृत उच्च भू भाग है जहां सामान्य वर्षा काल में बाढ़ का पानी नहीं पहुँच पाता है। ये जलोढ़ भू भाग मध्य एवं अन्तिम प्लीस्टोसीन युग से सम्बन्धित हैं । यहां चूना युक्त कंकरीली मिटटी पायी जाती है जिसमें नमी की मात्रा कम होती है।

नवीन जलोढ़ -

नवीन जलोढ़ को स्थानीय भाषा में 'खादर' कहते हैं। ये नवीन कांप मिटटी से निर्मित निचले मैदानी भाग है, जो वर्षा काल में बाढ़ ग्रस्त हो जाते हैं। एवं प्रतिवर्ष नदियों की बाढ़ द्वारा नवीन मिटटी का निक्षेपण होता रहता है। 10

अध्ययन क्षेत्र के दक्षिणी भाग में स्थित पुरातन एवं नवीन कांप मिटिटयों के जमाव के क्षेत्र, यमुना, चावल, एवं क्वारी नदियों के कटाव के कारण, घनघोर बीहड़ के रूप में परिवर्तित हो गए हैं। जनपद के मध्य भाग में सेंगर नदी के किनारे भी ऊँचे उठे भाग एवं खड्ड पाये जाते है।

उच्चावच -

धरातल प्राकृतिक पर्यावरण का एक अति महत्वपूर्ण अवयव है। किसी भी क्षेत्र के भौगोलिक अध्ययन एवं विश्लेषण में धरातलीय स्वरूपों की केन्द्रीय भूमिका होती है। मानव के

ETAWAH DISTRICT
CONTOURS
500
480
460
480
460
440
440
440
0
20
KM
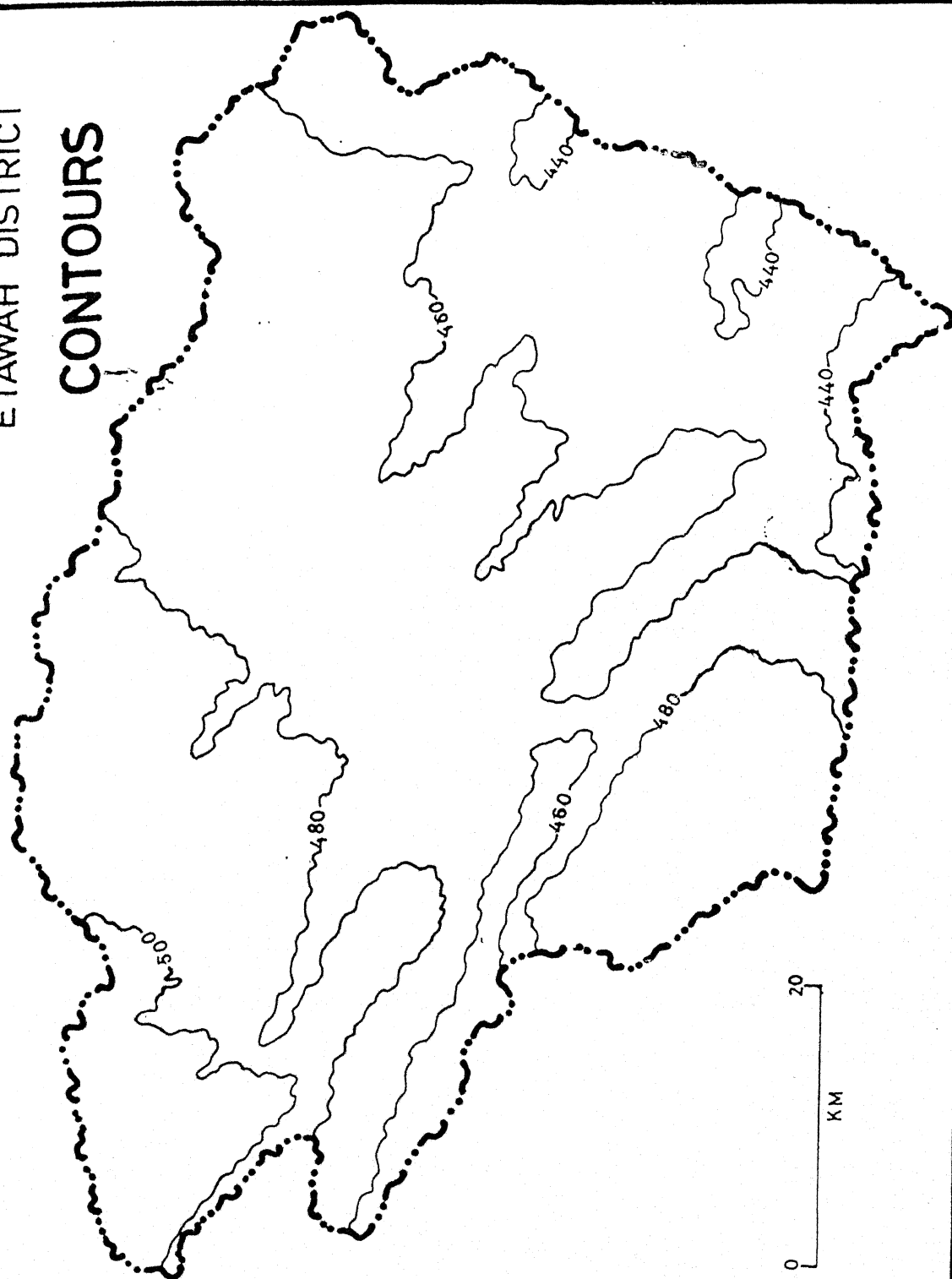
FIG. 3

आर्थिक क्रिया कलापों पर धरातल का प्रभाव प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर होता है। धरातलीय स्वरूपों के आधार पर क्षेत्र की संचार सुविधा, मानव अधिवास, कृषि, भूमि उपयोग आदि निर्धारित होता है। गंगा यमुना के मैदान के अन्य क्षेत्रों की जनपद इटावा में कृषि भूमि उपयोग, खाद्यान्न, संसाधनों एवं भू आकृति स्वरूपों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। अतः भू आकृति का सम्यक ज्ञान प्राप्त करना प्रस्तुत शोध क्षेत्र की विवेचना के लिए अनिवार्य है।

जनपद इटावा गंगा यमुना दोआब में स्थित भारत के उत्तरी मैदानी भाग का एक अभिन्न अंग है जिसकी धरातलीय बनावट को यमुना, चम्बल, क्वारी तथा सेंगर नदियों ने अधिक प्रभावित किया है। जनपद का समस्त धरातलीय भाग नदियों द्वारा निक्षेपित जलोढ़ मिटटी का बना है जो कि लगभग समतल है। लेकिन बीच-बीच में कुछ असमतल भाग भी दृष्टिगोचर होते हैं। इस प्रकार के असमतल भाग उथले गर्त के रूप में पाये जाते हैं। कहीं-कहीं पर नदियों के प्रभाव के कारण बालुका युक्त कटक, ऊँचे उठे टीलानुमा भू भाग एवं अत्यन्त कटेफटे क्षेत्र पाए जाते हैं जिन्हें बीहड़ कहते हैं। यह क्षेत्र यमुना चम्बल एवं क्वारी नदियों के आसपास विस्तृत है। सेंगर नदी के किनारे - किनारे भी उथले खडड एवं टीलेनुमा उठे भूभाग पाए जाते हैं। धरातलीय रचना के अनुसार जनपद का उत्तरी भाग अधिकांशतः दुमट मिटटी का बना एक समतल मैदान है। जिसमें कहीं - कहीं कुछ उठे टीलेनुमा भूभाग पाए जाते हैं।

ट्रांस यमुना क्षेत्र जो जनपद के दक्षिणी भाग में यमुना नदी के दक्षिण में विस्तृत है, की धरातलीय रचना उत्तरी भाग की अपेक्षा पूर्णतः भिन्न हैं। इस क्षेत्र के धरातल पर यमुना, चम्बल, एवं क्वारी नदियों का प्रभाव स्पष्ट देखने को मिलता है। यह एक कटा फटा क्षेत्र है जिसे स्थानीय भाषा में 'बीहड़' के नाम से पुकारा जाता है। यह बीहड़ क्षेत्र नदियों के किनारे काफी विस्तृत क्षेत्र में फैला हुआ है। यहां पर समतल भूमि यमुना चम्बल के बीच उच्च भागों में उच्च मैदान के रूप में पायी जाती है।

जनपद का सामान्य ढाल उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर है। जिसमें कुछ

स्थानीय विषमताएं पायी जाती है। उत्तरी पश्चिमी भाग की समुद्र तल से सामान्य ऊँचाई 150 मीटर है जब कि दक्षिण में यह ऊँचाई घटकर 135 मीटर रह जाती है। इसकी ढाल प्रवणता में लगभग 15 मीटर का अन्तर है जो कि उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व को है। जनपद का सामान्य ढाल 18.8 सेण्टीमीटर प्रति किलोमीटर से भी कम है। अध्ययन क्षेत्र का सबसे ऊँचा भाग उत्तरी पश्चिमी भाग में स्थित है जिसकी समुद्र तल से औसत ऊँचाई 150 मीटर से अधिक है। इसका अधिकांश उत्तरी पश्चिमी भाग 144 मीटर से 150 मीटर की ऊँचाई के अन्तर्गत आता है। 138 मीटर से 144 मीटर की ऊँचाई के अन्तर्गत जनपद का मध्यवर्ती भाग सम्मिलित है जो कि उत्तर पूर्व से दक्षिण पश्चिम एवं दक्षिण पश्चिम से दक्षिणी पूर्वी भाग तक विस्तृत है। 132 मीटर से 138 मीटर ऊँचाई वाला क्षेत्र जनपद के दक्षिणी पूर्वी भाग में सबसे अधिक लम्बाई मेंफैला हुआ है। इसके बीच-बीच में छोटी एवं सकरी निम्न ऊँचाई की भूमि नदियों के किनारे एवं जनपद के दक्षिणी पूर्वी भाग के किनारे पाए जाते हैं। अतः स्पष्ट है कि जनपद का अधिकांश धरातल, कुछ स्थानीय विषमताओं को छोड़कर, नदियों द्वारा निक्षेपित एक समतल मैदानी भाग है। सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र को धरातलीय रचना के आधार पर निम्नलिखित पांच भागों में बांटा जा सकता है।

1. बीहड़ क्षेत्र
2. ट्रांस यमुना उच्च भूमि
3. नवीन दोमट मिटटी का क्षेत्र
4. सेंगर यमुना समतल भूमि
5. उत्तरी निम्न भूमि क्षेत्र

बीहड़ क्षेत्र -

यह जनपद के दक्षिणी भाग में यमुना नदी के उत्तरी भाग से लेकर दक्षिण में क्वारी नदी तक विस्तृत है। जनपद की इटावा तहसील, भरथना तहसील, एवं औरैया तहसील केनदियों के किनारे के बीहड़ क्षेत्र इसके अन्तर्गत आते हैं। इस क्षेत्र में बहने वाली यमुना, चम्बल, एवं क्वारी नदियों ने अपने समीपवर्ती क्षेत्र में अपरदन द्वारा विशाल बीहड़ क्षेत्र की रचना की है।

ETAWAH DISTRICT
PHYSIOGRAPHIC DIVISIONS
NORTHERNLOW LAND TRACT
SENGAR-YAMUNA FLAT LAND
NEW ALLUVIAL TRACT
TRANS-YAMUNA LEVEL UPLAND
RAVINE TRACT
0
10
km
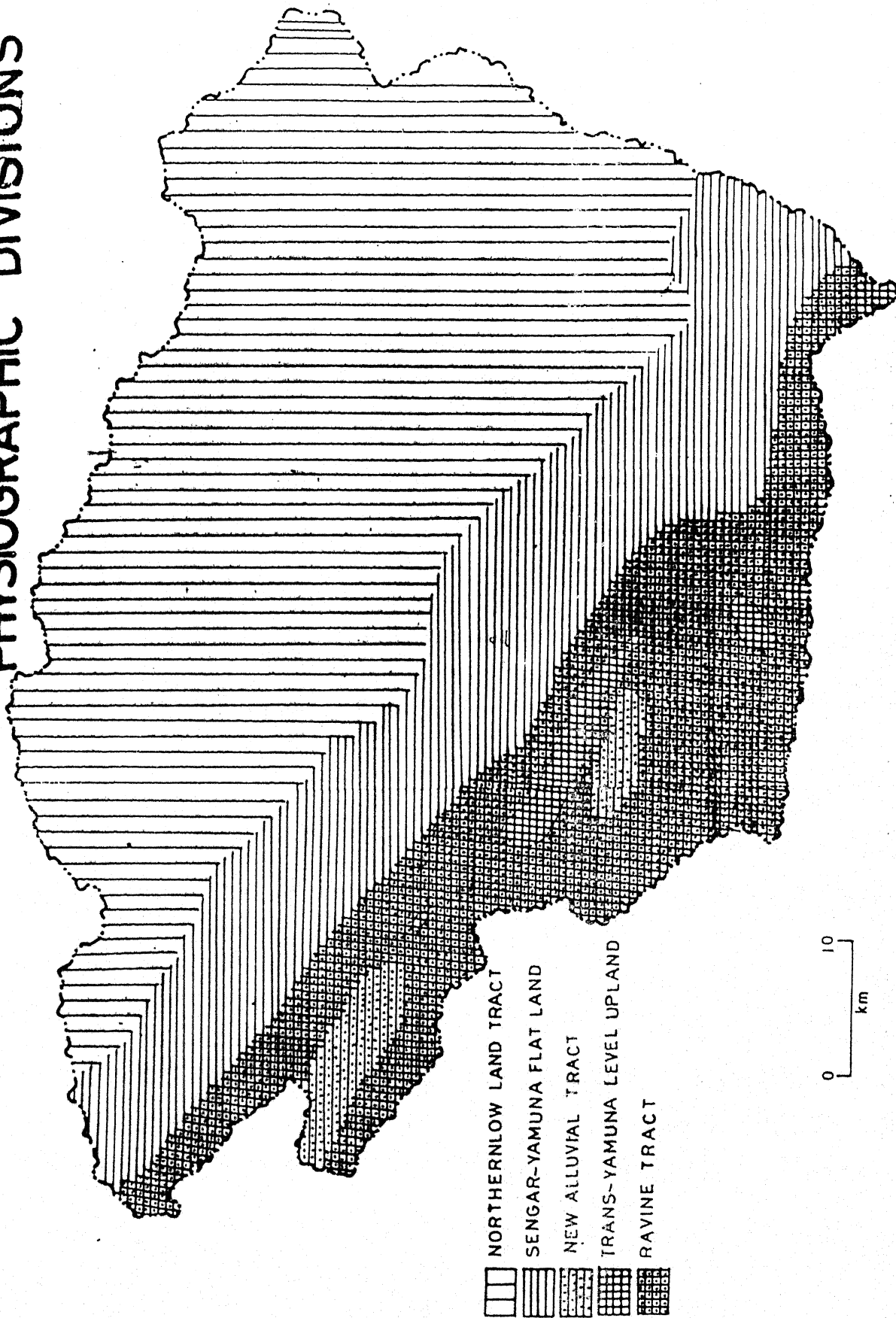
FIG.4

इन नदियों के किनारे 24 मीटर से 30 मीटर तक ऊँचे -ऊँचे कगार पाये जाते हैं। कहीं कहीं ये कगार 60 मीटर तक की ऊँचाई के पाए जाते हैं। इटावा जनपद के दुर्दांत दस्युओं की शरण स्थली भी यही बीहड़ क्षेत्र हैं।

ट्रांस यमुना उच्च भूमि -

यमुना नदी के दक्षिण में यमुना चम्बल नदियों के मध्य उठे हुए मैदानी भाग के रूप में इस भूभाग का विस्तार है। इस क्षेत्र के अन्तर्गत मुख्य रूप से बढ़पुरा, एवं चकर नगर विकास खण्ड आते हैं। यमुना चम्बल बीहड़ प्रदेश के मध्य स्थित यह उच्च मैदानी भाग निक्षेपण द्वारा बलुई तथा दोमट मिटटी से बना है जो कि बहुत उपजाऊ है। यहां खरीफ फसल अच्छी होती है।

नवीन दोमट मिटटी का क्षेत्र -

यमुना चम्बल नदियों के किनारे-किनारे इस भू भाग का विस्तार है। बढ़पुरा, चकरनगर एवं औरैया विकास खण्ड के यमुना चम्बल के निकटवर्ती भू भाग सम्मिलित हैं। नदियों के समीपस्थ क्षेत्रों में प्रति वर्ष बाढ़ के समय कांप मिटटी की एक नई पर्त बिछ जाती है। इस नवीन दोमट मिटटी के क्षेत्र को स्थानीय लोग 'खादर' के नाम से पुकारते हैं। कृषि के लिए यह भूमि बहुत उपयुक्त है। इसमें गेंहूँ का उत्पादन अच्छा होता है।

सेंगर यमुना समतल भूमि -

यमुना सेंगर के मध्य स्थित यह एक समतल मैदानी भाग है। सेंगर नदी इस भू भाग की उत्तरी सीमा निर्धारित करती है तथा इसकी दक्षिणी सीमा यमुना नदी द्वारा निश्चित की जाती है। इसके अन्तर्गत इटावा तहसील, भरथना तहसील, एवं औरैया तहसील के भूभाग आते हैं। इस मैदानी भाग का ढाल उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व को है। यह पुरातन कांप मिटटी का बना एक जलोढ़ मैदानी भाग है, जिसे स्थानीय लोग 'बांगर' के नाम से पुकारते हैं। यह भूमि मटियार, दोमट किस्म की है जो कि बहुत उपजाऊ होती है।

उत्तरी निम्न भूमि क्षेत्र -

सेगर नदी के उत्तर में स्थित यह मैदानी भाग जनपद इटावा का सबसे उत्तरी भाग है जिसे स्थानीय भाषा में 'पचार' कहते हैं। इस भू भागके अन्तर्गत सेगर नदी केउत्तर में स्थित जनपद का समस्त भूभाग आ जाता है। यह जनपद का सबसे निम्न क्षेत्र है। जल निकास की उचित व्यवस्था न होने के कारण यहां पर वर्षा काल में जल प्लावन की समस्या रहती है इस भू भाग का ढाल उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व कोहै। यह एक समतल मैदानी भाग है परन्तु इस क्षेत्र में बहने वाली बरसाती नदियां, अरिन्द, पुरहा, एवं अहनइया ने कहीं-कहीं इसके समतल धरातल में विषमताएं उत्पन्न कर दी है। इस भाग की मिटटी बलुई, दोमट, मटियार, किस्म की है, इस क्षेत्र में यत्र तत्र ऊसर तथा भावर क्षेत्र भी पाए जाते हैं। जल भराव होने के कारण निचले क्षेत्र को स्थानीय लोग 'भावर' के नाम से पुकारतेहैं।

जल प्रवाह प्रणाली

जल के बिना जीवन सम्भव नहीं है। यह न केवल मनुष्य की शारीरिक आवश्यकताओं के लिए अनिवार्य है, वरन पौधों, एवं जन्तुओं के विकास के लिए भी आवश्यक है। यही कारण है कि भारत की प्राचीन आर्य सभ्यता सिन्धु एवं गंगा नदियों की घाटियों में विकसित हुई। अतः स्पष्ट है कि किसी भी क्षेत्र के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में नदियों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र गंगा यमुना दोआब में स्थिति एक समतल मैदानी भाग है जिसके धरातलीय स्वरूपों, सरंचना, कृषि, आर्थिक एवं सामाजिक विकास पर नदियों का प्रत्यक्ष प्रभाव सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है।[11] अतः इटावा जनपद की जल प्रवाह प्रणाली का अध्ययन अपरिहार्य है।

अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा में जलप्रवाह प्रणाली का विकास ढाल के अनुरूप हुआ है।यहां की अधिकांश नदियां उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व को बढ़ती है। यमुना, चम्बल, क्वारी एवं सेगर जनपद की प्रमुख नदिया है तथा अरिन्द्र, पुरहा, सिरसा, अहनइया, अध्ययन क्षेत्र की अन्य

ETAWAH DISTRICT
DRAINAGE
RIVER YAMUNA
SIRSA N.
AHNEYA N.
PURHA N.
PANDUI N.
RIND N.
SEGAR N.
RIVER CHAMAL
KUARI N.
R. YAMUNA
PERENNIAL RIVER
SEASONAL RIVER
RAVINES
LAKES
0
20
KM
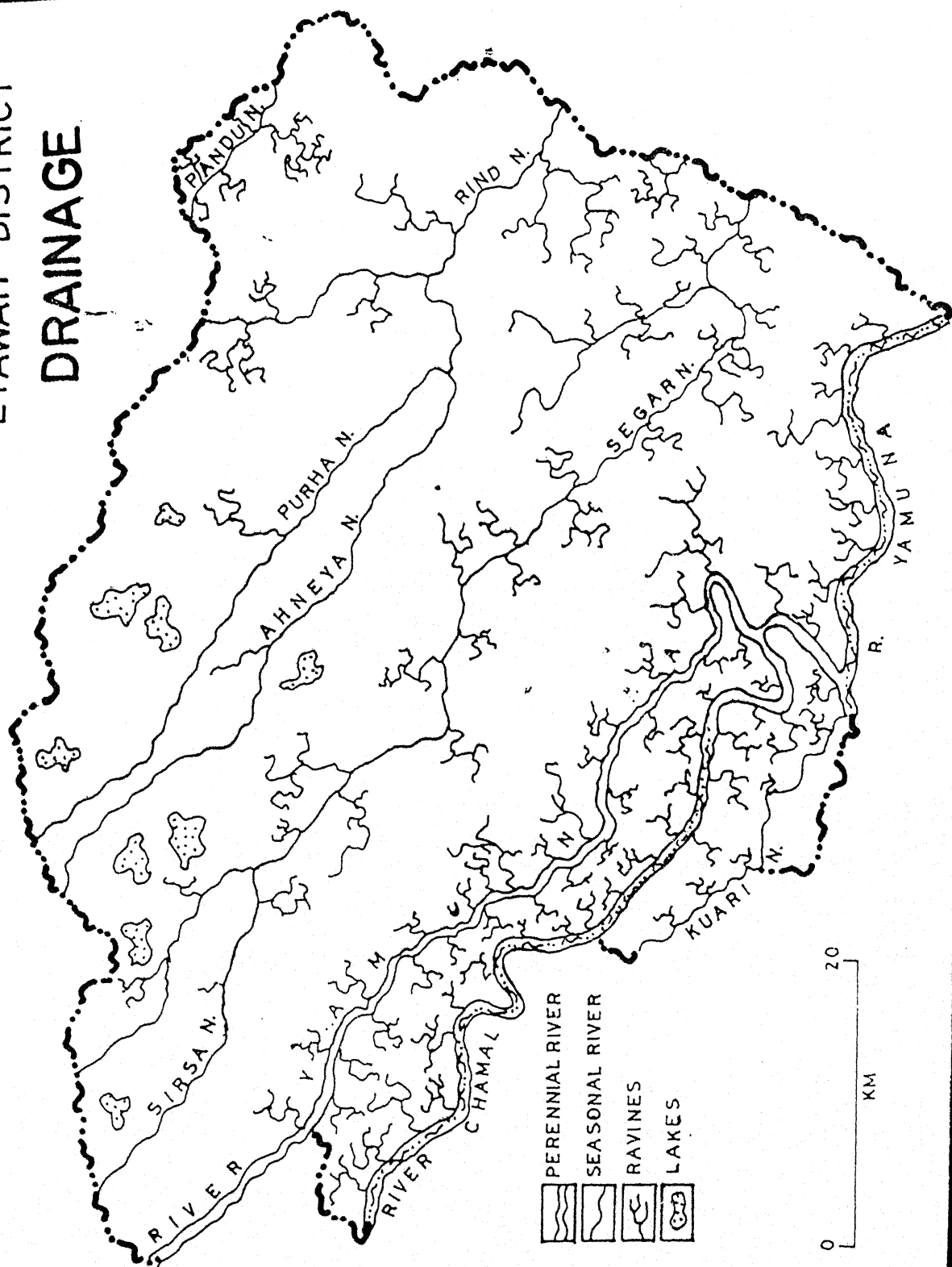
FIG.-5

मौसमी नदियांहै।क्षेत्र का ढाल अत्यन्त मन्द होने के कारण ये नदियां बड़े - बड़े विसर्प बनाती हुई एक दूसरे के लगभग समानन्तर रूप में प्रवाहित होती है। यमुना, चम्बल, क्वारी,जनपद के दक्षिणी भाग में प्रवाहित होने वाली प्रमुख नदियां है जब कि सेंगर, अहनइया, सिरसा एवं पुरहा नदियां जनपद के उत्तरी भाग में बहती है।

यमुना नदी -

यह अध्ययन क्षेत्र की सबसे बड़ी नदी है जो कि जनपद के उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व को लगभग 148 किलोमीटर की लम्बाई में बहती है । यह नदी इटावा जनपद के उत्तरी पश्चिमी भाग से प्रवेश कर इटावा, भरथना, औरैया तहसील होती हुई पूर्व की ओर प्रवाहित होती है। यह कुछ स्थानों पर जनपद की पश्चिमी एवं उत्तरी सीमा निर्धारित करती है। वर्षा ऋतु में इस नदी की चौड़ाई 540 मीटर तथा शुष्क मौसम में 90 मीटर रहती है। औरैया तहसील में पचनदा के निकट इसमें चम्बल, क्वारी, एवं सिन्ध आदि नदियां आकर मिल जातीहै। यमुना नदी के अधिक भूमि कटाव के कारण इसके दोनों किनारों पर बीहड़ क्षेत्र बन गए हैं।

चम्बल नदी -

चम्बल नदी जनपद इटावा के दक्षिणी भाग में बढ़पुरा तथा चकरनगर विकास खण्ड होती हुई लगभग 74 किलोमीटर की लम्बाई से प्रवाहित होती है। यह यमुना नदी की सहायक नदी है। इसकी घाटी गहरी है तथा अपने दोनों किनारों पर यमुना की भांति बीहड़ क्षेत्र बनाए है। वर्षा के दिनों में इसमें बाढ़ आ जाती है किन्तु शेष दिनों में जल की मात्रा कम रहती है।

क्वारी नदी -

यह नदी अध्ययन क्षेत्र की दक्षिणी सीमा निश्चित करती है। यह यमुना की एक सहायक नदी है जो कि चकरनगर विकास खण्ड के विडंवा कला ग्राम से चलिया होती हुई चम्बल नदी के साथ औरैया तहसील में प्रवेश कर 'पचनदा' के पास यमुना में मिल जाती है। जनपद में

इसकी लम्बाई 40 किलोमीटर है। इस नदी के दोनों ओर कटाव के कारण गहरे खडड बन गए हैं जिन्हें स्थानीय भाषा में 'खार' कहते हैं। ये बीहड़ क्षेत्र अत्यन्त दुर्गम क्षेत्र है।

सारिणी क्रमांक 1.2 जनपद इटावा में नदियों का विस्तार (किलोमीटर में)

Name of River	Distance in Kilometer	Name of River	Distance in Kilometer
Yamuna	148	Arind	53
Chambal	74	Purha	48
Kuari	40	Sirsa	29
Sengur	97	Abinaya	56

सेंगर नदी -

यह नदी जनपद के उत्तरी भाग में प्रवेश कर दक्षिण पूर्व को बहती हुई भरथना, औरैया, तहसील होते हुए लगभग 97 किलोमीटर की लम्बाई में यमुना के समानान्तर प्रवाहित होती है। यह जनपद की दूसरी बड़ी नदी है। इटावा नगर से 6 किलोमीटर उत्तर में अमृतपुर के निकट सिरसा नामक सहायक नदी मिल जाती है, इसकी घाटी संकरी एवं उथली है।

इसके अतिरिक्त पुरहा, सिरसा, अहनइया, तथा अरिन्द जनपद की अन्य मौसमी नदियां है। ये नदियां क्रमशः 48 किलोमीटर, 29 किलोमीटर 56 किलोमीटर एवं 53 किलोमीटर की लम्बाई में प्रवाहित होती है। पाण्डु तथा सिन्ध जनपद की अन्य मौसमी नदियां है। सिन्ध, क्वारी नदी की सहायक नदी है। जो कि दक्षिण में भरेह के पास चम्बल में मिल जाती है। पाण्डु नदी जनपद के उत्तरी पूर्वी भाग में बहती हुई आगे चलकर गंगा नदी में मिल जाती है। जब जनपद की अन्य सभी नदियां यमुना नदी में विभिन्न स्थानों पर मिलती है।

जलवायु -

जलवायु भौतिक वातावरण का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है।[12] भूतल पर निवास करने वाले मानव जीवन पर भौतिक वातावरण के जिन अंगों का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है, उनमें जलवायु का सर्वोच्च स्थान है। मानव ही नहीं वरन भौतिक वातावरण के अन्य अंग जैसे धरातल, मिट्टी, वनस्पति, जीव जन्तु, आदि भी जलवायु से प्रभावित होते हैं। मानव के सभी कार्यो कृषि, पशुचारण, उद्योग, व्यापार आदि, पर जलवायु का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है।[13] जलवायु से मनुष्य की शारीरिक व मानसिक क्षमताएं जुड़ी रहती हैं। भारतीय कृषि जो भारत की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार है,का भविष्य पूर्णतया मानसून पर निर्भर करता है।' मानसून वह धुरी है जिस पर भारत का समस्त जीवन चक्र घूमता है, क्यों कि वर्षा का अभाव अकेले कृषि को नष्ट नहीं करता है अपितु, भारतीय किसान एवं देश के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को झकझोर देता है।' इसीलिए भारत सरकार का बित्त बजट मानसून बजट कहलाता है। ढिट बैक के शब्दों में 'जलवायु का मानवीय क्रियाओं पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।'[14]

जनपद इटावा गंगा-यमुना दोआब में स्थिति मानसूनी जलवायु वाला क्षेत्र है, जिसका कि प्रभाव यहां के निवासियों के रहन- सहन , क्रिया -कलापों, व्यवसाय, तथा कृषि पर स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। जनपद इटावा का आर्थिक आधार कृषि है जो मुख्य रूप से तापमान, वर्षा, वायुदाब, पर निर्भर है। अतः प्रस्तुतः अध्ययन क्षेत्र की जलवायु का अध्ययन अति आवश्यक है। चूंकि इटावा जनपद में वर्षा के अतिरिक्त जलवायु सम्बन्धी अन्य सूचनाएं एकत्र नहीं की जाती हैं अतः प्रस्तुत विश्लेषण में वर्षा के अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार की सूचनाएं निकटतम भारतीय मौसम विज्ञान की वेधशाला, मैनपुरी से प्राप्त की गयी है।

अध्ययन के अन्तर्गत शोध क्षेत्रकी जलवायु भारत के उत्तरी मैदानी भाग की जलवायु की विशेषताओं से युक्त है, इस आधार पर गंगा-यमुना दोआब के अन्य भूभागों की तरह भारतीय मौसम विज्ञान विभाग ने जनपद इटावा की जलवायु को निम्नलिखित चार ऋतुओं में विभाजित किया है।

1. ग्रीष्म ऋतु
2. वर्षा ऋतु
3. शरद ऋतु
4. शीत ऋतु

ग्रीष्म ऋतु -

मध्य मार्च से लेकर मध्य जून तक का समय ग्रीष्म ऋतु के अन्तर्गत आता है। फरवरी माह से उत्तर भारत के तापमान में क्रमशः वृद्धि होने लगती हैं।जून माह में जिस समय सूर्य कर्क रेखा पर लम्बवत चमकता है समस्त उत्तरी मैदान भाग अत्यधिक गर्म हो जाता है एवं पूरे जनपद में भीषण गर्मी पड़तीहै। मार्च का अधिकतम औसत मासिक मापमान 38.4 से॰ अप्रैल का 43.4 से0, मई का 45.9 से0, तथा जून का अधिकतम औसत मासिक तापमान 45.8से0 रहता है। दूसरी ओर मार्च का न्यूनतम औसत तापमान 9.4 से0 ,अप्रैल का 15.3से0, मई का 20.8 से0,एवं जून का न्यूनतम औसत मासिक तापमान 23.7 से0, रहता है। मार्च में औसत मासिक तापमान 23.9से0 रहता है जो कि जून माह में बढ़कर 34.75 से0 रहता है। मई जून इस ऋतु के सबसे गर्म माह है। दिन में तेज धूप होतीहै एवं गर्म हवाएं चलती है जिन्हें स्थानीय भाषा में 'लू' कहते हैं।

वायुदाब एवं हवाएं -

तापमान में वृद्धि के साथ - साथ वायुदाब में भी क्रमशः गिरावट प्रारम्भ हो जाती है। जून में अत्यधिक गर्मी के कारण भारत के उत्तर पश्चिम में निम्न वायुदाब केन्द्रीभूत हो जाता है जिसका कि प्रभाव इस जनपद पर भी पड़ता है। इस समय यहां वायुदाब 980.88 मिलीवार रहता है जो कि वर्ष का सबसे कम वायुदाब है। इसी प्रकार मासिक औसत वायुभार मई में 984.05 मिलीवार, अप्रैल में 988.90 मिलीवार तथा मार्च में 994.22 मिलीवार औसत मासिक वायु भार रहता है। इस समय इस क्षेत्र में हवाएं उच्च वायु भार से निम्न वायुदाब की ओर चलती हैं तथा हवाओं की गति क्रमशः मार्च में 3.84 कि0 मी0, अप्रैल में 3.68 कि0 मी0 मई में 4.32 कि0 मी0 एवं जून में 4.48 कि0 मी0 रहती है।

वर्षा एवं आर्द्रता -

सम्पूर्ण उत्तरी भारत में इस ऋतु में मौसम शुष्क रहता है मार्च के बाद मैदानी भागों में तापमान में तेजी से वृद्धि होती है, जब कि वायुमण्डल में आपेक्षिक आर्द्रता बहुत कम पायी जाती है। भारतीय ऋतु वेधशाला मैनपुरी से उपलब्ध आपेक्षिक आर्द्रता के आंकडों से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में मई माह में वर्ष में सबसे कम आपेक्षिक आर्द्रता पायी जाती है यह आपेक्षिक आर्द्रता 29.00 प्रतिशत रिकार्ड की गयी है। अप्रैल में आपेक्षिक आर्द्रता 30.0 प्रतिशत तथा मार्च में 40.50 प्रतिशत रहती है। जून में समुद्री पवनों के प्रभाव के कारण आपेक्षिक आर्द्रता में वृद्धि होती है तथा इस समय आपेक्षिक आर्द्रता 44 प्रतिश्तात हो जाती है। जून के तीसरे सप्ताह के बाद इस क्षेत्र में वर्षा होती है। जून में लगभग 64.2 मिलीमीटर वर्षा होती है, शेष महीनों में वर्षा बहुत कम होती है।

वर्षा ऋतु -

मध्य जून से मध्य सितम्बर तक का समय मानसून काल या वर्षा काल कहलाता है। जून की तपन के बाद अचानक मानसून आ जाने से मौसम में भारी परिवर्तन होता है, तथा गरज के साथ वर्षा प्रारम्भ हो जाती है, वर्षा अधिक होने के कारण ही इसे वर्षा ऋतु कहते हैं।

तापमान -

जून के बाद उत्तरी भारत के मैदानी भाग में मानसून की सक्रियता देखने को मिलती है। मानसूनी वर्षा की वृद्धि के साथ - साथ जनपद के समस्त भागों में तापमान क्रमशः गिरने लगता है, और तापमान में यह गिरावट दिसम्बर माह तक बराबर होती रहती है। जुलाई माह का अधिकतम औसत तापमान 40.9 से0, अगस्त का 36.9 से0, एवं दिसम्बर माह का अधिकतम औसत मासिक तापमान 37.1 से0, रहता है। इसके विपरीत जुलाई का न्यूनतम औसत मासिक तापमान 23.3 से0, अगस्त का 23.5 से0, एवं सितम्बर का औसत मासिक न्यूनतम तापमान 21.8 से0 रहता है। जुलाई में औसत मासिक तापमान 32.10 से0, रहता है, जो कि सितम्बर में घटकर 29.45 से0, रह जाता है। इस प्रकार जुलाई से सितम्बर तक तापमान में 2.16 से0, की कमी आ जाती है।

सारणी 1.3 जनपद इटावा की वर्षा ऋतु में वर्षा का मात्रा

वर्ष	वार्षिक वर्षा का योग मिलीमीटर में	जुलाई से सितम्बर तक की वर्षा की माप मिलीमीटर में	वर्षा की मात्रा का प्रतिशत
1. 1970	846.4	528.2	62.60
2. 1971	927.8	548.9	59.16
3. 1972	448.6	425.9	87.17
4. 1973	668.8	600.5	87.30
5. 1974	749.5	668.5	89.19
6. 1975	510.1	320.6	62.86
7. 1976	785.2	702.5	89.47
8. 1977	723.7	647.0	89.40
9. 1978	817.2	664.1	81.26
10.1979	556.1	280.1	50.37
11.1980	1174.6	1046.3	89.08
12.1981	688.4	568.8	82.62
13.1982	949.4	777.2	81.91
14.1983	1068.2	685.8	64.20
15.1984	671.9	551.2	86.51

भारतीय ऋतु वेधशाला मैनपुरी (उ0 प्र0)

A
TEMPERATURE VARIATIONS
TEMP °C
45
40
30
20
10
0
J F M A M J J A S O N D
MONTH.
MEAN MONTHLY MAX.
MONTHLY MEAN
MEAN MONTHLY MIN.
C
MONTHLY NORMALS OF RAINFALL (IN mm)
(1930-1980)
ETAWAH
BHARTHANA
BIDHUNA
AURAIYA
RAINFALL (IN mm)
250
200
150
100
50
0
J A J S O
MONTH
B
AVERAGE ANNUAL RAINFALL
(IN mm)
755
775
750
742
725
OVER 800
775-800
750-775
725-750
BELOW 725
D
RAINFALL- MEAN ANNUAL VARIABILITY
OVER 24%
22-24%
20-22%
BELOW 20%
5 0 5 10 15 20
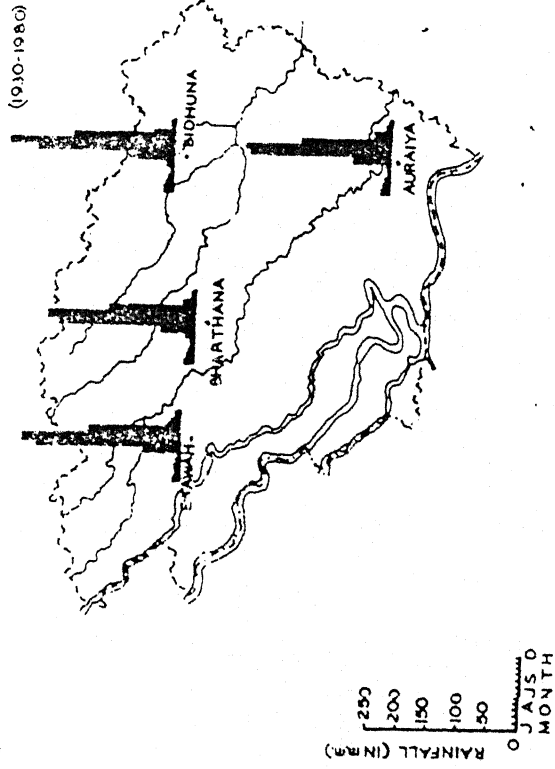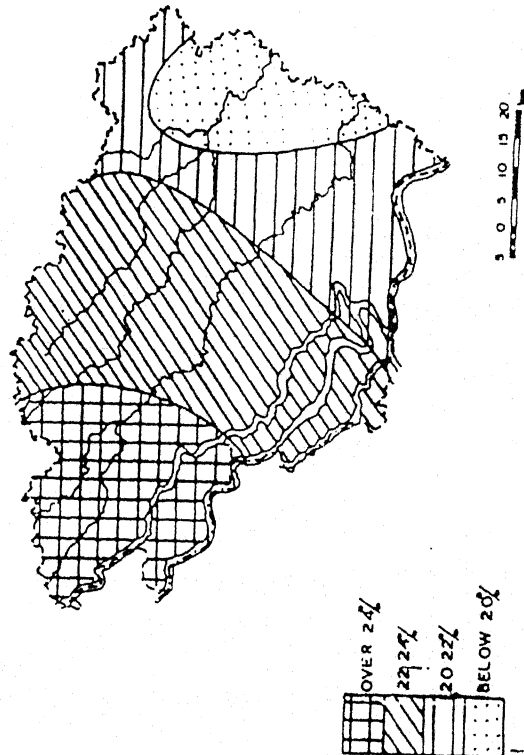
FIG.- 6

वायुदाब एवं हवाएं -

मई के अन्त तक भारत के उत्तरी पश्चिमी भाग में निम्न वायु दाब का केन्द्र स्थापित हो जाता है। इस समय हिन्द महासागर में उच्च वायुदाब होता है अतः मानसूनी हवाएं हिन्द महासागर से उत्तर पश्चिम की ओर चलने लगती है। दक्षिणी मानसूनी हवाएं जिन्हें स्थानीय भाषा में 'पुरवाई' कहा जाता है, मध्य जून तक प्रवाहित होने लगती है। जून के आखिरी सप्ताह में ये मानसूनी हवाएं समस्त जनपद में प्रवेश कर जाती है परन्तु इनकी तिथि के सम्बन्ध में अनिश्चितता रहती है। ये पूर्वी जल से भरी हवाएं जलवायु की विभिन्न दशाओं में परिवर्तन ला देती हैं। जुलाई, अगस्त, सितम्बर का औसत मासिक वायुदाब क्रमशः 981.64 मिलीवार, 98.88 मिलीवार एवं 987.98 मिलीवार रहता है, एवं हवाओं की गति भी धीरे-धीरे बढ़ती जाती है।

वर्षा एवं आर्द्रता -

वर्षा का सम्बन्ध बादलों की सघनता एवं आपेक्षिक आर्द्रता से होता है। मानसूनी हवाओं के आने से बादलों की सघनता एवं आपेक्षिक आर्द्रता का प्रतिशत काफी बढ़ जाता है। भारतीय ऋतु वेधशाला मैनपुरी से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार इस क्षेत्र में जुलाई, अगस्त, एवं सितम्बर माह की औसत आपेक्षिक आर्द्रता क्रमशः 74 प्रतिशत, 80.5 प्रतिशत एवं 74.5 प्रतिशत, रहतीहै, जो कि वर्ष में सबसे अधिक है। जनपद में जून के आखिरी सप्ताह से वर्षा प्रारम्भ हो जाती है एवं जुलाई, अगस्त, सितम्बर में बादलों की गरज, तथा बिजली कड़क के साथ - साथ घनघोर वर्षा होती है। इन तीन महीनों में जनपद की लगभग 60 प्रतिशत से अधिक वर्षा होती है जो कि लगभग 80 प्रतिशत तक है। जुलाई, अगस्त, एवं सितम्बर माह में औसत मासिक वर्षा क्रमशः 196.4 मिलीमीटर, 247.3मिलीमीटर, एवं 151.9 मिली मीटर होती है। आंकडों के अनुसार जनपद में अगस्त माह में सबसे अधिक वर्षा होती है। इस समय मानसून अधिक सक्रियता के कारण वर्ष की कुल वर्षा का लगभग 92 प्रतिशत भाग पांच माह में जून से अक्टूबर तक इस जनपद को प्राप्त होता है।

जहां तक जनपद में वर्षा के वितरण का प्रश्न है, यह वितरण वार्षिक वर्षा के

समान है। इस ऋतु में इटावा नगर की औसत वर्षा 736.3 मिलीमीटर, भरथना की 686.7 मिलीमीटर, विधूना की 754.7 मिली मीटर तथा औरैया में 698.4 मिलीमीटर रहती है। सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में औसत रूप से 719.1 मिलीमीटर वर्षा होती है।

वर्षा की परिवर्तन शीलता -

वस्तुतः वर्षा का सामयिक वितरण वार्षिक वर्षा की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण होती है। वर्षा की यह परिवर्तनशीलता कृषि को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। जहां ये परिवर्तनशीलता अधिक होती है, वहां दुर्भिक्ष व अकाल पडने की सम्भावनाएं सदैव बनी रहती है।[15] अध्ययन क्षेत्र में वर्षा की अनिश्चितता के इस कुप्रभाव से बचने के लिए सिंचाई के साधनों का विकास किया गया है। सन1960 में इटावा जनपद में 1577.8 मिली मीटर वर्षा हुई थी जो सामान्य औसत वर्षा से 97.7 प्रतिशत अधिक थी । अन्य वर्षो में भी इसी प्रकार की भिन्नता पायी गयी है। 1837-38, 1860-61, 1877-78, तथा 1905 के आकल इसी भिन्नता के परिणाम थे।

कृषि कार्यो के दृष्टिकोण से वर्षा की मौसमी एवं मासिक भिन्नता अधिक महत्व रखती है। तालिका सं0 1.4 में वर्षा की मासिक भिन्नता का गुणांक दिया गया है। ये गुणांक 1965 से 1990 के मध्य हुई वर्षा के आधार पर ज्ञात किए गए हैं ।

सारणी 1.4 वर्षा की मासिक परिवर्तन शीलता का गुणांक

स्थान	जून	जुलाई	अगस्त	सितम्बर	अक्टूबर
इटावा	109.68	46.21	46.92	56.64	188.84
भरथना	104.85	57.76	45.47	51.26	162.66
विधूना	105.46	51.96	40.22	44.35	151.45
औरैया	116.58	48.82	39.63	48.32	166.28

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि जुलाई, अगस्त, और सितम्बर के महीनों में वर्षा. की परिवर्तन शीलता कम है। अगस्त माह में परिवर्तन शीलता सबसे कम है। इस माह में जहां इटावा तहसील मुख्यालय में परिवर्तन शीलता का गुणांक 46.92 है, वहीं औरैया का यह गुणांक 39.63 है। जुलाई माह में यह परिवर्तन शील गुणांक इटावा का 56.64 है, तथा भरथना का 57.76 है। अगस्त माह में विधूना का परिवर्तन शील गुणांक 44.35 तथा इटावा का 56.64 है। वर्षा की परिवर्तन शीलता का गुणांक जून तथा अक्टूबर माह में अधिक है। इन दोनों महीनों में अक्टूबर माह की परिवर्तन शीलता सबसे अधिक है परिणाम स्वरूप इस माम में वर्षा की अनिश्चितता सबसे अधिक है जिसका कि प्रभाव कृषि पर अधिक पड़ता है।

शरद ऋतु -

मध्य सितम्बर से मध्य नवम्बर तक का काल शरद ऋतु कहलाता है। यह लौटते हुए मानसून का मौसम है अतः इस समय मौसम में भारी परिवर्तन होता है।

तापमान -

सितम्बर के समाप्त होते ही सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध में प्रवेश कर जाता है जिसके परिणाम स्वरूप समस्त उत्तरी मैदानी भाग में तापमान गिरावट प्रारम्भ हो जाती है। इस समय अक्टूबर, नवम्बर, एवं दिसम्बर का औसत उच्चतम मासिक तापमान क्रमशः 36.2 से0, 33.7 से0, एवं 28.6 से0, रहता है। एवं औसत न्यूनतम मासिक तापमान 13.9 से0, 7.6 से0, तथा 4.3 से0, रहता है। औसत मासिक तापमान अक्टूबर का 25 से0, एवं दिसम्बर का 16.40 से0 रहता है। इस प्रकार अक्टूबर से दिसम्बर तक तापमान में 9.60 से0, की गिरावट आ जाती है।

वायुदाब एवं हवाएं -

सितम्बर माह के बाद भारत के उत्तर पश्चिम में स्थित निम्न वायुदाब केन्द्र धीरे-धीरे उच्च वायु दाब में परिवर्तित होने लगता है। अक्टूबर, नवम्बर एवं दिसम्बर में औसत मासिक वायुदाब क्रमशः 994.11 मिलीवार, 998.83 मिलीवार एवं 1001.02 मिली वार रहता है।

इसी समय पवन भी दिशा बदलकर उत्तर पूर्व की ओर चलने लगती हैं क्यों कि इस समय वायुदाब बंगाल की खाड़ी क्षेत्र में निम्न होता है। अतः मानसून का लौटना प्रारम्भ हो जाता है।

वर्षा एवं आर्द्रता -

यह लौटते हुए मानसून का मौसम है अतः भारत के उत्तरी मैदानी भाग में वर्षा प्रायः समाप्त हो जाती है। इस समय ~~जनपद~~ जनपद इटावा का अधिकतर भाग शुष्क रहता है। वर्षा बहुत कम होती है। मैनपुरी वेधशाला से प्राप्त आकडों के अनुसार अक्टूबर, नवम्बर, एवं दिसम्बर में औसत मासिक आर्द्रता क्रमशः 58.5 प्रतिशत, 53.5 प्रतिशत, एवं 63.5 प्रतिशत रहती है। वर्षा क्रमशः अक्टूबर में 40.20 मिलीमीटर, नवम्बर में 2.20 मिलीमीटर, एवं दिसम्बर में 5.5 मिलीमीटर होती है।

शीत ऋतु -

मध्य नवम्बर से लेकर मध्य मार्च तक का समय शीत ऋतु कहलाता है। यह जनपद का सबसे ठंडा मौसम है। जनवरी माह मौसम का सबसे ठंडा माह होता है। केन्ड्रयू के अनुसार - 'स्वच्छ आकाश, सुहावना मौसम, निम्न तापमान, साधारण आर्द्रता, सर्वाधिक दैनिक तापान्तर, तथा धीमे चलने वाली उत्तरी पवनें इस माह की विशेषतायें हैं।

तापमान -

सितम्बर माह के बाद जनपद के समस्त भागों में तापमान में क्रमशः गिरावट आने लगती है। दिसम्बर माह में जिस समय सूर्य मकर रेखा पर लम्बवत चमकता है भारत का समस्त उत्तरी मैदानी भाग अत्यधिक ठंडा हो जाता है। जिसका प्रभाव जनपद इटावा के तापमान पर भी पड़ता है। मैनपुरी वेधशाला से प्राप्त तापमान के आकडों के आधार पर जनवरी माह जनपद का सबसे ठंडा महीना होता है। जनवरी में उच्चतम औसत मासिक तापमान 27.4 से0, एवं निम्नतम औसत मासिक तापमान 3.4 से0, रिकार्ड किया गया है। तथा औसत मासिक तापमान 15.40 से0

है। फरवरी माह से तापमान में क्रमशः वृद्धि प्रारम्भ हो जाती है। और तापमान में यह वृद्धि जून माह तक बराबर होती रहती है। फरवरी एवं मार्च माह में औसत मासिक उच्चतम तापमान क्रमशः 31.5 से0, एवं 38.4 से0, रहता है तथा औसत मासिक न्यूनतम तापमान 5.4 से0 एवं 9.4 0 से0 रहता है। औसत मासिक तापमान 18.40 से0, एवं 23.90 से0 पाया जाता है। इस ऋतु में दैनिक तापान्तर सर्वाधिक पाया जाता है।

वायुदाब एवं हवाएं -

जनपद में तापमान में गिरावट के साथ - साथ वायुदाब में वृद्धि होने लगती है। इस समय भारत के उत्तरी पश्चिमी भाग में उच्च वायु दाब पाया जाता है। जनपद में नवम्बर में औसत वायुदाब 998.83 मिलीवार, दिसम्बर में 1001.02 मिलीवार, जनवरी में 1001.19 मिलीवार एवं फरवरी में औसत मासिक वायुभार 997.81 मिलीवार रहता है। इस प्रकार दिसम्बर तथा जनवरी में जनपद में उच्चतम वायु भार रहता है। फरवरी माह में तापमान में वृद्धि के साथ - साथ वायुभार में गिरावट प्रारम्भ हो जाती है। इस समय हवाएं उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर चलती है। इस समय जनपद में शीतोष्ण चक्रवातों का भी प्रभाव देखने को मिलता है।

आर्द्रता एवं वर्षा -

सम्पूर्ण उत्तरी भारत इस ऋतु में शुष्क रहता है। अक्टूबर माह से ही आसमान मेघरहित होने लगता है। चूकि हवाएं उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर चलती है अतः ये हवाएं ठंडी एवं शुष्क होती है, तथा इनमें आर्द्रता की मात्रा कम होती है। दिसम्बर माह की औसत मासिक आपेक्षिक आर्द्रता 53.5 प्रतिशत रहती है। जनवरी तथा फरवरी में आपेक्षिक आर्द्रता क्रमशः 63.5 एवं 66.5 प्रतिशत रहती है। आर्द्रता की कमी के कारण जनपद में इस ऋतु में वर्षा बहुत कम होती है। इस मौसम में उत्तरी भारत में उत्तर पश्चिम से आने वाले शीतोष्ण चक्रवातों द्वारा थोडी वर्षा होती है जिसका प्रभाव जनपद इटावा पर भी पड़ता है दिसम्बर माह में औसत मासिक वर्षा 5.50 मिलीमीटर, जनवरी में 17.40 मिलीमीटर, एवं फरवरी में 8.90 मिलीमीटर वर्षा होती है। कभी-कभी ओले भी गिरते हैं।

Table No.1.5 Etawah District Climatic characteristics of the study Region.

Month	Temperature in °c			Mean Relative Humidity	Mean Rainfall on mm.	Mean Pressure in m	Mean wind speed per Km
	Mean Max.	Mean Mini	Average				
January	27.4	3.4	15.4	66.5	17.4	1,001.19	2.24
February	31.5	5.4	18.4	55.6	8.9	997.81	2.72
March	38.4	9.4	23.9	40.5	11.6	994.22.	3.84
April	43.4	15.3	29.3	30.0	5.6	988.90	3.68
May	45.9	20.8	33.3	29.0	10.7	984.05	4.32
June	45.8	23.7	34.7	44.0	64.2	980.88	4.48
July	40.9	23.3	32.1	74.0	196.4	981.64	3.52
August	36.9	23.5	30.2	80.5	247.3	983.88	3.04
September	37.1	21.8	29.4	74.5	151.9	987.98	2.72
October	36.2	13.9	25.0	58.5	40.2	994.11	1.76
November	33.7	7.6	20.6	53.5	2.2	998.83	0.48
December	28.6	4.3	16.4	63.5	5.5	1,001.02	1.76

भारतीय ऋतु वेधशाल मैनपुरी (उ0प्र0)

मिट्टी -

विलकाक्स के अनुसार - 'मानव सभ्यता का इतिहास मिट्टी का इतिहास है एवं एक व्यक्ति की शिक्षा मिट्टी से ही प्रारम्भ होती है' इस कथन से मिट्टी का महत्व स्पष्ट है। मिट्टी भारतीय कृषक की अमूल्य सम्पदा है। यह मानव की प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से भोजन, वस्त्र एवं व्यवसाय जैसी मूल आवश्यकताओं का स्रोत है। बैनेट के अनुसार -'भू पृष्ठ पर स्थित असंगठित पदार्थों की ऊपरी पर्त जो मूल शैलों तथा वनस्पति के योग से बनती है, मिट्टी कहलाती है।' मिट्टी की यह पतली पर्त ही मानव मात्र के लिए भोजन का आधार है। इस लिए मिट्टी किसी भी देश की सबसे महत्वपूर्ण राष्ट्रीय सम्पदा कहलाती है। कृषि एवं पशुपालन, जो शाकाहारी एवं मांसाहारी, लोगों के जीवन का आधार है, मिट्टी पर निर्भर है। 'पशु जीवन पौधों पर आधारित है तथा पौधे मिट्टी पर, अतः मानव जीवन का कल्याण मिट्टी से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है।[22] पृथ्वी के ऊपरी धरातल का कुछ सेण्टीमीटर से लेकर 3 मीटर तक की गहरायी वाला भाग मिट्टी कहलाता है।[23] जिसका निर्माण शैलों की संरचना, धरातल की बनावट, जलवायुवीय दशाओं एवं जीवांश के विभिन्न रूपों में संयोजित होने पर होता है। मानव उपयोग की दृष्टि से सभी देशों की मिट्टियां वहां के आवरण प्रसार का सबसे अधिक मूल्यवान अंग है, और उनकी प्रायः सबसे बड़ी प्राकृतिक सम्पत्ति है।[24] कोल के अनुसार - 'मिट्टी पृथ्वी की मृतक धूल को जीवन के सातत्य से जोड़ती है'[25] प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र इटावा जनपद एक कृषि प्रधान भू भाग है। कृषि का समस्त उत्पादन प्रत्यक्ष रूप से मिट्टी पर आधारित है और पशुपालन तथा वन उद्योग अप्रत्यक्ष रूप से वनस्पति के माध्यम द्वारा मिट्टी पर आधारित है। मिटटी द्वारा उत्पादन के इन व्यवसायों में जनपद की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या लगी हुई है । अतः जनपद की मिट्टी का अध्ययन नितांत आवश्यक है।

कृषि पशु चारण, उद्यान, वन आदि के लिए मिट्टी का उपयोग मिट्टी की उर्वरता और भौगोलिक स्थिति दोनों पर निर्भर करता है। यद्यपि सभी प्रकार की मिट्टी में पौधे के लिए कुछ न कुछ पोषण तत्व अवश्य होते हैं परन्तु विभिन्न प्रकार की मिट्टियों की संरचना व संघटन

ETAWAH DISTRICT
SOILS
SANDY TO SANDY SILT SOIL
LOAMY SOIL
CLAYEY SOIL
LIGHT SANDY LOAM SOIL
RAVINE SOIL
0
10
km
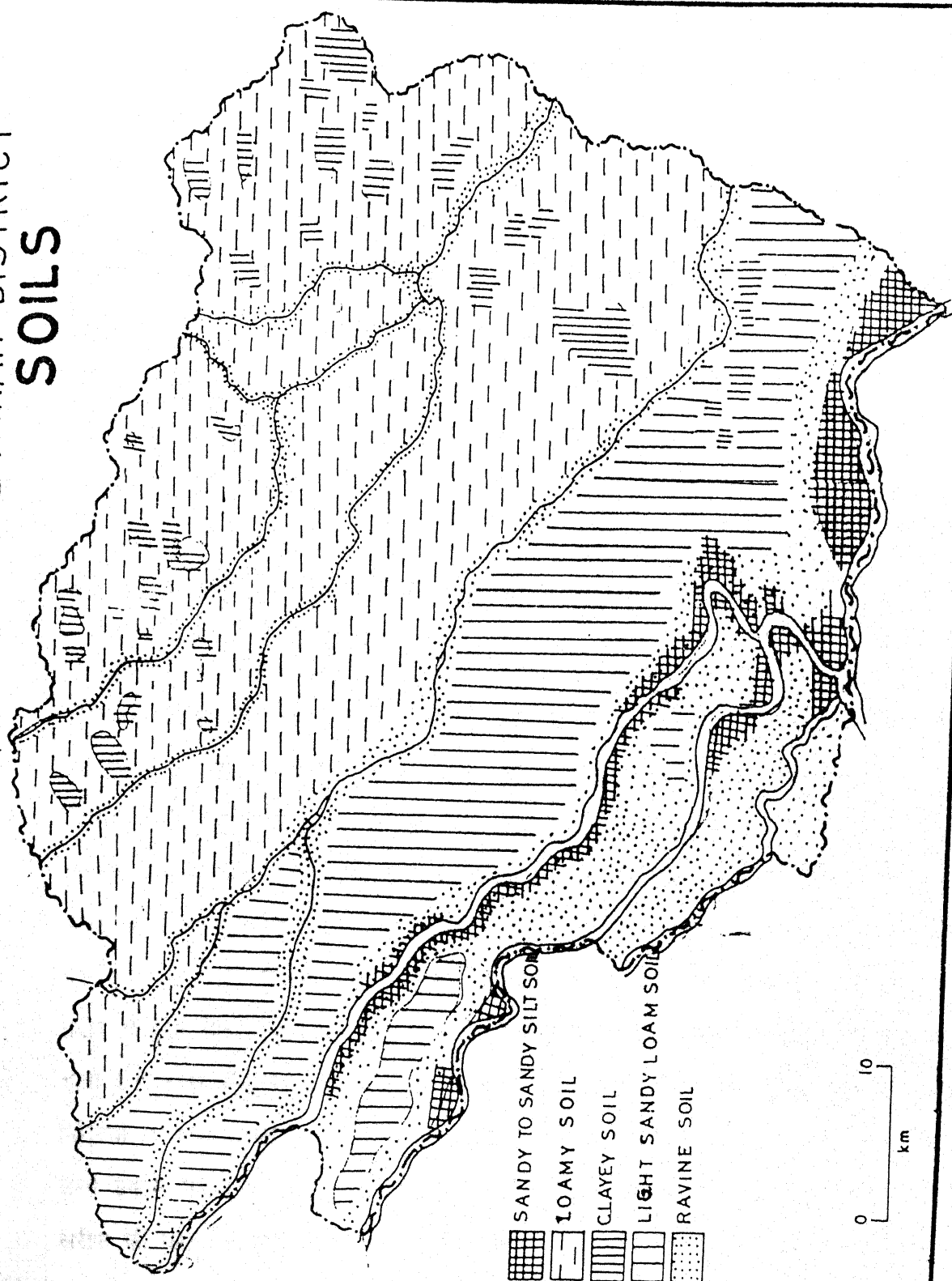
FIG. -7

भिन्न होने के कारण उसकी उर्वरा शक्ति में भी अन्तर पाया जाता है। मिट्टी उर्वरा शक्ति केवल उसके मूल पदार्थ के रासायनिक गुणों पर निर्भर नहीं करती, वरन स्वयं मिट्टी के भौतिक, रासायनिक गुणों पर निर्भर करती है।

इटावा जनपद गंगा - यमुना दोआब के मैदानी भाग का एक अभिन्न अंग है अतः जनपद के समस्त क्षेत्र में जलोढ़ मिट्टियां पायी जाती हैं। नदियों के समीपस्थ भागों में नवीन जलोढ़ मिट्टियां पायी जाती हैं। जो वर्षा काल में बाढ़ ग्रस्त हो जाते हैं तथा नवीन जलोढ़ मिट्टियों का प्रतिवर्ष निक्षेपण होता रहता है। इन्हें खादर नाम से पुकारते हैं। नदियों के दूरस्थ भागों में प्राचीन कांप मिट्टी से निर्मित अपेक्षा कृत ऊँचे भू भाग पाए जाते हैं। जिन्हें बांगर कहते हैं। सामान्यतः अध्ययन क्षेत्र में निम्नलिखित मिट्टियां पायी जाती हैं।

1. बलुई एवं बलुई चीका युक्त मिट्टियां -

स्थानीय रूप से इन मिट्टियों को कछार या खादर मिट्टियां कहा जाता है। ये नवीन निक्षेप से निर्मित है। अतः नदियों के किनारे दोनों ओर पायी जाती है। इनमें बलुई दोमट मिट्टी की बाहुल्यता रहती है। इन मिट्टियों का विस्तार जनपद में यमुना, चम्बल, एवं सेंगर नदियों के किनारे पतली पट्टी के रूप में पायी जाती है। यह मिट्टियां बाढ़ से प्रभावित रहती हैं तथा प्रतिवर्ष इनमें परिवर्तन होता रहता है। स्थिति के अनुसार खादर मिट्टी को दो भांगों में विभाजित किया जा सकता है। तीर और कछार । तीर बलुई दोमट मिट्टी का वह जमाव है जो नदी की मुख्य धारा के अतिनिकट निक्षेपित होता है, और जब नदी का जल स्तर नीचा होता है तो यह नवीन निक्षपित मिट्टी वहीं पर छूट जाती हैं। यह मिटटी रवी की कृषि के लिए बहुत उपयोगी होती है। कछार मिट्टियां नदी के किनारे से थोडी दूर पायी जाती हैं। यह उच्च भूमि एवं तीर मिट्टियों के मध्य लम्बाई में फैली हुई हैं। कहीं-कही पर यह उच्च भूमि और नदी के बीच एक लम्बे समतल मैदानी भाग के रूप में विस्तृत है। ये मिट्टियां उपजाऊ होती हैं। इन मिट्टियों में खरीफ की फसल के मोटे अनाज एवं दलहनी फसलों का उत्पादन अधिक होता है। रबी की फसल

में जौ एवं चना की कृषि सफलता पूर्वक की जाती है। यहां की मिटटी कैल्शियम युक्त हल्की क्षारीय है। इस मिटटी का पी0 एच0 मान 8.20 से 8.60 के मध्य पाया जाता है।

2. हल्की बलुई दोमट मिट्टियां -

यह मिट्टियां बलुई दोमट का मिश्रण है। इनमें चीका के कण बालू के कणों की अपेक्षा कम है। इस प्रकार की मिट्टियां मुख्यतः सेंगर यमुना दोआब की तथा ट्रांस यमुना क्षेत्र में पायी जाती है। इन मिट्टियों को पुनः दो भागों में बांटा जा सकता है।

(अ) सेंगर यमुना की बलुई दोमट मिट्टियां -

इस क्षेत्र की अधिकांश मिट्टियां बलुई दुमट है। औरैया तहसील में ये हल्की बलुई दोमट मिट्टियां लाल रंग की है जो कि बहुत उपजाऊ है। कभी - कभी ये मिट्टियां भूड़ मिट्टी के रूप में परिवर्तित हो जाती है। भरथना तहसील में मुख्यतः बलुई एवं दोमट मिट्टियां यमुना कटक और असमतल क्षेत्रों की बीच गर्तो में पायी जाती है। इन मिट्टियों को स्थानीय भाषा में बरूआ या भूड कहा जाता है। इटावा तहसील में विशेषतः सेंगर, सिरसा, दोआब के पश्चिम में मिट्टी कुछ निम्न कोटि की है। क्यों कि यहां पर बलुई के टिब्बों की बाहुल्यता है। संक्षेप में कहा जा सकता है इस क्षेत्र की मिट्टी भूड एवं दोमट है। इसमें दोमट एवं भूड मिट्टियों का अनुपातिक प्रतिशत 81.5 तथा 8.62 पाया जाता है। यहां की मिट्टी में क्षार की मात्रा अति अल्प है। इस मिट्टी का पी0 एच0 मात्र 7.50 के निकट है । यह मिट्टी अधिक उपजाऊ नहीं है। यह मिट्टी मोटे अनाज एवं जौ के लिए गेहूँ की अपेक्षा अधिक उपयुक्त है।

(ब) ट्रांस यमुना क्षेत्र की बलुई दोमट मिट्टियां -

इस प्रकार की मिट्टियां ट्रांस यमुना क्षेत्र के उच्च समतल भागों में पायी जाती है। यहां भू गर्भिक जल स्तर, बहुत नीचा है। (लगभग 18 मी0) और सिंचाई के साधनों की बहुत कमी है। यहां अच्छे प्रकार की हल्के रंग की दोमट मिट्टी पायी जाती है। चम्बल युना दोआब के मध्य पश्चिम की ओर यह मिट्टियां काफी भारी होती है। यहां की मिट्टी में क्षारीय मात्रा बहुत

कम पायी जाती है। इस मिटटी का पी0 एच0 मात्र 7 और 8 के मध्य है। मोटे अनाज तथा जौ चना के उत्पादन के लिए यह मिट्टियां उपयुक्त रहती है। कृषि कृत भूमि में बलुई दोमट और भूड मिट्टियां क्रमशः 40-84 एवं 12.90 प्रतिशत पायी जाती है।

3. चीकायुक्त मिट्टियां -

यह मिटटी सेंगर यमुना क्षेत्र के उत्तरी भागों में पायी जाती है। इन मिट्टियों की रचना स्थानीय भू दश्यावली एवं धरातल के स्थानीय प्रभाव के कारण हुई है। ऊपरी क्षेत्र में इनकी संरचना बहुत अच्छी पायी जाती है जब कि निचले क्षेत्रों में हल्की है। आमतौर पर यहां पर कंकड के निक्षेप पाए जाते हैं। इस क्षेत्र में जल के निकास की व्यवस्था पर्याप्त नहीं है अतः यहां वर्षा के दिनों में बहुत से क्षेत्रों में पानी भर जाता है। पानी के निकास की उचित व्यवस्था न होन के कारण यहां का जल सौर्य वाष्पीकरण से ही सूखता है। इसी कारण यहां गर्मियों के दिनों में धरातल के ऊपर सफेद लवण युक्त मिट्टियों का जमाव हो जाता है। इन लवणों के कारण ही यहां की मिटटी का पी0 एच0 मान उच्च पाया जाता है। जिसके कारण यहां की मिट्टी में पर्याप्त मात्रा में क्षारीय तत्व पाए जाते हैं। जहां पर क्षार की मात्रा अधिक पायी जाती है वहां पी0 एच0 मान 11 तक मिलता है। इन क्षार युक्त मिट्टियों के क्षेत्रों को यहां स्थानीय भाषा में ऊसर कहा जाता है। इस प्रकार के क्षेत्रों का प्रबन्धन सही किया जाए तो इसका उपयोग फसलों के अन्तर्गत किया जा सकता है। इस प्रकार की मिट्टियां धान उत्पादन के लिए उपयुक्त होती है। वर्षा के दिनों में जिन क्षेत्रों में पानी भर जाता है उन्हें 'झावर' कहते हैं।

4. भारी दोमट मिट्टियां -

यह मिट्टियां जनपद के उत्तरी भाग में पायी जाती हैं। इन मिट्टियों के सम्पूर्ण क्षेत्र में कठोरपन एवं एक रूपता पायी जाती है। इनका रंग गहरा भूरा तथा हल्का लाल होता है। और गहरायी के साथ - साथ इनका रंग गहरा होता जाता है। इनकी संरचना में दोमट, चीका की प्रधानता, होती है। इस क्षेत्र के उच्च भागों में दोमट तथा निम्न भागों में चीका दोमट की मात्रा अधिक पायी जाती है। जहां पर मिट्टी में चीका के कणों की मात्रा अधिक होती है वहां मिट्टी

में जल धारण करने की क्षमता भी अधिक होती है। इस मिट्टी का पी0 एच0 मान 7.50 और 8.50 के मध्य पाया जाता है। ये मिट्टियां अल्प क्षारीय होती है। और गहरायी के साथ - साथ इनकी क्षारीयता बढ़ती जाती है। यह अनुउपयुक्त जल प्रवाह का निम्न क्षेत्र है जिससे विस्तृत क्षेत्र में लवणयुक्त ऊसर मिट्टी पायी जाती है। यहां भूगर्भिक जल स्तर लगभग 6 मीटर से कम है। ये मिट्टियां गेहूँ, गन्ना, मटर, धान आदि के लिए उपयुक्त होती है। इस क्षेत्र की इन मिट्टियों में कृषि का क्षेत्र 87.21 प्रतिशत है।

5. बीहड़ मिट्टी -

नदी के किनारे बजरी एवं कंकड युक्त बीहड़ मिट्टियां पायी जाती है। इस क्षेत्र की मिट्टियों को स्थानीय भाषा में 'पाकर' कहा जाता है। वास्तव में ये कंकड युक्त बलुई मिट्टियां है। इन मिट्टियों पर भूमि अपरदन का अधिक प्रभाव पड़ा है। मृदा अपरदन के कारण भूमि के उपजाऊ तत्वों का क्षय होता रहता है। सामान्तया यह मिट्टियां अनुपजाऊ है। अतीतकाल में यह भाग समतल रहा होगा परन्तु वर्षा काल में जल प्रवाह द्वारा इस उपजाऊ समतल भाग का इतना अधिक कटाव हुआ कि यह क्षेत्र ऊँचे नीचे भू भाग के रूप में परिवर्तित हो गया है।

भरथना तहसील के कुछ क्षेत्रों में इस बीहड़ क्षेत्र की मिट्टियों का रंग लाल एवं पीला है। यह अनुपजाऊ क्षेत्र है तथा भूगर्भिक जलस्तर नीचा होने के कारण मिट्टी में आर्द्रता की कमी पायी जाती है। खरीफ की फसल में मोटे अनाज एवं दालें तथा रबी में चना, जौ का उत्पादन अच्छा होता है।

प्राकृतिक वनस्पति -

प्राकृतिक वनस्पति प्रकृति द्वारा मनुष्य को दिया गया एक बहुमूल्य उपहार है जो कि किसी क्षेत्र की जलवायु एवं मृदा का सम्मिलित परिणाम होती है। प्राकृतिक वनस्पति जलवायु, मिटटी, एवं वन्यजीवों को भी प्रभावित करती है। इसके द्वारा मनुष्य को उसके जीवन की आवश्यकताएं प्राप्त होती हैं एवं आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक उन्नति के साधन प्राप्त होते

सारिणो क्रमांक 1.6 निम्न सारिणी जनपद इटावा की मिट्टी के विभिन्न गुणों को दर्शाती है ।

Sl.No.	Particulars	Kachhar soil	Sandi Loam soil	Clayev Soil	Heavy Loam soil	Ravine soil
1.	Colour	white to to Brown	Radish Brown	Ash to Dark grey	Dark grey	Radish Brown to grey
2.	Texture	Sandy to Silenty	Sandy Loam	Cley & Clayev loam	Loam and Clevey loam	Gravelly to Light sand
3.	P.H.Value	8.20-8.50	6.20-7.80	7.70-8.80	7.20-8.45	7.8
4.	Lime	3-4 per cent	Less than 1 per cent	Average High	Less than 1 per cent	Average
5.	Clay	Poor	Average	Very High	High in sub soil	Average
6.	Soluble salt	High	Poor	Highest in the District	Average to High	Poor
7.	Drainage	Imperfect	Good	Verv poor	Imperfect to fair	Excessive
8.	Percentage ofconductivity .	0.396-0.143	0.092-0.186	0.081-0.145	0.153-0.301	0.137 only

हैं। पारिस्थितिकी व्यवस्था के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में प्राकृतिक वनस्पति का कार्य उल्लेखनीय है।[16] मिटटी पर प्राकृतिक वनस्पति एवं पशु जगत मानव जीवन का आधार बनता है।[17] इस प्रकार मानव एवं प्राकृतिक वनस्पति का परस्पर जैविक सम्बन्ध है, जिसके द्वारा एक दूसरे का सह - अस्तित्व, है। मानव जगत एवं वनस्पति जगत दोनों के योग से प्रकृति में एक जीवन संतुलन रहता है।

प्रस्तुत शोध क्षेत्र जनपद इटावा में यमुना-चम्बल बीहड़ को छोड़कर सम्पर्ण जनपद में प्राकृतिक वनस्पति का अभाव है।[18] इस क्षेत्र में प्राकृतिक वनस्पति का क्षेत्रीय वितरण, भूमि की बनावट, मिटटी के प्रकार, एवं जलवायु की दशाओं पर निर्भर है। राज्य सरकार के वन विभाग की अनुसंशा के अनुसार - मैदानी भाग की 20 प्रतिशत भूमि वनों के अन्तर्गत उपभोग में आनी चाहिए परन्तु जनपद इटावा में कुल क्षेत्रफल के मात्र 4.94 प्रतिशत भूमि पर ही वन पाए जाते हैं। 1925-26 में वनों के अन्तर्गत 12.34 प्रतिशत भाग, 1961 में 8.9 प्रतिशत था जो कि अब घटकर मात्र 4.94 प्रतिशत रह गया है।[19] इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जनपद का वन क्षेत्र धीरे-धीरे धट रहा है। इस का प्रमुख कारण कृषि के अन्तर्गत भूमि का अधिकाधिक उपयोग है। मामोरिया सी0 बी0 के अनुसार - 'जनसंख्या के अधिक दबाब के कारण कृषि क्षेत्रों का प्रसार स्वाभाविक है जिससे वनों का क्षेत्र धीरे-धीरे कम होता जा रहा है।[20]

उपयोगिता के आधार पर सिंह आर0 एल0 ने[21] ऊपरी गंगा के वनों का तीन भागों में विभाजन किया है। जो कि इस जनपद पर भी लागू होता है। अध्ययन क्षेत्र दो प्रकार के वन पाए जाते हैं।

1. उष्ण कटिबन्धीय पतझड़ वाले वन
2. उपोष्ण शुष्क वन

उष्ण कटिबन्धीय पतझड़ वाले वन -

ये मिश्रित वन है जो कि जनपद में छितरे हुए टुकड़ों के रूप में बंजर भूमि पर पाए

ETAWAH DISTRICT
NATURAL VEGETATION
OPEN SCRUBS
UNCLASSIFIED FOREST
PROTECTED FOREST
RESERVED FOREST
0
20
KM

FIG. 8

जाते हैं तथा इनका कुल क्षेत्रफल 85.39 वर्ग हेक्टेयर है। ये वन वरसेहर, भरथना, तारवा, एरवा कटरा, अछल्दा, विधूना, सहार तथा अजीतमल विकास खण्ड में पाए जाते है। नीम, आम, जामुन, इमली, बबूल, शीशम, ढाक, यूकेलिप्टस, बेल, आदि इन वनों के प्रमुख वृक्ष है जिसका उपयोग इमारती लकड़ी आदि के रूप में होता है।

उपोष्ण शुष्क वन -

यह वन मुख्य रूप से खादर क्षेत्र में पाए जाने वाले कटीले एवं झाड़ीनुमा वन हैं। इनका विस्तार, जनपद में 24716.80 हेक्टेयर भूमि पर है। यह वन यमुना, चम्बल, तथा सेंगर, नदियों के बीहड़ क्षेत्र में पाए जाते हैं। करील, बबूल, जंगल जलेबी, बेर, कदम, खैर आदि इन वनों के प्रमुख वृक्ष है। यहां के वनों द्वारा प्राप्त लकड़ी का उपयोग जलाने के लिए होता है। बबूल, की छाल का उपयोग चमड़ा उद्योग में होता है।

वनों का विभाजन -

भौगोलिक रूप से जनपद इटावा उष्ण कटिबन्धीय पतझड़ वाले वनों के अन्तर्गत आता है। परन्तु जनसंख्या के अधिक दबाब के कारण अधिकतर वन साफ हो गए है तथा अब यह छितरे टुकड़ों के रूप में पाए जाते हैं। इन वनों को प्रशासनिक आधार पर पांच वर्गो में विभाजित किया गया है।

1. आरक्षित वन
2. संरक्षित वन
3. अवर्गीकृत वन
4. अधिग्रहीत वन
5. व्यक्तिगत वन

आरक्षित वन -

भारतीय वन अधिनियम - 20 के अनुसार ये वन वन विभाग की सम्पत्ति है।

इस प्रकार के वन 1970.4 हेक्टेयर भूमि पर छितरे हुए हैं।

संरक्षित वन -

नहरों तथा सड़को के किनारे पाए जाने वाले वन संरक्षित वन कहलाते हैं। ये वन वन विभाग की स्वीकृति से ही काटे जा सकते हैं। नहरों के किनारे 752.22 हेक्टेयर भूमि पर तथा सार्वजनिक निर्माण विभाग की सड़कों के किनारे 592.97 हेक्टैयर भूमि पर पाए जाते हैं।

वर्गीकृत वन -

इस प्रकार के वन परती भूमि पर ऊसर, बंजर वाले क्षेत्रों में पाए जाते हैं। ये वन छितरे हुए टुकड़ों के रूप में है। ये वन 265.19 हेक्टेयर भूमि पर पाए जाते हैं।

अधिगृहीत वन -

बड़े - बड़े जमीदारों को सहायता राशि (मुआवजा) देकर जो भूमि सन 1948 में अधिगृहीत की गयी थी, ये वन पाए जाते हैं। इनका विस्तार जनपद के 361.8 हेक्टेयर भूमि परहै।

व्यक्तिगत वन -

यह व्यक्तिगत वन है। इनका क्षेत्र जनपद में 216.9 हेक्टेयर है यह वन जनपद में छितरे हुए टुकड़ों में पाए जाते हैं।

सामाजिक पृष्ठभूमि

जनांकिकीय संक्रमण के सिद्धान्त में आर्थिक विकास से सम्बन्धित जन्म और मृत्यु दरों की तीन अवस्थाओं को स्वीकार किया गया है। प्रथम अवस्था में निम्न स्तरीय भोजन, अविकसित सफाई व्यवस्था और प्रभावशाली चिकित्सा सहायता के अभाव के कारण कृषि अर्थव्यवस्था की यह अवस्था ऊँची मृत्युदर वाली होती है। इस अवस्था में व्यापक, निरक्षरता, परिवार नियोजन, के तरीकों के विषय में ज्ञान का अभाव, छोटी आयु में विवाह, परिवार के आकार के विषय में दृढ़ सामाजिक विश्वासों और प्रथाओं तथा बच्चों के प्रति मनोभाव इत्यादि के कारण जन्मदर ऊँची होती है। इसके अतिरिक्त आदिम कालीन समाज में बड़े परिवार के आर्थिक लाभ भी होते है। बच्चे छोटी अवस्था से ही परिववार के काम में हाथ बटाने लगते हैं और माता पिता के लिए बुढापे में सुरक्षा के परम्परागत स्रोत होते हैं। मृत्यु की, विशेषतः शिशु मृत्यु की ऊँची दर से यह संकेत मिलता है कि अधिक बच्चे उत्पन्न करके ही उक्त सुरक्षा प्राप्त की जा सकती है। ऐसे समाज में जनसंख्या वृद्धि दर वास्तव में अधिक ऊँची नहीं होती क्यों कि उच्च जन्मदर को उच्च मृत्यु दर संतुलिक कर देती है। यह अवस्था अधिक जनवृद्धि की सम्भावना अवस्था है किन्तु इसमें वास्तविक जनसंख्या वृद्धि कम होती है।

द्वितीय अवस्था में आय के स्तर में वृद्धि के परिणाम स्वरूप जनता अपने भोजन में सुधार करने के योग्य हो जाती है। आर्थिक विकास के कारण सर्वागीण सुधार होमा है जिसमें परिवहन का सुधार भी समाविष्ट है। परिवहन के सुधार के फलस्वरूप खाद्य सम्भरण नियमित हो जाता है। इन सब कारणों से मृत्युदर कम हो जाती है। इस प्रकार इस अवस्था में जन्म दर ऊँची रहती है किन्तु मृत्युदर में तीव्र गिरावट आने लगती है जिसके कारण जनसंख्या वृद्धि की गति बढ़ जाती है। मृत्युदर में कमी के कारण प्रथम अवस्था की उच्च जन वृद्धि की सम्भावना द्वितीय अवस्था में उच्च वास्तविक वृद्धि बनकर प्रकट होती है। उच्च जन्म दर और घटती मृत्यु दर के कारण द्वितीय अवस्था में परिवार का औसत आकार बड़ा हो जाता है।

तृतीय अवस्था में आर्थिक विकास के कारण अर्थव्यवस्था का स्वरूप कृषक से परिवर्तित होकर अंशतः औद्योगिक हो जाता है। औद्योगीकरण में वृद्धि के परिणाम स्वरूप जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों से औद्योगिक और वाणिज्यिक केन्द्रों की ओर स्थानान्तरित होने लगती है। शहरी जनसंख्या में वृद्धि और स्त्रियों के लिए घर से बाहर आर्थिक कार्यो के विकास के परिणामस्वरूप आर्थिक गतिशीलता की सम्भावना बढ़ जाती है जिसे छोटे परिवारों के सहारे भली भांति प्राप्त किया जा सकता है परिणामतः बड़े परिवार की आर्थिक लाभकारिता कम हो जाती है। आर्थिक विकास का एक लक्षण विशेष रूप से बढ़ता हुआ नगरीकरण है और ग्रामों के विपरीत नगरों में बच्चे अमूल्य निधि नहीं, भार समझे जाते हैं। उचित जीवन स्तर बनाए रखने की चेतना औद्योगिक अर्थव्यवस्था में परिवार छोटा करने की प्रेरणा देती है, इस प्रकार इस अवस्था की विशेषताएं निम्न जन्म दर, छोटा परिवार, और जनसंख्या वृद्धि की निम्न दर के कारण जनसंख्या में कमी की अवस्था है।

इन तीनों अवस्थाओं से उच्च जन्म दर और उच्च मृत्यु दर वाली अर्थव्यवस्था का निम्न जन्म दर और निम्न मृत्यु दर वाली अर्थव्यवस्था में रूपान्तर व्यक्त होता है। जब कोई अर्थव्यवस्था जनांकिकीय संक्रमण की प्रथम अवस्था से द्वितीय अवस्था में प्रवेश करती है तो घटती हुई मृत्यु दर किन्तु अपेक्षाकृत स्थिर जन्मदर के कारण उनमें असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह देखा गया है कि मृत्युदर का नियंत्रण अपेक्षाकृत सरल है क्योंकि मृत्युदर घटाने के उपाय बाह्यजात होने के कारण जनता उन्हें तत्परतापूर्वक स्वीकार कर लेती है, किन्तु जन्मदर में कमी के लिए अन्तरजात तत्वों को परिवर्तित करना पड़ता है इसके लिए सामाजिक मनोवृत्तियां और प्रथाओं तथा परिवार के आकार और विवाह आदि के सम्बन्ध में विश्वास और सिद्धान्तों में परिवर्तन करना आवश्यक है। मृत्युदर में कमी की अपेक्षा इसके लिए अधिक समय अपेक्षित होता है जिससे जन्मदर में गिरावट देर से आती है। इसलिए जनांकिकीय विकास की दूसरी अवस्था में जनसंख्या विस्फोट की अवस्था कहा गया है। विकासमान अर्थव्यवस्था के लिए यह अवस्था सर्वाधिक संकटमय होती है। इसलिए द्वितीय अवस्था में मृत्युदर में कमी होने के कारण असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है जिसे सुधारने के लिए संक्रमण की अवधि अपेक्षित होती है। संक्रमण काल में जनांकिकीय तत्वों में असामंजस्य उत्पन्न हो जाता है नये जनांकिकीय तत्व उपस्थित होते

हैं जो समाज का स्वरूप परिवर्तित कर देते हैं। जन्म दर और मृत्यु दर निम्न स्तर पर सन्तुलित हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप जनसंख्या वृद्धि की दर भी कम हो जाती है। इस प्रकार किसी समाज के जनांकिकीय विकास का निर्णय परिवार के आकार और जनसंख्या में वृद्धि की दर के सम्बन्ध में जन्म और मृत्युदर के स्तर और परिवर्तनों के रूप में किया जा सकता है।

जनसंख्या -

भूमि उपयोग में मानव एक महत्वपूर्ण कारक है अतः भूमि उपयोग के परिप्रेक्ष्य में जनसंख्या का अध्ययन आवश्यक हो जाता है क्यों कि इसी आधार पर वर्तमान आर्थिक क्रियाओं की योजना का निर्धारण एवं कार्यान्वियन तथा विकास स्तर का निरूपण एवं मापन किया जा सकता है। जनसंख्या के समुचित अध्ययन हेतु उसके विभिन्न पक्षों का ज्ञान आवश्यक है जिनमें से जनसंख्या वृद्धि दर, विभिन्न घनत्व वर्गो का क्षेत्रीय वितरण, यौन अनुपात, साक्षरता, क्रियाशीलता एवं व्यावसायिक संरचना आदि जनसंख्या अध्ययन के मुख्य घटक हैं। शोध अध्ययन क्षेत्र के परिप्रेक्ष्य में इन घटकों का विवरण नीचे दिया जा रहा है।

(अ) जनसंख्या वृद्धि -

इटावा जनपद उत्तर प्रदेश का मध्यम जनसंकुल क्षेत्र है। जनसंख्या की दृष्टि से जहां इसे राज्य में 37वाँ स्थान प्राप्त है, वहीं कानपुर सम्भाग में इसका तीसरा स्थान है। प्रस्तुत तालिका में अध्ययन क्षेत्र की पिछले पांच दशकों की जनसख्या वृद्धि को प्रदर्शित किया गया है।

तालिका 1.3 इटावा जनपद में जनसंख्या वृद्धि (1951 - 91)

जनगणना वर्ष	1951	1961	1971	1981	1991
कुल जनसंख्या	970704	1182202	1447702	1742651	2124655
जनसंख्या वृद्धि	+9.9	+21.8	+22.5	+20.4	+21.9
सामान्य घनत्व	224	273	334	403	474

ETAWAH DISTRICT
GROWTH OF POPULATION
1981-91
IN PERCENT
BELOW_15
15 _ 25
ABOVE_25
0
20
KM

FIG.-9

तालिका 1.3 से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1951 में जनसंख्या वृद्धि दर मात्र 9.9 प्रतिशत रही है, जब कि बाद के दशकों में क्षेत्रीय जनसंख्या वृद्धि दर दुगनी से अधिक रही है, परन्तु बाद के चार दशकों में यह वृद्धि दर लगभग स्थिर सी रही है। क्यों कि 1961 में यह दर जहां 21.8 प्रतिशत रही है वहीं 1981-91 के मध्य यह 21.9 प्रतिशत रही है । परन्तु यह प्रादेशिक स्तर पर 25.16 प्रतिशत से कम रही है।

तालिका 1.4 विकास खण्डवार जनसंख्या का वितरण 1981 - 91

क्र0स0	विकासखण्ड	जनसंख्या		वृद्धि दर	श्रेणीयन
		1981	1991	प्रतिशत में	
1.	जसवन्तगनर	143656	170275	18.53	10.5
2.	बढ़पुरा	92536	109683	18.53	10.5
3.	बसरेहर	140649	185263	31.72	1
4.	भरथना	92340	113874	23.32	4
5.	ताखा	84106	102938	22.39	6
6.	महेवा	155412	169523	9.08	14
7.	चकरनगर	60384	69291	14.75	13
8.	अछल्दा	99411	122395	23.12	5
9.	विधूना	101791	123473	21.30	7
10.	एरवाकटरा	76126	95705	25.72	2
11.	सहार	101688	125676	23.59	3
12.	औरैया	133873	157093	17.33	12
13.	अजीतमल	97056	117448	21.01	9
14.	भाग्यनगर	105960	128317	21.10	8
	योग ग्रामीण	1484988	1790954	20.60	-
	योग नगरीय	257961	333701	29.36	-
	योग जनपद	1742949	2124655	21.90	-

सारणी 1.4 से स्पष्ट है कि जनसंख्या में सर्वाधिक वृद्धि वसरेहर विकासखण्ड में हुई जहां पर 1981-91 के मध्य 31.72 प्रतिशत की वृद्धि दर अंकित की गई है। इसी अवधि में जनसंख्या में न्यूनतम वृद्धि महेवा विकासखण्ड में प्राप्त हुई जिसमें मात्र 9.08 प्रतिशत की दर से जनसंख्या में वृद्धि प्राप्त हुई है। एरवा कटरा विकास खण्ड जनसंख्या वृद्धि दर 25.72 प्रतिशत रखकर द्वितीय स्थान पर है। भरथना, सहार, तथा अछल्दा, विकास खण्ड न्यूनाधिक एक समान स्थिति दर्शा रहे हैं। जनपदीय स्तर से अधिक विकास दर प्रदर्शित करने वाले विकास खण्डों में ताखा 22.39 प्रतिशत वृद्धि दर्ज करके छठवें स्थान पर हैं। शेष आठ विकास खण्ड जनपदीय औसत से निचले स्तर पर है।

सारणी 1.5 अध्ययन क्षेत्र में साक्षरता के स्तर पर प्रकाश डाल रही है जिसमें सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में पुरूषों की साक्षरता प्रतिशत 66.23 है जबकि स्त्रियों का 38.34 प्रतिशत है। कुल साक्षरता प्रतिशत 53.69 प्रतिशत है। ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों में साक्षरता स्तर में काफी भिन्नता देखने को मिलती है पुरूषों में यह अन्तर 10 प्रतिशत से अधिक है जब कि स्त्रियों में 23.63 प्रतिशत अन्तर है। जब कि भोजन और पोषण स्तर के निर्धारण में साक्षरता का एक महत्व पूर्ण स्थान होता है। स्त्रियों का साक्षर होना तो और भी आवश्यक है क्यों कि पढ़ी लिखी स्त्रियां क्षेत्रीय खाद्य पदार्थो की उपलब्धता के आधार पर सीमित पदार्थो से ही आवश्यक पोषक तत्वों का समायोजन करने में सक्षम हो सकती है।

विकासखण्ड वार यदि साक्षरता के स्तर पर विचार किया जाय तो भाग्य नगर विकास खण्ड 54.88 प्रतिशत पुरूष साक्षरता के आधार पर न्यूनतम साक्षरता स्तर को दर्शा रहा है जबकि महेबा विकास खण्ड 71.69 प्रतिशत पुरूष साक्षरता प्रदर्शित करके उच्चतम स्तर पर स्थित है। स्त्रियों के सम्बन्ध में भी यह विकास खण्ड 41.53 प्रतिशत स्त्री - साक्षरता का प्रदर्शन करके वरीयता क्रम में सर्वोच्च स्थान पर है, परन्तु स्त्री साक्षरता में न्यूनतम स्तर 23.99 प्रतिशत का प्रदर्शन चकरनगर विकास खण्ड कर रहा है। जनपदीय साक्षरता स्तर पुरूष 66.23 प्रतिशत से कम स्तर को प्रदर्शित करने वाले विकास खण्डों में महेवा 71.69 प्रतिशत, अजीतमल 67.77 प्रतिशत तथा औरैया 66.46 प्रतिशत के अतिरिक्त समस्त विकास खण्ड निचले स्तर का प्रदर्शन कर रहे हैं। जब कि स्त्री साक्षरता में जनपदीय स्तर 38.34

तालिका 1.5 विकासखण्ड वार साक्षर व्यक्ति तथा साक्षरता का प्रतिशत

विकासखण्ड	साक्षर व्यक्ति			साक्षरता प्रतिशत		
	पुरूष	स्त्री	कुल	पुरूष	स्त्री	कुल
1. जसवन्तनगर	48992	19540	68532	65.67	32.07	50.57
2. बढ़पुरा	29449	12019	41468	60.90	30.41	47.19
3. बसरेहर	52410	23442	75852	64.02	35.71	51.42
4. भरथना	32773	13957	46730	65.47	34.10	51.34
5. ताखा	27627	10058	37685	59.99	27.59	45.68
6. महेवा	53652	25566	79218	71.69	41.53	58.08
7. चकरनगर	17208	5925	23133	56.74	23.99	42.19
8. अछल्दा	32929	13116	46045	60.97	30.13	47.21
9. विधूना	35116	15859	50975	64.72	35.61	51.60
10. एरवाकटरा	26023	11122	37145	60.92	32.41	48.22
11. सहार	36914	16978	53892	65.39	37.67	53.08
12. औरैया	46512	21174	67686	66.46	37.79	53.71
13. अजीतमल	35257	16378	51635	67.77	38.85	54.82
14. भाग्यनगर	38034	16925	54959	54.88	37.12	53.67
योग ग्रामीण	512896	222059	734955	64.73	34.65	51.28
योग नगरीय	109112	72169	181281	74.39	57.02	66.52
योग जनपद	622008	294228	916236	66.23	38.34	53.69

ETAWAH DISTRICT
LITERACY
LITERACY IN PERCENT
BELOW-45
45 _ 50
ABOVE _ 50
0
20
KM.
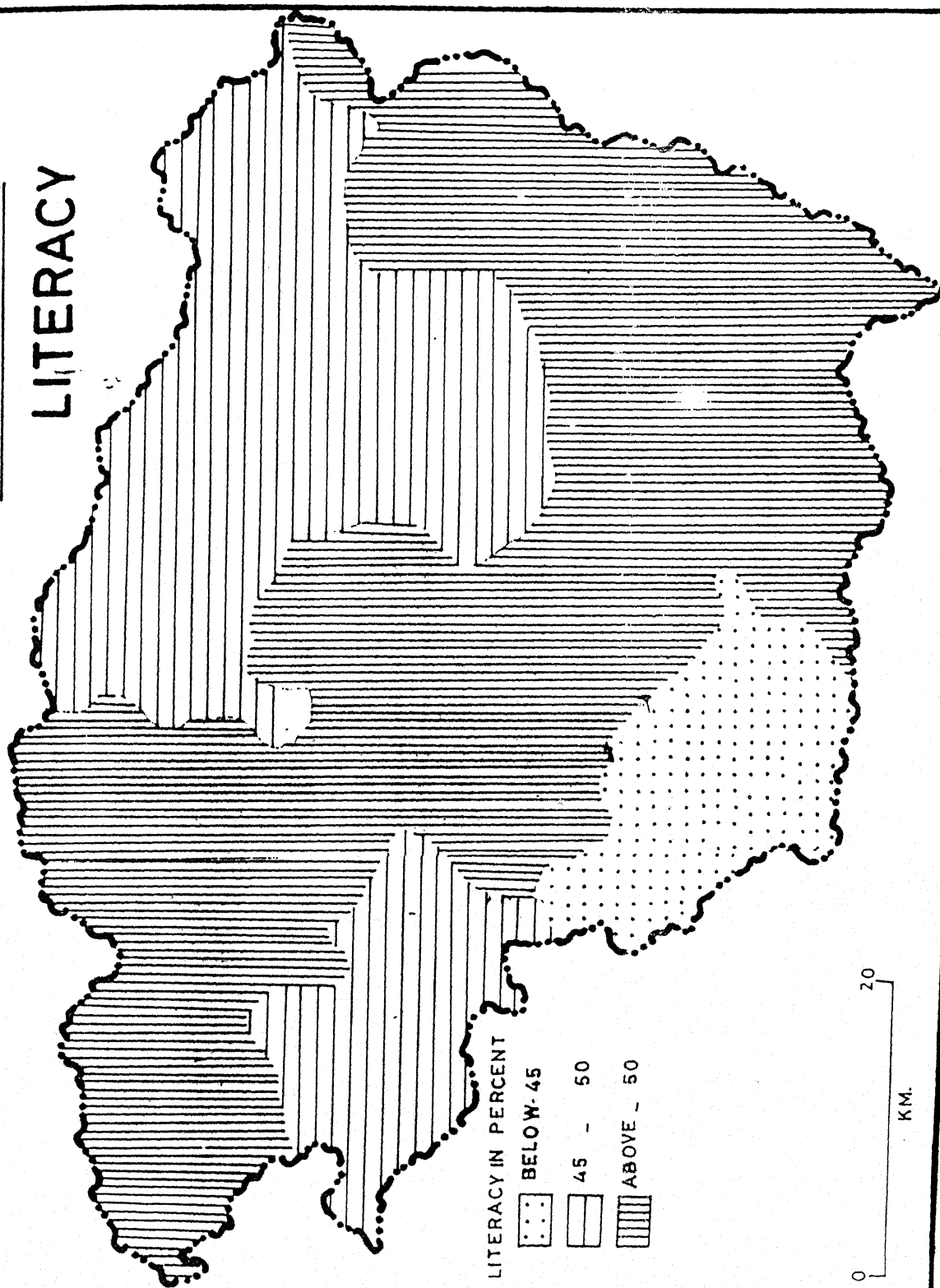
FIG.-10

तालिका क्रमांक 1.6 विकास खण्डवार जनसंख्या का आर्थिक वर्गीकरण ।

विकास खण्ड	कृषक	कृषि श्रमिक	पशुपालन एवं बृक्षा रोपण	खनन	परिवारिक उद्योग	गैर पारि- वारिक उद्योग	निर्माण कार्य	व्यापार एवं वाणिज्य	यातायात संग्रहण एवं संचार	अन्य	कुल मुख्य कर्मकार	सीमान्त कर्मकार	कुल कर्मकार
1. जसवन्त नगर	30276	10102	150	1	253	782	256	874	540	3238	46472	89	46561
2. बढ़पुरा	18588	4787	140	1	283	1522	302	511	463	2312	28909	–	28909
3. वसरेहर	31815	8986	436	2	602	1438	646	2028	1131	4579	51663	68	51731
4. भरथना	21186	6308	150	–	276	429	176	710	368	1930	31533	6	31539
5. ताखा	24970	2845	80	–	84	213	50	282	100	1215	29839	172	30011
6. महेवा	26115	13151	204	1	282	695	288	773	331	3128	44968	148	45116
7. चकरनगर	13831	2499	133	–	86	130	63	175	66	1156	18139	–	18139
8. अछल्दा	24907	6147	123	1	88	322	115	334	266	1791	34094	282	34376
9. विधूना	25237	5426	173	1	364	624	108	721	181	2039	34874	187	35061
10. एरवाकटरा	21495	2516	90	–	137	367	119	738	133	1463	27058	38	27096
11. सहार	28018	3788	108	–	130	385	116	771	198	2009	35613	3	35616
12. औरैया	25458	11317	313	–	347	953	374	1029	435	3571	43797	7	43804
13. अजीतमल	19054	8168	200	–	266	1041	240	1022	384	2756	33131	144	33275
14. भाग्यनगर	23248	7634	136	1	159	601	252	1196	242	2641	36110	454	36564
योग ग्रामीण	334198	93674	2526	8	3357	9502	3105	11164	4838	33828	496200	1598	497798
योग नगरीय	9398	6300	1220	57	3777	9368	2197	21605	5383	25436	84741	280	85021
योग जनपद	343596	99974	3746	65	7134	18870	5302	32769	10221	59264	580941	1878	582819

प्रतिशत से उच्च स्तर को प्रदर्शित करने वाले विकास खण्डों में महेबा 41.53 प्रतिशत तथा अजीतमल 38.85 प्रतिशत ही है शेष अन्य विकास खण्ड जनपदीय स्तर से निम्न स्तर को प्रदशित कर रहे हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण साक्षरता में महेबा तथा अजीतमल विकास खण्ड जनपदीय स्तर से उच्च स्तर पर है, शेष अन्य विकासखण्ड जनपदीय स्तर से निचले साक्षरता स्तर का प्रदर्शन कर रहे हैं।

तालिका 1.6 अध्ययन क्षेत्र के व्यावसायिक ढांचे का चित्र प्रस्तुत कर रही है। 1991 की जनगणना में आर्थिक क्रियाओं के आधार पर श्रमिकों का वर्गीकरण 11 कोटियों में किया है जिसमें (1) कृषक (2) कृषि श्रमिक (3) पशुपालन (4) खनन (5) पारिवारिक उद्योग (6) गैर पारिवारिक उद्योग (7) निर्माण कार्य (8) व्यापार एवं वाणिज्य (9) यातायात संग्रहण एवं संचार (10) सीमान्त कर्मकार (11) अन्य सेवाओं में लगे हुए । कार्य अवधि के आधार पर समस्त जनसंख्या को मुख्य श्रमिक सीमान्त श्रमिक तथा गैर श्रमिक नामक वर्गो में बांटा गया है। मुख्य श्रमिक वे है जिन्होंने आर्थिक रूप से उत्पादन क्रियाओं में कुल 183 दिवस या 6 महीने या इससे अधिक समय तक कार्य किया । सीमान्त श्रमिक वे हैं जिन्होंने 183 दिन या 6 महीने से कम अवधि तक कार्य किया । गैर श्रमिक की श्रेणी में वे लोग सम्मिलित हैं जिन्होंने वर्ष में थोडा भी कार्य नहीं किया है। इन गैर श्रमिकों में भुगतान रहित घरेलू कार्य करने वाले लोग पूर्णकालिक विद्यार्थी, आश्रित यथा बच्चे और विकलांग, अवकाश प्राप्त लोग अथवा लगान उपजीवी भिखमंगें, एवं संस्थाओं में रहने वाले लोग और अन्य गैर श्रमिक सम्मिलित हैं। अन्य गैर श्रमिकों में वे लोग सम्मिलित हैं जो अपनी शिक्षा समाप्त करने के बाद कार्य की खोज में है। व्यावसायिक वर्गीकरण के आधार पर यदि देखा जाय तो जनपद में 27.43 प्रतिशत जनसंख्या कर्मकार की श्रेणी में है। शेष अन्य गैर कर्मकार की श्रेणी में है। कुल कर्मकारों में 76 प्रतिशत से अधिक कृषक तथा कृषि श्रमिक है।

गॉंव खेत की दूरी -

कृषि अर्थव्यवस्था को नियंत्रित करने वाले अनेक महत्वपूर्ण कारणों में जैसे भूमि, श्रम, और पूंजी इत्यादि , आवासीय स्थान से खेत की दूरी का कम महत्वपूर्ण स्थान नहीं है। जोतों का पुर्नगठन तथा अनेक भूमि सुधार कानून केवल इसी कारण बनाए गये कि जिससे गांव खेत के मध्य दूरी कम की जा सके,

परन्तु भूमि सुधार के अपेक्षित परिणाम नहीं प्राप्त किए जा सके हैं। खेत तथा गांव के मध्य दूरी का विश्लेषण इस मान्यता को लेकर किया जा रहा है कि सभी गांव आकार में लगभग समान है तथा उनका घना बसाव है। ग्राम वासी एक ग्राम की इकाई में निवास करते हैं। यह भी मान लिया गया है क ग्रामवासी अपने ग्राम से बाहर जाकर कृषि कार्य नहीं करते हैं। यहां पर गांव खेत की दूरी का विश्लेषण विकास खण्ड स्तर पर निम्न सूत्र की सहायता से किया गया है-

$$\text{गांव खेत की दूरी} = 0.5373 \sqrt{\frac{A}{N}}$$

जहां A = क्षेत्रफल, N गांवों की संख्या

सारणी 1.7 विकास खण्ड स्तर पर गांव खेत की दूरी

क्र0 स0	विकासखण्ड	क्षेत्रफल (वर्ग. कि0मी0में)	गांव की संख्या	गांव खेत की दरी मीटर में
1.	जसवन्तनगर	366.09	129	905
2.	बढ़पुरा	345.13	84	1089
3.	वसरेहर	381.44	140	887
4.	भरथना	272.35	81	985
5.	ताखा	274.96	76	1022
6.	महेवा	327.86	117	899
7.	चकरनगर	377.26	63	1315
8.	अछल्दा	281.44	107	871
9.	विधूना	314.97	103	940
10.	एरवाकटरा	224.07	95	825
11.	सहार	280.89	94	929
12.	औरैया	399.38	149	880
13.	अजीतमल	221.87	103	789
14.	भाग्य नगर	280.04	120	821
	औसत	4347.91	1461	927

ETAWAH DISTRICT
FIELD TO VILLAGE DISTENCE
DISTENCE IN. METRES
BELOW 1000
ABOVE 1000
0
20
km
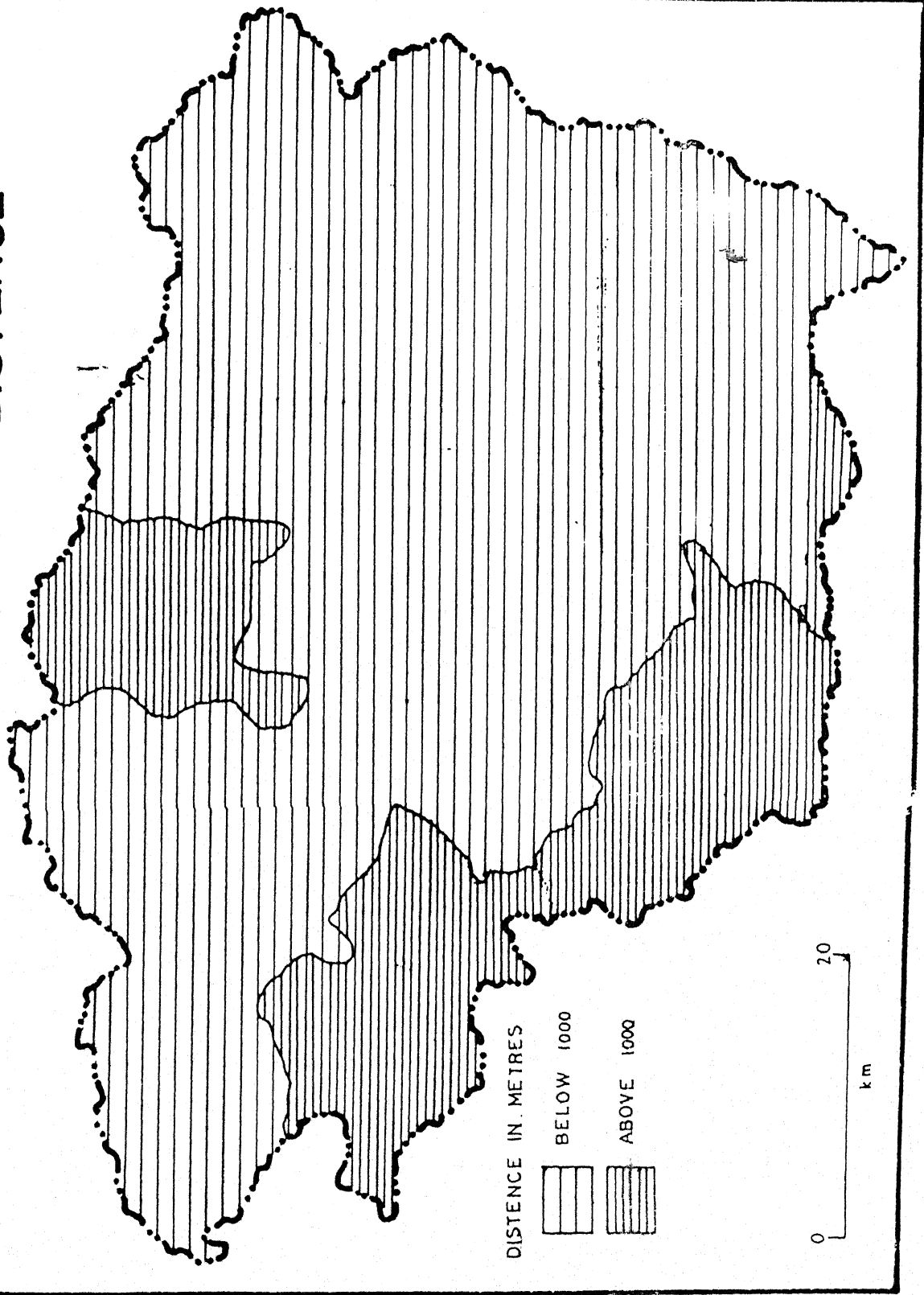
FIG.-11

तालिका क्रमांक 1.8 विकास खण्ड स्तर पर जनसंख्या के अनुसार वर्गीकृत गाँव ।

विकास खण्ड	200 से कम	200-499	500-999	1000-1999	2000-4999	5000से अधिक	योग	गाँव का औसत क्षेत्रीय आकार (वर्गकि0मी0)
1. जसवन्त नगर	7	25	28	46	19	4	129	2.84
2. बढ़पुरा	2	18	24	26	12	2	84	4.11
3. बसरेहर	5	27	46	36	25	1	140	2.72
4. भरथना	3	13	20	26	18	1	81	3.36
5. ताखा	3	17	23	18	11	4	76	3.62
6. महेवा	1	14	36	37	28	1	117	2.80
7. चकरनगर	1	9	27	20	5	1	63	5.99
8. अछल्दा	6	25	40	17	18	1	107	2.63
9. विधनू	1	23	29	38	10	2	103	3.06
10. एरवा कटरा	14	30	22	18	9	2	95	2.36
11. सहार	3	16	28	27	19	1	94	2.99
12. औरैया	8	35	43	50	12	1	149	2.68
13. अजीतमल	4	18	34	34	13	–	103	2.15
14. भाग्यनगर	8	28	37	34	12	1	120	2.33
योग जनपद	66 (4.52)	298 (20.40)	437 (29.91)	427 (29.23)	211 (14.44)	22 (1.50)	1,461 (100.00)	2.98

सारणी 1.7 विकास खण्ड स्तर पर औसत गांव खेत की दूरी 927 मीटर प्रस्तुत कर रही है जो उत्तर प्रदेश (825.9 मीटर) से अधिक तथा भारत वर्ष (1281.1 मीटर) से कम है। सारणी से स्पष्ट है कि अजीतमल विकास खण्ड गांव खेत के बीच न्यूनतम दूरी 789 मीटर रखता है जो प्रादेशित स्तर से कम है जब कि चकर नगर, विकास खण्ड अपनी ऊँची नीची भूमि के कारण सर्वाधिक 1315 मीटर की दूरी रखता है जो न केवल प्रादेशिक स्तर से ही अधिक है बल्कि सम्पूर्ण भारतवर्ष से भी अधिक है। सहार विकास खण्ड सम्पूर्ण जनपद के औसत के सर्वाधिक पास है और यह विकास खण्ड 929 मीटर की औसत दूरी रखता है। इसके अतिरिक्त 5 विकास खण्ड बढ़पुरा, भरथना, ताखा, चकर नगर, तथा विधूना जनपदीय औसत से अधिक दूरी रखते हैं जब कि शेष 8 विकास खण्ड जनपदीय स्तर से कम औसत दूरी रखते हैं।

सारणी क्रमांक 1.8 विकास खण्ड स्तर पर गांवों का औसत क्षेत्रीय आकार तथा जनसंख्या के अनुसार वर्गीकरण प्रस्तुत कर रही है। जिसके अनुसार सम्पूर्ण जनपद का औसत क्षेत्रीय आकार 2.98 वर्ग किलोमीटर है जो प्रादेशिक स्तर 2.34 वर्ग किलोमीटर से अधिक तथा भारतवर्ष के 5.02 वर्ग किलो मीटर से कम है। विकास खण्ड स्तर पर निम्न क्षेत्रीय आकार, (2.5 वर्ग कि0 मी0 तक) वाले गांवों को रखने वाले विकास खण्डों में अजीतमल, भाग्यनगर, तथा एरवाकटरा, है। मध्यम क्षेत्रीय आकार (2.5 से 3.5 वर्ग कि0 मी0 वाले गांवों को औरैया, सहार, अछल्दा, महेवा, ताखा, बसरेहर, विधूना, जसवन्तनगर, तथा भरथना, विकास खण्ड स्थापित किए हुए है। जब कि उच्च क्षेत्रीय आकार, (3.50 वर्ग कि0 मी0 से अधिक) बड़े गांव रखने वाले बढ़पुरा, ताखा तथा चकरनगर विकासखण्ड है।

सारणी यह भी स्पष्ट कर रही है कि छोटे आकार वाले गांव (500 व्यक्तियों से कम सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में लगभग 25 प्रतिशत है जिसमें 4.52 प्रतिशत गांव 200 या 200 से कम जनसंख्या वाले हैं, मध्यम आकार वाले (500 से 1999तक जनसंख्या वाले) 59 प्रतिशत से अधिक गांव है। उच्च आकार वाले (2000 से 4999) गांव 14.44 प्रतिशत गांव है जब कि उच्चतम आकार वाले (5000 से अधिक जनसंख्या वाले) गांव मात्र 1.50 प्रतिशत है जिनमें मुख्यतः विकासखण्ड मुख्यालय आते हैं। जिसमें से अजीतमल विकास खण्ड मुख्यालय की जनसंख्या 5000 व्यक्तियों से भी कम है।

साख सुविधाएं -

प्रत्येक आर्थिक क्रिया का वित्त से अविभाज्य सम्बन्ध होता है क्यों कि वित्तीय आधार प्रत्येक क्रिया की एक महत्वपूर्ण पूर्वापेक्षा होती है। यह तथ्य कृषि के लिए भी समान रूप से लागू होता है। कृषकों को उर्वरक, बीज, कृषि यंत्र, एवं कीट नाशक दवाइयां, खरीदने, मजदूरी और लगान का भुगतान करने, भूमि में आधारिक सुधार करने, विभिन्न उपभोग वस्तुओं की प्राप्ति एवं पुराने कर्णों के परिशोधनार्थ वित्त की आवश्यकता होती है। अधिकांश कृषक अपने निजी चालू आय स्रोतों द्वारा कृषिगत उक्त आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाते हैं जिसके परिणाम स्वरूप कृषि साख समस्या का उदय होता है। नियोजन काल में विविध रूप से कृषि की नवीन तकनीक के प्रादुर्भाव के फलस्वरूप कृषि साख की मांग में विभिन्न नवीन निवेशों के परिप्रेक्ष्य में परिवर्तन हो गया । सामान्य रूप से कृषि साख की मांग तीन प्रकार की होती है। यथा खेती के चालू खर्चो, यथा बीज, उर्वरक, मजदूरी, आदि के लिए अल्पकालीन साख की आवश्यकता होती है, इसकी अवधि सामान्यतः 15 महीने तक होती है। कृषि के लिए उपयोगी पशु एवं कृषि उपकरण खरीदने तथा कुओं और बांधों की मरम्मत करने के लिए मध्यकालीन ऋण की आवश्यकता होती है। इसकी अवधि सामान्यतः 3 से 5 वर्ष होती है, भूमि खरीदने, भूमि को कृषि योग्य बनाने, अधिक कीमत वाले कृषि यंत्रों, को खरीदने के लिए दीर्घकालीन साख की आवश्यकता होती है, इसकी अवधि 5 वर्ष से अधिक होती है।

सामान्यतः कृषि साख की आपूर्ति करने वाले अभिकरणों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है, निजी या गैर संस्थागत स्रोत और संस्थागत स्रोत । भारत में दीर्घकाल तक कृषि साख संरचना में निजी स्रोतों जिन्हें गैर संस्थागत स्रोत कहा जाता है का ही वर्चस्व रहा है। ग्रामीण साहूकार, महाजन सम्बन्धी, भू स्वामी एवं दलाल इसके प्रमुख संघटक तत्व है। इनमें ग्रामीण महाजन, सम्बन्धी एवं व्यापारियों का विशेष महत्व रहा है। नियोजन काल में इनके महत्व में कमी आई है। अभी हाल तक इनका कृषि साख में महत्व इस कारण बना रहा क्यों कि इनकी कार्यपद्धति अत्यन्त लोचदार थी । निकट का सम्बन्ध होने के कारण वे ग्रामीणों की समस्याओं और जरूरतों से भलीभांति अवगत थे तथा प्रत्येक कार्य के लिए उधार दे देते थे, इनके नियम सरल, एवं परिवर्तनशील थे। यहां जमानत अथवा किसी विशेष नियम का

तालिका 1.9

जनपद में विकासखण्ड वार प्रारम्भिक कृषि ऋण सहकारी समितियां 1991- 92

विकासखण्ड	संख्या	सदस्यों की संख्या	अंशपूंजी 000रू0	कार्यशीलपूंजी (000रू0)	जमाधनराशि (000रू0)	वितरित अल्पकालीन ऋण (000 रू0)
1. जसवन्तनगर	9	22024	1955	14610	520	6641
2. बढ़पुरा	10	9061	1212	8209	345	2926
3. बसरेहर	14	22487	2815	16650	410	8482
4. भरथना	4	12016	940	8503	560	3472
5. ताखा	3	9740	1101	6072	322	3040
6. महेवा	7	22194	2012	10320	501	6018
7. चकरनगर	10	12326	912	5180	320	808
8. अछल्दा	9	10826	901	6342	338	3352
9. विधूना	9	14909	1644	8956	201	6616
10. एरवाकटरा	7	11971	2360	9293	728	3211
11. सहार	8	14164	1670	8515	435	5627
12. औरैया	17	15883	1350	9603	271	4104
13. अजीतमल	13	13463	1242	8892	403	3683
14. भाग्यनगर	13	16726	1344	9274	192	5986
योग ग्रामीण	133	207790	21458	130419	5546	63966
योग नगरीय	4	6542	445	4210	204	595
योग जनपद	137	214332	21903	134629	5750	64561

कोई महत्व नहीं है परन्तु कृषि साख प्रदान करने वाले निजी स्रोतों में कई दोष विद्यमान है। अत्यधिक ऊँची ब्याजदर, ऋण के बदले विभिन्न प्रकार के शोषण, निर्दयतापूर्वक वसूली आदि सामान्य बात है। इस कारण से संस्थागत कृषि साख की आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा था ।

कृषि साख के संस्थागत स्रोतों में सरकार, सहकारी समितियां, और व्यापारिक बैकों को मुख्यतः सम्मिलित किया जाता है। नियोजन काल में संस्थागत साख की मात्रा में प्रसार हुआ है, साख प्रदान करने की विधियों में सुधार हुआ है। अध्ययन क्षेत्र में साख सुविधाओं के अन्तर्गत संस्थागत स्रोतों में व्यापारिक बैंक, सहकारी साख, तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैकों द्वारा प्रदान की जाने वाली सुविधाओं की चर्चा करेगें ।

(अ) **सहकारी समितियां -**

सहकारी साख समस्त संस्थागत स्रोतों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण और उपयुक्त माना जाता है। सहकारी साख को कृषि साख के लिए सर्वाधिक उपयुक्त इस कारण माना गया है क्यों कि प्राथमिक सहकारी साख समितियों का कृषकों से प्रत्यक्ष अथवा अति निकट का सम्बन्ध होता है। सहकारी समितियों द्वारा कृषकों को अल्प और मध्यकालीन तथा भूमि विकास बैकों द्वारा दीर्घकालीन साख प्रदान की जाती है।

सारणी 1.9 से स्पष्ट है कि जनपद में अल्प तथा मध्यकालीन साख प्रदान करने वाली कृषि साख समितियों की संख्या 137 है, इनकी सदस्यों की संख्या 214332 है, जिनकी अंशपूजी 21903 हजार रूपये है जबकि कार्यशील पूंजी 134629 हजार रूपये है। इन समितियों द्वारा कृषकों को वितरित वर्ष 1991-92 अल्पकालीन ऋण 64561 000 रू0 है। ऋण की सर्वाधिक मात्रा जसवन्त नगर विकास खण्ड में वितरित की गई जिसे 6641000 रू0 अल्पकालीन ऋण प्राप्त हुआ जबकि विधूना विकास खण्ड इससे कुछ कम 6616000 रू0 ऋण प्राप्त कर रहा है। इन समितियों ने चकरनगर विकास खण्ड में न्यूनतम 808000रू0 ऋण वितरित किया जबकि संख्या की दृष्टि से इस विकास खण्ड में 10 कृषि साख समितियां कार्यरत हैं। कृषि साख समितियों की संख्या की दृष्टि से ताखा विकासखण्ड का स्तर मात्र 3 कृषि साख समितियों तक सीमित है, परन्तु यह तीन समितियां अपने क्षेत्र में 304000 रू0 ऋण के रूप में वितरित करके अन्य विकास खण्डों कह तुलना में अधिक पीछे नहीं है।

सारणी 1.10

जनपद में सहकारी बैक तथा सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की स्थिति वर्ष 1991-92

क्र0स0	मद	जिला सहकारी बैंक	सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक
1.	शाखाएं संख्या	24	4
2.	सदस्य संख्या	591	24365
3.	हिस्सा पूंजी (000 रू0)	14999	6875
4.	क्रियाशील पूंजी (000रू0)	330402	112269
5.	वितरित ऋण (000रू0)		
	1. अल्पकालीन	49902	-
	2. मध्यकालीन	645	-
	3. दीर्घकालीन	-	27818

सारणी 1.10 जनपद में जिला सहकारी तथा सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की स्थिति को दर्शा रही है। जिसके अनुसार वर्ष 1991-92 में जनपद में जिला सहकारी बैंक की कुल 24 शाखाएं कार्यरत थी जिसमें 12 शाखाएं ग्रामीण क्षेत्र में तथा 12 शाखाएं शहरी क्षेत्रों में विद्यमान थी । इन शाखाओं ने सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में रूपये 49902000-00 के अल्पकालीन तथा 645000 रूपये के मध्यकालीन ऋण वितरित किए थे । दीर्घकालीन ऋण वितरित करने वाले सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की कुल 4 शाखाएं कार्यरत थीं जो तहसील मुख्यालयों में स्थित है, जिन्होंने वर्ष 1991-92 तक कुल 27818000 रूपये के दीर्घकालीन ऋण आवंटित किए हैं।

सारणी 1.11 जनपद में व्यावसायिक बैंको में जमा धनराशि एवं ऋण वितरण (हजार रूपये)

क्र0स0	मद	1991 - 92
1.	जमा धनराशि	2276941
2.	कुल ऋण वितरण	1040307
3.	जमा धन राशि पर ऋण वितरण का प्रतिशत	45.68

क्रमशः

4.	प्राथमिकता क्षेत्र में ऋण वितरण	
	(अ) कृषि तथा कृषि से सम्बन्धित कार्य	568496
	(ब) लघु उद्योग	139091
	(स) अन्य प्राथमिक क्षेत्र	168016
5.	कुल ऋण वितरण में प्राथमिकता क्षेत्र का प्रतिशत	84.17
6.	प्रति व्यक्ति जमा धनराशि (रूपये)	1078
7.	प्रति व्यक्ति ऋण वितरण (रूपये)	492
8.	प्रति व्यक्ति प्राथमिकता क्षेत्र में ऋण वितरण (रूपये)	414

सारणी 1.11 से स्पष्ट है कि व्यावसायिक बैंकों की स्थिति अब पहले की अपेक्षा ग्रामीण तथा प्राथमिकता क्षेत्रों के लिए निरंतर अच्छी होती जा रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में इनके शाखा विस्तार का प्रभाव न केवल कृषि क्षेत्र के लिए साख समस्याएं सुलझाने पर ही पड़ा अपितु इस क्षेत्र में लोगों में बैंकिंग आदतें डालने पर भी पड़ा है, यही कारण है कि ग्रामीण क्षेत्रों में जमा धनराशि में तेजी से वृद्धि हो रही है। यद्यपि अभी तक जमा धनराशि को केवल 45.68 प्रतिशत भाग को ही ऋणों के रूप में परिवर्तित किया जा सका है परन्तु ऋणों में प्राथमिकता क्षेत्र का 84.17 प्रतिशत हिस्सा निर्बल क्षेत्र के प्रोत्साहन का प्रतीक है।

सारणी 1.12

विकासखण्ड बार व्यावसायिक बैंकों तथा ग्रामीण बैंक शाखाओं की संख्या 1991-92

विकासखण्ड	व्यावसायिक बैंक शाखाएं	क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक शाखाएं	योग
1. जसवन्त नगर	2	6	8
2. बढ़पुरा	2	3	5
3. बसरेहर	2	4	6

क्रमशः

4. भरथना	1	4	5
5. ताखा	2	3	5
6. महेवा	3	4	7
7. चकरनगर	3	1	4
8. अछल्दा	2	3	5
9. बिधूना	1	3	4
10. एरवाकटरा	1	4	5
11. सहार	2	3	5
12. औरैया	1	4	5
13. अजीतमल	2	1	3
14. भाग्यनगर	3	2	5
योग ग्रामीण	27	45	72
योग नगरीय	29	8	37
योग जनपद	56	53	109

सारणी 1.12 से स्पष्ट है कि जनपद में कुल 109 बैंक शाखाएं कार्यरत हैं जिनमें से 72 शाखाएं ग्रामीण क्षेत्र में तथा 37 शाखाएं शहरी क्षेत्र में विद्यमान है। व्यावसायिक बैंकों में केवल 27 शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय सुविधाएं उपलब्ध करवा रही हैं। जब कि 29 शाखाएं शहरी क्षेत्र में यह सुविधा उपलब्ध करवा रही है । जबकि ग्रामीण बैंक अपने नाम को सार्थक करते हुए 45 शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत है और मात्र 8 शाखाएं शहरी क्षेत्रों में क्रियाशील है। विकास खण्ड स्तर पर सर्वाधिक बैंकिग सुविधाओं से युक्त जसवन्तनगर विकास खण्ड है जहां पर 8 शाखाएं वित्तीय सुविधाएं उपलब्ध करवा रही है। दूसरा तथा तीसरा स्थान महेवा 7 शाखाएं तथा बसरेहर 6 शाखाएं रखकर यह कार्य पूरा कर रहे हैं। 5 शाखाओं वाले विकास खण्ड बढ़पुरा, भरथना, ताखा, अछल्दा, एरवाकटरा, सहार औरैया, तथा भाग्यनगर है। चकरनगर तथा बिधूना चार-चार बैंक शाखाओं से सज्जित है जब कि अजीतमल विकासखण्ड मात्र 3 शाखाओं से ही अपना वित्तीय कार्य सम्पन्न कर रहा है।

भण्डारण एवं विपणन सुविधाएं -

विपणन वह मानवीय क्रिया है जो विनिमय प्रक्रिया द्वारा मनुष्य की आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करती है। विपणन में वे सभी क्रियायें संलग्न होती हैं जो वस्तुओं और सेवाओं को उचित समय पर तथा उचित मात्रा में उपभोक्ताओं तक पहुँचाकर उनकी उपयोगिता में वृद्धि करती है। विपणन संरचना में वस्तुओं और सेवाओं का संग्रह श्रेणीकरण वित्त व्यवस्था, यातायात एवं बिक्री की क्रियाएं सम्मिलित होती हैं। विपणन क्रिया आर्थिक विकास का एक प्रमुख प्रेरक तत्व है। विपणन और बाजार अवसरों का प्रसार पिछड़े व उपेक्षित क्षेत्रों में भी नवीन आर्थिक क्रियाओं का सृजन और प्रसार में सहायक होता है। कृषि विपणन उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं के हितों की सुरक्षा करता है। कृषि विपणन आर्थिक विकास को त्वरित व वांछित कर सकता है। यह कृषकों की आय और उपभोक्ताओं की सन्तुष्टि बढाने का एक प्रमुख साधन है। प्रत्येक अर्थव्यवस्था में कृषिगत विपणन योग्य अतिरेक एकत्र करने के लिए विपणन संरचना का प्रभावी और सक्षम होना आवश्यक है। एक सक्षम विपणन तंत्र की कमी की स्थिति में कृषि उत्पादन, वित्त वितरण और उपभोग की सार्थक प्रवृत्ति पूरी न हो सकेगी। अध्ययन क्षेत्र मूलतः कृषि प्रधान है, अतः अध्ययन क्षेत्र की विपणन संरचना की अब हम व्याख्या करेगें।

सारणी 1.13 जनपद में विकासखण्ड स्तर पर भण्डारण सुविधाओं को प्रकशित कर रही है जिसके अनुसार जनपद में कुल 97 बीज भण्डार स्थापित किए गये हैं जिनमें 63 बीज भण्डार ग्रामीण क्षेत्रों में तथा 34 बीज भण्डार शहरी क्षेत्रों में स्थापित है, जिनकी भण्डारण क्षमता 17152 मी0 टन है। इसी प्रकार उर्वरक भण्डार 134 कार्यरत है जिनकी क्षमता 15480 मी0 टन है। इस क्षमता में 14680 मी0 टन ग्रामीण क्षेत्र में तथा 800 मी0 टन नगरीय क्षेत्रों में स्थित है। कीटनाशक डिपो ग्रामीण क्षेत्र में 6 तथा शहरी क्षेत्र में 9 स्थापित किए गये हैं जिनकी भण्डारण क्षमता 975 मी0 टन है। ग्रामीण क्षेत्र में बढ़पुरा, वसरेहर, ताखा, चकरनगर, एरवाकटरा, तथा सहार विकास खण्ड ही यह सुविधा रख पा रहे हैं, जबकि अन्य विकासखण्ड इस सुविधा से वंचित है। जनपद की शीत भण्डारण क्षमता कुल 131028 मी0 टन है जिसमें 25168 मी0 टन ग्रामीण क्षेत्र तथा 95860 मी0 टन शहरी क्षेत्र में स्थित है। कुल 22 शीत भण्डारों में 7 ग्रामीण तथा 8 शहरी क्षेत्र में स्थापित है। ग्रामीण क्षेत्र में जसवन्तनगर तथा भाग्यनगर विकास

सारिणी क्रमांक 1.13 विकास खण्डवार भण्डारण एवं विपणन सुविधाएं 1991-92

विकास खण्ड	बीज गोदाम		उर्वरक भण्डार		कीट नाशक डिपो		शीत भण्डार	
	संख्या	क्षमता (मी0टन)	संख्या	क्षमता (मी0टन)	संख्या	क्षमता (मी0टन)	संख्या	क्षमता (मी0टन)
1. जसवन्त नगर	5	532	9	1,440	–	–	2	9,676
2. बढ़पुरा	6	556	9	1,440	1	59	–	–
3. बसरेहर	6	533	14	1,800	1	60	–	–
4. भरथना	3	450	4	480	–	–	1	8,006
5. ताखा	5	382	3	400	1	36	–	–
6. महेवा	4	610	6	1.020	–	–	–	–
7. चकरनगर	3	300	10	1,000	1	60	–	–
8. अछल्दा	4	432	8	800	–	–	–	–
9. विधूना	3	335	9	900	–	–	–	–
10. एरवाकटरा	6	755	7	700	1	76	–	–
11. सहार	6	630	8	800	1	70	1	4.775
12. औरैया	6	640	16	1,600	–	–	–	–
13. अजीतमल	3	270	11	1,100	–	–	1	6,454
14. भाग्यनगर	3	316	12	1,200	–	–	2	6.257
योग ग्रामीण	63	6.741	126	14.680	6	361	7	35,168
योग नगरीय	34	10,411	8	800	9	614	15	95,860
योग जनपदीय	97	17.152	134	15.480	15	975	22	1.31.028

खण्डों में दो - दो शीत भण्डार है जबकि भरथना, सहार, एवं अजीतमल विकास खण्ड एक - एक शीत भण्डार स्थापित किए हुए हैं।

सारणी 1.14

जनपद में खाद्यान्न भण्डारण क्षमता तथा अन्य सुविधाएं 1991 - 92

क्र0स0		संख्या	क्षमता (मी0 टन)
1.	भारतीय खाद्य निगम	1	2500
2.	केन्द्रीय भण्डारागार निगम	1	25960
3.	राज्य भण्डारागार	5	36731
4.	बीज वृद्धि फार्म	1	-
5.	कृषि सेवा केन्द्र	16	-
6.	कृषि उत्पादन मण्डी समिति	6	-

सारणी 1.14 जनपद में खाद्यान्न भण्डारण तथा कुछ अन्य सुविधाओं का वर्णन कर रही है। जिसके अनुसार जनपद में कुल 7 खाद्यान्न भण्डार स्थापित है जिनकी भण्डारण क्षमता 65191 मी0 टन है। बीज वृद्धि फार्म केवल एक है जो जसवन्त नगर विकास खण्ड मुख्यालय में स्थित है। कृषि सेवा केन्द्रों की संख्या कुल 16 है जिनमें से 1 एग्रो द्वारा संचालित है और यह इटावा में स्थित है शेष अन्य कृषि सेवा केन्द्रों में से 2 बसरेहर, ताखा में1, महेवा में 3 तथा चकर नगर में 2 कृषि सेवा केन्द्र स्थित है। अन्य 8 शहरी क्षेत्रों में स्थित है।

सारणी 1.15 जनपद में सहकारी विपणन समितियां 1991 - 92

मद	संख्या	सदस्य संख्या	कार्यशील पुजीरू0	विक्रय मल्य 000 रू0में
1. क्रय विक्रय सहकारी समितियां	7	44056	-	42941

क्रमशः.

2. प्रारम्भिक दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां	174	9048	635000	17167
3. मत्स्य सहकारी समितियां	9	532	483000	
4. बुनकरों की प्रारम्भिक औद्योगिक सहकारी समितियां	230	2985	21357000	71870

सारणी 1.15 जनपद में सहकारी समितियों का विवरण प्रस्तुत कर रही है। जनपद में क्रय विक्रय सहकारी समितियों की संख्या 7 है जो 4 करोड़ रूपये से भी अधिक का व्यवसाय कर रही है। दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां 17 करोड़ से भी अधिक का व्यवसाय कर रही है। मत्स्य सहकारी समितियां 8 लाख से भी अधिक का व्यवसाय कर रही है जब कि बुनकरों की समितियां 7 करोड़ से भी अधिक का वस्त्र बेंच रही है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्र में विभिन्न ग्रामों में 85 हाट बाजार सप्ताह में एक या एक से अधिकतर क्रय विक्रय का कार्य सम्पन्न कर रहे हैं।

परिवहन एवं संचार सुविधाएं -

कृषि उत्पादनों का क्रय विक्रय जीवन यापन की अनिवार्यता है। लोग अपनी आय का एक बड़ा भाग खाद्यान्नों और अन्य कृषि उत्पादनों को खरीदने में व्यय करते है। गांव कस्बों, और नगरों में स्थित मण्डियों तक क्रय विक्रय के लिए माल की उपलब्धता परिवहन सुविधाओं पर निर्भर करती है। क्योंकि कृषि जन्य वस्तुओं की उत्पादन संरचना में अत्यधिक क्षेत्रीय विषमता होती है। कोई धान बहुल क्षेत्र है तो कोई गेहूँ बाहुल्य । जब कि कमोवेश मात्रा में प्रत्येक कृषि उत्पादन की मांग समस्त क्षेत्रों में होती है। इस कारण क्षेत्र में विभिन्न परिवहन के साधनों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। सड़क परिवहन का किसानों को विशेष रूप से लाभ है, अच्छी सड़कों द्वारा किसान अपना उत्पादन विशेषतः नाशवान वस्तुएं जैसे सब्जियां आसानी से मण्डियों तथा शहरों तक ला सकते हैं। क्रान्ति के सन्दर्भ में सड़क परिवहन का महत्व और भी अधिक हो गया है । सड़क परिवहन के विकास द्वारा ही किसानों को एक विश्वसनीय मण्डी उपलब्ध कराई जा सकती है। वर्षा ऋतु के मौसम में तो बिना अच्छी सड़कों के किसानों को अपने ग्रामों से बाहर जाना असम्भव सा हो जाता है।

(अ) रेल परिवहन -

अध्ययन क्षेत्र में रेल परिवहन तथा सड़क परिवहन दो प्रकार की यातायात सुविधाएं उपलब्ध है। रेल परिवहन के रूप में दिल्ली - हाबड़ा बड़ी रेल लाइन (उत्तर रेलवे) अध्ययन क्षेत्र को लगभग मध्य से विभाजित करती है, और यह कंचौसी रेलवे स्टेशन से बलरई रेलवे स्टेशन तक अध्ययन क्षेत्र से होकर गुजरती है, जिस पर हाल्ट सहित 14 स्टेशन स्थित हैं। इस रेलवे लाइन की अध्ययन क्षेत्र में कुल लम्बाई 89 किलोमीटर है। 14 स्टेशनों में कंचौसी, फफूंद, पाता, अछल्दा, साम्हो, भरथना, इकदिल, इटावा, सराय भूपत, जसवन्तनगर तथा वलरई प्रमुख स्टेशनों के अतिरिक्त 3 ब्लाकहट स्टेशन स्थित है। इन स्टेशनों में इटावा, तथा फफूंद स्टेशन अत्यधिक महत्वपूर्ण है। जहां पर साधारण सवारी गडियों के अतिरिक्त अनेक तीव्रगामी एक्सप्रेस सवारी गडियों के रूकने की व्यवस्था है। इसके अतिरिक्त अछल्दा, भरथना तथा जसवन्तनगर ने साधारण सवारी गाडियों के अतिरिक्त कुछ तीव्रगामी सवारी गाडियां भी रूकती हैं अन्य स्टेशनों पर साधारण सवारी गाडियां ही रूकती हैं।

(ब) सड़क परिवहन -

अध्ययन क्षेत्र में सड़कें परिवहन की सर्वाधिक महत्व पूर्ण साधन है। सड़कों में मुगल रोड, जो औरैया विकास खण्ड के भाऊपुर ग्राम से प्रवेश करके जसवन्त नगर, विकास खण्ड के बाद फिरोजाबाद जनपद में प्रवेश करती है, सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, इसकी लम्बाई अध्ययन क्षेत्र में लगभग 96 किलोमीटर है। यह सड़क, औरैया, अजीतमल, महेबा, बढ़पुरा, तथा जसवन्तनगर विकास खण्डों से होकर गुजरती है। यह राष्ट्रीय राजमार्ग (NH2) की श्रेणी में आती है।

सारणी 1.16 जनपद में पक्की सड़कों की लम्बाई कि0मी0 वर्ष 1990-91

क्र0स0	मद	पक्की सड़कों की लम्बाई किलोमीटर में
1.	सार्वजनिक निर्माण विभाग के अन्तर्गत	
	अ) राष्ट्रीय राजमार्ग	96
	ब) प्रादेशिक राजमार्ग	994
	योग	1090

2.	स्थानीय निकायों के अन्तर्गत	
	अ) जिला परिषद	48
	(ब) नगर पालिका/नगर क्षेत्र समिति	51
	योग	99
	कुल योग	1189

सारणी 1.16 जनपद में सड़क परिवहन व्यवस्था का परिदृश्य प्रस्तुत कर रही है जिसमें राष्ट्रीय राजमार्ग की लम्बाई 96 किलोमीटर तथा प्रादेशिक राजमार्ग की लम्बाई 994 किलोमीटर है इस प्रकार सार्वजनिक निर्माण विभाग द्वारा कुल 1090 किलोमीटर पक्की सड़कों का निर्माण किया जा चुका है। स्थानीय प्रशासन द्वारा कुल 99 किलोमीटर पक्की सड़कों का रख रखाव किया जाता है। इस प्रकार कुल 1189 किलोमीटर पक्की सड़कों का अब तक अध्ययन क्षेत्र में निर्माण हो चुका है।

सारणी 1.17 जनपद में विकास खण्डस्तर पर सड़क परिवहन सुविधाओं की ओर संकेत कर रही है जिसके अनुसार इटावा तहसील के अन्तर्गत स्थित तीनों विकास खण्डों जसवन्तनगर, बढ़पुरा, तथा बसरेहर, के अन्तर्गत आने वाले 52.86 प्रतिशत से लेकर 55.81 प्रतिशत गांव पक्की सड़कों से जोड़े जा चुके है इन विकास खण्डों से होकर गुजरने वाली पक्की सड़कों में इटावा-मैनपुरी, इटावा-फर्रूखाबाद, इटावा-औरैया, इटावा-आगरा, बाया उदी बाह प्रमुख सड़के है। विधूना तहसील के अन्तर्गत स्थित चारों विकास खण्डों में आने वाले गांवों की संख्या न्यूनतम है जो पक्की सड़क सुविधा का लाभ उठा रहे हैं और इन विकास खण्डों अछल्दा, विधूना, एरवाकटरा, तथा सहार में स्थित 26.60 प्रतिशत से लेकर 35.51 प्रतिशत गांव इस सुविधा से युक्त हो पाये हैं। भरथना तहसील में स्थित चारों विकासखण्ड भरथना, ताखा, महेवा, तथा चकरनगर, अपने क्षेत्र में स्थित 27.63 प्रतिशत से 41.27 प्रतिशत गांवों को सड़क सुविधा उपलब्ध करवा सके हैं, जब कि औरैया तहसील के विकासखण्ड औरैया, अजीतमल, तथा भाग्यनगर, 27.50 प्रतिशत से 40.27 प्रतिशत तक गांवों को पक्की सड़क से जोड़ सके हैं । समग्र रूप से यदि देखा जाये तो सहार विकास खण्ड 26.60 प्रतिशत गांवों को पक्की सड़क से जोड़कर सड़क सुविधा के न्यूनतम स्तर को प्रदर्शित कर रहा है जबकि जसवन्तनगर 55 81 प्रतिशत गांवों को यह सुविधा देकर उच्चतम स्तर को दर्शा रहा है ।

सारणी 1.17 विकास खण्डवार पक्की सड़कों की लम्बाई किलोमीटर में

विकासखण्ड	कुल लम्बाई	सा0नि0वि के अन्तर्गत	सब ऋतुओं में जुड़े ग्रामों की संख्या		
			1000 से कम जनसंख्या वाले गांव	1000 से 1500 तक जनसंख्या वाले गांव	1500 से अधिक जनसंख्या वाले गांव
1. जसवन्तनगर	158	155	25	23	24
2. बढ़पुरा	107	106	21	9	16
3. बसरेहर	123	118	25	25	24
4. भरथना	53	53	8	4	16
5. ताखा	45	39	12	4	5
6. महेवा	77	77	18	7	18
7. चकरनगर	75	75	8	9	9
8. अछल्दा	44	43	14	11	13
9. विधूना	82	74	11	7	15
10. एरवाकटरा	48	48	14	5	9
11. सहार	37	37	11	4	10
12. औरैया	94	91	29	18	13
13. अजीतमल	89	85	22	10	13
14. भाग्यनगर	78	57	10	12	11
योग ग्रामीण	1110	1062	228	148	196
योग नगरीय	79	28	-	-	-
योग जनपद	1189	1090	228	148	196

भरथना तहसील की पक्की सड़कों में निम्नलिखित प्रमुख सड़के हैं-

1. भरथना - ऊसराहार जो किशनी विधूना पक्की सड़क से ऊसराहार कस्बे में मिलती है।
2. भरथना-विधूना
3. भरथना-सिण्डौस बाया बकेवर, लखना, चकरनगर
4. चकरनगर-उदी
5. इटावा-औरैया मुगल रोड
6. महेवा-निवाड़ी -अछल्दा

विधूना तहसील की पक्की सड़कों में निम्नलिखित प्रमुख हैं -

1. विधूना - औरैया बाया अछल्दा - फफूंद
2. विधूना- किशनी बाया एरवा कटरा
3. एरवाकटरा- छिबरामऊ
4. विधूना - कानपुर बाया बेला रसूलाबाद
5. औरैया - कन्नौज बाया तिर्वा
6. दिवियापुर - रसूलाबाद बाया सहायल
7. विधूना - सहार जो औरैया - कन्नौज मार्ग पर सहार विकास खण्ड मुख्यालय पर मिलती है।
8. फफूंद - रामगढ़ बाया पाता

औरैया तहसील की पक्की सड़कों में निम्नलिखित प्रमुखहैं -

1. औरैया - कन्नौज
2. इटावा-औरैया -कानपुर मुगल रोड
3. औरैया - जालौन
4. औरैया-विधूना बाया फफूंद अछल्दा
5. बाबरपुर - दिवियापुर बाया फफूंद
6. ककोर - रसूलाबाद बाया कंचौसी

इटावा तहसील की प्रमुख पक्की सड़के निम्नलिखित हैं -

1. इटावा - आगरा मुगल रोड
2. इटावा - फर्रूखाबाद - बरेली
3. इटावा - मैनपुरी - दिल्ली
4. इटावा - भिण्ड-ग्वालियर
5. इटावा- आगरा बाया उदी बाह
6. इटावा - औरैया मुगल रोड

उच्च प्रमुख सड़कों के अतिरिक्त अन्य अनेक पक्के ग्रामीण सम्पर्क मार्गों का निर्माण किया जा चुका है जिससे विभिन्न गांवों की जनसंख्या कस्बों और शहरों के सम्पर्क में आती है तथा अपनी कृषि उपज को एक स्थान से दूसरे स्थान को लाती ले जाती है।

औद्योगिक स्थिति -

अर्थव्यवस्था की औद्योगिक संरचना में सार्वजनिक, सहकारी और निजी क्षेत्र के बड़े उद्योगों के साथ -साथ कुटीर एवं लघु उद्योगों को भी सम्मिलित किया जाता है। लघु एवं कुटीर उद्योगों में पूंजी की अपेक्षा श्रम का प्रयोग अधिक होता है। इनका उत्पादन अपेक्षाकृत सीमित क्षेत्रों के लिए होता है। अत्यन्त सरल रूप में कहा जा सकता है कि कुटीर उद्योग अत्यन्त छोटे आकार के होते हैं। पारम्परिक ढंग से पारम्परिक वस्तुओं का निर्माण किया जाता है, किराए के श्रमिकों का या तो प्रयोग नहीं किया जाता है या अत्यन्त कम होता है। इनकी उत्पादन प्रक्रिया में स्थानीय कच्चे पदार्थो का उपभोग होता है। लघु उद्योगों में विनियोजित राशि तो अधिक है ही , साथ - साथ वे मशीनों से अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत बाजार के लिए उत्पादन करते हैं। वस्तुतः लघु उद्योगों की अवधारणा में ही कुटीर उद्योगों की संकल्पना समाहित है। अध्ययन क्षेत्र में औद्योगिक स्थिति को सारणी 1.18 में दर्शाया गया है -

सारणी 1.18 तथा 1.19 में जनपद में कारखाना अधिनियम 1948 के अन्तर्गत पंजीकृत कारखानों की संख्या 92 रही परन्तु इनमें से 67कारखाना ही 1987-88 में कार्यरत थे जिनमें 2140 श्रमिक कार्यरत रहकर 17करोड़ रूपये से अधिक मूल्य का उत्पादन कर रहे थे।

सारणी 1.18 जनपद का औद्योगिक परिदृश्य 1987- 88

क्र0स0	विवरण	संख्या
1.	पंजीकृत कारखाना	92
2.	कार्यरत कारखाना	67
3.	औसत दैनिक कार्यरत श्रमिक एवं कर्मचारियों की संख्या	2140
4.	उत्पादन मूल्य (हजार रूपये में)	173400

सारणी 1.19 जनपद में ग्रामीण एवं लघु उद्योग

क्र0स0	विवरण	औद्योगिक इकाइयों की संख्या
1.	खादी उद्योग द्वारा प्रवर्तित उद्योग	65
2.	लघु इकाइयां	
	(अ) इन्जीनियरिंग	120
	(ब) रसायनिक	9
	(स) हथकरघा की इकाइयां	401
	(द) अन्य	368
	योग ग्रामीण एवं लघु उद्योग	963
3.	कार्यरत व्यक्तियों की संख्या	2142

सारणी में ग्रामीण एवं लघु उद्योगों का विवरण दिया गया है जिसके अनुसार खादी एवं ग्रामोद्योग द्वारा 65 इकाइयां स्थापित की जा चुकी है। लघु इकाइयों की कार्यरत संख्या 898 है जिनमें से 120 इंजीनियरिंग की, 9 रासायनिक, हथकरघा इकाइयों की संख्या 401 तथा अन्य इकाइयों की संख्या 368 है जिनमें कुल 2142 श्रमिक रोजगार पाये हुए हैं।

इसके अतिरिक्त वर्ष 1988 में जनपद मुख्यालय में औद्योगिक आस्थान स्थापित किया गया था। वर्ष 1992 तक अन्य तीन औद्योगिक आस्थानों की स्थापना तहसील मुख्यालयों पर की जा चुकी है जिनमें उक्त वर्ष तक 10 शेडो को आवंटित किया जा चुका था । इन औद्योगिक आस्थानों में 39 प्लाटों को आवंटित किया गया जिनमें से 17 प्लाटों पर लघु औद्योगिक इकाइयों की स्थापना की जा चुकी है और इन इकाइयों में लगभग 2000 व्यक्ति रोजगार प्राप्त कर चुके हैं। इन इकाइयों द्वारा किए गये उत्पादन का मूल्य वर्ष 1991-92 में लगभग 1430000 रूपये का हुआ ।

अन्य सुविधायें -

अन्य सुविधाओं में सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण सुविधाएं, विद्युत वितरण प्रमुख है जिनका विवरण दिया जा रहा है -

(अ) सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण सुविधाएं -

आजादी के बाद देश में स्वास्थ्य सुविधाओं का जो ढांचा खड़ा किया गया उसमें ग्रामीण क्षेत्र पूरी तरह उपेक्षित रहा है। स्वास्थ्य सुविधाओं का जो ढांचा तैयार किया गया उसमें अपने स्वदेशी चिकित्सा पद्धति की पूरी तरह उपेक्षा कर अंग्रेजों द्वारा स्थापित स्वास्थ्य सुविधाओं का अत्यन्त सीमित मात्रा में ग्रामीण क्षेत्र में विस्तार किया गया परिणामस्वरूप स्थानीय सुविधाएं जो कुछ थीं भी वे भी धीरे - धीरे समाप्त हो गई और ग्रामीण जन एलोपैथी चिकित्सा पर पूरी तरह निर्भर हो गये परन्तु ऐलोपैथी चिकित्सा न तो गांवो के लिए पर्याप्त है और न गरीबों की साधारण पहुँच के अन्दर है। एक तो गांवों में अस्पतालों का अभाव है और जहां है भी वहां कुशल डाक्टरों का अभाव है। कुल मिला कर गांव के लिए मातृ शिशु रक्षा से लेकर रोगमुक्त ग्रामीण समाज बनाने तक जो सुविधाएं उपलब्ध कराई गई हैं वे अपर्याप्त, साधन विहीन,

आरोपित और शोषण उन्मुख है। स्वास्थ्य के लिए शहरों व कस्बों पर निर्भरता दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है। यहां तक कि सामान्य रोगों के लिए भी ग्रामीणों को शहरों का मुँह ताकना पड़ता है। इस प्रकार निर्धन गावों का पैसा शहरों की तरफ जाने से गांव और निर्धन होते जा रहे है। अध्ययन क्षेत्र में स्वास्थ्य सुविधाओं का विवरण तालिका 1.20 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका 1.20 विकास खण्डवार चिकित्सा सुविधाएं 1991 - 92

विकासखण्ड	चिकित्सालय एवं औषधालय	प्राथैमिक स्वास्थ्यकेद्र	समस्त में उपलब्ध शैय्याएं	प्रति लाखजन संख्यापरएलो0 चिकि0एवंप्राथमिक स्वास्थ्य	प्रतिएकलाख जनसंख्या पर उपलब्धशै0
1. जसवन्तनगर	5	-	16	2.9	9.4
2. बढ़पुरा	2	1	18	2.7	16.4
3. बसरेहर	5	1	24	3.2	13.0
4. भरथना	3	-	12	2.6	10.5
5. ताखा	4	1	22	4.9	21.4
6. महेवा	4	1	20	2.9	11.8
7. चकरनगर	2	1	16	4.3	23.1
8. अछल्दा	3	-	16	2.5	13.1
9. विधूना	4	-	20	3.2	16.2
10. एरवा कटरा	2	1	12	3.1	12.5
11. सहार	3	1	16	3.2	12.7
12. औरैया	3	1	16	2.5	10.2
13. अजीतमल	3	-	12	2.6	10.2
14. भाग्यनगर	3	-	12	2.3	9.4
योगग्रामीण	46	8	232	3.01	12.95
योग नगरीय	18	7	428	7.49	128.26
योग जनपद	64	15	660	3.72	31.06

सारणी 1.21

विकास खण्ड वार आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक, चिकित्सालय तथा परिवार एवं मातृ शिशु कल्याण केन्द्र

1991 - 92

विकासखण्ड	आयुर्वेदिक चिकि0 औष0	उपलब्ध शैय्याएं	होम्योपैथिक चिकि0/औ	यूनानी चिकि0 /औष0	परिवारएवं माजृ शिशुकल्याण केन्द्र	परिवार एवंमातृ शिशु कल्याण उपकेन्द्र
1. जसवन्तनगर	2	4	2	-	-	34
2. बढ़पुरा	2	4	1	-	1	18
3. बसरेहर	1	4	1	-	1	28
4. भरथना	1	-	1	-	-	20
5. ताखा	2	-	-	5	1	15
6. महेवा	2	4	3	-	1	22
7. चकरनगर	3	4	-	-	1	11
8. अछल्दा	1	-	-	-	-	20
9. विधूना	3	8	-	-	-	21
10. एरवाकटरा	3	12	1	-	1	19
11. सहार	4	12	-	1	1	19
12. औरैया	-	-	1	-	1	26
13. अजीतमल	2	4	-	-	-	23
14. भाग्यनगर	2	-	-	-	-	23
योग ग्रामीण	28	56	28	1	8	299
योग नगरीय	8	56	10	-	9	8
योग जनपद	36	112	38	1	17	307

सारणी 1.20 में विकासखण्ड स्तर पर चिकित्सा सुविधाओं का विवरण प्रस्तुत कर रही है। जिसके अनुसार जनपद में कुल 79 ऐलौपैथिक चिकित्सालय/औषधालय तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र वर्ष 1991-92 तक स्थापित किए जा चुके थे जिनमें 54 ग्रामीण क्षेत्र में तथा 25 शहरी क्षेत्र में स्थित है। ग्रामीण क्षेत्र को 232 चिकित्सा शैय्याएं उपलब्ध हैं जबकि शहरी क्षेत्र में इससे लगभग दुगनी अर्थात 428 शैय्याएं सुलभ हैं। ग्रामीण क्षेत्र को प्रति लाख जनसंख्या पर चिकित्सालय 3.01 उपलब्ध है। वहीं शहरी जनसंख्या को लगभग 7.50 उपलब्ध है। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्र को प्रति एक लाख की आवादी पर लगभग 13 शैय्याएं उपलब्ध हैं जबकि शहरी क्षेत्र को 128 से भी अधिक शैय्याएं उपलब्ध हैं।

सारणी 1.21 जनपद में अन्य चिकित्सा सुविधाओं का विवरण प्रस्तुत कर रही है। ग्रामीण क्षेत्र में 28 आयुर्वेदिक चिकित्सालय/औषधालय तथा शहरी क्षेत्र में 8 चिकि0/औष0 लोगों को स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध करा रहे हैं। होम्योपैथिक 38 तथा यूनानी चिकित्सालय मात्र सहार विकास खण्ड की सेवा कर रहा है। परिवार एवं मातृ शिशु कल्याण केन्द्र 17 है जिनमें से 50 प्रतिशत से अधिक शहरी क्षेत्रों में स्थापित है। परिवार एवं मातृ शिशु कल्याण उपकेन्द्र कुल 307 है जिनमें से मात्र 8 उपकेन्द्र शहरी क्षेत्र में हैं। अन्य उपकेन्द्र ग्रामीण क्षेत्र में अपनी सेवाएं अर्पित कर रहे हैं।

(ब) विद्युत सुविधाएं -

गांवों के समग्र विकास के लिए ग्रामीण विद्युतीकरण अत्यन्त आवश्यक है, इसका प्रमुख कारण यह है कि विद्युतीकरण से न केवल सिंचाई की सुविधाओं में प्रसार होता है, वरन गावों में प्रकाश व्यवस्था भी होती है साथ ही अनेक उपकरण विद्युत चालित होने से ऐसे उपकरणों का ग्रामीण क्षेत्रों में प्रसार भी होता है जिससे जीवन स्तर ऊँचा उठता है। गावों में बिजली पहुँचाने के कार्य में ग्रामीण विद्युतीकरण निगम शीर्षसंस्था के रूप में कार्य कर रहा है। इस निगम का मुख्य प्रयास ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली के उत्पादक प्रयोग को प्रोत्साहित करना है। इन प्रयासों के अन्तर्गत पम्प सेटों को बिजली प्रदान करना, स्थानीय कच्चे माल का प्रयोग करने वाली लघु औद्योगिक इकाइयों को विद्युत संयोजन करना और घरों, सड़कों, तथा सामुदायिक संस्थाओं में प्रकाश की व्यवस्था करना सम्मिलित है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि गांवों को अधिक

उत्पादक बनाने के लिए ग्रामीण विद्युतीकरण अत्यन्त आवश्यक है। अध्ययन क्षेत्र में विद्युत सुविधा की स्थिति सारणी 1.22 में दर्शाई गई है -

सारणी 1.22 विकासखण्ड वार विद्युतीकृत ग्रामीण क्षेत्र (वर्ष 1991-92)

क्र0स0	विकासखण्ड	विद्युतीकृत ग्राम	समस्त ग्रामों का प्रतिशत	ऊर्जीकृत निजी नलकूप पम्पिंग सेटोंकीसंख्या
1.	जसवन्तनगर	123	95.3	1107
2.	बढ़पुरा	83	98.8	257
3.	बसरेहर	93	66.4	913
4.	भरथना	70	86.4	341
5.	ताखा	38	50.0	76
6.	महेवा	117	100.00	1344
7.	चकरनगर	33	52.4	25
8.	अछल्दा	40	37.4	121
9.	विधूना	35	33.6	91
10.	एरवाकटरा	56	59.0	115
11.	सहार	39	41.5	102
12.	औरैया	80	53.7	80
13.	अजीतमल	57	55.3	313
14.	भाग्यनगर	87	72.5	134
	योग	951	65.1	5019

सारणी 1.22 विकास खण्ड स्तर पर ग्रामीण क्षेत्र को विद्युत, सुविधाओं, का विवरण प्रस्तुत कर रही है। जनपद में कुल 1461 आवाद ग्रामों में से 951 ग्राम (65.1 प्रतिशत) विद्युतीकृत हो चुके हैं। इनमें से महेवा विकास खण्ड में शत प्रतिशत ग्राम विद्युतीकृत हो चुके हैं जबकि बढ़पुरा तथा जसवन्त नगर भी अपने पूर्ण लक्ष्य प्राप्ति से अधिक दूर नहीं है। सबसे निम्न स्तरीय प्रदर्शन विधूना विकास खण्ड का है जहां केवल 33.6 प्रतिशत ग्राम ही अभी तक विद्युत सुविधा प्राप्त कर सके हैं। इसके अतिरिक्त 50 प्रतिशत से कम विद्युतीकृत ग्रामों से युक्त विकासखण्डों में से अछल्दा 37.4 प्रतिशत, तथा सहार 41.5 प्रतिशत है। शेष अन्य विकास खण्ड 50 प्रतिशत या इससे अधिक विद्युतीकृत ग्रामों से युक्त हैं। चूंकि महेवा शत प्रतिशत विद्युतीकृत विकास खण्ड है इसलिए विद्युतचालित नलकूपों/ पम्पिंग सेटस की संख्या भी सर्वाधिक 1344 है, इसके बाद दूसरा स्थान जसवन्त नगर विकास खण्ड का है जहां पर इस सुविधा युक्त 1107 नलकूप/पम्पिंग सेटस हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सेंसस डायरी (1985) — स्टेटीकल डायरी, यू0 पी0–पृष्ठ 116

2. वुर्राड एस0जी0 (1912) — " आन दि ओरिजिन आफ हिमालय माउण्टेन्स ज्योग्रफीकल सर्वे आफ इण्डिया," प्रोफेशनल पेपर, कलकत्ता नं0 12, पी0 11

3. कृष्णन एम0एस0 (1968) — " जियोलोजी आफ इण्डिया एण्ड वर्मा" मद्रास, पी0 511

4. वाडिया डी0एनप0 (1966) — "जियोलोजी आफ इण्डिया" लन्दन, ई0एल0वी0एस0पी089

5. सिंह आर०एल० — "इण्डिया – ए रीजनल ज्याग्रफी" वाराणसी पी0पी0–202–211

6. ओल्डहम आर0डी0 — "दि डीप वोरिंग एट लखनऊ" रिकार्ड आफ दि जियोलोजीकल सर्वे आफ इण्डिया, वाल्यूम 23, पी0268

7. ओल्डहम आर0डी0 (1917) — "दि स्ट्रक्चर आफ हिमालय एण्ड गैंगेटिक प्लेन" ममोर्स आफ जिओलोजीकल सर्वे आफ इण्डिया, वाल्यूम 13, वार्ट–2, पी0 82

8. कूवी0एच0एम0 (1921) — "ए क्रिटीसिज्म आफ ओल्डहमृस पेपर आन दि स्ट्रक्चर आफ हिमालयाज एण्ड आफ दि गैंगेटिक प्लेन एज इलूसिएटिड वाई जियोडेटिक आवजर्वेशन इन इण्डिया" ममोर्स आफ ज्याग्रफीकल सर्वे आफ इण्डिया, प्रोफेशनल पेपर नं0 18, देहरादून, पी0 6

9. ग्लैनी ई0ए0 (1932) — दि ग्रेविटी एनामोलीज इन दि स्ट्रक्चर आफ अर्थ क्रस्ट" मेमोर्स आफ ज्याग्रफीकल सर्वे आफ इण्डिया, प्रोफेशनल पेपर नं0 27, देहरादून, पी0 22

10. चटरजी एस0सी0 — "एकोनोमिक रीजन्स आफ इण्डिया इन डा0 सफी (इड) स्टडी इन एप्लाइड एण्ड रीजनल ज्याग्रफी, अलीगढ़, पी0 180

11. मिश्रा, आर0 एन0 — ''उत्तर प्रदेश'' वाराणसी, पी0 पी0 202–211

12. हंटिगंटन, (1956) — '' प्रिंसिपल आफ ह्यूमन ज्याग्रफी'' पी0 101

13. कौशिक एस0डी0 (1956) — ''इनवायरनमेण्ट एण्ड ह्यूमन प्रोगेस'' चैप्टर 5

14. व्हिल वेक आर0एन0 (1932) — ''दि ज्यॉग्रफिक फैक्टर्स'' न्यूयार्क, सेंचुरी क0 पी087

15. ब्लैन फोर्ड, एच0एफ0 (1988) — 'रैनफाल आफ इण्डिया'' मेमो0 नं0 1 एम0 डी0 वाल्यूम 3, पी–130

16. आयर, एस0आर0 (1964) — ''बेजीटेशन एण्ड स्वाइल, ए0वर्ल्ड पिक्चर'' लन्दर पी010

17. कौशिक, ए0डी0 (1990) — ''ह्यूमन ज्याग्रफी'' पी0 326

18. सेंसस हैण्डबुक (1961) — '' डिस्ट्रिक्ट सेंसर हैण्डबुक, यू0 पी0 26, इटावा डिस्ट्रिक्ट पी0–4

19. वानिकी विभाग (1982–83) — '' सामाजिक वानिकी विभाग, इटावा एण्ड फर्रुखाबाद डिस्ट्रक्ट

20. मामोरिया सी0वी0 (1984) — '' एग्रीकल्चर प्रोवलम आफ इण्डिया'' किताब महल इलाहाबाद, पी0 123

21. सिंह आर0 एल0 — ''इण्डिया – ए, रीजनल स्टडी'' वाराणसी

22. केश ई0सी0 (1996) — कालेज ज्योग्राफी

23. दोकूचेब वी0वी0 (1936) — ''पीओलोजी'' न्यू व्रन्सेविक, न्यूजर्सी

24. वाडिया डी0 ए0 (1966) — ''जियोलाजी आफ इण्डिया'' लन्दन पी0 512

25. कोल ग्रोविली (1959) — ''क्वेटिड वाई आरथर होम्स इन फिजीकल ज्योग्रफी'' पी0 122

द्वितीय अध्याय

द्वितीय अध्याय

सामान्य भूमि उपयोग एवं कृषि भूमि उपयोग

किसी भी विकासशील अथवा अर्द्धविकसित अर्थव्यवस्था की आर्थिक उन्नति का मूल आधार कृषि है। कृषि केवल उदरपूर्ति का ही मात्र साधन नही है बल्कि औद्योगीकरण के लिए बहुत से उद्योगों के कच्चे माल की आपूर्ति भी कृषि पर निर्भर करती है। भारत एक कृषि प्रधान देश है अतः वर्तमान औद्योगिक युग में कृषि का महत्व और भी अधिक बढ़ गया है। विज्ञान की प्रगति के साथ - साथ कृषि क्षेत्र में भी काफी विकास हुआ है। भूमि का अधिक से अधिक उपयोग करने का प्रयास हो रहा है ताकि देश की लगभग 90 करोड़ से भी अधिक आबादी की उदरपूर्ति की जा सके। गंगा-यमुना दोआब में स्थित इटावा जनपद एक कृषि प्रधान क्षेत्र हैं। यहां की अधिकांश जनसंख्या प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। जनपद की अधिकांश भूमि समतल एवं उपजाऊ है। नदियों के किनारे का ही थोड़ा सा भूभाग है जो कि ऊबड़ -खाबड़ बीहड़ क्षेत्र है। जिस पर कृषि कार्य करना सम्भव नहीं है। अधिकांश भाग में कृषि की जाती है। सिंचाई के साधनों का पर्याप्त विकास हो चुका है। आधुनिक उर्वरकों का ही भरपूर उपयोग होता है। जिसके परिणाम स्वरूप प्रति हेक्टेयर उत्पादन क्षमता बढ़ गयी है।

ऐसा अनुभव किया जाता है कि कृषि विकास की अनेक अवस्थाओं में परिवर्तन के लिए अनेक कारक उत्तरदायी होते हैं जिनमें आर्थिक उपादान जैसे मांग पूर्ति, यातायात, साधन बाजार सुविधा, जनसंख्या वृद्धि आदि का विशेष योगदान होता है। कृषि कार्य प्रारम्भ होने से पूर्व अवस्था में सम्पूर्ण अकृष्य क्षेत्र होता है। सामान्तया वनाच्छादित होता है, जिसे न्यूनतम लाभ वाला भूमि उपयोग कहा जा सकता है। जब तक मानव अपनी आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन नही करता है या सदुपयोग नही करता है, वह भूमि इकाई नहीं बन पाती है। मानव जैसे ही कृषि कार्य आरम्भ करता है, भूमि लाभप्रद इकाई बन जाती है। यद्यपि प्रारम्भिक काल में स्थानान्तरित कृषि व्यवस्था मुख्य रूप से अपनाई जाती है। इस अवस्था में कृषि क्षेत्र में क्रमशः वृद्धि होती है तथा अकृषि क्षेत्र में ह्रास होता है । तत्पश्चात एक ऐसी अवस्था की प्राप्ति होती है जब कृषि क्षेत्र अकृषि क्षेत्र की अपेक्षा अधिक होता है, इसे भूमि उपयोग की 'गहन जीवन

निर्वाहन कृषि अवस्था ' कहा जाता है। धीरे-धीरे एक ऐसी अवस्था की प्राप्ति होती है जब कि कृषि क्षेत्र (क) अधिकतम तथा अकृषि क्षेत्र (ख) न्यूनतम होता है तथा अकृष्य क्षेत्र (ग) में वृद्धि प्रारम्भ हो जाती है। भूमि उपयोग के विकास में यह अवस्था विशेष महत्वपूर्ण होती है, क्यों कि क्रमिक परिवर्तन में आगे एक ऐसी अवस्था की प्राप्ति होती है, जब कि कृषि क्षेत्र में ह्रास होता है फिर भी शस्य क्रम गहनता एवं कृषि क्षमता में वृद्धि होती है। इस अवस्था में कृषि भूमि का सर्वाधिक लाभप्रद उपयोग होता है यह कृषि विकास की व्यापारिक अवस्था है। अगली अवस्था में कृषिक्षेत्र (क) अकृष्य (ग) की अपेक्षा कम हो जाता है। यह एक ऐसी अवस्था है जब ग्रामीण भूमि उपयोग नगरीय भूमि उपयोग में परिवर्तित हो जाता है।

भूमि उपयोग अध्ययन की मुल संकल्पना -

भूमि उपयोग अध्ययन सम्बन्धी संकल्पनाएं इस प्रकार है -

1. भूमि उपयोग की आर्थिक संकल्पना
2. भूमि उपयोग क्षमता की संकल्पना
3. सर्वोत्तम तथा अनुकूलतम भूमि उपयोग की संकल्पना
4. भूमि उपयोग के तुलनात्मक लाभ की संकल्पना
5. क्षेत्रीय संतुलन की संकल्पना
6. दूरी संकल्पना
7. भूमि उपयोग की व्यावहारिक संकल्पना
8. भूमि उपयोग अध्ययन में प्रत्यक्ष ज्ञान तथा प्रतिविम्ब संकल्पना

1. भूमि उपयोग की आर्थिक संकल्पना -

साधारणतया भूमि शब्द का प्रयोग निम्न रूपों में किया जाता है - (1) क्षेत्र (2) प्रकृति (3) उत्पादन कारक (4) उपभोग पदार्थ (5) स्थिति (6) सम्पत्ति (7) पूंजी

एक भूगोलवेत्ता के लिए सर्वप्रथम भूमि एक क्षेत्र है जो मात्रा में स्थाई तथा अनश्वर है जिसे धरातल, मिटटी तथा पृथ्वी के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। 'क्षेत्र' से आशय उन सभी स्थलों से है जहां से मानव अपनी जीविका अर्जित करता है, मानव क्षेत्र का अपनी आवश्यकतानुसार उपभोग करता है। इस प्रकार भूमि उपयोगिता के दृष्टिकोण से आर्थिक संसाधन बन जाती है। ऐसा भी देखा जाता है कि आज जो क्षेत्र अविकसित तथा आर्थिक दृष्टिकोण से महत्वहीन है, कल लाभप्रद सिद्ध होता है तथा इसकी विपरीतावस्था भी दृष्टिगोचर होती है। इसी प्रकार जब भूमि को प्रकृति के रूप में मूल्यांकित किया जाता है तब आशय प्राकृतिक वातावरण से होता है, उदाहरणार्थ सूर्य की रोशनी, वर्षा, हवा, परिवर्तनशील जलवायु परिस्थितियां, वाष्पीकरण, तथा मिटटी एवं धरातलीय दशाएं भूमि की उपयोगिता को प्रभावित करती है। मानव आर्थिक संसाधन बनाने हेतु भूमि की अनेक विशेषताओं को परिमाजित करता है। अर्थशास्त्री भूमि को उत्पादनकारक के रूप में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान करते हैं। जब भूमि को उत्पादन कारक के रूप में प्रयोग किया जाता है, तब भूमि प्रकृति प्रदत्त साधन मानी जाती है, जिससे भोज्य पदार्थ, ऊर्जा संसाधन तथा उद्योगों के लिए कच्चा पदार्थ प्राप्त होता है जिसका उपयोग जनजीवन के विकास हेतु विकास किया जाता है, इसी प्रकार भूमि को उपभोग पदार्थ के रूप में मान्यता दी जाती है। उदाहरणार्थ निवास स्थान, पार्क, मनोरंजन, के मैदान आदि स्थल अन्य उपभोग पदार्थो के समान है। आधुनिक युग में भूमि की स्थिति के रूप में विशेष मान्यता दी गई है। इस अवधारणा का सम्बन्ध यातायात, बाजार एवं अन्य सांस्कृतिक एवं भौतिक स्वरूपों के संदर्भ में किसी स्थान की स्थिति से है। भूमि का महत्व, मूल्य एवं उपयोग केवल उसकी भौतिक स्थिति से नही निर्धारित होती है बल्कि उसकी स्थिति विशेष के कारण भी उसका महत्व होता है। भूमि की सम्पत्ति के रूप में मान्यता कानूनी पक्ष का द्योतक है, सम्पत्ति के लिए मानव की धारणा मौलिक होती है। संस्थागत सम्पत्ति की अवधारणा समय के साथ परिवर्तनशील होती है। ऐसा देखा जाता है कि जब तक संस्था या प्रबन्ध जिसकी देखरेख में सम्पत्ति रहती है, शक्तिशाली रहता है, उत्पादन कारक के रूप में भूमि एक पूंजी है, मानव अपनी समझ बूझ से भूमि की उपयोगिता में वृद्धि एवं ह्रास करता है। वास्तव में अर्थशास्त्री के लिए भूमि एक पूंजी है।

2. भूमि उपयोग क्षमता की संकल्पना -

बारलो[1] के मतानुसार भूमि उपयोग क्षमता से आशय भूमि संसाधन इकाई की उत्पादन क्षमता से

है, जिसमें उत्पादन लागत की अपेक्षा शुद्ध लाभ अधिक होता है। उदाहरणार्थ क, ख, तथा ग तीन उत्पादन इकाइयों में क्रमशः शुद्ध लाभ 500 रू0, 1000 रू0, तथा 1500 रू0 होता है। फलस्वरूप ग इकाई की भूमि उपयोग क्षमता में सर्वाधिक होगी। किसी भी इकाई की क्षमता का निर्धारण सर्वदा किसी निश्चित समय एवं उपलब्ध तकनीकी स्त्र के संदर्भ में किया जाता है। कृषि भूमि उपभोग की क्षमता की परिभाषा का सम्बन्ध उस प्रभावोत्पादक क्रिया से है, जहां पूंजी तथा श्रम क्रमिक प्रयोग के आधार पर भूमि की उत्पादन मात्रा में निरंतर वृद्धि होती है, लेकिन भूमि उपयोग क्षमता की व्याख्या एक ओर अकृष्य, कृष्य तथा कृषि क्षेत्र तथा दूसरी ओर सिंचित बहुफसली क्षेत्र तथा तीसरी ओर सभी उत्पादित फसलों के प्रति एकड़ उपज के मध्य संयोग से की जा सकती है ।

3. सर्वोत्तम या आदर्शतम भूमि उपयोग की संकल्पना -

एक भूमि इकाई का अनेक रूपों में उपभोग हो सकता है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि एक उपभोग कर्ता के अनेक उपयोगों में से किसी एक उपभोग को निर्धारित करते समय औसत आय या आर्थिक आय के सिद्धांत से प्रभावित होता है। फलस्वरूप भूमि इकाई का उपयोग इस रूप में होना चाहिए जिससे किसी निश्चित अवधि में उससे अधिकतम शुद्ध आय प्राप्त हो। बहुउपयोग जिससे सर्वाधिक आय प्राप्त होती है, आदर्शतम उपयोग है। साधारणतया भूमि का उपयोग उस समय सर्वोत्तम समझा जाता है जब उसका उपयोग एक या सम्मिश्रित उददेश्यों की प्राप्ति के लिए सर्वाधिक शुद्ध लाभ या न्यूनतम हानि की भावना से किया जाता है, अतएव सर्वोत्तम भूमि उपयोग की संकल्पना तुलनात्मक लाभ के सिद्धांत से निर्धारित होती है। इस प्रकार इस संकल्पना में दो पहलुओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

(क) भूमि उपयोग क्षमता

(ख) भूमि के अनेक उपयोगों के लिए पारम्परिक मांग

फाउण्ड[2] के मतानुसार आदर्श भूमि उपयोग दो मुख्य विशेषताओं का बोध कराता है - (क) उपयोगी किस्म (ख) गहनता । विद्धानों का मत है कि किस्म निर्धारण में कोई विशेष समस्या नहीं उत्पन्न

होती है परन्तु गहनता का प्रयोग अनेक संदर्भो में किया जाता है, साधारणतया इस शब्द का प्रयोग भूमि इकाई तथा लागत के अनुपात के रूप में प्रयुक्त होता है। इस प्रकार गहनता स्तर का सम्बोधन प्रति इकाई क्षेत्र में प्रयुक्त लागत की मात्रा के लिए किया जाता है। गहन तथा अत्यधिक गहन भूमि उपयोग की प्राप्ति उस समय होती है जब प्रति भूमि इकाई में अधिक से अधिक लागत का प्रयोग किया जाता है, इसके विपरीत विस्तृत भूमि उपयोग में लागत कम से कम होती है। लागतें तीन हैं - भूमि, श्रम तथा पूंजी । भूमि लागत के अन्तर्गत - 1. उत्पादन इकाई का क्षेत्र, 2. भूमि की विशेषता 3. धरातलीय ढाल 4. जल प्रवाह 5. जल - तल 6. वर्षा की मात्रा भी सम्मिलित है। इस प्रकार भूमि के अन्तर्गत एक ही स्थान पर अनेक लागत की आवश्यकता पड़ती है। श्रम से आशय स्वयं या किराए के श्रम से है जो उत्पादन क्रिया में एक महत्वपूर्ण कारक है। पूंजी लागत के अन्तर्गत भूमि, श्रम, तथा अन्य सभी लागतें सम्मिलित है। प्रबन्ध के अन्तर्गत वे सभी लागत सम्मिलित है जिनके द्वारा भूमि उपयोग की किस्में तथा गहनता निर्धारित होती है। इस सम्बन्ध में फाउण्ड[3] ने भूमि उपयोग की आदर्शतम क्षमता का निर्धारण दो विशेष प्रतिमानों के आधार पर किया है -

(क) एक लागत कारक के आधार पर आदर्शतम भूमि उपयोग गहनता का निर्धारण

(ख) अनेक लागत कारकों के आधार पर आदर्शतम भूमि उपयोग गहनता का निर्धारण।

अनेक भूमि उपयोगों में भूमि का व्यापारिक तथा औद्योगिक उपयोग सर्वाधिक लाभप्रद होता है, आवासीय भूमि उपयोग का द्वितीय स्थान है। कृषि भूमि उपयोग निश्चित रूप से जंगल एवं चारागाही उपयोग की अपेक्षा अधिक लाभप्रद होता है। सीमान्तीय अकृषि भूमि की भूमि उपयोग क्षमता न्यूनतम होती है।

4. तुलनात्मक लाभ की संकल्पना -

ऐसा अनुमान किया जाता है कि एक निर्णयकर्ता भूमि के अनेक उपयोगों में से तुलनात्मक लाभ सिद्धान्त के आधार पर एक उपयोग को निर्धारित करता है, वह ऐसा उपयोग अपानाता है, जिससे किसी निश्चित अवधि में सर्वाधिक शुद्ध आय होती है। किसी भी क्षेत्र में भूमि उपयोग विशिष्टता की इसी

सिद्धान्त के अनुरूप मिलती है। उदाहरणार्थ भूमि उत्पादकता के आधार पर चावल उत्पादन के लिए दक्षिण भारत में उत्तरी भारत की अपेक्षा तुलनात्मक लाभ है, फलस्वरूप समान श्रम एवं पूंजी लागत में दक्षिण भारत में प्रति एकड़ चावल उत्पादन उत्तर भारत की अपेक्षा अधिक होता है।

तुलनात्मक लाभ दो प्रकार का होता है - (1) भौतिक तुलनात्मक लाभ (2) आर्थिक तुलनात्मक लाभ । भौतिक तुलनात्मक लाभ से तात्पर्य उन सभी भौतिक कारकों से हैं जिसके कारण उस उत्पादन इकाई को अपेक्षाकृत अधिक लाभ होता है, जैसे भूमि उत्पादकता के कारण प्रति एकड़ उत्पादन का अधिक होना । आर्थिक तुलनात्मक लाभ से तात्पर्य उन आर्थिक कारकों से हैं जिससे किसी भी उत्पादन इकाई में दूसरे की अपेक्षाकृत अधिक शुद्ध आय होती है। उदाहरणार्थ दो समान इकाइयों में बराबर पूंजी तथा श्रम लागत के बदले समान मात्रा में टमाटर का उत्पादन होता है, तो किसी एक इकाई को तुलनात्मक लाभ नहीं है। यदि एक इकाई में दूसरे की अपेक्षा सस्ता श्रम उपलब्ध है तो उस क्षेत्र में आर्थिक कारण से अधिक तुलनात्मक लाभ होगा फलस्वरूप टमाटर के उत्पादन की विशिष्टता का होना स्वाभाविक है।

5. क्षेत्रीय संतुलन की संकल्पना -

किसी भी भाग का भूमि उपयोग क्षेत्रीय मांग और पूर्ति सिद्धान्त के अनुरूप संतुलित होना चाहिए। मुख्य रूप से भूमि उपयोग के संतुलन का स्वरूप तीन प्रकार का होता है - (क) साधारण संतुलन (ख) आंशिक संतुलन तथा (ग) पूर्ण संतुलन । भूमि उपयोग के साधारण संतुलन की प्राप्ति उस समय होती है जब उस भूमि उपयोग से सम्बन्धित तत्वों या चरों के प्रभाव मात्रा में कोई अन्तर नही होता है। इस प्रकार का सन्तुलन स्थायी होता है, जो क्षेत्रीय मांग के अनुरूप होता है। वह भूमि उपयोग संतुलन जो क्षेत्रीय मांग के अनुरूप नहीं स्थापित होता है, उसे आंशिक संतुलन कहते हैं। यदि भूमि उपयोग अन्तर्क्षेत्रीय व्यापार तथा अन्य पदार्थों की मांग के अनुरूप संतुलित होता है, पूर्ण सन्तुलित भूमि उपयोग कहा जाता है।

किसी भी क्षेत्र में संतुलित भूमि उपयोग सम्बन्धी प्रतिमान प्रस्तुत करते समय मुल्य, मांग तथा पूर्ति, यातायात तथा बाजार दूरी सम्बन्धी चरो के प्रभाव का मूल्यांकन आवश्यक होता है। उन[4] महोदय ने

प्रत्येक पदार्थ के उत्पादन क्षेत्र तथा उनके अन्र्त सम्बन्धों को निम्न अनुपात के आधार पर प्रस्तावित किया है।

$$E = (P - C - td) Y$$

E = प्रति इकाई भूमि से आर्थिक आय

P = प्रति इकाई का उत्पादन बाजार मूल्य

C = प्रति इकाई उत्पादन की लागत

t = प्रति इकाई उत्पादन तथा प्रति इकाई दूरी का यातायात मूल्य

d = बाजार से दूरी

Y = प्रति इकाई भूमि की उपज

अनेक विद्वानों का मत है कि स्थाई क्षेत्रीय संतुलन की प्राप्ति कभी भी सम्भव नहीं होती है, उनका मत है कि भूमि उपयोग संतुलन में परिवर्तन अन्य तत्वों में परिवर्तन के कारण होता है ।

6. दूरी संकल्पना -

भूमि उपयोग विश्लेषण में दूरी एक महत्वपूर्ण संकल्पना है। दूरी एक आर्थिक इकाई है जिसका प्रभाव भूमि उपयोग पर पड़ता है। प्रसिद्ध जर्मन विद्वान वान थ्यूनेन ने सर्वप्रथम ग्रामीण भूमि उपयोग तथा दूरी के सम्बन्धों को सैद्धान्तिक रूप दिया । ऐसा देखा गया है कि बाजार तथा शहरी केन्द्रों से दूरी बढ़ने के साथ - साथ भूमि उपयोग स्वरूप में अन्तर तथा अधिशेष (Economic Rent) में ह्रास होने लगता है। कृषक के घर से जैसे जैसे उसके खेत की दूरी बढ़ती जाती है शस्य स्वरूप में अन्तर मिलता है तथा शुद्ध लाभ की दर में कमी हो जाती है। इसी प्रकार मुख्य यातायात साधनों से भूमि इकाई की दूरी बढने के साथ उत्पादकता तथा शुद्ध लाभ में ह्रास हो जाता है तथा भूमि उपयोग में भी अन्तर मिलता है।

7. भूमि उपयोग की व्यावहारिक संकल्पना -

इस संकल्पना का सम्बन्ध निर्णयकर्ता के व्यवहार एवं उस परिस्थिति से है जिसके अन्तर्गत वह

भूमि उपयोग सम्बन्धी निर्णय लेता है। सामान्तया, कृषक फसल बोने के पूर्व वर्ष में कई बार निर्णय लेता है, इस निर्णय में उसका व्यवहार तीन विशेष पक्षों से प्रभावित होता है - (क) उपयोगिता (ख) संक्रमता तथा (ग) व्यक्तिनिष्ठ सम्भाव्यता । कृषक या भूमि उपयोगकर्ता निर्णय से पूर्व प्रयुक्त लागत तथा प्रत्याशित आय का समान तुलनात्मक दृष्टिकोण अपनाकर मूल्यांकन करता है। यद्यपि यह मूल्यांकन बाजार के निकटवर्ती क्षेत्रों के लिए अधिक उचित है। उन क्षेत्रों के लिए उचित नहीं है जहां बाजार का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। इसीलिए कुछ अर्थशास्त्रियों का कहना है कि यदि बाजार मूल्य के स्थान पर व्यक्तिगत उपयोगिता का प्रयोग किया जा सके तो उपयोगिता संकल्पना का व्यावहारिक महत्व बढ़ जायेगा ।

हाल में भूमि उपयोग के निर्णय में संक्रमणता की समस्या को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाने लगा है। आत्मनिष्ठ, सम्भाव्यता की संकल्पना मानव के आधारभूत व्यापारिक परिकल्पना से उद्धृत है जिसमें मानव का निर्णय सर्वाधिक प्रत्याशित उपयोगिता की भावना पर आधारित होता है। ऐसी स्थिति में जहां मानव बाध्य होकर निर्णय लेता है, मानव व्यक्तिगत सम्भाव्यता के आधार पर प्रत्याशित उपयोगिता को सर्वाधिक लाभ प्रद बनाता है। लेकिन यह इस तथ्य पर निर्भर करता है कि निर्णयकर्ता का पूर्वानुभव कैसा है। ऐसा देखा जाता है कि जिस निर्णयकर्ता में पूर्वानुभव जितना अधिक होता है उसको उतना ही अधिक लाभ मिलता है।

8. भूमि उपयोग में प्रत्यक्ष ज्ञान तथा प्रतिविम्ब संकल्पना -

भूमि उपयोग निर्णय में वातावरण का महत्वपूर्ण स्थान है। निर्णय क्रिया प्रत्यक्ष तथा प्रतिविम्बत ज्ञान से प्रभावित होती है। जिसके आधार पर निर्णयन वातावरण निर्धारित होता है। भूमि उपयोग सम्बन्धी निर्णय में अधिगमन तथा सीख दो आधारों पर प्राप्त होती है। 1. व्यक्ति विशेष द्वारा प्राप्त अनुभव पर आधारित ज्ञान 2. दूसरे व्यक्तियों या बाह्य साधनों द्वारा प्राप्त ज्ञान । जब मानव भूमि उपयोग निर्णय लेता है तो निर्णय कार्य सीधे प्रत्यक्ष ज्ञान से प्रभावित होता है।

जनपद में सामान्य भूमि उपयोग -

भूमि संसाधन मनुष्य के लिए प्रकृति का सर्वोत्तम उपहार है। यह प्रत्येक अर्थव्यवस्था की आर्थिक क्रियाओं का आधार है। इस पर ही समस्त गतिविधियों का सृजन और विकास होता है। भूमि उपयोग के आंकड़े विद्यमान भूमि क्षेत्र का प्रयोगवार विवरण प्रस्तुत करते हैं और यह स्पष्ट करते हैं कि किसी भूखण्ड को सक्षमतापूर्वक कैसे कृषि योग्य बनाया जा सकता है। भूमि उपयोग का विभाजन मुख्य रूप से इस तथ्य पर आधारित है कि भूमि की प्रकृति कृषि भूमि की ओर बढने की है अथवा चारागाह या वनों के अन्तर्गत बढने की है। भूमि उपयोग का विवरण वन, गैर कृषि उपयोग में प्रयुक्त बंजर तथा कृषि के अयोग्य भूमि, स्थाई चारागाह, वृक्ष एवं बागों वाली भूमि, कृषि योग्य खाली भूमि, बालू परती भूमि, अन्य परती भूमि और शुद्ध कृषित भूमि नामक नौ शीर्षकों में प्रस्तुत किया जाता है। यह विवरण खाद्य एवं कृषि मंत्रालय द्वारा 1948 में नियुक्त टेक्निकल कमेटी आन कोआर्डिनेशन ऑफ एग्रीकल्चरल स्टैटिस्टिक्स' की संस्तुति पर आधारित है।[5]

1. वन -

मनुष्यों का हित मानव जीवन एवं वनस्पति जीवन के बीच समुचित सम्बन्ध पर ही निर्भर करता है। वन, मानव जीवन एवं वनस्पति जीवन के बीच सन्तुलन स्थापित करते हैं और इस प्रकार राष्ट्रीय कल्याण में वृद्धि करते हैं । इस सन्तुलन में बाधा पडने पर देश में बेकार की भूमि की वृद्धि होती है। वन प्रकृति के आक्रमणों को सहन करते हैं और लोगों को बड़ी-बड़ी आपत्तियों से बचाते हैं। वृक्षों की अधिक वृद्धि से केवल बेकार भूमि का ही उपयोग नही होता है बल्कि कृषि को भी बहुत लाभ होता है। वनों से प्राप्त लाभों को परम्परागत रूप से प्रत्यक्ष एवं परोक्ष लाभों में विभक्त किया जाता है।

वन से प्राप्त होने वाले प्रत्यक्ष लाभ में वनोपज को सम्मिलित किया जाता है। समस्त वनोपज को प्रधान वन उपज और गौण वन उपज नामक वर्गों में विभक्त किया जाता है। प्रधान वन उपज में इमारती तथा जलावन लकड़ी को सम्मिलित किया जाता है जब कि गौण वन उपज में बाँस और बेंत, पशुओं के लिए चारा, अन्य घास, गोंद, राल, बीड़ी के लिए पत्तियां, लाख इत्यादि को सम्मिलित किया

जाता है। गौण वन उपज से ही रबर, दियासलाई, कागज, प्लाईबुड, रेशम, वानिश आदि के उद्योग चलाए जाते हैं इसके अतिरिक्त यह कई प्रकार के कुटीर उद्योगों का भी आधार है।

प्रत्यक्ष लोगों के अतिरिक्त वनों से कई परोक्ष लाभ भी मिलते हैं। वनोपज वन क्षेत्र में उगने वाले विभिन्न पौधों एवं वनस्पतियो के अवशेष सड़कर वहां की मिटटी में स्वाभाविक रूप में मिलते हैं जिनसे भूमि की उर्वराशक्ति बढ़ती है। समाजोपयोगी समस्त पशु पक्षियों के लिए आश्रम स्थलवन है। वन अर्थव्यवस्था के पर्यावरणीय सन्तुलन को बनाए रखने में समर्थ है। वे जलवायु के असामयिक बदलाव, अनावृष्टि, अल्पवृष्टि, और अतिवृष्टि को नियंत्रित करते हैं। भूमि की जल अवशोषण शक्ति बढ़ाकर वे भूमिगत जल स्रोतों की क्षमता बढ़ाते है। स्वयं कार्बन डाई आक्साइड का अवशोषण कर वातावरण को विषाक्त होने से बचाते हैं एवं जन जीवन के स्वसन के आधार आक्सीजन का सृजन करते हैं। अब तो यह भी स्पष्ट हो गया है कि ताप में सर्वाधिक वृद्धि और ओजोन पर्त का क्षतिग्रस्त होना भी वनों की कमी के कारण है। इसके लिए वनों का अपेक्षित स्तर तक प्रसार आवश्यक है।[6] वनों की उपादेयता के संदर्भ में जे0 एल0 कलिंस का विचार अत्यन्त सार्थक प्रतीत होता है कि वृक्ष पर्वतों को थामे रहते है, वे तूफानी वर्षा को नियंत्रित करते हैं और नदियों में अनुशासन रखते हैं। उनके अनुचित स्थान परिवर्तन और तदजन्य विनाश को रोकते हैं। वन विभिन्न झरनों को बनाए रखते हैं और पक्षियों का पोषण करते हैं।[7]

वन क्षेत्र के अन्तर्गत वे सभी भूमियां सम्मिलित की जाती हैं जो किसी राजकीय अधिनियम के अनुसार वन क्षेत्र के रूप में घोषित है अथवा वन क्षेत्र के रूप में प्रशासित हैं, वे चाहे राजकीय स्वामित्व में हो अथवा निजी स्वामित्व में, चाहे उनमें वृहत वन हो या सम्भाव्य वन क्षेत्र के रूप में हो। वनों में पैदा की जाने वाली फसलों का क्षेत्र, वनों के अन्तर्गत चारागाह वाली जमीन या चारागाह के रूप में खुले छोड़े गये क्षेत्र भी वनों के अन्तर्गत आते हैं।

2. गैर कृषि प्रयोग में प्रयुक्त भूमि -

इस शीर्षक में उन भूमियों को सम्मिलित किया जाता है जो भवन, सड़क, रेलमार्ग, आदि के

प्रयोग में है। इसी प्रकार वे भूमियां जो जल प्रवाहों यथा नदियों या नहरों के अन्तर्गत हैं, भी इस वर्ग में सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त अन्य गैर कृषि प्रयोगों की भूमियां भी इसके अन्तर्गत सम्मिलित हैं।

3. बंजर और गैर कृषि योग्य भूमियां -

इस श्रेणी में वे सभी भूमियां सम्मिलित हैं जो बंजर हैं अथवा कृषि योग्य नहीं है। इस कोटि में पर्वतीय, पठारी, और रेगिस्तानी भूमियां आती हैं। इन भूमियों को अत्यधिक लागत के बिना फसलों के अन्तर्गत नही लाया जा सकता है। बंजर और गैर कृषि योग्य भूमियां कृषित क्षेत्रों के मध्य हो सकती है या इससे पृथक क्षेत्र में भी हो सकती है।

4. स्थाई चारागाह -

इसके अन्तर्गत चराई वाली सभी भूमियां सम्मिलित हैं। इस प्रकार की भूमियां घास स्थली हो सकती है या स्थाई चारागाह के रूप में । ग्राम समूहों के चारागाह भी इसी कोटि में आते हैं।

5. विविध वृक्षों एवं बागों वाली भूमि -

इस कोटि में कृषि योग्य वह सभी भूमियां सम्मिलित की जाती हैं जिन्हें शुद्ध कृषित क्षेत्र में सम्मिलित नहीं किया जाता है, परन्तु कतिपय कृषिगत प्रयोग में लाया जाता है। इसके अन्तर्गत छोटे पेड़, छावन वाली घासें, बांस की झाड़ ईधन, वाली लकड़ी के वृक्ष सम्मिलित किए जाते हैं। जो भूमि उपयोग के विवरण में बागान शीर्षक में सम्मिलित नहीं है।

6. कृषि योग्य व्यर्थ जमीन -

इस श्रेणी में वह भूमि सम्मिलित है जो खेती के लिए उपलब्ध है, परन्तु जिस पर चालू वर्ष और पिछले पांच वर्षो या उससे अधिक समय से फसल नहीं उगाई गई है, ऐसी भूमियां परती हो सकती हैं य झाडियों और जंगल वाली हो सकती है। ये भूमियां किसी अन्य प्रयोग में नही लाई जा सकती है। वह भूमि जिस पर एक बार खेती की गई है, परन्तु पिछले पांच वर्षो से खेती नहीं की गई वह भी इसी श्रेणी में आती है।

7. वर्तमान परती -

इस श्रेणी में वह कृषित क्षेत्र सम्मिलित किया जाता है जिसे केवल चालू वर्ष में परती रखा जाता है। उदाहरण के लिए यदि किसी पौधशाला वाले क्षेत्र को उसी वर्ष पुनः किसी फसल के लिए प्रयोग नहीं किया जाता तो उसे चालू परती कहा जाता है।

8. अन्य परती भूमि -

अन्य परती भूमि के अन्तर्गत वे भूमियां है जो पहले कृषि के अन्तर्गत थी लेकिन अब अस्थाई रूप से एक वर्ष की अवधि से अधिक परन्तु पांच वर्ष की अवधि से कम अवधि से खेती के अन्तर्गत रही है। जमीन का खेती से बाहर होने के कई कारण हो सकते हैं, यथा कृषकों की गरीबी, पानी का अपर्याप्त आपूर्ति विषम जलवायु, नदियों और नहरों की भूमियां और खेती का गैर लाभदायक होना आदि ।

9. शुद्ध कृषित क्षेत्र -

इस श्रेणी में फसल तथा फलोत्पादन के रूप में शुद्ध बोया गया क्षेत्र सम्मिलित किया जाता है। एक बार से अधिक बोए गये क्षेत्र की गणना भी एक बार ही की जाती है। यह कुल बोये गये क्षेत्र से कम होता है क्यों कि कुल बोये गये क्षेत्र से शुद्ध बोये गये क्षेत्र और एक बार से अधिक बोए गये क्षेत्र का योग होता है।

तालिका 2.1 में भूमि उपयोग के आंकड़े देखने से स्पष्ट होता है कि जनपद का कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 436727 हेक्टेयर है जिसमें वनों का क्षेत्रफल 40372 हेक्टेयर है। जो कुल भौगोलिक क्षेत्र का 9.24 प्रतिशत है, यद्यपि यह प्रतिशत अन्य शीर्षकों में सर्वाधिक है परन्तु अब भी यह अपेक्षित स्तर से बहुत कम है क्यों कि प्रदेश के कुल प्रतिवेदित क्षेत्र में से लगभग 17 प्रतिशत भूभाग पर वन हैं और देश के लगभग 22.7 प्रतिशत भू भाग पर वनों के क्षेत्रफल के उपरान्त दूसरा स्थान गैर कृषि कार्यों में प्रयोग की जाने वाली भूमि का है जिसका कुलक्षेत्रफल 34425 हेक्टेयर है। जो समस्त प्रतिवेदित क्षेत्र का 7.88 प्रतिशत है। गैर कृषि कार्यो में प्रयुक्त होने वाली भूमि से आशय उस भूमि से है जो भवनों, सड़कों,

तालिका 2.1 जनपद में भूमि उपयोग का विवरण वर्ष 1990-91 (हेक्टेयर में)

क्र0स0	भूमि उपयोग शीर्षक	वर्ष 1990 - 91	प्रतिशत
..	कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल	436727	100.00
1.	वन	40372	9.24
2.	कृषि योग्य बंजर भूमि	11308	2.59
3.	वर्तमान परती भूमि	15795	3.62
4.	अन्य परती भूमि	17460	4.00
5.	ऊसर और कृषि अयोग्य भूमि	24027	5.50
6.	कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लाई गई भूमि	34425	7.88
7.	चारागाह	2288	0.51
8.	उद्यान व वृक्षों वाली भूमि	1421	0.33
9.	शुद्ध बोया क्षेत्र	289691	66.23
10.	एक से अधिकवार बोया गया क्षेत्र	135646	46.82
11.	सकल बोया गया क्षेत्रफल	425337	146.82
12.	फसल सघनता	-	146.82

स्रोत - साँख्यिकी पत्रिका जनपद इटावा - 1992

रेलमार्ग, नदियों, नहरों या इसी प्रकार के अन्य प्रयोगों से हैं। वर्तमान एवं अन्य परती भूमि का हिस्सा भी कुछ कम महत्वपूर्ण नहीं है जो कि क्रमशः 15795 हेक्टेयर तथा 17460 हेक्टेयर है, इसी प्रकार बंजर भूमि का क्षेत्रफल 11308 हेक्टेयर है, इन तीनों प्रकार की भूमियों को यदि कृषि प्रयोग में लाया जा सके तो कुल 44563 हेक्टेयर भूमि पर फसल प्राप्त की जा सकती है। इसके लिए कृषि कार्य हेतु आने वाली बाधाओं को हटाया जा सके तो इस भूमि पर कृषि कार्य संभव है, इसे कृषि योग्य बनाया जाना चाहिए । चारागाह के लिए उपयोग में लाई जाने वाली भूमि का भाग अत्यन्त कम है यह मात्र 2228 हेक्टेयर तथा केवल 0.51 प्रतिशत है, जनपद में पशुधन को देखते हुए यह हिस्सा नगण्य जैसा

ही है, इसी प्रकार उद्यान तथा वृक्षों वाली भूमि का हिस्सा भी मात्र 0.33 प्रतिशत ही है । जनपद में ऊसर तथा कृषि के अयोग्य भूमि 24027 हेक्टेयर है, जिसको सरकार द्वारा ऊसर सुधार योजना के अन्तर्गत कृषि योग्य बनाने का प्रयास किया जा रहा है। जिसके परिणाम स्वरूप इस शीर्षक के अन्तर्गत आने वाली भूमि का क्षेत्रफल वर्ष 1980-81 की तुलना में कम हुआ है, पिछले दशक में यह 27342 हेक्टेयर था जो कि घटकर 24027 हेक्टेयर रह गया है, आशा की जानी चाहिए कि भविष्य में कृषि की नई तकनीक के परिणाम स्वरूप जनपद में ऊसर भूमि को कृषि योग्य बनाया जा सकता है।

जनपद में शुद्ध बोया गया क्षेत्र कुल प्रतिवेदित क्षेत्र का 66.33 प्रतिशत है जिस पर कृषि, फसलें, उगाई जाती हैं, एक से अधिकवार बोये गये क्षेत्र का प्रतिशत 46.82 है, इस प्रकार फसल गहनता 146.82 है।

जनपद में विकासखण्डवार भूमि उपयोग का विवरण

अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा प्रशासनिक दृष्टि से 14 विकासखण्डों में विभाजित है, जिनमें से कृषि भूमि उपयोग की दृष्टि से देखा जाय तो कुछ विकास खण्ड कृषि सम्बन्धी सुविधाओं से युक्त हैं क्योंकि वे समतल एवं मैदानी क्षेत्र में पड़ते हैं जबकि कुछ विकास खण्ड ऊबड़ खाबड़ होने के कारण कृषि सम्बन्धी सुविधाओं से वंचित हैं, स्पष्ट है कि कृषि दशाओं की भिन्नता के कारण विभिन्न विकास खण्डों में भिन्न-भिन्न भूमि उपयोग दृष्टिगोचर होता है। जिसका विवरण आगे दिया जा रहा है।

वन -

जनपद में वन भूमि का वितरण असमान मिलता है, यद्यपि औसत रूप से यदि देखा जाय तो वनों के अन्तर्गत कुल प्रतिवेदित क्षेत्र का 9.24 प्रतिशत क्षेत्र आता है, परन्तु आधे से अधिक वन भूमि केवल दो ही विकास खण्डों में केंन्द्रित है, अन्य विकासखण्डों में तो नाममात्र को वन भूमि है । अंग्राकिंत तालिका में वन भूमि का वितरण दर्शाया जा रहा है -

तालिका 2.2 विकास खण्डवार वन भूमि का वितरण वर्ष 1990-91 (हेक्टेयर में)

क्र0सं0	विकासखण्ड	वनभूमि	जनपद की कुल वन भूमि का प्रतिशत	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र
1.	जसवन्तनगर	1531	3.79	36609
2.	बढ़पुरा	8155	20.20	34513
3.	बसरेहर	2303	5.70	38144
4.	भरथना	1527	3.78	27235
5.	ताखा	1751	4.34	27496
6.	महेवा	2446	6.06	32786
7.	चकरनगर	11873	29.41	37726
8.	अछल्दा	1237	3.06	28144
9.	विधूना	2607	6.46	31497
10.	एरवाकटरा	1535	3.80	22407
11.	सहार	741	1.84	28089
12.	औरैया	2495	6.18	39938
13.	अजीतमल	1393	3.45	22187
14.	भाग्यनगर	661	1.64	28004
15.	आरक्षित वन क्षेत्र	16	0.04	×
16.	ग्रामीण योग	40271	99.75	434791
17.	योग नगरीय	101	0.25	1936
18.	योग जनपद	40372	100.00	436727

स्रोत - सांख्यिकी पत्रिका जनपद इटावा, 1992

तालिका क्रमांक 2.2 जनपद में वन क्षेत्र का वितरण विकास खण्डवार दर्शा रही है। तालिका से स्पष्ट होता है कि जनपद में कुल 40271 हेक्टेयर भूमि पर वन आच्छादित है जिसमें से मात्र 16 हेक्टेयर वन आरक्षित हैं। शेष अनारक्षित जनपद में कुल 40372 हेक्टेयर भूमि वनाच्छादित है जिसमें से 40271 हेक्टेयर ग्रामीण तथा 101 हेक्टेयर भूमि नगरीय वन क्षेत्र के अन्तर्गत आती है। विकास खण्डवार वितरण देखने से ज्ञात होता है कि विकास खण्ड चकरनगर का हिस्सा सर्वाधिक 29.41 प्रतिशत है इसके उपरान्त बढ़पुरा विकास खण्ड का स्थान 20.20 प्रतिशत आता है, इन दोनों विकास खण्डों के वन क्षेत्र का यदि योग कर दिया जाय तो लगभग 60 प्रतिशत हो जाता है अर्थात समस्त वन क्षेत्र का आधे से अधिक भाग इन्हीं दोनों विकास खण्डों में केन्द्रित हैं, इसका कारण इन दोनों विकास खण्डों का यमुना तथा चम्बल नदियों के मध्य में स्थित होना है। जनपद का भाग्य नगर विकास खण्ड न्यूनतम वनाच्छादित है, इस विकास खण्ड में केवल 661 हेक्टेयर भूमि वन क्षेत्र के अन्तर्गत आती हैं, इसी से मिलता जुलता विकास खण्ड सहार है जिसमें 741 हेक्टेयर क्षेत्र में वन पाये जाते हैं । यदि समग्र तालिका पर दृष्टिपात किया जाय तो पाया जाता है कि अपने समस्त प्रतिवेदित क्षेत्र के 5 प्रतिशत या इससे अधिक वन क्षेत्र वाले विकास खण्डों में चकर नगर, बढ़पुरा, विधूना, औरैया, महेवा, तथा वसरेहर, कुल छः विकास खण्ड हैं, जिनमें से चकरनगर तथा बढ़पुरा 20 प्रतिशत या अधिक वन क्षेत्र वाले विकास खण्ड हैं जो प्रादेशित वन क्षेत्र प्रतिशत को प्राप्त कर रहे हैं। अन्य विकास खण्ड अत्यन्त निचले स्तर को छू रहे हैं। तीन से पांच प्रतिशत के मध्य वन क्षेत्र वाले विकास खण्डों में ताखा, भरथना, एरवाकटरा, अजीतमल, अछल्दा, तथा जसवन्तनगर आते हैं जब कि शेष विकास खण्ड 2 प्रतिशत से भी कम स्तर को प्राप्त कर रहे हैं। इस प्रकार समग्र वन क्षेत्र का वितरण विभिन्न विकास खण्डों में असमान देखा जाता है, इसका कारण है कि जो विकास खण्ड यमुना और चम्बल नदियों के मध्य पड़ते हैं उनकी भूमि भी उबड़-खाबड़ है जिसके कारण अधिक वन क्षेत्र पाया जाना स्वाभाविक है, इन वन क्षेत्रों में वनोपज के रूप में बेर, बबूल, बांस तथा जंगली बबूल की बहुतायत है। इसके अतिरिक्त महेवा, औरैया, तथा जसवन्तनगर, विकास खण्ड का कुछ हिस्सा यमुना नदी के किनारे स्थित है अतः इन विकासखण्डों में भी वन क्षेत्र का स्तर पांच प्रतिशत से अधिक है ।

2. कृषि योग्य बंजर भूमि -

भूमि उपयोग की वर्तमान दशा में जनपद में भूमि संसाधन का अनुकूलतम उपयोग नही हो पा रहा है। कृषि कार्य भूमि उपयोग का एक प्रमुख पक्ष है। कृषि कार्य की दृष्टि से वर्तमान भूमि उपयोग का ढांचा एक ओर अल्प भूमि उपयोग और दूसरी ओर उसके अपकर्ष एवं भूमि क्षरण की समस्या उत्पन्न कर रहा है। जनपद में फसल उत्पादन की दृष्टि से उपज सामर्थ्य रखने वाला लगभग 11300 हेक्टेयर क्षेत्रफल व्यर्थ पड़ा है इसको फसलों तथा वृक्षारोपड़ के माध्यम से उपजाऊ बनाया जा सकता है। यह भू-भाग नदियों तथा नालों के किनारे अधिक क्षेत्र में पाया जाता है। इस श्रेणी में वह भूमि सम्मिलित है जो खेती के लिए उपलब्ध है, परन्तु इसमें चालू वर्ष और पिछले पांच या अधिक वर्षो से फसल नहीं उगाई जाती है। यह भूमियां या तो पड़ती है या झाडियों वाली हैं जो कृषि कार्य के अतिरिक्त प्रयोग में भी नहीं लाई जा सकती है। यदि कृषि योग्य सुविधाएं उपलब्ध हो तो इस व्यर्थ पड़े हुए भू भाग को उपजाऊ बनाया जा सकता है। अग्र तालिका में विकास खण्डवार कृषि योग्य बंजर भूमि को दर्शाया गया है -

तालिका क्रमांक 2.3 विकास खण्डवार जनपद की बंजर भूमि का विवरण प्रस्तुत कर रही है, तालिका से स्पष्ट हो रहा है कि जनपद में कुल 11308 हेक्टेयर भूमि कृषि योग्य तो है परन्तु कृषि सुविधाओं के अभाव में या किसी अन्य कारण से उक्त भूमि का उपयोग नहीं हो रहा है, इस भूमि में। 11297 हेक्टेयर भूमि ग्रामीण क्षेत्र में स्थित है और 11 हेक्टेयर भूमि नगर में स्थित है। कुल कृषि योग्य बंजर भूमि का वितरण भी विभिन्न विकास खण्डों में असमान है। सर्वाधिक बंजर भूमि वाला विकास खण्ड विधूना है जिसका हिस्सा 12.79 प्रतिशत है और जिसमें सर्वाधिक 1446 हेक्टेयर भूमि कृषि योग्य बंजर भूमि के रूप में उपयुक्त है। इससे कुछ बेहतर स्थिति में सहार ब्लाक की स्थिति है जिसका हिस्सा 12.34 प्रतिशत है। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह विकास खण्ड कुल 1395 हेक्टेयर भूमि को कृषि कार्यो में प्रयुक्त नहीं कर पा रहा है। जहां तक बंजर भूमि का प्रश्न है अजीतमल विकासखण्ड सर्वाधिक अच्छी स्थिति, में जहां केवल 110 हेक्टेयर भूमि का कृषि कार्यो में प्रयोग नहीं हो पा रहा है, यदि अन्य विकास खण्ड भी इसी स्थिति को प्राप्त कर सकें तो जनपद का भूमि उपयोग अधिकतम भूमि उपयोग करने की स्थिति को प्राप्त कर सकता है।

तालिका 2.3 विकास खण्डवार कृषि योग्य बंजर भूमि का वितरण 1990-91 (हेक्टेयर में)

क्र0स0	विकासखण्ड	बंजर भूमि	प्रतिशत	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र
1.	जसवंतनगर	743	6.57	36609
2.	बढ़पुरा	753	6.66	34513
3.	बसरेहर	759	6.71	38144
4.	भरथना	1127	9.97	27235
5.	ताखा	1208	10.68	27496
6.	महेवा	738	6.52	32786
7.	चकरनगर	355	3.14	37726
8.	अछल्दा	1057	9.35	28144
9.	विधूना	1446	12.79	31497
10.	एरवाकटरा	712	6.30	22407
11.	[illegible]सहार	1395	12.34	28089
12.	औरैया	245	2.17	39938
13.	अजीतमल	110	0.97	22187
14.	भाग्यनगर	649	5.74	28004
15.	ग्रामीण योग	11297	99.90	434791
16.	योग नगरीय	11	.10	1936
17.	योग जनपद	11308	100.00	436727

स्रोत - सांख्यिकी पत्रिका जनपद इटावा - 1992

जनपद में कुल बंजर भूमि में 10 प्रतिशत या उससे अधिक हिस्सा की श्रेणी में कुल तीन विकास खण्ड सहार, विधूना, तथा ताखा आते हैं जिनमें विधूना तथा सहार विकास खण्ड 12 प्रतिशत से भी अधिक बंजर भूमि वाले हैं। 5 प्रतिशत से 10 प्रतिशत तक हिस्से वाले भरथना, अछल्दा, सरेहर, जसंवत नगर, बढ़पुरा, महेवा एरवाकटरा, तथा भाग्यनगर, कुल आठ विकास खण्ड हैं, जब कि पांच प्रतिशत से कम भाग वाले कुल दो विकास खण्ड औरैया और अजीतमल है। इसमें से अजीतमल विकास खण्ड सर्वाधिक अच्छी स्थिति मे है।

3. **परती भूमि -**

परती भूमि की भूमि के कुशलतम प्रयोग की एक बड़ी बाधा है। इस प्रकार की भूमि के अन्तर्गत उस भूमि को सम्मिलित किया जाता है जो कृषि कार्यो के लिए पूर्णतया उपयुक्त है परन्तु किन्हीं कारणों से चाहे कृषक अपनी निर्धनता के कारण अथवा कृषि कार्यो के लिए पर्याप्त सुविधाओं के अभाव के कारण जैसे सिंचन सुविधाओं का अभाव अथवा विषम जलवायु अथवा अन्य किसी कारण से बिना कृषि कार्य किए उपयुक्त छोड़ देता है। इस प्रकार की भूमि को कृषि कार्य सीमा के अर्न्तगत लाया जाना चाहिए । परती भूमि का विकास खाण्डवार विवरण अग्रांकित तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका क्रमांक 2.4 विकास खण्ड वार वर्तमान परती तथा अन्य परती भूमि का चित्र प्रस्तुत कर रही है। जनपद की कुल कृषि योग्य भूमि में 33255 हेक्टेयर भूमि बिना किसी प्रकार का कृषि कार्य सम्पन्न किए अनुपयोगी पड़ी है, यह कुल कृषित भूमि का 9 प्रतिशत से भी अधिक हिस्सा है। कुल परती भूमि में से 15795 हेक्टेयर भूमि वर्तमान में परती पड़ी है तथा 17460 हेक्टेयर अन्य परती भूमि के अन्तर्गत है। विकास खण्डवार यदि हम देखें तो सर्वाधिक परती भूमि चकरनगर विकास खण्ड के अन्तर्गत आता है जो 9.23 प्रतिशत है इसके उपरान्त बढ़पुरा, विकास खण्ड का स्थान आता है जिसका भाग 9.17 प्रतिशत है। 8 से 9 प्रतिशत के मध्य परती भूमि छोडने वाले विकास खण्डों में ताखा, विधूना, तथा भाग्यनगर, विकास खण्ड आते हैं। 7 से 8 प्रतिशत तक परती भूमि वाले विकासखण्डों में बसरेहर, अछल्दा, तथा औरैया विकासखण्ड आते हैं । 5 से 7 प्रतिशत तक परती भूमि वाले जसवन्तनगर, महेवा, एरवाकटरा, तथा सहार विकासखण्ड आते हैं। न्यूनतम परती भूमि वाला विकासखण्ड अजीतमल है।

तालिका क्रमांक 2.4

वर्तमान एवं अन्य परती भूमि का विकासखण्ड वार वितरण 1990-91 (हेक्टेयर में)

विकासखण्ड का नाम	वर्तमान पतती भूमि	परती भूमि प्रति शत	अन्य परती भूमि	प्रतिशत	कुल परती भूमि	प्रतिशत
1. जसवंतनगर	1140	7.22	1164	6.67	2304	6.93
2. बढ़पुरा	1706	10.80	1344	7.70	3050	9.17
3. बसरेहर	1097	6.97	1534	8.78	2631	7.91
4. भरथना	814	5.15	1299	7.44	2113	6.35
5. ताखा	1166	7.38	1775	10.17	2941	8.84
6. महेवा	878	5.56	981	5.62	1859	5.59
7. चकरनगर	1141	7.22	1928	11.04	3069	9.23
8. अछल्दा	948	6.00	1430	8.19	2378	7.15
9. विधूना	1427	9.03	1507	8.63	2934	8.82
10. एरवाकटरा	906	5.74	845	4.84	1751	5.27
11. सहार	781	4.94	921	5.27	1702	5.12
12. औरैया	1326	8.40	1165	6.67	2491	7.49
13. अजीतमल	720	4.56	334	1.91	1054	3.17
14. भाग्यनगर	1680	10.64	1073	6.15	2753	8.28
15. ग्रामीण योग	15730	99.59	17300	99.08	33030	99.32
16. योग नगरीय	65	0.41	160	0.92	225	0.68
17. योग जनपद	15795	100.00	17460	100.00	33255	100.00

इसी प्रकार वर्तमान परती भूमि में सर्वाधिक हिस्सा बढ़पुरा विकास खण्ड का है इसी से कमोवेश स्थिति में भाग्य नगर ब्लाक है, परन्तु अन्य परती भूमि में प्रथम स्थान पर चकरनगर ब्लाक है, यह दोनों विकास खण्ड यमुना तथा चम्बल के मध्य पड़ने वाली ऊबड़-खाबड़ भूमि पर स्थित है। परन्तु अजीतमल विकास खण्ड दोनों ही प्रकार की परती भूमि में न्यूनतम हिस्सा प्राप्त किए हुए हैं। अन्य विकास खण्डों की स्थिति न्यूनाधिक इन दोनों विकास खण्डों के मध्य में स्थित है।

4. कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लाई गई भूमि -

देश का कुल क्षेत्रफल उस सीमा को निर्धारित करता है जहां तक विकास प्रक्रिया के दौरान उत्पत्ति के साधन के रूप में भूमि का समतल विस्तार सम्भव होता है। जैसे - जैसे विकास प्रक्रिया आगे बढ़ती है और नये मोड़ लेती है, समतल भूमि की मांग बढ़ती है । नये कार्यो एवं नये उद्योगों के लिए भूमि की आवश्यकता होती है व परम्परागत उपयोगों में अधिक मात्रा में भूमि की मांग की जाती है। सामान्यतः इन नये उपयोगों अथवा परम्परागत उपयोगों में बढ़ती हुई भूमि की मांग की आपूर्ति के लिए कृषि के अन्तर्गत भूमि को काटना पड़ता है और इस प्रकार भूमि कृषि उपयोग से गैर कृषि कार्यो में प्रयुक्त होने लगती है। एक विकासशील अर्थव्यवस्था के लिए जिसकी मुख्य विशेषताओं में श्रम अतिरेक व कृषि उत्पादों के अभाव की स्थिति का बना रहना हो, कृषि उपयोग से गैर कृषि उपयोगों में भूमि का चला जाना गम्भीर समस्या का रूप धारण कर सकता है। जहां इस प्रक्रिया से एक ओर सामान्य कृषक के निर्वाह स्रोत का विनाश होता है, दूसरी ओर समग्र अर्थव्यवस्था की दृष्टि से कृषि पदार्थो की मांग व पूर्ति में गम्भीर असन्तुलन उत्पन्न हो सकते हैं। इसीलिए यह आवश्यक समझा जाता है कि विकास प्रक्रिया के दौरान जैसे जैसे समतल भूमि की मांग बढ़ती है उसी के साथ ही बंजर परती तथा बेकार पड़ी भूमि को कृषि अथवा गैर कृषि कार्यो के योग्य बनाने के लिए प्रयास करना चाहिए । विकास की प्रक्रिया जितनी तीव्र होती है, गैर कृषि प्रयोग में प्रयुक्त भूमि की अधिकाधिक मांग बढ़ती जाती है, भूमि का एक बड़ा हिस्सा इस उददेश्य की पूर्ति हेतु प्रयुक्त होता है। जनपद में इस उददेश्य की पूर्ति हेतु प्रयुक्त भूमि का विवरण अग्रांकित तालिका में दर्शाया गया है -

तालिका क्रमांक 2.5

कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लाई गई भूमि का विकासखण्डवार वितरण 1990-91 (हेक्टेयर में)

क्र0स0	विकासखण्ड	भूमि का वितरण (हेक्टेयर में)	प्रतिशत
1.	जसवन्त नगर	2567	7.46
2.	बढ़पुरा	2978	8.65
3.	बसरेहर	2537	7.37
4.	भरथना	1914	5.56
5.	ताखा	1625	4.72
6.	महेवा	3028	8.80
7.	चकरनगर	3463	10.06
8.	अछल्दा	2038	5.92
9.	विधूना	1943	5.64
10.	एरवाकटरा	1324	3.85
11.	सहार	1872	5.44
12.	औरैया	3608	10.48
13.	अजीतमल	2045	5.94
14.	भाग्य नगर	2429	7.06
15.	ग्रामीण योग	33371	96.94
16.	योग नगरीय	1054	3.06
17.	योग जनपद	34425	100.00

स्रोत - सांख्यिकी पत्रिका जनपद इटावा - 1992

तालिका क्रमांक 2.5 विकास खण्डवार कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लाई गई भूमि का विवरण प्रस्तुत कर रही है। जनपद में उक्त मद के अन्तर्गत 33371 हेक्टेयर भूमि ग्रामीण क्षेत्रों में प्रयुक्त हो रही है जब कि 1054 हेक्टेयर नगरीय भूमि प्रयोग में लाई जा रही है, जहां तक विकास खण्डों का प्रश्न है तो इस शीर्षक के अन्तर्गत भूमि उपयोग में सर्वप्रथम औरैया विकास खण्ड आता है, जहां पर 10.48 प्रतिशत हिस्सेदारी करते हुए कुल 3608 हेक्टेयर भूमि का उपयोग भवनों, सड़कों, नहरों, तथा नदियों के निर्माण में हो रहा है, इसके उपरान्त चकर नगर विकास खण्ड का स्थान आता है, जहां पर कुल 3463 हेक्टेयर भूमि का इस मद में प्रयोग करते हुए जनपद में 10.06 प्रतिशत भागेदारी हो रही है। इस मद में न्यूनतम भागेदारी एरवाकटरा विकासखण्ड की है जहां पर केवल 1324 हेक्टेयर भूमि का उपयोग करते हुए जनपद में मात्र 3.85 प्रतिशत भाग की हिस्सेदारी कर रहा है। शेष विकास खण्ड 5 प्रतिशत से 9 प्रतिशत के मध्य अपनी भागेदारी प्रदर्शित कर रहे हैं केवल ताखा विकासखण्ड को छोड़कर ताखा विकास खण्ड एरवाकटरा विकास खण्ड का अनुसरण करते हुए 4.72 प्रतिशत हिस्सा प्रदर्शित कर रहा है।

5. ऊसर और कृषि अयोग्य भूमि -

इस श्रेणी में वे भूमियां सम्मिलित हैं जो वर्तमान में कृषि योग्य नहीं है। यह भूमियां अत्यधिक लागत के बिना कृषि योग्य नहीं बनाई जा सकती हैं। यह देखा गया है कि जनपद में इस प्रकार की भूमि शुद्ध कृषित क्षेत्र का एक बड़ा हिस्सा है। यद्यपि सरकार ऊसर सुधार योजना के अन्तर्गत ऐसी भूमियों को कृषि योग्य बनाने का प्रयास कर रही है परन्तु इसके उपरान्त भी कुल भूमि का एक बड़ा हिस्सा अभी भी कृषि योग्य नहीं बनाया जा सका है। यदि इस महत्वपूर्ण भूमि को कृषि योग्य बनाया जा सके तो शुद्ध कृषित क्षेत्र में वृद्धि की जा सकती है। यदि सार्थक प्रयास किए जाये तो इस भूमि पर फलोत्पादन के लिए वृक्षारोपण अथवा पशुओं के लिए चारागाह आदि सम्भव है। जनपद में ऊसर तथा कृषि अयोग्य भूमि का वितरण अग्रांकित तालिका में दर्शाया गया है ।

तालिका क्रमांक 2.6

विकासखण्ड वार ऊसर और कृषि अयोग्य भूमि का वितरण वर्ष 1990-91 (हेक्टेयर में)

क्र0स0	विकासखण्ड	ऊसर और कृषि अयेग्य भूमि	प्रतिशत	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कु0 प्र0 क्षेत्र का प्रतिशत
1.	जसवन्तनगर	2201	9.16	36609	6.01
2.	बढ़पुरा	2628	10.94	34513	7.61
3.	बसरेहर	1835	7.64	38144	4.81
4.	भरथना	1374	5.72	27235	5.04
5.	ताखा	1769	7.36	27496	6.43
6.	महेवा	1078	4.49	32786	3.29
7.	चकरनगर	2985	12.42	37726	7.91
8.	अछल्दा	1587	6.61	28144	5.64
9.	विधूना	2170	9.03	31497	6.89
10.	एरवाकटरा	897	3.73	22407	4.00
11.	सहार	1824	7.59	28089	6.49
12.	औरैया	1565	6.51	39938	3.92
13.	अजीतमल	656	2.73	22187	2.96
14.	भाग्यनगर	1266	5.27	28004	4.52
15.	ग्रामीणयोग	23835	99.20	434791	5.48
16.	योग नगरीय	192	.80	1936	9.92
17.	योग जनपद	24027	100.00	436727	5.50

स्रोत - साख्यिंकी पत्रिका जनपद इटावा - 1992

सारणीक्रमांक 2.6 विकास खण्डवार ऊसर एवं अयोग्य कृषि भूमि का चित्रण कर रही है। जनपद में कुल प्रतिवेदित क्षेत्र की 24027 हेक्टेयर भूमि कृषि अयोग्य एवं ऊसर है जिस पर न तो वृक्षारोपण सम्भव है और न ही फसलोत्पादन किया जा सकता है। एक दृष्टि से देखा जाय तो यह भूमि शुद्ध व्यर्थ पड़ी हुई है, अर्थात् 5.50 प्रतिशत भूमि किसी भी प्रयोग में नहीं लाई जा रही है। विकास खण्डवार यदि देखें तो जनपद में सर्वाधिक हिस्सेदारी चकरनगर विकास खण्ड की है जिसमें इस शीर्षक के अन्तर्गत 2985 हेक्टेयर अथवा 12.42 प्रतिशत हिस्सा आता है, कुल प्रतिवेदित क्षेत्र से भी तुलना करें तो इसी विकासखण्ड की स्थिति है जो अपने कुल प्रतिवेदित क्षेत्र का 7.91 प्रतिशत हिस्सा ऊसर तथा कृषि अयोग्य भूमि के अन्तर्गत आता है। जनपद में इस शीर्षक अन्तर्गत न्यूनतम हिस्सेदारी अजीतमल विकासखण्ड की आती है, तो मात्र 656 हेक्टेयर अथवा 2.73 प्रतिशत भूमि ऊसर के रूप में दर्शा रहा है अपने कुल प्रतिवेदित क्षेत्र में भी इसी विकास खण्ड का भाग 2.96 प्रतिशत दृष्टिगोचर हो रहा है, स्पष्ट है कि अजीतमल विकास खण्ड न्यूनतम भूमि इस मद में व्यर्थ छोड़े हुए हैं। शेष विकास खण्ड इन दोनों विकास खण्डों के मध्य में स्थित है। बढ़पुरा विकास खण्ड 10.94 प्रतिशत, विधूना 9.03 प्रतिशत, जसवन्तनगर 9.16 प्रतिशत हिस्सेदारी कर रहे हैं। 7 प्रतिशत से अधिक हिस्सेदारी रखने वाले विकास खण्डों में बसरेहर, ताखा, तथा सहार आते हैं। 5 से 7 प्रतिशत के मध्य भरथना, अछल्दा, औरैया तथा भाग्य नगर विकास खण्ड भागेदारी कर रहे हैं। शेष विकास खण्डों की भागेदारी 3 से 5 प्रतिशत के मध्य है।

6. शुद्ध बोया गया क्षेत्र -

वास्तव में शुद्ध बोया गया क्षेत्र ही किसी क्षेत्र विशेष की जनसंख्या की खाद्यान्न आपूर्ति का एक साधन बनता है। एक विकासशील अर्थव्यवस्था के लिए जिसकी मुख्य विशेषताएं, जनाधिक्य, एवं श्रम अतिरेक व कृषि उत्पादों के अभाव की स्थिति में बना रहता हो, वहां पर खाद्यान्न उत्पादन के लिए तथा बढ़ती जनसंख्या के कारण श्रम अतिरेक को अतिरिक्त रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने हेतु कृषि भूमि की अधिकाधिक आवश्यकता होती है क्यों कि समग्र अर्थव्यवस्था की दृष्टि से पर्याप्त खाद्यान्न की आपूर्ति न हो पाने की स्थिति में कृषि पदार्थो की मांग और पूर्ति में गम्भीर असन्तुलन उत्पन्न हो सकते हैं। कृषि पदार्थो की आपूर्ति में कमी अर्थव्यवस्था में अनेक अन्य समस्याओं को जन्म दे सकती है, इसीलिए यह आवश्यक समझा जाता है कि विकास प्रक्रिया के मध्य जैसे - जैसे कृषि भूमि की मांग बढ़ती है उसी के

साथ बंजर भूमि परती तथा बेकार भूमि को कृषि योग्य बनाने के प्रयास करने चाहिए। कोशिश यह करनी चाहिए कि खेती वाड़ी के लिए उपलब्ध भूमि के क्षेत्र में किसी प्रकार की कमी न आये बल्कि कृषि भूमि में वृद्धि ही होनी चाहिए ।

खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि दो बातों पर निर्भर करती है (अ) खेती के अन्तर्गत क्षेत्र में वृद्धि करके तथा (ब) प्रति एकड़ उपज में वृद्धि करके । निंस्सदेह अधिक विस्तृत खेती की सम्भावनाएं बहुत सीमित हैं, किन्तु फिर भी ऊसर एवं बजंर भूमि पर सुधार कार्यक्रम अमल में लाकर इन्हें कृषि योग्य बनाने के प्रयास निंरतर किए जाने चाहिए। बेशक इस काम के लिए हमें बड़ी धनराशि खर्च करनी होगी। इसी तरह जलग्रस्त खारीय एवं लवणीय भूमि को भी कृषि योग्य बनाना सम्भव हो सकता है। इन उपायों में हम यह बतलाना चाहेगें कि सिंचाई, गहरी जोताई, अपतृण का हटाया जाना, रसायनों का सुधार के लिए उपयोग, सम्प्रावहन, भूतल का कतरना, जलग्रस्तता रोकने के लिए उपयुक्त नालियों का बिछाया जाना आदि।

यह सच है कि विस्तृत खेती की क्षमता सीमित है परन्तु गहन खेती की अपार सम्भावनाएं है जिनका उपयोग किया जाना चाहिए । कृषि की विकसित तकनीक का मूलबिन्दु है फसलों की गहनता में विस्तार । अब तक एक से अधिक बार जोती गई भूमि के अन्तर्गत क्षेत्रों में अपेक्षित गति से वृद्धि नहीं हुई है, यह विचारणीय है। सम्भवतः इस प्रवृत्ति के दो कारण हैं - (अ) उन्नत कृषि आदानों के पैकेज' पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हुए हैं तथा (आ) जब कभी ये पैकेज उपलब्ध भी हुए हैं तो इनकी कीमतें बहुत ऊँची रही हैं। इसलिए हमारे प्रयास यह होने चाहिए कि उन्नत आदानों को सस्ती दरों पर पर्याप्त मात्रा में किसानों को उपलब्ध करवाया जाये । भूमि की उर्वरता एवं उत्पादकता बनाए रखने के लिए हमें निरंतर प्रयास करने होगें, इस वास्ते हमें अनेक कदम उठाने होगें जैसे भू परीक्षण, ठीक तरह भूमि को जोतना, भूमि के नष्ट हो गये तत्वों को बदलना, पर्याप्त मात्रा में उर्वरक प्रदान करना आदि । इसी प्रकार कृषि की विकसित रीतियों को भी अपनाना होगा जैसे फसलों का अवार्तन और मिश्रित फसलें आदि । फसलों के प्रतिरूप में वांच्छित परिवर्तन द्वारा भूमि की उत्पादकता में सुधार लाया जा सकता है।

जनपद में भूमि उपयोग आकडों से यह विदित होता है कि अन्य प्रयोगों की तुलना में सर्वाधिक

सारिणी क्रमांक 2.7 विकास खण्डवार शुद्ध यबोया गया क्षेत्र, एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र कुल कृषि क्षेत्र तथा फसल गहनता वर्ष 1990-91 (हेक्टेयर में)

क्र0सं0 विकास खण्ड का नाम	शुद्ध बोया गया क्षेत्र		एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र		कुल कृषि क्षेत्र		फसल गहनता
	(हेक्टेयर में)	प्रतिशत	(हेक्टेयर में)	प्रतिशत	(हेक्टेयर में)	प्रतिशत	
1. जसवन्त नगर	27,060	9.34	14,803	10.91	41,863	9.84	154.70
2. बढ़पुरा	16.788	5.80	4.580	3.38	21,368	5.02	127.25
3. वसरेहर	27,855	9.62	18.066	13.32	45,921	10.80	164.86
4. भरथना	18,993	6.56	10,286	7.58	29.279	6.88	154.16
5. ताखा	17,862	6.17	10.293	7.59	28,155	6.62	157.63
6. महेवा	23.400	8.08	13,111	9.67	36,511	8.58	156.03
7. चकरनगर	15,978	5.51	983	0.72	16,961	3.99	106.15
8. अछल्दा	19,429	6.70	9,128	6.73	28,557	6.71	146.98
9. विधूना	20.018	6.91	10,912	8.04	30,930	7.27	154.51
10. एरवाकटरा	15,885	5.48	8,616	6.35	24,504	5.76	154.26
11. सहार	20,267	6.99	10.067	7.42	30,334	7.13	149.67
12. औरैया	29,347	10.13	8.905	6.57	38,252	8.99	130.34
13. अजीतमल	16,766	5.79	8,068	5.95	24,834	5.84	148.12
14. भाग्यलगर	19,702	6.80	7,639	5.63	27,341	6.43	138.77
15. ग्रामीण योग	2,89,350	99.88	1,35,460	99.86	4,24,810	99.88	146.82
16. योग नगरीय	341	0.12	186	0.14	527	0.12	154.55
17. योग जनपद	2.89.691	100.00	1,35,646	100.00	4,25,337	100.00	146.82

स्रोत सांख्यिकीय पत्रिका जनपद इटावा 1992

भूमि क्षेत्र कृषित भूमि के रूप में है। कुल प्रतिवेदित क्षेत्र का 66 प्रतिशत से भी अधिक भाग शुद्ध कृषित क्षेत्र का होना अनुकूल भौगोलिक अवस्था का द्योतक है, इस सन्दर्भ में जनपद की स्थिति अत्यन्त अनुकूल है, जब कि प्रदेश की 60 प्रतिशत से भी कम भूमि शुद्ध कृषि क्षेत्र के अन्तर्गत आती है। जनपद में विकास खण्डवार कृषि भूमि से सम्बन्धित सूचना अग्रांकित तालिका में दर्शायी गई है।

सारणी क्रमांक 2.7 जनपद में विकासखण्डवार कृषि क्षेत्र का विवरण प्रस्तुत कर रही है। शुद्ध कृषि क्षेत्र पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि जनपद में शुद्ध कृषि क्षेत्र 289691 हेक्टेयर उपलब्ध है जिसमें विभिन्न प्रकार का फसलोत्पादन किया जा रहा है। विकास खण्डवार भागेदारी में प्रथम स्थान औरैया विकास खण्ड का है, जहां 10.13 प्रतिशत भागेदारी करके कुल 29347 हेक्टेयर में फसलोत्पादन किया जा रहा है, दूसरा स्थान बसरेहर विकासखण्ड का है, जहां पर 27855 हेक्टैयर भूमि पर कृषि कार्य करके जनपद में 9.62 प्रतिशत भागेदारी कर रहा है। इसी के न्यूनाधिक स्थिति में जसवन्तनगर विकास खण्ड अपने को पा रहा है जहा पर 27060 हेक्टेयर भूमि पर विभिन्न फसलें उगाई जा रही है जनपद में 9.34 प्रतिशत शुद्ध कृषि क्षेत्र रखकर यह विकास खण्ड तीसरे स्थान पर स्थित है। चौथा स्थान महेवा विकास खण्ड प्राप्त कर रहा है जहां शुद्ध कृषि क्षेत्र 23400 हेक्टेयर है तथा 8.08 प्रतिशत भागेदारी निर्वाह कर रहा है। 6 प्रतिशत से 7 प्रतिशत के मध्य कुल छः विकास खण्ड भरथना, ताखा, अछल्दा, विधूना, सहार तथा भाग्यनगर स्थित है जिसके पास क्रमशः 18993 हेक्टेयर, 17862 हेक्टेयर, 19429 हेक्टेयर, 20018 हेक्टेयर, 20267 हेक्टेयर तथा 19702 हेक्टेयर शुद्ध कृषि क्षेत्र विभिन्न फसलों को उगाने हेतु उपलब्ध हैं। शेष विकास खण्ड 5 से 6 प्रतिशत के मध्य भागेदारी कर रहे हैं।

जहां तक एक से अधिकबार बोये गये क्षेत्र का प्रश्न है तो इस दृष्टि से प्रथम स्थान पर बसरेहर, विकास खण्ड है जहां पर 18066 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर वर्ष में एक से अधिक वार फसलें उगाई जाती है और जनपद में इस विकास खण्ड की भागेदारी 13.32 प्रतिशत है। दूसरा स्थान जसवन्त नगर विकास खण्ड का आता है जहा पर 14803 हेक्टेयर कृषि भूमि पर एक से अधिक बार बुआई करके कृषि उत्पादन प्राप्त किया जाता है। चकरनगर विकास खण्ड इस दृष्टि से सर्वाधिक पिछड़ा कहा जायेगा

क्यों कि यहां पर केवल 983 हेक्टेयर क्षेत्र पर ही एक से अधिक फसलें प्राप्त की जाती हैं इसकी भागेदारी भी जनपद में न्यूनतम 0.72 प्रतिशत ही है । इसी से मिलता जुलता कृषि स्तर बढ़पुरा विकासखण्ड का है जहां पर 4580 हेक्टेयर कृषि भूमि पर एक से अधिक बार कृषि उत्पादन प्राप्त किया जाता है। इन दोनों विकास खण्डों के पिछडेपन का कारण इनका यमुना तथा चम्बल नदियों के मध्य में स्थित होना है जिसके कारण एक तो भूमि अत्यन्त ऊबड़-खाबड़ है दूसरे सिंचन सुविधाओं का नितान्त अभाव है। सिंचन सुविधाओं का होना गहन कृषि की पहली शर्त है क्यों कि सिंचाई के अभाव में गहरी खेती सम्भव नहीं हो सकती है, और यही कारण है कि इन दोनों विकास खण्डों में अधिकांश कृषि भूमि पर वर्ष में केवल एक ही फसल प्राप्त की जा सकती है। शेष अन्य विकास खण्ड 5 प्रतिशत से 8 प्रतिशत के मध्य भागेदारी कर रहे हैं, केवल महेवा विकास खण्ड को छोडकर । यह विकास खण्ड जनपद के 9.67 प्रतिशत हिस्सेदारी कर के तीसरे स्थान पर स्थित है।

फसल गहनता कृषि उत्पादन बढाने में अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। फसल गहनता से आशय उस फसल क्षेत्र से होता है जिस पर वर्ष में एक फसल के अतिरिक्त अन्य कई फसलें उगाई जाती है। इस दृष्टि से देखा जाये तो जनपद में सर्वाधिक फसल गहनता 164.86 प्रतिशत बसरेहर विकास खण्ड की है जहां पर 64.86 प्रतिशत भूमि पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती है। न्यूनतम 106.15 प्रतिशत फसल गहनता चकरनगर विकास खण्ड की है, जिसका अर्थ है कि इस विकास खण्ड की अधिकांश कृषि भूमि पर वर्ष में केवल एक ही फसल का उत्पादन सम्भव हो रहा है कृषि की अत्यन्त दयनीय स्थिति है। बढ़पुरा विकासखण्ड की ऊबड़-खाबड़ कृषि भूमि रखते हुए भी अपनी फसल गहनता 127.25 प्रतिशत रखे हुए हैं आश्चर्यजनक दृश्य तो विकासखण्ड औरैया प्रस्तुत कर रहा है जहां भूमि समतल है तथा सिंचाई की पर्याप्त सुविधाएं है यातायात की दृष्टि से भी जनपद में अगली श्रेणी में आता है, फिर भी फसल गहनता में कमोवेश बढ़पुरा, विकासखण्ड के समान ही है, इस विकासखण्ड की फसल गहनता 130.34 प्रतिशत है। अन्य विकास खण्ड कमोवेश एक समान ही है। 150 प्रतिशत या इस से अधिक फसल गहनता वाले विकास खण्ड जसवन्तनगर, भरथना, ताखा, महेवा, विधूना, एरवाकटरा तथा सहार है। भाग्यनगर विकासखण्ड की फसल गहनता 138.77 प्रतिशत अछल्दा की फसल गहनता 146.98 प्रतिशत तथा अजीतमल विकास खण्ड की 148.12 प्रतिशत है ।

उपलब्ध कुल भूमि को उसके विभिन्न उपयोगों के आधार पर दो भागों में बांटा जा सकता है (अ) कृषि भूमि तथा (आ) गैर कृषि भूमि । कृषि भूमि के अन्तर्गत हम शुद्ध जोते गये क्षेत्र, वर्तमान परती क्षेत्र तथा वृक्षों - उपवन के अन्तर्गत क्षेत्र शमिल करते हैं। जनपद का कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 436727 हेक्टेयर है जिसमें से कुल शुद्ध बोया गया क्षेत्र 289691 हेक्टेयर है जो कुल प्रतिवेदित क्षेत्र का 66.33 प्रतिशत से अधिक भाग फसलोत्पादन के अन्तर्गत आता है । अग्रांकित तालिका में विकासखण्ड वार जनपद की स्थिति को दर्शाया गया है।

सारणी क्रमांक 2.8 विकास खण्डवार कुल प्रतिवेदित क्षेत्र तथा शुद्ध बोये गये क्षेत्र का तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत कर रही है। सारणी से ज्ञात होता है कि जनपद की कृषि भूमि की उपलब्धता का अनुपात काफी ऊँचा है किन्तु यदि बढ़ती हुई जनसंख्या के संदर्भ में देखा जाय तो हम पाते हैं कि उपलब्ध प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि केवल 0.16 हेक्टेयर ही है जबकि जनपद में कुल प्रतिवेदित क्षेत्र में शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल 66.33 प्रतिशत है। विकास खण्डवार शुद्ध बोये गये क्षेत्र के वितरण को यदि देखा जाये तो अजीतमल विकास खण्ड 75.57 प्रतिशत शुद्ध कृषि योग्य भूमि रखकर प्रथम स्थान पर आता है। जब कि चकरनगर विकास खण्ड मात्र 42.35 प्रतिशत शुद्ध बोया गया क्षेत्र रखकर जनपद में न्यूनतम स्थान पर देखा जा रहा है। प्रदेश के शुद्ध बोये गये क्षेत्र से यदि तुलना की जाय तो जहा प्रदेश का शुद्ध बोया गया क्षेत्र 58.44 प्रतिशत है, इस स्तर से ऊपर शुद्ध कृषि भूमि वाले विकास खण्ड केवल दो विकास खण्डों को छोड़कर समस्त विकास खण्ड ऊँचे स्तर को दर्शा रहे हैं इन दो विकास खण्डों में चकर नगर तथा बढ़पुरा विकास खण्ड हैं जो क्रमशः 42.35 प्रतिशत तथा 48.64 प्रतिशत शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल को दर्शा रहे हैं। जिन विकास खण्डों में 70 प्रतिशत से अधिक शुद्ध बोया गया क्षेत्र उपलब्ध हैं उनमें क्रमशः अजीतमल 75.57 प्रतिशत, जसवन्त नगर 73.92 प्रतिशत औरैया 73.48 प्रतिशत, बसरेहर 73.02 प्रतिशत, सहार 72.15 प्रतिशत, महेवा 71.37 प्रतिशत, एरवाकटरा 70.89 प्रतिशत तथा भाग्यनगर 70.35 प्रतिशत है । इस प्रकार कुल प्रतिवेदित क्षेत्र से शुद्ध बोया जाने वाला क्षेत्र का प्रादेशिक स्तर 58.44 प्रतिशत है इस स्तर से ऊँचे स्तर को बनाए रखने वाले कुल चौदह विकास खण्डों में 12 विकास खण्ड आते हैं। शेष दो विकास खण्ड चकरनगर तथा बढपुरा प्रादेशिक स्तर से निचले स्तर का प्रदर्शन कर रहे हैं ।

तालिका 2.8

विकास खण्डवार शुद्ध बोया गया क्षेत्र 1990-91 (हेक्टेयर में)

क्र0स0	विकासखण्ड	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	कुल बोये गये का प्रतिवेदित क्षेत्र से प्रतिशत
1.	जसवंतनगर	36609	27060	73.92
2.	बढ़पुरा	34513	16788	48.64
3.	बसरेहर	38144	27855	73.02
4.	भरथना	27235	18993	69.74
5.	ताखा	27496	17862	64.96
6.	महेवा	32786	23400	71.37
7.	चकरनगर	37726	15978	42.35
8.	अछल्दा	28144	19429	69.03
9.	विधूना	31497	20018	63.56
10.	एरवाकटरा	22407	15885	70.89
11.	सहार	28089	20267	72.15
12.	औरैया	39938	29347	73.48
13.	अजीतमल	22187	16766	75.57
14.	भाग्यनगर	28004	19702	70.35
15.	ग्रामीण योग	434791	289350	66.55
16.	योग नगरीय	1936	341	17.61
17.	योग जनपद	436727	289691	66.33

स्रोत - सांख्यिकी पत्रिका जनपद इटावा - 1992

सारिणी क्रमांक 2.9 विकास खण्ड स्तर पर कुल प्रतिवेदित क्षेत्र से प्रतिशत में भूमि उपयोग का समग्र वितरण
(प्रतिशत में)

विकास खण्ड	वन	कृषि योग्य बंजर भूमि	वर्तमान परती	अन्य परती	ऊसर और कृषि अयोग्य	कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लाई गई	चारागाह	उद्यानों तथा बृक्षों के प्रयोग में	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	योग
1. जसवन्त नगर	4.18	2.03	3.11	3.18	6.01	7.01	0.27	0.29	73.92	100.00
2. बढ़पुरा	23.63	2.18	4.94	3.89	7.61	8.63	0.17	0.31	48.64	100.00
3. वसरेहर	6.04	1.99	2.88	4.02	4.81	6.65	0.46	0.12	73.03	100.00
4. भरथना	5.61	4.14	2.99	4.77	5.04	7.03	0.40	0.28	69.64	100.00
5. ताखा	6.37	4.39	4.24	6.45	6.43	5.91	0.86	0.28	64.96	100.00
6. महेवा	7.46	2.25	2.68	2.99	3.29	9.24	0.02	0.70	71.37	100.00
7. चकरनगर	31.47	0.94	3.02	5.11	7.91	9.18	–	0.01	42.35	100.00
8. अछल्दा	4.39	3.76	3.37	5.08	5.64	7.24	1.20	0.29	69.03	100.00
9. विधूना	8.28	4.59	4.53	4.78	6.89	6.17	0.90	0.30	63.56	100.00
10. एरवाकटरा	6.85	3.18	4.04	3.77	4.00	5.91	1.10	0.25	70.89	100.00
11. सहार	2.64	4.97	2.78	3.28	6.49	6.66	1.57	0.46	72.15	100.00
12. औरैया	6.25	0.61	3.32	2.92	3.92	9.03	0.15	0.32	73.48	100.00
13. अजीतमल	6.28	0.50	3.24	1.50	2.96	9.22	0.05	0.68	75.57	100.00
14. भाग्यनगर	2.36	2.32	6.00	3.83	4.52	8.67	1.56	0.38	70.35	100.00
समग्र	9.24	2.59	3.62	4.00	5.50	7.88	0.51	0.33	66.33	100.00

तालिका 2.9 से स्पष्ट है कि जनपद में 10 प्रतिशत से अधिक भूमि कृषि योग्य बेकार पड़ी है जिसमें 2.59 प्रतिशत कृषि योग्य बंजर भूमि के अन्तर्गत 3.62 प्रतिशत वर्तमान परती तथा 4.00 प्रतिशत अन्य परती भूमि के अन्तर्गत हैं। इस व्यर्थ पड़ी भूमि को उपयोग में लाया जाये तो लगभग 10 प्रतिशत भूमि कृषि क्षेत्र के अन्तर्गत लाई जा सकती है। इसी प्रकार यदि वनों के क्षेत्रफल की दृष्टि से देखा जाये तो बढ़पुरा, तथा चकरनगर दो विकास खण्ड ही ऐसे हैं जो क्षेत्र में आवश्यक वन क्षेत्र से अधिक क्षेत्रफल को दर्शा रहे हैं अन्य विकास खण्ड 9.4 प्रतिशत से निचले स्तर का प्रदर्शन कर रहे हैं। जब कि क्षेत्र को प्रदूषण से बचाये रखने के लिए वनों का अपना एक विशिष्ट स्थान है इसी लिए 1952 में अपनाई गई राष्ट्रीय वन नीति के अन्तर्गत भारत के लिए देश की कुल भूमि का 33.3 प्रतिशत भाग जंगलों के रूप में रखने का निश्चय किया गया जिसमें पहाड़ी प्रदेशों में क्षेत्र का 60 प्रतिशत तथा मैदानी क्षेत्रों में 20 प्रतिशत भूमि पर वन रखने का निश्चय किया गया, इस मानक के आधार पर यदि देखा जाय तो अध्ययन क्षेत्र वन सम्पदा के औसत स्तर से बहुत दूर है।

अध्ययन क्षेत्र की भूमि उपयोग क्षमता -

भूमि संसाधन उपयोग के मूल्यांकन के लिए यह देखनां पड़ता है कि भूमि उपयोग किस चातुर्य या तत्परता से किया जा रहा है। उसकी कौन सी अवस्था है क्या भूमि उपयोग अपने अनुकूलतम रूप में है?

भूमि संसाधन उपयोग की मात्रा वास्तव में विभिन्न तत्वों के आपसी क्रियाकलापों या अन्र्तसम्बनधों पर आधारित होती है। किसी विशेष समय या स्थान पर इन तत्वों का संयोग यह निश्चय करता है कि भूमि संसाधन उपयोग की क्षमता क्या है? भूमि उपयोग क्षमता का प्रत्यय इस दृष्टिकोण से परिवर्तनशील है कि विभिन्न उत्पादक तत्व विभिन्न मात्रा तथा किस्म में प्रयुक्त होते हैं। अर्न्तनिहित भूमि संसाधन की विशेषताएं समयानुसार कम परिवर्तनशील है। सिंह ने हरियाणा राज्य की भूमि उपयोग क्षमता को निर्धारित किया है। इनके अनुसार भूमि उपयोग क्षमता से आशय कुल उपलब्ध भूमि में से बोई गई भूमि के प्रतिशत से है और भूमि उपयोग क्षमता तथा शस्य गहनता समान प्रत्यय है। इनका मत है कि भूमि उपयोग क्षमता निर्धारित करने का मुख्य उददेश्य दो या दो से अधिक फसल क्षेत्र की मात्रा की

ETAWAH DISTRICT
LAND USE EFFICIENCY
RANK
5 6 VERY HIGH
6 7 HIGH
7 8 MEDIUM
8 9 LOW
9 10 VERY LOW
0
20
KM
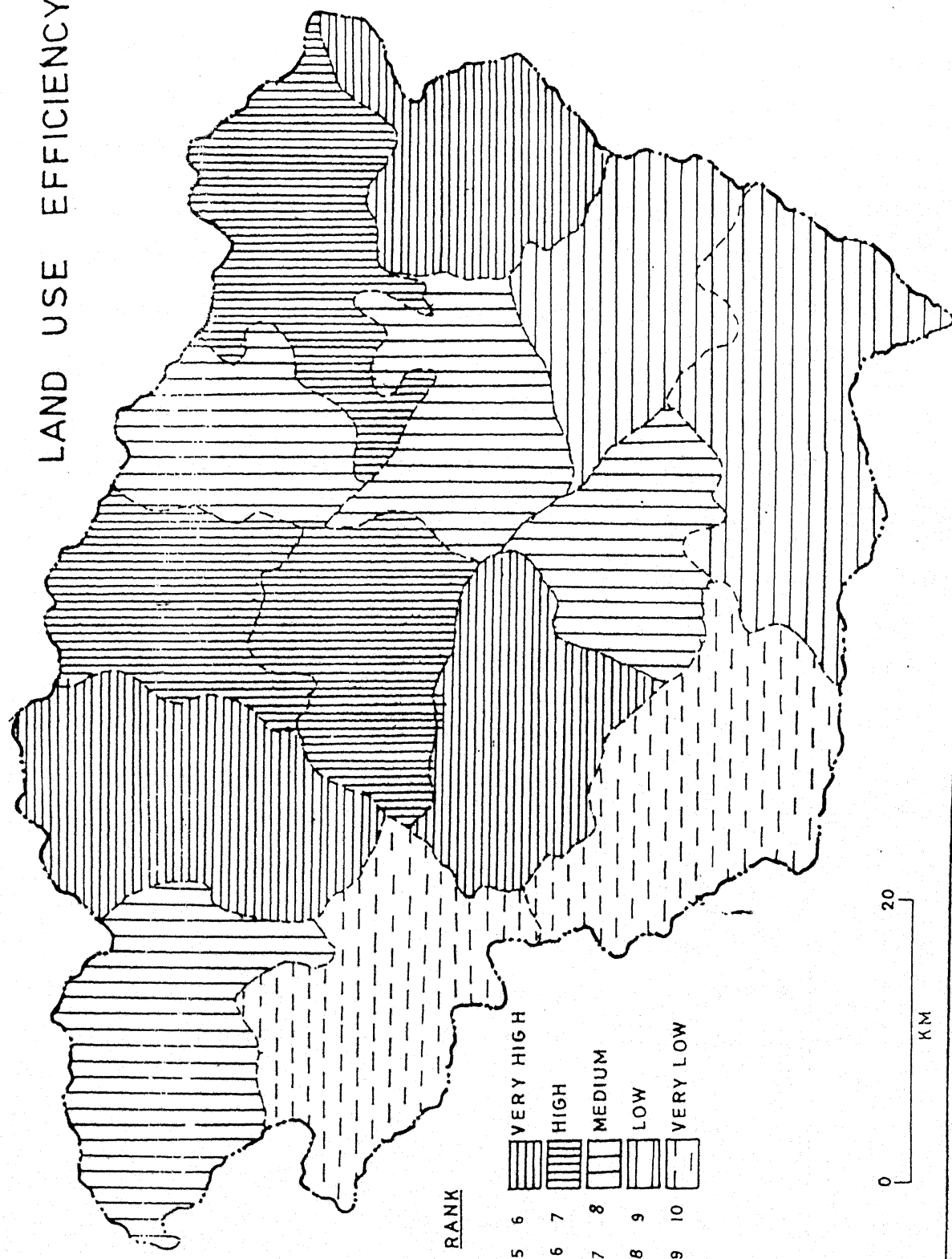
FIG. 19

जानकारी प्राप्त करना है। यदि बहुफसली क्षेत्र अधिक है तो शस्य गहनता या भूमि उपयोग क्षमता की अधिक होगी। सिंह बी0 बी0 का विचार है कि भूमि उपभोग क्षमता तथा शस्य गहनता दोनों अलग-अलग पहलू हैं। शस्य गहनता, भूमि उपयोग क्षमता का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। कृषि भूमि उपयोग क्षमता की परिभाषा का सम्बन्ध इस प्रभावोत्पादक क्रिया से हैं जहां पूंजी तथा श्रम के क्रमिक प्रयोग के आधार पर भूमि उत्पादन मात्रा में निरंतर वृद्धि होती जाती है। अतः सिंह ने भूमि उपयोग क्षमता का प्रत्यय कोटि गणना के आधार पर विकसित किया है। भूमि उपयोग में पांच तत्वों कृषि क्षेत्र, अकृष्य, कृष्य, सिंचित तथा बहुफसली क्षेत्र को कोटि गणना के लिए चुना गया है और इन तत्वों के आधार पर मेरठ जिला के बड़ौत विकास खण्ड में स्थित 54 ग्रामों में प्राप्त भूमि उपयोग क्षमता को पांच श्रेणियों में विभाजित किया है। शोधकर्ता सिंह बी0बी0 की इस विधि को उत्तम मानते हुए अध्ययन क्षेत्र की भूमि उपयोग क्षमता की गणना करने में कुल प्रतिवेदित भूमि में शुद्ध बोये गये क्षेत्र, अकृष्य क्षेत्र, कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लायी गई भूमि शुद्ध सिंचित क्षेत्र तथा बहुफसली क्षेत्र को चुनकर कोटि गणनाविधि का प्रयोग किया गया है जिसे सारणी 2.10 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका 2.10 अध्ययन क्षेत्र में विकासखण्ड स्तर पर भूमि उपयोग क्षमता

श्रेणी गुणांक	क्षमता	विकासखण्डों की संख्या	विकासखण्डों के नाम
5 से 6	उच्चतम	3	महेवा, बसरेहर, सहार
6 से 7	उच्च	3	ताखा, भरथना, विधूना
7 से 8	सामान्य	4	जसवन्तनगर अजीतमल एरवाकटरा अछल्दा
8 से 9	न्यून	2	भाग्य नगर, औरैया
9 से 10	न्यूनतम	2	चकरनगर, बढ़पुरा

सारणी क्रमांक 2.10 से स्पष्ट हो रहा है कि उच्चतम भूमि उपयोग क्षमता को प्रदर्शित करने वाले विकासखण्डों में तीन विकासखण्ड महेवा बसरेहर तथा सहार आते हैं। उच्च क्षमता प्रदर्शित करने वाले ताखा, भरथना तथा विधूना विकासखण्ड है। सामान्य भूमि उपयोग क्षमता प्रदर्शित करने वाले विकासखण्डों में जसवन्तनगर अजीतमल एरवाकटरा तथा अछल्दा है। इसी प्रकार न्यून क्षमता भाग्यनगर तथा औरैया और अतिन्यून भूमि उपयोग क्षमता का प्रदर्शन चकरनगर और बढ़पुरा विकासखण्ड है, जहां की उबड़खाबड़ भूमि के कारण भूमि उपयोग क्षमता कम है।

प्रकृति से पाते हैं, प्राकृतिक संसाधन कहलाते हैं। इसमें वनस्पति, पशुधन, वायु, मिटटी, ऊर्जा संसाधन खनिज पदार्थ, निर्माण सामग्री, ईधन आदि सम्मिलित हैं।

प्राकृतिक संसाधनों के कुछ विशिष्ट पहलू होते हैं। प्राकृतिक संसाधन समाज को निःशुल्क बिना किसी प्रयास के प्राप्त होते हैं। प्राकृतिक संसाधन, स्वतः निष्क्रिय होते हैं। वे अपनी उपस्थिति मात्र से मानव जीवन को सुविधा प्रदान करते हैं। और अस्तित्व का आधार प्रदान करते हैं। यदि इनका सुविचारित दोहन किया जाये तो इनकी उपादेयता अधिक हो जाती है। कुछ प्राकृतिक संसाधन गैर नवकरणीय प्रकृति के होते हैं अर्थात यदि उनका विदोहन कर लिया जाये तो इनकी मात्रा व भण्डार समाप्त हो जाते हैं यथा लोहा, कोयला, खनिज तेल आदि। कुछ प्राकृतिक संसाधन नवकरणीय प्रकृति के होते हैं। वे प्रयोग कर लेने पर भी समाप्त नहीं होते हैं। वे पुनः पूर्ववत विकसित हो जाते हैं यथा वन, भूमि जल इत्यादि । प्राकृतिक संसाधनों का वितरण सर्वत्र समान नहीं पाया जाता है, किसी स्थान पर एक प्रकार के खनिज पदार्थ पाये जाते हैं तो किसी अन्य स्थान पर दूसरे प्रकार के खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। कहीं संगमरमर के पत्थर हैं तो कहीं वन । कहीं भूमि उपजाऊ है तो कहीं रेगिस्तान और दलदल । कहीं बर्फ है तो कहीं अत्यधिक वर्षा । प्राकृतिक संसाधनों की पूर्ति एक ही साथ स्थैतिक और प्रावैगिक अवधारणा है। यदि किसी समय बिन्दु रेखा पर देखा जाये तो प्राकृतिक संसाधनों की मात्रा स्थिर है। इसका सम्बन्ध ज्ञात प्राकृतिक पदार्थो से है। परन्तु यदि समय अवधि के सन्दर्भ में विचार किया जाये तो उनमें प्रावैगिकता का पक्ष स्पष्ट होता है। इस दृष्टि से अज्ञात प्राकृतिक संसाधनों की जानकारी होती है। इनके प्रति जितना अधिक प्रयास किया जायेगा उनके विदोहन और उपलब्धि में उतनी ही अधिक वृद्धि होगी।[9] आज ऐसे अनेकों संसाधन उपलब्ध है जिनकी जानकारी अतीत में नहीं थी ।

समाज की प्रत्येक आर्थिक क्रिया का क्रियान्वयन प्राकृतिक संसाधनों की भूमिका से प्रभावित होता है परन्तु कृषि कार्यो का प्रत्यक्ष और तत्कालिक सम्बन्ध प्राकृतिक पर्यावरण से होता है। कृषि एक जैविक क्रिया है। पौधों की जीवन प्रक्रिया एवं उनका उत्पादन स्तर भूमि क्षेत्र मिटटी की प्राकृतिक उर्वरता, वर्षा, एवं जलवायु से अत्यधिक प्रभावित होता है। वस्तुओं की तैयार करने की प्रक्रिया यान्त्रिक प्रक्रिया है

जब कि कृषि कार्य एक जैविक क्रिया है । पौधों का विकास प्राकृतिक तत्वों से पोषित होकर स्वयं होता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पौधों का विकास आधारित रूप से भौतिक संरचना, जलवायु, मिट्टी इत्यादि पर्यावरणीय आधारित दशाओं से आधारिक रूप से प्रभावित होता है। यहां कृषि से सम्बन्ध विभिन्न पर्यावरणीय घटकों तथा मानवीय धटकों का विश्लेषण किया गया है।

किसी भी प्रदेश में अनेक कारक अन्तर्सम्बन्धित होकर उस प्रदेश को कृषि विशिष्टता प्रदान करते हैं। इन्हीं आधारों पर कृषिगत दशाओं में समरूपता तथा अनेक रूपता मिलती है। वृहत प्रदेशीय स्तर पर कृषिगत विशेषताओं को प्रभावित करने वाले कारकों में भौतिक पर्यावरण का प्रभाव अपेक्षाकृत अधिक प्रतीत होता है, जब कि लघु प्रदेशीय विश्लेषण में मानवीय वातावरण से सम्बन्धित कारक जैसे श्रम, पूंजी, मांग पूर्ति, आर्थिक स्तर, जीवन यापन विधि एवं तरीके, बाजार उपलब्धि, तथा तकनीकी स्तर का विशेष प्रभाव पड़ता है अतः भौतिक एवं मानवीय वातावरण के विभिन्न तत्व स्वच्छन्द तथा समन्वित दोनों रूपों में कृषिगत विशेषताओं को निर्धारित करते हैं। ऐनूचीन[10] महोदय ने भौतिक तथा मानवीय पर्यावरण के समन्वित प्रभाव के लिए 'सामाजिक भौगोलिक वातावरण' शब्दावली का प्रयोग किया है तथा कारक विश्लेषण में दोनों पक्षों के अन्तर्सम्बन्धों की पुष्टि की है ।

कृषि को प्रभावित करने वाले सभी कारकों को पांच प्रमुख वर्गो में विभाजित किया जा सकता है - 1. प्राकृतिक 2. सामाजिक 3. आर्थिक 4. राजनैतिक 5. तकनीकी ।

1. प्राकृतिक कारक -

कृषि को प्रभावित करने वाले कारकों में भौतिक वातावरण का सर्वाधिक प्रभाव पडता है। प्राकृतिक पर्यावरण का सर्वोत्तम मुल्यांकन पारिस्थितिक विशेषताओं के सन्दर्भ में किया जा सकता है जो इस प्रकार है -

1. भौतिक वातावरण की क्षेत्रीय भिन्नता पौधों एवं पशुओं का वितरण निर्धारित करती है। यद्यपि वास्तविक वितरण मानवीय सूझबूझ तथा उपक्रमों पर आधारित होती है। जिससे मानव अपनी क्षमतानुसार भौतिक सीमाओं को बदलने में समर्थ होता है।

2. वातावरण के सभी पक्षों की आत्म निर्भरता कृषि के महत्व को प्रभावित करती है। उदाहरणार्थ पौधे के विकास में आर्द्रता की उपयुक्त मात्रा की आवश्यकता पड़ती है लेकिन पौधे को यह आर्द्रता केवल वर्षा की सामयिक मात्रा एवं समान वितरण से ही नहीं प्राप्त होती है, बलिक मिटटी की संरचना तथा जैव पदार्थ अंश पर भी आधारित होती है।
3. पौधे तथा पशु की वृद्धि एवं विकास में भौतिक पर्यावरण का अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। मिलथार्य[11] के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि पौधे के विकास चक्र के प्रारम्भिक या प्राथमिक अवस्था (शैशवकाल) में भौतिक कारकों का अधिकतम प्रभाव पड़ता है। कुछ फसलों के सम्बन्ध मे विभिन्न भौतिक कारकों का महत्व पौधे की वृद्धि के साथ - साथ बदलता रहता है। उदाहरणार्थ चुकन्दर की अच्छी पैदावार, अपनी अगेती विकास अवधि में वर्षा की मात्रा पर आधारित होती है लेकिन चुकन्दर में मिठास का अंश तथा अन्तिम (प्रौढ़ावस्था के बाद) में पैदावार का अच्छा होना सूर्य की रोशनी (घंटा एवं मात्रा) पर निर्भर करता है।

इस प्रकार भौतिक कारकों के बदलते हुए सामयिक एवं क्षेत्रीय दोनों स्वरूप, फसल तथा पशुओं के वितरण को प्रभावित करते हैं। कृषि को प्रभावित करे वाले कारकों में तीन प्रमुख हैं (अ) जलवायु (ब) मिटटी (स) उच्चावचन ।

(अ) कृषि एवं जलवायु -

भौतिक कारकों में जलवायु प्रधान कारक हैं। मिटटी तथा वनस्पति जलवायु की ही देन है। प्रत्येक पौधा अपने निश्चित जलवायु में विकसित होता है। उदाहरणार्थ संयुक्त राज्य अमेरिका की कृषि पेटी परिसीमा में जलवायु का स्थान सर्वोपरि है। संयुक्त राज्य अमेरिका के मैक्सिको की खाड़ी के तटीय क्षेत्र में गन्ना तथा चावल की खेती इसके उत्तर में कपास की पेटी, उसके उत्तर में मक्का की पेटी, उसके उत्तर में डेयरी पेटी तथा उसके उत्तर में वन तथा समूरदार पशुओं की पेटी जलवायु द्वारा ही निर्धारित होती है।

यहाँ पर कृषि भूदृश्य पर पड़ने वाले जलवायु प्रभावों के विषय में किए गये शोध अध्ययन का

संदर्भ देना आवश्यक है। इन सम्बन्धों के विश्लेषण में अनेक उपागम अपनाए गये हैं। परम्परागत उपागम के अन्तर्गत फसलों के विकास या शस्य स्वरूप के वितरण पर जलवायु कारकों के प्रभाव का अध्ययन किया गया है। जलवायु भिन्नता तथा उसका उपज पर प्रभाव अध्ययन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू रहा है। रोज[12] मे मक्का पेटी में मक्का उपज तथा जलवायु सम्बन्धों को स्थापित किया है। वीवर[13] ने दक्षिणी डकोट में जलवायु तथा जौ उत्पादन के सम्बन्धों को स्थापित किया है। बर्टन[14] ने थाईलैंड में तथा चावल के उत्पादन में सम्बन्ध स्थापित किया है। इसी प्रकार हेर [15] ने पश्चिम बंगाल के सन्दर्भ में वर्षा तथा चावल उत्पादन में सह सम्बन्ध स्थापित किया है। मुण्डन[16] ने न्यूजीलैंड के सम्पूर्ण कृषि उत्पादन का विस्तृत अध्ययन किया है। इन्होंने अपने अध्ययन में अनेकधा समाश्रयण (Multiple Regression) के आधार पर कृषि से सम्बन्धित तेईस कारकों तथा जलवायु से सम्बन्धित पन्द्रह कारकों के साहचर्य की गणना की है। इसी प्रकार हैवीस[17] ने संयुक्त राज्य अमेरिका के वृहत मैदान में गेहूँ उत्पादन की असफलताओं के कारणों को निर्धारित किया है। कुछ विद्वानों ने अनेक प्रदेशों के लिए उपयुक्त फसल के आधार पर संसार की जलवायु का विभाजन किया है। बेनेट[18] ने खाद्य फसल जलवायु मानचित्र तैयार किया है। पेपदकीस[19] ने एक ऐसा मानचित्र तैयार किया है जिनमें संसार को उन प्रदेशों की जलवायु तथा कृषि सम्भाव्य क्षमता के आधार पर 72 उप प्रदेशों में विभाजित किया है। इसी प्रकार का अध्ययन नूतन्सन[20] ने मौसम तथा कृषि भू दृश्यावली के सम्बन्धों के विश्लेषण में किया है। कुछ विद्वानों ने महत्वपूर्ण फसलों के अनुकूलित प्रदेशों को परिसीमित किया है। इस दृष्टिकोण से सेपीजिनकोवा तथा सस्खों[21] ने भी कृषि जलवायु पेटी मानचित्र तैयार किया । कृषि विद्वान तथा भूगोल वेत्ताओं ने वास्तविक फसल क्षेत्र सीमांकन तथा फसलों की पारिस्थितिक सीमा द्वारा उत्पन्न अन्तर के विषय में भी अध्ययन किए हैं। डी जी [22] ने आर्थिक तथा वर्तमान फसल वितरण सीमा के बीच अपसम विन्यास को चित्रित किया है। एकरमन[23] ने रसदार फलों की खेती पर जलवायु प्रभावों का अध्ययन किया है। पशुपालन पर जलवायु प्रभाव सम्बन्धी अध्ययन भूगोलवेत्ताओं द्वारा कम किया गया है। जलवायु के अन्तर्गत तापक्रम, आर्द्रता, वर्षा तथा वायु के प्रभावों का विवेचन आवश्यक है।

(क) कृषि एवं तापक्रम -

बीज के जमने तथा वृद्धि के लिए उचित तापक्रम की आवश्यकता पड़ती है। साधारणतया

63-75 डिग्री फा0 तापक्रम फसलों की बाढ़ वृद्धि के लिए अनुकूलतम होता है। राई, गेहूँ, जौ तथा चुकन्दर के लिए न्यूनतम 40 डिग्री तथा मक्का के लिए 48 डिग्री0 तापक्रम की आवश्यकता पड़ती है। कुछ फसलों को पकने के लिए अधिक तापक्रम की आवश्यकता पड़ती है। यदि उस समय तापक्रम धीरे-धीरे बढ़ता है तब प्रति एकड़ उपज अधिकतम होती है। गेहूँ के लिए 40-42 डिग्री तापक्रम उपयुक्त होता है। इस प्रकार का मानचित्र ग्रेगरी[24] महोदय ने ब्रिटिश द्वीप में गेहूँ समूह के लिए बनाया था । 40-42 डिगरी औसत तापक्रम की दर से गेहूँ के लिए 19 दिन 60 डिग्री0 तापक्रम की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि पौधों के विकास में वहां के तापमान का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्रत्येक फसल अपनी सम्पूर्ण परिपक्वता अवधि में अपनी प्रकृति के अनुसार एक अनुकूलतम अधिकतम और न्युनतम तापमान की अपेक्षा करती है। हवा के तापमान का पौधों की ऊर्जा प्राप्ति से अति निकट सम्बन्ध होता है। भारत के विभिन्न भागों में शीतऋतु एवं ग्रीष्म ऋतु के तापों में अत्यधिक अन्तर पाया जाता है, यहां तक कि उत्तर प्रदेश के तापमान में भी इस प्रकार का अन्तर स्पष्ट रूप से रहता है। शीतु ऋतु में प्रदेश के पूर्वी भाग का तापमान 15° से 20° सेन्टीग्रेड रहता है जबकि इसी समय प्रदेश के पश्चिमी भाग में तापमान 10° से 15° डिग्री सेन्टीग्रेट रहता है और कभी - कभी प्रदेश के मैदानी भाग का तापमान 0 से 5° सेन्टीग्रेट पर भी आ जाता है।

भारत के वृहत भौगोलिक आकार के परिप्रेक्ष्य में यहां के विभिन्न भागों में विभिन्न प्रकार की जलवायु का पाया जाना स्वाभाविक है। सामान्य रूप से यह कहा जा सकता है कि भारत का बहुत बड़ा भाग उष्ण कटिबन्धीय क्षेत्र और उसके आस पास स्थित है। कर्क रेखा भारत के मध्य से होकर गुजरती है, अतः इसे गर्म देश की कोटि में रखा जा सकता है। भारत के उत्तरी भाग जो भूमध्य रेखा से अधिक दूर हैं में अधिक ठंड पड़ती है। भूमध्य रेखा से निकट वाले भागों में अधिक गर्मी पड़ती है। देश के पश्चिमी भाग में मौसम गर्म तथा शुष्क बना रहता है। समुद्र के निकट के तटीय भाग में वर्ष भर प्रायः सम जलवायु बनी रहती है, इनमें तापमान अन्तरण अत्यन्त कम होता है। इस विभिन्नता के बाद भी यहां की जलवायु मोटे रूप से उष्ण कटिबन्धीय है। वर्ष भर के परिवर्तनीय मौसम के आधार पर यहां तीन ऋतुएं पाई जाती है। सामान्य दशाओं के आधार पर भारत में गर्मी, वर्षा, और शीत ऋतुएं पाई जाती हैं ।

(ख) कृषि एवं वर्षा -

जलवायु के विभिन्न घटकों में वर्षा अत्यन्त महत्व पूर्ण है। पौधे को जल अनेक रूपों में प्राप्त होता है जिसमें दो प्रधान स्रोत हैं - 1. मिटटी से पौधे को जल का मिलना तथा 2. वायु मण्डलीय आर्द्रता से पौधे को जल मिलना । पौधे के विकास के लिए मिटटी में जल एक निश्चित मात्रा की आवश्यककता होती है, उचित जल की मात्रा के अभाव में पौधा सूख जाता है। यही कारण है कि वर्षा जल क्षमता का निर्धारण सर्वदा वाष्पीकरण की मात्रा से प्रदर्शित होता है। वास्तव में मिटटी की उत्पादकता इस तथ्य पर निर्भर करती है। कि 1. कितना जल सतह के भीतर प्रवेश करता है तथा 2. जल की कितनी मात्रा मिटटी स्वीकार करती है। मिटटी द्वारा जल स्वीकार करने की क्षमता मिटटी के भौतिक गुणों पर निर्भर करती है। भिन्न - भिन्न पौधों में मिटटी से जल लेने की क्षमता भी भिन्न होती है। साधारण परिस्थितियों में सलाद तथा पालक की जड़ें 12-15 इंच भीतर प्रवेश करती है। जब कि मटर एवं आलू की जड़ें 2 इंच, टमाटर की 3 इंच, मोटे अनाज की 4 इंच, तथा अंगूर की जड़ें 8-10 इंच तक प्रवेश करती है तथा जल प्राप्त करती है। पौधों के समान जानवरों मुख्य रूप से दुधारू, जानवरों को अधिक जल की आवश्यकता पड़ती है। यही कारण है कि पशुपालन उद्योग का विकास गर्म तथा शुष्क प्रदेशों में कम तथा शीतोष्ण प्रदेशों में अधिक हुआ है।

विश्लेषण एवं प्रायोगिक सार्थकता के विचार से वर्षा तथा शस्य भूमि उपयोग के मध्य साहचर्य का अध्ययन आवश्यक है। वर्षा की मात्रा तथा वितरण फसलों के वितरण प्रतिरूप को प्रभावित करती है। वर्षा तथा कृषि के साहचर्य तथा सह सम्बन्ध को स्थापित करने के दृष्टिकोण से अनेक विद्वानों ने कार्य किए हैं। स्टैलिंग[25] का मौसम अक्षांक इस दिशा में एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। मान[26] ने वार्षिक वर्षा की मात्रा को फसलों की वृद्धि तथा विकास के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण बतलाया है। इसके अलावा सेन्डरसन[27] माल्या, एवं गोपालन[28] ने भी कृषि उत्पादन में वर्षा के प्रभाव को निर्धारित किया है।

वर्षा वास्तव में कृषि भूमि को दो रूपों में प्रभावित करती हैं। (1) निर्णय स्तर पर (2) उपज स्तर पर । जमीर अहमद[29] ने वर्षा द्वारा प्रभावित शस्य भूमि उपयोग के प्रारूप तथा उसकी सीमा का

अध्ययन आलेखन एवं सांख्यिकी दोनों विधियों के आधार पर किया है। स्पष्ट है कि वर्षा का कृषि पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है यह न केवल उत्पादन को ही प्रभावित करती है बल्कि फसलों का चुनाव भी प्रभावित होता है। इसलिए 100 से0 मी0 से अधिक वार्षिक वर्षा के क्षेत्रों में चावल तथा गन्ना का उत्पादन होता है। 50 - 100 से0 मी0 तक मिश्रित गेहूँ मक्का आदि की खेती होती है। 25 से 50 से0 मी0 वर्षा वाले क्षेत्रों में ज्वार, बाजरा, की खेती की जाती है। तथा 25 से0 मी0 से कम वर्षा वाले क्षेत्रों में उपयुक्त सिंचाई साधनों के अभाव में कृषि नहीं सम्भव हो पाती है।

(ग) कृषि एवं पाला -

पाला, कृषि के उच्चावचीय सीमा को प्रभावित करने वाले कारकों में प्रमुख है। समुद्रतटीय भाग पाला के प्रभाव से मुक्त रहते हैं। अधिक ढाल के धरातल पर भी पाला का प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि ढलान वाले भाग बागबानी के लिए अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं। फल तथा सब्जी की खेती पर पाले का अपेक्षाकृत अधिक विनाशकारी प्रभाव पड़ता है।

(घ) कृषि एवं हवा :

बढ़ते हुए वाष्पोत्सर्जन दर के कारण फसलोत्पादन में हवा का अधिक प्रभाव पड़ता है क्यों कि फसलों को अधिक जल की आवश्यकता पड़ती है। ऐसे क्षेत्रों में जहां तेंज हवाएं चलती हैं बीज बोने से पूर्व बीज के चुनाव में संचित शक्ति का विशेष ध्यान दिया जाता है । बहुत तेज हवाएं फसलों को शीघ्र समाप्त कर देती है। तेज हवाओं के कारण भूमि कटाव भी होता है। सूखा खेती वाले क्षेत्रों में भी इसी प्रकार की समस्या का अनुभव किया जाता है क्यों कि आर्दता की प्राप्ति के लिए खेत को कुछ वर्षा के लिए छोड़ दिया जाता है। स्वभावतः ऊपरी परत तेज हवाओं के कारण अपरदित हो जाती है तथा उर्वरता समाप्त हो जाती है।

(ब) कृषि एवं मिटटी संसाधन -

मिटटी कृषि की आधारशिला है । मिट्टी में प्रधानतः चार तत्व होते हैं। (क) अकार्बनिक

कण । (ख) कार्बनिक पदार्थ (ग) जल तथा (घ) हवा । मिटटी की विशेषताओं को प्रभावित करने वाले मुख्य कारक इस प्रकार है - (क) पित्रय पदार्थ (ख) जलवायु (ग) उच्चावच (घ) वनस्पति (ड) मिटटी प्राणिजात या जीव तथा मानव उपयोग ।

(क) पित्रय पदार्थ -

मिटटी का निर्माण चटटानों के टूटने से होता है। मिटटी में पाये जाने वाले खनिज तत्वों में मृत्तिका, गाद तथा रेत का अंश मुख्य होता है। भौतिक विशेषता के आधार पर मिटटी को 12 भागों में बांटते हैं। 1. रेतीली मिटटी 2. दोमट रेत 3. रेतीली दोमट 4. दोमट 5. गांद दोमट 6. गांद 7. रेतीली मृत्तिका दोमट 8. मृत्रिका दोमट, 9. गांदी मृत्रिका, 10. रेतीली मृत्रिका । 11 गांदी मृत्रिका तथा 12. मृत्रिका । भिन्न -भिन्न फसलों के उत्पादन में सहायक होती है।

मिटटी में पी0 एच0 (P. H.) मात्रा तथा फसल -

इसके द्वारा फसलोत्पादन के लिए मिटटी की सम्भाव्य क्षमता ज्ञात की जाती है। कम पी0 एच0 मात्रा उस फसल के लिए उपयुक्त होगी जिसमें चूना की आवश्यकता पड़ती है। इसी प्रकार यदि मात्रा अधिक है तो उस फसल के लिए हानिकर है जिसे अम्ल चाहिए । पी0 एच0 मात्रा तथा मिटटी पोषकपदार्थो का घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। 6.5 से 7.5 पी0 एच0 मात्रा के अन्तर्गत प्राथमिक पोषक पदार्थ (नाइट्रोजन, फास्फोरस, तथा पोटैशियम) तथा गौण पोषक पदार्थ सल्फर,कैल्शियम, तथा मैग्नीशियम,) की मात्रा अधिक होती है। लघु पोषक पदार्थ (लोहा, अभ्रक, तांबा, तथा जस्ता) की मात्रा अम्लीय मिटटी में क्षारीय मिटटी की अपेक्षा अधिक होती है। पौधे के उचित विकास के लिए 6.5 से 7.5 पी0 एच0 मात्रा के भीतर सभी आवश्यक पोषक पदार्थ उपलब्ध होते हैं। पी0 एच0 मात्रा के आधार पर मिटटी को क्षारीय तथा अम्लीय दो समूहों में विभाजित करते है।

प्रो0 इग्नातीफ तथा पेज[30] के अनुसार जौ फसल के लिए 6.5 - 8.0 ज्वार एवं मक्का के लिए 5.5 - 7.5, जई के लिए 5.0 - 7.5, धान के लिए 5.5 - 6.5, मटर के लिए 6.0 - 7.5, कपास के लिए 6.0 - 7.5 आलू के लिए 5.5 - 7.0 तथा तम्बाकू के लिए 5.5 - 7.5 पी0

एच0 मात्रा की आवश्यकता पड़ती है। मिकेसेल[31] का यह निष्कर्ष था कि ओन्टारियो शील्ड की मिटटी , शस्य स्वरूप तथा फार्मिश तकनीक को निर्धारित करती है। मारबट[32] ने पश्चिमी यूरोप की मिटटी का इस प्रकार सर्वेक्षण किया जिससे आने वाले वर्षो में मिटटी की उत्पादकता का पूर्वानुमान लगाया जा सका । हैरिस[33] ने भी ऐसा अध्ययन संयुक्त राज्य के कृषि उत्पादन के विषय में किया तथा आशावित कृषि तकनीकी सम्भाव्यता की पुष्टि की । मिटटी उत्पादकता पर पड़ने वाले प्रभावों के अध्ययन के विषय में दूसरा उपागम भी अपानाया जिसमें किसी भाग के एक मिटटी प्रदेश का विस्तृत विश्लेषण किया गया । इसी प्रकार गौरू[34] ने मदुरा द्वीप की मिटटी तथा जनसंख्या घनत्व के सम्बन्धों के विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि वहां की अधिक जनसख्या घनत्व का कारण वहां की उपजाऊ मिटटी के अलावा वहां पर अपनाए गये सघन कृषि कार्य कृत्रिम सीढीनुमा कृषि तकनीक, वैज्ञानिक फसल चक्र तथा उर्वरक प्रयोग आदि है। थामन[35] ने इसी आधार पर संसार के लिए मिटटी पर आधारित कृषि उत्पादकता मानचित्र तैयार किया तथा सम्पूर्ण संसार की भूमि को तीन उत्पादकता श्रेणियों में विभाजित किया । (क) उच्च (ख) मध्यम से न्यून (ग) अतिन्यून । ग्रेगर[36] ने भी वर्तमान तथा सम्भाव्य उत्पादकता मानदण्ड के आधार पर संसार को दो श्रेणियों में विभाजित किया (क) उन्नत आर्थिक मिटटी तथा (ख) अल्प आर्थिक मिटटी ।

मृदा विकास एवं जलवायु -

सोवियत रूस के मिटटी वैज्ञानिकों ने मिटटी के निर्माण में जलवायु सम्बन्धी कारकों को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। सभी महाद्वीपों को मिटटी तथा जलवायु समानताओं के आधार पर विभाजित किया गया है। ऐसे विभाजत तीन प्रकार के हैं - (क) कटिबन्धीय विभाजन जो जलवायु पेटियों के अनुरूप हैं। (ख) प्रभागान्त मिटटी विभाजन, जिसका सम्बन्ध जलवायु के अलावा उन मुख्य पदार्थो (चूने का पत्थर आदि) से हैं। जिससे मिटटी की उत्पत्ति हुई (ग) अपाश्विक मिट्टी विभाजन ऐसे मिट्टी क्षेत्र नवीन है तथा क्षयकारी शक्तियों से वंचित है।

मृदा विकास एवं उच्चावच -

मिटटी में आर्द्रता प्राप्त करने की मात्रा मिटटी के भौतिक गुणों पर आधारित होती है।

ढालू टीले की मिटटी शुष्क तथा निचले भाग की मिटटी नम होती है। इसी प्रकार ढलवां भाग की मिटटी शुष्क तथा समतल भाग की मिटटी नम होती है। ठंडे तथा नम क्षेत्रों में अधिक ढालू भाग पर भी अधिकांश मिटटी जलयुक्त हो जाती है। ढालू भागों के निचले भागों में मिटटी गहरी नम तथा उपजाऊ होती है। ऐसे भाग कृषि कार्य के लिए उपयुक्त होते हैं।

मृदा विकास एवं वनस्पति -

मिटटी तथा वनस्पति का घनिष्ठ सम्बन्ध है। ऐसा देखा गया है कि अधिक समय के बाद जंगल, चारागाह, तथा दलदल भागों की मिटटी क्रमशः पोडजोल, ग्लेई तथा पीट में परिवतित हो जाती है। यदि इन भागों में कृषि कार्य प्रारम्भ किया जाये तो भिन्न - भिन्न तकनकी अपनाना पड़ेगी ।

(स) कृषि एवं उच्चावचन -

फसलों का वितरण एवं क्षेत्र बहुत अंश तक उच्चावच के स्वभाव पर आधारित होता है। कृषि तथा उच्चावच के सम्बन्धों के विषय में अनेक विद्वानों ने कार्य किए है। बीयड[37] ने केलीफोर्निया के तटीय श्रेणियों के कृषि प्रभावों का मूल्यांकन किया । इसी प्रकार क्रूगर तथा वेयर[38] ने पर्वत एवं घाटी प्रभावों का अध्ययन क्रमशः सब्जी, फलोत्पादन, तथा पशुपालन के सन्दर्भ में किया। छोटे तथा बड़े स्तरों पर भू प्रदेश कृषि सम्बन्ध विश्लेषण सांख्यिकी आधार पर किया गया है। हिडोर[39] ने चौरस भूमि तथा मुदा अन्न कृषि व्यवस्था में सहसम्बन्ध स्थापित किया है। कृषि अध्ययन में भू स्वरूप प्रभावों का भूगोलवेत्ताओं द्वारा अनेक रूपों में अध्ययन किया गया है, हिडोर ने सर्वप्रथम मध्य पश्चिमी संयुक्त राज्य अमेरिका की मुदादायिनी कृषि व्यवस्था तथा चौरस भूमि का साहचर्य सांख्यिकी आधार पर स्थापित किया । डाबी[40] का मलाया के बसाव एवं उत्पादन स्वरूप तथा ऊँचे नीचे भू दृश्यों का सहसम्बन्ध उल्लेखनीय है। इसी प्रकार का कार्य बरजर[41] ने राइन घाटी के क्षेत्र के संदर्भ में किया है। उच्चावच कृषि भूमि उपयोग को दो रूपों में प्रभावित करती है। 1. उच्चवता 2. प्रवणता । इनका अपरोक्ष प्रभाव अंशतः जलवायु तथा मिटटी के माध्यम से तथा परोक्ष प्रभाव तीव्र ढलान के कारण कृषि प्रतिकूलता के रूप में पड़ता है।

1. उच्चवता का जलवायु पर प्रभाव -

कृषि भूमि उपयोग पर अधिक ऊँचाई का प्रभाव हवा के कम दबाब के रूप में पड़ता है। इसके अतिरिक्त घटता हुआ तापक्रम अधिक वर्षण तथा वायुगति भी भूमि उपयोग को प्रभावित करती है। बढ़ती हुई ऊँचाई का प्रभाव कुछ दृष्टिकोण से ऊँचे अक्षांशों के समान पड़ता है। अधिक ऊँचाई तथा ऊँची अक्षांशी स्थिति फसलों के विकास में बाधक सिद्ध होती है। आल्प्स क्षेत्र में प्रत्येक 100-300 फुट की ऊँचाई वृद्धि के साथ एक दिन फसलोत्पादन अवधि घट जाती है। हिमालय पर्वत श्रेणियों में गेहूँ तथा जौ का उत्पादन 10000 फुट तक और गर्मियों में पशु चारण 12000 - 15000 फुट तक होता है। फ्रांस तथा स्विटरजरलैंड के आल्प्स क्षेत्रों में गर्मी की चारागाही 6000-10000फुट तक होती है।

2. प्रवणता -

कृषि पर प्रवणता का प्रभाव परोक्ष तथा अपरोक्ष दोनों रूपों में पड़ता है। कृषि कार्यो, के लिए 6 प्रवणता उपयुक्त होती है। आधे डिगरी ढाल पर जल का निकास तेजी से होता है। इस ढाल में भी उचित जल प्रवाह होता है। प्रो0 मेकग्रेगर[42] ने ब्रिटेन में प्रवणता तथा भूमि उपयोग के सह सम्बन्धों को निर्धारित किया है। उन्होने 3 डिगरी तथा 6 डिगरी ढाल के लिए क्रमशः मन्द ढाल तथा साधारण ढाल का नामकरण किया । मैकग्रेगर के अनुसार 11 डिगरी प्रवणता जुताई तथा फसल कटाई कार्य की अन्तिम सीमा है। 18 डिगरी प्रवणता ब्रिटेन में कृषि कार्य की अन्तिम सीमा है। लेकिन कुछ भागों में 29 डिगरी प्रवणता पर भी खेती होती है इससे अधिक प्रवणता स्थाई घास के क्षेत्र हैं। इन्हें तीव्र ढल के क्षेत्र कहा जाता है। 25 डिगरी प्रवणता पर सामान्यतः खेती नहीं की जा सकती है। यदि ऐसे भागों पर खेती की जाती है तब अधिक भूमि कटाव के कारण ऊपरी मिटटी का तेजी से ह्रास या क्षयन होता है। डिस्क की सहायता से न्यूजीलैंड में 25-30 डिगरी ढाल पर भी खेती की जाती है। अपवाह तथा अपक्षरण की मात्रा ढाल वृद्धि के साथ बदलती है जब ढाल की मात्रा दुगनी हो जाती है तब प्रति इकाई क्षेत्र का कटाव भी दुगुना हो जाता है। औसतन जब ढाल की लम्बाई दुगनी हो जाती है तब प्रति इकाई क्षेत्र में मृदाहानि डेढ़ गुना बढ़ जाती है। फलस्वरूप ढालों पर खेती के लिए अन्य प्रकार के सीढ़ीदार तरीके अपनाने पड़ते हैं ।

2. सामाजिक कारक -

फसलोत्पादन क्षेत्र विशेष की उत्पादन विधि तथा वहां की सामाजिक एवं राजनीतिक परिस्थितियों से भी प्रभावित होता है। ऐसा देखा जाता है कि जहां जिन कृषिगत वस्तुओं की मांग अधिक होती है, वहां पर उन्हीं वस्तुओं का विशेष रूप से उत्पादन होता है। मानवीय वातावरण के समाजिक आर्थिक, तथा राजनीतिक प्रारूप में सतत परिवर्तन के साथ - साथ कृषि प्रदेश में निरंतर परिवर्तन होता है। फलस्वरूप कृषि प्रदेश की सीमाएं तथा विशेषताएं गत्यात्मक होती है। मानवीय तत्वों के समान कृषि प्रदेशों का उदभव विकास विस्तार, परिवर्तन तथा ह्रास होता है। फसल उपजाने का निर्णय मानव विविध प्रकार के मानवीय एवं ऐतिहासिक तत्वों से प्रभावित होकर करता है इनमें विशेष प्रकार की फसलें पालतू जानवरों की आवश्यकता, विशेष पारिस्थितिक दशाओं में फसल विशेष के उपजाने के विषय में ज्ञान अथवा अज्ञानता फसल उगाने से किसी विशेष उददेश्य की प्राप्ति की अभिलाषा, परिवर्तित परिस्थितियों के अनुसार लोगों की मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया फसल उगाने में एक विशेष ढंग की जीवन पद्धति अपनाने की अभिरूचि आदि का योगदान होता है।

सामाजिक कारकों के अन्तर्गत तीन विशेष पहलुओं की व्याख्या की जाती है -

(अ) कृषि व्यवस्था एवं कृषक समुदाय की सामाजिक विशेषताएं -

जब हम संसार की कृषि विशेषताओं का विश्लेषण करते हैं। तो पहले कृषक के जीवन यापन विधि एवं व्यवस्था की ओर ध्यान आकर्षित होता है। कृषि पद्धति एवं सामाजिक विशेषताओं में विशेष सम्बन्ध एवं अन्र्तसम्बन्ध मिलता है। मानसून एशियायी तथा उष्ण अफ्रीकी देशों में आज भी छोटे छोटे आकार के खेतों पर खाद्यान्नों का उत्पादन स्थानीय आवश्यकता की पूर्ति हेतु किया जाता है जिसे जीवन निर्वाहन पद्धति कहते हैं, दूसरी ओर कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका, न्यूजीलैंड, आस्ट्रेलिया, आदि देशों में बड़े फार्मो पर मुद्रादायिनी फसलों का उत्पादन किया जाता है जिसे व्यापारिक कृषि व्यवस्था कहते हैं। जीवन निर्वाहन कृषि व्यवस्था अविकसित एवं व्यापारिक कृषि अत्यधिक विकसित अर्थव्यवस्था की द्योतक है। इन दोनों कृषि व्यवस्थाओं की सामाजिक विशेषताओं में महान अन्तर है। भिन्न - भिन्न व्यवस्था में

कृषक समुदाय की भिन्न भिन्न सामाजिक विशेषताएं होती है। निस्संदेह इन विशेषताओं का सम्बन्ध उस क्षेत्र की वर्तमान कृषि व्यवस्था से है। उदाहरणार्थ जीवन निर्वाहन कृषि व्यवस्था में कृषकों का दृष्टिकोण सीमित तथा अंगीकरण क्षमता - न्यूनतम होती है जिसका एक कारण यह भी है कि उनका आर्थिक स्तर नीचा है, वे अपेक्षाकृत कम शिक्षित है तथा उनका सम्पर्क क्षेत्र भी सीमित होता है। संक्षेप में इस पक्ष का सम्बन्ध आर्थिक उपलब्धियों से है जो समाज को गतिमान एवं क्रियाशील बनाती है। यह सत्य है कि पादप रोपण एवं विशिष्ट व्यवस्था में कृषकों में अंगीकरण क्षमता अधिक होती है, दृष्टिकोण विस्तृत होता है तथा सम्पर्क क्षेत्र भी अधिक होता है। यद्यपि यह कहना अत्यन्त कठिन है कि किस सामाजिक समुदाय में ये विशेषताएं कितनी अधिक होती है।[43] परन्तु यह कहना अधिक उपयुक्त होता है कि इन विशेषताओं के अभाव में कृषि एवं अर्थव्यवस्था पिछड़ी रह जाती है और उनमें अनुकूल परिवर्तन कर गति पर्याप्त शिथिल हो जाती है।

(ब) भू-स्वामित्व एवं भूपटटा -

भू स्वामित्व या किसी न किसी प्रकार का भूमि समझौता जिससे कृषक खेती योग्य भूमि प्राप्त करता है, आवश्यक होता है और यह पक्ष उस क्षेत्र की कृषि विशेषताओं को प्रभावित करता है भूमि पटटा से आशय उस व्यवस्था से है जो लिखित या अलिखित होता है तथा जिसके माध्यम से भूमि प्राप्त होती है। भूमि पटटा कृषि कार्य को कई रूपों में प्रभावित करता है जो इस प्रकार है -

1. भूमि पटटा की अवधि -

भूमि का स्थाई मालिकाना कृषि उत्पादन आयोजना एवं लाभ हेतु आवश्यक होता है, इसके अभाव में कृषक हतोत्साहित होता है।

2. लागत की अवधि -

भूपटटा की अवधि पर लागत की अवधि निर्भर करती है। आवश्यकता पड़ने पर कृषक खेत से थोड़े समय में लाभ लेता है, जिससे मिटटी की उर्वरा शक्ति प्रभावित होती है।

3. साधनों की उपलब्धता -

कृषि विकास के लिए मालिक अपने ही साधनों पर आश्रित है याअन्य पर, यदि दूसरों के साधनों पर आश्रित है तब उसका लाभ कम हो जाता है।

4. रहने के लिए या अन्य कृषि कार्यो के लिए आय का कौन सा हिस्सा कर के रूप में देनापड़ता है।

5. भूमि या पशुओं पर कितनी लागत आती है, तथा

6. भूमि की नई खरीद या बेंच द्वारा कृषि के विस्तारण या संकुचन की सम्भावना क्या है ?

रैयतदारी,पटटेदारी तथा काश्तकारी व्यवस्था में भूस्वामित्व आवश्यक होता है क्यों कि इससे कृषि को स्थायित्व मिलता है, साथ ही साथ अधिक लागत लगाने की प्रेरणा प्राप्त होती है। भूमि स्वामित्व से कृषि विकास में स्थाई पूंजी लगाने हेतु ऋण का मिलना आसान हो जाता है। अनेक देशों में भूमि मालिक काश्तकार को आवास तथा एक निश्चित राशि देता है काश्तकार को चल पूंजी (पशु, मशीन, बीज खाद तथा अन्य लागत), लगानी पड़ती है। अच्छी कृषि के लिए आवश्यक है कि समझौता लम्बे समय के लिए किया जाये। लेकिन प्रायः सभी देशों में इस प्रकार का समझौता थोड़े समय के लिए होता है। जिससे कृषि क्षमता कम हो जाती है।

(स) जोत का आकार -

कृषि में जोत का आकार महत्वपूर्ण होता है क्यों कि कृषि का पैमाना, उत्पादन रीति, खेती में मशीनीकरण प्रति एक उत्पादकता तथा क्षमता जोतों के आकार पर ही आधारित होता है। यहां पर आर्थिक एवं अनुकूलित जोत का उल्लेख करना आवश्यक है। आर्थिक एवं अनुकूलित जोत वह इकाई है जो वर्तमान दशाओं में सर्वाधिक उत्पादन प्रदान करती है। आर्थिक जोत का आकार, वास्तव में भूमि के उपजाऊपन, सिंचाई सुविधा, तथा उत्पादन की जाने वाली फसलों से निर्धारित होता है। अनुकूलित जोत से आशय उस आकार से है जिससे उत्पत्ति के अन्य साधनों के साथ शुद्ध लाभ के दृष्टिकोण से अधिकतम उत्पादन होता है स्पष्ट है कि किसान के पास इतनी भूमि अवश्य होनी चाहिए जिस पर उसकी पूंजी व श्रम का पूरा - पूरा उपयोग हो सके तथा जिससे खेती में लगाई गई लागत लाभप्रद हो सके तथा कृषक

अपने परिवार का उचित प्रकार से भरण पोषण कर सके। उत्तर प्रदेश सरकार ने सिंचित भागों तथा असिंचित भागों के प्रत्येक कृषक परिवार के लिए क्रमशः 18 एकड़, तथा 25 एकड़ की सीमा निर्धारित की है ।

(3) आर्थिक कारक -

कृषि को प्रभावित करने वाले प्रमुख आर्थिक कारक इस प्रकार हैं -

(क) कृषि कार्य तथा फार्म उद्यम -

साधारणतया कृषक अपने फार्म में उन्हीं फसलों का उत्पादन करता है, जिससे उसे अधिकतम लाभ होता है याहोने की आशा होती है। एक व्यावहारिक कृषक कृषि लागत को उसी समय या उसी अंश तक बढ़ाता है ~~जब या~~ जब तक उसे आय में वृद्धि की आशा दिखाई देती है। कभी-कभी उसे लागत मूल्य में ह्रस के साथ आय ह्रास भी सहन करना पड़ता है। ऐसा देखा जाता है कि छोटे आकार के जोतों में उचित आय प्राप्त करने के लिए अधिक गहरी खेती की आवश्यकता पड़ती है तथा अधिक श्रम की भी आवश्यकता पड़ती है। स्वयं फार्म उद्यम का कृषि विशेषताओं पर विशेष प्रभाव पड़ता है। ग्रेट ब्रिटेन में फल तथा फूल उत्पादन के बाद सुअर तथा मुर्गीपालन उद्योग धन्धों में अधिक गहरे श्रम की आवश्यकता पड़ती है, फलस्वरूप छोटे - छोटे फार्मो पर इस फार्म उद्यम को अपनाना अधिक उपयोगी सिद्ध होता है।

ग्रेट ब्रिटेन में किए गये अनेक शोध अध्ययन से इस तथ्य की पुष्टि हो चुकी है कि छोटे फार्मो (30 -50 एकड़) पर प्रति एकड़ सुअर तथा मुर्गी पालन से लाभ की राशि दुग्ध उद्यम (मिश्रित पशु पालन तथा अन्नोत्पादन) की अपेक्षा दुगनी तथा पशुपालन की चौगनी होती है। अतः फार्म इकाई क्षेत्र, फार्म उद्यम, से प्राप्त तुलना तक लाभ द्वारा निर्धारित होता है। पशुपालन कार्य अपेक्षाकृत बड़े आकार के फार्म पर अधिक लाभकर सिद्ध होता है। अनुमानतः मांस के उददेश्य से मोटा बनाने के लिए एक जानवर को वर्ष में तीन एकड़ घास क्षेत्र की आवश्यकता पड़ती है अतः 100 एकड़ से कम फार्म का क्षेत्र जहां, 70 - 80 पशु पाले जा सकते हैं अलाभकर ~~अलमकर~~ सिद्ध होता है। इसी प्रकार पशु पोषक फार्म जहां डेढ़ - दो वर्ष

की आयु तक के जानवरों को केवल मांस हेतु पाला जाता है, इस हेतु कम से कम 200 एकड़ का फार्म अनुकूलित इकाई समझा जाता है। इसी प्रकार अन्नोत्पादन कार्य बड़े फार्मो में ही अधिक लाभकर सिद्ध होता है, विशेष कर गेहूँ, फार्म बड़े तथा धान फार्म छोटे होते हैं आलू फार्म निःसंदेह अधिक छोटा होता है।

ख) क्षेत्रीय वैशिष्टय -

आय तथा सीमान्त उपयोगिता विश्लेषण से निष्कर्ष निकलता है कि किस फसल को किस समय कितने क्षेत्र में उगाया जाये । लागत तथा आय के आधार पर क्षेत्र निर्धारित किया जाता है। इसी प्रकार कृषि उद्यमों की प्राथमिकता एवं उत्पादन क्षेत्र की प्रति एकड़ शुद्ध लाभ से निर्धारित होता है। ऐसा देखा जाताहै कि कृषक अपने पड़ोस के कृषि कार्य कलापों को अपनाता है। कृषिगत समानताओं के आधार पर कृषि क्षेत्रों की सीमाओं को निधारित किया जाता है। जिन भागों में क्षेत्रीय विशिष्टता दिखाई देती है, वहां विशिष्ट क्षेत्रों को परिसीमित करना आसान हो जाता है। दो विशिष्ट क्षेत्रों के बीच एक ऐसा क्षेत्र भी होता है जहां दोनों उद्यमों से बराबर लाभ होता है। गेहूँ तथा पशुपालन के बीच मिश्रित कृषि क्षेत्र इसका महत्वपूर्ण उदाहरण है। यहां पर विशिष्ट तथा एक फसल प्रधान उद्यम का अन्तर समझना आवश्यक है। एक फसल प्रधान क्षेत्र में विशिष्टता अवश्य होती है लेकिन क्षेत्रीय विशिष्टता के लिए आवश्यक नहीं है, कि वहां एक फसल प्रधान हो। बुचैमन[44] ने डेनमार्क के दुग्ध उद्यम को विशिष्ट उद्यम बताया लेकिन इस विशिष्टता का सम्बन्ध उत्पादन की अपेक्षा पद्धति से अधिक है। नवीन देशों में अत्यधिक विशिष्ट प्रणाली है जहां उत्पादन के अन्य कारकों में भूमि सस्ती तथा अधिक मात्रा में उपलब्ध है जब कि श्रम महंगा तथा उसकी उपलब्धि न्यूनतम है। फलस्वरूप विस्तृत कृषि प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ जसमें प्रति श्रम इकाई लाभ की मात्रा अधिक होती है।

(ग) बाजार -

उत्पादन कारकों में बाजार एक महत्वपूर्ण कारक है। उत्पादित पदार्थो के क्रय विक्रय के लिए उपयुक्त बाजार व्यवस्था की नितान्त आवश्यकता है। बाजार से दूरी के कारण कृषक को उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। बाजार से दूर स्थित क्षेत्रों में सहकारी क्रय विक्रय प्रणाली अनिवार्य होती है। इसके

अलावा सहकारी समितियां उत्पादक बोर्ड, तथा अन्य सरकारी समितियों का विशेष भौगोलिक महत्व है। इन प्रबन्धों के अभाव में उचित परिस्थितियां होते हुए भी क्षेत्र एवं उत्पादन में कमी हो जाती है। बाजार में बदलते हुए मूलयों से भी उत्पादकों में अस्थिरता आ जाती है जिससे अच्छी तथा व्यवस्थित कृषि का ह्रास होता है। अच्छी विपणन व्यवस्था से क्षेत्रीय आर्थिक स्थिरता समाप्त होती है तथा आर्थिक विकास भी तेजी से होता है।

(घ) श्रम -

कृषि को प्रभावित करने वाले कारकों में श्रम एक महत्वपूर्ण कारक है। भिन्न - भिन्न फसलों के उत्पादन के लिए अधिक या कम श्रम की आवश्यकता पड़ती है। श्रम के अभाव में उन फसलों का उत्पादन नहीं किया जा सकता है। जिनके उत्पादन में अधिक श्रम की आवश्यकता पड़ती है।

(ड़) मशीनीकरण -

कृषि कार्यो पर मशीनीकरण का प्रभाव दो रूपों में पड़ता है। (1) श्रम विस्थापन (2) कृषि कार्य विस्तार । नवीन देशों में कृषि मशीनों के प्रयोग से मानव श्रम के अभाव की पूर्ति होती है तथा लाभ में भी वृद्धि होती है। ऐसा देखा गया है कि मशीनों के प्रयोग से मानव श्रम की मांग में कमी नहीं होती है क्योंकि गहन कृषि प्रणाली में अन्य कार्यो के लिए मानव श्रम की आवश्यकता पड़ती है यद्यपि मशीनीकरण क्षेत्र में श्रम कुशलता में परिवर्तन हो जाता है। मशीनीकरण का दूसरा प्रभाव कृषि कार्य के विस्तार के रूप मेंपड़ता है। सच तो यह है कि कृषि का इतिहास जुताई के विकसित साधनों द्वारा कृषि क्षेत्र के विस्तार से जुडा हुआ है। जुताई यंत्रों का क्रमिक विकास हल्का लकड़ी का हल, भारी लकड़ी का हल, घोडा चालित हल, तथा शक्ति चालित मशीनों के रूप में हुआ । इंगलैंड में 17वीं सदी में बैलों द्वारा एक दिन में एक एकड़ भूमि जोती जाती थी जब कि घोड़े से डेढ़ एकड भूमि की जुताई होती थी लेकिन शक्तिचालित मशीन द्वारा बारह एकड़ जोतना सम्भव हुआ । अन्नोत्पादन में प्रयुक्त न्यूनतम मानव श्रम के माध्यम से कृषि मशीनों में प्रयोग की उन्नति दर को आंका जा सकता है। उदाहरणार्थ - 1830 में एक हेक्टेयर क्षेत्र 1800 किलोग्राम गेहूँ पैदा करने के लिए घरेलू औजारों द्वारा 144 मानव श्रम घंटों की आवश्यकता पडती थी । यू0 एस0 ए0 में 1896 में मशीनों के प्रयोग द्वारा केवल 22 घंटा आवश्यकता

पड़ती थी जब कि 1930 में ट्रेक्टर तथा कम्बाइन हारवेस्टर द्वारा केवल 8 घंटा लगता था । इस प्रकार 1830 तथा 1896 के बीच समय तथा लागत में क्रमशः 85.6 प्रतिशत तथा 81.4 प्रतिशत की कमी हुई।

(च) यातायात -

उपज को उपभोक्ता या खरीददार तक पहुँचाने के लिए यातायात के सुगम साधनों की आवश्यकता पड़ती है। यातायात के साधन बहुत अंश तक फसल स्थिति को निर्धारित करते हैं तथा बड़े पैमाने पर कृषि विशिष्टता प्रदान करने में समर्थ. होते हैं। ऐसा भी देखने को मिलता है कि यातायात से दूर फसल गहनता में कमी आ जाती है या लुप्त हो जाती है। किसी क्षेत्र में वांछनीय यातायात क्षमता उपज की किस्म से निर्धारित होती है। उदाहरणार्थ शीघ्र सडने वाली उपजों के लिए तेज रफ्तार वाले यातायात साधनों की आवश्यकता पड़ती है या लम्बी अवधि के लिए उसके संरक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए । साधारणतः बड़े शहरों के निकट फूलों का क्षेत्र स्थित होता है। आर्थिक दृष्टिकोण से बाजार से निकट स्थित सब्जी उत्पादन से अधिक लाभ होता है। दुग्ध उत्पादन क्षेत्र सब्जी क्षेत्र की अपेक्षा कुछ अधिक दूरी पर स्थित हो सकता है क्यों कि दूध , स ब्जी की अपेक्षा कम सड़ने वाला तथा कम भारी होता है। कम सडने वाले पदार्थो की अपेक्षा यातायात साधनों की बारम्बारता अधिक महत्वपूर्ण, होती है। सहज यातायात की उपलब्धता किसी भी फसल या पदार्थ के उत्पादन क्षेत्र का विस्तार कर सकता है।

(छ) **आर्थिक प्रशासनिक नीति** -

प्रशासनिक नीति का कृषि कार्य पर विशेष प्रभाव पड़ता है। आर्थिक प्रशासनिक नियंत्रणों के प्रभावों का यद्यपि मात्रात्मक मूल्यांकन असम्भव हैं लेकिन इतना अवश्य है कि यदि कृषि पदार्थो का व्यापार स्वतंत्र रूप से होता रहे तब जिन देशों में या जिन क्षेत्रों में इनके उत्पादन में अधिक लागत लगती है उन्हें घाटा होगा जिससे ऐसे क्षेत्रों अथवा देशों में कृषि प्रणाली में परिवर्तन अवश्यम्भावी हो जाता है। इसीलिए आयात नियंत्रण का प्रयोग देश के अन्तर्गत अधिक उत्पादन लागत की सुरक्षा हेतु किया जाता है। जिन पदार्थो का देश में उत्पादन नहीं होता है उसके लिए न्यूनतम शुल्क लगाया जाता है इसके विपरीत

जिन पदार्थो का देश में पर्याप्त उत्पादन होता है या उत्पादन को प्रोत्साहित करना होता है उसके लिए अत्यधिक शुल्क लगाया जाता है।

(4) **राजनीतिक कारक** -

कृषि पर राजनैतिक कारकों का प्रभाव स्थानीय राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय सभी स्तरों पर पड़ता है। दक्षिणी केलीफोर्निया में दुग्ध उद्योग के लिए राजकीय अधिनियम का प्रभाव स्थानीय स्तर पर एक महत्वपूर्ण उदाहरण है। उत्तरी केलीफोर्निया में स्थित सेनजोनक्वीन घाटी में दक्षिण की अपेक्षा दुग्धोत्पादन में कम लागत पड़ती है, लेकिन राज्य द्वारा निर्धारित मूल्यों के कारण दोनों भागों के दुग्ध व्यापार पर कोई अलग से प्रभाव नहीं पड़ता है। राज्य को बाजार क्षेत्र में विभाजित किया गया है। तथा प्रत्येक क्षेत्र में उत्पादन तथा बाजार लागत के आधार पर मूल्य निर्धारित किया जाता है। दक्षिणी केलीफोर्निया में आन्तरिक लागत के लिए अपेक्षाकृत अधिक मूल्य निर्धारित करके क्षतिपूर्ति की जाती है। इस प्रकार प्रशासन द्वारा पारित कानून कार्यान्वयन के आधार पर सुनियोजित भूमि उपयोग आवर्त को स्थायित्व प्रदान किया गया है।

अनेक विद्वानों ने यूरोप की कृषि पर राजनैतिक प्रभावों का अध्ययन किया है। ग्रोटे वोल्ड तथा सवलेट ने इंगलैंड तथा जर्मनी के शस्य स्वरूप के अनेक विरोधाभासों का उल्लेख किया है। जिसका मुख्य कारण आयात पर जर्मनी द्वारा लगाया गया विशेष प्रतिबन्ध था । स्टैम्प के मतानुसार ब्रिटेन के भूमि उपयोग सुधार का सम्बन्ध सरकार द्वारा अपनाई गई आत्मनिर्भरता नीति से है। वाल्केन वर्ग ने कृषि पदार्थो के अन्तर्राष्ट्रीय प्रतियोगिता पर अधिराष्ट्रीय संगठन सम्बन्धी प्रभावों को महत्वपूर्ण बताया । इनेदी[44] ने पूर्वी यूरोपीय देशों के उत्पादन स्तर पर राष्ट्रीय फार्मिग नीति द्वारा पडने वाले प्रभावों का अध्ययन किया है।

(5) **तकनीकी कारक** -

किसी क्षेत्र की कृषि विशेषताएं उस क्षेत्र की तकनीकी उन्नति व्यवस्था पर भी निर्भर करती है। जीवन निर्वाहन कृषि व्यवस्था की तकनीकी अवस्था पिछड़े स्तर की है, आज भी मशीन, उन्नतशील बीज, उर्वरक का कम प्रयोग होता है। कृषि यन्त्र प्राचीन है। छोटे स्तर पर खेती की जाती है। जब कि

व्यापारिक कृषि प्रदेशों की तकनीक अत्यन्त विकसित अवस्था की है वहां अनेक प्रकार की कृषि मशीन रासायनिक उर्वरक, उन्नत बीज आदि का वृहत प्रयोग होता है। व्यापारिक फसलों की बड़े आकार के कृषि फार्मो पर खेती की जाती है, परिवहन के सस्ते तथा सुगम साधन उपलब्ध हैं। यद्यपि यह सत्य है कि प्रत्येक कृषि प्रदेश के ऐतिहासिक उदभव में अनेक तकनीकी अवस्थाएं मिलती हैं -

कृषि एवं तकनीकी स्तर -

प्राचील काल से आधुनिक समय तक के तकनीकी स्तर को कई भागों में बांटा जा सकता है -

1. कुदाल तकनीकी स्तर
2. हल तकनीकी स्तर
3. ट्रेक्टर तथा मशीनीकरण स्तर

(1) कुदाल तकनीकी स्तर -

इस तकनीकी स्तर के सम्पूर्ण औजारों को तीन किस्मों में विभाजित किया जा सकता है । (अ) कुदाल (ब) बीज डालने की छड़ी (स) गडढा करने की छड़ी । इन प्राचीनतम औजारों के प्रयोग में मानवीय श्रम की आवश्यकता पड़ती है जिसमें हाथ का काम अधिक होता है। इन प्राचीनतम कृषि औजारों से सम्बन्धित अर्थव्यवस्था को कुदाल संस्कृति कहते हैं। यह तकनीकी स्तर आज भी उष्ण कटिबन्धीय प्रदेशों में मिलता है, भारत में इसका सुधरा रूप है । कुदाल स्तर अपनी प्रारम्भिक विशेषताओं के साथ अफ्रीका के देशों में आज भी प्रचलित हैं। लेटिन अमेरिका तथा सुदूर दक्षिण पूर्व एशिया के द्वीपों में बीज डालने तथा खोदने में छडी का प्रयोग आज भी प्रचलित है। विकसित कृषि तकनीकी देशों की कृषि के दृष्टिकोण से कुदाल संस्कृति में सम्पन्न कृषि कार्य अत्यन्त दोषपूर्ण एवं अलाभप्रद दिखाई देता है परन्तु सत्य तो यह है कि जिस वातावरण में यह तकनीक अपनाई जाती है उस वातावरण के लिए वही लाभदायक है। इस तकनीकी स्तर के कृषकों के खेत छोटे एवं बिखरे होते हैं। बीच - बीच में वनस्पति क्षेत्र होते हैं, मानव द्वारा लगाये गये वृक्षों में केला प्रमुख है ऐसी अवस्था में उन खेतों की हल द्वारा जुताई सम्भव नहीं होती है, फलस्वरूप कुदाल ही सर्वाधिक उपयुक्त कृषि यंत्र है ।

(2) **हल तकनीकी स्तर -**

प्रत्येक कृषि आर्थिक स्वरूप के अनेक तकनीकी प्रक्रमों की देन होती है जो अपने पूर्व प्रचलित तकनीकी स्तरों के सुधार के रूप में दृष्टिगोचर होता है। हल तकनीकी स्तर, कुदाल का ही सुधरा रूप है और प्रायः सभी क्षेत्रों में किसी न किसी रूप में प्रचलित है। निसंदेह इसकी क्षमता कुदाल की अपेक्षा अधिक है। खाद्य उत्पादन वृद्धि में भी कुदाल स्तर की अपेक्षा अधिक उपयोगी है। हल संस्कृति की प्रमुख व्यवस्था मिश्रित कृषि व्यवस्था के रूप में है जहां फसलोत्पादन एवं पशुपालन दोनों कार्य साथ - साथ सम्पन्न होता है। इस तकनीकी स्तर में सभी फसलें उगाई जाती है जिनको इस प्रकार विभाजित किया जाता है। (क) मोटे अनाज (ख) जड़वाली फसलें (ग) तिलहन (घ) रेशेदार फसलें (ड) चारा तथा हरीखाद सम्बन्धी मुख्य पशु गाय, बैल, भैंस, भैंसा, घोड़ा, सुअर, बकरी, भेड तथा मुर्गी आदि हैं।

(3) **ट्रेक्टर तथा मशीन तकनीकी स्तर -**

हल सस्कृति के उच्चतम विकास स्तर पर मशीनों द्वारा व्यापारिक फसलों का उत्पादन महत्वपूर्ण होता है। व्यापारिक कृषि व्यवस्था के अन्तर्गत अनेक मशीनों के प्रयोग के कारण कम लागत में पदार्थों का उउत्पादन सम्भव हो जाता है। ट्रेक्टर हल का सुधरा रूप है। जिससे कम समय में अधिक भूभाग की गहरी जुताई होती है। मशीनों का प्रयोग केवल जुताई के लिए ही नहीं बल्कि सभी कृषि कार्यो में किया जाता है। कृषि फार्म मशीनों में इंगलैंड का स्थान प्रथम रहा है। मिश्रित मशीनों का भी आविष्कार हुआ जो एक साथ ही अनेक कृषि कार्य सम्पन्न करती है।

मशीनकीरण के दो मुख्य लाभ हैं - (1) अत्यधिक क्षमता (2) कम श्रम, जनसंख्या वाले देशों के लिए मशीनों का प्रयोग विस्तृत कृषि क्षेत्रों में उपयोग में वरदान सिद्ध हुआ है। मशीनों के प्रयोग से जलवायु सम्बनधी विषमताओं से फसलोत्पादन कार्य को सुरक्षा मिलती है। बिजली चालित थ्रेसिंग मशीन की सहायता से पश्चिमी उत्तरप्रदेश की गेहूँ फसल को पूर्व मानसून वर्षा से बचाया जाना सम्भव हुआ है। आज सभी विकसित देशों में कृषि कार्य मशीनों द्वारा किया जा रहा है। इन सभी देशों में कृषि में संलग्न जनसंख्या कुल जनसंख्या की बीस प्रतिशत से भी कम है।

संदर्भ ग्रन्थ

पॉलिसिज

1. बारलो (1954) लैंड प्राव्लम्स एण्ड - मेक्र हिल बुक कम्पनी न्यूयार्क पी 99

2. फाउण्ड डब्लू सी0 (1970) टुवार्डस ए जनरल थियरी रिलेटिंग डिस्टेन्स विटवीन फार्म एण्ड होम टु एग्रीकल्चरल प्रोडक्शन, ज्योग्रेफिल अनालइसिस 2 पी0पी0 165 - 176

3. फाउण्ड डब्लू सी0 (1971) ए थियरिटिकल एप्रोच टु रूरल लैण्ड यूज पैटर्न, एडवर्ड अरनोल्ड पी0 पी0 12 - 32

4. डन ई0 एस0 (1954) दि लोकेशन ऑफ एग्रीकल्चरल प्रोडक्शन, गैनिसविल। यूनीवसिटी ऑफ फ्लोरिडा प्रेस

5. आई0 सी0 ए0 आर0 हैण्डबुक ऑफ एग्रीकल्चरल पी0 113

6. बोहरा वी0 बी0 ए पालिसी फार लैण्ड एण्ड वाटर, सरदार मेमोरियल लेक्चर्स, 1980, मैनस्ट्रीम जनवरी 3, 1981

7. त्रिपाठी बी0 बी0 भारतीय कृषि, किताब महल, 1992 पी0 64

8. यू0 एन0 ओ0 नेचुरल रिसोर्सेज ऑफ डिब्लपिग कन्ट्रीज पी04 क्वटैड वाई वी0 बी0 त्रिपाठी, भारतीय कृषि पी0 19, 1992

9. नरोत्तम शाह नेचुरल रिसोर्सेज ऑफ इण्डियन इकोनोमी पी0 14

10. अनुचिन वी0 ए0 (1973) थियरी आफ ज्योग्रेफी इन कोरिया, आर0 जे0 (इड्) डाइरेक्शन इन ज्योग्रेफी, मेथुइन लन्दन पार्ट । चेप्टर 3 वी0 पी0 52 - 54

11. मिथोर्पे एफ0 एल0 (1965) क्राप रिस्पोन्सेस इन रिलेशन टु दि फोरकास्टिंग आफ ईल्ड्स इन जानसन सी0 जी0 एण्ड स्मिथ एल0 पी0 (इड्स) दि बायलोजिकल सिग्नीफिकेन्स ऑफ क्लाइमेटिक चेन्ज इन ब्रिटेन 119 - 28

12. रोज जे0के0 (1936) कार्न ईल्ड एण्ड क्लाइमेट इन दि कार्न वेल्ट, ज्योग्रैफिकल रिव्यू वाल्यूम 26 पी0 पी0 88 - 101

13. बीवर जे0सी0 (1943) क्लाइमेटिक रीजन्स आफ अमेरिकन वारली प्रोडक्शन, ज्योग्रैफिकल रिव्यू वाल्यूम 33 पी0 पी0 588 - 596

14. बारटन टी0एफ0 (1963) रेनफाल एण्ड राइस इन थाईलैंड जनरल आफ ज्योग्रैफी वाल्यूम 62 पी0 पी0 414 - 418

15. होर पी0 एन0 (1964) रेनफाल, राइस, ईल्डस एण्ड इर्रीगेशन, नीडस इन वेस्ट बंगाल, ज्योगेफी वाल्यूम 49 पी0 पी0 114-21

16. मुण्डेर डब्लू जे0 (1966) क्लाइमेटिक वैरियेसन्श एण्ड एग्रीकल्चरल प्रोडक्शन इन न्यूजीलैंड, न्यूजीलैंड ज्योग्रफर वाल्यूम 22 पी0 पी0 58-59

17. हयूज0 एल0 (1965) कालेज आफ व्हीट फेल्यूर इन दि ड्राई फार्मिग रीजन, सेन्ट्रल ग्रेट, प्लेन्स 1939 - 1957, इकोनोमिक ज्योगेफी वाल्यूम 41 पी0पी0 313

18. वेनेट एम0 के0 (1960) ए वर्ल्ड मैप आफ फूड क्राप क्लाइमेटस फूड रिसर्च इन्स्टीटयूट वाल्यूम 1 पी0 पी0 285-295

19. पपडेकिस जे0 (1960) क्लाइमेट्स आफ दि वर्ल्ड एण्ड देयर एग्रीकल्चरल पोटेन्सियलिटीज ब्यूनस आयर्स

20. नुन्तोन्सन एम0 वाई0 (1972) क्राप एण्ड व्हेदर लैण्ड स्केप, वाल्यूम, 12 मी0 पी0 9 - 11

21. सपोजिन्कोवा एस0 ए0 एण्ड शाश्को एस0 आई0 (1960) एग्रो क्लाइमेटिक कण्डीशन आफ दि डिस्ट्रीव्यूसन एण्ड स्पेशलाईजेशन आफ एग्रीकल्चर सोवियत ज्योग्रेफी रिव्यू, एण्ड ट्रान्सलेशन वाल्यूम 1 नं0 9 पी0 पी0 20 - 35

22. डेजी जी0 एफ0 (1941) लोकेशन फेक्टर्स इन दि कामर्शियल कोकोनट इण्डस्ट्री इकोनोमिक ज्योग्रेफी वाल्यूम 17, 130 - 40

23. ऐकरमन ई0 ए0 (1938) इन्फ्लूएन्स आफ क्लाइमेट आन दि कल्टीवेशन आफ साइट्रस फ्रूटस, ज्योग्रैफिकल रिव्यू वाल्यूम 28 पी0 पी0 289-302

24. ग्रेगरी एस0 (1954) एकुमुलेटेड टेम्प्रेचर मैप्स आफ दि ब्रिटिश आइसिल्स, इन्स्टीटयूट आफ ब्रिटिश ज्योग्रेफर्स, ट्रान्सलेट एण्ड पर्पेर्स - वाल्यूम 20 पी0 पी0 59 - 73

25. स्टैलिंग जे0एच0 (1957) स्वाइल कन्जर्वेशन प्रेन्टिस हाल, डन्क इन्गल्युवुड क्लिाफ्स एन0 जे0 पी0 424

26. मन एच0 एच0 (1955) रेनफाल एण्ड फेमिन ए स्टडी आफ रेनफाल इन वाम्बे डकन 1865 -1938 इण्डियन सोसाइटी आफ एग्रीकल्चरल इकोनोमिक्स

27. सैण्डर्सन मेथड आफ क्राप फोरकास्टिंग हार्बर्ड इकोनोमिक स्टडीज वाल्यूम × सी 111

28. मालया एम0 एम0 एण्ड गोपालन आर0 आर0 (1964) नेचर ऑफ रिस्क एसोसियेटेड विद रेनफाल एण्ड इट्स इफेक्ट आन फार्मिंग कुर्नुल, डिस्ट्रिक्ट इण्डियन जनरल आफ एग्रीकल्चर इकोनोमिक्स वाल्यूम 19 वाम्बे पी0 पी0 76-81

29. जमीर अहमद (1968) एसोसिएसन्स विटबीन रेनफाल एण्ड क्राप लैण्डयूज इन डिस्ट्रिक्ट विजनौर ज्योग्रेफिकल आब्जर्बर मेरठ वाल्यूम 4 पी0 पी0 86 - 87

30. इग्नलीफ वी0 एण्ड पेज एच जे0 (1958) दि इफीसिएन्ट यूज आफ फर्टिलाइजर्स, एम0 ए0 ओ0 रोम

31. मिकसेल एम0 (1969) दि बोर्डरलैण्डस आफ ज्योग्रेफी एस ए सोसल साइन्स इन सरीफ एम0 एण्ड सरीफ सी0 (इडस) इन्टरडिसिप्लिनिरी रिलेशनसिप इन दि सोसल साइंस एल्डिन शिकागो ।

32. हैरिस आर0 सी0 (1966) दि सी न्यूरियल सिस्टम इन अरली कनाडा मैडीसन पी0पी0 117-38

33. मर्बट सी0 एफ0 (1925) दि राइस डिक्लाइन एण्ड रिवाइबल आफ माल्थूसियनिज्म इन रिलेशन टु ज्योग्रेफी एण्ड करेक्टर आफ स्वाइल्स एनल्स आफ दि एसोसिएशन आफ अमेरिकन ज्योग्रेफर्स वाल्यूम 15, 1 - 19

34. गरू जी0 जे0 आर0 (1934) डिस्ट्रीव्यूसन आफ क्रापस, विशाखापत्तनम डिस्ट्रिक्ट जनरल आफ मद्रास ज्योग्रेफीकल एसोसिएशन क्वा0 (1)

35. थामन डी0 (1963) एग्रीकल्चर इन वेल्स डयूरिंग दि नेपोलियनिक बार पी0 80-81

36. ग्रेगर एच0 एफ0 (1962) दि रीजनल प्राइवेसी आफ सेन जोकिन वैली एग्रीकल्चरल प्रोडक्शन जनरल आफ ज्योग्रेफी वाल्यूम 61 - 396

37. बियर्ड सी0 एन0 (1948) लैण्ड फार्म्स लैण्डयूज ईस्ट आफ मोनेटरी वे, इको० ज्यो0 वाल्यूम 24

38. क्रयूजर आर0 आर0 (1965) दि ज्योग्रेफी आफ ओर्चार्ड इण्डस्ट्री आफ कनाडा ज्योग्रेफिकल बुलेटिन वाल्यूम 7 पी0 30

39. हिडोरे जे0 जे0 (1963) रिलेशनशिप विटबीन कैशग्रेन फार्मिंग एण्ड लैण्ड फार्म्स, इकोनोमिक ज्योग्रेफी वाल्यूम 39, 84 - 89

40. डोवी ई0 एच जी0 (1952) दि केलन्टन डेल्टा, ज्योग्रेफिकल रिव्यु, वाल्यूम 41, 226-55

41. बर्जर जी0 (1958) वेसबर्ल क्रीस इमोन्डिजेन इन एटलस डर डयूसेन एग्रेर लैण्ड शाफ्ट इड ई0 ओट्रेम्बा, विसवेडन, स्टीनियर 1962

42. मैक ग्रेगर डी0 आर0 (1957) सम आब्जर्वेशन्स आफ दि ज्योग्रेफिकल सिग्नीफिकेन्स आफ स्लोप्स ज्योग्रेफी वाल्यूम 42, 167 - 73

43. सिंह बी0 बी (1988) कृषि भूगोल पी0 पी0 33 - 34

44. बुचमैन आर0 ओ0 (1958) सम रिलेशन्स आन एग्रीकल्चरल ज्योग्रेफी, ज्योग्रेफी वाल्यूम पी 5

तृतीय अध्याय

अध्याय तृतीय

कृषि में प्राविधिकीय उपयोग

प्रकृति ने अपनी उदारता से मनुष्य को विविध आवश्यकताएं पूरी करने के लिए विभिन्न साधनों का निःशुल्क उपहार दिया है। प्राकृतिक परिवेश से मनुष्य को विभिन्न उपयोगों के लिए प्राप्त इस प्राकृतिक निःशुल्क उपहारों को प्राकृतिक संसाधन कहा जाताहै। इन प्राकृतिक संसाधनों को जितनी कुशलता से प्रयोग्य योग्य वस्तुओं एवं सेवाओं में परिवर्तितत कर लिया जाये उतने ही अधिक श्रेयस्कर रूप से व्यक्ति की भोजन, आवास, वस्त्र, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा , यातायात एवं संवाद वाहन की आवश्यकताएं पूरी हो सकती है। अतः यह कहा जा सकता है कि किसी अर्थव्यवस्था का विकास स्तर वहां उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों की मात्रा, उनकी संरचना, और उनके विदोहन का फलन हैं। इस प्रकार से प्राकृतिक संसाधनों की कोई भी कमी अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास के स्तर को कुछ अंशो में सीमित करने में समर्थ है। परन्तु यह भी निर्विवाद है कि मानवीय उद्यमशीलता और प्रौद्योगिक परिवर्तन प्राकृतिक संसाधनों की कमी के प्रभाव को निरस्त कर सकते हैं या एक महत्वपूर्ण अंश में कम कर सकते हैं। इसलिए विकास की अनिवार्यता के रूप में संसाधनों के विदोहन का पक्ष भी सक्षम, उपयोगी और समाज के अनुकूल होना चाहिए ।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के माध्यम से ज्ञात प्राकृतिक संसाधनों को वस्तुओं और सेवाओं में अधिक कुशलता पूर्वक परिवर्तित किया जा सकता है। विज्ञान और प्रोद्योगिकी की सहायता से उत्पादन में विविधीकरण किया जा सकता है, प्रयोग योग्य नवीन वस्तुओं का सृजन किया जा सकता है और जीवन यापन को अधिक सुविधा पूर्ण और सरल बनाने के लिए प्रकृति की गर्त में निहित संसाधनों की खोज की जा सकती है। नवीन संसाधनों को भी सरलता पूर्वक प्रयोग योग्य बनाया जा सकता है। इस कारण यह कहा जा सकता है कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी विविध उत्पादक क्षेत्रों यथा कृषि एवं सम्बद्ध क्रियाएं निर्माण, विनिर्माण सेवाओं के उत्पादन को अधिक सक्षमता के साथ बढ़ा सकता है ।इसीलिए तीव्र आर्थिक विकास के लिए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी न केवल सहायक वरन एक अपरिहार्य अवयव है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इसी आधारित महत्व के कारण पं0 जवाहर लाल नेहरू जिन्होंने भारत मे वैज्ञानिक विकास की आधारिक पुष्ठभूमि तैयार की थी, मानते थे कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी द्वारा ही विकास की गति में

तीव्रता लाई जा सकती है। पहले जनसंख्या कम थी, आवश्यकताएं सीमित थी इसलिए संसाधनों पर दबाव भी अत्यन्त कम था । उस समय कम जनसंख्या के परिप्रेक्ष्य में साधनों की प्रचुरता थी । अतएव सामाजिक आवश्यकताएं सुगमता से पूरी हो जाती थी । वर्तमान स्थिति अत्यन्त जटिल और चुनौतीपूर्ण है । वर्तमान समय में जनसंख्या बढ़ी है, लोगों की अय भी बढ़ी है। उपभोग प्रवृत्ति बढी है, उपभोग की संरचना में परिवर्तन हुआ है जब कि संसाधनों की मात्रा में समय अवधि के आधार पर भी, तदनुसार परिवर्तन नहीं हुआ है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि विद्यमान संसाधनों से ही, अब अधिक जनसंख्या और बढ़ी हुई आवश्यकताओं को पूरा करना है। इस वर्तमान सामजिक संदर्भ में समाजार्थिक साध्यों को पूरा करने के लिए संसाधनों के कुशलतम प्रयोग की आवश्यकता है, और इसके लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गई है।

स्वतंत्र भारत में विशेष कर नियोजन काल में विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण प्रगति हुई है। इसके परिणाम स्वरूप अर्थव्यवस्था के विभिन्न उत्पादक क्षेत्रों की समग्र भौतिक उपज में वृद्धि हुई और सामाजिक मूल्यों और मान्यताओं में भी परिवर्तन हुआ । आर्थिक क्रियाओं में आधुनिकता और जटिलता के ऊँचे प्रतिमान प्राप्त हुए । विज्ञान और प्रौद्योगिकी के प्रभाव के परिणाम स्वरूप अर्थव्यवस्था के प्राथमिक द्वितीयक, एवं तृतीयक, क्षेत्र के प्रसार होने के अतिरिक्त एक महत्वपूर्ण परिवर्तन यह हुआ कि समग्र राष्ट्रीय उत्पादन संरचना में द्वितीयक और तृतीयक क्षेत्र जो मूलतः आधुनिक विज्ञान और प्रौद्योगिकी पर ही आधारित है, का योगदान बढ़ता जा रहा है, तथा प्राथमिक क्षेत्र का निरपेक्ष रूप से उत्पादन बढने के बाद भी सापेक्षिक रूप से योगदान घटता जा रहा है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की प्रगति ने समस्त आर्थिक क्रियाओं एवं जीवन के विभिन्न पहलुओं को किसी न किसी रूप में प्रभावित किया है। यहां पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी के कृषि पर पड़ने वाले प्रभावों की व्याख्या की जा रही है। कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का आधारिक व्यवसाय है। समस्त जनसंख्या के लिए खाद्यान्न आपूर्ति करने के साथ साथ यह कई उद्योगों के लिए कच्चे पदार्थ का स्रोत लगभग 66 प्रतिशत जनसंख्या की आजीविका का आधार और निर्यात द्वारा आय अर्जन का प्रमख स्रोत है ।

कृषि विज्ञान एवं प्रौद्योगिक संस्थाएं

कृषि पर विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रभाव की व्याख्या के पूर्व उन संस्थाओं और वैज्ञानिकों का संदर्भ भी अपेक्षित है जिनकी साधना ने एक जीवन निर्वाह व्यवसाय को अतिरेक वाले सक्षम व्यवसाय में परिवर्तित कर दिया । कृषि क्षेत्र में किए जाने वाले शोध कार्यों को आधारिक, व्यावहारिक, एवं ग्रहणकारी भागों में बांटा जाता है। कृषि क्षेत्र के लिए शोध और विकास का दायित्व मुख्य रूप से भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, कृषि विश्वविद्यालयों, केन्द्रीय, शोध संस्थानों ओर राज्य के कृषि विभागों पर हैं।

1. भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद - कृषि विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का विकास करने के लिए स्वतंत्रता के पूर्व 1921 में 'इम्पीरियल काउंसिल आफ एग्रीकल्चरल रिसर्च की स्थापना की गई थी । स्वतंत्रता के उपरान्त इस काउसिंल का नाम 'भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ' कर दिया गया ।[1] भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद कृषि विज्ञान और प्रौद्योगिकी विकास में संलग्न शीर्षस्थ राष्ट्रीय संस्था है। यह संस्थान पशुपालन और मत्स्यपालन से सम्बद्ध शिक्षा, शोध[2] और इसके अनुप्रयोग का कार्य स्वयं करता है तथा इसके लिये सहायता देता है और प्रोत्साहित करता है तथा इनमें समन्वय स्थापित करता है। परिषद ने अब तक 46 शोध संस्थान ओर 20 राट्रीय शोध केन्द्र विकसित कर लिए हैं। परिषद द्वारा विकसित किए गये संस्थान एवं केन्द्र कृषि की किसी विशेष विधा यथा मिटटी, कृषि, कुक्कुट पालन एवं मत्स्स पालन आदि के संदर्भ में शोध कार्य करते हैं ।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के निर्देशन में कार्य करने वाले राष्ट्रीय वैज्ञानिक संस्थाओं कृषि विश्वविद्यालयों और अन्य अभिकरणों ने कृषि प्रौद्योगिकी के सुधार में विशेष योगदान किया है। इस संस्थान के निर्देशन में कृषि विकास के लिए शोधरत संस्थानों में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली, भारतीय उद्यान विज्ञान अनुसंधान संस्थान बंगलौर, केन्द्रीय चावल अनुसंधान संस्थान कटक, केन्द्रीय मृदा क्षारीयता अनुसंधान संस्थान करनाल, केन्द्रीय मृदा व जल संरक्षण अनुसंधान तथा प्रशिक्षण संस्थान देहरादून, केन्द्रीय कृषि अभियंत्रण संस्थान, भोपाल, केन्द्रीय ऊसर कटिबन्ध अनुसंधान जोधपुर, कृषि सांख्यिकी अनुसंधान नई दिल्ली, विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधान संस्थान अल्मोडा राष्ट्रीय भू सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो नई दिल्ली मुख्य हैं। इसके अतिरिक्त भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, अर्द्ध सरकारी तथा निजी संस्थाओं के माध्यम से भी कृषि शोध कार्य को बढ़ावा देता है।

2. कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा विभाग -

देश में कृषि विज्ञान प्रौद्योगिकी के विकास हेतु एक अन्य महत्वपूर्ण कदम 1973 में केन्द्र सरकार द्वारा कृषि पशुपालन, मत्स्य, पालन की शिक्षा और अनुसंधान कार्यो में समन्वय स्थापित करने का दायित्व सौंपा गया है। कृषि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास में उच्च योग्यता युक्त युवा वैज्ञानिकों को आकर्षित करने के लिए कृषि अनुसंधान सेवा प्रारम्भ की गई है ताकि उपलब्ध जनशक्ति का उपयोग किया जा सके और कृषि विज्ञान व प्रौद्योगिकी विकास को प्रोत्साहित करने के लिए सम्बद्ध वैज्ञानिकों को उपयुक्त अनुसंधान कार्यो में संलग्न किया जा सके। इस कृषि अनुसंधान सेवा के लिए युवा वैज्ञानिकों को भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की हैदराबाद स्थित राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान प्रबन्ध अकादमी में प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गई हैं ।

3. कृषि विज्ञान केन्द्र -

वर्ष 1974 में 'मेहता समिति' की सिफारिशों के आधार पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद ने ग्रामीण क्षेत्रों में कृषकों, श्रमिकों, ग्रामीण महिलाओं तथा स्वरोजगार हेतु इच्छुक सभी व्यक्तियों की कुशलता में वृद्धि करने के लिए आवश्यक प्रशिक्षण की व्यवस्था करने हेतु कृषि विज्ञान केन्द्र योजना को लागू किया। किसी भी क्षेत्र में कृषि विज्ञान केन्द्र की स्थापना मुख्य रूप से अग्रलिखित उददेश्यों की पूर्ति के लिए की जाती है -

1. कृषि कार्य में संलग्न समुदाय की आवश्यकताओं को ज्ञात करने के लिए सम्बद्ध, क्षेत्र में उपलब्ध संसाधनों को ज्ञात करने के लिए सर्वेक्षण कराना ।
2. कृषकों की आवश्यकतानुसार उत्पादकता में वृद्धि करने के लिए अल्पकालीन और दीर्घकालीन प्रशिक्षण कार्यक्रमों का निर्धारण करना और इस कार्यक्रम को केन्द्र में तथा खेतों में सुचारू रूप से चलाना।
3. प्रशिक्षण कार्यक्रम को प्रोत्साहित करने के लिए अनौपचारिक शिक्षा के प्रसार हेतु कृषक मेला, चर्चामण्डल, आदि का गठन करना ।
4. निकटवर्ती विद्यालयों में कृषि की व्यवसाय परक शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्रों को केन्द्र में व्यावहारिक प्रशिक्षण प्रदान करना ।

5. केन्द्र के प्रशिक्षण कार्यक्रम को सुदृढ़ करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद तथा अन्य सम्बद्ध संस्थाओं द्वारा बनाए गये कार्यक्रमों को लागू करना ।

4. कृषि विश्वविद्यालय -

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद और उससे सम्बद्ध संस्थानों के अतिरिक्त, कृषि विश्व विद्यालय, शोध संस्थान, राज्यों के कृषि विभागों द्वारा भी कृषि गत समस्याओं पर शोध कार्य किए जाते हैं। इनके शोध प्रयासों में एक दूसरे के शोध समन्वय की विशेष सुविधा रहती है। कृषि से सम्बद्ध कुछ शोध कार्य अन्तर्राष्ट्रीय शोध संस्थाओं के सहयोग से भी किया जाता है।

कृषि पर विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रभाव

पिछले दो दशक में हरितक्रान्ति ने खाद्यान्नों के संदर्भ में जो आत्म निर्भरता प्राप्त की है वह मुख्यतः विज्ञान और प्रौद्योगिकी क्षेत्र की सफलता की कहानी है। अब दुर्गम क्षेत्रों के कृषक भी कृषि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के लाभों और नवीन तथा सुधरी हुई विधियों के प्रयोग से अवगत हो गये हैं और उनका प्रयोग करने को उत्सुक हो रहे हैं। आधुनिक विज्ञान जन्य कृषि निवेशों और आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रयोग से कृषि क्षेत्र में सक्षमता आई है और कृषि की मानसून पर निर्भरता कम हुई है। 1987 - 88 में देश के कुल 35 वर्षा क्षेत्रों में से 33 वर्षा क्षेत्रों में कम या अत्यन्त कम वर्षा हुई तथापि उस वर्ष 140 मिलियन टन खाद्यान्न उत्पादन हुआ जो अनुकूल मानसून वर्ष 1986-87 के खाद्यान्न उत्पादन स्तर से केवल 13 मिलियन टन ही कम रहा है।[4] कृषि कार्यो में अब नवीन विधियों और युक्तियों का प्रयोग होने के कारण प्राकृतिक प्रकोपों के गहन दुष्परिणामों में कमी हो गई है। नवीन किस्म के बीजों का उत्पादन मृदा परीक्षण, मौसम, पूर्वानुमान भू जल स्रोत का आकलन जैव प्रौद्योगिकी आदि ऐसे कार्य हैं जिनकी क्रियाविधि में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भूमिका अत्यन्त प्रमुख रही है। इससे कृषि के रूपान्तरण और नवीनीकरण में सहायता प्राप्त हुई है।

कृषि पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी के प्रभाव को श्रम, भूमि और समय की बचत करने वाले प्रभाव

के रूप में देखा जा सकता है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी प्रभाव के कारण प्रति उत्पादन इकाई पर श्रम की अपेक्षाकृत कम मात्रा लगती है। इसे इस रूप में बताया जा सकता है कि समान श्रम के प्रयोग से अपेक्षाकृत अब अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकना सम्भव हो गया है। परन्तु इसका आशय यह नहीं है कि नवीन प्रौद्योगिकी से श्रम की कुल मांग में कमी आई है। वस्तुतः फसल सघनता बढ़ने के कारण कुल श्रम की मांग बढ़ी है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी का दूसरा प्रभाव भूमि बचत करने वाली क्षमता के रूप में दिखाई पड़ता है। विज्ञान और आधुनिक प्रौद्योगिकी के प्रयोग से किसी भूमि इकाई पर किसी फसल या कम से कम कुछ फसलों की अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है, अर्थात उपज की किसी दी हुई मात्रा के लिए अब पहले से कम भूमि की आवश्यकता पड़ती है। भारत के जितने कृषि क्षेत्र पर खाद्यान्न फसलें बोकर 1981 में 105 मिलियन टन खाद्यान्न उत्पन्न किया जाता था उतने ही भू क्षेत्र पर खाद्यान्न फसलें बोकर अब 173 मिलियन टन या इससे अधिक अनाज उत्पन्न कर लिया जाता है। इससे स्पष्ट है कि नवीन प्रौद्योगिकी भूमि बचत करने वाली है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी का तीसरा प्रमुख प्रभाव समय बचत करने की क्षमता के रूप में स्पष्ट होता है, अब अपेक्षाकृत कम परिपक्वता अवधि वाले बीजों का प्रचलन हो गया है।[5] पहले धान, गेहूँ, मूंग, ज्वार, बाजरा की फसलों की परिपक्वता अवधि अधिक थी जिससे इन खेतों में दूसरी फसल लेना कठिन हो जाता था, अरहर की फसल तो पूरे वर्ष के लिए थी, अब इसके कम परिपक्वता अवधि वाले बीजों का चलन हो गया है, जिससे यदि उचित फसल चक्र अपनाया जाये तो सम्यक सिंचाई सुविधा के परिप्रेक्ष्य में वर्ष में तीन फसलें ली जा सकती है। कृषि उत्पादन और उत्पादिता पर विज्ञान और प्रौद्योगिकी का प्रभाव सकारात्मक हुआ है, नवीन कृषि निवेशों का समावेश हुआ है। कृषि में अनिश्चितता तत्व कम हुआ है और फसल संरचना में परिवर्तन हुआ है। इसमें सिंचाई की सुविधाओं नवीन कृषियंत्रों का प्रयोग, रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग, फसलों को बीमारियों तथा उनको क्षति पहुँचाने वाले कीटों से फसल की सुरक्षा, तथा अधिक उपज देने वाले बीजों का चलन। आदि शीर्षकों में कृषि पर विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रभाव की व्याख्या की जा सकती है।

1. नवीन कृषि यंत्र -

भारत में हाल के वर्षों में कृषि मंत्रीकरण में तेजी से वृद्धि हुई है। हरितक्रान्ति के बाद तो विभिन्न नवीन कृषि यंत्रों की मांग उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है

कि यंत्र शक्ति और व्यापारिक ऊर्जा का कृषि क्षेत्र में उपयोग बढ़ रहा है, इनसे कृषि कम समय में और उचित समय मे पूरा करने में सहायता मिली है।

भारत में 1966 में जहां केवल 53 हजार ट्रेक्टर थे, ट्रेक्टरों की संख्या 1971 में बढ़कर 135 हजार, 1981 में 523 हजार तथा 1990-91 में 1450 हजार हो गई । यह अनुमान किया जाता है कि भारत में प्रतिवर्ष लगभग 80,000 ट्रेक्टर की मांग होती है। ट्रेक्टर की वार्षिक मांग की दृष्टि से संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियत रूस के बाद भारत का तीसरा स्थान आता है। आन्तरिक उत्पादन और आयात के कारण ट्रेक्टरों का प्रयोग भारत में अत्यन्त तेजी से बढ़ा है। पंजाब, हरियाणा, तथा उत्तर प्रदेश के कृषक ट्रेक्टर प्रयोग के प्रति अधिक सक्रिय हुए है। यह अनुमान किया गया है कि आने वाले वर्षो में अभी ट्रेक्टरों की मांग और बढ़ेगी । इसी प्रकार थ्रेसर तेल इंजन, विद्युत चालित पम्प सेट, सुधरे और उन्नत किस्म के हल आदि का प्रयोग तेजी से बढ़ा है। इन यंत्रों की सहायता से कृषक अपेक्षाकृत कम समय में कृषि कार्य पूरा कर लेते हैं। प्रत्येक वर्ष कृषि यंत्रों का आन्तरिक उत्पादन बढ़ा है। स्पष्ट है कि 1961-62 में देश में केवल 800 ट्रेक्टरों का उत्पादन हुआ है, परन्तु 1983-84 में इनका उत्पादन बढ़कर 761.73 हजार ट्रेक्टर हो गया । 1977-78 के बाद ट्रेक्टरों का आयात नहीं किया गया है। इसी प्रकार पावर टिलर के संदर्भ में भी उल्लेखनीय प्रगति हुई है ।

2. सिंचन सुविधाएं -

खेती के लिए जल अनिवार्य तत्व है, यह वर्षा द्वारा या कृत्रिम सिंचाई से प्राप्त किया जाता है। जिन क्षेत्रों में वर्षा काफी और ठीक समय पर होती है, उनमें पानी की कोई समस्या नहीं होती है, किन्तु जिन क्षेत्रों में वर्षा न केवल कम होती है, अपितु अनिश्चित भी है, उनमें कृत्रिम सिंचाई की व्यवस्था करनी पड़ती है। आन्ध्रप्रदेश, पंजाब और राजस्थान ऐसे प्रदेश हैं। इन क्षेत्रों में खेती के लिए कृत्रिम सिंचाई नितान्त आवश्यक है। क्योंकि इसके बिना खेती सम्भव नहीं है। कुछ क्षेत्रों में वर्षा प्रचुर मात्रा में होने पर भी वर्ष भर में वर्षा के दिन बहुत थोड़े होते हैं, परिणामतः सारे वर्ष खेती नहीं हो सकती । इन क्षेत्रों में सिचांई की सुविधा उपलब्ध होने से वर्ष में एक से अधिक फसल उगाने में सहायता मिलेगी । चावल, गन्ना, आदि कुछ फसलें ऐसी हैं जिन्हे प्रचुर एवं नियमित और लगातार जल मिलना आवश्यक होता है इनकी

अधिक उपज के लिए केवल वर्षा पर निर्भर नहीं रहा जा सकता है। तात्पर्य यह है कि वर्षा काफी होने पर भी सम्भव है कि सारे वर्ष में समान और समुचित रूप में न हो जिसके कारण अधिक फसलोत्पादन में बाधा पड़े । संक्षेप में उचित पैदावार के लिए पानी निरंतर प्राप्त होना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त दुहरी और यदि सम्भव हो तो तिहरी फसल उगाने तथा कृषि उपज में वृद्धि करने के लिए भी पानी प्रचुर मात्रा में निरंतर उपलब्ध कराया जाना आवश्यक है। भारत में जहां 1950-51 में 209 लाख हेक्टेयर भूमि को कृत्रिम सिंचाई प्राप्त थी वहां 1987-88 में 432 लाख हेक्टेयर भूमि को सिंचाई उपलब्ध करायी जा चुकी थी। जाहिर है कि 37 वर्षों के अन्तराल में सिंचाई अधीन क्षेत्र में 107 प्रतिशत की वृद्धि हुई, यद्यपि यह तथ्य सिंचाई क्षमता में प्रगति की सूचक है, परन्तु यह प्रगति अत्यन्त धीमी कही जायेगी । यह इस बात से स्पष्ट है कि जहां 1950-51 में 18 प्रतिशत शुद्ध फसल क्षेत्र को सिंचाई उपलब्ध थी, वहां 1987 - 88 में केवल 31.8 प्रतिशत क्षेत्र तक इसमें वृद्धि हुई है जिसका सीधा अर्थ है कि अभी भी हमारा 68.2 प्रतिशत शुद्ध फसल क्षेत्र वर्षा पर निर्भर है।

एक बात जिसकी ओर ध्यान देना आवश्यक है और जिसकी बहुत अधिक उपेक्षा की गई है, भारतीय खेती में जल प्रयोग की कुशलता को बढ़ाना । इसके लिए पानी का भाप के रूप में या अत्यधिक सिंचाई करने या रिसने के कारण पानी के नुकसान को न्यूनतम करने का प्रयास करना चाहिए । पूर्वस्थापित सिंचाई, सुविधाओं का श्रेष्ठतर उपयोग भी उतना ही महत्व रखता है। अभी तक हम अपने सिंचाई सम्बन्धी विनियोग से अधिकतम लाभ प्राप्त करने में बुरी तरह विफल रहे हैं, और इस प्रकार सिंचाई अधीन भूमि द्वारा कृषि उत्पादन को अधिकतम योगदान उपलब्ध न कराया जा सका, अतः यदि सिंचाई से बहुफसल नहीं तो दोहरी फसल तो अवश्य प्राप्त की जानी चाहिए, परन्तु सत्य तो यह है कि भारत का अधिकतर सिंचाई प्राप्त क्षेत्र अभी भी एक फसली ही है। 1950-51 में कुल सिंचाई क्षेत्र का 8.2 प्रतिशत एक से अधिक बार बोया गया, यह बढ़कर 1970 - 71 में 23.3 प्रतिशत हो गया और 1990 - 91 में 33.2 प्रतिशत । दूसरे शब्दों में 590 लाख हेक्टेयर सिंचाई अधीन क्षेत्र में से 115 लाख हेक्टेयर (या 24.2 प्रतिशत) एक से अधिक बार बोया गया । या तो अधिकतर सिंचाई से केवल एक फसल की सुरक्षा होती है या सिंचाई प्राप्त क्षेत्रों में कृषि व्यवहार इतने विकसित नहीं हुए कि एक से

अधिक फसल प्राप्त हो सके। यदि हम यह कल्पना कर लें कि समग्र सिंचाई प्राप्त क्षेत्र पर दो फसलें उगाई जा सकती हैं, तब एक फसल के आधार पर सिंचाई प्राप्त भूमि का 76 प्रतिशत अल्प प्रयोग हो रहा है। वैज्ञानिकों ने सिंचाई प्राप्त भूमि पर 10 से 12 टन प्रति हेक्टेयर अनाज उत्पन्न करने की सम्भावना बताई है, यदि बहु फसल पद्धति य फसलों के उचित विकल्प शस्य चक्र अपनाएं जायें । अतः यह स्पष्ट है कि वर्तमान सिचाई साधनों के पूर्ण प्रयोग द्वारा ही खाद्यान्न के 1760 लाख टन के वर्तमान उत्पादन को बढ़ाकर 3000 से 5000 लाख टन तक ले जाया जा सकता है।[6] इस अल्प प्रयोग के कुछ महत्वपूर्ण कारण और उन्हें दूर करने के सुझाव निम्नलिखित हैं -

1. आज भारत के अधिकांश कृषकों को सिचांई के प्रयोग के अनुकूलतम परिणाम प्राप्त करने के लिए आवश्यक ज्ञान नहीं है। उन्हें उचित कृषि व्यवहार जिसमें शीघ्र पकने वाली फसलों की उचित किस्में, उचित शस्य चक्र आदि की जानकारी नही है उन्हें बेहतर विस्तार सेवाएं उपलब्ध करानी होगी ताकि बहुफसल व्यवहार अपनाया जा सके।

2. सिंचाई के अनुकूलतम प्रयोग के लिए सहायक सुविधाएं अर्थात भू समतलीकरण स्थल सुधार, भूमियों की चकबन्दी, कुशल भू कुल्याएं आदि देश के बहुत भागों मं नहीं है। इस स्थिति के सुधार के लिए बड़े पैमाने पर ग्रामों में सार्वजनिक निर्माण कार्य करने होंगे ।

3. आज बड़ी तथा मध्यम सिंचाई परियोजनाओं का उचित रूप में अनुरक्षण नहीं हो रहा है। छोटी सिंचाई की योजनाएं, विशेषकर तालाबों और खुले कुओं की अधिकतर उपेक्षा की गई है। इस दोष को दूर करने के लिए यह अनिवार्य है कि वर्तमान सिंचाई पद्धति का नवीकरण और आधुनिकी करण किया जाये।

4. आज दोषपूर्ण सिंचाई व्यवहार और उचित एवं पर्याप्त जल निकास सुविधाओं का अभाव न केवल जल के अपव्यय के लिए जिम्मेदार है बल्कि जलमग्नता, लवणता, तथा क्षार युक्तता, के लिए भी उत्तरदायी है जिनके कारण कृषि योग्य भूमि के बड़े भाग को स्थायी हानि पहुँची है। जल प्रबन्ध सम्बन्धी शिक्षा और जल निकास सुविधाओं द्वारा यह दोष दूर किया जा सकता है।

सामान्य रूप से दोहरी, एवं बहुफसल कार्यक्रम को प्रोन्नत करने के लिए अखिल भारतीय समन्वित कार्यक्रम बनाना होगा ताकि जल का अनुकूलतम प्रयोग हो सके । उददेश्य यह है कि प्रति हेक्टेयर उत्पादिता को सिंचाई प्राप्त क्षेत्रों में बढ़ाया जाय। यही एक मात्र उपाय है जिससे कृषि की नई चुनौती का सामना किया जा सके ।

3. रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग -

पौधे को तीन साधनों - हवा, पानी तथा भूमि से खाद्य तत्व मिलते हैं। कार्बन तथा आक्सीजन हवा से तो मिलते ही है पर कुछ अंश में भूमि से भी मिलते हैं। पर हाइड्रोजन केवल भूमि से ही मिलता है। भूमि से जो भोजन मिलता है। उसमें कई तत्व जैसे नाइट्रेक्स, फॉसफोरस, पोटैशियम, कैलशियम, मैगनीशियम, तथा सोडियम आदि प्रमुख हैं। इन्हें मोटे तौर पर दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। एक को नाइट्रोजन वर्ग कहते हैं जिसमें नाइट्रेटस शामिल है। और दूसरे को खनिज वर्ग कहते है जिसमें फासफेरस, पोटेशियम, तथा धातु शमिल हैं । इस प्रकार भूमि फसलों की उत्पत्ति का प्रमुख माध्यम बन जती है। भूमि जो एक परिस्थितिक प्रणाली तथा जड़ों का घर है, में पृथ्वी के ऊपरी भाग के वे परत सम्मिलित किए जाते हैं जो कुछ इंचों से लेकर कई सौ फीट तक मौटे होते हैं। यह परत पानी बरफ तथा हवा के द्वारा चटटानों के टूटने फूटने के कारण बन गये हैं। इससे रासायनिक भौतिक और प्राणि सम्बन्धी परिवर्तन भिन्न प्रकार की वनस्पति एवं जलवायु के अन्तर्गत निरंतर हुआ करते हैं। प्राकृतिक स्थितियों के कारण सबसे ऊपरी परत जिसमें भूमि चेतन तत्व रहते हैं, नीचे की परत से बहुत अधिक उत्तेजक होते हैं, पर दोनों के भौतिक रासायनिक तथा प्राणि सम्बन्धी तत्वो में पारस्परिक परिवर्तनों के कारप ही भूमि फसल उगने के अनुकूल बन पाती हैं। फसलों के लिए भूमि की अनुकूलता को ही भूमि की उर्वरा शक्ति या उपजाऊपन कहते है। यह उर्वराशक्ति दो प्रकार की होती है। यदि भूमि स्वयं उपजाऊ है तो उसे प्राकृतिक शक्ति और यदि भूमि पर समुचित व्यवस्थ के द्वारा किसान का श्रम और पूंजी लगी हैं तो उसे अप्राकृतिक उपजाऊपन कहा जायेगा । फसलों को किसी भूमि पर निरन्तर उगाने से प्राकृतिक उपजाऊपन धीरे - धीरे कम होता जाता है और इसलिए किसान का कर्त्तव्य इस खोये हुए उपजाऊपन को विभिन्न साधनों द्वारा पुनः प्राप्त करन होता है । किसान के इस कार्य से भूमि की प्राकृतिक दशा में विघ्न पुँहचता है, इसलिए

फसलों के उत्पादन के लिए किसान की भूमि की उपयुक्तता का ज्ञान होना आवश्यक हो जाता है। इस सम्बन्ध में उसे यह भी जानना आवश्यक होता है कि भूमि पर किस प्रकार की खाद दी जाय, जिससे अच्छे पौधे उगाए जा सके ।

भूमि के रसायनिक लक्षणों से पौधे के खाद्य तेलों की वास्तविक पूर्ति का सम्बन्ध होता है। पौधे भूमि से जो आवश्यक तत्व लेते हैं। उनमें नाइट्रोजन, फास्फोरस तथा पोटाश मुख्य तत्व होता है और ये तत्व भूमि में बड़ी मात्रा में पाये जाते हैं। यद्यपि कैल्शियम की मात्रा का भूमि में अधिक होना आवश्यक है पर यह दोष शोधक है और इसकी कमी पौधों के विकास को नहीं रोकती है। कृषक के दृष्टिकोण से नाइट्रोजन, फास्फोरस, और पोटेशियम ही आवश्यक तत्व साबित होते हैं जिनको खाद के द्वारा भूमि में बढ़ाया जाता है, यह पोषक तत्व पौधों के विकास को भिन्न - भिन्न प्रकार से प्रभावित करते हैं, वैसे प्रत्येक तत्व पौधों के शरीर में कुछ विशेष प्रकार का कार्य करते हैं, पर उत्तम परिणाम के लिए सब तत्वों को मिलकर कार्य करना आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त भिन्न भिन्न पौधों को भिन्न -भिन्न मात्रा में ही प्रत्येक तत्व की आवश्यकता होती है। इस प्रकार पौधों के समुचित विकास के लिए प्राकृतिक या कृत्रिम खाद के रूप में इन तत्वों की पर्याप्त मात्रा में पूर्ति आवश्यक है।

रासयनिक उर्वरकों में जैवीय खादों के द्वारा आवश्यक खाद के तत्वों की पूर्ति में कठिनाई एवं अव्यावहारिकता होने के कारण काफी महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर लिया है। अमेरिका और यूरोप के अनेक देशों ने कृत्रिम खाद द्वारा कृषि उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि की है। जैविक पदार्थों की खाद की तुलना में रासायनिक खाद से पौधों को पोषक तत्व शीघ्र प्राप्त होते हैं, फलस्वरूप इनके द्वारा उत्पादन में वृद्धि अधिक शीघ्र होती है। इसके अतिरिक्त रासायनिक उर्वरकों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक सरलतापूर्वक लाया व ले जाया जा सकता है। अतः भूमि की उर्वराशक्ति को समुचित रूप से बढाने के लिए रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करना अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होता है। जनसंख्या के तीव्रगति से बढने के साथ खाद्यान्न उत्पादन बढाने के लिए अधिकाधिक मात्रा में रासायनिक खादों का प्रयोग अनिवार्य हो जाता है।

भारत में 1965 में नयी विकास रणनीति अपनाने के पश्चात रासायनिक उर्वरकों के उपभोग में तीव्र वृद्धि होती गई है, हाल ही के वर्षो में उर्वरकों के वितरण को सही करने के लिए विशेष उपाय किए गये। इनमें उल्लेखनीय है परिवहन की अच्छी व्यवस्था, प्राथमिकता प्राप्त फसलों को उर्वरकों का नियमित सम्भरण, रेलवे विभाग के साथ समन्वय द्वारा वेगनों की पर्याप्ति मात्रा उपलब्ध कराना, उर्वरकों के लिए अल्पकालीन ऋणों की व्यवस्था, उर्वरकों के संतुलित प्रयोग को प्रोन्नत करना आदि। हाल ही के वर्षो में भारत में उर्वरकों के उपभोग में भारी वृद्धि हुई है, परन्तु अभी भी भारत अन्य प्रगतिशील देशों से बहुत पीछे है। उर्वरकों के उपभोग के बारे में उल्लेखनीय बातें निम्नलिखित है -

1. 1991 - 92 में भारत में उर्वरकों का प्रति हेक्टेयर उपभोग 69 किलोग्राम था, इसके विरूद्ध दक्षिण कोरिया (405 कि0ग्रा0) नीदरलैंड (315 कि0ग्रा0), वेल्जियम (275 कि0ग्रा0), और जापान (380कि0 ग्रा0) है।

2. उर्वरकों के गहन प्रयोग के लिए पानी का निश्चित सम्भरण एक महत्वपूर्ण शर्त है। देश के अधिकतर भागों में यह परिस्थिति विद्यमान न होने के कारण यह भारत के उर्वरक उपभोग को बढाने में एक मुख्य कठिनाई सिद्ध हुई है ।

3. चूंकि वर्षा पर आश्रित लगभग 70 प्रतिशत कृषि अधीन क्षेत्रफल द्वारा कुल उर्वरकों के केवल 20 प्रतिशत का उपभोग किया जाता है। सरकार इन क्षेत्रों में उर्वरकों के उपभोग के बढाने के लिए प्रयास कर रही है। सरकार ने एक राष्ट्रीय प्रोजेक्ट के अधीन 16 राज्यों के 60 जिले निश्चित किए हैं। जिनमें उर्वरकों का प्रयोग बहुत कम था, इसे बढाने के लिए प्रदर्शन, किसानों के लिए प्रशिक्षण एवं मिटटी के परीक्षण सम्बन्धी उपाय किए जा रहे हैं।

4. रबी की फसलें (खाद्य भिन्न) हमारे कुल कृषि उत्पादन के एक तिहाई के समान है फिर भी इनके द्वारा दो तिहाई कुल उर्वरक उपभोग किया जाता है । इसका कारण है कि इनके लिए सिंचाई की अपेक्षाकृत निश्चित मात्रा उपलब्ध है या भूगर्भ में पर्याप्त नमी उपलब्ध है।

5. उर्वरकों पर प्राप्त होने वाले अर्थसाहाय्यों (सब्सिडीज) में तेजी से वृद्धि हुई है ये 1979 - 80 में

600 करोड़ रूपये से बढ़कर 1991 - 92 में 4800 करोड़ रूपये हो गये यह हमारे सरकारी संसाधनों पर अत्यधिक भार है, परन्तु दुख की बात यह है कि ये साहाय्य अधिकतर सम्पन्न कृषकों को प्राप्त हुए हैं।

6. उर्वरकों की अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में कीमतों में भारी वृद्धि के कारण हम इस बात पर विचार करने के लिए बाध्य हो गये हैं कि अब वनस्पति पोषकों का प्रयोग अधिक किया जाय । आठवीं योजना में उर्वरक विकास रणनीति को कार्बनिक खाद के प्रयोग की ओर मोड़ा जा रहा है।

4. कीटनाशक रसायनों का प्रयोग -

अधिक उपज देने वाले बीजों तथा दक्ष जल प्रबन्ध एवं उर्वरकों के संतुलित उपयोग के कारण उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है, परन्तु विदेशी किस्म की पौध के विकास के दौरान तथा बुआई के बाद विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म वनस्पतियों (खरपतवार), कीटों तथा रोगों के आक्रमण से हानि होने की सम्भावना काफी रहती है। इसीलिए आधुनिक निविष्टियों में से अधिकतम लाभ प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि उन नाशक जीवों तथा रोगों पर नियंत्रण किया जाये जो फसलों को क्षति पहुंचाते हैं। नाशक जीव तथा रोग पौधों को कमजोर बना देते हैं जिसके परिणाम स्वरूप प्राप्त फसल गुण मात्रा तथा फल की दृष्टि से निकृष्ट होती है। कीड़े, पौध रोग, तथा घासपात भारत में वार्षिक अन्न उत्पादन का एक मुख्य भाग नष्ट कर देते हैं। इसलिए फसलों को कीडों तथा रोगों से बचाना आवश्यक होता है और पौध संरक्षण उपाय उपज बढाने में वास्तविक रूप में सहायक होते हैं। खर पतवार तथा शाक के विनाश से फसलों को अधिक पोषक तत्व तथा अधिक जल की प्राप्ति होती है जिसके फलस्वरूप उपज में भी वृद्धि होती है और उपज की किस्म भी अच्छी रहती है साथ ही कृषक अधिकाधिक लाभान्वित भी होता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पौध संरक्षण उपायों में कीट नाशकों को अपनाए बिना कृषि उत्पादन में वृद्धि की सम्भावना अत्यन्त क्षीण हो जाती है।

भारत में नियोजन प्रारम्भ होने के पूर्व कीटनाशक रसायनों का प्रयोग लगभग नगण्य था। प्रथम पंचवर्षीय योजना आरम्भ के समय भारत में लगभग 100 टन कीट नाशकों का प्रयोग किया जाता थ ।

नियोजन काल में कीट नाशकों के प्रयोग में आशातीत वृद्धि हुई है । नियोजन के पूर्व तो प्रभावित फसल को खेतों से काटकर और कभी - कभी जलाकर अन्य खेतों को बीमारियों से बचाया जाता था परन्तु, नियोजन काल में कीटनाशकों का प्रयोग बढ़ा है और कृषक इसके प्रयोग करने के लिए उत्सुक एवं तत्पर हुए हैं। हरित क्रान्ति के आरम्भ के बाद से पौध संरक्षण हेतु कीटनाशक रसायनों का अधिक प्रयोग होने लगा है। वर्ष 1980 - 81 में 60 हजार टन कीटनाशक रसायनों का प्रयोग हुआ था, परन्तु फसलों में बढ़ती हुई बीमारियों को देखते हुए अभी इस दिशा में और अधिक प्रयास की आवश्यकता है।

1976 - 77 में किए गये एक अध्ययन से यह निष्कर्ष निकला था कि वर्ष 1976 - 77 में देश में बोये गये कुल क्षेत्र का 19.8 प्रतिशत भाग विभिन्न बीमारियों से प्रभावित था जब कि कीटनाशक दवाइयों से उपचारित क्षेत्र केवल 7.2 प्रतिशत ही था । कपास, धान, गन्ना, मूंगफली तिलहन और दलहन की फसलों में बीमारियों के कारण अधिक क्षति होती है। यदि फसल बीमारियों के कारण होने वाली क्षति का न्यूनतम अनुमान समग्र कृषि उत्पादन का 10 से 15 प्रतिशत तक ही लगाया जाये तो यह स्पष्ट है कि प्रत्येक वर्ष भारत में करोड़ों रूपये के अनाज की क्षति होती है। भारत के अधिक वर्षा वाले पूर्वी भागों में फसल बीमारियों का अधिक प्रकोप होता है। फसल बीमारियों को ध्यान में रखते हुए सातवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त 1989-90 तक 75 हजार टन कीटनाशकों के प्रयोग का लक्ष्य रखा गया था ।

5. उन्नतशील बीजों का प्रयोग -

देश में कृषि उत्पादन की कमी का एक मुख्य कारण भारतीय किसानों द्वारा निम्न कोटि के बीजों का प्रयोग करना है। हमारे देश में कृषि उत्पादन को बढाने के लिए सर्वप्रथम अच्छे बीजों की व्यवस्था करना परम आवश्यक है। फसल की किस्म एवं उपज मुख्यतया किसानों द्वारा व्यवहार में लाये गये बीज की किस्म पर ही निर्भर करती है, जितने अधिक पुष्ट एवं उच्चकोटि के बीज प्रयोग में लाये जायेंगे, उतनी ही अच्छी फसलें खेतों में उगाई जा सकेंगी । संयुक्त राष्ट्र संघ (यू0 एन0 ओ) के खाद्य एवं कृषि संगठन ने जापान में अनुसंधान करके यह सिद्ध किया है कि वहां की फसलों की प्रति एकड़ उपज अधिक होने का प्रमुख कारण यह है कि वहां के किसान बीजों के चुनाव में बहुत सतर्कता बरतते हैं और केवल स्वस्थ शुद्ध एवं आधुनिक बीजों को ही प्रयोग में लाते हैं।

भारतीय किसानों के पास फसलों की उपज और उस पर किए जाने वाले खर्चों आदि से सम्बन्धित किसी भी प्रकार का विवरण नहीं होता है इसी कारण उच्चकोटि के बीजों के लाभ का वह अनुमान नहीं लगा पाता है । कभी - कभी एक प्रकार का बीज किसी एक क्षेत्र में अच्छा उत्पादन प्रदान करता है पर वही बीज किसी दूसरे क्षेत्र में वेसा ही उत्पादन नहीं दे पाता है। प्राकृतिक कारणों के अतिरिक्त इसके और भी बहुत से कारण हो सकते हैं। निंस्सदेह कृषक को अच्छे और शुद्ध बीजों का बहुत लाभ प्राप्त हो सकता है यदि कृषक स्वयं खेत को अच्छी प्रकार की अनेक सुविधाएं प्रदान करें। प्रत्येक कृषक को जहां तक सम्भव हो अच्छे बीजों को अपने पास रखना चाहिए । आज भी ऐसा अनुभव किया जाता है कि सर्वप्रथम कृषकों को बीज भण्डारों से उच्चकोटि के बीज नहीं मिल पाते, जिनको ऐसे बीज मिल भी जाते हैं वे साधारण बीजों से मिलकर उनकी उपयोगिता नष्ट कर देते हैं।

देश में कृषि विकास के लिए तथा कृषि उत्पादन बढाने के लिए शुद्ध एवं उत्तम बीज का प्रयोग एवं प्रबन्ध करना बड़े महत्व का है और इसलिए उत्तम बीज की पूर्ति एवं प्रयोग में वृद्धि लाने के लिए सभी प्रकार के प्रयत्न किए जाने चाहिए क्यों कि कृषि उत्पादन वृद्धि के लिए नवीन प्रविधियों के अन्तर्गत अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व अधिक उपज देने वाले चमत्कारी बीजों का समावेश रहा है । 1965-66 की खरीफ फसल से इन चमत्कारी बीजों का प्रयोग प्रारम्भ किया जाय । धान की ताईचुंग नेटिव - 1और गेहूँ की लेरमा रोजो किस्मों से कृषि क्षेत्र में चमत्कारी बीजों का आरम्भ हुआ । इसके बाद इस कड़ी में अनेक किस्में जुड़ती गई। गेहूँ, धान, ज्वार, बाजरा, तथा मक्का की फसलों में इन बीजों का प्रचलन अधिक तीव्रगति से हुआ है। कृषि विशेषज्ञों ने इन बीजों की विशेषताएं शोध के द्वारा प्राप्त की हैं। इन बीजों से अधिक उत्पादन लेने के लिए भारी मात्रा में रासायनिक खाद का प्रयोग आवश्यक होता है। ये बीज अधिकतर बौने किस्म के होते हैं अर्थात इनसे उगने वाले पौधे की लम्बाई अपेक्षाकृत कम होती है। इनके पककर तैयार होने में अपेक्षाकृत समय भी कम लगता है। इस प्रकार के उन्नत किस्म के बीजों का प्रयोग प्रायः उन स्थानों पर अधिक होता है जहां पर सिंचाई और उर्वरक सुचारू रूप से उपलब्ध होते हैं। यह फसल धूप और उसकी जैव क्रियाओं के प्रति असंवेदनशील होती है। इन बीजों द्वारा उत्पन्न पौधों में पोषक तत्वों को उपभोग कर सकने की अधिक क्षमता होती है। इनसे प्रथक परम्परागत बीजों की उर्वरक उपभोग क्षमता अत्यन्त कम थी, प्रतिकूल मौसम को सहन कर सकने की क्षमता अत्यन्त कम थी । पौधों का आकार

बड़ा होने के कारण अधिकांश पोषक तत्व पौधे के विकास में ही लग जाते थे और अनाज उत्पादन में वृद्धि नहीं हो पाती थी, जैवकीय अभियान्त्रि की नवीन खोज चमत्कारी बीजों ने कृषि व्यवस्था में नवीन चेतना उत्पन्न कर दी है। वर्ष 1966-67 के बाद अधिक उपज देने वाली किस्मों के अधीन क्षेत्र में अत्यन्त तैजी से वृद्धि हुई है। 1966 - 67 में केवल 1.89 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र पर अधिक उपज देने वाली किस्मों का प्रसार था जो 1980 - 81 में बढ़कर 43 मिलियन हेक्टेयर, 1985 - 86 में 65.2 मिलियन हेक्टेयर हो गया। गेहूँ, धान, मक्का, ज्वार, तथा बाजरा, की फसलों में अधिक उपजाऊ किस्मों के बीजों के अधीन क्षेत्र 1992 - 93 में 71.6 मिलियन हेक्टेयर हो गया। 1991-92 में कुल बोया गया क्षेत्र 182.5 मिलियन हेक्टेयर था। इस प्रकार 1991 - 92 में कुल बोये गये क्षेत्र के लगभग 40 प्रतिशत भाग पर अधिक उपजाऊ किस्मों के बीज बोये गये थे। आगामी वर्षों में अधिक उपजाऊ किस्मों के बीजों का प्रयोग अधिक तीव्र गति से बढने की सम्भावना है। कृषि उत्पादन वृद्धि के लिए सरकार की ओर से प्रमाणित एवं उत्तम बीजों की आपूर्ति बढ़ाई जा रही है। 1985 - 86 में कुल 55 लाख क्विंटल प्रामाणिक बीजों का वितरण किया गया जब कि 1990 - 91 में यह मात्रा 57 लाख क्विंटल तक पहुँच गई है।

लगातार बढ़ती जनसंख्या के परिप्रेक्ष्य में आगामी वर्षों में कृषि क्षेत्र पर अधिक जनसंख्या का बोझ बढने की प्रवृत्ति स्पष्ट है। इस कारण कृषि क्षेत्र को अधिक खाद्यान्न कच्चे पदार्थ एवं व्यापारिक फसलों की आपूर्ति करने के लिए सुसज्जित करना पड़ेगा। इसके लिए आवश्यक है कि विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के नवीन आयामों का समावेश उन क्षेत्रों में किया जाय, जहां अभी तक नहीं किया जा सका है। वैज्ञानिक शोध एवं विकास की दिशा उन फसलों की ओर उन्मुख होनी चाहिए जिनमें अभी कुछ किया नहीं जा सका है। दलहन और मोटे अनाजों की फसलों पर इसका प्रभाव लगभग नगण्य सा ही है। इसके लिए प्रयास आवश्यक है। इसी प्रकार विभिन्न स्थानों की परिस्थिति के अनुकूल बीजों का विकास किया जाना चाहिए। शुष्क कृषि क्षेत्रों की कृषि को सक्षम बनाने के लिए भी प्रयास किया जाना चाहिए। कृषि विकास के लिए अब उन वैज्ञानिक विधियों की आवश्यकता है जो संसाधनों और कृषि आगतों का संरक्षण कर सके। इसके द्वारा कृषि आगतों की कम मात्रा से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सके। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि प्रति इकाई आगत पर अधिक प्रतिफल प्राप्त करने के लिए शोध प्रयास आवश्यक है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के प्रयोग से निर्विवाद रूप में कृषि में सुधार आया है, परन्तु इसके ऋणात्मक बिन्दुओं पर भी ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। नवीन प्रौद्योगिकी पोषित कृषि कार्यो में महिलाओं का समावेश कम होता जा रहा है कई कृषि कार्य जो पहले महिलाओं द्वारा सम्पन्न किए जाते थे, उन कार्यों के लिए मशीनों के आने से महिलाओं के कार्य अवसर छिनने लगे हैं, इन मशीनों पर कार्य करने का प्रशिक्षण भी पुरूष श्रमिकों को ही दिया जाता है, इस संदर्भ में विचार करने की आवश्यकता है। कुछ अन्य परिणाम अधिक घातक हो रहे हैं। यह पाया गया है कि रासायनिक उर्वरकों का बढ़ता हुआ प्रयोग मिटटी को कडी बना देता है, उसकी जल अवशोषण क्षमता घट जाती है, इससे मिटटी के गुण धर्म में धीरे-धीरे परिवर्तन होने लगता है । यह भी पाया गया है कि उर्वरकों के बुद्धिमान प्रयोग से ही किसी खेत के उत्पादन का समान स्तर बनाए रखा जा सकता है। विभिन्न कीटनाशक दवाइयों और रसायनों का बढ़ता हुआ प्रयोग भी हानिकारक प्रभाव उत्पन्न कर रहा है, इन रसायनों का कुछ अंश अनाजों में अवशोषित हो जाता है, इसका मनुष्यों के स्वास्थ्य पर खराब असर पड़ रहा है। अन्य विकासशील देशों की भांति भारत 'कृषि बीज धनी देश' था । चावल और गेहूँ की तो हजारों किस्में भारत में थीं । अब यह शंका की जाने लगी कि इन विभिन्न बीजों की प्रजातियां ही समाप्त हो जायेगी । इस प्रकार कृषि बीज धनी देश भारत अब कृषि बीज गरीब देश होता जा रहा है । कृषि क्षेत्र में हाल के वर्षों में यंत्रीकरण बढ़ा है। गन्ना पेरने की मशीनें, विद्युतचालित कोल्हू, कुटटी काटने की मशीनें, थ्रेशर आदि का प्रयोग अधिक बढ़ा है, परन्तु इसी अनुपात में इन मशीनों से होने वाली दुर्घटनाएं भी बढ़ी है । एक अनुमान के अनुसार हर वर्ष में लगभग 1000 किसानों और मजदूरों के हाथ थ्रेशर मशीनों में आ जाते हैं और इसमें से लगभग 60 प्रतिशत लोग सदा के लिए अपंग हो जाते हैं। स्वयं के लिए बोझ बनकर जीना इनके जीवन का यथार्थ बन जाता है। अतः कृषि विकास के संदर्भ में आवश्यकता इस बात की है कि कृषि उत्पादन को प्राकृतिक घटकों के प्रतिकूल प्रभावों से यथा सम्भव बचाया जाये । कृषि की सफलता भी इसी तथ्य पर निर्भर है कि वैज्ञानिक कृषि की आगतें प्रत्येक कृषक परिवार को यथा सम्भव व उचित कीमत पर उपलब्ध हो सकें। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के किसी भी प्रारूप को कृषि में प्रयुक्त करने से पूर्व उसके प्रयोग विधि और प्रयोग में असावधानी से उत्पन्न होने वाले घातक परिणामों से जनसामान्य विशेष कर खेतिहर मजदूरों को अवगत कराया जाये । यह भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि कृषि की परम्परागत तकनीक को अधिक सक्षम बनाया जाये ताकि अपेक्षाकृत कम उर्वरकों से भी उपज बढाई जा सके ।

स्वतंत्रता के बाद विशेष कर नियोजन काल में ग्रामीण अर्थव्यवस्था प्रगति पथ पर अग्रसर हुई है, उसके परम्परागत स्वरूप में परिवर्तन आया है, ग्रामीण जीवन में काया पलट स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगा है। यह ग्रामीण उत्थान समग्र रूप से सरकार द्वारा प्रवर्तित कल्याण एवं उत्पादक कार्य, नगरीकरण और नगरीय सम्पर्क, प्रशासनिक सुधार, राजनैतिक जागरूकता, शिक्षा प्रसार और विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विकास का फल रहा है। प्रौद्योगिकी विकास ने ग्राम्य जीवन के प्रोत्थान में प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से सहायता पहुँचाई है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी जन्य नगरीकरण की प्रक्रिया के कारण खेतिहर समुदाय ने नई आदतें और जीवन के नये ढंग अपनाए हैं। अब वे नये उपकरण और प्राविधिक प्रक्रियाओं को अपनाने लगे हैं, उनके पहनावे और आभूषणों में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है। बहुतायत कृषक व अकृषक विशेषकर युवा पीढ़ी के लोग नये ढंग के कटे और सिले कपड़े पहनने लगे हैं, परम्परागत पहनावा अब कम होता जा रहा है। कुछ अति गरीब वर्गों को छोड़कर परम्परागत पहनावा केवल पुरानी पीढी के लोगों तक ही सीमित रह गया है । कुछ पिछड़े तथा अति गरीब परिवारों को छोड़कर जैसे ही कोई नवीन वस्त्र अथवा फैशन नगरों में प्रचलित होता है वैसे ही उसका प्रचार ग्रामीण जीवन में भी हो जाता है। ग्रामीण समाज में जीवन की दैनान्दनी वस्तुओं की सूची में नगरीय वस्तुएं जुड़ गई हैं। स्टील के बर्तन, कप प्लेट, साइकिल, स्कूटर, मोटर साईकिल, घड़ी, कुर्सी-मेज, रेडियो, जीप, दूरदर्शन, फायर आर्म्स, आदि का प्रयोग ग्रामीण जीवन में प्रभूत मात्रा में होने लगा है, वे अब आधुनिक विकास जन्य वस्तुएं यथा टेप रिकार्डर, कैमरा, गोबर गैस, सिलाई मशीन, प्रेशर कुकर, स्टोव और कीमती साबुनों तथा सौंदर्य प्रसाधनों का प्रयोग करने लगे हैं।

6. जैव प्रौद्योगिकी -

जैव प्रौद्योगिकी एक नवीन विधा है । जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हाल के वर्षों में हुई प्रगति ने कृषि पशुपालन, और पर्यावरण सहित, अन्य क्षेत्रों में अपनी महत्वपूर्ण उपादेयता सिद्ध कर दिया है। आनुवांशिक अभियांत्रिकी, कोशिका संयोजन, सेलकल्चर, इम्यूनौलाजी प्रौटीन इन्जियरी, आदि को मिलाकर जैव प्रौद्योगिकी कहा जाता है। विभिन्न क्षेत्रों में इसका बढावा देने के लिए 1982 में राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी बोर्ड का गठन किया गया है। इसकी वृद्धिमान गतिविधियों को देखते हुए 1986 में जैव प्रौद्योगिकी विभाग की स्थापना की गई । इसका व्यापक प्रसार हो जाने पर कृषि क्षेत्र में एक नवीन क्रान्ति आ जाने की सम्भावना है। जैव प्रौद्योगिकी की सहायता से पौधों में लाभकारी जीन तथा रोग प्रतिरोधक जीन

प्रवेश कराये जा सकते हैं। लाभकारी जीन का प्रदेश कराकर पोधों को लवणयुक्त व सूखा ग्रस्त तथा अन्य विषम परिस्थितियों में उगने योग्य बनाया जा सकता है। इस समय पोधों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण जीन को अनाज वाले पौधों में प्रविष्ट कराने की दिशा में शोध कार्य चल रहा है, इससे अनाज वाले पौधे स्वयं ही नाइट्रोजन स्थिरीकरण क्षमता को प्राप्त कर सकेगें। यह स्पष्ट है कि हम उर्वरकों के आयात पर तथा उत्पादन पर अत्यधिक खर्च करते हैं। जैव प्रौद्योगिकी की इस विधा से खर्चीले उर्वरकों पर हमारी निर्भरता अत्यन्त कम हो जायेगी , देश की मात्रात्मक तथा गुणात्मक खाद्य समस्या को हल करने में यह महत्वपूर्ण उपलब्धि होगी। जैव प्रौद्योगिकी में आनुवांशिक अभियान्त्रिकी द्वारा जीन की संरचना को इच्छानुसार परिवर्तित किया जा सकता है।

फसल विकास के अतिरिक्त जैव प्रौद्योगिकी की पशुधन विकास में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। भारत में गाय भैसों की संख्या विश्व में सर्वाधिक है, परन्तु उनकी उत्पादकता अत्यन्त कम है। नस्ल सुधार के सम्बन्ध में अब तक जो कार्य हुआ है वह विदेशी जाति के पशुओं से शंकर नस्ल के पशु पैदा करने तक ही सीमित रहा है। जैव प्रौद्योगिकी ने पशुधन विकास के सन्दर्भ में विशेषकर नस्ल सुधार के प्रतिविशिष्ट सम्भावनाएं जागृत कर दी हैं। जैव प्रौद्योगिकी ने भ्रूण परिवर्तन की दिशा में अच्छे परिणामों को प्रदर्शित किया है। इसके द्वारा विश्व के विकसित देशों के अनुरूप पशुधन को विकसित करने में सहायता मिलेगी । गाय और भैंस में सर्जिकल और गैर सर्जिकल दोनों ही किस्म के भ्रूण परिवर्तन परीक्षण सफलता पूर्वक कर लिए गये हैं। भ्रूण प्रति स्थापन प्रौद्योगिकी द्वारा तीव्र गति के सर्वोत्तम कोटि के पशुधन की प्राप्ति और बहुमूल्य जर्मप्लाज्म को सुरक्षित रखने के खोज की आशा है। कृत्रिम गर्भधारण की इस तकनीक से वांछित किस्म के पशुओं की संख्या बढाने और उनमें संशोधित उत्पादन क्षमता बढाने के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण उपलब्धि होगी ।

जनपद की कृषि में प्राविधिकीय उपयोग -

जनपद इटावा के कृषि क्षेत्र में नियोजन के पूर्व बहुधा आन्तरिक आगतों (क्षेत्रफल) का ही प्रयोग किया जाता था, उस समय पौधों के एकमात्र पोषक जैविक उर्वरक थे जो कृषक स्वतः उत्पन्न कर लेते थे।

इसी प्रकार बीज, सिंचाई, खेत की तैयारी आदि विभिन्न उपकरणों की व्यवस्था कृषक स्वतः ही कर लेते थे । इन्हें कृषि के परम्परागत निवेश कहा जा सकता है। प्रकारान्तर से यह कहा जा सकता है कि औद्योगिक उत्पादनों का कृषि क्षेत्र में अत्यन्त कम प्रयोग होता था । अब कृषि क्षेत्र में औद्योगिक उत्पादनों का प्रयोग बढ़ गया है, कृषि की निर्भरता उद्योगों पर बढ़ी है। उद्योगजन्य, कृषि यंत्र रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाइयां, ट्रेक्टर इत्यादि कृषि उत्पादन प्रणाली के अभिन्न अंग बन गये हैं। कृषि की नवीन तकनीक के प्रचलन के बाद तो इस दिशा में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है, इन्हें कृषिगत नवीन निवेश कहा जाता है। जनपद की कृषि का आगामी स्वरूप भी इन्हीं नवीन निवेशों से प्रभावित होगा। यहां प्रमुख नवीन कृषि निवेशों यथा अधिक उपजाऊ किस्म के बीज, रासायनिक उर्वरक, कीट नाशक रसायन, सिंचाई की सुविधाएं तथा कृषि यंत्रों की प्रकृति एवं प्रयोग स्तर का विश्लेषण किया गया है ।

1. सिंचन सुविधाएं -

प्रकृति प्रदत्त संसाधनों में जल अत्यन्त विशिष्ट संसाधन है, यह समस्त जीव और वनस्पति जगत के अस्तित्व का आधार है। समाज की समस्त आर्थिक क्रियाएं किसी न किसी रूप में जल की अपेक्षा करती है। कृषि के सन्दर्भ में इसका विशेष महत्व है क्यों कि कृषि कार्य पूर्णतः जल आपूर्ति पर निर्भर है, चाहे यह वर्षा से प्राप्त जल हो या नदियों या भूमिगत स्रोतों से । कृषि उत्पादकता के आधारभूत घटकों वायु, प्रकाश, जल, भूमि, की स्थिति और पोषक तत्व में से जल की पर्याप्त और सम्यक उपलब्धि से पौधों का वांछित, विकास होता है। जल संसाधन के इसी अति लाभदायक प्रयोग के कारण ही यह कहा जाता है कि 'जल ही जीवन है।'

सिंचाई से आशय मानवीय अभिकरण के माध्यम से विभिन्न फसलों की उपज बढाने के लिए जल के प्रयोग से है। कुछ अन्य निर्माण कार्यों के माध्यम भी मनुष्य जल के संचय और प्रवाह को नियंत्रित करता है। ऐसे कार्यक्रमों से सिंचाई कार्यक्रम का निश्चय सिंचाई के लिए रखे गये जल द्वारा होता है। कृषि उत्पादिकता बढाने के लिए सिंचाई एक उत्प्रेरक की भूमिका का निर्वाह करती है। सिंचाई से भूमि के प्रयोग से भूमि पर मिटटी कणों का इतस्ततः परिचालन होता है जो स्वाभाविक रूप से मिटटी के गुणधर्म में परिवर्तन ला देता है। सिंचाई से भूमि के आयतन में परिवर्तन होने लगता है जिससे भूमि सतह

पर 'खाद मिटटी' पहले की तुलना में 50 से 75 प्रतिशत तक अधिक हो जाती है। सिंचाई के साथ मिटटी के कण फैलने और अधिक स्थान पर आच्छादित होने लगते हैं। मिटटी के कणों की इसी सहव्यवस्था तथा पुनर्व्यवस्था के कारण भूमि आयतन में परिवर्तन होता है जो पौधों को भूमि से अधिक पौष्टिक तत्व ग्रहण करने में सहायक होता है। समुचित सिंचाई उस अवस्था में अपरिहार्य हो जाती है जब वर्षा अनिश्चित, अपर्याप्त, और सीमित समय अवधि में ही केन्द्रित होती है। ऐसी अवस्था में सिंचाई की दोहरी भूमिका होती है। एक ओर यह दुर्भिक्ष के विरूद्ध किसी जोखिम के निदान की बीमा है और दूसरी ओर फसल उत्पादन और उत्पादिता बढाने में इसका प्रमुख योगदान होता है।

कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था और वर्षा की प्रकृति के परिप्रेक्ष्य में सिंचाई का जनपदीय अर्थव्यवस्था में विशेष स्थान है। जनपद में वर्षा का वार्षिक स्तर औसत रूप से 792 मिलीमीटर है जो सम्यक कृषि के लिए अपेक्षित वर्षा स्तर से कम है। सामान्य रूप से जहां वार्षिक वर्षा का स्तर 1270 मिलीमीटर से कम होता है वहां बिना सिंचाई सुविधा के कृषि कार्य में कठिनाई उत्पन्न होती है। इस दृष्टि से जनपद में सम्यक सिंचाई व्यवस्था कृषि विकास के लिए आवश्यक है। वार्षिक वर्षा की मात्रात्मक अल्पता के अतिरिक्त समय के दृष्टिकोण से भी वर्षा का वितरण अत्यन्त असमान है। अधिकांशतः वर्षा जून से सितम्बर तक के महीनों में होती है, शेष महीनों में सूखा रह जाता है। जनपद में लगभग 73.5 प्रतिशत वर्षा जून से सितम्बर तक, 14.1 प्रतिशत अक्टूबर से दिसम्बर तक तथा 12.4 प्रतिशत वर्षा जनवरी से मई तक होती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि वर्षा कुछ महीनों तक में केन्द्रित रहती है जब कि कृषि कार्य सतत जारी रहने की प्रवृत्ति रखता है। वर्षा का कुछ अवधि तक सीमित होना फसलों की विविधता को हतोत्साहित करती है। वे फसलें जिनकी परिपक्वता अवधि लम्बी होती है, उनकी उत्पादिता हतोत्साहित होती है। अतः यह स्पष्ट है कि जनपद में समय और मात्रा के दृष्टिकोण से वर्षा अत्यन्त अनिश्चित है और निरपेक्ष रूप में वर्षा की मात्रा अत्यन्त कम है। इसलिए व्यापक क्षेत्रों में एक से अधिक फसल उगाने और उत्पादिता बढाने के लिए सिंचाई विकास आवश्यक है।

जनपद में सिंचाइ क्षेत्र का विकास -

नियोजन काल के प्रारम्भ में जनपद में नहरें सिंचाई का सबसे बड़ा स्रोत थी, दूसरा स्थान राजकीय

नलकूपों का था, निजी सिंचाई व्यवस्था का पूर्णतया अभाव था जो थोड़ा बहुत था भी उसकी क्षमता अत्यन्त न्यून थी, क्योंकि सिंचाई साधन परम्परागत थे जिनमें तालाबों से बेड़ी द्वारा जल प्रसार तथा कुओं से चरसे द्वार ही जल निकाला जाता था, इसके उपरान्त चरसे का स्थान रहट तथा चेन पम्प ने ले लिया परन्तु इनकी क्षमता यद्यपि चरसे से अधिक थी, परन्तु सिंचाई आवश्यकताओं को पूरा करने में यह साधन भी अपर्याप्त थे। यद्यपि आज भी जनपद में नहरों का स्थान महत्वपूर्ण है जो शुद्ध सिंचित क्षेत्र के आधे से अधिक क्षेत्र को जल उपलब्ध कराती है, परन्तु अब निरंतर निजी नलकूप, डीजल पम्प सेट्स, का सिंचाई साधनों में महत्व बढ़ता जा रहा है। जनपद की शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल को 1950-51 में केवल 42013 हेक्टेयर को सिंचाई सुविधा प्राप्त थी वही अब वर्ष 1990 - 91 में 216566 हेक्टेयर भूमि को सिंचाई सुविधा प्राप्त हो चुकी है। तालिका संख्या 3.1 में जनपद में सिंचाई सुविधा के विकास को दर्शाया गयाहै।

तालिका 3.1 जनपदमेंसिंचाईक्षेत्रकाविकास (बोयागयाऔरसिंचितक्षेत्रहेक्टेयरमें)

वर्ष	शुद्ध बोया गयाक्षेत्र	कुल बोया गयाक्षेत्र	शुद्धसिंचित क्षेत्र	शुद्धसिंचित क्षेत्रशुद्ध बोयेगये क्षेत्रसे %	कुलसिंचित क्षेत्र	कुलसिंचित क्षेत्रकाशुद्ध बोयेगये क्षेत्रसे : %
1950-51	269314	276720	42013	15.60	43168	16.03
1960-61	270866	291775	53631	19.80	66450	24.53
1970-71	273587	317641	91104	33.30	122802	44.89
1980-81	280454	362888	168883	60.20	193846	69.12
1984-85	284648	399476	196692	69.10	244692	85.96
1989-90	288631	427159	213115	73.84	290079	100.50
1990-91	289691	425337	216566	74.76	292507	100.97

स्रोत - जनपदीय सांख्यिकीय कार्यालय इटावा

तालिका क्रमांक 3.1 जनपद इटावा की कृषि भूमि तथा सिंचित क्षेत्र का चित्र प्रस्तुत कर रही है जो इस तथ्य की ओर संकेत कर रही है कि स्वतंत्रता के बाद से सिंचित क्षेत्र में लगातार वृद्धि हो रही है। वर्ष 1950-51 में जहां शुद्ध कृषि क्षेत्र के 15.60 प्रतिशत क्षेत्र को सिंचाई की सुविधा प्राप्त थी वहीं वर्ष 1990-91 में शुद्ध बोये गये क्षेत्र में से 74.76 प्रतिशत भू भाग को सिंचाई सुविधा के अन्तर्गत लाया जा चुका है। वास्तव में सिंचाई सुविधा का विकास जनपद में 1970-71 के बाद तेज गति से हुआ है, जब जनपद में हरितक्रान्ति की शुरूआत हुई । सिंचाई सुविधा का विकास शुद्ध और कुल कृषि क्षेत्र बढाने का एक मुख्य उत्प्रेरक घटक रहा है। सिंचाई सुविधा के विकास से बंजर और कम उपजाऊ भूमियों को भी फसलोत्पादन के अन्तर्गत लाया गया जब सिंचाई के अभाव में इस प्रकार की भूमि पर कृषि कार्य करना लाभदायक नहीं था परन्तु इस सुविधा के प्रसार से इस प्रकार की भूमि की लाभदायकता बढ़ा दी जिसके फलस्वरूप शुद्ध कृषि क्षेत्र 1950-51 के 269314 हेक्टेयर से बढ़कर 289 691 हेक्टेयर हो गया । 1950-51 से कुल कृषि क्षेत्र में लगातार तेजी से वृद्धि हुई है जो इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि सिंचाई सुविधा के कारण शुद्ध कृषि क्षेत्र द्विफसली अथवा बहुफसली बन सका यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि जहां 1950-51 में जनपद में कुल कृषि क्षेत्र 276720 हेक्टेयर था वहीं 1990-91 में यह बढ़कर 425337 हेक्टेयर हो गया अर्थात इसमें डेढ़ गुने से भी अधिक की वृद्धि हुई, यह वृद्धि सिंचाई सुविधा के विकास के कारण ही सम्भव हो सकी है। इसी प्रकार यदि कुल सिंचित क्षेत्र के प्रसार को यदि देखा जाय तो नियोजन काल में मात्र 16.03 प्रतिशत क्षेत्र ही कुल सिंचित क्षेत्र के अन्तर्गत था जो वर्ष 1990-91 में बढ़कर 100.97 प्रतिशत हो गया जिसका अर्थ है कि जनपद में सम्पूर्ण शुद्ध बोये गये क्षेत्र को सिंचन सुविधाएं प्राप्त हो चुकी हैं जिसमें कुछ भूमि ऐसी भी हैं जहां तिहरा फसलोत्पादन किया जा रहा है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि जनपद में सिंचाई सुविधा का स्तर कोई असन्तोषजनक नहीं है यह स्तर प्रादेशिक स्तर से अधिक है।

स्रोतवार शुद्ध सिंचित क्षेत्र (हेक्टेयर में)

जनपद में विभिन्न स्थानों की भौतिक संरचना में विविधता और भूमिगत तथा सतही जल संसाधन की असमान स्थिति के कारण सिंचाई के भिन्न-भिन्न साधनों का प्रयोग किया जाता है। जनपद के दो

विकासखण्ड चकरनगर तथा बढ़पुरा यमुना एवं चम्बल नदियों से प्रभावित होने के कारण यहां की भूमि अत्यन्त ऊबड़ - खाबड़ तथा जंगली है, जहां पर चाहकर भी नहरों का पानी नहीं पहुँचाया जा सकता है । ऊँची नीची भूमि होने के कारण नलकूपों का भी जाल नहीं बिछाया जा सकता है क्यों कि नलकूपों के जल वितरण की समस्या का समाधान नहीं किया जा सकता है। इन्हीं सब कारणों से अन्य विकास खण्डों की अपेक्षा उक्त दोनों विकास खण्ड सिंचाई सुविधाओं से वंचित रहे हैं। जनपद में स्रोतवार सिंचाई सुविधा को तालिका क्रमांक 3.2 में प्रस्तुत किया गया है-

तालिका क्रमांक 3.2 जनपद में स्रोतवार सिंचाई सुविधा का विकास (हेक्टेयर में)

स्रोत	1970 - 71		1980 - 81		1990 - 91	
	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत
1. नहरें	62378	68.47	108680	64.37	137203	63.35
2. नलकूप						
(अ) राजकीय	3485	3.82	8686	5.15	10638	4.91
(ब) निजी	18922	20.77	45645	27.04	63390	29.27
3. कुएं	4872	5.35	4564	2.70	4086	1.89
4. तालाब	652	0.72	547	0.32	476	0.22
5. अन्य	795	0.87	711	0.42	773	0.36
समस्त शुद्ध सिंचित क्षेत्र	91104	100.00	168833	100.00	216566	100.00

तालिका क्रमांक 3.2 से स्पष्ट होता है कि जनपद में मुख्य रूप से नहरों नलकूपों, कुओं तथा तालाबों द्वारा सिंचाई की जाती है। यदि 1970 - 71 में स्रोतवार सिंचित क्षेत्र के आकडों पर विचार किया जाये तो स्पष्ट होता है कि नहरें ही सिंचाई का प्रमुख साधन रही हैं जो कुल 68.47 प्रतिशत क्षेत्र को जल उपलब्ध कराती थीं । यह स्थिति कमोवेश आज तक विद्यमान है यद्यपि नहरों द्वारा सिंचित

क्षेत्र का प्रतिशत घट रहा है, परन्तु अभी भी सिंचित क्षेत्र में इनका स्थान महत्वपूर्ण तथा उल्लेखनीय है। वर्ष 1970-71 में दूसरे स्थान पर नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्र का स्थान है। जनपद में नलकूप राजकीय एवं निजी दोनों प्रकार के स्वामित्व में है, और दोनों ही प्रकार के नलकूपों द्वारा 24.59 प्रतिशत कृषि भूमि सिंचित की जा रही थी जिसमें निजी स्वामित्व वाले नलकूपों की भागेदारी 20.77 प्रतिशत दिखाई दे रही है। यदि 1980-81 में सिंचित क्षेत्रफल पर विचार करें तो निजी स्वामित्व वाले नलकूपों की भागेदारी बढ़कर 27.04 प्रतिशत हो गई जबकि राजकीय नलकूपों की भागेदारी भी बढ़कर 5.15 प्रतिशत हो गई, इस प्रकार नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल पर यदि विचार करें तो सम्पूर्ण सिंचित क्षेत्रफल का लगभग तिहाई हिस्सा नलकूपों का ही है, जब कि नहरों द्वारा इससे लगभग दुगने कृषि क्षेत्र की सिंचाई हेतु जल उपलब्ध कराया जा रहा था। वर्ष 1990-91 में नहरों की कुल सिंचित क्षेत्र में लगभग 1 प्रतिशत भागेदारी कम हुई है जब कि नलकूपों की भागेदारी लगभग 2 प्रतिशत बढ़ी है, जिसमें निजी नलकूपों ने ही अपनी हिस्सेदारी बढ़ाई, राजकीय नलकूपों की भागेदारी वर्ष 1980-81 की तुलना में कम हुई है। यदि समग्र दृष्टि से देखा जाय तो नहरों तथा नलकूपों की भागेदारी सम्पूर्ण सिंचित क्षेत्र में 97 प्रतिशत से भी अधिक है। 1970 से 1990 तक यह दोनों साधन सम्पर्ण सिंचित क्षेत्र का 90 प्रतिशत से भी अधिक हिस्सा सिंचित करते हैं। यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि 1970-71 में जहां कुओं द्वारा कुल सिंचित क्षेत्र का 5 प्रतिशत से भी अधिक हिस्सा सिंचित किया जाता था वहीं दो दशकों उपरान्त वर्ष 1990-91 में इनकी भागेदारी घटकर 1.89 प्रतिशत रह गई, जिससे यह स्पष्ट होता है कि जनपद में सिंचाई स्रोतों में कुओं का महत्व घटता जा रहा है, यही स्वभाव तालाबों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल का है।

सारणी क्रमांक 3.3 जनपद के समस्त विकास खण्डों की कृषि भूमि तथा सिंचित भूमि का प्रतिशत दर्शा रही है। सकल सिंचित क्षेत्रफल का शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल के प्रतिशत की दृष्टि से देखें तो ज्ञात होता है कि वर्ष 1984-85 में सबसे अच्छी स्थिति में भरथना विकास खण्ड है जिसका सकल सिंचित क्षेत्रफल 143.1 प्रतिशत है, इसके बाद ताखा विकास खण्ड का है जो 142.4 प्रतिशत सकल सिंचित क्षेत्रफल दर्शा रहा है। सकल सिंचित क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे खराब स्थिति में चकरनगर विकास खण्ड है जो केवल 103.4 प्रतिशत सकल क्षेत्र सिंचित कर रहा है, इस दृष्टि से यदि अन्य

ETAWAH DISTRICT

GROSS IRRIGATED AREA

1990-91

CROSS AREA IN PERCENT

148 AND ABOVE

137 - 148

126 - 137

115 - 126

BELOW - 115

0 20

KM
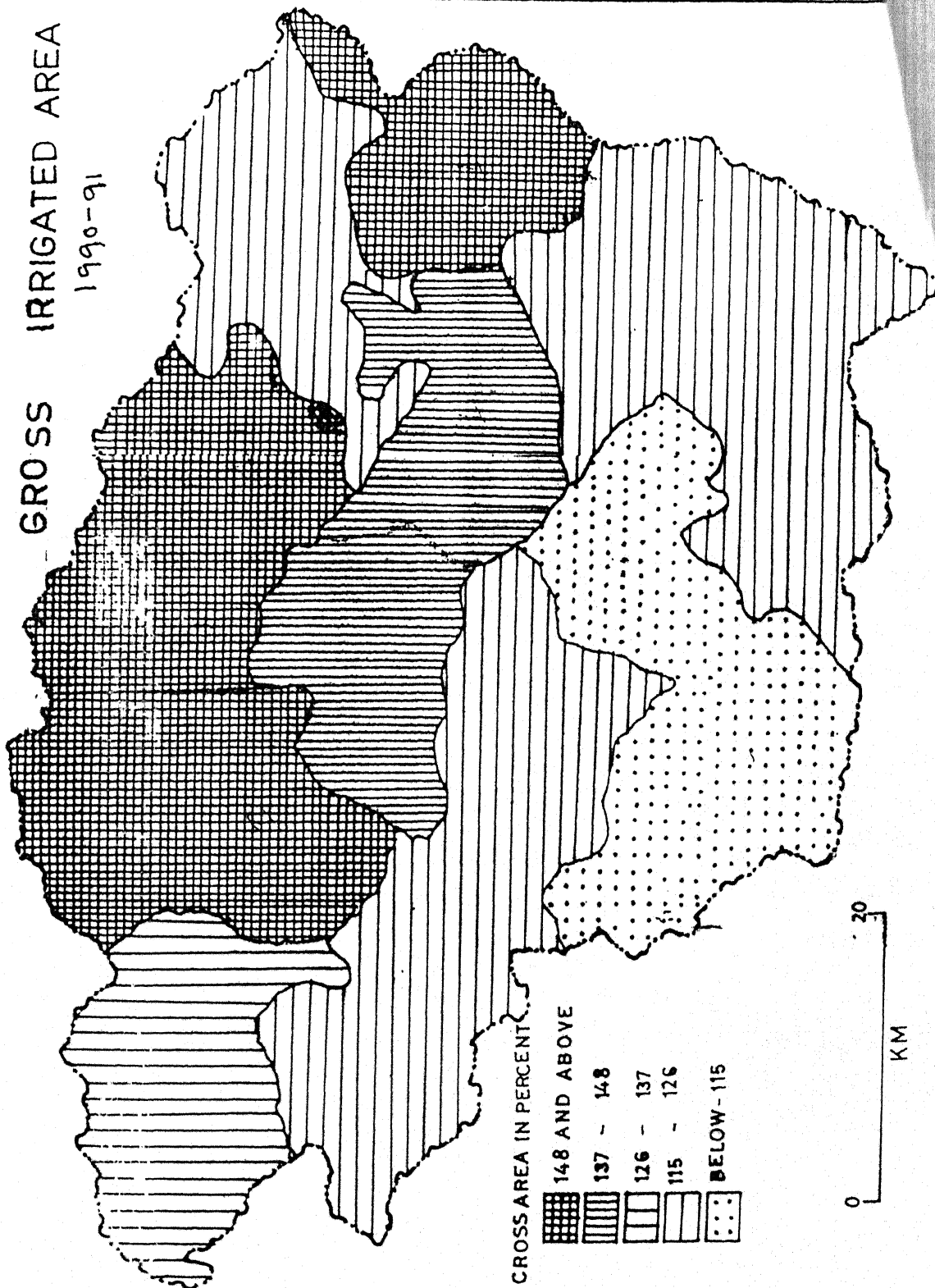
FIG.-12

तालिका क्रमांक 3.3

विकास खण्डवार विभिन्न फसलों का सिंचित क्षेत्रफल

क्र0स0	विकासखण्ड का नाम	सकल सिंचित क्षेत्रफल का शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल से प्रतिशत		शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल से प्रतिशत	
		1984-85	1990-91	1984-85	1990-91
1.	जसवन्तनगर	117.2	126.5	72.1	83.4
2.	बढ़पुरा	117.8	115.6	32.3	39.1
3.	बसरेहर	137.3	150.5	93.7	95.4
4.	भरथना	143.1	145.8	87.0	89.0
5.	ताखा	142.4	149.3	92.9	96.5
6.	महेवा	118.3	120.2	73.6	77.4
7.	चकरनगर	1033.4	104.1	06.0	10.3
8.	अछल्दा	128.2	137.4	81.9	86.2
9.	विधूना	136.9	121.2	85.2	92.9
10.	एरवाकटरा	138.6	159.8	84.1	91.7
11.	सहार	137.8	150.0	80.2	88.0
12.	औरैया	116.5	122.4	44.5	43.1
13.	अजीतमल	115.4	110.6	70.5	75.6
14.	भाग्य नगर	132.0	124.9	63.9	69.3
	जनपदीय	130.1	136.9	69.1	74.8

स्रोत: सांख्यिकी पत्रिका जनपद इटावा 1992

ETAWAH DISTRICT
NET IRRIGATED AREA 1990-91
AREA IN PERCENT
90 AND ABOVE
70 _ 90
50 _ 90
30 _ 50
BELOW_30
0
20
KM
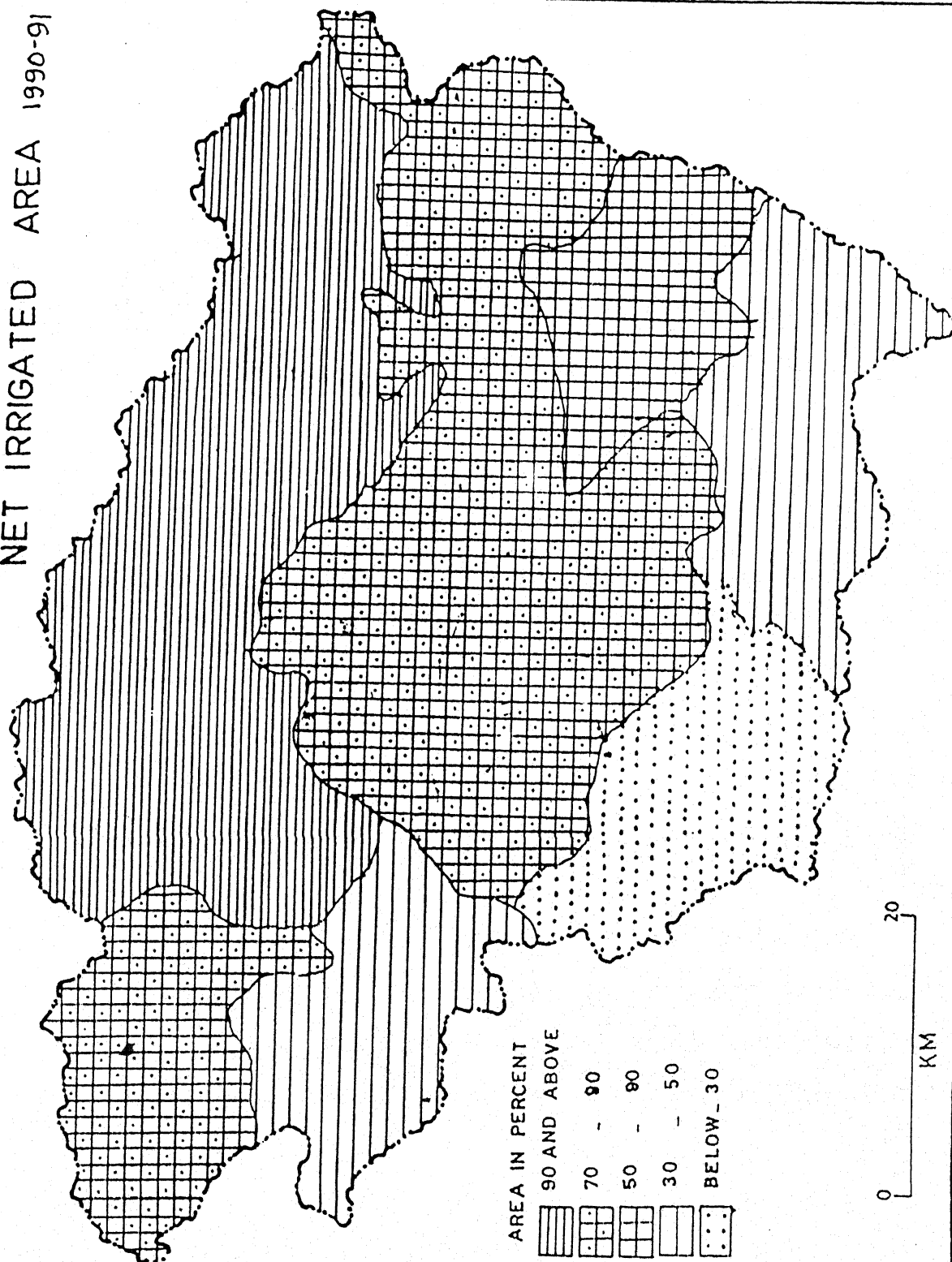
FIG.-13

विकास खण्डों पर विचार करें तो 130 से 140 प्रतिशत तक सकल सिंचित क्षेत्रफल रखने वाले पांच विकास खण्ड बसरेहर, विधूना, एरवाकटरा, सहार तथा भाग्यनगर है जो क्रमशः 137.3 प्रतिशत, 136.9 प्रतिशत, 138.6 प्रतिशत, 137.8 प्रतिशत, तथा 132.0 प्रतिशत सकल सिंचित क्षेत्र रख रहे हैं, शेष विकास खण्ड 110 से 130 प्रतिशत के मध्य में स्थित है। 1984-85 से 1990 - 91 के मध्य विकास खण्डों की सिंचन क्षमता की प्रगति की दृष्टि से देखें तो केवल चार विकास खण्डों बढ़पुरा, तथा अजीतमल भाग्यनगर तथा विधूना की ही अवनति हुई है, अन्य विकास खण्डों ने इस दृष्टि से न्यूनाधिक प्रगति ही की है, इनमें से सर्वाधिक उल्लेखनीय प्रगति एरवा कटरा विकास खण्ड ने की, जिसका सकल सिंचित क्षेत्रफल का शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल से जो प्रतिशत 1984 - 85 में 138.6 था वह बढ़कर 159.8 प्रतिशत हो गया जिसका अर्थ है कि इस विकास खण्ड ने 21.2 प्रतिशत सकल सिंचित क्षेत्रफल में वृद्धि की है। इसी प्रकार बसरेहर तथा सहार विकास खण्ड ने क्रमशः 13.2 प्रतिशत तथा 12.2 प्रतिशत सकल सिंचित क्षेत्रफल में वृद्धि की है, अन्य विकास खण्डों में जसवन्तनगर ने 9.3 प्रतिशत भरथना ने 2.7 प्रतिशत, ताखा ने 6.9 प्रतिशत, महेवा ने 1.9 प्रतिशत चकरनगर ने 0.7 प्रतिशत, अछल्दा ने 9.2 प्रतिशत, तथा औरैया ने 5.9 प्रतिशत सकल सिंचित क्षेत्रफल में वृद्धि की है।

शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल से प्रतिशत की दृष्टि से देखें तो वर्ष 1984 - 85 मे सबसे अच्छी स्थिति में बसरेहर विकास खण्ड रहा जो 93.7 प्रतिशत शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल दर्शा रहा है, जब कि 92.9 प्रतिशत शुद्ध सिंचित रखकर ताखा विकास खण्ड दूसरे स्थान पर है। इस दृष्टि से भी चकरनगर विकास खण्ड की सर्वाधिक दयनीय स्थिति है क्यों कि यह विकास खण्ड मात्र 6.0 प्रतिशत शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल दर्शा रहा है। इस दृष्टि से 80 प्रतिशत से अधिक शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल वाले विकास खण्डों में क्रमशः भरथना 87 प्रतिशत, अछल्दा 81.9 प्रतिशत, विधूना 85.2 प्रतिशत, एरवाकटरा 84.1 प्रतिशत तथा सहार 80.2 प्रतिशत आते हैं, अन्य विकास खण्ड न्यूनाधिक समान स्थिति में है, केवल दो विकास खण्डों बढ़पुरा, तथा औरैया को छोड़कर । अगले छः वर्षों में विकास खण्डवार कितनी प्रगति अथवा अवनति हुई है यह तथ्य वर्ष 1990-91 के आकड़ें दर्शा रहे हैं। सर्वाधिक प्रगति विकासखण्ड जसवन्तनगर ने इस दृष्टि से की है जिसने इन वर्षों में 11.3 प्रतिशत अतिरिक्त क्षेत्रफल को सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराई है। बढ़पुरा विकास खण्ड की प्रगति भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं क्यों कि

असमतल तथा ऊँची नीची भूमि रखते हुए भी इसने लगभग 7 प्रतिशत सिंचन क्षेत्रफल बढ़ाया है। 7 प्रतिशत या इससे अधिक सिंचित क्षेत्रफल में वृद्धि करने वाले विकास खण्डों में विधूना ने 7.7 प्रतिशत, एरवाकटरा ने 7.6 प्रतिशत तथा सहार ने 7.8 प्रतिशत सिंचित क्षेत्रफल बढाया है। 5 से 7 प्रतिशत तक वृद्धि करने वालों में से अजीतमल तथा भाग्यनगर कुल दो विकास खण्ड है जो क्रमशः 5.1 प्रतिशत तथा 5.4 प्रतिशत सिंचन क्षमता में वृद्धि की है। अन्य विकास खण्ड 5 प्रतिशत से कम सिंचन क्षमता में वृद्धि कर पा रहे हैं केवल औरैया विकास खण्ड को छोड़कर जो 1.4 प्रतिशत सिंचन क्षमता में कमी कर रहा है।

तालिका क्रमांक 3.4

विकास खण्डवार विभिन्न स्रोतों से सिंचित क्षेत्रफल

	विकासखण्ड का नाम	नहरों द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का कुल शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल से %		नलकूपों द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का कुल शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल से%		अन्य साधनों द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का कुल शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल से %	
		84-85	90-91	84-85	90-91	1984-85	1990-91
1.	जसवन्तनगर	34.0	67.0	53.7	30.2	12.3	2.8
2.	बढ़पुरा	49.6	38.5	42.4	61.0	8.0	0.5
3.	बसरेहर	67.6	70.4	19.3	26.5	13.1	2.9
4.	भरथना	77.3	80.5	16.5	18.0	6.2	1.5
5.	ताखा	70.1	63.3	24.7	34.5	5.2	2.2
6.	महेवा	67.6	70.1	21.2	29.3	11.2	0.4
7.	चकरनगर	-	-	96.6	88.4	3.4	11.6
8.	अछल्दा	60.9	46.9	33.7	50.7	5.4	2.4
9.	विधूना	59.5	57.2	32.8	39.1	7.7	3.7
10.	एरवाकंटरा	49.3	49.1	43.8	44.8	6.9	6.1
11.	सहार	59.8	52.1	32.9	44.6	7.3	3.3

12. औरैया	82.7	84.2	16.4	14.7	0.9	1.1
13. अजीतमल	74.5	67.8	24.9	31.5	0.6	0.7
14. भाग्यनगर	76.8	58.9	22.6	30.7	0.6	0.4
जनपदीय	65.4	63.4	28.3	34.2	6.3	2.4

स्रोत: सांख्यिकी पत्रिका जनपद इटावा 1992

तालिका क्रमांक 3.4 जनपद में विकास खण्डवार तथा स्रोतवार सिंचाई के प्रतिशत का दृश्य प्रस्तुत कर रही है। तालिका को देखने से ज्ञात होता है कि जनपद में सिंचाई के दो ही प्रमुख स्रोत हैं जिनमें नहरें प्रथम स्थान पर हैं तथा नलकूपों का स्थान दूसरा है। नहरों द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल को देखा जाय तो वर्ष 1984 - 85 की तुलना में वर्ष 1990 - 91 में नहरों की भागेदारी सम्पूर्ण जनपद में 2 प्रतिशत घटी है, जब कि नलकूपों की हिस्सेदारी 5.9 प्रतिशत बढ़ी है, अन्य स्रोतों का हिस्सा 4.1 प्रतिशत घटा है। जहां चकरनगर विकास खण्ड अपनी प्राकृतिक स्थिति के कारण नहरों से वंचित है वहीं औरैया विकास खण्ड दोनों ही समयावधियों में अपनी सर्वाधिक भूमि को इस साधन से सिंचित कर रहा है, स्वाभाविक है कि इस विकास खण्ड में नलकूपों की भागेदारी दोनों ही अवधियों में न्यूनतम है। वे विकास खण्ड जो 1984-85 में अपनी कुल शुद्ध सिंचित भूमि में से 70 प्रतिशत से अधिक भूमि नहरों द्वारा सिंचित करते है, भरथना 77.3 प्रतिशत, ताखा 70.1 प्रतिशत, अजीतमल 74.5 प्रतिशत, तथा भाग्यनगर 76.8 प्रतिशत है। 50 से 70 प्रतिशत के मध्य सिंचन सुविधा प्राप्त करने वाले विकास खण्डों में बसरेहर 67.6 प्रतिशत, महेवा 67.6 प्रतिशत, अछल्दा 60.9 प्रतिशत, विधूना 59.5 प्रतिशत तथा सहार 59.8 प्रतिशत है। शेष विकास खण्ड 40 तथा 50 प्रतिशत के मध्य यह सुविधा प्राप्त करते हैं, केवल जसवन्तनगर की भागेदारी मात्र 34 प्रतिशत है। वर्ष 1990 - 91 में इसी दृष्टि से देखा जाय तो केवल चार विकास खण्ड जसवन्तनगर, बसरेहर, भरथना तथा महेवा ही भागेदारी बढ़ा रहे हैं, जब कि अन्य विकास खण्ड न्यूनाधिक इस साधन की हिस्सेदारी कम करते हैं। भागीदारी बढाने वालों मे से जसवन्त नगर सर्वाधिक लगभग दुगनी हिस्सेदारी मे वृद्धि कर रहा है।

नलकूपों में राजकीय तथा निजी स्वामित्व वाले नलकूपों की सम्मिलित हिस्सेदरी दर्शाई गई है। सभी विकास खण्डों में नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल का महत्वपूर्ण स्थान है। वर्ष 1990-91 में 50 प्रतिशत से अधिक हिस्सेदारी करने वाले विकास खण्डों में चकरनगर प्रथम बढ़पुरा, द्वितीय तथा अछल्दा तृतीय स्थान पर हैं। इनके अतिरिक्त इस साधन द्वारा 30 प्रतिशत से अधिक हिस्सेदारी जसवन्त नगर ताखा, विधूना, एरवाकटरा, सहार तथा अजीतमल तथा भाग्यनगर विकासखण्डों की हो रही हैं। इनमें से एरवाकटरा तथा सहार लगभग समान स्थिति में है।

तालिका क्रमांक 3.5

जनपद में सिंचाइ साधनों की स्थिति 31 मार्च 1992

विकासखण्ड का नाम	नहरों की लम्बाई किमी०	राजकीय नलकूप संख्या	पक्के कूप संख्या	रहट संख्या	भूस्तरीय स्रोतोंपर लगेपम्प सेट	बोरिंगपर लगे पम्प सेट	निजीनलकूप संख्या
1. जसवन्तनगर	99	78	1411	1411	11	3280	541
2. बढ़पुरा	43	77	202	202	29	1240	152
3. बसरैहर	227	2	1734	1677	32	3540	211
4. भरथना	125	-	345	345	8	2638	156
5. ताखा	124	25	519	490	9	2513	127
6. महेवा	146	23	66	66	31	2177	491
7. चकर नगर	-	42	-	-	26	374	97
8. अछल्दा	140	15	627	603	29	3426	92
9. विधूना	33	30	587	574	25	3629	73
10. एरवाकटरा	86	22	327	325	12	3333	205
11. सहार	44	53	497	494	10	3175	98
12. औरैया	138	72	59	37	15	1261	134

क्रमशः

13.अजीतमल	93	24	95	38	16	1816	272
14.भाग्यनगर	126	28	72	65	11	2673	204
15.योग ग्रामीण	1424	491	6541	6327	264	35075	2853
16.योग नगरीय	6	7	11	11	-	65	8
17.योग जनपद	1430	498	6552	6338	264	35140	2861

स्रोतः सांख्यिकी पत्रिका जनपद इटावा, 1992

तालिका क्रमांक 3.5 जनपद में विकास खण्डवार सिंचाई के स्रोतों को दर्शा रही है। सिंचाई साधनों में नहरों तथा नलकूपों का ही महत्वपूर्ण स्थान है, जनपद में चार प्रकार के नलकूप । पम्पिंग सेट दृष्टिगत हो रहे हैं। नलकूप चाहे राजकीय स्वामित्व में हो या निजी स्वामित्व में दोनों ही स्वामित्व वाले नलकूप विद्युत चालित है। पम्पिंग सेट चाहे भू स्तरीय जल स्रोतों पर लगे हो या बोरिंग पर समस्त डीजल चालित है। नहरों की लम्बाई पर विचार करें तो बसरेहर विकास खण्ड में 227 कि0 मी0 लम्बी नहरें कृषि भूमि को सिंचित करके प्रथम स्थान पर हैं, इसके विपरीत चकरनगर विकास खण्ड इस सुविधा से पूर्णतया वंचित है। नहरों की उपलब्धता के दृष्टिकोण से विधूना बढ़पुरा, तथा सहार, विकास खण्ड न्यूनाधिक एक समान स्थिति में है। राजकीय नलकूपों पर विचार करें तो जसवंतनगर तथा बढ़पुरा विकास खण्ड क्रमशः 78 एवं 77 नलकूपों की सुविधा प्राप्त कर रहे है वहीं पर भरथना विकासखण्ड इस दृष्टि से राजकीय नलकूप विहीन है, इसके उपरान्त बसरेहर विकास खण्ड मात्र 2 राजकीय नलकूपों से ही काम चल रहा है जिस कमी को नहरें द्वारा पूरा किया जा रहा है। औरैया विकास खण्ड भी राजकीय नलकूपों की दृष्टि से अत्याधिक धनी है जहां 72 नलकूप सिंचन सुविधा, उपलब्ध करा रहे हैं। सहार तथा चकरनगर विकास खण्डों में भी राजकीय नलकूप क्रमशः 53 तथा 42 लगे हुए है। अन्य विकास खण्डों की स्थिति कमोवेश समान दृष्टिगोचर हो रही है। जहां तक निजी स्वामित्व वाले नलकूपों का सवाल है तो महेवा विकास खण्ड 491 नलकूप दर्शाकर प्रथम स्थान पर है जब कि जसवन्तनगर 541 नलकूपों सहित दूसरे स्थान पर है। अजतीमल भाग्यनगर, एरवाकटरा, तथा बसरेहर भी क्रमशः 272, 204, 205 तथा 211

नलकूपों की उपस्थिति दर्शा रहे हैं। 100 या सौ से अधिक नलकूपों को रखने वाले बढ़पुरा, भरथना, ताखा, तथा औरैया, विकास खण्ड है, शेष विकासखण्ड चकरनगर, अछल्दा, विधूना, तथा सहार, अपने - अपने सीमा क्षेत्रों में 100 से कम निजी स्वामित्व वाले नलकूपों का ब्यौरा दे रहे हैं।

भू स्तरीय स्रोतो पर लगे तथा बोरिंग पर लगे पम्पसेट कम अश्वशक्ति वाले होते हैं जिनकी सिंचन क्षमता भी कम होती है। इस दृष्टि से देखा जाय तो 3000 से अधिक संख्या में कम अश्वशक्ति वाले पम्प सेटों से सिंचाई सुविधा प्राप्त करने वाले विकास खण्डों में जसवन्तनगर, बसरेहर, अछल्दा, विधूना एरवाकटरा, तथा सहार है। जब कि भरथना, ताखा, तथा भाग्यनगर विकास खण्ड भी 2500 से अधिक पम्पसेटस रखकर इस दृष्टि से अपनी जोरदार उपस्थिति दर्शा रहे हैं, चकर नगर विकास खण्ड इस दृष्टि से भी निम्नस्तरीय प्रदर्शन कर रहा है, जब कि औरिया तथा बढ़पुरा विकास खण्ड लगभग एक समान संख्या दर्शा रहे हैं, महेवा विकास खण्ड 2177 पम्पिंग सेटस द्वारा सिंचाई करके अपने महत्व को स्वीकार करवा रहा है।

जनपद में पक्के कुओं से रहट या चेनपम्प (पर्सियन ह्वील) से जल निकाल कर सिंचाई की जाती है यद्यपि पक्के कूपों की संख्या नगण्य नहीं है परन्तु इनकी सिंचन क्षमता अत्यन्त कम होने के कारण सम्पूर्ण सिंचित क्षेत्र में अपना कोई महत्वपूर्ण योगदान नहीं दे पा रहे हैं, परन्तु फिर भी लघु एवं सीमान्त कृषकों के लिए ये अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं, अधिकतर जायद फसलों तथा सब्जियों से युक्त भूमियों पर इस साधन से की गई सिंचाई अत्यन्त लाभदायक होती है क्यों कि इसमें पानी की गति कम होने के कारण भूमि में अधिक गहराई तक नमी पहुँचाने की क्षमता होती है। जनपद में 6552 पक्के कुओं में 6338 कुओं पर या तो रहट लगे हैं या पर्सियन ह्वील जो जनपद की 4086 हेक्टेयर भूमि को सिंचाई सुविधा उपलब्ध करा रहे हैं।

सारणी क्रमांक 3.6 जनपद में विकास खण्डवार विभिन्न साधनों द्वारा स्रोतानुसार सिंचित क्षेत्रफल को दर्शाया गया है। सारणी से ज्ञात होता है कि जनपद में नहरों और नलकूपों का ही स्थान प्रमुख है।

तालिका क्रमांक 3.6 जनपद में विकास खण्डवार विभिन्न साधनों द्वारा स्रोतानुसार सिंचित क्षेत्रफल (हेक्टेयर में) वर्ष 1990-91.

क्र0सं0 विकास खण्ड का नाम	कुल सिंचित क्षेत्रफल	नहरों द्वारा		नलकूपों द्वारा			कुए		तालाब		अन्य	
		क्षेत्रफल	प्रतिशत	राजकीय	निजी	प्रतिशत	क्षेत्रफल	प्रतिशत	क्षेत्रफल	प्रतिशत	क्षेत्रफल	प्रतिशत
1. जसवन्त नगर	22,560	15,123	67.03	2877	3,940	30.22	310	1.37	200	0.89	110	0.49
2. बढ़पुरा	6.566	2,526	38.47	1615	2,390	61.0	35	0.53	–	–	–	–
3. बसरेहर	26,577	18,724	70.45	593	6,457	26.53	397	1.49	127	0.48	279	1.05
4. भरथना	16,903	13,608	80.51	–	3,040	17.98	169	1.00	2	0.01	84	0.50
5. ताखा	17,232	10,912	63.32	330	5.621	34.53	350	2.03	7	0.04	12	0.07
6. महेवा	18.113	12.702	70.13	177	5,126	29.28	38	0.21	3	0.02	67	0.37
7. चकरनगर	1,641	–	–	210	1,241	88.42	157	9.57	–	–	33	2.01
8. अछल्दा	16,753	7.854	46.88	508	7,986	50.71	330	1.97	38	0.22	37	0.22
9. विधूना	18,604	10,645	57.22	857	6,408	39.06	626	3.36	45	0.24	23	0.12
10. एखा कटरा	14,568	7.151	49.09	794	5,733	44.80	882	6.05	8	0.06	–	–
11. सहार	17,833	9,289	52.09	956	6,988	44.55	572	3.21	21	0.12	7	0.04
12. औरैया	12,637	10,639	84.19	850	1.001	14.65	90	0.71	15	0.12	42	0.33
13. अजीतमल	12,668	8.589	67.80	288	3,702	31.50	61	0.48	2	0.02	26	0.20
14. भाग्यनगर	13,647	9,397	68.86	580	3,605	30.67	48	0.35	8	0.06	9	0.06
ग्रामीण योग	2,16,302	1,37,159	63.41	10635	63,238	34.15	4.065	1.88	476	0.22	729	0.34
योग नगरीय	264	44	16.67	3	152	58.71	21	7.95	–	–	44	16.67
योग जनपद	216566	1,37,203	63.35	10638	63390	34.18	4,086	1.89	476	0.22	773	0.36

साँख्यिकीय पत्रिका जनपद इटावा 1992

अन्य साधनों का सिंचाई में योगदान कोई अधिक महत्वपूर्ण नहीं है। विकासखण्डवार यदि देखें तो प्रतिशत की दृष्टि से औरैया विकासखण्ड 84.19 प्रतिशत सिंचाई सुविधा नहरों द्वारा प्राप्त कर रहा है, परन्तु क्षेत्रफल केवल 10639 हेक्टेयर ही सिंचित हो रहा है, जबकि बसरेहर विकासखण्ड नहरों द्वारा 18724 हेक्टेयर क्षेत्रफल सिंचित कर रहा है, परन्तु फिर भी 70.45 प्रतिशत सिंचन सुविधा प्राप्त कर समस्त विकास खण्डों तीसरे स्थान पर है। चकरनगर विकास खण्ड अभी तक इस सुविधा से वंचित है। नलकूपों द्वारा भी सिंचाई सुविधा का जनपद में एक महत्वपूर्ण स्थान है, जनपद का कुल सिंचित क्षेत्रफल में से 34.18 प्रतिशत क्षेत्रफल नलकूप ही सिंचाई सुविधा उपलब्ध करवा रहे हैं, इस दृष्टि से देखा जाय तो अछल्दा विकास खण्ड अपने समस्त सिंचित क्षेत्रफल का आधे से अधिक भाग नलकूपों द्वारा सिंचित करता है, क्यों कि यहां पर नहरों की मात्र 46.88 प्रतिशत ही भागेदारी है। एक आश्चर्यजनक तथ्य यह स्पष्ट हो रहा है कि औरैया विकास खण्ड में नलकूपों की भागेदारी मात्र 14.65 प्रतिशत कर रहा है, जबकि इस विकास खण्ड में 72 राजकीय नलकूप हैं और इनका सिंचित क्षेत्रफल मात्र 850 हेक्टेयर है इस प्रकार प्रति नलकूप लगभग 11.5 हेक्टेयर भूमि सिंचित हो रही है, जबकि इसके विपरीत अछल्दा विकासखण्ड में मात्र 15 राजकीय नलकूप है जिनका सिंचित क्षेत्रफल 508 हेक्टेयर है इस प्रकार इस विकास खण्ड में प्रति नलकूप 33.87 हेक्टेयर भूमि सिंचित हो रही है, यदि औरिया और अछल्दा विकास खण्ड से इस दृष्टि से तुलना करें तो औरैया की अपेक्षा अछल्दा विकास खण्ड राजकीय नलकूपों की सिंचन क्षमता का लगभग तीन गुना उपभोग कर रहा है। स्पष्ट है कि विकासखण्डों में सिंचन क्षमता का कुशलतम उपयोग नहीं किया जा रहा है। इसी प्रकार यदि निजी नलकूपों की दृष्टि से भी देखा जाये तो औरिया विकास खण्ड में इनकी सिंचन क्षमताओं का भी कुशलता से उपभोग नहीं किया जा रहा है। फिर भी समग्र दृष्टि से देखा जाये तो जनपद में सिचाई की स्थिति संतोषजनक कही जायेगी ।

जनपद में सिंचन क्षमता का उपयोग

सिंचाई नीति के दो महत्वपूर्ण आयाम होते हैं। 1. सृजित सिंचन क्षमता का उपयोग 2. सिंचन क्षमता का विकास । इनके द्वारा सिंचन सम्भावना का अधिकतम उपयोग किया जा सकता है। जल संसाधन की उपलब्धि और गुणवत्ता बनाए रखने के लिए जल संसाधन का सम्यक प्रयोग एवं उचित जल प्रबन्ध

आवश्यक है। जल प्रबन्ध का उद्देश्य, जल संरक्षण करना, वातावरण में सम्यक नमी बनाए रखना और कृषि तथा गैर कृषि कार्यो में उपयोग के लिए जल आपूर्ति का सम्यक स्तर बनाए रखना चाहिए । इसके साथ ही जल अपव्यय को रोकना तथा सृजित सिंचन क्षमता का अधिकतम उपयोग वांछित होता है। जल को व्यर्थ जाने से रोकने का अर्थ है कि जल को भूमि सीमा में अधिक रोकना, भले ही जल का यह संरक्षण नमी के रूप में ही क्यों न हो। मिटटी में अधिक नमी से शस्य सम्पदा बढ़ती है।

योजनाकाल के बाद विशेष रूप से हरित क्रान्ति के बाद निर्विवाद रूप से जनपद की सिंचन क्षमता सिंचित क्षेत्र और सिंचाई सुविधा में प्रसार हुआ है। सिंचित क्षेत्र के प्रसार की दर में भी लगातार वृद्धि हुई है। परन्तु अभी भी शुद्ध कृषित क्षेत्र में शुद्ध सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत अपेक्षित स्तर नहीं प्राप्त कर सका है यही स्थिति कुल कृषि क्षेत्र में कुल सिंचित क्षेत्र की है। सिंचित क्षेत्र पर भी जल की सामयिक उपलब्धि वांछित हो जाने के कारण उपज अपेक्षित स्तर तक नही बढ़ सकी है। राष्ट्रीय प्रदर्शन फार्मो में समुचित जल प्रबन्ध और सम्यक कृषि प्रविधियों को अपनाने से प्रति हैक्टेयर अनाज उत्पादन 4 से 5 टन तक होता है परन्तु जनपद की वास्तविक स्थिति यह है कि सिंचित कृष्य भूमि पर भी अनाज का उत्पादन स्तर केवल 2 से 2 टन प्रति हेक्टेयर है। अतः उत्पादन स्तर 4 से 5 टन तक पहुँचाने के लिए अभी बहुत कुछ करना शेष है। जनपद में सृजित सिंचन क्षमता का अपेक्षित स्तर तक अभी भी उपयोग नही हो पा रहा है साथ ही कतिपय स्थानों पर सिंचाइ साधनों के विकास ने जल भराव और क्षारीयता उत्पन्न कर दी है। इस समस्या के कारण सिंचित क्षेत्रों में भी कृषक उन्नत बीज, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाओं और उन्नत कृषि यंत्रों के प्रयोग के प्रति अनिच्छुक हो रहे हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि सृजित सिंचन क्षमता का उपयोग न केवल अधिकतम किया जाना चाहिए बल्कि जल का प्रयोग भी कुशलता से ही किया जाना चाहिए जिससे सिंचित क्षेत्र से अधिक लाभदायक उपज प्राप्त की जा सके। 1978 में किए गये वर्गीकरण के अनुसार 10 हजार हेक्टेयर से अधिक समादेश क्षेत्रवाली परियोजनाएं वृहद और 2 हजार से 10 हजार हैक्टेयर समादेश क्षेत्र वाली परियोजनाओं को मध्यम सिंचाइ परियोजनाएं कहा जाता है। वे सिंचाइ परियोजनाएं जिनका समादेश क्षेत्र 2 हजार हैक्टेयर से कम है लघु परियोजनाएं कहलाती है। वृहत एवं मध्यम सिंचाई परियोजनाओं में सामान्यतः बहुउददेशीय नदी

तालिका क्रमांक 3.7 जनपद में विकास खण्डवार विभिन्न साधनों द्वारा सृजित सिंचन क्षमता का उपयोग वर्ष 1990–91

क्र0 सं0 विकास खण्ड का नाम	नहरें			राजकीय नलकूप			निजी नलकूप/पम्पिंग सेट			कुएं/रहट/नर्सियल ह्वील			अन्य साधनों द्वारा सिंचित क्षेत्र
	लम्बाई कि0मी0	सिंचित क्षेत्रफल (है0)	प्रति कि0 मी0 सिंचित क्षेत्र	संख्या	सिंचित क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रति नलकूप सिंचित क्षेत्र	संख्या	सिंचित क्षेत्रफल (है0)	प्रति सेट सिंचित क्षेत्र	संख्या	सिंचित क्षेत्र	प्रति कुँआ सिंचित क्षेत्र	
1. जसवन्त नगर	99	15123	152.76	78	2877	36.88	3832	3940	1.03	1411	310	0.22	310
2. बढपुरा	43	2526	58.74	77	1615	20.97	1421	2390	1.68	202	35	0.17	–
3. बसरेहर	227	18724	82.48	02	593	296.50	3783	6457	1.71	1677	397	0.24	406
4. भरथना	125	13608	108.86	–	–	–	2802	3040	1.08	345	169	0.49	86
5. ताखा	127	10912	85.92	25	330	13.2	2649	5621	2.12	490	350	0.71	19
6. महेवा	146	12702	87.00	23	177	7.69	2699	5126	1.90	66	38	0.58	70
7. चकरनगर	–	–	–	42	210	5.00	497	1241	2.50	N.A.	157	–	33
8. अछल्दा	140	7854	56.1	15	508	33.87	3547	7986	2.25	603	330	0.55	75
9. विधूना	33	10645	322.57	30	857	28.57	3727	6408	1.72	574	626	1.09	68
10. एरवाकटरा	86	7151	83.15	22	794	36.09	3550	5733	1.61	325	882	2.71	8
11. सहार	44	9289	211.11	53	956	18.04	3283	6988	2.13	494	572	1.16	28
12. औरैया	138	10639	77.09	72	850	11.81	1410	1001	0.71	37	90	2.43	57
13. अजीतमल	93	8589	92.35	24	288	12.00	2104	3702	1.76	38	61	1.60	28
14. भाग्यनगर	126	9397	74.58	28	580	20.71	2888	3605	1.25	65	48	0.74	17
ग्रामीण योग	1424	137159	96.32	491	10635	21.66	38192	63238	1.66	6327	4065	0.64	1205
योग नगरीय	6	44	7.33	7	3	.43	73	152	2.08	11	21	1.91	44
योग जनपद	1430	137203	95.95	498	10638	21.36	38265	63390	1.66	6338	4086	0.64	1249

स्रोत सॉंख्यिकीय पत्रिका जनपद इटावा, 1992 N.A. उपलब्ध नहीं

घाटी परियोजनाएं सम्मिलित है जबकि लघु सिंचाई परियोजनाओं में राजकीय नलकूप, निजी नलकूप, डीजल चालित पम्पसैट, कुएं तथा तालाब आते हैं। जनपद में मध्यम तथा लघु परियोजनाओं के अन्तर्गत सिंचाई साधन प्रचलित हैं इन साधनों द्वारा किस सीमा तक सृजित क्षमता का उपयोग किया जा रहा है, इसका विवरण तालिका क्रमांक 3.7 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 3.7 जनपद में विकास खण्डवार विभिन्न साधनों द्वारा सृजित सिंचन क्षमता का उपयोग दर्शा रही है। सारणी से ज्ञात होता है कि जहां जनपद में नहरों की कुल लम्बाई 1430 कि0 मी0 है, जिसकी उपलब्धता सन्तोषजनक कही जायेगी परन्तु इस साधन द्वारा केवल 137203 हैक्टेयर कृषि भूमि ही सिंचित की जा पा रही है अर्थात प्रति किलोमीटर केवल 95.95 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र को जल उपलब्ध हो पा रहा है जो कि एक असन्तोष जनक स्थिति कही जायेगी क्यों कि नहरों के जल का यदि कुशलता पूर्वक उपयोग किया जाय तो औसत रूप में 200 हेक्टेयर प्रति किलोमीटर कृषि भूमि को सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराई जा सकती है। इस औसत को यदि सामान्य माना जाये तो जनपद की कुल 286000 हेक्टेयर भूमि को सिंचित किया जा सकता है, अर्थात सिंचित क्षेत्र (वर्तमान) को दुगने से भी अधिक बढाया जा सकता है। विकासखण्ड वार यदि विचार करें तो केवल दो ही विकासखण्ड विधूना तथा सहार ही इस स्तर को पार कर रहे हैं, अन्य विकास खण्डों की स्थिति तो यह है कि वे 100 हेक्टेयर प्रति किलोमीटर की दर से भी नहरों के जल का उपयोग नहीं करवा रहे हैं, केवल दो विकास खण्डों को छोड़कर, जिनकी उपयोग क्षमता 100 हेक्टैयर प्रति किलोमीटर से अधिक है इनमें से एक तो जसवन्तनगर विकास खण्ड जो 152.76 हेक्टेयर प्रति कि0 मी0 की दर से नहरों के जल का उपयोग कर रहा है, तथा दूसरा विकास खण्ड भरथना है, जहां 108.86 हेक्टेयर प्रति कि0 मी0 की दर से जल प्रयोग किया जा रहा है।

इसी प्रकार राजकीय नलकूपों पर एक दृष्टि डालें तो यह लगता है कि विभिन्न विकास खण्डों में सिंचाई क्षमता के उपयोग की दृष्टि से बहुत अधिक भिन्नता है, जहां बसरेहर विकास खण्ड में प्रति नलकूप 296.50 हेक्टेयर कृषि भूमि को सिंचित करके राजकीय नलकूपों की सिंचन क्षमता का सर्वाधिक कुशलतम उपयोग किया जा रहा है वहीं पर चकरनगर विकास खण्ड मात्र 5 हेक्टैयर प्रति नलकूप की दर

से अपनी कृषि भूमि को सिंचाई सुविधा उपलब्ध करवा रहा है परन्तु इस विकासखण्ड की प्राकृतिक स्थिति, ऊँची नीची असमतल भूमि, के कारण यह माना जा सकता है कि यह विकासखण्ड चाहकर भी नलकूपों की सिंचन क्षमता का कुशलतम उपयोग नही कर सकता है लेकिन महेवा विकास खण्ड की स्थिति चकरनगर विकासखण्ड की स्थिति से कोई अधिक भिन्न नहीं दिखाई पड़ रही है, यह विकास खण्ड भी मात्र 7.69 हेक्टेयर प्रति नलकूप सिंचन क्षमता का उपयोग कर पा रहा है जब कि यह विकास खण्ड आधुनिक तकनीकी युक्त कृषि करने में अन्य विकास खण्डों में अग्रणी माना जाता है साथ ही कृषि कार्यो हेतु उपलब्ध भूमि भी समतल है, परन्तु फिर भी नलकूपों द्वारा सिंचन क्षमता का अत्यल्प उपयोग एक न समझ में आने वाला तथ्य है। यदि राजकीय नलकूपों की सिंचन क्षमता औसत रूप में 50 हेक्टेयर प्रति नलकूप मानकर चलें तो भी बसरेहर विकास खण्ड को छोड़कर अन्य विकास खण्ड इस स्तर के आस पास भी नही है, हाँ 30 से 40 हेक्टेयर प्रति नलकूप सिंचन क्षमता का उपयोग करने वाले विकास खण्डों में जसवन्तनगर 36.88 हेक्टेयर, एरवाकटरा 36.09 हेक्टेयर तथा अछल्दा 33.87 हेक्टेयर हैं। अन्य विकास खण्ड 10 से 20 हेक्टेयर प्रति नलकूप सिंचन क्षमता का उपयोग कर रहे हैं। यदि राजकीय नलकूप सिंचन क्षमता के जनपदीय औसत से विचार करें तो भी इस स्तर से अधिक औसत उपयोग वाले विकास खण्डों में बसरेहर, जसवन्तनगर, अछल्दा, विधूना तथा एरवाकटरा, विकासखण्ड ही हैं। यदि 50 हेक्टेयर प्रति नलकूप औसत सिंचन क्षमता का पैमाना माना जाये तो जनपद के 498 नलकूप वर्तमान सिंचित क्षेत्रफल 10638 हेक्टेयर के दुगने से भी अधिक 24900 हेक्टेयर कृषि भूमि को सिंचाई उपलब्ध करवा सकते हैं। स्पष्ट है कि राजकीय नलकूपों द्वारा अपने दायित्व का निर्वाह कुशलता पूर्वक नहीं किया जा रहा है जिस कारण जल की लागत आवश्यक बढ़ती है, और यह भार अनावश्यक कृषकों पर ही पड़ता है। इस साधन द्वारा सिंचन क्षमता का पूर्ण उपयोग न कर पाने के दो कारण समझ में आते हैं। प्रथम तो इन नलकूपों में से औसत रूप में आधे से अधिक तकनीकी खराबी के कारण वर्ष भर बन्द पड़े रहते हैं। दूसरे जो नलकूप ठीक भी हैं और सिंचाई कार्य करने के लिए तत्पर भी है, उन्हें नियमित विद्युत आपूर्ति नहीं हो पा रही है, जिस कारण राजकीय नलकूपों की विश्वसनीयता भी कृषकों के मध्य निम्न स्तरीय रह गई है, जो इनके प्रति कृषकों के आकर्षण को भी कम करती जा रही है। अतः सिंचन क्षमता का पूर्ण उपयोग हो सके, इसके लिए इस साधन को नियमित विद्युत आपूर्ति के सार्थक प्रयास किये जाने चाहिए , साथ ही

तकनीकी खराबी के कारण बन्द पड़े नलकूपों की उचित देखभाल तथा मरम्मत की व्यवस्था की जानी चाहिए, अन्यथा सिंचाई का यह एक महत्वपूर्ण साधन सफेद हाथी बनकर रह जायेगा ।

निजी स्वामित्व वाले नलकूपों तथा डीजल चालित पम्प सेट्स जो भू स्तरीय जल का प्रसार तथा बोरिंग से जल की निकासी करके जल प्रसार करते है, की दृष्टि से देखा जाये तो इनकी वर्तमान उपयोग क्षमता अत्यन्त निम्न है, इस साधन का जनपदीय औसत 1.66 हेक्टेयर प्रति नलकूप/पम्पिंग सेट है, इससे अधिक तो किसी किसी विकास खण्ड में रहट की औसत सिंचन क्षमता है, उदाहरण के लिए एरवाकटरा विकास खण्ड में रहट द्वारा 2.71 हेक्टेयर प्रति रहट की दर से सिंचन क्षमता का उपयोग हो रहा है, इसी प्रकार औरैया विकास खण्डों में 2.43 हेक्टेयर प्रति रहट जल का उपयोग किया जा रहा है। यदि निजी नलकूपों / पम्पिंग सेट्स द्वारा सिंचन क्षमता का अति निम्न स्तरीय उपयोग हो रहा है तो इसके मूल में दो ही कारण समझ में आ रहे हैं। एक तो निजी स्वामित्व वाले नलकूपों / पम्पिंग सेट्स के मालिकों द्वारा केवल अपनी भूमि को ही जल सुविधा उपलब्ध कराना । दूसरे डीजल तथा पम्पिंग सेटस की कीमत अधिक होने के कारण इस साधन की जल की लागत अधिक है जिससे छोटे तथा सीमान्त कृषक इस सुविधा को क्रय करने में असमर्थ हैं। निजी स्वामात्वि वाले नलकूप तथा पम्पिंग सेट्स तो अधिकांश कृषकों द्वारा नहरों के पानी की उपलब्धता की अनिश्चितता तथा राजकीय नलकूपों की वांछित विद्युत आपूर्ति के कारण सिंचाई सुविधा की अनिश्चित स्थिति से बचाए रखने हेतु उपयोग किए जा रहे है, और यही कारण है कि ये साधन अत्यन्त निम्न औसत उपयोग क्षमता को प्रदर्शित कर रहा है। यदि प्रति पम्पिंग सेट की औसत सिंचन क्षमता 10 हेक्टेयर की मान लें तो जनपद में इस साधन द्वारा ही कुल 382650 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र की सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराई जा सकती है। जबकि जनपद का सकल बोया गया क्षेत्रफल कुल 425337 हेक्टेयर ही है।

न्यूनाधिक यही स्थिति कुओं द्वारा जल आपूर्ति साधनों की है। जनपद में कुल 6338 कुएं ऐसे हैं जिन पर रहट अथवा पर्सियन वील लगे हुए हैं, और ये साधन कुल 4086 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र के जल आपूर्ति करते हैं जिसकी औतसत सिंचन क्षमता 0.64 हेक्टेयर है। केवल छः विकास खण्ड विधूना, 1.09

हेक्टेयर, एरवाकटरा 2.7 हेक्टेयर, सहार, 1.16 हेक्टेयर, औरैया 2.43 हेक्टेयर, अजीतमल 1.60 हेक्टेयर, तथा भाग्य नगर 0.74 हेक्टेयर, ही ऐसे है जो इस साधन द्वारा जनपदीय औसत सिंचन क्षमता से अधिक क्षमता का उपयोग कर पा रहे हैं, अन्य विकास खण्ड जनपदीय औसत से निचले स्तर की उपयोग क्षमता को प्रदर्शित कर रहे हैं। इनमें से एरवाकटरा तथा औरैया विकास खण्ड ऐसे है, जो इस साधन का सर्वाधिक कुशलता से उपयोग करते हुए जनपद के निजी स्वामित्व वाले नलकूपों / पम्पिंग सेट्स की औसत सिंचन क्षमता 1.66 हेक्टेयर प्रति नलकूप / पाम्पिंग सेटस के स्तर को भी पार कर रहे हैं, यह इस बात का संकेत है कि यदि इस साधन का कुशलता पूर्वक उपयोग किया जाय तो सम्पूर्ण जनपद में इस साधन द्वारा सिंचित क्षेत्रफल, राजकीय नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल से भी अधिक हो सकता है । इस साधन द्वारा सिंचाई करने के प्रत्यक्ष दो लाभ हैं, एक तो इस साधन द्वारा भूमि में पानी की गति कम होने के कारण भूमि की जल ग्रहण क्षमता अधिक होती है जिससे भूमि में नमी को अधिक समय तक बनाए रखा जा सकता है। दूसरे इस साधन की लागत कम होने के कारण लघु और सीमान्त कृषकों के लिए अत्यन्त उपयोगी है साथ ही इस साधन द्वारा पशु शक्ति का भी उपयोग हो जाता है। इस लिए इस साधन पर कम व्यय करके अधिक प्रतिफल प्राप्त किया जा सकता है। सब्जियों तथा मसाले की फसलों की सिंचाई के लिए तो यही साधन सर्वोत्तम माना जाता है, क्यों कि इन फसलों का उत्पादन छोटे पैमाने पर अधिकांश लघु एवं सीमान्त कृषकों द्वारा ही किया जाता है। अतः इस परम्परागत की उपेक्षा नहीं की जा सकती है। जनपद में इस साधन का सिंचाई के क्षेत्र में गैर महत्वपूर्ण स्थान है, अतः इसे प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

स्पष्ट है कि सिंचन क्षमता के सृजन तथा उपयोग के मध्य व्याप्त, अन्तराल एक खटकने वाला तथ्य है, सिंचन क्षमता की दृष्टि से यदि देखा जाय तो जनपद में सकल बोये गये क्षेत्र के लिए सिंचन क्षमता सृजित की जा चुकी है, परन्तु अभी भी सकल बोये गये क्षेत्र के 74.6 प्रतिशत क्षेत्र को ही सिंचाई सुविधा उपलब्ध हो पाना इस तथ्य को स्पष्ट कर रहा है कि सृजित सिंचन क्षमता का अधिकतम कुशल उपयोग नहीं हो पा रहा है। अभी तक विशेष जोर सिंचाई क्षमता के सृजन पर दिया जाता रहा है, सिंचन क्षमता के उपयोग तथा जल को खेतों तक पहुँचाने पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया । यह अनुमान लगाया जाता है कि जलाशयों से छोड़े गये जल का आधे से कम ~~कम~~ ही भाग खेतों तक पहुँच पाता है शेष आधा

भाग तो नहरें तथा अन्य जल निकासी मार्गो में सोख लिया जाता है या उनके सम्यक रखरखाव के कारण रिस जाता है और किनारे की भूमियों को क्षति पहुँचाता है। नहरों और नालियों के रखरखाव की कमी के कारण जल की बर्बादी को रोकना अब आवश्यक हो गया है क्यों कि रिसाव के कारण भूमिगत जल स्तर भी ऊँचा उठता है जिससे भूमि में क्षारीयता भी बढ़ती है। इस सम्बन्ध में आवश्यक है कि जल के कुशलतम उपयोग तथा सिंचन क्षमता के अनुकूलतम उपयोग पर हमें अब गम्भीर होना चाहिए और इस दिशा में सार्थक प्रयास किए जाना चाहिए ।

कृषि यंत्रीकरण

यंत्रीकरण कृषि उत्पादकता बढाने हेतु यांत्रिक शक्ति का प्रयोग है। सफल और उन्नत कृषि के लिए यांत्रिक शक्ति का उपयोग महत्वपूर्ण है । यंत्रीकरण का सम्बन्ध उन्नत कृषि यंत्रों से है जिनकी सहायता से प्रति इकाई उत्पादन लागत में कमी की जा सकती है व ऐसी भूमि पर खेती सम्भव हो जाती है जो बंजर एवं कम उपजाऊ है। सघन एवं बहुफसली कृषि प्रणाली भी कृषि में नवीन व उन्नत कृषि औजारों की अपेक्षा करती है। यंत्रीकरण से एक ओर श्रम व मजदूरी में बचत होती है , दूसरी ओर कृषि उत्पादन में वृद्धि होती है । विभिन्न कृषि कार्य इस प्रकार के हैं जिन्हें हाथ से करना अनुपयोगी और महंगा होता है। यंत्रीकरण में प्रयोग किए जाने वाले यंत्रों को दो भागों में बांटा जा सकता है। प्रथम वर्ग में वे जो खीचने का कार्य करते हैं। इसमें परती भूमि को खेती योग्य बनाने के लिए गहरी जडों वाली घासों को भूमि से निकालने के लिए भूमि को समतल बनाने के लिए तथा गहरी जुताई के लिए प्रयोग किए जाने वाले यंत्र आते हैं। दूसरे वर्ग में वे यंत्र है जो स्थिर रहकर कार्य करते हैं, इनमें सिंचाई के यंत्र, गन्ना पेरने के यंत्र, तथा कुटटी काटने वाले आदि यंत्र आते हैं । यदि अधिक संकुचित कार्य के आधार पर कृषि यंत्रों को खेत की तैयारी करने वाले, बुआई करने वाले, निराई करने वाले, छिड़काव करने वाले, फसल कटाई करने वाले एवं अनाज निकालने वाले वर्गों में बांटा जा सकता है।

भारत में अभी तक कृषि कार्य मानवीय तथा पशु श्रम द्वारा ही किए जाते हैं, इससे कृषि कार्यो के पूरा होने में विलम्ब होता है, जो फसल उत्पादकता में कमी ला देता है। इनके द्वारा फसल से अनाज

अलग करने में अनाज की क्षति भी होती है। कृषि की नवीन प्रविधि में फसलों का उत्पादन स्तर बुआई, सिंचाई आदि के समय से भी प्रभावित होता है। इन कार्यों के लिए जो विधियां निर्धारित की जाती हैं उनमें कुछ दिनों का विचलन भी उत्पादन में कमी ला देता है। उदाहरण के लिए यदि निर्धारित तिथि से गेहूँ की सिंचाई में विलम्ब होता है तो प्रतिदिन का विलम्ब उत्पादन में कमी ला देता है। अतः कृषि कार्यों को समयानुसार सम्पादित करने के लिए मानवीय और पशु श्रम की सक्षमता बढाने वाले और इनके स्थान पर प्रयोग होने वाले कृषि यंत्रों की आवश्यकता होती है। कृषि कार्यों में बढ़ता नवीन यंत्रों का प्रयोग कृषि यंत्रीकरण कहलाता है। भारत में कृषि क्षेत्र में विभिन्न कार्यों के लिए शक्ति उपलब्धता का निरपेक्ष स्तर अत्यन्त नीचा है। यह अनुमान किया गया है कि एक फसल के लिए प्रति हैक्टेयर 10 हार्सपावर शक्ति की आवश्यकता होती है, जब कि भारत में प्रति हेक्टेयर कृषि कार्यों के लिए केवल 0.75 से 0.80 अश्व शक्ति की ही आपूर्ति हो पाती है । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि भारत में कृषि क्षेत्र में शक्ति की आपूर्ति की समस्या अत्यन्त गम्भीर है जिन देशों में प्रति हेक्टेयर 3 से 4 अश्व शक्ति तक शक्ति का प्रयोग किया जाता है वहां का प्रति हेक्टेयर कृषि उत्पादन भारतीय स्तर से तीन चार गुना अधिक है । भारत में भी पंजाब, हरियाणा, तथा पश्चिमी उत्तर प्रदेश के अनुभव यह स्पष्ट करते हैं कि शक्ति आपूर्ति और कृषि उत्पादन में वृद्धि में सकारात्मक सह सम्बन्ध है।[7]

भारतीय संदर्भ में कृषि यंत्रीकरण से आशय कृषि कार्यों के लिए सुधरे हुए कृषि उपकरणों ~~और~~ और यंत्रों, ट्रेक्टर और कम्बाइण्ड हार्वेस्टर, पम्पसेट जुताई निराई, गुडाई, छिड़काव आदि कार्यों के कृषि यंत्रों से है। कभी - कभी यह मान लिया जाता है कि कृषि यंत्रीकरण का आशय ट्रेक्टर का अधिकाधिक प्रयोग है, इसी प्रकार कभी-कभी कृषि कार्यों में स्वचालन की दशाएं भी उत्पन्न करना ~~भी~~ यंत्रीकरण मान लिया जाता है परन्तु इसे ही कृषि यंत्रीकरण नहीं कहा जा सकता है। यंत्रीकरण वस्तुतः बहुफसल प्रणाली और सुधरी हुई कृषि विधियों के प्रसार के लिए उन्नत यंत्रों का प्रयोग करना है। परन्तु ट्रेक्टर का बढ़ता हुआ प्रयोग कृषि यंत्रीकरण का एक प्रमुख पक्ष बन गया है। नवीन कृषि प्रविधि और सघन कृषि प्रणाली के कारण ट्रेक्टर के उपयोग और उत्पादन में वृद्धि हुई है। परन्तु भारत में कृषि का यंत्रीकरण एक विवाद का विषय रहा है। जो लोग यंत्रीकरण का समर्थन करते हैं उनका कहना है कि इससे उत्पादकता में वृद्धि होती है।

कृषि की अन्य आगतों जैसे उत्कृष्ट बीजों , सिंचाई की सुविधाओं , उर्वरकों आदि के अधिक प्रयोग की आवश्यकता तभी पड़ती है और इनका लाभ तभी प्राप्त होता है जबकि कृषि में पहले पर्याप्त मात्रा में शक्ति का प्रयोग सम्भव हो जो कि मशीनों से ही हो सकता है । यंत्रीकरण के आलोचकों का यह कहना कि इससे भारत जैसे अतिरेक श्रम वाले देश में बेरोजगारी की सम्भावनाएं अधिक बढ़ जाती है ।

कृषि उपकरण :

फसल उत्पादन और भूमि की उत्पादकता बढ़ाने में बड़े कृषि यंत्रों के साथ-साथ छोटे कृषि यंत्रों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है । इन कृषि उपकरणों में परम्परागत रूप से प्रयोग होने वाले उपकरण जैसे हंसिया , खुर्पी, फावड़ा. हल, पटेला आदि की उपयोगिता आज तक बनी हुई है । योजनाकाल में यह प्रयास किया गया कि इन परम्परागत कृषि यंत्रों को सुधार कर इनकी कार्य क्षमता बढ़ाई जाये । इनके अतिरिक्त कुछ नवीन कृषि उपकरण भी कृषि प्रणाली के आवश्यक अंग बन गये हैं । इनमें थ्रेशर , डीजल तथा विद्युत चालित इंजन और पम्पसेट सुधरे और उन्नत हल, तरल दवाइयां, छिड़कने के लिए स्प्रेयर, पाउडर- किस्म की दवाएं छिडकने वाले डस्टर यंत्र , मिट्टी पलटने वाले हल, तवे वाले हैरो, बीज, तथा खाद बोने वाली मशीन आदि मुख्य है । इन कृषि यंत्रों की सहायता से कृषक अधिक सरलता पूर्वक कृषि कार्य कर लेते हैं । इन कृषि उपकरणों के उत्पादकों को दो वर्गो में विभक्त किया जा सकता है । प्रथम वर्ग में ग्रामीण दस्तकार तथा छोटे और अति छोटे निर्माता सम्मिलित हैं । ग्रामीण दस्तकार तो कमोवेश देश के समस्त गावों में फैले हैं । इन लोगों द्वारा बनाए गये उपकरणों का अधिकांश भाग लकड़ी का बना होता है । इनके द्वारा प्रयोग की जाने वाली प्रौद्योगिकी भी अति प्राचीन है और सुधार की अपेक्षा करती है । कृषि उपकरणों के निर्माताओं का दूसरा वर्ग वह है जो लोहे के हल, बीज बुवाई यंत्र, थ्रेशर तथा ट्रेलर आदि बनाते हैं । देश में लघु एवं कुटीर उद्योग क्षेत्र में लगभग 13000 इकाइयां इस प्रकार हैं जो इसी तरह के कृषि यंत्र बनाती हैं । हाल के वर्षों में कृषि उपकरणों के उत्पादन में तीव्र बृद्धि हुई है ।[8]

सघन कृषि की गतिविधि बढ़ने से कृषि क्षेत्र में यंत्रीकरण को प्रश्रय मिला है । सरकार ने भी सिंचित क्षेत्र में फसल सघनता बढाने के लिए चयनात्मक आधार पर कृषि यंत्रीकरण को प्रोत्साहित किया

है। भारतीय कृषको ने फार्म मशीनरी, और कृषि उपकरण खरीदने में भारी मात्रा में व्यय किए है जिससे डीजल, चिकनाई वाले तेल और खनिज तेल की मांग बढी है। सघन कृषि प्रविधि बढाने पर जब जोर दिया जाना प्रारम्भ किया गया उस समय अधिकांश कृषि उपकरणों की खरीद पर सहायिका राशि (सब्सिडी) थी पर अब इन कृषि उपकरणों पर सहायिका राशि समाप्त होती जा रही है और उन पर करों का बोझ बढ़ता जा रहा है। यह एक सामान्य मान्यता है कि यंत्रीकरण विशेषकर ट्रैक्टरों, का प्रयोग बेरोजगारी बढ़ाता है। कृषि पर राष्ट्रीय आयोग ने स्पष्ट कर दिया है कि ट्रैक्टर मुख्य रूप से पशु श्रम को विस्थापित करता है। मनुष्य श्रम को विस्थापित करने में इसकी भूमिका अत्यन्त कम है। राष्ट्रीय कृषि आयोग तथा अन्य शोध अध्ययनों से यह स्पष्ट किया गया है कि पशु श्रम का विस्थापन 60 प्रतिशत होता है जब कि मानव श्रम का विस्थापन केवल 15 प्रतिशत होता है परन्तु यंत्रीकरण रोजगार के नये अवसर भी सृजित करता है।

स्पष्ट है कि किसी क्षेत्र की कृषि विशेषताएं उस क्षेत्र की तकनीकी उन्नति अवस्था पर निर्भर करती हैं। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि अध्ययन क्षेत्र के कृषि कार्यों में मशीनों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है, उदाहरण के लिए जुताइ कार्यो के लिए ट्रैक्टर, सिंचाई कार्यो के लिए बिजली, तथा डीजल चालित नलकूप तथा पम्पसेटस, फसल से अनाज अलग करने के लिए थ्रेसर, कीटनाशक दवाओं को छिड़कने के लिए डस्टर तथा स्प्रेयर आदि अन्यान्य कृषि यंत्रों का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। इस प्रकार कृषि में पशुओं तथा मानव श्रम का प्रति-स्थापन, संचालन शक्ति द्वारा किया जा रहा है, जिससे प्रति हैक्टेयर उत्पादन में भी वृद्धि हुई है, तथा कृषि कार्यो के लिए कृषि क्षेत्र में भी वृद्धि हुई है। नदियों के किनारों की उँची नीची असमतल भूमि को भी समतल बनाकर कृषि क्षेत्र में वृद्धि करने के सार्थक प्रयास किए गये है जिससे इन क्षेत्रों में भी कृषि कार्य सम्भव हो सका है जिन क्षेत्रों के कुछ वर्षो पूर्व कृषि कार्य की आशा भी नहीं की गई थी ।

किसी क्षेत्र में भूमि उपयोग की सफलता उस क्षेत्र में प्रयोग होने वाले यांत्रिक उपकरणों पर आधारित हैं। इसीलिए केवल जीवन निर्वाहन कृषि निम्न स्तरीय तकनीकी पर आधारित है, परन्तु कृषि में व्यावसायिक दृष्टिकोण, आधुनिक यंत्रों के प्रयोग से अधिक सम्भव हो सका है। इसके अन्तर्गत उन्नत शील

बीजों, रासायनिक उर्वरकों, एवं सिचाई की सुविधा का विशेष महत्व है। व्यापारिक कृषि के लिए यंत्रीकरण एवं परिवहन के साधनों मे विकास तथा तैयार माल के भण्डारण की सुविधाएं अति आवश्यक है।[9] इस दृष्टि से यदि देखा जाये तो अध्ययन क्षेत्र में अभी भी किसानों का एक बड़ा वर्ग परम्परागत औजारो से ही कृषि कार्य सम्पन्न करता है, क्यों कि जनपद में जोतों का आकार अत्यन्त छोटा है, यद्यपि चकबन्दी द्वारा जोतों के आकार को बढाने का प्रयास भी किया जा चुका है, परन्तु अभी भी जोतों का आकार इतना पर्याप्त नहीं है कि कृषि कार्यो में यंत्रीकरण का व्यापक स्तर, पर प्रयोग किया जा सके, फिर भी जनपद में पिछले दो दशकों से ट्रेक्टर, थ्रेसर, तथा टयूबबेल, एवं पम्पिंग सेट्स के प्रयोग में तीव्र गति से वृद्धि हुई है, कीटनाशक रसायनों का प्रयोग भी तेज गति से बढ़ता जा रहा है जिससे डस्टर तथा स्प्रेयर यंत्रों की भी मांग में वृद्धि हुई है। परन्तु अन्य यंत्रों की अपेक्षा जनपद मे ट्रेक्टर, पम्पिंग सेट्स तथा थ्रेसर की मांग अत्यन्त तेजी से बढ़ी है। ट्रेक्टर चूँकि बहुउददेशीय यंत्र है क्यों कि इससे जुताई, बुआई, सिंचाई तथा गहाई के लिए साथ ही साथ माल की ढुलाई के लिए संचालन शक्ति प्राप्त होती है अतः यह कृषको के लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हुआ है, परन्तु अभी भी यंत्रीकरण की व्यापक सम्भावनाएं है। अध्ययन क्षेत्र में यंत्रीकरण का विवरण अग्रंकित तालिका में दर्शाया जा रहा है ।

सारणी क्रमांक 3.8 जनपद में विकास खण्डवार कृषि यंत्रों की स्थिति को दर्शा रही है। सारणी से ज्ञात होता है कि अभी भी जनपदीय कृषि व्यवस्था में लकडी के हल का व्यापक प्रचलन है, यद्यपि यह लकडी का हल परम्परागत न होकर उसमें आवश्यक परिवर्तन हो गये हैं। जनपद में इनकी संख्या 130497 है जो कि किसी भी अन्य यंत्रों की अपेक्षा अधिकतम है, इसमें सर्वाधिक हल जसवन्तनगर विकासखण्ड में है जिनकी संख्या 13669 है कमोवेश यही स्थिति महेवा विकास खण्ड की है। लकडी के हल का स्थान जनपद में लोहे का हल लेता प्रतीत हो रहा है क्यों कि इस प्रकार के हल की संख्या भी 85778 है, यह तीन फाल वाला जिसे क्षेत्रीय भाषा में तिफारा तथा एक फाल वाला लोहे का हल भी अब पर्याप्त प्रचलन में आ गया है। मिटटी पलटने वाला कल्टीवेटर तथा तवे के आकार के फालों से युक्त हेरो भी जनपदीय कृषि कार्यो में अपना महत्व पूर्ण स्थान बनाते जा रहे हैं, जिनकी संख्या जनपद में कुल 82595 तक पहुंच गई है। इस प्रकार के हलों से युक्त जसवन्तनगर विकास खण्ड प्रथम स्थान पर है

तालिका क्रमांक 3.8

जनपद में विकास खण्डवार कृषि यंत्रों की उपलब्धता 1990 - 91

विकासखण्ड	उन्नत लकड़ी का हल	लोहे का हल	हैरो तथा कल्टीवेटर	उन्नत थ्रेसिंग मशीन	स्प्रेयर	बुआई यंत्र	ट्रैक्टर
1. जसवन्तनगर	13669	5136	9942	472	38	2796	310
2. बढ़पुरा	4267	6212	2486	168	27	826	132
3. बसरेहर	9588	5340	6122	530	29	904	154
4. भरथना	10341	5995	7525	962	56	3542	132
5. ताखा	8462	4918	4370	586	32	1106	87
6. महेवा	13147	6226	8295	1894	56	2987	179
7. चकरनगर	3242	6182	1243	202	32	834	160
8. अछल्दा	9582	5094	5820	472	34	802	88
9. विधूना	4952	5187	6468	440	39	3487	99
10. एरवाकटरा	24121	5806	7545	156	48	2012	131
11. सहार	5370	6038	5898	571	35	3454	97
12. औरैया	8496	7284	7265	864	39	3294	138
13. अजीतमल	6274	6634	4380	525	32	1488	92
14. भाग्यनगर	8986	9726	5236	412	37	1876	95
योग जनपद	130497	85778	82595	8254	534	29408	1894

स्रोतः सांख्यिकी पत्रिका जनपद इटावा, 1993

जिसमें हेरो तथा कल्टीबेटर हल 9942 प्रयुक्त किए जा रहे हैं, जबकि चकर नगर विकास खण्ड मात्र 1243 हल रखकर वरीयता क्रम में सबके नीचे आ रहा है। कुल मिलाकर यदि देखा जाय तो सम्पूर्ण जनपद में कुल 298870 जुताई के हल प्रकार के यंत्र प्रयुक्त किए जा रहे हैं, ये हल पशु शक्ति द्वारा संचालन शक्ति प्राप्त करते है, ये यंत्र केवल जुताई कार्य के लिए ही प्रयुक्त किए जा सकते है।

फसल से अनाज अलग करने के लिए परम्परागत विधि पकी हुई फसल की जानवरों द्वारा दवाई जाती थी जिसे क्षेत्रीय भाषा में मडाई कहा जाता है इसमें अत्यधिक समय लगता था और यदि मानसून की वर्षा समय से पूर्व हो जाती है तो फसल का एक बड़ा हिस्सा नष्ट हो जाता था अतः पकी हुई फसल से अनाज निकालने वाले आधुनिक यंत्र, को थ्रेसिंग मशीन कहा जाता है, जिसके प्रयोग से मौसम की अनिश्चिता से भी सुरक्षा होती है तथा फसल से अनाज की बहुत कम समय में ही अलग किया जा सकता है। इस दृष्टि से देखें तो जनपद में कुल 8254 थ्रेसर यह कार्य सम्पन्न करने में लगे हुए है इनमेंसे सर्वाधिक संख्या 1894 महेवा विकास खण्ड में प्रयोग की जा रही है जब कि एरवाकटरा विकास खण्ड 156 थ्रेसर ही प्रयोग करके सबसे निम्न स्तर पर है, इससे कुछ अच्छी स्थिति में बढ़पुरा विकास खण्ड है जो 168 थ्रेसर फसल से अनाज निकालने में प्रयोग कर रहा है। इस यंत्र में यांत्रिक शक्ति का प्रयोग होता है यह यांत्रिक शक्ति या तो ट्रेक्टरो द्वारा अथवा डीजल इंजनों द्वारा इन यंत्रों को प्रदान की जाती है, पशु श्रम का इस यंत्र में प्रयोग नहीं किया जाता है और नही पशु श्रम इस प्रकार के कृषि यंत्र में प्रयुक्त किया जा सकता है।

पौध तथा फसल को सरंक्षण प्रदान करने हेतु कीटनाशक रासायनिक दवाओं का प्रयोग अधिक उपज प्राप्त करने हेतु वांछित है इस दृष्टि से देखा जाय तो जनपद में कुल 534 स्प्रेयर / डस्टर पौध तथा फसल संरक्षण का कार्य सम्पन्न कर रहे जिनमें से सर्वाधिक 56 स्प्रेयर महेवा विकास खण्ड में प्रयुक्त हो रहे हैं जब कि बढ़पुरा विकास खण्ड इस दृष्टि से सर्वाधिक पिछडा हुआ है, जहां मात्र 27 यंत्र ही हानिकारक कीडों से फसल की सुरक्षा कर रहे है। यह यंत्र मानव शक्ति द्वारा संचालित होता है, इसके संचालन में मानव हाथ अथवा पैर शक्ति प्रदान करने का कार्य करते हैं। भारतीय कृषि में यंत्रीकरण के

सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान ट्रेक्टर का है, यह यंत्र अनेक प्रयोगों में प्रयुक्त किया जा सकता है, ट्रेक्टर से गहरी जुताई, बुआई, सिंचाई थ्रेसिंग, तथा उपज की ढुलाई आदि कार्यों को कम समय में सम्पन्न किया जा सकता है, इन सभी कार्यों के लिए ट्रेक्टर शक्ति प्रदान करने का कार्य करता है। इस दृष्टि से देखा जाये तो जनपद में कुल 1894 ट्रेक्टर प्रयोग किए जा रहे हैं इनमें से महेवा में सर्वाधिक 179, ट्रेक्टर प्रयुक्त हो रहे हैं जब कि ताखा विकास खण्ड में मात्र 87 ट्रेक्टर ही पाये जा रहे है, अछल्दा विकास खण्ड की स्थिति ताखा से कुछ अधिक भिन्न नहीं है, जहां पर 88 ट्रेक्टर कृषि कार्य सम्पन्न कर रहे हैं। इस यंत्र का सबसे बड़ा दोष इसकी अधिक कीमत है जिस कारण इस यंत्र का सफल प्रयोग केवल बड़े कृषक ही कर सकते हैं, परन्तु वह भी वर्ष भर केवल कृषि कार्यों में ही ट्रेक्टर को प्रयुक्त नहीं कर पाते है, जिस कारण ट्रेक्टर को कृषि के अतिरिक्त अन्य कार्यो में भी प्रयुक्त किया जाता है। यदि छोटे आकार के कम कीमत वाले ट्रेक्टर प्रचलन में आ जाये जैसा कि जापानी कृषि में अब हो रहा है तो छोटे तथा मध्यम आकार के कृषक भी इस यंत्र को प्रयोग कर सकते है, तभी प्रति हेक्टेयर 10 अश्व शक्ति के उददेश्य को प्राप्त करने में सहायता प्राप्त हो सकती है। यद्यपि ट्रेक्टर क्रय करने वालों को बैंकें ऋण सुविधा प्रदान कर रही है, परन्तु ऊँची ब्याज दर के कारण मध्यम तथा छोटी जोतों वाले कृषकों की पहुँच से यह महत्वपूर्ण कृषि यंत्र बाहर है और वह चाहकर भी इस यंत्र को खरीदने में असमर्थ है। यही कारण है कि ट्रेक्टरों का प्रयोग जनपद में बड़े पैमाने पर नही हो पा रहा है, यद्यपि यह संख्या 1894 पर्याप्त नहीं तो अधिक अपर्याप्त भी नहीं कही जा सकती है, परन्तु कृषि के आधुनिकीकरण के लिए यह संख्या अपर्याप्त ही नहीं बल्कि अत्यन्त कम है, इसमें अभी और अधिक वृद्धि की सम्भावना है।

कृषि फार्मों के लिए फार्मों पर यांत्रिक शक्ति ट्रेक्टरो तथा इंजनों से मिलती है ये ईधन (डीजल/पेट्रोल) को उपयोगी कार्य में बदलने में सक्षम साधन है। ट्रेक्टर और पम्पिंग सेट अब डीजल से चलने वाले ही बन रहे हैं। कृषि कार्यों के लिए प्रयुक्त ट्रेक्टरों की अश्व शक्ति सामान्यतः 20 से 50 तक होती हैं। इसका प्रचलन फार्म के आकार तथा प्रयोग विधि पर निर्भर करता है। जनपद में ट्रेक्टरों की संख्या वर्ष 1978 में 678 थी जो 1990 - 91 में बढ़कर 1894 हो गई है, अर्थात इनकी संख्या 12 वर्षों के अन्तराल में 279 प्रतिशत से भी अधिक बढ़ गई है, यह प्रगति इस बात की ओर संकेत है कि कृषकों द्वारा ट्रेक्टरों का प्रयोग तेजी से बढ़ता जा रहा है। सारणी 3.9 में जनपद के विभिन्न विकासखण्डों में ट्रेक्टरों की संख्या तथा प्रति ट्रेक्टर कुल कृषि क्षेत्र दर्शाया गया है -

तालिका 3.9 जनपद के विभिन्न विकास खण्डों में ट्रैक्टरों की संख्या तथा प्रति ट्रैक्टर कुल कृषि भूमि (हेक्टेयर में)

क्र0सं0 विकास खण्ड का	सकल बोयागया क्षेत्रफल (हेक्टे0)	ट्रैक्टरों की संख्या 1978	ट्रैकटरों की संख्या 1982	ट्रैक्टरों की संख्या 1988	ट्रैक्टरों की संख्या 1990–91	1978 से 1991 तक प्रतिशत बृद्धि	प्रति ट्रैक्टर कृषि क्षेत्र
1. जसवन्त नगर	41,863	98	161	202	310	316.33	135.04
2. बढ़पुरा	21,368	49	78	101	132	269.39	161.88
3. बसरेहर	45,921	46	102	134	154	334.78	298.19
4. भरथना	29,279	48	69	108	132	275.00	221.81
5. ताखा	28.155	39	52	74	87	223.08	323.62
6. महेवा	36.511	59	121	153	179	303.39	203.97
7. चकरनगर	16.961	57	107	138	160	280.70	106.01
8. अछल्दा	28.557	36	52	72	88	244.44	324.51
9. विधूना	30,930	39	62	85	99	253.85	312.42
10. एरवाकटरा	24,504	48	74	101	131	272.92	187.05
11. सहार	30,334	39	61	79	97	248.72	312.72
12. औरैया	38,252	44	76	117	138	313.64	277.19
13. अजीतमल	24,834	38	42	71	92	242.10	269.93
14. भाग्यनगर	27,341	38	58	83	95	250.00	287.80
योग जनपद	4,24,810	678	1.115	1,518	1,894	279.35	279.85

स्रोत : सॉख्यिकीय पत्रिका जनपद इटावा, 1991–92

सारणी क्रमांक 3.9 जनपद के विभिन्न विकास खण्डों में ट्रैक्टरों की संख्या में वृद्धि तथा प्रति ट्रैक्टर सकल कृषि क्षेत्र का चित्रण कर रही है। सारणी से ज्ञात होता है कि वर्ष 1978 में ट्रैक्टरों की सर्वाधिक संख्या जसवन्तनगर विकास खण्ड में थी और यह विकास खण्ड वर्ष 1990 - 91 तक लगातार अपना प्रथम स्थान बनाए रखने में सफल रहा है, वर्ष 1990 - 91 में इस विकास खण्ड के पास 310 ट्रैक्टर कृषि सम्बन्धित कार्य करते पाये गये । यद्यपि 1978 तथा 1990 - 91 के मध्य तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो बसरेहर विकास खण्ड ने इस काल में सर्वाधिक 334 प्रतिशत से भी अधिक प्रगति की है, जहां इस विकास खण्ड में 1978 में मात्र 46 ट्रैक्टर थे, वही वर्ष 1990 - 91 यह संख्या 154 हो गई है। चकरनगर तथा बढ़पुरा विकास खण्डों में अपनी प्रतिकूल प्राकृतिक स्थिति के होते हुए भी ट्रैक्टरों की संख्या में क्रमशः 280.70 प्रतिशत तथा 269.39 प्रतिशत वृद्धि की है। यह इन विकास खण्डों की यंत्रीकरण के प्रति तीव्र आकर्षण का द्योतक है और निकट भविष्य में इन विकास खण्डों में भी कृषि की अनुकूल परिस्थितियां उत्पन्न होने का संकेत दे रही है। जिन विकास खण्डों ने पिछले वर्षों में ट्रैक्टरों की संख्या में तीन गुनी या इससे अधिक वृद्धि की है उनमें से जसवन्तनगर, बसरेहर, महेवा तथा औरैया विकास खण्ड है, अन्य विकास खण्डों ने इस दृष्टि से 200 से 300 प्रतिशत के मध्य ट्रैक्टरों की संख्या बढाई है।

प्रति ट्रैक्टर कुल कृषि क्षेत्र की दृष्टि से यदि देखा जाय तो चकरनगर विकास खण्ड सबसे अच्छी स्थिति में दृष्टिगत हो रहा है, जहां प्रति ट्रैक्टर केवल 106.01 हेक्टेयर कुल कृषि क्षेत्र आता है, जब कि इसके विपरीत प्रति ट्रैक्टर अधिक कृषि क्षेत्र का भार वहन करने वाला अछल्दा विकास खण्ड है जहां यह औसत 324.51 हेक्टेयर है, इस विकास खण्ड की स्थिति से मिलता जुलता प्रदर्शन ताखा, विकास खण्ड भी कर रहा है जिसका प्रति ट्रैक्टर क्षेत्रफल थोड़ा कम 323.02 हेक्टेयर है। अन्य विकास खण्डों में जिनका 300 हेक्टेयर से अधिक प्रति ट्रैक्टर कृषि क्षेत्र दिखाई पड़ रहा है वे बिधूना, तथा सहार, विकास खण्ड है। 250 से 300 हेक्टेयर तक कृषि भूमि रखने वाले विकास खण्डों में बसरेहर, औरैया, अजीतमल तथा भाग्यनगर है जिनमें क्रमशः प्रति ट्रैक्टर 298.19, 277.19, 269.93 तथा 287.50 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र आता है। अन्य विकास खण्ड प्रति ट्रैक्टर 200 हेक्टेयर से भी कम कृषि क्षेत्र रख रहे हैं केवल भरथना विकासखण्ड इस सीमा को पार करके 221.81 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र प्रति ट्रैक्टर रखता है। सम्पूर्ण जनपद की दृष्टि से यह औसत 279.35 हेक्टेयर आता है।

यदि जनपद की कुलकृषि भूमि के लिए पशु शक्ति तथा ट्रेक्टर, की यांत्रिक शक्ति के विचार से देखें तो जनपद में कुल 425337 हेक्टेयर कृषि भूमि विभिन्न फसलों के उत्पादनह हेतु उपलब्ध है, जिसके लिए 109229 पशु शक्ति (बैलों नर भैंसों की जोड़ी) तथा 1894 ट्रेक्टर उपलब्ध है, यदि यह माना जाय कि एक बैल जोड़ी 3 हेक्टेयर तथा एक ट्रेक्टर 100 हेक्टेयर कृषि भूमि को फसलोत्पादन हेतु व्यवस्थित कर सकते है तो 327687 हेक्टेयर पशु शक्ति द्वारा तथा 189400 हेक्टेयर यांत्रिक शक्ति द्वारा कृषि कार्य सम्पन्न किया जा सकता है, इस प्रकार कुल 517087 हेक्टेयर भूमि के लिए मिश्रित शक्ति जनपद में उपलब्ध है जब कि जनपद में कुल 425337 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र उपलब्ध है। इस दृष्टि से देखे तो 9150 हेक्टेयर भूमि के लिए अतिरिक्त शक्ति उपलब्ध है। अतः यह कहा जा सकता है कि जनपद में न तो श्रम शक्ति न पशु शक्ति, और न ही यांत्रिक शक्ति की कमी है, हां पशु शक्ति को यांत्रिक शक्ति द्वारा प्रतिस्थापित किया जा सकता है, जिससे कृषि कार्य शीघ्रता से सम्पन्न किया जा सके और मौसम की अनिश्चितता से होने वाली क्षति को यथा सम्भव बचाया जा सके ।

रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग

भूमि पर जनसंख्या का बढ़ता दबाब और भूमि का गैर कृषि कार्यों में बढ़ता प्रयोग यह स्पष्ट करता है कि फसलों के अन्तर्गत शुद्ध क्षेत्र बढ़ाकर उत्पादन को बढाने की सम्भावना अत्यन्त कम हो गई है। अब फसल उत्पादकता बढाने में रासायनिक उर्वरकों का महत्वपूर्ण स्थान है। परम्परागत कृषि प्रणाली में जैविक उर्वरकों का अधिक प्रयोग होता था, अब द्विफसली तथा बहुफसली कृषि होने से जमीन के विभिन्न पोषक तत्वों का अधिक त्वरित एवं गहन शोषण किया जा रहा है। इस कारण विभिन्न जैविक खादें फसलों को आवश्यक अतिरिक्त पोषक तत्व प्रदान करने में समर्थ नही है। पौधें अपने विकास और पोषण हेतु मिटटी से 17 भोज्य तत्व गृहण करते है। जैविक खादें प्रतिवर्ष की फसल के कारण भूमि से ह्रस होने वाले उर्वरक तत्वों की क्षति पूर्ति नही कर पाती है। वे विशेष रूप से नाइट्रोजन, पोटास, और फास्फोरस, की क्षतिपूर्ति करने में समर्थ नहीं है। जैविक खादों में नाइट्रोजन, पोटास और फास्फोरस का अनुकूल मिश्रण नही होता है। भूमि की उर्वरता बनाए रखने और बढाने के लिए यह आवश्यक है कि भूमि से ह्रस होने वाले पोषक तत्वों की आपूर्ति की जाय । इसके लिए रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग आवश्यक है।

रासायनिक उर्वरक भूमि में पोषक तत्वों की कमी को पूरा करते है एवं अतिरिक्त उपज हेतु भूमि में सामर्थ्य उत्पन्न करते है। यह भूमि की उर्वराशक्ति को भी नष्ट होने से बचाते है। रासायनिक उर्वरकों से अनुकूलतम परिणाम प्राप्त करने के लिये यह आवश्यक है कि उनका संतुलित उपयोग किया जाये। इनका इस प्रकार किया जाना चाहिए ताकि पौधों को उचित मात्रा मे नाइट्रोजन, पोटास और फास्फोरस उपलब्ध हो सके। फसल विकास में इनका प्रथक - प्रथक विशिष्ट योगदान होता है। नवजनिक उर्वरक पौधे की पत्तियों और शाखाओं के विकास में सहायक होता है, इससे पत्तियों का हरापन बढ़ता है। यह अनाज को स्वास्थ्य और मजबूत बनाता है जिससे उपज स्तर में वृद्धि होती है। यह पौधे के तने को भी अधिक स्वस्थ बनाता है। भारतीय मिटटी में नेत्रजन की कमी है । अतः नेत्रजनिक उर्वरकों का अतिरिक्त प्रयोग आवश्यक है। परन्तु मिटटी में नत्रजनिक उर्वरकों का आवश्यकता से अधिक प्रयोग होने पर इसके प्रतिकूल प्रभाव भी होते हैं। इसका अधिक प्रयोग होने से फसल देर में पकती है, बीमारियों का प्रकोप बढ़ता है और दाने पतले व कमजोर होने लगते है। फास्फोटेक उर्वरकों में फास्फेट की मात्रा अधिक होती है। भारतीय मिटटी मैं फास्फेट की मात्रा भी कम हैं। फास्फोटेक उर्वरकों से फसल जल्दी तैयार होती है, यह जड़ों के विकास में सहायक है और पौधों में बीमारियों से बचने की शक्ति देता है, यह दानों के विकास में सहायक होता है तथा पत्तियों के प्रसार को नियंत्रित करता है। यह अधिक मात्रा में प्रयुक्त होने पर भी फसल को नुकसान नही पहुँचाता है। पोटासिक उर्वरक भी नाइट्रोजन और फास्फोरस की भांति आवश्यक है, यह पोषक तत्वों को पौधे में एक भाग से दूसरे भाग पर हस्तान्तरित कर देता है, दाने को स्वस्थ बनाने और पौधे को हरा बनाए रखने में यह सहायक है। यह नाइट्रोजन तथा फास्फोरस की मात्रा को भी संतुलित करता हैं।

जनपद में हरित क्रान्ति के उपरान्त ही रासायनिक उर्वरकों के व्यापक प्रयोग को प्रोत्साहन प्राप्त हुआ क्यो कि इसके उपरान्त ही सघन कृषि प्रणाली को प्रश्रय मिला इससे रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग अति तीव्र गति से बढ़ा है क्यों कि रासायनिक उर्वरकों का संतुलित प्रयोग अधिक उपजाऊ किस्म के बीजों की अनिवार्य अपेक्षा है। योजनाकाल के प्रारम्भ में कृषकों को रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग के प्रति जहां सहमत करना पड़ता था ।उन्हें विभिन्न प्रकार से प्रोत्साहित करना पड़ता था। अब स्थिति बदल गई है, कृषक अब स्वयं ही रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग के प्रति तत्पर है। कृषक के दृष्टिकोण का यह परिवर्तन कृषि विकास में सहायक हुआ है। जनपद में रासायनिक उर्वरकों के वितरण को अग्रांकित तालिका में दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक 3.10 विकास खण्डवार रासायनिक उर्वरकों का उपयोग ।

विकास खण्ड	1975-76					1990-91				
	नाइट्रोजन (मी0टन)	फास्फोरिक (मी0टन)	पोटाश (मी0टन)	कुल	प्रतिहेक्टेयर (कि0ग्रा0)	नाइट्रोजन (मी0टन)	फास्फोरिक (मी0टन)	पोटाश (मी0टन)	कुल	प्रतिहेक्टेयर (कि0ग्रा0)
1. जसवन्त नगर	365	58	19	442	12.20	2643	705	58	3,406	81.36
2. बढ़पुरा	282	36	16	334	18.06	1785	391	43	2,219	103.85
3. बसरेहर	376	62	23	461	11.60	3112	651	67	3,830	83.50
4. भरथना	320	47	20	387	15.27	2831	589	65	3,485	119.03
5. ताखा	388	60	22	470	19.28	2306	418	39	2,763	98.13
6. महेवा	306	42	18	366	11.58	2065	571	59	2,695	73.81
7. चकरनगर	162	28	5	195	13.28	952	119	16	1,087	64.09
8. अछल्दा	381	44	21	446	18.04	2124	549	56	2,729	95.56
9. विधूना	376	46	18	440	16.43	2125	538	44	2,707	87.52
10. एरवा कटरा	258	40	19	317	14.94	1700	417	25	2,142	87.41
11. सहार	318	42	14	374	14.24	2178	433	23	2,634	86.83
12. औरैया	357	58	18	433	13.08	2423	593	36	3,052	79.79
13. अजीतमल	268	35	17	320	14.88	1784	508	54	2,346	94.47
14. भाग्यनगर	334	55	21	410	17.32	2324	646	41	3,011	110.13
जनपद	4,491	653	251	5,395	14.67	30352	7,128	626	38,106	89.70

सांख्यिकीय विभाग जनपद इटावा

ETAWAH DISTRICT
USE OF CHEMICAL FERTILIZER
1990-91
KILOGRAM / HECTARE
110 AND ABOVE
100 - 110
90 - 100
80 - 90
BELOW - 80
0
20
KM
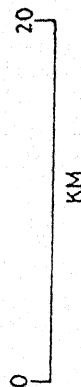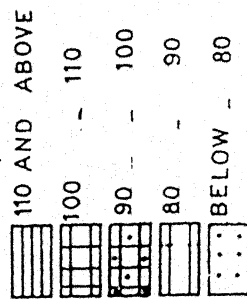
FIG.-14

सारणी 3.10 में विकास खण्डवार उर्वरक वितरण पर प्रकाश डाला गया है। उर्वरक उपभोग की दृष्टि से पिछले पन्द्रह सालों के अन्तराल में छः गुनी से भी अधिक वृद्धि हुई है। जनपद में जहां वर्ष 1975 - 76 में प्रति हेक्टेयर उर्वरक उपभोग मात्र 14.67 किलोग्राम था वहीं उपभोग बढ़कर वर्ष 1990 - 91 में 89.70 किलोग्राम हो गया है, यह प्रगति हरितक्रान्ति के कारण हुई है। यदि प्रादेशिक स्तर से तुलना करें तो उत्तर प्रदेश में उर्वरकों का उपभोग वर्ष 1990 - 91 में प्रति हेक्टेयर 88.4 किलोग्राम रहा है, इस औसत उपयोग से थोडा अधिक 89.70 किलोग्राम जनपदीय औसत है। अतः यह कहा जा सकता है कि जनपद का रासायनिक उर्वरक उपभोग का स्तर लगभग प्रादेशिक स्तर के बराबर ही है।

विकास खण्डवार यदि विचार करें तो वर्ष 1990 - 91 में चकरनगर विकास खण्ड का औसत उपयोग न्यूनतम है और यह विकास खण्ड मात्र 64.09 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से रासायनिक उर्वरकों का उपयोग कर पा रहा है, ऐसा इस विकास खण्ड में सिंचन सुविधाओं के अभाव के कारण है। सर्वाधिक औसत उपयोग 119.03 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर करके भरथना विकास खण्ड इस दृष्टि से प्रथम स्थान प्राप्त कर रहा है जब कि वर्ष 1975 - 76 से यदि इस विकास खण्ड की तुलना करें तो उस काल में इसका प्रति हेक्टेयर उर्वरक उपयोग जनपदीय औसत उपयोग से थोडा अधिक 15.27 किलोग्राम था और वर्ष 1990 - 91 में इसने अपनी उर्वरक उपयोग क्षमता जनपदीय औसत से कहीं अधिक प्राप्त कर ली है। इस विकास खण्ड के अतिरिक्त जिन विकास खण्डों की प्रति हेक्टेयर औसत उर्वरक उपयोग क्षमता 100 किलोग्राम से अधिक है, वे विकास खण्ड भाग्यनगर तथा बढ़पुरा है जो क्रमशः 110.13 किलोग्राम, तथा 103.85 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर उर्वरक उपयोग करके वरीयता, क्रम में द्वितीय तथा तृतीय स्थान पर है। इसके अतिरिक्त जनपदीय, औसत उपयोग स्तर से ऊँचा स्तर रखने वाले विकास खण्डों में ताखा, अछल्दा, तथा अजीतमल विकास खण्ड है जो क्रमशः 98.13 किलोग्राम, 95.56 किलोग्राम, तथा 94.47 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर उर्वरक उपयोग कर रहे हैं। 80 किलोग्राम तथा 90 किलोग्राम प्रतिहेक्टेयर उर्वरक उपयोग करने वाले विकास खण्डों में बसरेहर 83.50 किलोग्राम, जसवन्तनगर नगर 81.36 किलोग्राम, विधूना 87.52 किलोग्राम, एरवाकटरा 87.41 किलोग्राम हैं, अन्य विकास खण्ड चकरनगर को छोड़कर 70 से 80 किलोग्राम के मध्य प्रति हेक्टेयर रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग कर रहे हैं।

4. कीटनाशक रसायनों का प्रयोग

रासायनिक उर्वरकों की भांति आधुनिक कृषि प्रणाली के लिए पौध संरक्षण माध्यम भी प्रमुख स्थान रखता है। उर्वरक फसल उत्पादिता बढाते हैं, जब कि पौध संरक्षण माध्यम फसलों की क्षति को रोकते हैं। यदि फसल प्रणाली में उर्वरकों का उपयोग अपेक्षित स्तर से कम होता है तो फसल उत्पादिता घटती है परन्तु यदि पौध संरक्षण के प्रति सम्यक ध्यान न दिया गया तो कृषि प्रणाली में पौधनाशकों और बीमारियों की सक्रियता बढ़ती है जिससे फसलों को गम्भीर क्षति पहुँचती है। नाशक जीव तथा रोग पौधों को कमजोर बना देते हैं जिससे न केवल उपज कम हो जाती है बल्कि उपज की गुणवत्ता भी गिर जाती है। अतः फसल को कीड़ों व रोगों से बचाना आवश्यक होता है। पौध संरक्षण उपाय पौधों की क्षति रोककर उपज में वास्तविक वृद्धि कर देते हैं। वर्तमान नवीन कृषि प्रणाली में पौध नाशक कीटाणुओं और बीमारियों की सक्रियता अधिक हो गई है। अधिक उपजाऊ किस्म के बीजों में बुआई के बाद अथवा पौधों की विकास की अवधि में सूक्ष्म वनस्पतियों, पौधनाशक कीटों तथा बीमारियों के आक्रमण की सम्भावना अधिक रहती है। अधिक वार तथा अधिक गहरी सिंचाई, रासायनिक उर्वरकों के बढ़ते प्रयोग से पौध नाशक जीवों और पौध बीमारियों का प्रकोप अधिक हो गया है। खेतों में ऐसे कीटों का प्रकोप बढ़ गया है जो अतीत में भारतीय फसल प्रणाली में देखे ही नहीं गये थे। इसी प्रकार ऐसी वनस्पतियों तथा घासों का भी प्रादुर्भाव हो गया है जिनका अस्तित्व पहले नहीं था । यह भी देखा गया है कि वे कृषि क्षेत्र जहां वर्षा की मात्रा अधिक है, अवधि अधिक तथा नमी अधिक है, वहां फसल बीमारियों का प्रकोप अधिक होता है। कृषि प्रणाली के अनुभव यह भी संकेत देते हैकि पहले फसलों का अधिक नुकसान टिड्डी जैसे जीवों और घुमंत्रु जानवरों से अधिक होता था परन्तु अब अधिक क्षति पौध नाशक कीटों और बीमारियों से होती है।

फसल को बीमारियों से बचाने के लिए स्वतंत्रता से पहले जो विधि अपनाई जाती थी उसकी क्रियाविधि पारम्परिक थी ।सर्व प्रथम तो यही माना जाता था कि स्वस्थ पौधे स्वयं बीमारियों से अपनी रोकथाम कर लेते हैं इस प्रतिरोधक माध्यम के अतिरिक्त उपचारात्मक माध्यम के रूप मे नीम की खली, राख और गोबर का प्रयोग किया जाता था । इससे प्रथक नियोजन काल में विशेष तौर से हरितक्रान्ति के

बाद से फसलों को विभिन्न बीमारियों और पौध नाशकों से बचाने के लिए कीटनाशक रसायनों का प्रयोग तेजी से बढ़ा है। अब डी0 डी0 टी0, बी0 एच0 सी0, एल्ड्रिन, सल्फर, ब्रायोइडस, लिम्डेन आदि फसल प्रणाली से घनिष्ट रूप से जुड़ गये हैं।

जनपद की फसलों को कीटों तथा विभिन्न बीमारियों से बचाने के लिए सार्थक प्रयास किए गये हैं। कृषकों को समय - समय पर आवश्यक कीटनाशक रसायन /पाउडर उपलब्ध हो सके इसके लिए जनपद के विभिन्न विकास खण्डों में 15 कीटनाशक डिपो स्थापित किए गये है जिनकी भण्डारण क्षमता इस समय 975 मी0 टन है। जिन विकास खण्डों में कृषि से सम्बन्धित यह सुविधा उपलब्ध है उनमें बढ़पुरा, विकास खण्ड, भण्डारण क्षमता 59 मी• टन, बसरेहर भण्डारण क्षमता 60 मी0 टन, ताखा भण्डारण क्षमता 36 मी0 टन, चकरनगर भण्डारण क्षमता 60 मी0 टन, एरवा कटरा भण्डारण क्षमता 76 मी0 टन, तथा सहार विकास खण्ड जिसकी भण्डारण 70 मी0 टन है। इस प्रकार छः विकास खण्डों में कीटनाशक डिपो स्थापित किए गये हैं जिनकी कुल भण्डारण क्षमता 361 मी0 टन है जब कि 9 कीटनाशक डिपो जनपद मुख्यालय में स्थापित है जिनकी भण्डारण क्षमता 614 मी0 टन है। यद्यपि फसलों को बीमारियों से बचाने के लिए जनपद में ही कीट नाशक डिपो स्थापित करके जनपद को कृषि से सम्बन्धित इस सुविधा से सज्जित किया गया है, परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से यदि देखा जाये तो कुल 975 मी0 टन भण्डारण क्षमता वाले कीटनाशक डिपो कृषकों को आवश्यक मात्रा में कीटनाशकों की आपूर्ति करने में अक्षम सिद्ध हुए है, यही नहीं बल्कि विभिन्न बीमारियों के लिए उपयुक्त रसायनों को भी यथा समय यह डिपो उपलब्ध नही करवा पाये है, जिस कारण कृषकों द्वारा इन रसायनों का प्रयोग व्यापक स्तर पर नहीं किया जा सका है। खाद्यान्न फसलों में गेहूँ, धान, मटर तथा यदाकदा चने की फसल तक ही कीटनाशक सीमित होकर रह गये है, तिलहन में केवल लाही की फसल में बीमारियों की रोकथाम के लिए इनका प्रयोग किया जाताहै। यदि इनके प्रयोग की व्यापकता पर विचार करें तो जायद की फसलों में इनका प्रयोग व्यापक पैमाने पर किया जाता हैं, इन फसलों में हरी सब्जियां, आलू आदि प्रमुख हैं, गन्ने की फसल में भी इन रसायनों का प्रयोग किया जाता है। यदि कीटनाशकों की उपयुक्त समय, उपयुक्त मात्रा में आपूर्ति सुनिश्चित की जासके तो इनके प्रयोग में त्वरण गति लाई ला सकती है ।

5. उन्नत किस्म के बीजों का उपयोग

बीज कृषि उत्पादन का आधार है। बीज रज में ही असीम उत्पादन सामर्थ्य छिपी हुई है। कृषि उत्पादन बढाने के लिए अच्छे बीजों का उत्पादन एवं वितरण आवश्यक है। बीज की गुणवत्ता और सामर्थ्य पर ही फसल उत्पादन और उत्पादिता आधारित है। बीज उत्पादन और वितरण अब परम्परावादी ढंग से गैर परम्परावादी स्वरूप की ओर अग्रसर हो रहा है। कृषि भारत का आदि व्यवसाय है, इसलिए भारत में विभिन्न बीजों की एक लम्बी श्रंखला रही है। यहां विभिन्न फसलों यथा धान, गेहूँ, ज्वार, बाजरा, मक्का आदि के कई प्रकार के बीज उपलब्ध है। विभिन्न क्षेत्रों मै फसलों की किस्म बदल जाती है, यह सबल कृषि व्यवस्था की सूचक है। अलग- अलग किस्म के बीजों से उत्पन्न अनाज के पोषण स्तर एवं खाद में अन्तर हो जाता है। विभिन्न बीजों की परिपक्वता अवधि और उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता भी अलग - अलग होती है। बीज विविधता का यदि आकलन किया जाये तो प्रतीत होता है कि भारत में धान और गेहूँ की अनेकों किस्मेंपाई जाती थीं । इसी प्रकार की स्थिति अन्य फसलों के बीजों के संदर्भ में थी । अतः यह कहा जाता है कि भारत में बीज दीवार अत्यन्त मजबूत थी । कृषक पीढ़ी दर पीढ़ी इन बीजों का उत्पादन संरक्षण और संवर्धन करते आये है, परन्तु कालक्रम में यह अनुभव किया गया कि परम्परागत बीजों की उत्पादकता अत्यन्त कम है। व्यापक क्षेत्र पर कृषि कार्य होने पर भी आवश्यकता पर उत्पादन नहीं हो पाता है। अतः यह अनुभव किया गया कि नवीन उन्नत किस्म के बीजों का उत्पादन और वितरण किया जाये ताकि आवश्यकतानुसार फसल उत्पादन प्राप्त किया जा सके।

जनपद में इस दृष्टि से देखा जाय तो 363981 हैक्टेयर क्षेत्रफल, पर खाद्यान्न फसलें बोई जातीहैं है तथा 27547 हेक्टेयर क्षेत्र पर तिलहनी फसलें बोई जाती है तथा 13857 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर गन्ना तथा आलू बोया जाता है, अन्य व्यावसायिक फसलों का क्षेत्र कोई अधिक महत्वपूर्ण नहीं है, स्पष्ट है कि विभिन्न फसलों के अन्तर्गत जनपद में खाद्यान्न फसलों की ही प्रमुखता है। खाद्यान्नों में 303363 हैक्टेयर पर धान्य जिनमें धान गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा तथा मक्का, का ही प्रमुख स्थान है। दलहनी फसलों में उर्द, मूंग, चना, मटर, तथा अरहर की ही फसलों का महत्व है जब कि तिलहनी फसलों में लाही, सरसों का ही प्रमुख योगदान है। धान्य फसलों में गेहूँ, धान तथा मक्का के उत्पादन के लिए ही उन्नत किस्म के बीजों का प्रयोग व्यापक स्तर पर किया जा रहा है। कुछ क्षेत्रों में बाजरा की फसल के लिए भी

उन्नतशील बीजों का प्रचलन है। दलहनी फसलों में मटर, तथा अरहर में ही उन्नतशील बीज प्रयुक्त होते हैं, कहीं - कहीं चना भी इस श्रेणी में आ जाता है। तिलहनी फसलों में केवल लाही को ही यह अवसर प्राप्त हो पाया है जिसमें व्यापक स्तर पर अधिक उपज वाले बीज प्रयुक्त हो रहे हैं। जायद फसलों में जिनमें सब्जियां तथा अन्य व्यावसायिक फसलें जैसे - खीरा, ककड़ी, खरबूजा, तरबूज आदि में उन्नतशील बीजों का प्रयोग व्यापक स्तर पर किया जा रहा है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि जो कृषक आधुनिक कृषि कार्य को प्रश्रय दे रहे हैं अधिकांश उन्हीं के द्वारा उन्नतशील बीजों का अधिक प्रयोग किया जा रहा है। सामान्यतया अंसिंचित भूमि पर तो इस प्रकार के बीजों का प्रयोग न के बराबर हो रहा है।

उन्नतशील बीजों के प्रयोग का क्षेत्र सीमित होने के दो मुख्य कारण है प्रथम तो इन बीजों की कीमत अधिक होने के कारण छोटे और मध्यम आकार के कृषि क्षेत्र वाले कृषक की क्रय शक्ति से बहुत दूर रहते हैं। दूसरे इन बीजों का वितरण अत्यन्त दोषपूर्ण है, सरकार के तमाम प्रयासों के बाबजूद भी यह बीज कृषकों तक समय पर नहीं पहुंच पाते हैं, और कभी - कभी तो प्रामाणिक बीजों की उत्पादकता इतनी कम हो जाती है कि कृषकों का विश्वास ही डगमगा जाता है क्यों कि वह जब महंगे बीज खरीदकर बोता है तो उससे अनपेक्षित प्रतिफल की प्रत्याशा करने लगता है, जबकि इन बीजों की उत्पादता तभी घोषित उत्पादकता के बराबर होगी जब कि उसे वहीं परिस्थितियां प्राप्त हों जो कि प्रायोगिक क्षेत्र की थी, जब कि व्यवहार में यह सम्भव ही नहीं है, परिणाम स्वरूप इन बीजों की घोषित उत्पादकता प्राप्त नहीं हो पाती है इसलिए कृषक उन बीजों को संदेह पूर्ण नजरों से देखने लगता है और परम्परागत कम कीमत वाले बीजों पर ही निर्भर हो जाता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि कृषकों को व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाये तथा प्रायोगिक क्षेत्र जैसी नहीं तो कम से कम इतनी सुविधा अवश्य दी जाये कि जिससे वह एक बार तो इन बीजों से भरपूर उपज प्राप्त कर सके ।

यद्यपि जनपद में बीज वितरण की व्यवस्था हेतु पर्याप्त भण्डारण क्षमता सृजित कर ली गई है, आकड़ों की दृष्टि से देखें तो सभी विकासखण्डों में तीन या तीन से अधिक बीज गोदाम स्थापित किए जा चुके हैं। जिनकी कुल भण्डारण क्षमता 17152 मी0 टन है। जसवन्तनगर विकास खण्ड तो ऐसा है

जहां परन केवल 5 बीज गोदाम स्थापित किए जा चुके हैं जिनकी भण्डारण क्षमता 532 मी0 टन है बल्कि इस विकास खण्ड में एक कृषि फार्म भी है जहां उन्नत किस्म के बीज तैयार किए जाते हैं। अन्य विकास खण्ड जिसमें 5 बीज गोदाम स्थापित हैं, ताखा विकासखण्ड है। जिन विकास खण्डों में 6-6 बीज गोदाम है, वे बढ़पुरा, बसरेहर, एरवाकटरा, सहार तथा औरैया है। 4-4 बीज गोदाम रखने वाले विकास खण्ड महेवा तथा अछल्दा है। शेष विकास खण्डों में 3-3 बीज गोदाम कृषकों को नवीन बीजों की आपूर्ति कर रहे है। 34 बीज गोदाम शहरी क्षेत्रों में स्थापित है, इस प्रकार जनपद में कुल 97 बीज गोदाम, उत्तम बीजों का वितरण कृषकों को कर रहे है, परन्तु फिर भी वितरण की दृष्टि से जनपद की स्थिति संतोष जनक नहीं कही जा सकती है। जब कि नवीन कृषि नीति जो 1, अक्टूबर 1988 को घोषित की गई है, में यह व्यवस्था की गई है कि कृषकों को विश्व में कहीं भी उपलब्ध बढ़िया बीजों की आपूर्ति की जायेगी, इस उददेश्य की पूर्ति हेतु नवीन बीज नीति में तिलहन, दलहन, मोटे अनाज, सब्जियां, फल और फूलों के उन्नत बीजों के आयात को उदार कर दिया गया है। आयातित बीजों पर पुरानी व्यवस्था के अनुसार उनके मूल्य के 90 से 105 प्रतिशत तक आयात शुल्क लगाया जाता था, जिसे अब घटाकर 15 प्रतिशत कर दिया गया है। इसी प्रकार बीज उत्पादन प्रक्रिया में सहायता करने वाली उन मशीनों के आयात को भी उदार बनाया गया है, जिनका देश में उत्पादन नहीं होता है।

कृषि विकास संदर्भ में आवश्यकता इस बात की है कि कृषि उत्पादन को प्राकृतिक घटकों के कुप्रभावों से यथा-सम्भव बचाया जाय तथा खाद्य उतपादन एवं वितरण की एक राष्ट्रीय नीति को अपनाया जाये। हरितक्रान्ति की व्यापक सफलता इसी तथ्य पर निर्भर है कि वैज्ञानिक कृषि की नवीनतम जानकारी प्रत्येक कृषक परिवार को यथा-समय व उचित कीमत पर उपलब्ध हो सके। यह भी ध्यान देने योग्य तथ्य है कि कृषि की परम्परागत तकनीक को अधिक सक्षम बनाया जाये ताकि अपेक्षाकृत कम उर्वरको से भी उपज बढाई जा सके ।

अध्ययन क्षेत्र में कृषि आधुनिकीकरण का स्तर -

भारत वर्ष में कृषि आधुनिकीकरण का प्रारम्भ 1966 से प्रारम्भ हुआ, जब विशेष रूप से

पंजाब, तथा हरियाणा राज्यों में एक नई कृषि व्यूहरचना प्रारम्भ की गई । यह आधुनिकीकरण पंजाब राज्य के लुधियाना जनपद में गेहूँ तथा धान के बीजों की शुरूआत की गई थी । यही से सम्पूर्ण भारत में कृषि आधुनिकीकरण प्रारम्भ हुआ । जनपद इटावा में इसका प्रारम्भ 1970 के बाद हुआ परन्तु प्राकृतिक सामाजिक आर्थिक तथा राजनैतिक आदि कारणों से जनपद में कृषि आधुनिकीकरण की अपेक्षित प्रगति नही हो सकी और आज भी विभिन्न कारणों से कृषि का समग्र आधुनिकीकरण सम्भव नही हो सका है। प्रदेश के पश्चिमी जिलों की तुलना में अध्ययन क्षेत्र की कृषि तकनीकी निम्न स्तर की है। विकास खण्ड स्तर पर भी इस स्तर में काफी भिन्नता देखने को मिलती है।

कृषि आधुनिकीकरण की गणना करते समय कृषि कार्यों में प्रयोग किए जाने वाले आधुनिक आगतों के विभिन्न सूचक (संकेतक) निर्धारित किए गये है इर सूचकों की तुलना राष्ट्रीय स्तर से करके कृषि में आधुनिकीकरण के स्तर का संयुक्त सूचकांक प्राप्त किया गया है। संयुक्त सूचकांक में संकेतकों की संख्या का भाग देकर भजनफल में 100 का गुणा करके कृषि आधुनिकी करण के स्तर को ज्ञात किया गया है। उक्त समस्त क्रिया को निम्नलिखित चरों द्वारा समीकरण का रूप दिया जा सकता है -

$$Ima = \frac{Te}{Tr} + \frac{Toie}{Toi_r} + \frac{Hie}{Mir} + \frac{IPSe}{IPS_r} + \frac{Ppce}{Ppcr} + \frac{Hye}{Hyr} + \frac{Cfe}{Cfr} = \sum LQS$$

कृषि में आधुनिकीकरण का क्रम सूचकांक $= \frac{\sum LQS}{n} \times 100$

जहां Ima = कृषि आधुनिकीकरण के स्तर का सुयुंक्त सूचकांक

T = प्रति 1000 हेक्टेयर कुल जोती गई भूमि पर ट्रेक्टरों की संख्या

Toi = प्रति 1000 हेक्टेयर कुल जोती गई भूमि पर ट्रेक्टर चालित यंत्रों की संख्या

Hi = प्रति 1000 हेक्टेयर कुल जोती गई भूमि पर थ्रेसरों की संख्या

IPs = प्रति 1000 हेक्टेयर कुल जोती गई भूमि पर नलकूपों/पम्पसेटस की संख्या

Ppc = प्रति 1000 हेक्टेयर कुल जोती गई भूमि पर दवा छिडकने वाले स्प्रेयरों की संख्या

Hr = उन्नतशील बीजों वाली फसलों के क्षेत्रफल का कुल जोती गई भूमि से प्रतिशत

Cf = प्रति हेक्टेयर रासायनिक उर्वरकों का उपयोग किलोग्राम में

n = आधुनिक कृषि तकनीकी के संकेताकों की संख्या

e = इकाई क्षेत्र में

r = राष्ट्रीय स्तर पर

उपर्युक्त समीकरण के आधार पर जनपद में कृषि आधुनिकी करण की गणना की गई हैं -

जनपद में कृषि आधुनिकीकरण का सूचकांक

$$\frac{4.46}{2} + \frac{16.37}{5} + \frac{19.42}{3} + \frac{89.29}{30} + \frac{1.26}{4} + \frac{35.87}{34} + \frac{89.70}{32}$$

$$= \frac{19.16}{7} \times 100$$

$= 273.71$

जनपद में कृषि आधुनिकीकरण का क्रम 273.71 प्रतिशत है जब कि पंजाब तथा हरियाणा में यह क्रम 600 प्रतिशत से अधिक है।

विकास खण्ड स्तर पर कृषि आधुनिकीकरण में काफी भिन्नता देखने को मिलती है जिसे सारणी 3.11 में दर्शाया गया है ।

सारणी 3.11 विकासखण्ड स्तर पर कृषि आधुनिकीकरण का क्रम

विकासखण्ड का नाम	कृषि आधुनिकीकरण का सूचकांक
1. जसवन्तनगर	264.29
2. बढ़पुरा	237.57

क्रमशः

ETAWAH DISTRICT
AGRICULTURAL MODERNIZATION
INDEX
NILL
400 AND ABOVE
350 - 400
NILL 300 - 350
250 - 300
BELOW- 250
0
20
KM
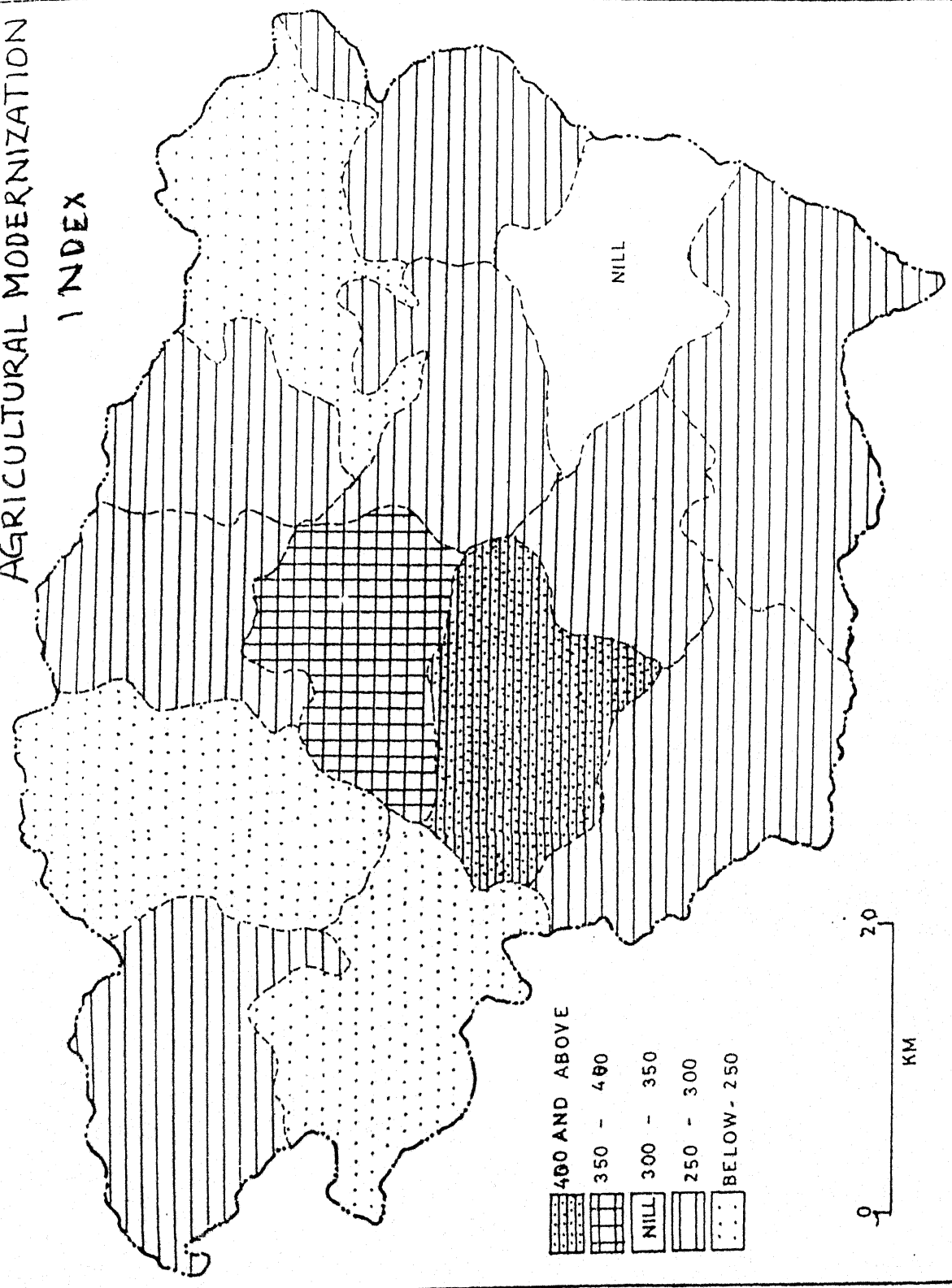
FIG. 15

3. बसरेहर	203.57
4. भरथना	351.14
5. ताखा	255.14
6. महेवा	421.57
7. चकरनगर	272.00
8. अछल्दा	250.71
9. विधूना	237.43
10. एरवाकटरा	206.86
11. सहार	264.86
12. औरैया	250.57
13. अजीतमल	273.29
14. भाग्यनगर	255.71
जनपद	273.71

सारणी 3.12 कृषि आधुनिकीकरण का स्तर

कृषि आधुनिकीकरण का	आधुनिकीकरण का स्तर	विकासखण्डों की संख्या	विकासखण्डों के नाम
250	अतिनिम्न	3	बसरेहर, बढ़पुरा, विधूना
250 से 300	निम्न	9	जसवन्तनगर, ताखा, चकरनगर अछल्दा, एरवाकटरा, सहार औरैया, अजीतमल, भाग्यनगर
300 से 350	मध्यम	कोई नहीं	— —
350 से 400	उच्च	1	भरथना
400 से अधिक	अतिउच्च	1	महेवा

सारणी 3.12 में कृषि आधुनिकीकरण के स्तर की तुलना जनपदीय स्तर से की गई है। सम्पूर्ण जनपद का कृषि आधुनिकीकरण का स्तर 273.71 प्रतिशत है, परन्तु विकासखण्ड स्तर पर इस स्तर में 203.57 प्रतिशत से 421.57 प्रतिशत तक भिन्नता देखने को मिलती है। इस अन्तर को पांच श्रेणियों में विभाजित किया गया है जिसमें 250 अंश से कम स्तर को तीन विकास खण्ड बसरेहर, बढ़पुरा, तथा विधूना क्रमशः 203.57 प्रतिशत, 237.57, प्रतिशत तथा 237.43 प्रतिशत के स्तर को प्रदर्शित कर रहे है जो कि अति निम्न स्तर का आधुनिकीकरण है। निम्न स्तर का आधुनिकीकरण 250 प्रतिशत से 300 प्रतिशत तक रखा गया है जिसमें अधिकांश विकासखण्ड आते हैं। इस स्तर तक कृषि आधुनिकी करण करने वाले विकास खण्डों में जसवन्तनगर 264.29 प्रतिशत, ताखा 255.14 प्रतिशत चकरनगर 272 प्रतिशत, अछल्दा 250.71 प्रतिशत, एरवाकटरा 266.86 प्रतिशत, सहार 264.86 प्रतिशत, औरैया 250.57 प्रतिशत, अजीतमल 273.29 प्रतिशत तथा भाग्यनगर 255.71 प्रतिशत का प्रदर्शन कर रहे हैं। मध्यम आधुनिकी करण जो 300 से 350 प्रतिशत तक स्तर को कोई भी विकास खण्ड नही प्राप्त कर पा रहा है जब कि उच्च स्तर 350 से 400 प्रतिशत के मध्य भरथना 351.14 प्रतिशत स्थित है। अति उच्च स्तर के आधुनिकीकरण के वर्ग में महेवा विकासखण्ड आता है जो 421.57 प्रतिशत आधुनिकीकरण करके जनपद में कृषि तकनीकी स्तर में समस्त विकास खण्डों में श्रेष्ठता प्राप्त किए हुए है। यदि जनपदीय स्तर से तुलना करें तो जनपदीय स्तर से कम स्तर पर कृषि आधुनिकीकरण वाले 12 विकास खण्ड है और केवल दो ही विकासखण्ड जनपदीय स्तर से उच्च स्तर को प्रदर्शित कर रहे हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. रिपोर्ट- नेशनल कमीशन आन एग्रीकल्चर एब्रिज्ड रिपोर्ट 1977 पी 527
2. अनन्त राव एन0 के0 1988 दि हिन्दू सर्वे आफ इण्डियन एग्रीकल्चर
3. पब्लिकेशन डिवीजन, गवर्नमेन्ट आफ इण्डिया इण्डिया 1990
4. त्रिपाठी बी0 बी0 (1992) भारतीय कृषि पी 215
5. हनुमन्तराव सी0 एच0 साइंस एण्ड टेक्नोलोजी पालिसी - एन - ओवर आल व्यू एण्ड ब्रोडर इम्लीकेशन इन एग्रीकल्चरल डिवलपमेन्ट इन इण्डिया, इण्डियन सोसायटी आफ एग्रीकल्चरल इकोनोमिक्स
6. दत्त आर0 तथा सुन्दरम के0 पी0 एम0 (1994) भारतीय अर्थव्यवस्था 497 - 98
7. त्रिपाठी बी0 बी0 (1992) भारतीय कृषि पी0 पी0 191 - 92
8. मेहता एम0 एम0 फार्म मेकनाइजेशन, दि हिन्दू सर्वे आफ इण्डियन एग्रीकल्चर 1989
9. चौहान आर0बी0 सिंह 1992 हमीरपुर तहसील में भूमि उपयोग पोषण स्तर एवं मानव स्वास्थ्य पी0 91-92
10. सिंह सुदामा (1994) भारतीय अर्थव्यवस्था समस्याएं और नीतियां पी0 286-288 नीलकमल प्रकाशन, गोरखपुर
11. धींगरा इश्वर (1991) ग्रामीण अर्थव्यवस्था पी 230-245 सुल्तान चन्द एण्ड सन्स नई दिल्ली ।
12. मामोरिया सी0 बी0 (1984) एग्रीकल्चरल प्रोब्लेम्स आफ इण्डिया पी0 173 - 220 किताब महल इलाहाबाद
13. सिंह जसवीर (1994) एग्रीकल्चरल ज्योग्रेफी पृष्ठ 126 - 127 टाटा मेकग्राहेल नई दिल्ली ।

चतुर्थ अध्याय

चतुर्थ अध्याय

शस्य प्रतिरूप

किसी भी क्षेत्र की कृषि जटिलताओं को समझने के लिए उस क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली समस्त फसलों का एक साथ अध्ययन आवश्यक होता है। क्यों कि इस अध्ययन से कृषि की क्षेत्रीय विषमताएं स्पष्ट होती है। शस्य संयोजन सम्बन्धी अध्ययन के अभाव में, कृषि की क्षेत्रीय विशेषताओं का उपयुक्त ज्ञान नहीं हो पाता है। शस्य संयोजन स्वरूप वास्तव में अकस्मात नही होता है अपितु वहां के भौतिक (जलवायु, धरातल, अपवाह, तथा मिटटी) तथा सांस्कृतिक ((आर्थिक, सामाजिक, तथा संस्थागत) पर्यावरण की देन है। इस प्रकार का अध्ययन मानव तथा भौतिक पर्यावरण के सम्बन्धों को पदर्शित करता है मानव तथा भौतिक पर्यावरण के पारस्परिक सम्बन्धों द्वारा ही संस्कृति का विकास होता है। अतः शस्य संयोजन प्रदेशों के परिसीमन से क्षेत्रीय कृषि विशेषताओं एवं भौतिक तथा सांस्कृतिक वातावरण का कृषि पर प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। जिससे वर्तमान कृषि समस्याओं को भलीभांति समझकर शस्य समायोजन योजनाबद्ध तरीके से लागू किया जा सकता है।

अनेक फसलों के क्षेत्रीय वितरण से बने प्रारूप को शस्य स्वरूप कहते हैं। प्रत्येक फसल क्षेत्र के प्रतिशत की गणना कुल फसल क्षेत्र से की जाती है। विभिन्न फसलों की प्रतिशत गणना के पश्चात फसल श्रेणी क्रम ज्ञात किया जाता है जिससे शस्य स्वरूप के अनेक आर्थिक पहलुओं का ज्ञान होता है। कृषक परिवार से राष्ट्रीय स्तर तक अपनाए गये शस्य स्वरूप के अनेक रूप होते हैं, शस्य स्वरूपीय अन्तर वहां के भौतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा संस्थागत कारकों को प्रदर्शित करते हैं। इन कारकों के प्रभाव को नापने के उददेश्य से अनेक महत्व पूर्ण अध्ययन किए गये हैं। वितरण सम्बन्धी पक्षों के अध्ययन में दो क्षेत्रीय तथा कालिक पक्षों के विश्लेषण का महत्वपूर्ण स्थान है। फसल वितरण में क्षेत्रीय एवं सामयिक अन्तर मिलता है। सामान्यतया शस्य स्वरूप के क्षेत्रीय अन्तर में समानता की अपेक्षा विषमता अधिक मिलती है। भिन्न भिन्न कृषि अर्थव्यवस्थाओं में फसल क्षेत्र में अन्तर होता है। कृषि अर्थव्यवस्था में विकास के साथ - साथ फसलों के स्वरूप एवं क्षेत्र में अंतर होता है। इस प्रकार कृषि एवं आर्थिक

विकास का घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। उत्पादकता अभिस्थापित शस्य स्वरूप वाले क्षेत्रों में आर्थिक विकास की गति तेज होती है। इस दृष्टिकोण से शस्य स्वरूप का आर्थिक पक्ष भी अध्ययन का प्रमुख अंग होता है। अब प्रश्न उठता है कि किसी स्थान विशेष का वर्तमान शस्य स्वरूप अनुकूलित है या नहीं? अनुकूलित शस्य स्वरूप का सुझाव देते समय विभिन्न फसलों के चुनाव तथा वरीयता का क्या आधार होना चाहिए ।

फसलों के प्रकार तथा सस्यन पद्धति का फार्म की मृदा, सिंचाई तथा अन्य साधनों के उपयोग पर उल्लेखनीय प्रभाव पड़ता है। फार्म पर उगाने के लिए चुनी गई फसलें तथा सस्यन पद्धति ऐसी होनी चाहिए जिससे फार्म पर उपलब्ध सभी साधनों का समुचित तथा भरपूर उपयोग हो सके और मृदा उर्वरता तथा मृदा के अन्य गुणों में समय के साथ कमी न आये। ऐसा तभी सम्भव हो सकता है जब फसलों तथा फसल चक्रों का चयन सुस्थापित वैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर किया जाये । जब हम फसलों के चयन की बात करते हैं तो इसके साथ सस्यन पद्धति और फसल चक्रों पर भी विचार करना आवश्यक हो जाता है। सामान्यतया सस्य प्रतिरूप की अपेक्षा सस्यन पद्धति शब्द अधिक उपयुक्त है। सस्यन पद्धति में फसल चक्र को भी सम्मिलित किया जाता है। फसल चक्र से आशय एक फसल के बाद दूसरी फसल उगाने के क्रम से हैं, लेकिन सस्यन पद्धति में लगातार एक ही फसल किसी विशिष्ट योजना के अनुसार या किसी विशेष उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उगाई जा सकती है। सभी कृषक कोई न कोई सस्यन पद्धति अपनाते हैं। जिसमें एक या अनेक फसल चक्र हो सकते हैं, जो अनेक कारकों पर निर्भर करते हैं।

अनेक वर्षों से फसल चक्रों पर अनुसंधान किए जा रहे हैं और वैज्ञानिकों ने अलग-अलग क्षेत्रों में अलग -अलग प्रकार के फसल चक्रों को अपनाने की अनुशंसाएं की हैं। हाल ही में फसल चक्रों के लाभों पर कुछ वैज्ञानिकों ने संदेह व्यक्त किए हैं। फसल चक्रों से प्राप्त होने वाले लाभों पर पर्याप्त प्रकाशित सामग्री मिलती है, जिनमें जीवांश स्तर, उर्वरता एवं मृदा संरचना को अनुकूल दशा में बनाए रखना यर उनमें सुधार करना सम्मिलित है। फसल चक्रों से खरपतवारों, हानिकारक कीटों,फसल के रोगों और भूमि कटाव की रोकथाम में सहायता मिलती है। शस्य स्वरूप पर पडने वाले भौतिक कारकों के परोक्ष प्रभावों का अध्ययन अनेक भूगोल वेत्ताओं द्वारा किया गया है। लेकिन फसल चक्र पर पडने वाले

प्रभावों का अध्ययन कृषि अर्थशास्त्रियों द्वारा ही विशेष रूप से किया गया है।झा[1] ने उत्तरी बिहार के चम्पारन जिले के कुछ कृषक परिवारों के सिंचाई साधनों से सम्पन्न फार्म के शस्य स्वरूप के आर्थिक पक्षों का अध्ययन किया है। रामा लिंगन[2] ने लघु स्तर पर शस्य स्वरूप तथा अनेक कारक जैसे जोत का आकार, सिंचाई, शुद्ध लाभ, मिश्रित फसल व्यवस्था के प्रभावों का अध्ययन किया है, लेखक का यह विचार है कि शस्य स्वरूप तथा प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन दो आधारों पर किया जाना चाहिए (1) वृहद प्रदेशीय स्तर पर (2) लघु प्रदेशीय स्तर पर । शस्य स्वरूप को वृहद स्तर पर प्रभावित करने वाले कारक (1) मिटटी (2) जलवायु भिन्नता (3) बाजार सुविधा (4) यातायात उपलब्धि तथा (5) मांग पूर्ति परिस्थितियां । जब कि लघु स्तर पर प्रभावित करने वाले कारक (1) जोत का आकार (2) रैय्यतदारी (3) सिंचाई (4) प्रत्येक फसल से शुद्ध लाभ की प्राप्ति (5) खाद्य फसलें । इसके अलावा भी (6) जल संरचना (7) जन रचना (8) पारिवारिक आय (8) आधुनिक तकनीकी आविष्कारों को अपनाने की क्षमता (9) शिक्षा स्तर (10) सामाजिक व्यवस्था एवं परम्पराएं आदि। रामा लिंगन के कुछ निष्कर्ष इस प्रकार है (1) जोत के आकार में वृद्धि के साथ - साथ उत्पादित फसलों की संख्या में भी वृद्धि होती है। (2) जोत के आकार में वृद्धि के साथ - साथ व्यापारिक फसलों के क्षेत्र में वृद्धि होती है (3) उत्पादित फसल पर बाजार में बिकने वाली कीमत का भी प्रभाव पड़ता है लेकिन बड़े जोताकार के कृषकों पर अपेक्षाकृत अधिक प्रभाव पड़ता है (4) कृषक परिवार से पूछतांछ से यह निष्कर्ष निकलता है कि व्यक्तिगत स्तर पर सामाजिक एवं आर्थिक तथा लम्बे समय से अपनाई गई फसल व्यवस्था का प्रभाव शस्य स्वरूप पर अधिकतम पड़ता है। मजीद[3] का भी यही निष्कर्ष है कि शस्य स्वरूप को निर्धारित करने में जोत का आकार एक महत्वपूर्ण कारक है। विशेष रूप से खाद्यान्न तथा मुद्रादायिनी फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र निर्धारित करने में कृषक जोत के आकार से प्रभावित होता है। शहरी सीमान्त क्षेत्रों के शस्य स्वरूप के अध्ययन के आधार पर जोगलेकर[4] का निष्कर्ष है कि जोत के आकार में वृद्धि के साथ - साथ व्यापारिक फसलों के क्षेत्र में वृद्धि होती है तथा खाद्यान्न फसलों में ह्रास होता है। **मण्डल तथा घोष**[5] का निष्कर्ष है कि छोटी जोत के आकार वाले कृषकों को चार फसल से अधिक नही उगाना चाहिए क्यों कि चार या चार से कम फसलों के उत्पादन से ही कृषक को अधिक लाभ हो सकता है तथा अनेक फसलोत्पादन की अपेक्षा जोखिम भी कम रहता है।

आर्थिक कारकों में बाजार में फसल की कीमत तथा सर्वाधिक आय भी शस्य स्वरूप को प्रभावित करती है। इसीलिए गन्ना क्षेत्र तथा बाजार में प्राप्त कीमत का घनिष्ट सम्बन्ध मिलता है, जूट, चावल क्षेत्र, तथा मूल्य का सहसम्बन्ध मिलता है, बाजार में इन फसलों की मूल्य वृद्धि के साथ क्षेत्र में भी वृद्धि हो जाती है। झा का भी यही निष्कर्ष है कि चम्पारन जिले में चावल तथा मेझडा शस्य सम्मिश्रण से कृषकों को प्रति एकड़ सर्वाधिक आय होती है। **सिंह तथा सिंह**[6] के मतानुसार मध्य प्रदेश के शस्य स्वरूप में मूंगफली के क्षेत्र में अधिक वृद्धि का मुख्य कारण सर्वाधिक लाभ की भावना है। **राजकिशन**[7] के अनुसार पंजाब के शस्य स्वरूप में हाल के परिवर्तन का मुख्य कारण प्रति एकड़ पारस्परिक लाभ की चेतना है। अनेक क्षेत्रों में फसल विनाश के जोखिम को कम करने की आवश्यकता के दृष्टिकोण से शस्य स्वरूप को अपनाया जाता है। अनेक क्षेत्रों में मक्का तथा ज्वार की खेती इसलिए की जाती है कि सूखे मौसम में फसलोत्पादन के जोखिम को कम किया जा सके । पूर्वी उत्तर प्रदेश में खरीफ फसलों की मिश्रित खेती (सांवा+अरहर+उर्द+बाजरा) विषम मौसम में बीमा का कार्य करती है। फलस्वरूप पूर्वी उत्तर प्रदेश के शस्य स्वरूप में मिश्रित खेती का महत्वपूर्ण स्थान है, जब कि प्रति एकड़ शुद्ध लाभ के दृष्टिकोण से शस्य स्वरूप अपेक्षाकृत कम लाभप्रद है। जोगलेकर के मतानुसार बीमारियों से प्रभावित होने के कारण अनेक छोटे जोत वाले कृषक मिर्च की खेती नही करते हैं। इसी प्रकार बार - बार मूल्य में कमी बेशी के कारण तिलहन की खेती भी नही करते हैं।

खरीफ तथा रबी फसलों की कटाई की अवधि के बीच में मुद्रा प्राप्ति के दृष्टिकोण से भी कुछ फसलों का उत्पादन किया जाता है। कोयाम्बटूर के निकट केला तथा गन्ने की खेती श्रम अभाव का प्रतिफल है। **माथुर**[8] के अध्ययन के अनुसार विदर्भ में एक ऐसे शस्य स्वरूप को अपनाया जाता है जिसमें पुरूष श्रमिकों को वर्ष भर कार्य मिलता है। लागत उपलब्धि सम्बन्धी सुविधाएं भी शस्य स्वरूप को निर्धारित करती है। कृषक द्वारा फसल के चुनाव में बीज, खाद, सिंचाई, तकनीकी ज्ञान, पूंजी, यातायात, सम्भरण, तथा बाजार सुविधाओं का प्रभाव पड़ता है। **माल्या**[9] के अनुसार उत्तरी तथा दक्षिणी आरकाट जिले में खाद्य फसल क्षेत्र तथा बाजार से दूरी का धनात्मक सहसम्बन्ध है। शासन द्वारा जारी किए गये अनेक भूमि अधिनियम योजनाएं, कर, खाद्य फसल, भूमि उपयोग कानून, गहरी खेती योजना, उत्पादन कर आयात, निर्यातकर, एवं सुविधा तथा ग्रामीण विद्युतीकरण का भी शस्य स्वरूप पर स्पष्ट प्रभाव पड़ता है।

फसलों का वितरण अध्ययन स्थान एवं समय के संदर्भ में किया जाता है। इस प्रकार के अध्ययन को तीन शीर्षकों में विभाजित किया जा सकता है -

1. फसलों का क्षेत्रीय वितरण अध्ययन -

इस प्रकार का अध्ययन सरल होता है। इससे फसल के क्षेत्रीय महत्व की जानकारी होती है तथा सम्बन्धित कारकों का भी अध्ययन एवं स्पष्टीकरण होता है। क्षेत्रीय वितरण अध्ययन के आधार पर संकेन्द्रण सूची भी ज्ञात की जाती है। हुसैन[10] ने उत्तर प्रदेश के शस्य एकाग्रता के प्रतिरूपों का अध्ययन किया है इनके मतानुसार गन्ना फसल प्रदेश से आशय उस क्षेत्र की कृषि भू दृश्यावली में गन्ना फसल के अधिकतम संकेन्द्रण से है। हुसैन ने उत्तरप्रदेश की अनेक उत्पादित फसलों (चावल, बाजरा, मक्का, गेहूँ, चना, जौ, तथा गन्ना) की संकेन्द्रण सूची निकालते हुए प्रत्येक फसल को पांच वर्गों में विभाजित किया है। वास्तव में यह अध्ययन फसल वितरण सम्बन्धी विशेषताओं को भली भांति समझने में महत्वपूर्ण है। क्षेत्रीय वितरण अध्ययन में दूसरे उपागम का सम्बन्ध सीधे फसल प्रतिशत के आधार पर शस्य वरीयता के विश्लेषण से है। ऐसा तरीका सामान्य रूप से अनेक कृषि भूगोल वेत्ताओं द्वारा भिन्न - भिन्न क्षेत्रीय स्तरों पर अपनाया गया है। इनमें से कुछ अध्ययन तहसील तथा विकासखण्ड के स्तर पर भी किए गये हैं जिनमें गांव को न्यूनतम इकाई मानकर आकडों को प्रदर्शित किया गया है। वृहत क्षेत्रीय अध्ययन में कुछ चुने गये प्रतिदर्शी (प्रदर्शित) गांवों के शस्य स्वरूप का विस्तृत अध्ययन भी किया गया है।

2. फसलों का क्षेत्रीय परिवर्तन -

साधारणतया फसलों के दो वर्षों (समयान्तर में) के आधार पर क्षेत्रीय परिवर्तन सम्बन्धी अध्ययन किया जाता है। उदाहरण के लिए गेहूँ, फसल के क्षेत्र में 1911 तथा 1971 के वर्षों में क्षेत्रीय परिवर्तन । इस प्रकार के अध्ययन में अनेक शब्दों का प्रयोग किया जाता है जैसे - ((अ) क्षेत्रीय घटबढ़ (ब) क्षेत्रीय परिवर्तन, (स) हटाव (द) विचलन । जब फसल वितरण का अध्ययन दो विभिन्न समयों में प्रतिशत अन्तर के माध्यम से किया जाता है तब उसे फसल क्षेत्रीय घटबढ़ कहते हैं। जब दो वर्षों में फसल अन्तर को मापने के लिए किसी एक वर्ष को आधार मानकर परिवर्तन प्रतिशत की गणना की जाती है तब उसे क्षेत्रीय परिवर्तन कहते हैं। इन शब्दों का प्रयोगात्मक अर्थ तालिका 4.1 के आधार पर समझा जा सकता है।

तालिका क्रमांक 4.1 ग्राम "अ" के शस्य स्वरूप में हटाव ।

विवरण	गेहूँ	गेहूँ चना	दालें	धान	मक्का बाजरा	गन्ना	शब्जी	मूँगफली	चारा
चार वर्षीय औसत अन्तिम वर्ष 1970–71	28.7	4.2	13.9	1.2	11.1	16.4	0.5	5.3	18.7
चार वर्षीय अन्तर अन्तिम वर्ष 1987–88	28.4	6.0	3.0	1.5	7.2	21.8	–	1.5	30.6
घट बढ़	−0.3	+1.8	−10.9	+0.3	−3.9	+5.4	–	−4.2	+11.9
परिवर्तन (प्रतिशत)	−1.04	+42.8	−78.4	+29.4	−35.1	+32.9	–	−74.1	+68.1

रामा सुब्बन[11] ने शस्य स्वरूप परिवर्तन के अध्ययन में क्षेत्रीय घट बढ़ तथा क्षेत्रीय परिवर्तन शब्दों के प्रयोग की आलोचना करते हुए कम महत्वपूर्ण बताया । इनके अनुसार शस्य स्वरूप में दो प्रकार का परिवर्तन होता है, इन दोनों परिवर्तनों का नामकरण इन्होंने (1) हटाव (2) विचलन के रूप में किया है। अ और ब शस्य स्वरूपों में जो अन्तर होता है। उसे हटाव कहते हैं। 'अ' शस्य स्वरूप के अन्तर्गत अनेक फसलों के क्षेत्र का अन्तर को विचलन कहते हैं। इस प्रकार 'हटाव' शब्द का प्रयोग शस्य स्वरूप के वाह्य घट बढ़ के लिए किया जाता है जब कि विचलन शब्द का प्रयोग एक ही शस्य स्वरूप में अनेक फसलों के आन्तरिक अन्तर के लिए किया जाता है। शस्य स्वरूप में परिवर्तन सम्बन्धी दो दशाएं इस प्रकार है - (1) दो शस्य स्वरूपों में बिना हटाव के भी विचलन की मात्रा अधिक हो सकती है तथा (2) विचलन की अनुपस्थिति में भी शस्य स्वरूप में हटाव हो सकता है। इन दोनों परिस्थितियों के स्पष्टीकरण के लिए रामासुब्बन ने एक काल्पनिक तालिका प्रस्तुत की है -

तालिका 4.2 काल्पनिक उदाहरण द्वारा शस्य स्वरूप का तुलनात्मक अध्ययन

फसल	शस्य स्वरूप (क)	शस्य स्वरूप (ख)	शस्य स्वरूप (ग)
फसल 1	70	40	20
फसल 2	20	30	10
फसल 3	8	20	40
फसल 4	2	10	30

सारणी 4.2 से क तथा ख शस्य स्वरूप के तुलनात्मक अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि दोनों में फसलों का क्रम समान है जब कि दोनों में आन्तरिक भिन्नता अधिक है। इसी प्रकार ख तथा ग शस्य स्वरूप से निष्कर्ष निकलता है कि ख तथा ग शस्य स्वरूप में विभिन्न फसलों की श्रेणी समान नहीं है, दूसरे शब्दों में हटाव की मात्रा अधिक है जबकि विचलन विहीन है। दोनों शस्य स्वरूपों में समान अंक जैसे 10, 20, 30 तथा 40 का प्रयोग किया गया है। इन दोनों परिस्थितियों के विश्लेषण से पता चलता है कि हटाव तथा विचलन दोनों समान नहीं है। रामासुब्बन ने हटाव की मात्रा तथा दिशा दोनों को निर्धारित करने में नई सांख्यिकी विधि का प्रयोग करते हुए अपने शोध पत्र में भिन्न-भिन्न जोताकार के शस्य स्वरूप का उदाहरण लेकर हटाव तथा विचलन को समझाया है।

टी0 रामाकृष्णा राव[12] ने शस्य स्वरूप परिवर्तन का विश्लेषण तीन अवस्थाओं में किया है (अ) पहचान (ब) मात्रा (स) दिशा। परिवर्तन पहचान के लिए इन्होंने रामासुब्बन का अनुसरण किया परन्तु इनके मतानुसार सीमान्तीय परिवर्तन के लिए रामा सुब्बन का सूत्र उपयुक्त नही है। इन्होंने हटाव की मात्रा मालूम करने के लिए अपना एक सूत्र प्रस्तुत किया जो इस प्रकार है -

$$\text{हटाव की मात्रा} = n_1/Y' - R/W_i$$

जहां Y_i = फसल में अन्तर की मात्रा

R = जिला में सम्पूर्ण, फसल क्षेत्र में अन्तर की मात्रा

W_i = भार

n = जिला में उत्पादित फसलों की संख्या

कटारिया[13] ने करनाल जिले में विभिन्न अन्न के क्षेत्रीय परिवर्तन का अध्ययन किया है। इन्होंने सर्वप्रथम प्रतिशत वृद्धि के आधार पर परिवर्तन गहनता की गणना की है। तत्पश्चात परिवर्तन की मात्रा ज्ञात की गइ है। इनका अध्ययन फसल के क्षेत्रीय परिवर्तन के द्रृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, अनेक भूगोल वेत्ताओं ने इस प्रकार का अध्ययन किया है ।

3. फसलों का कालिक अन्तर -

दो विभिन्न वर्षों के फसलान्तर के स्थान पर जब अनेक वर्षों में फसल क्षेत्र की अन्तर प्रवृत्ति का अध्ययन करतें हैं तब उसे सामयिक या कालिक विश्लेषण कहते हैं। वास्तव में दो वर्षों पर आधारित क्षेत्रीय अन्तर सम्बन्धी विश्लेषण अस्थाई प्रवृत्ति को प्रदर्शित करता है जब कि अनेक वर्षों के विश्लेषण से स्थाई प्रवृत्ति की जानकारी होती है। फलस्वरूप प्रभावित करने वाले कारकों की प्रवृतित्त एवं क्रम को समझना सरल हो जाता है। सैनी[14] ने उत्तर प्रदेश के परिवर्तनशील शस्य स्वरूप के कुछ पहलुओं का अध्ययन किया है। इनका निष्कर्ष है कि पश्चिम उत्तर प्रदेश के शस्य स्वरूप में मुद्रादायिनी एवं प्रमुख फसलों के क्षेत्र में निरंतर वृद्धि हो रही है, जब कि दाल एवं निम्न कोटि की खाद्यान्न फसलों के क्षेत्र में ह्रास हो रहा है, इसका मुख्य कारण सिंचाई सुविधाओं में सुधार फसल की पारस्परिक लाभ प्रवृत्ति एवं आधुनिक तकनीकी पक्षों की कृषकों को जानकारी है। कौर[15] ने अमृत शहर तहसील में बोये गये क्षेत्र का क्षेत्रीय एवं कालिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। सिंह[16] ने बड़ौत विकास खण्ड के शस्य स्वरूप का कालिक विश्लेषण किया है। इस आशय से 30 वर्ष (1937-38 से 1967 - 68) के आकडों के आधार पर बडोत विकास खण्ड के 54 ग्रामों में से 6 प्रतिदर्शी ग्रामों में शस्य स्वरूप प्रवृत्ति निर्धारित की गई है ।

अनुकूलतम शस्य स्वरूप संकल्पना

अनुकूलतम शस्य स्वरूप संकल्पना वर्तमान परिस्थितियों में भूमि में प्रति इकाई अधिकतम लाभ पर आधारित है। दूसरे शब्दों में उस शस्य स्वरूप को अपनाया जाये जिससे सर्वाधिक आय प्राप्त हो सके तथा भूमि संसाधन को भी सुरक्षित रखा जा सके। अनुकूलतम शस्य स्वरूप की प्राप्ति हेतु तीन मुख्य उपागम प्रचलित है जो अनेक कृषि अर्थशास्त्रियों द्वारा अपनाए गये हैं ।

1. प्रति एकड़ अधिक उपज उपागम -

देसाई के अनुसार गुजरात राज्य की खेती से प्राप्त कुल आय में 39 प्रतिशत की वृद्धि केवल कम पैदावार वाली फसलों की उत्पादकता बढाने से हो सकती है। इनका मत है कि ऐसे अनेक क्षेत्र है जहां निकटवती क्षेत्रों की अपेक्षा प्रति एकड़ उत्पादन कम है, यदि ऐसे भागों की फसलों की उत्पादकता स्तर निकटवती क्षेत्रों के समान किया जा सके तो कुल उपज में पर्याप्त वृद्धि हो सकती है। मुथीनान ने उपज सिद्धान्त को प्रतिपादित किया। यह सिद्धान्त अनेक फसलों की अन्तक्षेत्रीय विशिष्टता पर आधारित है। इनके मतानुसार जिस भाग में जिस फसल से प्रति एकड़ उत्पादन राष्ट्रीय औसत से अधिक होता है उस भाग में उसी फसल का उत्पादन होना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि दो फसलों का उत्पादन राष्ट्रीय औसत से अधिक हो रहा हो तो उस फसल को प्राथमिकता मिलनी चाहिए, जिससे आपस में अधिकतम उत्पादन प्राप्त होता है।

2. सर्वाधिक शुद्ध आय उपागम -

इस समय सर्वाधिक शुद्ध आय उपागम अधिक प्रचलित है। वास्तव में आधुनिकतम तकनीकी लागत का प्रयोग करके उत्पादकता किसी भी सीमा तक बढाई जा सकती है, लेकिन प्रश्न है कि शुद्ध लाभ का प्रतिशत या लागत आय अनुपात क्या होना चाहिए? सर्वाधिक शुद्ध लाभ उपागम वैज्ञानिक है फसलों से प्राप्त शुद्ध आय की गणना दो मुख्य सांख्यिकी विधियों से की जाती है।

(अ) लीनियर प्रोग्रामिंग विधि -

अनेक कृषि अर्थशास्त्रियों ने विभिन्न फसलों के अन्तर्गत अनुकूलतम क्षेत्र निर्धारित करते

समय इस उपागम को अपनाया है । **राजकृष्णा**[17] ने पंजाब में अनेक फसलों के अन्तर्गत अनुकूलित क्षेत्र निर्धारित करते समय लीनियर प्रोग्रामिंग विधि को अपनाया है । छोटे स्तर पर अनुकूलित भूमि का निर्धारण लीनियर प्रोग्रामिंग द्वारा अधिक उचित होता है , जिसमें फसल की बाजार कीमत, प्रति एकड़ कृषि लागत, भिन्न-भिन्न फसलों की प्रति एकड़ उपज , मौसम तथा दूसरे संसाधन अवरोधों को ध्यान में रखकर फार्म से सर्वाधिक शुद्ध लाभ की गणना की जाती है ।

(ब) <u>उत्पादन फसल उपागम</u> :

इस उपागम से आशय उत्पादन को प्रभावित करने वाले मुख्य कारकों के प्रभाव को निर्धारित करके शुद्ध लाभ को ज्ञात किया जाना । इसलिए इस उपागम को लागत आय सम्बन्ध भी कहते हैं । कृषि अर्थशास्त्रियों ने अधिकांशतः भूमि, श्रम, पूँजी तथा प्रबन्ध लागत के आधार पर शुद्ध लाभ ज्ञात किया है । यदि Y किसी समय किसी उत्पादक इकाई को प्रदर्शित करता है तथा f जिसमें संयुक्त लागत $X_1 \quad X_2 \quad X_3 \quad X_4 \ldots X_n$ का फलन है तो उत्पादन फलन को निम्न प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है -

(i) जिसमें एक चर लागत को ध्यान में रखा जाता है -

$$Y = f\,(X_1 / X_2, X_3 \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots X_n)$$

(ii) जिसमें दो चर लागतों को ध्यान में रखा जाता है -

$$Y = f\,(X_1,\ X_2 /\ X_3,\ X_4 \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots X_n)$$

(iii) जिसमें सभी लागत चरों को ध्यान में रखा जाता है -

$$Y = f(X_1,\ X_2,\ X_3,\ X_4 \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots\ldots X_n)$$

इस समीकरण से यह स्पष्ट होता है कि Y की आय सभी लागत चरों ($X_1 \ X_2 \ X_3 \ldots\ldots X_n$) से निर्धारित होती है ।

अनेक कृषि अर्थशास्त्रियों ने फसलों के अनुकूलित क्षेत्र को निर्धारित करने के उद्देश्य से उत्पादन फलन उपागम को अपनाया है । जिनमें से चौधरी, देसाई, जिन्दल तथा डे का अध्ययन महत्वपूर्ण है । इन लोगों ने दिल्ली के "गहरी क्षेती योजना क्षेत्र " में अनुकूलित शस्य सम्मिश्रण को निर्धारित किया है । अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य (क) दो मुख्य प्रतिस्पर्धी फसलों के अन्तर्गत अनुकूलित क्षेत्र का निर्धारण (ख)

अनुकूलतम व वास्तविक शस्यय क्षेत्र के अन्तर को ज्ञात करना । संसाधन उपयोग क्षमता को मालूम करने के लिए कॉवड्गलस फलन का प्रयोग किया गया है ।

(स) **योजना लक्ष्य उपागम** :

इस उपागम का मुख्य उद्देश्य योजना में पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति है । किसी क्षेत्र के योजनाबद्ध विकास के लिए आवश्यक है कि भविष्य के लिए एक योजना बनाई जाय तथा लक्ष्य निर्धारित किए जॉय तथा लक्ष्य की प्राप्ति हेतु शस्य स्वरूप अपनाया जाय और यही अनुकूलित शस्य स्वरूप होगा ।

अध्ययन क्षेत्र का शस्य प्रतिरूप :

किसी भी अर्थव्यवस्था की कृषि का शस्य प्रतिरूप का निर्धारण वहॉं के प्राकृतिक पर्यावरण से होता है । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि फसलों की विविधता एवं सघनता क्षेत्र के विभिन्न तापमान मिट्‌टी के गुण धर्म, वर्षा की मात्रा और भूमिगत जलस्तर की मात्रा इत्यादि से प्रभावित होती है । इस दृष्टि से यदि देखा जाय तो जनपद में वर्ष में तीन फसलें उगाई जाती हैं । यह फसलें ऋतु परिवर्तन से प्रभावित होती है, अर्थात वर्षा ऋतु में खरीफ. शरद ऋतु में रबी तथा ग्रीष्म ऋतु में जायद फसलों का वर्चस्व रहता है । इनमें से रबी फसल का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है जिसकी कुल कृषि भूमि में 50 प्रतिशत से भी अधिक भागेदारी है । जनपद के सम्पूर्ण फसलोत्पादन को दो वर्गों में रखा जा सकता है –खाद्य फसलें तथा अखाद्य फसलें। खाद्य फसलों के अन्तर्गत गेहूँ, चावल. ज्वार, बाजरा, मक्का तथा जौ ही प्रमुख है दलहनी फम्लों में उर्द, मूँग, अरहर. चना तथा मटर ही पमुख रूप से उगाई जाती है , मसूर का भी अस्तित्व है परन्तु बहुत कम/तिलहनी फसलों में लाही, सरसों का ही प्रमुख स्थान है जबकि अखाद्य फसलों में गन्ना ही उगाया जाता है । जायद फसलों में शब्जियां, खीरा. ककडी, खरबूजा तथा तरबूज ही प्रमुख है । शब्जियां हर मौसम में उगाई जाती है । इस प्रकार कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि जनपद के शस्य स्वरूप में खाद्यान्न फसलों का ही बोलवाला है । सारिणी क्रमांक 4.3 में विभिन्न मौसमों की विभिन्न फसलों को दर्शाया गया है ।

तालिका क्रमांक 4.3 विकास खण्ड स्तर पर विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल 1990–91 (हेक्टेयर)

विकास खण्ड	रबी	खरीफ	जायद	कुल
1. जसवन्त नगर	2,33,46,(55.77)	1,75,85,(42.00)	93,2(2.23)	41,863
2. बढ़पुरा	1,12,62,(52.70)	98,38,(46.04)	26,8(1.26)	21,368
3. बसरेहर	2,35,94,(51.38)	2,11,70,(46.10)	1,15,7(2.52)	45,921
4. भरथना	1,61,12,(55.03)	1,26,23,(43.11)	54,4(1.86)	29,279
5. ताखा	1,49,10,(52.96)	1,28,96,(45.80)	34,9(1.24)	28,155
6. महेवा	2,00,35,(54.87)	1,58,87,(43.51)	58,9(1.62)	36,511
7. चकरनगर	95,94,(56.56)	73,64,(43.42)	3(0.02)	16,961
8. अछल्दा	1,59,26,(55.77)	1,23,20,(43.14)	31,1(1.09)	28,557
9. विधूना	1,71,83,(55.55)	1,33,93,(43.30)	35,4(1.15)	30,930
10. एरवाकटरा	1,41,48,(57.74)	99,79,(40.72)	37,7(1.54)	24,504
11. सहार	1,71,31,(56.48)	1,27,99,(42.19)	40,4(1.33)	30,334
12. औरैया	2,11,51,(55.29)	1,70,61,(44.60)	4,0(0.11)	38,252
13. अजीतमल	1,37,68,(55.44)	1,08,70,(43.77)	19,6(0.79)	24,834
14. भाग्यनगर	1,63,72,(59.88)	1,06,48,(38.95)	32,1(1.17)	27,341
ग्रामीण	2,34,532(55.21)	1,84,411(43.41)	5,845(1.38)	4,24,810
समस्त नगरीय	2,88,(54.65)	2,05,(38.90)	3,4(6.45)	527
योग जनपद	2,34,820(55.21)	1,84,616(43.41)	5,879([illegible].38)	4,25,337

स्रोत: सांख्यिकीय जनपद इटावा, 1992

(कोष्ठक में विभिन्न फसलों का प्रतिशत अनुपात दर्शाया गया है)

सारिणी क्रमांक 4.3 जनपद में विकास खण्ड स्तर पर तीनों फसलों रबी, खरीफ तथा जायद के क्षेत्रफल पर प्रकाश डाल रही हैं । सारिणी से ज्ञात हो रहा है कि विभिन्न विकास खण्डों में रबी की फसल में 51 प्रतिशत से 59.88 प्रतिशत तक भिन्नता है अर्थात बसरेहर विकास खण्ड में रबी फसल की भागेदारी 51.38 प्रतिशत तथा भाग्य नगर की सर्वाधिक 59.88 प्रतिशत भागेदारी दिखाई पड़ रही है । 55 प्रतिशत से अधिक हिस्सेदारी दर्शाने वाले अन्य विकास खण्ड जसवन्तनगर 55.77 प्रतिशत, भरथना 55.03 प्रतिशत, चकरनगर 56.56 प्रतिशत , अछल्दा 55.77 प्रतिशत, विधूना 55.55 प्रतिशत, एरवाकटरा 57.74 प्रतिशत, सहार 56.48 प्रतिशत औरैया 55.29 प्रतिशत तथा अजीतमल 55.44 प्रतिशत हिस्सेदारी प्रदर्शित करते हैं । केवल तीन विकास खण्ड जो 55 प्रतिशत से कम भागेदारी कर रहे हैं वे बढ़पुरा 52.70 प्रतिशत बसरेहर 51.38 प्रतिशत तथा ताखा 52.96 प्रतिशत रबी फसल का हिस्सा प्रदर्शित कर रहे हैं । इसका अर्थ है कि जनपद में रबी फसल का एक महत्वपूर्ण स्थान है ।

जहाँ तक खरीफ फसल का सवाल है तो इसका महत्व भी जनपद में कम नहीं है, कुल कृषि क्षेत्र में खरीफ फसल का प्रतिनिधित्व औसत रूप में 43.41 प्रतिशत है । इस औसत से अधिक खरीफ फसल का क्षेत्रफल रखने वाले विकास खण्डों में बढ़पुरा 46.04 प्रतिशत, बसरेहर 46.10 प्रतिशत , ताखा 45.80 प्रतिशत, महेवा 43.51 प्रतिशत, चकरनगर 43.42 प्रतिशत औरैया 44.60 प्रतिशत , अजीतमल 43.77 प्रतिशत हैं जबकि जनपदीय औसत से कम भागेदारी करने वाले विकासखण्ड जसवन्तनगर 42.00 प्रतिशत भरथना 43.11 प्रतिशत, अछल्दा 43.14 प्रतिशत, विधूना 43.30 प्रतिशत, एरवाकटरा 40.72 प्रतिशत , सहार 42.19 प्रतिशत तथा भाग्यनगर केवल 38.95 प्रतिशत है । जायद फसलों का क्षेत्रफल जनपद में कुल कृषि क्षेत्र का मात्र 1.38 प्रतिशत है परन्तु कुछ विकासखण्डों की भागेदारी 2 प्रतिशत से भी अधिक है जिनमें दो विकासखण्ड जसवन्तनगर 2.93 प्रतिशत तथा बसरेहर की सर्वाधिक 2.52 प्रतिशत हिस्सेदारी है । इस दृष्टि से वरीयता क्रम में चकरनगर विकास खण्ड मात्र 0.02 प्रतिशत हिस्सेदारी करके न्यूनतम स्थिति में है, इससे मिलती जुलती स्थिति में औरैया 0.11 प्रतिशत तथा अजीतमल 0.79 प्रतिशत है । अन्य विकास खण्ड 1 प्रतिशत से अधिक जायद फसलों की हिस्सेदारी रख रहे हैं । परन्तु जिनकी भागेदारी 1.5 प्रतिशत से अधिक है उनमें भरथना 1.86 प्रतिशत, महेवा 1.62 प्रतिशत तथा एरवाकटरा 1.54 प्रतिशत है । अन्य विकास खण्ड 1.5 से 1 प्रतिशत तक भागेदारी निर्वाह कर रहे हैं । वास्तव में खाद्यान्नों के अलावा जायद फसलें ही खाद्य सामग्री में शब्जियां उपलब्ध कराती हैं । संतुलित भोजन में न्यूनाधिक हरी शब्जियों, जड़दार शब्जियों, पत्तेदार शब्जियों का भी महत्वपूर्ण स्थान होता है । इस

दृष्टि से देखा जाये तो जनपद में पर्याप्त क्षेत्र में इन फसलों का उत्पादन किया जाता है । इस प्रकार स्पष्ट है कि जनपद में रबी का औसत हिस्सा 55.21 प्रतिशत है जबकि खरीफ का 43.41 प्रतिशत है और जायद फसलों का मात्र 1.38 प्रतिशत भाग है ।

जनपद में तीनों ही फसलों में खाद्यान्नों का ही बर्चस्व है क्योंकि कुल कृषित क्षेत्र के 85 प्रतिशत से अधिक भाग पर खाद्यान्न फसलें बोई जाती है जब कि व्यापारिक फसलों के अन्तर्गत बोया जाने वाला क्षेत्र 15 प्रतिशत से भी कम है ।

1- <u>खरीफ की प्रमुख फसलें</u> :

ऊँचे तापक्रम तथा आर्द्र-वायुमण्डलीय दशाओं में खरीफ ऋृतु प्रारम्भ होती है । इस ऋृतु की फसलें जून जुलाई में बोई जाती है और अक्टूबर-नवम्बर तक पककर तैयार हो जाती है । इस दृष्टि से देखा जाय तो अध्ययन क्षेत्र में खरीफ की फसलों में धान, ज्वार, बाजरा तथा मक्का आदि खाद्यान्न फसलों में प्रमुख फसलें है, जबकि दलहनी फसलों में उर्द, मूँग, अरहर तथा सोयाबीन आदि प्रमुख फसलें उगाई जाती है, इस ऋृतु में मूँगफली भी अपनी उपस्थिति दर्शा कर अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करती प्रतीत हो रही है । इसके अतिरिक्त इस ऋृतु में शब्जियां भी एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं । जनपद में खरीफ फसलों का विवरण अंग्रांकित है :

1-<u>धान</u>:

धान जनपद की खरीफ में उपजाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण फसल है । जनपद के कुछ क्षेत्रों में अधिकांश लोगों का प्रमुख भोजन है । चावल अन्य धान्य फसलों से कैलोरी एवं भोजनात्मक मान के दृष्टिकोण से कम नहीं है । इसमें 7.7 प्रतिशत प्रोटीन 72.5 प्रतिशत कार्वोहाइड्रेट (स्टार्च) 2.2 प्रतिशत वसा, 5.9 प्रतिशत राख, 11.8 प्रतिशत सैल्यूलोज पाया जाता है । जनपद के खरीफ फसल के कुल क्षेत्रफल के लगभग 37 प्रतिशत क्षेत्र पर यह फसल उगाई जाती है । विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल की दृष्टि से इसका द्वितीय स्थान है, जबकि खरीफ फसल में इसका प्रथम स्थान है । भोजन के रूप में प्रयोग करने के अतिरिक्त चावल का प्रयोग विभिन्न उद्योगों में किया जाता है । चावल में पाये जाने वाले स्टार्च का कपड़ा उद्योग में विशेष रूप से प्रयोग किया जाता है । सूखे पौधों को कांच का सामान एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजते समय पैकिंग के लिए प्रयोग किया जाता है । हरे पौधों को चारे के रूप में सूखे पौधों को निर्धन वर्ग विछावन के रूप में भी प्रयोग करते हैं ।

धान की अच्छी उपज के लिए अधिक वर्षा तथा अधिक नमी की आवश्यकता होती है, जिन क्षेत्रों में 100 सेन्टीमीटर से कम वर्षा होती है वहाँ पर कृत्रिम सिंचाई की आवश्यकता होती है । स्पष्ट है कि कम वर्षा वाले क्षेत्रों में यदि सिंचाई की कृत्रिम सुविधा उपलब्ध होगी तभी धान की अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है, साथ इस फसल को पानी की अधिक आवश्यकता होने के कारण उसका मूल्य कम होना चाहिए अन्यथा उत्पादन लागत बढ़ जाने के कारण यह फसल लाभदायक नहीं रह जायेगी और यही कारण है कि विभिन्न विकास खण्डों में सिंचाई की सुविधाओं में भिन्नता के कारण इस फसल के क्षेत्रीय वितरण में अधिक भिन्नता देखने यको मिलती है । एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य जो इस फसल क्षेत्र को और प्रभावित करता है वह है उस क्षेत्र की मिट्टी । धान की खेती के लिए भारी भूमि की आवश्यकता होती है जिसमें पानी रोकने की क्षमता अधिक होती है । चिकनी दोमट भूमि जिसमें जीवांश की पर्याप्त मात्रा हो, धान की खेती के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है, 6.5 पी0एच0वाली भूमि इसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त होती है ।

धान की उत्पत्ति के विषय में विभिन्न मत हैं । अनेक भारतीय विद्वानों का मत है कि धंन का जन्म स्थान भारतवर्ष वर्मा तथा इन्डोचाइना हो सकता है क्योंकि धान की जंगली जातियां भारतवर्ष तथा दक्षिणी पूर्वी एशिया में बहुतायत से पाई जाती है । इसके अतिरिक्त चावल का प्रयोग भारत में अक्षत के रूप में धार्मिक अनुष्ठानों उत्सवों तथा शुभ अवसरों पर होता आया है । हिन्दुओं के सबसे प्राचीन ग्रन्थ ॠग्वेद में भी चावल का वर्णन पाया जाता है । घोष और उनके साथियों, **पार्थसारथी (1960)** के अनुसार चावल का प्राचीनतम अवशेष उत्तर प्रदेश के हस्तिनापुर ग्राम की खुदाई से प्राप्त हुआ है । मोहन जोदाड़ों और हड़प्पा की खुदाइयों से प्राप्त अवशेषों के आधार पर भारतवर्ष में चावल ईसा से 5000 वर्ष पूर्व से ही उगाया जा रहा है ।**बेविलोव (1926)** के मतानुसार भारत तथा वर्मा दोनों ही चावल के जन्म स्थान है ।

जनपद में धान की खेती के दो प्रकार प्रचलित हैं –(1) खेत में धान की पौध की रोपाई करके – यह विधि उन्हीं क्षेत्रों में अपनाई जाती है जहाँ पर पानी की उचित व्यवस्था होती है या वर्षा काल में पानी धान लगाने वाले खेतों में इकट्ठा हो जाता है तथा श्रम की आसानी से उपलब्ध हो जाता है । (2) खेत में सीधे बोआई करके –सीधी बुआई की दशा में शीघ्र पकने वाली जातियां जैसे साकेत 4, गोविन्द, कावेरी वाला तथा नगीना 22 आदि उगाई जाती है । जनपद में धान की कई जातियां उगाने का प्रचलन है इनमें देशी जातियों में बासमती ,हंसराज, रामभोग, विष्णुपराग, लकड़ा, श्याम जीरा, लटेरा तथा इन्द्रासन प्रमुख है । जबकि उन्नत किस्म की जातियों में नगीना 22, गोविन्द, प्रसाद, पूसा 33, साकेत 4, कावेरी, रत्ना, पदमा, सरजू 49, विजया, जया, कृष्णा, आई0आर08 तथा जयन्ती प्रमुख रूप से उगाई जाती है ।

(2) **मोटे अनाज :**

हमारे देश में ज्वार, बाजरा तथा मक्का मोटे अनाज के रूप में जाने जाते हैं । ये फसले न केवल मनुष्यों को खाद्यान्न ही उपलब्ध कराती है बल्कि पशुओं के लिए हरा एवं सूखा चारा भी आपूर्ति करती हैं । ज्वार तथा बाजरा के पौधे लगभग एक समान ऊचाई के होते हैं परन्तु मक्का का पौधा ऊचाई में कम होता है । इन फसलों को जनपद में दूसरा स्थान प्राप्त है यदि तीनों की भागेदारी देखे तो इन तीनों फसलों की खरीफ फसल में भागेदारी लगभग 44 प्रतिशत है ।

ज्वार :

अध्ययन क्षेत्र में खाद्यान्न फसलों में ज्वार का एक महत्वपूर्ण स्थान है जनपद के समस्त विकास खण्डों में न्यूनाधिक ज्वार की फसल उगाई जाती है । यह दाने तथा चारे दोनों के लिए उगाई जाती है । इसमें 10.4 प्रतिशत प्रोटीन होती है । प्रति 100 ग्राम ज्वार में 349 कैलोरी ऊर्जा होती है तथा 72.6 ग्राम कार्वोहाइड्रेट् पाया जाता है । ज्वार की उत्पत्ति स्थान के बारे में अलग अलग मत हैं । **डीकंडोल** तथा **हूकर** के अनुसार ज्वार का उत्पत्ति स्थान अफ्रीका है जबकि **बर्थ** के अनुसार भारत व अफ्रीका है । बेविलोव ज्वार के उत्पत्ति स्थान को अवीसीनिया मानते हैं । ज्वार गर्म जलवायु की फसल है । 30–100 सेन्टीमीटर वर्षा वाले स्थानों में ज्वार की खेती की जाती है । 25^0 सेन्टीग्रेड से 35^0 सेन्टीग्रेड तापमान इस फसल के अनुकूल पड़ता है । इसके फूल पड़ते समय तथा परागण के समय वर्षा हानिकारक होती है । अध्ययन क्षेत्र में देशी तथा उन्नत किस्म दोनों प्रकार की प्रजातियां उगाई जाती है । देशी जातियों में वर्षा, टा0 22, मऊ टा0 1 तथा उन्नतिशील जातियों में एस0 पी0एच0 196, सी0एस0एच0 5, सी0एस0एच0 9, सी0एस0वी0 1 प्रमुख रूप से उगाई जाती है ।

बाजरा :

मोटे अनाजों में बाजरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है और जाड़े के दिनों में गरीब व अमीर लोग बाजरा की रोटी खाना पसन्द करते हैं । बाजरा खरीफ में धान के अतिरिक्त अन्य फसलों से अधिक क्षेत्र में उगाया जाता है क्योंकि बाजरा अन्य फसलों की अपेक्षा सूखा अधिक सहन कर सकता है इसलिए शुष्क क्षेत्रों की यह प्रमुख फसल है । इसके दाने में 11.6 प्रतिशत प्रोटीन पाई जाती है तथा 67.5 प्रतिशत कार्वोहाईड्रेट्स होता है प्रति 100 ग्राम बाजरे के दानों से 391 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है । इसकी खेती 40–75 सेन्टीमीटर वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में सफलता पूर्वक की जाती है । बाजरे की फसल के लिए 21 से 27^0 सेन्टीग्रेड तापमान उपयुक्त रहता है । अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि बाजरा के लिए

सर्वोत्तम होती है । दोमट भूमि में भी बाजरा की खेती सफलता पूर्वक की जाती है । अधिकांश वैज्ञानिकों के मतानुसार बाजरा की उत्पत्ति स्थल अफ्रीका है । **बर्थ** के मतानुसार इसका उत्पत्ति स्थल भारत है । अध्ययन क्षेत्र में यह न्यूनाधिक सभी विकास खण्डों में उगाया जाता है । देशी जातियों में मैनपुर, पूसा, मोती, बाजरा फतेहाबाद आदि किस्में प्रमुख रूप से बोई जाती है जबकि उन्नत किस्म की जातियों में डब्लू सी0 सी075, एम0पी0 15, एम0पी0 19 विजय पी0एस0बी0 , पी0एच0वी0 14 तथा बी0के0 104 आदि प्रमुख आदि प्रमुख रूप से उगाई जाती है ।

मक्का :

मक्का भी मोटे अनाज की खरीफ ऋतु की एक महत्वपूर्ण फसल है । मक्का दाने, चारे व भुट्टे के लिए उगाई जाती है । यह विशेष रूप से गरीब जनता का भोजन है । मक्का में 11.6 प्रतिशत प्रोटीन 78.9 प्रतिशत कार्वोहाईड्रेट्स, 5.3 प्रतिशत वसा, 1.5 प्रतिशत राख तथा 2.6 प्रतिशत सैल्यूकोल पाया जाता है । मक्का के हरे भुट्टे भूनकर खाने में स्वादिष्ट होते हैं । मक्का के दाने भुनवाकर खील बनाई जाती है । इसका प्रयोग औद्योगिक रूप से शराब , स्टार्च, प्लास्टिक, गोंद , रंग, ग्लूकोज, रेयन आदि तैयार करने में किया जाता है । मक्का को रातिव के रूप में पशुओं को भी खिलाया जाता है । अधिकतर वैज्ञानिकों के मतानुसार मक्का का जन्म स्थान मध्य अमेरिका तथा मैक्सिको है । इन क्षेत्रों में की गई खुदाइयों में मक्का के पौधों के अवशेष पाये गये हैं । भारत में मक्का का प्रवेश सोलहवीं शताब्दी में पुर्तगालियों द्वारा हुआ । मक्का के लिए ऊँची समतल व उत्तम जल निकासी वाली भूमि उपयुक्त मानी जाती है । इसके लिए बलुई दोमट या दोमट मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है मिट्टी का पी0एच06.5 से 7.5 होना चाहिए । अध्ययन क्षेत्र में टाइप 41, जौनपुरी सफेद, मेरठ पीली,गंगा 2, बी0एल0 42 संगम 54 जातियां बोई जाती हैं इनमें से गंगा 2 तथा टाइप 41 भुट्टे के लिए उगाई जाती है इन दोनों जातियों के अतिरिक्त कस्बों के आस पास विजय , तरुण तथा कंचन जातियां भी भुट्टे के लिए उगाई जाती हैं । अन्य जातियां खाद्यान्न के लिए उगाई जाती हैं । मोटे अनाज का जनपद में विकासखण्ड स्तर पर विवरण सारिणी क्रमांक 4.4 में दर्शाया जा रहा है ।

तालिका 4.4 विकास खण्ड स्तर पर धान तथा मोटे अनाज का वितरण 1990–91 हेक्टेयर में ।

विकास खण्ड	कुल खरीफ फसल का क्षेत्रफल	धान	ज्वार	बाजरा	मक्का
1.जसवन्त नगर	17,585 (100.00)	3,775 (21.47)	122 (0.69)	6,769 (38.49)	2,904 (16.51)
2.बढ़पुरा	9,838 (100.00)	640 (6.51)	86 (0.87)	6,214 (63.16)	292 (2.97)
3.वसरेहर	21,170 (100.00)	12,960 (61.22)	324 (1.53)	2,446 (11.55)	2,769 (13.08)
4.भरथना	12,623 (100.00)	7,040 (55.77)	269 (2.13)	2,190 (17.35)	1,291 (10.23)
5.ताखा	12,896 (100.00)	8,755 (67.89)	197 (1.53)	942 (5.75)	2,027 (15.72)
6.महेवा	15,887 (100.00)	2,097 (13.20)	423 (2.66)	7,044 (44.34)	1,296 (8.16)
7.चकरनगर	7,364 (100.00)	7 (0.10)	37 (0.50)	5,532 (75.12)	14 (0.19)
8.अछल्दा	12,320 (100.00)	5,561 (45.14)	443 (3.60)	2,300 (18.67)	2,172 (17.63)
9.विधूना	13,371 (100.00)	7,885 (58.97)	460 (3.44)	809 (6.05)	2,907 (21.74)
10.एरवाकटरा	9,979 (100.00)	5,144 (51.55)	428 (4.29)	594 (5.95)	2,991 (29.97)
1.सहार	~~1,27,799~~ 12799 (100.00)	7,353 (57.45)	561 (4.38)	1,517 (11.85)	1,908 (14.91)
12.औरैया	17,061 (100.00)	2,252 (13.20)	580 (3.40)	9,074 (53.19)	342 (2.01)
13.अजीतमल	10,870 (100.00)	1,561 (14.36)	440 (4.05)	4,946 (45.50)	582 (5.35)
14.भाग्यनगर	10,648 (100.00)	3,516 (33.02)	561 (5.27)	3,468 (32.57)	1,081 (10.15)
ग्रामीण योग	1,84,411 (100.00)	68,546 (37.17)	4,931 (2.67)	53,645 (29.09)	22,576 (12.24)
योग नगरीय	205 (100.00)	32 (15.61)	5 (2.44)	46 (22.44)	26 (12.68)
योग जनपद	1,84,616 (100.00)	68,578 (37.15)	4,936 (2.67)	53,691 (29.08)	22,602 (12.24)

स्रोत: सांख्यिकीय पत्रिका जनपद 1992
(कोष्ठक में दिए गए समंक कुल खरीफ फसल से प्रतिशत अनुपात प्रदर्शित हैं ।)

सारिणी क्रमांक 4.4 जनपद में विकास खण्ड स्तर पर खरीफ फसल की धान तथा मोटे अनाज वाली फसलों के वितरण का चित्र प्रस्तुत कर रही है । क्षेत्रफल वितरण की दृष्टि से देखें तो इन फसलों के क्षेत्रफल में विकास खण्ड स्तर पर काफी भिन्नता देखने यको मिलती है, जहाँ तक जनपद में खरीफ फसल की सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल का प्रश्न है तो धान की फसल 37.15 प्रतिशत क्षेत्रफल पर अपनी हिस्सेदारी प्रदर्शित करके सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल दृष्टिगोचर हो रही है ।दूसरे स्थान पर बाजरा की फसल है जो कुल 29.08 प्रतिशत क्षेत्रफल को बांट रही है । तीसरा स्थान मक्का प्राप्त कर रही है जो 12.24 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है । ज्वार का स्थान मोटे अनाजों में सबसे निम्न है जो केवल 2.67 प्रतिशत क्षेत्रफल पर अपनी भागेदारी करके केवल अपनी उपस्थिति ही दर्शा पा रही है ।

विकास खण्ड स्तर पर इन फसलों का विवरण इस प्रकार है :-

<u>धान</u>:

यह जनपद में खरीफ में उपजाई जाने वाली प्रमुख फसल हैं । प्रायः प्रत्येक विकास खण्उ में यह फसल उगाई जाती है । धान की अच्छी उपज के लिए अधिक वर्षा तथा अधिक गर्मी की आवश्यकता होती है । जिन क्षेत्रों में 100 सेन्टीमीटर से कम वर्षा होती है वहाँ पर सिंचाई की आवश्यकता होती है , साथ ही इस फसल को अधिक पानी की आवश्यकता होने के कारण कम मूल्य पर पानी उपलब्ध हो, अन्यथा उत्पादन लागत बढ़ जाने के कारण यह फसल अधिक लाभदायक नहीं रह पाती है और यही कारण है कि विभिन्न विकास खण्डों में सिंचाई सुविधाओं की भिन्नता के कारण इस फसल के वितरण में अधिक भिन्नता देखने को मिल रही है । एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व जो इस फसल के वितरण को प्रभावित कर रहा है वह है मिट्टी। धान की खेती के लिए चिकनी मिट्टी होनी चाहिए जिसमें नमी रोकने की क्षमता सर्वाधिक होती है । स्पष्ट है कि सिंचन सुविधा तथा मिट्टी दोनों ही तत्व इस फसल की उत्पादकता को प्रभावित करते हैं । इसी कारण विभिन्न विकास खण्डों में इस फसल का वितरण भिन्न भिन्न है, इस दृष्टि से देखें तो ताखा विकास खण्ड इस फसल की 67.89 प्रतिशत भागेदारी करके सर्वोच्च स्थान पर है जबकि इसके विपरीत चकरनगर विकास खण्ड इस फसल की केवल उपस्थिति मात्र ही दर्शा पा रहा है । क्योंकि इस विकास खण्ड की न तो भूमि ही समतल है और न सिंचाई सुविधा ही पर्याप्त है , जिस कारण यह विकास खण्ड आज भी इस फसल को उगाने की अनुकूल परिस्थितियां नहीं बना

पा रहा है । वरीयता क्रम में दूसरा स्थान वसरेहर विकास खण्ड का है जो 61.22 प्रतिशत क्षेत्रफल का उपयोग इस फसल के लिए कर रहा है । जिन विकास खण्डों में खरीफ फसल के सम्पूर्ण क्षेत्रफल में धान की भागेदारी 50 प्रतिशत से अधिक है उनमें से उक्त दोनों विकास खण्डों के अतिरिक्त भरथना 55.77 प्रतिशत, विधूना 58.97 प्रतिशत, एरवा कटरा 51.55 प्रतिशत, सहार 57.45 प्रतिशत हैं । इन विकास खण्डों के अतिरिक्त जनपदीय स्तर से अधिक क्षेत्रफल धान के लिए आवँटित करने वाला विकासखण्ड अछल्दा 45.14 प्रतिशत ही है । औरैया, अजीतमल तथा महेवा तीनों ही विकास खण्डों की स्थिति न्यूनाधिक एक समान ही है जहाँ पर इस फसल का कोई महत्वपूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं है । भाग्यनगर विकास खण्ड लगभग एक तिहाई क्षेत्रफल पर धान की फसल उगा रहा है ।

(2) <u>मोटे अनाज</u> (ज्वार–बाजरा तथा मक्का)

हमारे देश में ज्वार बाजरा तथा मक्का मोटे अनाज के नाम से जाने जाते हैं । ये फसलें न केवल मनुष्यों को खाने के लिए अनाज ही उपलब्ध कराती हैं , बल्कि पशुओं के लिए हरा व सूखा चारा भी उपलब्ध कराती हैं । ज्वार–बाजरा के पौधे तो लगभग एक समान ऊँचाई के होते हैं, परन्तु मक्का का पौधा अपेक्षाकृत ऊँचाई में कम होता है । इन फसलों में जनपद में बाजरा तथा मक्का ही प्रमुख रूप से उगाए जाते हैं ज्वार का क्षेत्रफल अत्यन्त कम है । यदि तीनों फसलों की भागेदारी देखे तो कुल खरीफ क्षेत्रफल में इन तीनों फसलों की हिस्सेदारी लगभग 44 प्रतिशत है जो धान की भागेदारी से लगभग 7 प्रतिशत अधिक है । बाजरा की फसल के सम्बन्ध में विकास खण्ड स्तर पर विचार करें तो खरीफ फसल में सर्वाधिक हिस्सेदारी चकरनगर विकास खण्ड की है जो 75.12 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बाजरा की फसल उगा रहा है इसी से मिलती जुलती स्थिति में बढ़पुरा विकास खण्ड है जो इस फसल के लिए 63.16 प्रतिशत क्षेत्र आवँटित करके द्वितीय स्थान पर है । इसका मूल कारण यह है कि दोनों ही विकास खण्डों की प्राकृतिक स्थिति लगभग एक समान है दोनों ही यमुना तथा चम्बल नदियों से प्रभावित हैं दोनों की ही भूमि ऊँची –नीची है जो बाजरा फसल के लिए अत्यन्त उपयुक्त है और यही कारण है कि ये दोनों ही विकास खण्ड बाजरा फसल को अत्याधिक महत्व दे रहे हैं । औरैया विकास खण्ड भी इस फसल को 53.19 प्रतिशत क्षेत्रफल आवँटित करके इस फसल के महत्व को दर्शा रहा है । जबकि अजीतमल 45.50 प्रतिशत तथा महेवा विकास खण्ड 44.34 प्रतिशत क्षेत्रफल पर इस फसल का उत्पादन करके लगभग एक समान स्थिति में है । भाग्य नगर विकास खण्ड 32.57 प्रतिशत तथा जसवन्त नगर 38.49 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बाजरा की हिस्सेदारी कर रहे हैं , अन्य विकास खण्ड न्यूनाधिक 20 प्रतिशत से कम की हिस्सेदारी प्रदर्शित कर रहे हैं ।

मोटे अनाज में मक्का भी एक महत्वपूर्ण फसल के रूप यमें जनपद में उगाई जाती है। इस फसल का जनपद में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान एरवाकटरा विकास खण्ड का है जहाँ पर यह फसल 29.97 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोई जाती है, वरीयता क्रम में दूसरा स्थान है विधूना विकास खण्ड का है जहाँ पर यह फसल 21.74 प्रतिशत क्षेत्रफल की हिस्सेदारी कर रही है और इन दोनों ही विकास खण्डों में धान के बाद इस फसल को दूसरी महत्वपूर्ण फसल का दर्जा प्राप्त है । अन्य विकास खण्डों में जहाँ इस फसल को दूसरा स्थान प्राप्त है उनमें से सहार 14.91 प्रतिशत ताखा 15.72 प्रतिशत बसरेहर 13.08 प्रतिशत तथा जसवन्त नगर 16.51 प्रतिशत, क्षेत्रफल पर मक्का की खेती कर रहे हैं । अन्य विकास खण्डों में इसकी भागेदारी अछल्दा 17.63 प्रतिशत, भरथना 10.23 प्रतिशत तथा भाग्यनगर विकास खण्ड 10.15 प्रतिशत हिस्सेदारी करके इसके महत्व को दर्शा रहे हैं जबकि शेष विकास खण्ड 10 प्रतिशत से कम की हिस्सेदारी कर रहे हैं । ज्वार का स्थान मोटे अनाजों में तीसरा है और इस फसल का क्षेत्रफल किसी भी विकास खण्ड में 5 प्रतिशत से अधिक नहीं है केवल भाग्यनगर विकास खण्ड को छोड़कर, जहाँ पर इस फसल को 5.27 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाया जा रहा है । चकरनगर विकास खण्ड में इस फसल की न्यूनतम हिस्सेदारी हो रही है, जबकि बढ़पुरा भी कमोवेश चकरनगर की ही स्थिति में है ।

<u>खरीफ की दलहनी फसलें</u> :

दालों में प्रोटीन की मात्रा अधिक होने से भारतीय भोजन में दालों का विशेष महत्व है, कार्यशील जनसंख्या की बहुलता दालों के महत्व को और अधिक बढ़ा देती है । इनमें से कुछ दालों की फसलें पशुओं के लिए पौष्टिक चारा उपलब्ध कराती है जबकि कुछ हरी खाद के रूप में काम आती हैं । इनमें से अरहर, मूँग उर्द तथा सोयाबीन ही खरीफ की प्रमुख दलहनी फसलें हैं जबकि चना और मटर रबी की प्रमुख दलहनी फसलें हैं । खरीफ की दलहनी फसलों में अरहर की प्रधानता है । अरहर कहीं कहीं स्वतंत्र रूप से बोई जाती है, परन्तु अधिकांश रूप में यह मिश्रित फसल के रूप में उगाई जाती है जो ज्वार, बाजरा तथा मक्का के साथ बोई जाती है । कहीं–कहीं गन्ने के साथ भी अरहर बोने का प्रचलन है । मिश्रित फसलों में यह बोई तो खरीफ फसलों के साथ जाती है , परन्तु यह फसल पकती रबी फसल के साथ है । अब तो उन्नत किस्म के बीजों के प्रचलन के साथ साथ इसके पकने का समय अत्यन्त कम हो गया है जिससे कहीं कहीं यह फसल स्वतंत्र रूप से बोई जाने लगी है क्योंकि इसके कटने के बाद गेहूँ की फसल उगाई जा सकती है । दलहनी फसलों का विवरण इस प्रकार है ।

(1) अरहर :

दलहनी फसलों में अरहर का महत्वपूर्ण स्थान है । यह फसल अकेली तथा दूसरी फसलों के साथ भी बोई जाती है । ज्वार , बाजरा, मूँगफली, अरहर के साथ बोई जाने वाली प्रमुख फसलें हैं । अरहर की देर से पकने वाली प्रजातियाँ 9-10 महीने में पकती हैं और शीघ्र पकने वाली प्रजातियां 4-5 महीने में पककर तैयार हो जाती हैं । इसके दाने में प्रोटीन की प्रचुर मात्रा (20.9 प्रतिशत) पाई जाती है, लोहा तथा आयोडीन भी पर्याप्त मात्रा में होती है । इसकी लकड़ी ईधन के रूप में जलाने के काम आती है , यह भूमि की उर्वराशक्ति भी बढ़ाती है । विद्वानों के मतानुसार इसका उत्पत्ति स्थल अफ्रीका माना जाता है, वहीं से अन्य देशों में इसका प्रसार हुआ । अरहर नम तथा शुष्क दोनों ही प्रकार की गर्म जलवायु में सफलता पूर्वक उगाई जा सकती है , यह पाले से अत्यधिक प्रभावित होने वाली फसल है , अधिक वर्षा भी इसके लिए हानिकारक होती है । अरहर के लिए बलुई दोमट व दोमट भूमि अच्छी होती है, उचित जल निकास तथा हल्के ढालू खेत इसके लिए सर्वोत्तम होते हैं । अध्ययन क्षेत्र में कम समय में पकने वाली प्रजातियों में पूसा अगेती, पूसा 74, पन्त ए0-3 तथा मानक टाइप 21 मुख्य रूप से बोई जाती है । देर से पकने वाली जातियों में टाइप 7 तथा टाइप 17 ही प्रमुख रूप से प्रचलित हैं ।

(2) उर्द/मूँग :

दलहनी फसलें उगाने से भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है क्योंकि इनकी जड़ों में पाये जाने वाले राइजोवियम वैक्टीरिया वायुमण्डल से नाइट्रोजन लेकर उसे जमीन में संचित कर लेते हैं । मूँग, उड़द भूमि में लगभग 30-40 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की दर से संचित कर सकती है । इन फसलों को हरी खाद के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है । ये फसलें अल्प अवधि की होने के कारण सस्य सघनता बढ़ाकर भूमि का अधिकतम उपयोग होने में सहायक होती है । ये फसलें भूमि को आच्छादन भी प्रदान करती है । जिससे भूमि कटाव रोकने में सहायता मिलती है । इन फसलों को कम खाद तथा कम पानी की आवश्यकता होती है , इसलिए उत्पादन लागत भी कम होती है । उर्द में प्रोटीन की मात्रा 24 प्रतिशत होती है जबकि मूँग में 24 से 24.5 प्रतिशत तक प्रोटीन पाई जाती है ।

(3) सोयाबीन :

सोयाबीन दलहनी वर्ग की फसल है । भारत मुख्यतः एक शाकाहारी देश है इसलिए यहाँ सोयाबीन जैसी फसल के विकास का विशेष महत्व है क्योंकि इससे चिकनाई व प्रोटीन दोनों ही मिलती हैं ।

सोयाबीन के दानों में सर्वाधिक 40–42 प्रतिशत प्रोटीन तथा 20–22 प्रतिशत तेल की मात्रा होती है । इसके लिए अतिरिक्त इसमें 30 प्रतिशत तक कार्वोहाइड्रेट्स तथा खनिज लवण, विटामिन आदि पाये जाते हैं । सोयाबीन के दूध से पनीर, दही तथा अनेक प्रकार की मिठाइयां बनाई जाती हैं । सोयाबीन के आटे से चपाती, पेस्ट्री, बड़ियां, समोसे, डबलरोटी व आइसक्रीम भी बना सकते हैं । इसमें स्टार्च की मात्रा कम होने से मधुमेह तथा अग्निमन्दता के रोगियों को विशेष लाभदायक है । सोयाबीन का तेल अनेक औद्योगिक वस्तुएं बनाने में प्रयोग होता है जैसे वार्निश, पेन्ट्स, लिनोलियम, कीट नाशक दवाएं , सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री, सीमेन्ट, मोमबत्ती, साबुन, रंग, स्याही, चिकनाई औषधियां टाइपराइटर रिवन, रबर, प्लाईबुड का सामान, कागज आदि । सोयाबीन की खली पशुओं का उत्तम आहार है, खली का उपयोग खाद के रूप में किया जा सकता है । अधिकांश विद्वानों के अनुसार सोयाबीन का जन्म स्थान चीन है । सोयाबीन के लिए गर्म तथा नम जलवायु की आवश्यकता होती है । 26–30^0 सेन्टीग्रेड ताप इसकी बृद्धि के लिए उपयुक्त होता है । इसके लिए उत्तम जल निकास वाली दोमट भूमि सर्वोत्तम होती है । मृदा पी0एच0 6.0 से 7.5 उपयुक्त रहता है । अध्ययन क्षेत्र में पी0के0 416, शिलाजीत, अलंकार, अंकुर, पी0के0 262, पी0के0 475 तथा जे0एस0 –2 प्रमुख रूप से बोई जाती है ।

तालिका 4.5 जनपद में विकास खण्ड स्तर पर दलहनी फसलों का वितरण 1990–91 (हेक्टेयर में)

विकास खण्ड का नाम	उर्द	मूँग	अरहर	सोयाबीन
1.जसवन्त नगर	316 (1.80)	181 (1.03)	1,043 (5.93)	494 (2.81)
2.बढ़पुरा	209 (2.12)	55 (0.56)	1,258 (12.79)	37 (0.38)
3.वसरेहर	147 (0.69)	333 (1.57)	653 (3.09)	372 (1.76)
4.भरथना	282 (2.23)	122 (0.97)	433 (3.43)	156 (1.24)
5.ताखा	59 (0.46)	146 (1.13)	344 (2.67)	288 (2.23)
6.महेवा	2,140 (13.47)	101 (0.64)	975 (6.14)	476 ~~(4.76)~~ 3.00
7.चकरनगर	48 (0.55)	11 (0.15)	1,636 (22.22)	16 (0.22)

विकास खण्ड का नाम	उर्द	मूँग	अरहर	सोयाबीन
8. अछल्दा	189 (1.53)	107 (0.87)	729 (5.92)	312 (2.53)
9. विधूना	71 (0.53)	113 (0.85)	531 (3.97)	294 (2.20)
10. एरवाकटरा	48 (0.48)	93 (0.93)	389 (3.90)	144 (1.44)
11. सहार	123 (0.96)	147 (1.15)	639 (4.99)	302 (2.36)
12. औरैया	1,288 (7.55)	85 (0.50)	2,062 (12.09)	394 (2.31)
13. अजीतमल	1,451 (13.35)	10 (0.09)	636 (5.85)	448 (4.12)
14. भाग्यनगर	290 (2.72)	67 (0.63)	675 (6.34)	126 (1.18)
योग ग्रामीण	6,661 (3.61)	1571 (0.85)	12,003 (6.51)	3,859 (2.09)
योग नगरीय	10 (4.88)	11 (5.37)	18 (8.78)	24 (11.71)
योग जनपदीय	6,671 (3.61)	1,582 (0.86)	12,021 (6.51)	3,883 (2.10)

कोष्ठक में दिये गये कुल खरीफ फसल क्षेत्र से प्रतिशत अनुपात प्रदर्शित है ।

तालिका 4.5 में जनपद में विकास खण्ड स्तर पर दलहनी फसलों के क्षेत्रफल पर प्रकाश डाल रही है । सम्पूर्ण जनपद में दलहनी फसलों के क्षेत्रीय वितरण को यदि देखा जाय तो ज्ञात होता है कि अरहर दलहनी फसलों में सर्वाधिक क्षेत्र 12021 हेक्टेयर क्षेत्रफल में बोई जाती है यह कुल खरीफ फसल से 6.51 प्रतिशत हिस्सेदारी करके सर्वोच्च स्थान पर है । यदि दलहनी फसलों में इस फसल के अनुपात को देखें तो लगभग आधे हिस्से पर यह फसल अपना बर्चस्व बनाए हुए है । दूसरे स्थान पर उड़द है जो 6671

हेक्टेयर क्षेत्रफल पर आच्छादित है और कुल खरीफ फसल के 3.61 प्रतिशत पर अपनी हिस्सेदारी कर रहा है । यह एक सुखद तथ्य है कि दलहनी फसलों में सर्वाधिक पौष्टिक तथा प्रोटीन युक्त सोयाबीन का जनपद में प्रसार 3883 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर हो चुका है, इसके क्षेत्रफल में और अधिक बृद्धि की सम्भावनाएं उज्जवल हैं, यदि इस फसल को पर्याप्त प्रोत्साहन दिया जाये तो कुपोष्ण जनित बीमारियों से बचाव किया जा सकता है ।

विभिन्न विकास खण्डों में यदि दलहनी फसलों के वितरण की दृष्टि से देखें तो विभिन्न दलहनी फसलों का वितरण असमान है । अरहर फसल का सर्वाधिक विस्तार चकरनगर विकास खण्ड में देखा जा रहा है जहाँ पर यह फसल अकेले 22.22 प्रतिशत क्षेत्र पर बोई जा रही है इस प्रकार यह विकास खण्ड वरीयता क्रम में प्रथम स्थान. प्राप्त कर रहा है, जबकि बढ़पुरा 12.79 प्रतिशत क्षेत्रफल पर इस फसल को उगाकर वरीयता क्रम में द्वितीय स्थान पर स्थित है । औरैया विकास खण्ड कमोवेश बढ़पुरा के ही समकक्ष स्थित है और यह विकासखण्ड 12.09 प्रतिशत क्षेत्रफल का उपयोग अरहर फसल के लिए कर रहा है । जहाँ तक इस फसल की न्यूनतम भागेदारी का प्रश्न है तो ताखा विकास खण्ड 2.67 प्रतिशत क्षेत्र पर अरहर बोकर इस फसल को अधिक महत्व नहीं दे रहा है । अन्य विकासखण्ड 3 से 7 प्रतिशत के मध्य इस फसल की हिस्सेदारी दर्शा रहे हैं । दलहनी फसलों में दूसरा स्थान उड़द फसल को प्राप्त हो रहा है परन्तु कुछ विकास खण्डों में यह फसल प्रथम स्थान पर है । अजीतमल तथा महेवा विकास खण्डों में उड़द की फसल को दलहनी फसलों में प्रथम वरीयता प्राप्त है और ये क्रमशः 13.35 प्रतिशत तथा 13.47 प्रतिशत क्षेत्रफल में उड़द की फसल को उगा रहे हैं । स्वाभाविक है कि विकास खण्ड इस फसल की दृष्टि से सर्वोच्च स्थान पर हैं । इसके विपरीत मात्र 0.46 प्रतिशत भागेदारी करके इस फसल के लिए न्यूनतम महत्व प्रदर्शित कर रहा है । अन्य विकास खण्ड 0.53 से 7.55 प्रतिशत भूमि का उपयोग इस फसल के लिए कर रहे हैं । जनपद में तीसरा स्थान सोयाबीन फसल का है । इस फसल का सर्वाधिक विस्तार अजीतमल विकास खण्ड में हुआ है, परन्तु अभी भी यह विकास खण्ड 5 प्रतिशत से भी कम भूमि का उपयोग इस फसल हेतु कर रहा है । इस फसल का न्यूनतम विस्तार चकरनगर विकास खण्ड में हो सका है जहाँ मात्र 16 हेक्टेयर भूमि पर इस फसल को उगाया जा रहा है जबकि इससे लगभग दुगने क्षेत्रफल का उपयोग बढ़पुरा विकास खण्ड कर रहा है । अन्य विकास खण्डों में 1 प्रतिशत से 4 प्रतिशत तक भूमि का उपयोग इसके महत्व को दर्शा रहा है । जहाँ तक मूँग फसल का सम्बन्ध है तो यह फसल विभिन्न विकास खण्डों में क्षेत्रफल की दृष्टि से अपनी उपस्थिति नहीं दर्शा पा रही है । कोई भी विकास खण्ड इस फसल के लिए 1.57 प्रतिशत से अधिक की हिस्सेदारी नहीं कर पा रहा है । अजीतमल

विकास खण्ड में तो मात्र 10 हेक्टेयर भूमि ही इस फसल के लिए प्रयोग में लाई जा रही है । मूँग की फसल अभी तक जनपद के किसी भी विकासखण्ड में कोई महत्वपूर्ण स्थान अभी तक नहीं बना सकी है ।

(4) अन्य फसलें :

खरीफ फसल की अन्य फसलों में मूँगफली, तिल , सनई तथा हरे चारे की फसलें महत्वपूर्ण हैं । इनमें से मूँगफली तथा तिल तिलहनी फसलें हैं । जबकि सनई को हरी खाद के रूप में अधिकांश बोया जाता है ।सनई के देशों से रस्सियों की आवश्यकता की पूर्ति भी होती है । हरे चारे के अन्तर्गत इस फसल में चरी ही अधिकांश बोई जाती है । मूँगफली तथा तिल की फसल सम्पूर्ण जनपद में क्रमशः 65 तथा 353 हेक्टेयर क्षेत्रफल में उगाई जाती है । जबकि सनई के लिए 104 हेक्टेयर क्षेत्र का उपयोग किया जा रहा है, जबकि हरे चारे का सर्वाधिक क्षेत्र 5917 हेक्टेयर उपयोग किया जा रहा है । विकास खण्ड स्तर पर इनका वितरण तालिका 4.6 में दर्शाया जा रहा है ।

तालिका 4.6 विकास खण्ड स्तर पर अन्य फसलों का वितरण 1990-91 (हेक्टेयर)

विकास खण्ड	तिल	मूँगफली	सनई	शब्जियां	हरे चारे की फसलें	अन्य
1.जसवन्त नगर	258	6	8	10	929	740
2.बढ़पुरा	36	1	4	2	343	661
3.बसरेहर	33	4	4	6	684	435
4.भरथना	-	-	2	4	450	384
5.ताखा	-	-	1	3	313	21
6.महेवा	-	1	8	8	751	567
7.चकरनगर	1	-	3	2	42	15
8.अछल्दा	2	10	7	7	365	116
9.विधूना	1	21	6	6	207	60
10.एरवाकटरा	3	1	2	6	109	27
11.सहार	6	7	16	12	129	79
12.औरैया	3	13	16	16	645	291
13.अजीतमल	1	-	10	18	455	312
14.भाग्यनगर	1	1	17	12	469	394
योग ग्रामीण	345	65	104	112	5,891	4,102
योग नगरीय	8	-	-	25	-	-
योग जनपद	353	65	104	138	5,891	4,102

सारिणी 4.6 विकास खण्ड वार जनपद की अन्य खरीफ फसलों का विवरण प्रस्तुत कर रही है जिससे ज्ञात होता है कि जनपद में चारे की फसलों का भी एक महत्वपूर्ण स्थान है । कुल खरीफ फसल के क्षेत्रफल में से 5891 हेक्टेयर पर चारे की फसलें उगाई जा रही हैं । खरीफ फसल में चरी का महत्वपूर्ण स्थान चारे की फसल के रूप में है । जबकि तिल, मूँगफली तथा सनई का अधिक महत्वपूर्ण स्थान नहीं है । खरीफ की फसल में शब्जियों का क्षेत्रफल 138 हेक्टेयर है । शब्जियों में प्रमुख रूप से लौकी, तरोई, टिण्डे, काशीफल, बैगन आदि की फसलें उगाई जाती हैं । सारिणी से ज्ञात होता है कि तिल सर्वाधिक जसवन्तनगर विकास खण्ड में बोया जाता है, कुल 353 हेक्टेयर में से अकेले जसवन्तनगर में 258 हेक्टेयर में उगाया जाता है जबकि भरथना, ताखा तथा महेवा य विकास खण्ड पूर्णतया तिल विहीन हैं । मूँगफली सर्वाधिक विधूना विकास खण्ड में 21 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर उगाई जाती है, दूसरा स्थान औरैया विकास खण्ड का है । सनई न्यूनाधिक सभी विकास खण्डों में बोई जाती है । इसी प्रकार शब्जियों में अजीतमल विकास खण्ड अग्रणी है । हरे चारे की फसलों में जसवन्तनगर प्रथम स्थान पर है ।

2. रबी की प्रमुख फसलें :

मात्रात्मक उपलब्धियों के अतिरिक्त कृषि विकास प्रयासों से अब जनपद की कृषि व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन भी हो रहे हैं । कृषि को अब मात्र जीवन निर्वाह का साधन न मानकर इसकी व्यावसायिक गतिविधियों की प्रतिष्ठा की गई है । कृषक अब लाभ कमाने के लिए तकनीक का प्रयोग करने को तत्पर हैं । श्रेयष्कर कृषि विधियों तथा श्रेयष्कर जीवन यापन की आकाँक्षा न केवल उत्पादन तकनीक का प्रयोग करने वाले एक छोटे से धनी वर्ग तक सीमित है, बल्कि उन कृषकों तक भी फैल गई है जिन्होंने इसे अब तक अपनाया नहीं है और जिनके लिए उच्च जीवन स्तर अभी एक सपना मात्र है । कृषकों के दृष्टिकोण का यह परिवर्तन निश्चय ही कृषि विकास में सहायक हैं । हरित क्रान्ति के कारण अब जनपद में कृषक अच्छे अनाजों के उत्पादन के प्रति अग्रसर हुए हैं । छोटे कृषकों का झुकाव शब्जियों तथा मसालों की फसलों के प्रति बढ़ा है । कृषि विकास प्रयासों के परिणामस्वरूप फसलों की संरचना में आधारभूत परिवर्तन आया है । भूमि उपयोग आँकड़ों से पता चलता है कि रबी की फसल में गेहूँ का क्षेत्र बढ़ा है । इसी प्रकार तिलहनी फसलों में लाही/सरसों, सोयाबीन तथा शब्जीवाली फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल में भी बृद्धि हुई है । सर्वाधिक बृद्धि गेहूँ की फसल के क्षेत्र में हुई है ।

जनपद में रबी फसल के अन्तर्गत धान्य फसलों में केवल दो ही फसलों गेहूँ तथा जौ की प्रधानता है, दलहनी फसलों में चना तथा मटर फसलों की प्रमुखता है जबकि तिलहनी फसलों में लाही तथा सरसों फसल का ही प्रभुत्व है । यद्यपि कुछ क्षेत्रों में मसूर तथा अलसी ने अपनी उपस्थिति का अहसास कराया है, परन्तु इनका क्षेत्रफल अभी महत्वपूर्ण नहीं है । हाँ इन फसलों की उपस्थिति इस बात की प्रतीक अवश्य है कि प्रोत्साहन मिलने पर इन फसलों का उत्पादन किया जा सकता है ।

(1) गेहूँ :

विश्व की धान्य फसलों में गेहूँ बहुत ही महत्वपूर्ण फसल है । क्षेत्रफल की दृष्टि से विश्व में धान के बाद गेहूँ का स्थान है । गेहूँ का उपयोग चपाती (रोटी) डबल रोटी, बिस्कुट, मैदा, सूजी बनाने में किया जाता है । इसका भूसा पशुओं को खिलाने में प्रयोग किया जाता है । इनके दाने में 9–15 प्रतिशत प्रोटीन 70–72 प्रतिशत कार्वोहाईड्रेट तथा प्रचुर मात्रा में खनिज तत्व व विटामिन भी पाये जाते हैं । गेहूँ का उपयोग जहाँ मनुष्यों के भोजन के रूप में किया जाता है , वहाँ इसे बीज के रूप में , पशुओं को खिलाने के लिए तथा कुछ भाग विभिन्न उद्योगों में स्टार्च आदि बनाने के लिए भी किया जाता है । एक अनुमान के अनुसार गेहूँ का उपयोग 74 प्रतिशत मनुष्यों के भोजन में, 11 प्रतिशत बीज के रूप में तथा 15 प्रतिशत पशुओं का भोजन औद्योगिक उपयोग तथा ब्यर्थ में प्रयुक्त होता है । गेहूँ की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों के अलग अलग मत हैं । डी० **कन्डोले** के मतानुसार गेहूँ का जन्म स्थान दजला और फरात की घाटियां हैं जहाँ से यह चीन, मिश्र तथा जन्म देशों में गया । **रोबर्ट ब्रेड बुड** ने गेहूँ के कार्वनयुक्त दाने ईराक के जारमों नामक स्थान से प्राप्त किए जो कि 6700 वर्ष पुराने बताए जाते हैं । **बेवीलोव** के मतानुसार ड्यूरम (कड़े) गेहूँ की उत्पत्ति अबीसीनिया तथा कोमल गेहूँ का जन्म स्थान भारत तथा अफगानिस्तान है । अधिकांश तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि गेहूँ कि उत्पत्ति दक्षिणी पश्चिमी एशिया में हुई ।

अध्ययन क्षेत्र में गेहूँ एक प्रमुख खाद्य फसल है जिसके अन्तर्गत शुद्ध बोये गये क्षेत्र का 47.82 प्रतिशत हिस्सा इस फसल के लिए प्रयुक्त किया जाता है । यदि रबी फसल में इस फसल की भागेदारी देखे तो लगभग 59 प्रतिशत क्षेत्रफल पर गेहूँ की खेती की जाती है । जनपद में इसकी अनेकों किस्में बोई जाती हैं जिनमें से ऊँची बढ़वार वाली जातियां के० 65, के० 68, सी 306, के० 78 तथा के० 72 प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं । जबकि बौनी जातियों में लरमारोजो, सोनारा 63, एस० 227, यू०पी० 2003, एच०डी० 2204, रोहिनी, मालवीय 37, यू०पी० 262, एच०डी० 2210, यू०पी०115, कुन्दन, सुजाता, मुक्ता, मेघदूत, कल्यान सोना (एच०डी० 1593) मालवीय 55, सीपान 2016 तथा यू०पी० 2402 जातियां प्रमुख रूप से प्रयोग में लाई जाती हैं । यह फसल शीतोष्ण जलवायु की फसल है । गेहूँ सभी प्रकार की जलवायु सहन कर लेता है । गेहूँ को बोते समय 20–22 डिगरी सेन्टीग्रेट ताप सर्वोत्तम रहता है । पौधों की बृद्धि के समय ठण्डा मौसम तथा पकते समय गर्म मौसम एवं लम्बे दिनों की आवश्यकता पड़ती है । गेहूँ की खेती के लिए अच्छे जल निकास वाली दोमट मिट्टी सर्वोत्तम रहती है । इसकी खेती सभी प्रकार की भूमियों पर की जा सकती है । 5.0 से 7.5 पी०एच०मान वाली भूमियां गेहूँ की खेती के लिए उपयुक्त रहती है । गेहूँ की बौनी जातियों में प्रोटीन की मात्रा 13–16 प्रतिशत तथा ऊँची बढ़ने वाली जातियों में 9–12 प्रतिशत होती है । अब तो गेहूँ की एक जीन वाली (110–120 से०मी० ऊँची) दो जीन वाली (100 से 110 सेमी० ऊँची) तथा तीन जीन वाली (70 से 90 से०मी० ऊँची) जातियाँ विकसित की जा चुकी हैं ।

(2) जौ :

संसार के विभिन्न भागों में जौ की खेती प्राचीन काल से की जा रही है । इसका प्रयोग प्राचीन काल से मनुष्यों के भोजन तथा जानवरों के दाने (रातिव) के लिए किया जा रहा है । हमारे देश में जौ का प्रयोग रोटी बनाने के लिए शुद्ध रूप में तथा चने के साथ मिलाकर अथवा गेहूँ के साथ मिलाकर किया जाता है लेकिन कहीं -कहीं इसको भूनकर चने के साथ (भुना हुआ (पीसकर सत्तू के रूप में भी प्रयोग करते हैं , इसके अतिरिक्त जौ का प्रयोग माल्ट के लिए किया जाता है तथा यह शराब बनाने के काम आता है । जौ के दाने में 11-12 प्रतिशत प्रोटीन 1.8 प्रतिशत बसा 0.42 प्रतिशत फास्फोरस .08 प्रतिशत कैल्शियम तथा 5 प्रतिशत रेशा पाया जाता है । जौ शीतोष्ण जलवायु की फसल है लेकिन समशीतोष्ण जलवायु में भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है । जौ की खेती के लिए न्यूनतम तापक्रम 35-40 डिगरीफारेनहाइट, उच्च तापक्रम 82-86 डिगरी फारेनहाइट और उपयुक्त तापक्रम 68^0 फारेनहाइट होता है ।

अध्ययन क्षेत्र में जौ भी रबी की एक प्रमुख फसल है, परन्तु गेहूँ के क्षेत्रफल में विस्तार के साथ जौ के क्षेत्रफल में कमी होती जा रही है । यह फसल अधिकांश असिंचित क्षेत्रों में उगाई जाती है क्योंकि इस फसल को अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती है । 1970 से पूर्व इस फसल का जनपद में महत्वूर्ण स्थान रहा है क्योंकि इस समय तक सिंचाई की सुविधाएं अपर्याप्त थी, परन्तु सिंचाई तथा उर्वरकों की सुविधा के बृद्धि के साथ इस फसल के क्षेत्रफल में महत्वपूर्ण गिरावट आई है जिसका कारण गेहूँ की फसल का प्रतिस्थापन इस फसल के स्थान पर होता गया है । 1970 से पूर्व इस फसल का उत्पादन पेय जल आपूर्ति के रू में किया जाता था. परन्तु अब लोगों के खानपान में परिवर्तन के साथ इसका स्थान गेहूँ ने ले लिया है और इस फसल को खाद्य की दृष्टि से निकृष्ट खाद्यान्न की श्रेणी में समझा जाने लगा है । जनपद में जौ की अनेकों किस्में बोई जाती हैं जिनमें से ज्योति, जाग्रति, करण 19, करण 252 , डी0एल0 88, विजया, आजाद , रतना तथा करण 18 प्रमुख रूप से उगाई जाती है । सारिणी क्रमांक 4.7 में विकासखण्ड स्तर पर गेहूँ तथा जौ का वितरण दर्शाया गया है ।

सारिणी क्रमांक 4.7 विकास खण्डों पर गेहूँ तथा जौ का वितरण 1990-91 (हेक्टेयर में)

विकास खण्ड	रबी फसल का कुल क्षेत्रफल	गेहूँ		जौ	
		क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत
1.जसवन्त नगर	23,346	11,829	50.67	1,346	5.77
2.बढ़पुरा	11,262	3,927	34.87	1,265	11.23
3.बसरेहर	23,594	17,761	75.28	813	3.45
4.भरथना	16,112	11,711	72.69	870	5.40
5.ताखा	14,910	11,839	79.40	533	3.58
6.महेवा	20,035	10,212	50.97	1,588	7.93
7.चकरनगर	9,594	1,763	18.38	1,790	18.66
8.अछल्दा	15,926	9,990	62.73	748	4.70
9.विधूना	17,183	13,010	75.71	505	2.94
10.एरवाकटरा	14,148	10,506	74.26	378	2.67
11.सहार	17,131	11,851	69.18	614	3.58
12.औरैया	21,151	8,298	39.23	2,246	10.62
13.अजीतमल	13,768	6,277	45.59	1,044	7.58
14.भाग्यनगर	16,372	9,430	57.60	1,256	7.67
योग ग्रामीण	23,452	1,38,404	59.01	14,996	6.39
योग नगरीय	288	139	48.26	17	5.90
योग जनपद	2,34,820	1,38,543	59.00	15,013	6.39

सारिणी क्रमांक 4.7 जनपद में विकास खण्ड स्तर पर रबी फसल के अन्तर्गत उगाई जाने वाली दोनों प्रमुख धान्य फसलों गेहूँ तथा जौ के क्षेत्रफल का चित्रण कर रही है । सारिणी से ज्ञात होता है कि इन दोनों फसलों के लिए 234820 हेक्टेयर भूमि प्रयुक्त हो रही है जिसमें गेहूँ के लिए 138543 हेक्टेयर तथा जौ की फसल के लिए 15013 हेक्टेयर क्षेत्रफल प्रयोग किया जा रहा है । इस प्रकार गेहूँ की फसल , रबी की फसल के अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल के 59 प्रतिशत क्षेत्र में बोई जा रही है जबकि जौ का हिस्सा केवल 6.39 प्रतिशत निर्धारित हो रहा है । विकास खण्ड स्तर पर यदि विचार करें तो गेहूँ की फसल की दृष्टि से ताखा विकास खण्ड कुल 11839 हेक्टेयर इस फसल को आवँटित करके वरीयता क्रम में सर्वोच्च स्थान पर यह विकास खण्ड अपने सम्पूर्ण रबी के अन्तर्गत बोये जाने वाले क्षेत्रफल का 79.40 प्रतिशत हिस्सा इस फसल के लिए उपयोग में ला रहा है, इससे थोड़ी सी भिन्न स्थिति में वसरेहर तथा विधूना विकास खण्ड देखे जा रहे हैं जो क्रमशः 75.71 प्रतिशत तथा 75.28 प्रतिशत भूमि का इस फसल के लिए प्रयोग करके इसके महत्व को प्रदर्शित कर रहे हैं । इसके विपरीत चकरनगर विकास खण्ड अपनी ऊँची नीची भूमि , सिंचाई की अत्यल्प सुविधाओं के कारण गेहूँ फसल क्षेत्र में आज के इस वैज्ञानिक युग में भी बृद्धि करने में असमर्थ प्रतीत हो रहा है, अभी भी यह विकासखण्ड अपनी रबी फसल की कुल भूमि 18.38 प्रतिशत क्षेत्र गेहूँ की फसल को आवँटित करके वरीयता क्रम में सबसे निम्न स्तर प्रदर्शित कर रहा है, ऐसा लगता है कि अपनी प्राकृतिक स्थिति के कारण यह विकास खण्ड आज भी आधनिक कृषि तकनीक के प्रयोग से अपने को वँचित रख रहा है । यदि जनपदीय औसत से इस फसल की तुलना करें तो ज्ञात होता है कि ताखा, विधूना तथा वसरेहर विकास खण्डों के अतिरिक्त भरथना 72.69 प्रतिशत, अछल्दा 62.73 प्रतिशत, एरवाकटरा 74.26 प्रतिशत तथा सहार विकास खण्ड 69.18 प्रतिशत क्षेत्रफल गेहूँ की फसल को आवँटित करके जनपदीय स्तर से ऊँचा स्तर बनाए रखने में सफल हो रहे हैं जबकि अन्य विकास खण्ड जनपदीय औसत से निचले स्तर का प्रदर्शन कर रहे हैं ।

जनपद में जौ फसल के क्षेत्रफलीय वितरण को यदि देखें तो चकरनगर विकास खण्ड की स्थिति अन्य विकास खण्डों से सर्वोच्च है और यह विकास खण्ड 18.66 प्रतिशत भूमि जौ की फसल को आवँटित करके वरीयता क्रम में न केवल प्रथम स्थान दर्शा रहा है अपितु गेहूँ की अपेक्षा जौ की फसल को अधिक महत्व भी दे रहा है, जबकि प्राकृतिक दृष्टि से लगभग समान स्थिति वाला विकास खण्ड बढ़पुरा 11.23 प्रतिशत भूमि जौ फसल के लिए उपयोग में ला रहा है और वरीयता क्रम में द्वितीय स्थान पर है । विकास खण्ड एरवाकटरा इस फसल के लिए 2.67 प्रतिशत भूमि प्रयोग करके वरीयता क्रम में सबसे निचले स्तर पर है, जबकि विधूना विकासखण्ड इससे कुछ बेहतर स्थिति

में है और यह विकास खण्ड 2.94 प्रतिशत क्षेत्रफल पर जौ की फसल को उगा रहा है । जनपदीय औसत से यदि तुलना करें तो चकरनगर तथा बढ़पुरा विकास खण्डों के अतिरिक्त महेवा 7.93 प्रतिशत, औरैया 10.62 प्रतिशत, अजीतमल 7.58 प्रतिशत तथा भाग्यनगर 7.67 प्रतिशत क्षेत्रफल पर जौ की फसल बोकर जनपदीय स्तर से ऊँचा स्तर प्रदर्शित कर रहे हैं । जबकि जनपदीय औसत से निचले स्तर को प्रदर्शित करने वाले विकास खण्डों में एरवाकटरा तथा विधूना के अतिरिक्त जसवन्तनगर 5.77 प्रतिशत , वसरेहर 3.45 प्रतिशत, भरथना 5.40 प्रतिशत, ताखा 3.58 प्रतिशत , अछल्दा 4.70 प्रतिशत तथा सहार 3.58 प्रतिशत हैं । गेहूँ की फसल तथा जौ की फसल के क्षेत्रफल पर तुलनात्मक दृष्टिपात करें तो यह तथ्यय स्पष्ट होता है कि जिन विकास खण्डों में गेहूँ की फसल का क्षेत्रफल अधिक है वहाँ पर जौ का क्षेत्रफल कम है, परन्तु जहाँ पर गेहूँ का क्षेत्रफल कम है वहाँ पर जौ फसल की हिस्सेदारी अधिक है, स्पष्ट है कि गेहूा तथा जौ फसल एक दूसरे की स्थानापन्न है । कृषि की उन्नत तकनीक के साथ–साथ गेहूँ का प्रतिस्थापन जौ की फसल के स्थान पर होता जा रहा है ।

2.**रबी फसल के अन्तर्गत दलहनी फसलें** :

हमारे भोजन में प्रोटीन का विशेष महत्व है, दालें ही देश की आम जनता के लिए प्रोटीन का सबसे बड़ा स्रोत है । प्रोटीन की कमी के कारण हमारा शारीरिक तथा मानसिक विकास पूरी तरह नहीं हो पाता है । अतः भोजन में दालों का होना अत्यन्त आवश्यक है । प्रोटीन का व्यावहारिक व सस्ता स्रोत दालें ही है । इनसे 20 से 25 प्रतिशत तक प्रोटीन प्राप्त होता है । दालों के सेवन से हमें विटामिन कैल्शियम तथा फास्फोरस भी पर्याप्त मात्रा में मिलता है । दालें कृषकों के लिए उलट फेर वाली फसलें भी हैं क्योंकि इनको बोने से खेतों को नाइट्रोजन मिलती है जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है । जनपद में रबी फसल के अन्तर्गत दलहनी फसलों में चना तथा मटर दो ही प्रमुख फसलें हैं । यद्यपि जनपद में मसूर ने घुसपैठ की है, परन्तु अभी तक क्षेत्रफल की दृष्टि से यह फसल कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं बना पाई है , इतना अवश्य कहा जा सकता है कि इस फसल की उपस्थिति ही इस बात की सूचक है कि यदि इसे पर्याप्त प्रोत्साहन प्राप्त हो तो यह भी एक नकद मुद्रादायिनी फसल बन सकती है ।

(अ) चना :

इस देश में उगाई जाने वाली दलहनी फसलों में चना सबसे पुरानी और महत्वपूर्ण फसल है । चने का प्रयोग दाल, रोटी, स्वादिष्ट मिठाइयां, नमकीन बनाने तथा शब्जियों के रूप में किया जाता है । चने यका प्रयोग करने से मनुष्य के शारीरिक विकास व उचित पोषण के लिए इसमें प्रोटीन 21 प्रतिशत तथा आवश्यक अमीनों अम्ल, कार्वोहाईड्रेट्स तथा खनिज लवण पाये जाते हैं । वसा 4.5 प्रतिशत , कार्वोहाईड्रेट्स 61.5 प्रतिशत, कैल्शियम 1.49 प्रतिशत, लोहा 0.072 प्रतिशत, राइवोफ्लेविन 0.0023 प्रतिशत तथा नाइसिन 0.023 प्रतिशत प्राप्त होता है । चना ठण्डे व शुष्क मौसम की फसल है । बहुत अधिक शर्दी व पाला चने के लिए हानिकारक होता है । चने की खेती अधिकतर असिंचित क्षेत्रों में की जाती है । चने की खेती के लिए दोमट या मार एवं पड़वा भूमि जहाँ पानी के निकास का उचित प्रबन्ध हो उपयुक्त होती है । चने के लिए अति उपजाऊ भूमि अच्छी नहीं होती है क्यों ऐसी भूमि में पौधों की बढ़वार अधिक होती है और फलियां कम लगती हैं ।

चना जनपद की दलहनी फसलों में एक प्रमुख फसल है, यह अधिकतर धान के खेतों में धानकी फसल कटने के बाद बोया जाता है कहीं –कहीं बाजरे की फसल कटने के बाद उसी खेत में चना वो दिया जाता है । इनकी अनेकों किस्में अध्ययन क्षेत्र में बोई जाती है जिनमें से टाइप 3, राधे, के0 468 , पन्त जी0 114 , पूसा 408, गौरव, काबुली के0 4, काबुली के0 5 काबुली एल0 550, पूसा 417 (गिरनार) आदि प्रमुख रूप से बोई जाती है ।

(ब) मटर :

शरद कालीन शब्जियों में मटर का एक प्रमुख स्थान है । यह एक बहुउपयोगी शब्जी है । मटर में केवल प्रोटीन 22.0 प्रतिशत ही नहीं होता बल्कि इसमें विटामिन , फास्फोरस तथा लौह तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं । मटर मु वसा 1.8 प्रतिशत, कार्वोहाईड्रेट 62.1 प्रतिशत, कैल्शियम 0.64 प्रतिशत, लोहा 0.048 प्रतिशत तथा नाइसिन 0.024 प्रतिशत पाया जाता है । वैज्ञानिकों के अनुसार विभिन्न वर्ग की मटर का जन्म स्थान भिन्न–भिन्न देश हैं । विद्वानों के मतानुसार शब्जी वाली मटर का मूल उत्पत्ति स्थल इथियोपिया है । दाने वाली मटर के पौधे इटली में जंगली रूप में पाये गये हैं । **बेवीलोव** का मत है कि इसका उत्पत्ति स्थल इटली व पश्चिमी भारत के बीच कहीं हुआ होगा । मटर के लिए शुष्क तथा ठंडी जलवायु की आवश्यकता होती है । मटर के बृद्धिकाल में अधिक वर्षा हानिकारक होती है । फसल के पकने के समय उच्च तापमान तथा शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है । अच्छे जल निकास वाली दोमट या हल्की दोमट भूमि जिसका पी0एच0मान 6 से 7.5 के बीच हो, मटर के लिए सर्वोच्च मानी जाती है ।

जनपद में दलहनी फसलों में मटर भी एक प्रमुख फसल है । यह सामान्यतया बाजरा की फसल कटने के बाद उसी खेत में बोया जाता है । यह कम लागत पर अच्छी उपज देने वाली शब्जियों में तथा सूखे दानों का प्रयोग दाल व छोलों के रूप में अधिक किया जाता है । इसकी अनेकों किस्में अध्ययन क्षेत्र में उगाई जाती हैं जिनमें से रचना, पन्त मटर-5 स्वर्ण रेखा, किन्नूरी, अर्किल बोर्नविले, पन्त उपहार, जवाहर मटर 4, अर्लीवैजर हंस तथा असौनी जातियां प्रमुख हैं ।

(स) मसूर :

मसूर भी एक दलहनी फसल है जिसमें 26 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है । यह दाल तथा नमकीन बनाने में अधिकांश रूप में प्रयोग की जाती है , परन्तु जनपद में अभी इसका पर्याप्त प्रसार नहीं हो पाया है , परन्तु सभी विकास खण्डों में न्यूनाधिक उगाई जाती है । परन्तु किसी भी विकास खण्ड में यह अभी तक कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं बना सकी है, केवल अपनी उपस्थिति अवश्य दर्ज करवाने में सफल हुई है ।

अध्ययन क्षेत्र में रबी फसल के अन्तर्गत दलहनी फसलों के क्षेत्रफल को तालिका 4.8 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

विकास खण्ड	चना		मटर		मसूर	
	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत
1. जसवन्तनगर	1980	8.48	3,263	13.98	12	0.05
2. बढ़पुरा	2435	21.62	180	1.60	2	0.02
3. बसरेहर	1054	4.47	585	2.48	9	0.04
4. भरथना	836	5.19	731	4.54	4	0.03
5. ताखा	685	4.95	168	1.13	4	0.03
6. महेवा	2003	10.00	2,670	13.33	-	-
7. चकरनगर	3163	32.97	25	0.26	-	-
8. अछल्दा	1508	9.47	896	5.63	7	0.04
9. विधूना	1245	7.25	246	1.43	20	0.12
10. एरवाकटरा	1013	7.16	185	1.31	6	0.04

विकास खण्ड	चना		मटर		मसूर	
	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत
11.सहार	1473	8.60	502	2.93	15	0.09
12.औरैया	4052	19.16	2,086	9.86	2	0.01
13.अजीतमल	1585	11.51	2,854	20.73	2	0.02
14.भाग्यनगर	2052	12.53	747	4.56	4	0.04
योग ग्रामीण	25084	10.70	15,138	6.45	87	0.04
योग नगरीय	9	3.13	8	2.78	–	–
योग जनपद	25093	10.69	15,146	6.45	87	0.04

सारिणी क्रमांक 4.8 जनपद में विकास खण्ड स्तर पर रबी फसल के अन्तर्गत दलहनी फसलों के क्षेत्रीय वितरण का चित्र प्रस्तुत कर रही है । चने की फसल के सम्बन्ध में विचार करें तो सम्पूर्ण जनपद में 25093 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर यह फसल उगाई जा रही है जो रबी फसल का 10.69 प्रतिशत हिस्सा है । दूसरा स्थान मटर की फसल को प्राप्त है यह फसल कुल 15146 हेक्टेयर पर बोई जा रही है जो हिस्सेदारी की दृष्टि से6.45 प्रतिशत है । आँकिक दृष्टि से देखे तो तीसरा स्थान मसूर फसल का है परन्तु यह न तो क्षेत्रफल की दृष्टि से और न ही हिस्सेदारी की दृष्टि से कोई महत्वपूर्ण स्थान रखती है ।

विकास खण्ड स्तर पर देखे तो यह ज्ञात होता है कि चने की फसल के वितरण में विभिन्न विकास खण्डों में अत्याधिक असमानता है, जहाँ चकरनगर विकास खण्ड अपने रबी फसल के सम्पूर्ण क्षेत्रफल में से लगभग 33 प्रतिशत हिस्से पर चने की फसल उगा रहा है वहीं वसरेहर विकास खण्ड इस फसल को मात्र 4.47 प्रतिशत क्षेत्र ही उपलब्ध करा पा रहा है स्पष्ट है कि कुछ विकास खण्ड इस फसल को अधिक महत्व दे रहे हैं जबकि कुछ विकास खण्ड इसे फसल को अधिक महत्व नहीं दे रहे हैं । जनपदीययय औसत 10.69 प्रतिशत से अधिक महत्व देने वाले विकास खण्डों में चकरनगर के अतिरिक्त बढ़पुरा 21.62 प्रतिशत, औरैया 19.16 प्रतिशत, भाग्यनगर 12.53 प्रतिशत तथा अजीतमल 11.51 प्रतिशत हैं । अन्य विकास खण्ड जो जनपदीयय स्तर से नीचा प्रदर्शन कर रहे हैं वे महेवा 10

प्रतिशत, अछल्दा 9.47 प्रतिशत, सहार 8.60 प्रतिशत, विधूना 7.25 प्रतिशत एरवाकटरा 7.16 प्रतिशत, जसवन्तनगर 8.48 प्रतिशत, ताखा 4.95 प्रतिशत तथा भरथना 5.19 प्रतिशत भूमि पर चने की फसल उगा रहे हैं ।

दलहनी फसलों में मटर के क्षेत्रीय वितरण पर दृष्टिपात करें तो इस फसल को सम्पूर्ण जनपद में 6.45 प्रतिशत की हिस्सेदारी प्राप्त है । विकास खण्ड स्तर पर देखें तो अजीतमल विकास खण्ड में इस फसल को 20.73 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोकर वरीयता क्रम में सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर रहा है , जबकि इसके विपरीत चकरनगर विकास खण्ड इस फसल को मात्र 0.25 प्रतिशत क्षेत्रफल आवँटित करके वरीयता क्रम में सबसे निचले स्तर पर हैं और यहाँ यह फसल मात्र अपनी उपस्थिति ही दर्शा पा रही है । महेवा विकास खण्ड में इस फसल को चने से अधिक महत्व दिया जा रहा है जहाँ मटर की भागेदारी रबी फसल का 13.33 प्रतिशत है जबकि चने की हिस्सेदारी 10 प्रतिशत ही है । चने की फसल से अधिक महत्व इस फसल को जसवन्तनगर विकास खण्ड में भी दिया जा रहा है । जहाँ इस फसल को 13.78 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोया जा रहा है जबकि फसल की भागेदारी 8.48 प्रतिशत ही है । अन्य विकास खण्ड मटर की फसल को न्यूनाधिक क्षेत्रफल आवँटित करके महत्व की दृष्टि से द्वितीय स्थान पर ही रख रहे हैं । जहाँ तक मसूर फसल का प्रश्न है तो यह फसल अभी तक पूरे जनपद में मात्र 87 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर ही अपने पैर फैला सकी है परन्तु महेवा तथा चकरनगर विकास खण्डों को छोड़कर अन्य विकास खण्डों में इस फसल ने न्यूनाधिक अपनी घुसपैठ कर ली है, और विभिन्न विकास खण्डों में 0.01 प्रतिशत से लेकर 0.12 प्रतिशत तक क्षेत्रफल भी हथिया लिया है । महेवा और चकरनगर विकास खण्डों में अभी तक यह फसल अपने आच्छादन से वँचित है ।

3. <u>तिलहनी फसलें</u> :

तिलहनी फसलों में तोरिया (इण्डियन रेप) सरसों तथा राई फसलों का रबी की फसल में उगाई जाने वाली फसलों में प्रमुख स्थान है क्योकि ये फसलें करोड़ों लोगों के लिए खाद्य तेल का मुख्य स्रोत है । इन फसलों में तेल की मात्रा 35 से 38 प्रतिशत के मध्य होती है । सरसों तथा तोरिया का तेल खाने के अतिरिक्त जलाने के लिए शरीर की मालिश के लिए चमड़े और लकडी का सामान पर लगाने के लिए रबर और साबुन के निर्माण तथा अचार में उपयोग किया जाता है । इनकी खली पशु बड़े चाव से खाते हैं । इसमें 30–35 प्रतिशत प्रोटीन होता है । सरसों की फसल के लिए शुष्क और ठण्डी जलवायु की आवश्यकता होती है । अधिक तेल उत्पादन के लिए सरसों वर्ग को ठण्डा तापमान साफ और खुला आसमान तथा पर्याप्त मृदा नमी की आवश्यकता होती है ।

राई का उत्पत्ति स्थान भारत, चीन या योरुप का कोई स्थान माना जाता है । भूरी सरसों का जन्मस्थान वेवीलोव के अनुसार अफगानिस्तान या भारतीय उप महाद्वीप का उत्तरी पश्चिमी भाग है । पीली सरसों का मूल

स्थान डा0 **धर्मपाल** के अनुसार उत्त्री पूर्वी भारत है । बनारसी राई का जन्मस्थान यूरेशिया माना जाता है । सरसों के लिए दोमट मिट्टी या हल्की दोमट मिट्टी सर्वोत्तम रहती है, भूमि का पीएच0मान 6.5 से 7.5 के मध्य रहे तो उपज अच्छी मिलती है । अध्ययन क्षेत्र में सरसों वर्षा की अनेकों किस्में बोई जाती हैं । जिनमें से राई की वरुणा (टाइप 59) रोहिणी , क्रान्ति (पन्त 15) कृष्णा (पन्त 18), वरदान,वैभव तथा शेखर (के0आर0 5610) प्रमुख रूप से उगाई जाती है । सरसों की पूसा कल्याणी, के0 88 तथा टाइप 151 जातियाँ प्रमुख हैं तथा तोरिया या लहिया की प्रमुख जातियों में टाइप 9, टाइप 36, भवानी, पन्त तोरिया 303 तथा पी0टी0 30 ही अधिकांश बोई जाती है । सारिणी क्रमांक 4.9 में विकास खण्ड स्तर पर सरसों वर्ग की तिलहनी फसल का क्षेत्रीय वितरण दर्शाया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 4.9 विकास खण्ड स्तर पर तिलहनी फसल का वितरण 1990–91 हेक्टेयर में ।

	लाही/सरसों		अन्य तिलहन		कुल तिलहनी फसलें	
	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत
1.जसवन्त नगर	2,494	10.68	264	1.13	2,758	11.81
2.बढ़पुरा	2,733	24.27	38	0.34	2,771	24.61
3.वसरेहर	963	4.08	39	0.16	1,002	4.24
4.भरथना	923	5.73	–	–	923	5.73
5.ताखा	677	4.54	–	–	677	4.54
6.महेवा	2,318	11.57	01	–	2,319	11.57
7.चकरनगर	2,775	28.92	05	0.05	2,780	28.97
8.अछल्दा	1,933	12.14	12	0.07	1,945	12.21
9.विधूना	1,329	7.73	30	0.17	1,359	7.90
10.एरवाकटरा	1,248	8.82	11	0.08	1,259	8.90
11.सहार	1,932	11.28	13	0.08	1,945	11.36
12.औरैया	3,892	18.40	17	0.08	3,909	18.48
13.अजीतमल	1,508	10.95	02	0.02	1,510	10.97
14.भाग्यनगर	2,324	14.20	02	0.01	2,326	14.21
योग ग्रामीण	27,049	11.53	434	0.18	27,483	11.72
योग नगरीय	56	19.44	8	2.78	64	22.22
योग जनपद	27,105	11.54	442	0.19	27,547	11.73

सारिणी क्रमांक 4.9 विकास खण्ड स्तर पर तिलहनी फसलों के क्षेत्रफलीय वितरण पर प्रकाश डाल रही है । सारिणी से ज्ञात होता है कि जनपद में तिलहनी फसलों में लाही प्रमुख है और इसका लगभग एकाधिकार है अन्य तिलहनी फसलों में रबी फसल की मात्र अलसी फसल ही ऐसी है जिसका किसी किसी विकास खण्उ में नामोनिशान तक नहीं है । सम्पूर्ण जनपद फसल ही ऐसी है जिसका किसी किसी विकास खण्ड में नामोनिशान तक नहीं है । सम्पूर्ण जनपद की कुल 27547 हेक्टेयर तिलहनी क्षेत्र में लाही/सरसों 27105 हेक्टेयर क्षेत्र में उगाई जा रही है । जहाँ तक विकास खण्ड स्तर पर इस फसल के वितरण को देखे तो चकरनगर विकास खण्ड अपने रबी क्षेत्रफल के 28.92 प्रतिशत क्षेत्रफल पर लाही/सरसों बोकर इस फसल को अन्य विकास खण्डों की अपेक्षा सर्वाधिक महत्व प्रदान कर रहा है । बढ़पुरा विकास खण्ड भी चकरनगर का पीछा करता हुआ प्रतीत हो रहा है और यह अपने यहाँ 24.27 प्रतिशत क्षेत्र में इस फसल को उगा रहा है । जहाँ तक इस फसल को न्यूनतम महत्व देने की बात है तो यह कार्य वसरेहर विकास खण्ड पूरा कर रहा है, यह विकास खण्ड अपने रबी क्षेत्र का 4.08 प्रतिशत क्षेत्र इस फसल को प्रदान करके वरीयता क्रम में अन्तिम स्थान पर है । जिन विकास खण्डों में इस फसल को 10 से 15 प्रतिशत तक स्थान दिया जा रहा है उनमें से भाग्यनगर 14.20 प्रतिशत, अछल्दा 12.14 प्रतिशत, महेवा 11.57 प्रतिशत, सहार 11.28 प्रतिशत, अजीतमल 10.95 प्रतिशत तथा जसवन्तनगर 10.68 प्रतिशत है । जबकि अन्य विकास खण्ड इस फसल को 5 से 10 प्रतिशत तक स्थान दे रहे हैं, केवल ताखा विकास खण्ड अपने यहाँ 4.54 प्रतिशत क्षेत्र में इस फसल को उगा रहा है । अन्य तिलहनी फसलों में अलसी तो नाम मात्र को ही बोई जाती है । अलसी के अतिरिक्त अन्य तिलहनी फसलों में तिल, रेड़ी तथा मूँगफली खरीफ की फसलें है लेकिन इनका क्षेत्र अधिक महत्वपूर्ण नहीं है ।. कुल 442 हेक्टेयर क्षेत्र में अलसी का क्षेत्रफल मात्र 18 हेक्टेयर है जो दो विकास खण्डों क्रमशः विधूना 8 हेक्टेयर तथा एरवाकटरा 7 हेक्टेयर में केन्द्रित है । वसरेहर. चकरनगर तथा औरैया तीनों में इस फसल का 1-1 हेक्टेयर क्षेत्रफल है । स्पष्ट है कि इस तिलहनी फसल का कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं है ।

4. अन्य फसलें :

अन्य फसलों के अन्तर्गत गन्ना, आलू, शब्जियां तथा चारे की फसल प्रमुख है । शब्जियों में टमाटर, बैंगन, फूलगोभी, पातगोभी, मिर्च, कुम्हेड़ा , धनियां, मूली, गाजर. पालक आदि प्रमुख रूप से उगाई जाती है ।

(अ) गन्ना :

भारत में शर्करा के मुख्य स्रोत के रूप में गन्ने की खेती प्राचीन काल से होती है । गन्ने का उपयोग विभिन्न रूपों में किया जाता है । इससे चीनी , गुड़, खाँड़ के अतिरिक्त शीरा भी मिलता है जो तम्बाकू. अलकोहल, यीष्ट तथा पशुओं का आहार बनाने के काम आता है । गन्ने का हरा अगोला पशुओं के चारे के रूप में तथा सूखी पत्ती ईधन तथा छावनी के लिए प्रयोग की जाती है । गन्ने की खोई से कार्ड बोर्ड व मोटा कागज बनाया जाता है ।

भारत में गन्ने की खेती प्राचीन काल से होती आ रही है । कुछ ऐसे प्रमाण उपलब्ध हैं कि भारत में गन्ने की कृषि ऋृग्वेद काल (2500–1400 ई0पूर्व) में की जाती थी । जब सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण (326 ई0पू0) किया था तो उसके सैनिकों ने नरकुल जैसे पौधे के तने को चूसा था जिसमें मिठास थी । इन्हीं तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि गन्ने का उत्पत्ति केन्द्र भारत है । गन्ना लगभग सभी प्रकार की भूमियों पर उगाया जाता है । अच्छे जल निकास वाली दोमट भूमि इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है । 6.1 से 7.5 पीएच0मान वाली भूमियां इसके लिए सर्वोत्तम रहती है । अध्ययन क्षेत्र में इसकी अनेकों किस्में बोई जाती है जिनमें से को0 1148, को0 1158, को0 7321, को0शा0 510 , को0शा0 770, 802, बी0ओ0 54,70, पन्त 84211, पन्त 84215, को0शा0 758, को0 395 तथा को0शा0 687 प्रमुख रूप से उगाई जाती है ।

(ब) आलू :

वर्षभर प्राप्त होने वाली शब्जियों में आलू का प्रमुख स्थान है । आलू एक पूर्ण भोजन है । इसमें 22.6 प्रतिशत कार्वोहाईड्रेट्, 1.6 प्रतिशत प्रोटीन 0.1 प्रतिशत वसा तथा 0.6 प्रतिशत खनिज पदार्थ पाया जाता है । आलू के प्रोटीन में अधिकतर खाद्यान्नों की अपेक्षा शरीर के लिए आवश्यक अमीनो अम्ल में से एक नाइसीन की मात्रा अधिक होती है । विटामिन बी, तथा सी की भी बहुतायत होती है । आलू का प्रयोग सब्जी के रूप में तथा नमकीन पदार्थ तैयार करके खाने के लिए किया जाता है । आलू से ग्लूकोज, स्टार्च, शराब, कागज, साइट्रिक अम्ल तैयार किए जाते हैं । इसकी खेती से किसानों को अन्य खाद्यान्न फसलों की अपेक्षा अधिक आय प्राप्त होती है क्योंकि यह कम समय में तैयार होकर प्रति हेक्टेयर अधिक पैदावार देती है । आलू का उत्पत्ति स्थल दक्षिणी अमेरिका है जहाँ से यह यूरोप तथा अन्य देशों में फैला है । भारत में आलू सत्रहवीं शताब्दी में पुर्तगालियों द्वारा लाया गया । 1915 में **सरथामस रो की दावत** में पहली बार आलू का प्रयोग किया था । आलू की खेती के लिए ठण्डी जलवायु की आवश्यकता होती है पौधों की बृद्धि के समय लगभग 24^0 सेन्टीग्रेड तथा कन्द बनने के समय लगभग 17.2^0 सेन्टीग्रेड तापमान की आवश्यकता होती है । आलू के लिए छोटे दिन तथा रातें लम्बी कन्द की बढ़वार के लिए उपयुक्त हैं । आलू के लिए बलुई दोमट या दोमट भूमि सर्वोत्तम रहती है जिसमें जल निकास अच्छा हो तथा भूमि उर्वरा हो क्योंकि आलू को अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है । हल्की अम्लीय भूमियों जिसकी पी0एच0मान 6.0 से 6.5 में आलू की अच्छी उपज मिलती है । अध्ययन क्षेत्र में आलू की अनेकों किस्में उगाई जाती है जिनमें से अगेती किस्में कुफरी चन्द्रमुखी (ए02708), कुफरी अलंकार (ए0 3649) कुफरी बहार (ई0 3747), कुफरी नवताल (जी0 2524), मध्य कालिक किस्में कुफरी बादशाह (जे0 एस0 4870), कुफरी शीतमान (सी–3745) कुफरी चमत्कार (ओ0एन0 1202) तथा पछेती किस्में कुफरी सिन्दूरी, कुफरी नवीन तथा कुफरी किसान आदि प्रमुख किस्में उगाई जाती हैं ।

(स)अन्य सब्जियां :

रबी फसल की अन्य शब्जियों में प्याज, लहसुन टमाटर, बैंगन, फूलगोभी, पातगोभी, मिर्च तथा कुम्हेड़ा, मूली, गाजर तथा शकरकन्द आदि अध्ययन क्षेत्र में प्रमुख रूप से उगाई जाती है, हरी पत्तेदार शब्जियों में पालक , मेथी भी उगाई जाती है । परन्तु इन शब्जियों का क्षेत्रफल अत्यन्त सीमित है ।

(द) चारा फसलें :

चारा फसलों में अध्ययन क्षेत्र में जई, रिजका तथा बरसीम प्रमुख रूप से उगाई जाती है , परन्तु इन तीनों फसलों में बरसीम सभी विकास खण्डों में प्रमुख रूप से उगाई जाती है । जई एक पौष्टिक चारा है जो कि सभी वर्गो के पशुओं को अधिक मात्रा में खिलाया जा सकता है, प्रोटीन इसमें अपेक्षाकृत कम होती है । इसकी क्रैंट, फ्लेनिंग गोल्ड तथा यू0पी0ओ0 94 किस्में अधिकांश प्रयोग में लाई जाती है ।

बरसीम उन हरे चारों में से एक है जो अपने गुणों द्वारा दुधारु पशुओं के लिए प्रसिद्ध है । यह मक्का, धान, ज्वार या बाजरा के बाद आसानी से उगाई जा सकती है । धान के खेत प्राय: बरसीम के लिए अच्छे रहते हैं । भूमि का पी0एच0मान 6.0 या इससे अधिक होना चाहिए । इसकी मेसकवी तथा पूसा जायन्ट प्रमुख किस्में उगाई जाती हैं । रबी की अन्य फसलों का वितरण तालिका क्रमांक 4.10 में दर्शाया जा रहा है ।

तालिका क्रमांक 4.10 विकास खण्ड वार अन्य फसलों का विवरण 1990-91 हेक्टेयर में ।

विकास खण्ड	गन्ने	शब्जियां		चारा फसलें	अन्य फसलें
		आलू	अन्य		
1.जसवन्त नगर	544	1,852	117	141	102
2.बढ़पुरा	431	473	84	24	58
3.बसरेहर	224	1,919	210	158	112
4.भरथना	214	833	104	127	88
ताखा	264	482	82	114	52
5.महेवा	453	1,000	176	156	66
6.चकरनगर	6	19	11	4	8
7.अछल्दा	315	492	75	145	72

विकास खण्ड	गन्ने	शब्जियां		चारा फसलें	अन्य फसलें
		आलू	अन्य		
8.अछल्दा	315	492	75	145	72
9.विधूना	318	514	118	109	85
10.एरवाकटरा	200	370	86	90	42
11.सहार	261	561	128	110	68
12.औरैया	465	161	56	30	17
13.अजीतमल	374	387	92	62	32
14.भाग्यनगर	296	393	102	95	48
योग ग्रामीण	4,365	9,456	1,441	1,365	850
योग नगरीय	1	35	32	12	8
योग जनपद	4,366	9,491	1,473	1,377	858

तालिका क्रमांक 4.10 विकासखण्ड स्तर पर विभिन्न अन्य फसलों के क्षेत्रीय वितरण को दर्शा रही है, जो कुल 10964 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है, उस क्षेत्रपुल में अकेले आलू की भागेदारी 9491 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर है । इस दृष्टि से विकास खण्ड स्तर पर देखे तो ज्ञात होता है कि आलू का सर्वाधिक क्षेत्रफल बसरेहर विकास खण्ड का है जहाँ पर 1919 हेक्टेयर क्षेत्र पर आलू तथा 210 हेक्टेयर क्षेत्र पर अन्य शब्जियां उगाई जा रही हैं, दूसरे स्थान पर जसवन्त नगर विकास खण्ड है जो 1852 हेक्टेयर क्षेत्र आलू तथा 117 हेक्टेयर क्षेत्र अन्य शब्जियों को आवँटित कर रहा है । इस दृष्टि से चकरनगर विकास खण्ड की स्थिति सर्वाधिक दयनीय है यह विकास खण्ड मात्र 19 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर आलू तथा 11 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर अन्य शब्जियां उगाया पा रहा है । अन्य विकास खण्डों की स्थिति न्यूनाधिक एक जैसी है । गन्ने की फसल की दृष्टि से देखे तो जसवन्त नगर विकास खण्ड 544 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर गन्ना बोकर सर्वाधिक गन्ने के क्षेत्र वाला विकास खण्ड है जबकि इसके विपरीत चकरनगर विकास खण्ड मात्र 6 हेक्टेयर पर गन्ने की फसल उगा रहा है और इस दृष्टि से न्यूनतम क्षेत्रफल वाला विकास खण्ड दृष्टिगोचर हो रहा है । औरैया, महेवा तथा बढ़पुरा विकास खण्ड क्रमशः 465

हेक्टेयर, 453 हेक्टेयर तथा 431 हेक्टेयर क्षेत्रफल गन्ने की फसल को आवँटित करके लगभग एक जैसी स्थिति दर्शा रहे हैं । अन्य विकास खण्ड इस फसल के लिए 200 हेक्टेयर से अधिक भूमि गन्ने की फसल को प्रदान कर रहे हैं । जहाँ तक चारा फसलों का प्रश्न है तो वसरेहर विकास खण्ड 158 हेक्टेयर चारा फसलों को देकर सर्वाधिक चारा क्षेत्र वाला विकास खण्ड है जबकि महेवा 156 हेक्टेयर इन फसलों को देकर बसरेहर का पीछा करता प्रतीत हो रहा है । अन्य विकास खण्ड जो चारे की फसलों को 100 हेक्टेयर से अधिक भूमि आवँटित कर रहे हैं, वे जसवन्त नगर 141 हेक्टेयर, भरथना 127 हेक्टेयर, ताखा 114 हेक्टेयर अछल्दा 145 हेक्टेयर, विधूना 109 हेक्टेयर तथा एरवाकटरा 110 हेक्टेयर भूमि आवँटित करने वाले विकास खण्ड हैं । अन्य विकास खण्ड 100 हेक्टेयर से कम भूमि चारा फम्लों को दे रहे हैं ।

<u>जायद की फसलें</u> :

इस वर्ग की फसलों में तेज गर्मी , शुष्क हवाएं तथा लू सहन करने की बड़ी क्षमता होती है । इनकी बुवाई फरवरी–मार्च में भी की जाती है । खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, मूँग, खीरा तथा सुरजमुखी आदि प्रमुख फसलें हैं इनके अतिरिक्त कुछ शब्जियां भी इस फसल के अन्तर्गत उगाई जाती हैं । गर्म व शुष्क मौसम के कारण खरबूजा तथा तरबूज में मिठास का अनुपात बढ़ जाता है । शब्जियों में लौकी करेला, काशीफल, तरोई , भिण्डी, बैंगन आदि प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं । जायद मौसम में हरे चारे की फसलें भी उगाई जाती हैं । विकास खण्डवार जायद फसलों का विवरण तालिका क्रमांक 4.11 दिया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 4.11 जायद फसल के अन्तर्गत विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल को विकास खण्ड स्तर पर दर्शाया गया है । सारिणी से ज्ञात होता है कि सम्पूर्ण जनपद में सर्वोच्च भागेदारी 32.91 प्रतिशत मूँग की फसल कर रही है । खरबूजा तथा तरबूज एवं सुरजमुखी की फसलें न्यूनाधिक एक जैसे स्तर को दर्शा रही है परन्तु सुरजमुखी की फसल प्रतिशत की दृष्टि खरबूजा/तरबूज के क्षेत्रफल से थोड़ा अधिक हिस्सेदारी करके द्वितीय स्थान पर अपनी स्थिति को दर्शा रही है जबकि खरबूजा/तरबूज तृतीय स्थान प्राप्त कर रहे हैं । ककड़ी/खीरा तथा शब्जियां भी कमोवेश एक जैसी स्थिति में दृश्य हो रही है । विकास खण्ड स्तर पर देखे तो सर्वाधिक क्षेत्र में बोई जाने वाली मूँग की फसल विभिन्न विकास खण्डों में क्षेत्रीय वितरण में भिन्नता दर्शा रही है । अछल्दा विकास खण्ड अपने जायद क्षेत्रफल का 40.51 प्रतिशत क्षेत्र इस फसल को देकर वरीयता क्रम में सर्वोच्च स्थान पर है, इसके विपरीत अजीतमल विकास खण्ड इस फसल को मात्र 14.28 प्रतिशत ही क्षेत्रफल उपलब्ध करा पा रहा है । अन्य विकास खण्ड इन दोनों विकास खण्ड इन दोनों विकास खण्डों के मध्य क्षेत्रफल पर मूँग की फसल उगा रहे हैं । सुरजमुखी की फसल की जनपद में अपना एक स्थान बनाती जा रही है । यह एक तिलहनी फसल है जिसमें 40–45 प्रतिशत उच्चकोटि का प्रोटीन पाया जाता है इस फसल की सर्वाधिक हिस्सेदारी अजीतमल

विकास खण्ड	जायद का क्षेत्रफल	खरबूजा/तरबूज		शब्जियां		ककड़ी/खीरा		मूँग		सुरजमुखी		चारा फसलें	
		क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत
1.जसवन्त नगर	932	185	19.85	118	12.66	107	11.48	360	38.63	112	12.02	50	5.36
2.बढ़पुरा	268	34	12.69	26	9.70	41	15.30	102	38.06	34	12.69	31	11.56
3.बसरेहर	1,157	261	22.56	110	9.51	129	11.15	416	35.96	198	17.11	43	3.71
4.भरथना	544	63	11.58	70	12.87	80	14.71	204	37.50	67	12.32	60	11.03
5.ताखा	349	79	22.64	32	9.17	41	11.75	124	35.53	54	15.47	9	2.57
6.महेवा	589	47	7.98	98	16.64	111	18.85	220	37.35	42	7.13	71	12.05
7.चकरनगर	3	–	–	2	66.67	–	–	–	–	–	–	1	33.33
8.अछल्दा	311	52	16.72	26	8.36	27	8.68	126	40.51	85	27.33	5	1.61
9.विधूना	354	80	22.60	32	9.04	44	12.43	76	21.47	118	33.33	4	1.12
10.एरवाकटरा	377	46	12.20	51	13.53	62	16.45	114	30.24	102	27.86	2	0.53
11.सहार	404	104	25.74	42	10.40	42	10.40	92	22.77	122	30.20	2	0.50
12.औरैया	40	10	25.00	10	25.00	3	7.50	7	17.50	08	20.00	2	5.00
13.अजीतमल	196	22	11.22	16	8.16	14	7.14	28	14.28	92	46.94	24	12.23
14.भाग्यनगर	321	76	23.68	52	16.20	47	14.64	66	20.56	74	23.05	6	1.87
योग ग्रामीण	5,845	1,058	18.10	686	11.74	748	12.80	1,935	33.11	1,108	18.96	310	5.30
योग नगरीय	34	7	20.59	16	47.06	10	29.41	–	–	–	–	1	2.94
योग जनपद	5,879	1.075	18.29	702	11.94	758	12.89	1,935	32.91	1.108	18.85	311	5.29

विकास खण्ड कर रहा है जो अपनी जायद की फसल में 46.94 प्रतिशत स्थान इस फसल को प्रदान कर रहा है । इसके विपरीत चकरनगर विकास खण्ड अभी तक अपने यहाँ इस फसल की प्रारम्भ भी नहीं कर पाया है । इसके अतिरिक्त महेवा विकास खण्ड इस फसल को मात्र 7.13 प्रतिशत स्थान देकर न्यूनतम महत्व देने वाले विकास खण्डों में एक है । जनपदीयय औसत 18.85 प्रतिशत से अधिक महत्व देने वाले विकास खण्ड अछल्दा 27.33 प्रतिशत, विधूना 33.33 प्रतिशत, एरवाकटरा 27.06 प्रतिशत, सहार 30.20 प्रतिशत , औरैया 20.00 प्रतिशत तथा भाग्यनगर 23.05 प्रतिशत है । अन्य विकास खण्ड जनपदीय औसत से निचले स्तर को प्रदर्शित कर रहे हैं । वरीयता क्रम में जनपद में शब्जियां चौथा स्थान प्रदर्शित कर रही हैं । शब्जियों की सर्वाधिक पैदावार प्रतिशत की दृष्टि से तो चकरनगर तथा औरैया विकास खण्ड दिखाई पड़ रहे हैं परन्तु इनका जायद क्षेत्र अधिक महत्व पूर्ण न होने के कारण ही इनका प्रतिशत ऊँचा है जबकि क्षेत्रीय दृष्टि से देखें तो चकरनगर मात्र अपने जायद क्षेत्रफल 3 हेक्टेयर में 2 हेक्टेयर पर शब्जी उगाकर प्रतिशत की दृष्टि से प्रथम स्थान पर है और इसी प्रकार अजीतमल कुल 40 हेक्टेयर क्षेत्र में से 10 हेक्टेयर पर शब्जियां उगाकर द्वितीय स्थान पर है । जबकि जसवन्त नगर 118 हेक्टेयर क्षेत्र पर शब्जियां उगाकर क्षेत्रफल की दृष्टि से इन दोनों विकास खण्डों के कुल क्षेत्र को मिलाकर लगभग तीन गुना अधिक क्षेत्र शब्जियों को आवँटित कर रहा है , परन्तु प्रतिशत की दृष्टि से इन फसलों की इस विकास खण्उ में भागेदारी 12.66 प्रतिशत ही है । महेवा विकास खण्ड तथा भाग्यनगर विकास खण्ड क्रमशः 16.64 तथा 16.20 प्रतिशत जायद क्षेत्र शब्जियों को प्रदान कर रहे हैं । अन्य विकास खण्ड 8 प्रतिशत से लेकर 14 प्रतिशत के मध्य शब्जियों की हिस्सेदारी कर रहे हैं । जायद फसलों में खरबूजा/तरबूज की फसल महत्व की दृष्टि से जनपद में तीसरे स्थान पर है और इस फसल की हिस्सेदारी 18.29 प्रतिशत है । इस पुसल की सर्वाधिक भागेदारी सहार विकास खण्ड कर रहा है और यह इस फसल को अपने यहाँ जायद के क्षेत्रफल का 25.74 प्रतिशत हिस्म्ग देकर सर्वाधिक महत्व दर्शा रहा है । इस फसल को जनपदीयय औसत से अधिक महत्व यदेने वाले विकास खण्डों में, जसवन्तनगर 19.85 प्रतिशत, बसरेहर 22.56 प्रतिशत, ताखा 22.64 प्रतिशत, विधूना 22.60 प्रतिशत औरैया 25 प्रतिशत तथा भाग्यनगर 23.68 प्रतिशत है, अन्य विकास खण्ड जनपदीय औसत से नीचा स्तर प्रदर्शित कर रहे हैं । ककड़ी/खीरा का भी जायद फसलों में विशेष महत्व होता है इस दृष्टि से देखा जाय यतो 12.89 प्रतिशत क्षेत्र इन फसलों को जनपद में दिया जा रहा है इस पुसल की सर्वाधिक पैदावार महेवा विकास खण्ड 18.85 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाकर की जा रही है । जबकि न्यूनतम हिस्सेदारी अजीतमल विकास खण्ड 7.14 प्रतिशत कर रहा है । अन्य विकास खण्ड इन दोनों विकास खण्डों के मध्य स्थित है । जनपद में चारा फसलों को 5.29 प्रतिशत क्षेत्रफल आवँटित करके अन्तिम स्थान दिया जा रहा है, इस दृष्टि से महेवा विकास खण्ड 12.05 प्रतिशत क्षेत्रफल इस फसल को देकर सर्वोच्च स्थान पर है । न्यूनतम हिस्सेदारी सहार विकास खण्ड की है तो मात्र 0.50 प्रतिशत क्षेत्र ही इन फसलों को आवँटित कर रहा है ।

(स) शस्य संयोजन :

सस्यय संयोजन के अन्तर्गत किसी क्षेत्र विशेष में उत्पन्न की जाने वाली सभी फसलों का अध्ययन होता है । किसी इकाई क्षेत्र में एक या दो विशिष्ट फसलें होती हैं और उन्हीं के साथ अन्य अनेक गौण फसलें भी पैदा की जाती है । कृषक मुख्य फसल के साथ ही कोई न कोई खाद्यान्न , दलहन तिलहन या रेशेदार फसल की खेती करते हैं । प्रायः यह भी देखने को मिलता है कि यदि विशिष्ट क्षेत्र में दलहन या तिलहन फसल प्रथम वरीयता क्रम में है तो उसके साथ ही कृषक कोई न कोई खाद्यान्न फसल अवश्य ही उत्पन्न करता है । इस प्रकार किसी क्षेत्र या प्रदेश में उत्पन्न की जाने वाली प्रमुख फसलों के समूह को शस्यय संयोजन कहते हें । कृषि प्रदेशीकरण के अध्ययन में फसल प्रतिरूप के प्रादेशिक अध्ययन के साथ ही सस्य संयोजन का अध्ययन महत्वपूर्ण होता है । इससे कृषि की क्षेत्रीय विशेषताओं को आसानी से जाना जा सकता है । अतः सस्य संयोजन प्रदेशों का निर्धारण उन फसलों के स्थानिक वर्चस्व के आधार पर किया जाता है जिनमें से क्षेत्रीय सह सम्बन्ध पाया जाता है एवं जो साथ साथ विभिन्न रूपों में उगाई जाती है । फसलों के ऐसे अध्ययन से कृषि की प्रकृति पद्धति एवं उसकी विशेषताओं के आधार पर कृषि प्रदेशीकरण हेतु उपागम प्राम्त होते हैं । शस्य संयोजन प्रदेशों के अध्ययन से जहाँ एक तरफ क्षेत्रीय कृषि विशेषताओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है वहीं वर्तमान कृषि समस्याओं के निराकरण हेतु समुचित सुझाव दिए जा सकते हैं । किसी भी क्षेत्र के फसल संयोजन का स्वरूप मुख्यतः उस क्षेत्र विशेष के भौतिक (जलवायु, जलप्रवाह, मृदा (तथा सांस्कृतिक (आर्थिक, सामाजिक तथा संस्थागत (वातावरण की देन होता है । इस प्रकार यह मानव तथा भौतिक वातावरण के सम्बन्धों को प्रदर्शित करता है ।

शस्य संयोजन से सम्बन्धित सर्वप्रथम **जानवीवर** [18] महोदय ने महत्वपूर्ण प्रयास यकिया । इन्होंने फम्लों से सम्बन्धित अध्ययन हेतु एक नयी दिशा थी । इनके द्वारा प्रतिपादित शस्ययय सम्मिश्रण के महत्वपूर्ण सूत्र को विश्व के अनेक देशों में कृषि भूगोल वेत्ताओं ने अपनाकर अपने अध्ययन प्रस्तुत किए । इनका सूत्र कुल फसल क्षेत्र से अनेक फसलों को अधिकृत प्रतिशत द्वारा तथा कुल क्षेत्र के सैद्धान्तिक वितरण (जिसमें सम्पूर्ण फसल क्षेत्र को बराबर–बराबर अनेक भागों में विभाजित किया गया है, की तुलनात्मक विधि पर आधारित है । **थामस** [19] **ने बीवर** महोदय के सूत्र में सुधार प्रस्तुत किया । वीवर महोदय ने दो शस्य संयोजन में दो मुख्य फसलों के अन्तर के आधार पर गणना की जबकि **थामस** ने प्रत्येक शस्य संयोजन में सभी फसलों के लिए वास्तविक तथा सैद्धान्तिक प्रतिशत के अन्तर के आधार पर गणना की, शेष फसलों की गणना शून्य से विचलन के आधार पर की ।

भारत में सर्वप्रथम **बनर्जी** [20] ने पश्चिमी बंगाल के लिए **वीवर** महोदय यकी संशोधित विधि को अपनाया । **हरपाल सिंह** [21] ने पंजाब मैदान के मालवा क्षेत्र के शस्यय संयोजन का निर्धारण करते समय **वीवर** महोदय की विधि को अपनाया । इनके अनुसार **वीवर** महोदय की विधि वहाँ उपयुक्त नहीं है जहाँ अनेक फसलों द्वारा अधिकृत क्षेत्र की मात्रा का अन्तर कम है, इन्होंने **वीवर** विधि को अपनाते हुए पंजाब के मालवा क्षेत्र को 22 शस्यय संयोजन प्रदेशों में विभाजित किया । **ई0 दयाल** [22] ने पंजाब मैदान के शस्यय संयोजन प्रदेशों का परिसीमन करने के उद्देश्य से एक नई विधि को अपनाया । प्रत्येक क्षेत्रीय इकाई में मुख्य फसलों के चयन हेतु 50 प्रतिशत मापदण्ड का प्रयोग किया , दूसरे शब्दों में कुल फसल क्षेत्र के 50 प्रतिशत के अन्तर्गत आने वाली फसलों को शस्य संयोजन विश्लेषण के लिए चुना गया । **राय** [23] ने पूर्वी गंगा घाघरा के दोआब के फसलों के बदलते शस्यय स्वरूप का अध्ययन करते समय शस्य साहचर्य प्रदेशों का निर्धारण किया है । **अहमद तथा सिद्दीकी**[24] ने **लूनी वेसिन** के शस्य साहचर्य का अध्ययन कम विभिन्नता तथा सभी कृषि सम्भावना वाले प्रदेशों में सम्मिश्रण विश्लेषण को दृष्टिगत रखते हुए किया है ।

अध्ययन क्षेत्र में जनपदीय स्तर पर शस्य संयोजन का निर्धारण करने के लिए दोई, **थामस तथा रफी उल्लाह** की विधियों का प्रयोग किया गया है । यद्यपि इन भूगोल वेत्ताओं ने शस्यय संयोजन निर्धारण में **वीवर महोदयय** के ही गणितीय माडल को आधार बनाया है , परन्तु **वीवर** महोदय के माडल में क्षेत्रीय आवश्यकतानुसार संशोधन करके शस्य संयोजन का निर्धारण किया है क्योंकि **वीवर** महोदय $\frac{\Sigma d^2}{n}$ सूत्र केवल उन्हीं क्षेत्रों के शस्य संयोजन निर्धारण के लिए उपयुक्त है जिन क्षेत्रों में कम संख्या में फसलें उगाई जाती है तथा फसलों के वास्तविक क्षेत्रफल में पर्याप्त अन्तर मिलता है । **वीवर** महोदय के गणतीय माडल का सैद्धान्तिक आधार यह है कि सभी फसलों के अन्तर्गत फसलों के अन्तर्गत कृषि भूमि समान रूप से संलग्न है, उदाहरण के लिए यदि किसी क्षेत्र में एक ही फसल है तो इसका अर्थ यह है कि उस फसल का क्षेत्र 100 प्रतिशत है, यदि दो फसलें हैं तो प्रत्येक फसल के अन्तर्गत 50 प्रतिशत क्षेत्र संलग्न है, तीन फसलों की स्थिति में 33.33 प्रतिशत क्षेत्र सम्मिलित है, इसी प्रकार दस फसलों में 10 प्रतिशत कृषित क्षेत्र संलग्न होना चाहिए । सर्व प्रथम सकल कृषि क्षेत्र से अनेक फसलों का अधिकृत भूमि उपयोग प्रतिशत ज्ञात कर अवरोही क्रम में व्यवस्थित किया जाता है , तत्पश्चात अधिकृत तथा सैद्धान्तिक प्रतिशत का अन्तर ज्ञात कर उनका वर्ग निकाला जाता है तथा सभी वर्गो का योग ज्ञात करके फसलों की संख्या का भाग दिया जाता है । इस क्रम में सर्वोचित व्यवस्था (न्यूनतम मूल्य) को ही शस्य संयोजन में स्थान दिया गया है । शस्य संयोजन में प्रसरण सूत्र $\sigma = \frac{\Sigma d^2}{n}$ का प्रयोग किया गया है । चूँकि अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड स्तर पर विभिन्न फसलों के वितरण में बहुत अधिक भिन्नता मिलती है और विभिन्न विकास खण्डों में अनेक फसलें उगाई जाती है जिससे

उनके वितरण क्षेत्र में पर्याप्त अन्तर नहीं मिलता है जिससे **वीवर** महोदय की विधि के आधार पर विकास खण्ड स्तर पर शस्यय संयोजन का निर्धारण अनुपयुक्त है । इसलिए किकू काजू दोई की विधि के आधार पर गणना की गई । **दोई** महोदय की विधि **वीवर** की ही संशाधिक विधि है जिसमें दोई महोदयय ने $\Sigma \frac{d^2}{n}$ के स्थान पर Σd^2 को ही शस्य संयोजन का आधार माना है । दोई महोदय की गणना के आधार पर अध्ययन क्षेत्र में शस्य संयोजन का निर्धारण करके यह पाया गया कि विकास खण्ड स्तर पर शस्य संयोजन के निर्धारण में इस विधि का पयोग किया जा सकता है । अध्ययन क्षेत्र में शस्य संयोजन की गणना करते समय उन फसलों को ही सम्मिलित किया गया है जिनका क्षेत्रफल सकल कृषि क्षेत्र में 2 प्रतिशत से अधिक की भागेदारी कर रहा है, इस प्रकार दस फसलों तक फसल क्षेत्र को सम्मिलित करके शस्य यसंयोजन यका निर्धारण किया गया है ।

थामस महोदय ने **वीवर** महोदय के विचलन निकालने की विधि में शंसोधन किया है । **वीवर** मह्रोदय ने दो शस्य सम्मिश्रण में दो मुख्य फसलों के अन्तर के आधार गणना की थी जबकि **थामस** महोदय ने प्रत्येक शस्य सम्मिश्रण में सभी फसलों के लिए वास्तविक एवं सैद्धान्तिक प्रतिशत के अन्तर के आधार पर गणना की है । **थामस** महोदय के अनुसार जब दो शस्य सम्मिश्रण में प्रत्येक फसल के अन्तर्गत 50 प्रतिशत क्षेत्र है तो शेष फसलों के लिए शून्य प्रतिशत की कल्पना की जा सकती है । इस प्रकार इन्होंने शस्यय सम्मिश्रण की गणना प्रत्येक शस्य संयोजन में फसलों के सैद्धान्तिक प्रतिशत में फसलों की संख्या कये बाद शेष फसलों के लिए सैद्धान्तिक प्रतिशत शून्य मानकर विचलन की गणना की और प्रत्येक शस्य संयोजन में सभी फसलों को सम्मिलत करके शस्य संयोजन का निर्धारण किया है ।

प्रो0 रफी उल्लाह ने शस्य संयोजन के निर्धारण के लिए अधिकतम सकारात्मक विधि को अपनाया है । इससे पूर्व शस्य संयोजन के निर्धारण में सभी फसलों को समान महत्व प्रदान किया गया था । **प्रो0 रफी उल्लाह** ने इस कमी को दूर करने का प्रयास किया और शस्य संयोजन के निर्धारण के लिए निम्न सूत्र प्रस्तुत किया –

$$\sigma = \sqrt{\frac{\Sigma DP^2 - \Sigma Dn^2}{N^2}}$$

अथवा

$$\sigma = \frac{\Sigma DP^2 - \Sigma Dn^2}{N^2}$$

जहां σ = विचलन

DP = सकारात्मक (धनात्मक) विचलन

Dn = नकारात्मक (ऋणात्मक) विचलन

N = संयोजन में फसलो की संख्या

प्रो0 रफी उल्लाह ने यह माना कि सकारात्मक तथा नकारात्मक विचलनों का अन्तर सैद्धान्तिक वक्र के मध्यिका मूल्य से होता है अतः इन्होंने सैद्धान्तिकम मान के मध्यमान से वास्तविक मान के अन्तर की गणना की है तथा सर्वाधिक धनात्मक मूल्य से शस्य सम्मिश्रण को ज्ञात किया है । **वीवर** की अपेक्षा रफी उल्लाह के सूत्र के आधार पर निकाले गये शस्य सम्मिश्रण में फसलों की संख्या कम तथा वास्तविकता के अनुरूप है ।

अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड स्तर पर दोई , थामस तथा प्रो0 रफी उल्लाह की विधियों के आधार पर शस्य सम्मिश्रण की गणना की गई है और प्राप्त परिणाम को सारिणी क्रमांक 4.12 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारिणी क्रमांक 4.12 दोई, थामस तथा रफी उल्लाह की विधियों के आधार पर विकास खण्ड स्तर पर शस्य संयोजन का निर्धारण ।

सारिणी क्रमांक 4.12

शस्य संयोजन	दोई		थामस		रफी उल्लाह	
	विकास खण्ड	फसल क्रम	विकास खण्ड	फसल क्रम	विकास खण्ड	फसल क्रम
दो फसल	वसरेहर	गेध	वसरेहर	गेध		
	भरथना	गेध				
	ताखा	गेध				
	विधूना	गेध	ताखा	गेध		
	सहार	गेध				
तीन फसल	एरवाकटरा	गेधम	भरथना	गेधब	वसरेहर	गेधम
			विधूना	धगेम	भरथना	गेधब
			एरवाकटरा	गेधम	ताखा	गेधम
			सहार	गेधल	विधूना	गेधम
					एरवाकटरा	गेधम
					सहार	गेधल
					भाग्यनगर	गेधब
चार फसल	बढ़पुरा	बगेलच			बढ़पुरा	बगेलच
					चकरनगर	बचलज
					अछल्दा	गेधबम
					औरैया	बगेचल
पाँच फसल	चकरनगर	बचलजगेब	बढ़पुरा	बगेलचबज	जसवन्तनगर	गेबधमटम
		~~चकरनगर~~	~~बचलजगे~~			
	अछल्दा	धबमलगे	अछल्दा	गेधबमल	महेवा	गेबमटलउ/म
	भाग्य नगर	धबलचगे	भाग्यनगर	गेधबलमट	अजीतमल	गेबमटध उ/मि

ETAWAH DISTRICT
CROP COMBINATION REGIONS
BRMPMW
WR
WR
WRM
WR
BWLG
WR
WR
BPLURGW
RBMLW
PRUGBrW
RBLGW
GLBWBr
WBGLRBr
TWO CROP
THRI CROP
FOUR CROP
FIVE CROP
SIX CROP
SEVENCROP
0
20
KM
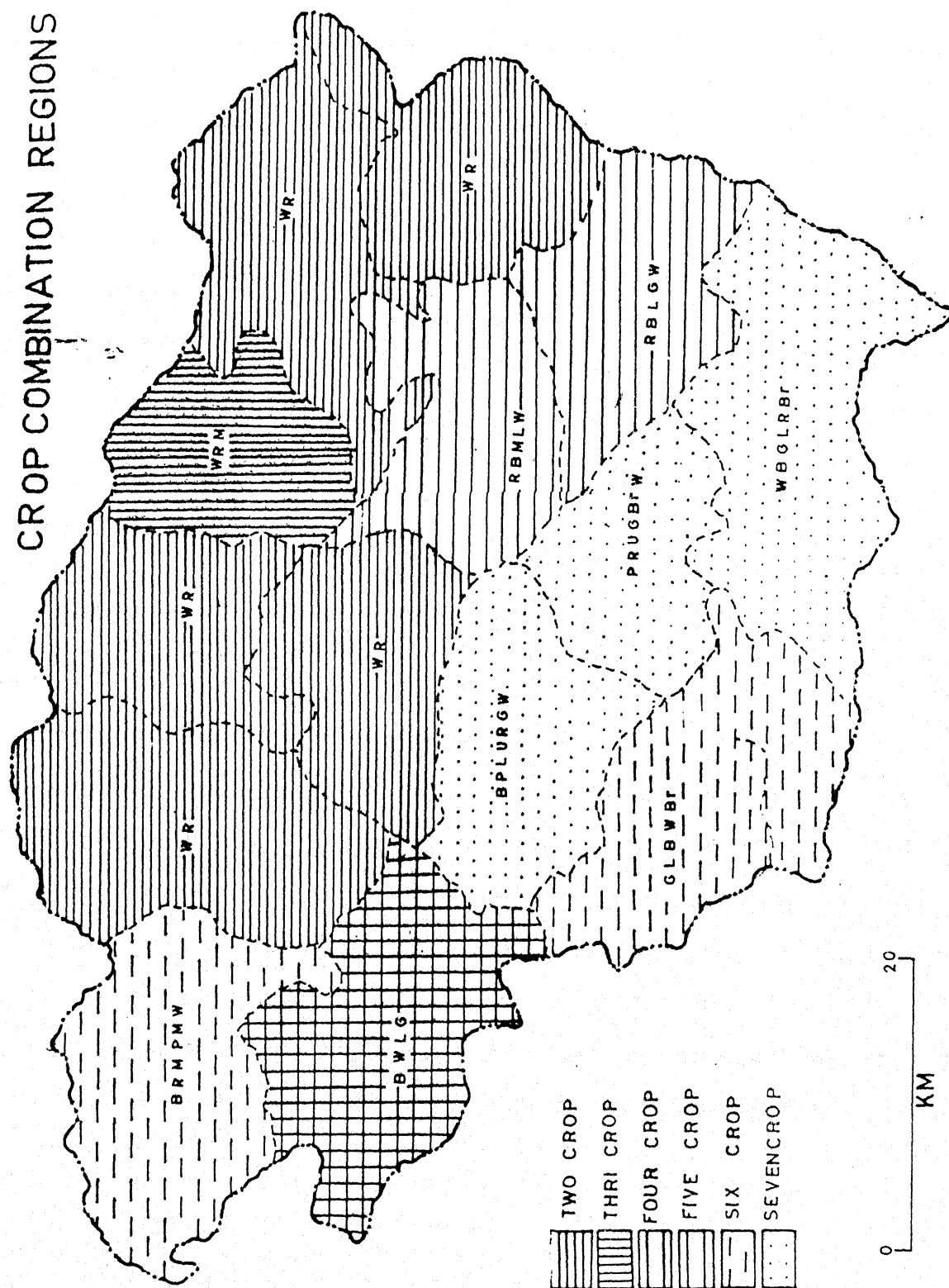
FIG.-16

शस्य संयोजन	दोई		थामस		रफी उल्लाह	
	विकासखण्ड	फसल क्रम	विकास खण्ड	फसल क्रम	विकास खण्ड	फसल क्रम
छः फसल	जसवन्त नगर औरैया	बधमटमलगे गेबचलधज				
सात फसल	महेवा	बमटलउ/मधचगे				
आठ फसल	अजीतमल	मटधउ/मचलबजगे		~~जसवन्तनगर~~	बधमटमलचआगे	
			महेवा	मटलउ/मधबचजगे		
			औरैया	चलधजमटअगेब		
			अजीतमल	मटधउ/मचलबजगे		

गे–गेहूँ, ध–धान, ब–बाजरा, च–चना, ल–लाही, ज–जौ, म–मक्का, मट–मटर. उ/म–उर्द–मूँग, अ–अरहर. आ–आलू

सारिणी क्रमांक 4.12 स्पष्ट कर रही है कि दोई विधि के अनुसार अध्ययन क्षेत्र आठ फसल शस्य संयोजन तक पहुँचता है जिनमें दो फसल संयोजन श्रेणी में सर्वाधिक पाँच विकास खण्ड स्थित है, इसके उपरान्त तीन विकास खण्ड पाँच फसल शस्य संयोजन में स्थित है , दो शस्य सम्मिश्रण श्रेणी में दो विकास खण्ड स्थित है जबकि तीन फसल, चार फसल, सात फसल तथा आठ फसल श्रेणी में एक–एक विकास खण्ड स्थित है । **थामस** विधि से शस्य संयोजन निर्धारण में तीन फसल, पाँच फसल तथा आठ फसल श्रेणी में चार–चार विकास खण्ड स्थित हैं । और दो विकास खण्ड, दो फसल श्रेणी में निर्धारित होते हैं । **प्रो0 रफी उल्लाह** की गणना विधि के आधार पर तीन फसल श्रेणी में सात विकास खण्डों का शस्य संयोजन निर्धारित होता है, चार फसल श्रेणी के अन्तर्गत चार विकास खण्ड स्थित है जबकि तीन विकास खण्ड पाँच फसल श्रेणी में आते हैं । इस प्रकार फसलों की संख्या की दृष्टि से देखा जाय यतो **प्रो0 रफी उल्लाह** की गणना विधि के आधार पर पाँच फसल श्रेणी तक समस्त विकास खण्डों के शस्स संयोजन का निर्धारण हो जाता है , जबकि दोई तथा थामस विधि के अनुसार अध्ययन क्षेत्र में आठ फसल श्रेणी तक शस्य संयोजन प्राप्त होता है ।

अध्ययन क्षेत्र में दोई , थामस तथा रफी उल्लाह की शस्य संयोजन प्रविध्यिों का तुलनात्मक अध्ययन :

दोई, थामस तथा रफी उल्लाह की पद्धतियों की तुलना अध्ययन क्षेत्र के 14 विकास खण्डों को आधार मानकर निम्न बिन्दुओं पर की जा सकती है ।

(1) यथार्थ फसल श्रेणी तथा शस्य संयोजन में फसल श्रेणी :

अध्ययन क्षेत्र के चौदह विकास खण्डों में उक्त तीनों विद्वानों की विधियों से शस्य संयोजन के निर्धारण में केवल रफी उल्लाह की विधि से यथार्थ फसल श्रेणी तथा शस्य संयोजन में फसल श्रेणी एक समान प्राप्त

होती है, अन्य दोनों विद्वानों की विधियों से शस्य संयोजन निर्धारण में यथार्थ फसल श्रेणी से भिन्नता हो जाती है । इस दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र के लिए रफी उल्लाह की विधि अधिक उपयुक्त है । तीनों भूगोलवेत्ताओं की विधयों द्वारा शस्य संयोजन के निर्धारण में यथार्थ फसल श्रेणी तथा शस्य संयोजन में फसल श्रेणी को विकास खण्ड स्तर पर सारिणी क्रमांक 4.13 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 4.13 यथार्थ फसल श्रेणी तथा शस्यय संयोजन में फसल श्रेणी ।

विकास खण्ड	फसलों का यथार्थ	शस्य संयोजन में फसलों का श्रेणी क्रम		
		दोई	थामस	रफी उल्लाह
1.जयवन्तनगर	गेबधमटमलच	बधमटमलगे	बधबमटमलचआगे	गेबधमटम
2.बढ़पुरा	बगेलचजअधग	बगेलच	गेलचबम	बगेलच
3.बसरेहर	गेधमबआचलज	गेध	गेध	गेधम
4.भरथना	गेधबमलजचआ	गेध	गेधब	गेधब
5.ताखा	गेधमबचलजआ	गेध	गेध	गेधम
6.महेवा	गेबमटलउ/मू धचज	बमटलउ/मूधचगे	मटलउ/मधबचजगे	गेबमटलउ/मू
7.चकरनगर	बचलजगेअम	चलजगेब	बचलजगे	बचलज
8.अछल्दा	गेधबमलचमटज	धबमलगे	गेधबमल	गेधबम
9.विधूना	गेधमचलबअआ	गेध	धगेम	गेधम
10.एरवाकटरा	गेधमलचबआज	गेधम	गेधम	गेधम
11.सहार	गेधलमबचअज	गेध	गेधल	गेधल
12.औरैया	बगेचलधजमटअ	गेबचलधज	चलधजमटअगेब	बगेचल
13.अजीतमल	गेबमटधउ/मूचलज	मटधउ/मूचलबजगे	मटधउ/मूचलबजगे	गेबमटधउ/मू
14.भाग्यनगर	गेधबलचजममट	धबलचगे	धबलचगे	गेधव

सारिणी क्रमांक 4.13 यथार्थ फसल श्रेणी तथा शस्य संयोजन में फसल श्रेणी को प्रदर्शित कर रही है। सारिणी में केवल रफी उल्लाह की विधि द्वारा शस्य संयोजन के निर्धारण में शस्य संयोजन में फसलों का क्रम तथा वास्तविक फसल क्रम में समानता प्राप्त होती है जबकि दोई की विधि के आधार पर बढ़पुरा, बसरेहर, भरथना, ताखा, विधूना, एरवाकटरा तथा सहार विकास खण्डों में यथार्थ फसल श्रेणी तथा निर्धारित फसल श्रेणी में समानता है इन विकास खण्डों में पॉच विकास खण्ड वसरेहर, भरथना. ताखा. विधूना तथा सहार दो फसल श्रेणी वाले हैं जबकि एरवाकटरा तीन

फसल श्रेणी वाला है । अन्य विकास खण्डों में यथार्थ तथा निर्धारित फसल श्रेणी में भिन्नता है जैसे जसवन्तनगर विकास खण्ड में गेहूँ यथार्थ में प्रथम स्थान पर है जबकि निर्धारण में अन्तिम स्थान पर । इसी प्रकार महेवा. अछल्दा. अजीतमल तथा भाग्यनगर में भी यथार्थ में गेहूँ प्रथम स्थान पर रहते हुए शस्य निर्धारण में अन्तिम स्थान पर पहुँच जाता है । औरैया विकास खण्ड में गेहूँ यथार्थ में द्वितीय स्थान पर है जबकि शस्यय संयोजन में प्रथम स्थान पर है । इसी प्रकार थामस की विधि के अनुसार भी यथार्थ फसल श्रेणी तथा निर्धारित श्रेणी में विभिन्नता है । इसमें भी बसरेहर, भरथना, ताखा, चकरनगर, अछल्दा एरवाकटरा तथा सहार विकास खण्डों में ही समानता मिलती है । अन्य विकास खण्डों में जसवन्तनगर में यथार्थ में तृतीय फसल को शस्य संयोजन में प्रथम स्थान, बढपुरा में द्वितीय स्थान की फसल को प्रथम स्थान, महेवा में तृतीय स्थान की फसल को प्रथम स्थान विधूना में द्वितीय स्थान की फसल को प्रथम स्थान, औरैया में तृतीय स्थान की फसल को प्रथम स्थान, अजीतमल में तृतीय स्थान की फसल को प्रथम तथा भाग्यनगर विकास खण्ड में द्वितीय स्थान पर स्थित फसल को प्रथम स्थान प्राप्त होता है । इस प्रकार इस विधि में भी विभिन्न विकास खण्डों में यथार्थ तथा निर्धारित शस्य क्रम में भिन्नता मिलती है । **प्रो0 रफी उल्लाह** की विधि इस दृष्टि से सर्वोत्तम है, क्योंकि इस विधि से गणना करने पर यथार्थ फसल श्रेणी तथा शस्यय संयोजन की फसल श्रेणी में कोई विभिन्नता नहीं मिलती है ।

(2) <u>शस्य संयोजन में फसलों की संख्या</u> :

दोई , थामस तथा रफी उल्लाह के आधार पर शस्यय संयोजन के निर्धारण में फसलों की कुल संख्या में विभिन्नता देखने को मिलती है , इसी प्रकार मुख्य शस्य संयोजन तथा अन्तर्वर्ती शस्यय संयोजन की संख्या में भी भिन्नता है । अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड स्तर पर निर्धारित फसलों की कुल संख्या तथा अन्तर्वर्ती संयोजनों की संख्या को सारिणी क्रमांक 4.14 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 4.14 मुख्य संयोजन तथा अन्तर्वर्ती संयोजन की संख्या ।

शस्य संयोजन	दोई			थामस			रफी उल्लाह		
	विकास खण्डों की संख्या	अन्तवर्ती संयोजन की संख्या	फसलों की कुल संख्या	विकास खण्डों की संख्या	अन्तवर्ती संयोजन की संख्या	फसलों की कुल संखा	विकास खण्डों की संख्या	अन्तवर्ती संयाजन की संख्या	फसलों की कुल संखया
दो शस्य संयोजन	5	1	10	2	1	4	–	–	–
तीन शस्य संयोजन	1	1	3	4	4	12	7	3	21
चार शस्य संयोजन	1	1	4	–	–	–	4	4	16
पाँच शस्य संयोजन	3	3	15	4	4	20	3	3	15
छः शस्य संयोजन	2	2	12	–	–	–	–	–	–
सात शस्य संयोजन	1	1	7	–	–	–	–	–	–
आठ शस्य संयोजन	1	1	8	4	4	32	–	–	–
योग	14	10	59	14	13	68	14	10	52

सारिणी 4.14 में फसलों की संख्या रफी उल्लाह महोदय के शस्य संयोजन में है जो कि अध्ययन क्षेत्र के लिए सर्वाधिक औचित्यपूर्ण है । शस्य संयोजन में सर्वाधिक फसलों में है जो कि अध्ययन क्षेत्र के लिए सर्वाधिक औचित्यपूर्ण है । शस्य संयोजन में सर्वाधिक फसलों की संख्या थामस की विधि में है जो कि क्षेत्रीय शस्य संयोजन के लिए प्रतिकूल प्रतीत होती है । सारिणी से यह तथ्य भी स्पष्ट हो रहा है कि दोई के अनुसार विकास खण्डों की सर्वाधिक 5 दो शस्य संयोजनों में प्राप्त होता है, इसके उपरान्त 3 विकास खण्ड पाँच शस्य संयोजन में स्थित है । छः शस्य संयोजन में 2 विकास खण्ड तथा शेष संयोजनों में एक-एक विकास खण्ड स्थितत है । इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र में दोई विधि के अनुसार शस्य संयोजन दो शस्य सम्मिश्रण से आठ शस्य सम्मिश्रण तक विस्तार लिए हुए है । थामस महोदय की विधि में भी शस्य संयोजन से लेकर आठ शस्य संयोजन तक विस्तृत है, यद्यपि इस विधि में चार, छः तथा सात शस्य संयोजन में एक भी विकास खण्ड स्थित नहीं है । तीन, पाँच तथा आठ शस्य संयोजन में चार-चार विकास खण्ड स्थित है , शेष दो विकास खण्ड दो शस्य संयोजन में दृश्य यहो रहे हैं । रफी उल्लाह की विधि में सर्वाधिक विकास खण्डों की कुल संख्या 7 तीन

शस्य संयोजन में स्थित है । चार शस्य संयोजन में 4 विकास खण्ड आते हैं शेष तीन विकास खण्ड पॉच शस्य संयोजन दर्शा रहे हैं इस प्रकार प्रो0 रफी उल्लाह के शस्यय संयोजन में तीन फसल से पॉच फसल संयोजन तक विस्तार है जो अध्ययन क्षेत्र के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है । अन्तवर्ती शस्य संयोजन में प्रो0 रफी उल्लाह तथा दोई विधियों की संख्या एक समान 10 है जबकि थामस की विधि में अन्तवर्ती संयोजनों की संख्या 13 है । इस प्रकार न्यूनतम अन्तवर्ती शस्य संयोजन संख्या की दृष्टि से देखे तो दोई तथा रफी उल्लाह दोनों की ही विधियां उपयोगी तथा औचित्यपूर्ण हैं ।

यहाँ अध्ययन क्षेत्र इटावा में विकास खण्ड स्तर पर शस्य संयोजन मण्डलों के निर्धारण हेतु 1990–91 फसल वर्ष के आधार पर भूमि उपयोग सम्बन्धी आकड़ों का प्रयोग किया गया है । विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल को सकल कृषित भूमि के आधार पर प्रतिशत में परिवर्तित करके उन्हें अवरोही क्रम में व्यवस्थित कर प्रो0 रफी उल्लाह विधि के आधार पर फसलों को श्रेणी बद्ध प्रथम द्वितीय तथा तृतीय आदि क्रम में करके शस्य संयोजन का निर्धारण किया गया है । प्रथम स्तर के प्रदेशों के अन्तर्गत जनपद में गेहूँ , धान, बाजरा तथा मक्का फसलों की प्रधानता पाई जाती है, इनमें से ग्यारह विकास खण्डों में गेहूँ प्रथम स्थान पर है जबकि तीन विकास खण्डों बढ़पुरा, औरैया तथा चकरनगर विकास खण्डों में बाजरा प्रथम स्थान पर है, जिसका कारण यह है कि बढ़पुरा तथा चकरनगर विकास खण्ड में यमुना तथा चम्बल नदियों के कारण भूमि का ऊँचा नीचा होना, सिंचाई की पर्याप्त सुविधा न होने के कारण यह क्षेत्र बाजरा प्रधान है , औरैया विकास खण्उ का भी अधिकांश क्षेत्र यमुना नदी तथा सेंगर नदी के किनारे स्थित होने के कारण बाजरा प्रधान क्षेत्र बन गया है । इन तीनों ही विकास खण्डों में धान की फसल नगण्य है । बाजरा के बाद इन विकास खण्डों में केवल चकरनगर को छोड़कर गेहूँ की फसल दूसरे स्थान पर है, इन विकास खण्डों में चना तथा लाही/सरसों की भी मान्यता प्राप्त है । अतः प्रथम स्तर के प्रदेशों में गेहूँ –धान की फसलों की प्रधानता पाई जाती है ।

द्वितीय स्तर के प्रदेशों में बाजरा, गेहूँ का कृषि की प्रधानता दृष्टिगोचर होती है वास्तव में जनपद के उन विकास खण्डों में जहाँ गेहूँ को प्रथम स्थान प्राप्त है वहाँ धान द्वितीय स्थान पर है, जिन विकास खण्डों में धान द्वितीय स्थान नहीं प्राप्त कर पा-रही है वहाँ बाजरा द्वितीय स्थान पर है और जहाँ गेहूँ प्रथम स्थान नहीं प्राप्त कर पा रहा है वहाँ बाजरा प्रथम स्थान पर है । प्रथम स्तरीय प्रदेशों की भाँति जनपद के दक्षिणी पश्चिमी तथा दक्षिणी पूर्वी भाग में यमुना नदी के किनारे कछारी क्षेत्र में बाजरा अरहर गेहूँ , लाही, चना तथा मक्का आदि फसलों की प्रधानता है । अतः तीसरी प्रमुख फम्ल के रूपमें बाजरा की फसल अध्ययन क्षेत्र में एक महत्वपूण फसल है ।

चौथी मुख्य फसल के रूप में मक्का का स्थान आता है जो कुछ विकास खण्डों को छोड़कर सभी में उगाई जाती है , मक्का के साथ साथ चना, मटर . लाही तथा उर्द/मूँग को भी अध्ययन क्षेत्र मान्यता प्राप्त है, ये फसलें भी एक विस्तृत क्षेत्र में उगाई जाती है ।

(ब) सस्य विभेदीकरण :

किसी भी क्षेत्र की कृषि स्थिति के पूर्ण अर्थग्रहण के लिए यह आवश्यक होता है कि उस क्षेत्र के शस्य विभेदीकरण का ज्ञान प्राप्त किया जाये । कृषि के इस स्वभाव की जानकारी प्राप्त करने के लिए अनेकों कृषि भूगोलवेत्ताओं ने प्रयास किए हैं । शस्य विभेदीकरण इस तथ्यय का ज्ञान कराता है कि किसी क्षेत्र विशेष में कितनी फसलों की प्रधानता है । यदि किसी क्षेत्र विशेष में अधिक फसलें उगाई जाती हैं और उनका क्षेत्रफलीय वितरण भी लगभग समान है तो उस क्षेत्र विशेष में फसलों का विभेदीकरण अधिक होगा इसके विपरीत जिन क्षेत्रों में फसलों की संख्या कम होगी वहाँ पर विभेदीकरण भी कम होगा ।उदाहरण के लिए यदि किसी क्षेत्र में 10 फसलें उगाई जाती है तो यह माना जाता है कि उन सभी फसलों में लगभग 10 प्रतिशत क्षेत्र प्रत्येक फसल में आच्छादित होगा, इस स्थिति में शस्य विभेदीकरण उच्च श्रेणी का होगा । यदि किसी क्षेत्र में कोई फसल शत प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है । तो वहाँ पर विभेदीकरण सौ होगा और वह क्षेत्र उस फसल के लिए विशिष्ट होगा । अतः यह कहा जा सकता हे कि शस्य विभेदीकरण सूचकांक तथा शस्य विभेदीकरण की श्रेणी में विपरीत सम्बन्ध होता है , अर्थात यदि शस्य विभेदीकरण सूचकांक निम्न होगा तो शस्य विभेदीकरण उच्च होगा, इसके विपरीत सूचकांक यदि उच्च होगा तो विभेदीकरण की रेणी निम्न होगी । **भाटिया एस0 एस0** ने शस्य विभेदीकरण को ज्ञात करने के लिए एक सरल विधि प्रस्तुत की है –

$$\text{शस्य विभेदीकरण सूचकांक} = \frac{\text{एक्स फसलों के अन्तर्गत बोये जाने वाले क्षेत्रफल का प्रतिशत}}{\text{एक्स फसलों की संख्या}}$$

भाटिया ने एक्स फसलों में केवल उन्हीं फसलों को अपनी गणना में सम्मिलत किया जिन फसलों के अर्न्तगत 10 प्रतिशत या इससे अधिक क्षेत्रफल संलग्न है ।

सिंह जसवीर (1976) ने हरियाणा राज्य के शस्य विभेदीकरण को ज्ञात करने के लिए भाटिया की गणना विधि में न्यून परिवर्तन करके गणना की है, सिंह द्वारा प्रस्तुत सूत्र इस प्रकार है –

$$\text{शस्य विभेदीकरण सूचकांक} = \frac{\text{एन फसलों के अन्तर्गत कुल काटे जाने वाले क्षेत्रफल का प्रतिशत}}{\text{एन फसलों की संख्या}}$$

जहाँ एन फसलों के अन्तर्गत 5 प्रतिशत या इससे अधिक क्षेत्रफल वाली फसलों को गणना में सम्मिलित किया गया है । **गिब्स –मार्टिन** (1962) ने शस्य विभेदीकरण के विस्तार को ज्ञात करने के लिए एक विधि प्रस्तुत की जो इस प्रकार है –

ETAWAH DISTRICT
CROP DIVERSIFICTION
20 AND ABOVE
15 - 20
BELOW-15
0
20
KM
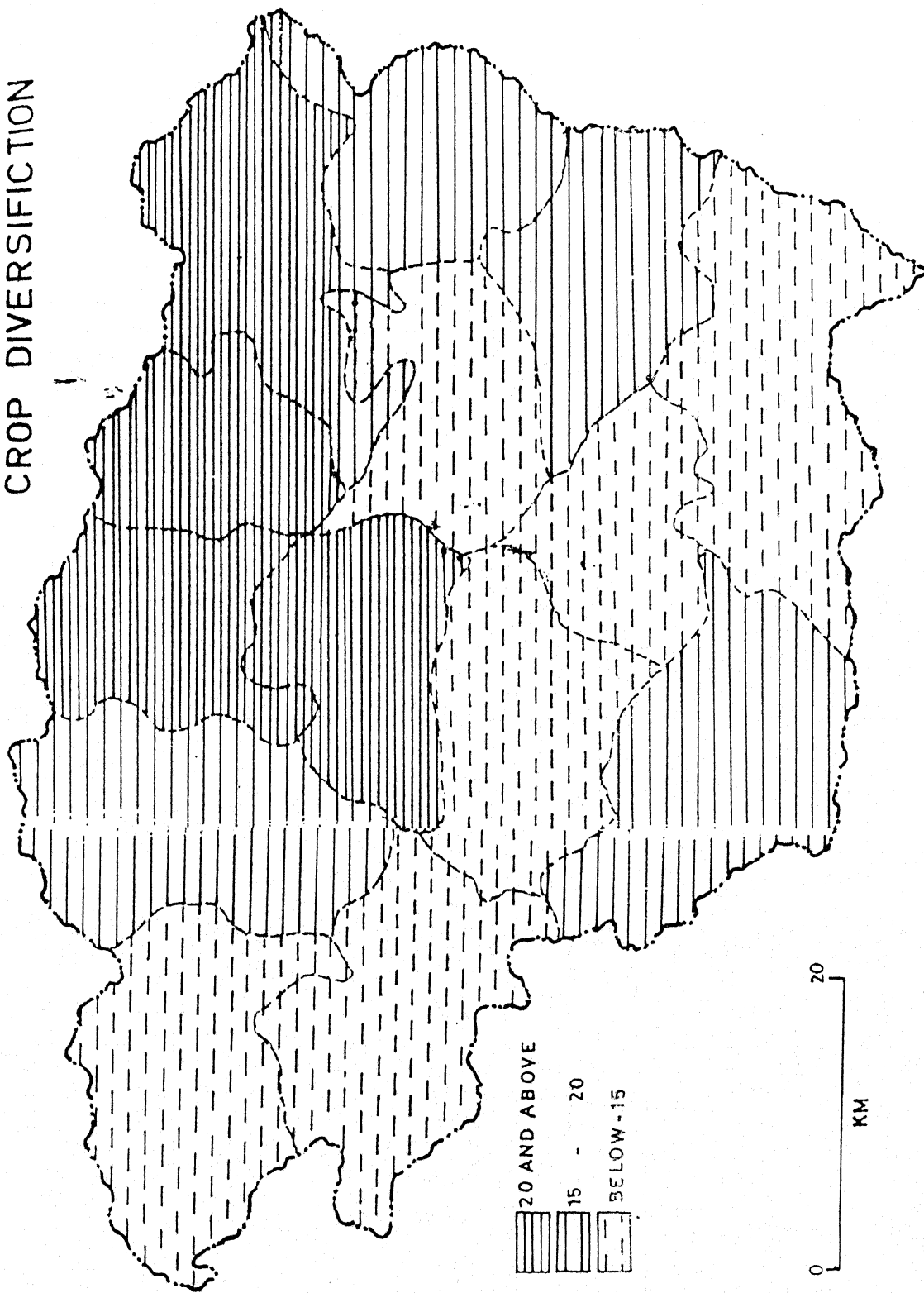
FIG.-17

$$\text{विभेदीकरण सूचकांक} = 1 - \frac{\Sigma X^2}{(\Sigma X)^2}$$

जहाँ X = प्रत्येक फसल का सकल कृषि क्षेत्र से प्रतिशत क्षेत्रफल ।

Σ = योग

गिन्स तथा मार्टिन की विधि के अनुसार गणना करने पर विभेदीकरण सूचकांक 0 से 0.99 के मध्य आता है तथा इस मूल्य और शस्य विभेदीकरण में सीधा सम्बन्ध होता है । अर्थात यदि विभदीकरण सूचकांक 1 के समीप होता है तो शस्य विभेदीकरण का विस्तार उच्च होता है इसके विपरीत यदि सूचकांक 0 के समीप होता है तो विभेदीकरण का विस्तार भी निम्न स्तरीय होगा ।

अध्ययन क्षेत्र में शस्य विभेदीकरण के विस्तार को जानने के लिए शोध कर्ता द्वारा **भाटिया** की विधि के आधार पर गणना करके शस्य विभेदीकरण सूचकांक प्राप्त किया गया है जिसे सारिणी क्रमांक 4.15 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 4.15 अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड स्तर पर शस्य विभेदीकरण सूचकांक ।

विकास खण्ड	शस्य विभेदीकरण सूचकांक
जसवन्त नगर	12.36
बढ़पुरा	13.91
वसरेहर	19.62
भरथना	23.84
ताखा	26.78
महेवा	11.14
चकरनगर	16.37
अछल्दा	13.69
विधूना	25.65
एरवाकटरा	20.29
सहार	16.19
औरैया	11.10
अजीतमल	11.65
भाग्यनगर	15.21

सारिणी 4.15 में यह तथ्य स्पष्ट हो रहा है कि शस्य विभेदीकरण सूचकांक 11.10 से लेकर 26.78 के मध्य विस्तृत है, विभिन्न विकास खण्डों में विभिन्न फसलों के अन्तर्गत 5 प्रतिशत या इससे अधिक क्षेत्रफल के आधार पर गणना की गई है, परिणामस्वरूप कुछ विकास खण्डों में न्यून शस्य विभेदीकरण है और कुछ विकास खण्डों में उच्च शस्य विभेदीकरण दिखाई पड़ रहा है ।

सारिणी क्रमांक 4.16 विकास खण्ड स्तर पर विभेदीकरण ।

शस्य विभेदीकरण सूचकांक	शस्य विभेदीकरण की श्रेणी	विकास खण्डों के नाम	विकास खण्डों की संख्या
15 से कम	अति उच्च	औरैया, महेवा, अजीतमल, जसवन्तनगर, बढ़पुरा, अछल्दा	6
15 से 20	उच्च	भाग्यनगर, सहार, चकरनगर, वसरेहर	4
20 से 30	मध्यम	एरवाकटरा, भरथना	2
25 से अधिक	निम्न	विधूना, ताखा	2

सारिणी क्रमांक 4.16 में शस्य विभेदीकरण की श्रेणी प्रस्तुत की गई है । सारिणी पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि अति उच्च शस्य विभेदीकरण के अन्तर्गत कुल 6 विकास खण्ड स्थिति है । इन विकास खण्डों में किसी भी फसल का व्यक्तिगत क्षेत्र 30 प्रतिशत से अधिक नहीं है केवल अछल्दा विकास खण्उ को छोड़कर जिसमें गेहूँ लगभग 35 प्रतिशत क्षेत्र में उगाया जाता है, यही कारण है कि इन विकास खण्डों में अनेक फसलें उगाई जाती है जिससे किसी एक या दो फसलों की प्रधानता नहीं हो पाती है और यही कारण है ये विकास खण्उ अति उच्च विभेदीकरण की श्रेणी में आते हैं । उच्च विभेदीकरण की श्रेणी में भाग्यनगर, सहार, चकरनगर तथा वसरेहर कुल 4 विकास खण्उ आते हैं । इन विकास खण्डों में सहार तथा वसरेहर में गेहूँ तथा धान फसलों की प्रधानता है जो लगभग 65 प्रतिशत क्षेत्र मे उगाई जाती है, चकरनगर में बाजरा तथा चना लगभग 50 प्रतिशत क्षेत्र में उगाया जाता है तथा भाग्यनगर ने धान, गेहूँ तथा बाजरा लगभग 60 प्रतिशत क्षेत्र में उगाया जाता है । मध्यम शस्य विभेदीकरण सूचकांक सीमा 20 से 25 के मध्य दो विकास खण्ड एरवाकटरा तथा भरथना स्थित है , ये दोनों विकास खण्ड एक दूसरे की सीमाओं को छू रहे हैं । भरथना में

तीन फसलों गेहूँ, धान तथा बाजरा फसलें 70 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल घेरे हुए है जबकि एरवाकटरा में गेहूँ , धान तथा मक्का फसलें 75 प्रतिशत से अध्कि क्षेत्रफल घेरे हुए है इसी कारण से ये विकास खण्ड मध्यम शस्य विभेदीकरण की श्रेणी में आते हैं । निम्न शस्यय विभेदीकरण की रेणी में विधूना तथा ताखा विकास खण्ड स्थित है जिनमें तीन–तीन फसलों की प्रधानता है । ताखा विकास खण्ड में धान, गेहूँ तथा मक्का के अन्तर्गत 80 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र फसल आच्छादित है, जबकि यही संयोजन विधूना विकास खण्ड का है जिसमें 78 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल आच्छादित है । यह तथ्यय भी स्पष्ट हो रहा है कि जिन विकास खण्डों में धान और गेहूँ की प्रधानता है वहाँ पर फसलों की संख्या कम है क्यों कि धान के बाद गेहूँ का फसल चक्र कृषकों के लिए सरल पड़ता है । जिन विकास खण्डों में धान तथा गेहूँ की प्रधानता नहीं है वहाँ पर फसलों की संख्या भी अधिक है जिसके कारण शस्य विभेदीकरण भी उच्च है । इस दृष्टि से यदि देखा जाये तो अध्ययन क्षेत्र अति उच्च से निम्न स्तर तक विस्तार लिए हुए है ।

****

==

1. झा0 डी0 (1963) इकोनोमिक्स ऑफ क्राप पैटर्न ऑफ इरीगेटिड फार्म इन नार्थ बिहार–इण्डियन जनरल ऑफ एग्रीकल्चर इकोनोमिक्स , वाल्यूम 18 नं0 1 पी0 168

2. रामा लिंगन सी0 (1963) क्राप पैटर्न एण्ड साइज ऑफ कल्टीवैटेड होल्डिंग्स–इण्डियन जनरल ऑफ एग्री0 इको0 वाल्यूम 18 नं0 1 पी0 160

3. मजीद अब्दुल(1963)– क्राप पैटर्न एण्ड साइज ऑफ कल्टीवैटेड होल्डिंग्स इण्डियन जनरल ऑफ एग्री0 इको0 वाल्यूम 18 नं0 1 पी0पी0 97–100

4. जोग्लेकर एन0एम0(1963)–स्टडी ऑफ क्राप पैटर्न ऑन एन अरवन फ्रिज इण्डियन जनरल आूफ एग्री0 इको0 वाल्यूम 18 पी0पी0 84–90

5. मण्डल जी0सी0 एण्ड घोष के0 (1963)– सम आसपेक्ट ऑफ दि इकोनोमिक्स ऑफ क्रापिंग पैटर्न इण्डियन जनरल ऑफ एग्री0 इको0 वाल्यूम 18 नं0 1 पी0पी0 74–83

6. सिंह ब्रजभूषण तथा सिंह गोविन्द (1974) शस्य सम्मिश्रण विधि अध्ययन में एक पुनर्विलोकन मुनर्नोकन, उ0भा0भू0पत्रिका गोरखपुर अंक 7 सं02 पी0 85–101

7. राज किशन (1963)–रिपोर्टियर्स रिपार्ट आन इकोनोमिक्स ऑफ दि क्रापिंग पैटर्न–इण्डियन जनरल ऑफ एग्री0 इको0 वाल्यूम 18 नं0 1 पी0 170–78

8. माथुर पी0एन0 (1963)– क्रापिंग पैटर्न एण्ड इम्प्लाइमेंट इन विदर्भ इण्डियन जनरल ऑफ एग्री0 इको0 वाल्यूम 18 नं0 1 पी0 39

9. माल्या एम0 (1963) –अरबनाइजेशन एण्ड क्रापिंग पैटर्न – इण्डियन जनरल ऑफ एग्री0 इको0 वाल्यूम 18 पी0 90–96

10– हुसेन मजीद (1960) –पैटर्न ऑफ क्राप कन्सेन्ट्रेशन इन उत्तर प्रदेश, ज्योग्रेफिकल रिब्यू ऑफ इण्डिया वाल्यूम 32 नं0 3 पी0 169–185

11. रामा सुब्बन टी0ए0 (1963)– सम स्टेटिस्टिकल मीजर्स टु डिटरमाइन चेन्जेज इन क्रापिंग पैटर्न–एग्रीकल्चर सिचुएशन इन इण्डिया वाल्यूम 17 मार्च अप्रैल 1962–63.

12–राव टी0 रामाक्रिश्ना (1965) ए नोट आन मेजरमेन्ट ऑफ शिफ्टस इन क्रापिंग पैटर्न विद् रिफरेन्स टु डिस्ट्रिक्ट मद्रास स्टेट ।
एग्रीकल्चर सिचुएश्नं इन इण्डिया वाल्यूम 20 नं0 1 अप्रैल पी0 11

13–कटारिया एम0एस0 (1969) –स्पेशल चेन्जेस इन सुगरकेन कल्टीवेशन इन करनाल डिस्ट्रिक्ट– नेशनल ज्योग्रेफिकल जरनल ऑफ इण्डिया –वाल्यूम 15 पार्टस 38–4 सितम्बर–दिसम्बर पीपी0 224–234

14.सैनी जी0आर0 (1963) सम आसपेक्ट ऑफ चेन्जेस इन क्रापिंग पैटर्न इन वेस्टर्न यू0पी0. एग्रीसिचुएशन इन इण्डिया वाल्यूम 18 पी0पी0 411=416.

15- कौर सतवन्त (1969)-चेन्जेस इन नेट शोन एरिया इन अमृतसर तहसील, नेशनल ज्यों0 जनरल ऑफ इण्डिया वाल्यूम 15 नं0 1 पी0पी0 24-27

16- सिंह बी0बी0 (1973) -क्रापिंग पैटर्न ऑफ बड़ौत ब्लाक-ज्यो0आब्जर्वर वाल्यूम 9, पी0पी0 51-60

17.राज कृष्णा (1963) दि आप्टीमैलिटी ऑफ लैंण्ड एलोकेशन -ए केश,स्टडी आफ पंजाब -इण्डियन जनरल ऑफ एग्री0 इको0 वाल्यूम 18 नं0 1 पी0पी0 63-73

18. वीवर जे0सी0 (1954)-क्राप कम्वीनेशन रीजन इन दि मिडिल वेस्ट, ज्योग्रेफिकल रिव्यू वाल्यूम 44 पीपी0 1-13

19.थामस डी (1963) क्राप कम्वीनेशन इन वेल्स -ज्योग्रेफीकल रिव्यू वाल्यूम 44 पी0पी0 60-67

20. बनर्जी बी0 (1964) चेन्जिंग क्राप लैण्ड इन वेस्ट बंगाल ज्योग्रेफिकल रिव्यू ऑफ इण्डिया 24 (1)

21. सिंह हरपाल (1965) क्राप कम्वीनेशन रीजन इन मालवा ट्रेक्ट ऑफ पँजाब डंकन ज्योग्रेफर वाल्यूम 8 पी0 21-30

22.दयाल ई0 क्राप कम्वीनेशन रीजन -ए-स्टडी ऑफ पँजाब प्लेन्स वीदर लैंण्ड जरनल ऑफ इको0 एण्ड सोसल ज्योग्रे0 38-59

23.राय बी0के0 (1967) क्राप एशोसिएशन एण्ड चेन्जिग पैटर्न ऑफ क्राप इन दि गंगा घाघरा दोआब एन0जी0जे0आई0 13 (4) 194-207

24. अहमद ए0एण्ड सिद्दीकी एम0एफ0 (1967) क्राप एसोसिएशन पैटर्न इन दि लूनी वेसिन-दि ज्योग्रेफर वाल्यूम 14 पी0 68

****

पंचम अध्याय

==

कृषि उत्पादकता एवं जनसंख्या सन्तुलन :

प्राकृतिक संसाधन किसी देश की अमूल्य निधि होते हैं परन्तु उन्हें गतिशील बनाने , जीवन देने और उपयोगी बनाने का दायित्व देश की मानक शक्ति पर ही होता है । इस दृष्टि से देश की जनसंख्या उसके आर्थिक विकास एवं समृद्धि का आधार स्तम्भ होती है । जनसंख्या को मानवीय पूँजी कहना कदाचित अनुचित न होगा । विकसित देशों की वर्तमान प्रगति, समृद्धि व सम्पन्नता की पृष्ठ भूमि में वहाँ की मानव शक्ति ही है । जिसने प्राकृतिक संसाधनों पर नियंत्रण और शासन द्वारा उन्हें अपनी समृद्धि का अंग बना लिया है, परन्तु हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि जनसंख्या देश की मानवीय पूँजी की श्रेणी में तभी आ सकती है जबकि वह शिक्षित हो कुशल हो, दूरदर्शी हो और उसकी उत्पादकता उच्च कोटि की हो । कदाचित ऐसा नहीं हुआ तो मानवीय संसाधन के रूप में वह वरदान के स्थान पर एक अभिशाप में परिणत हो जायेगी क्योंकि उत्पादन कार्यो में उसका विनियोग सम्भव नहीं हो सकेगा ।स्पष्ट है कि मानवीय शक्ति किसी देश के निवासियों की संख्या पर नहीं वरन गुणों पर निर्भर करती है ।

किसी देश की जनशक्ति ही उसकी वास्तविक शक्ति होती है जो देश के निर्जीव एवं निश्चेष्ट प्राकृतिक संसाधनों में नवजीवन एवं चेतना का संचार करती है, परन्तु जनसंख्या देश के लिए अभिशाप भी बन सकती है यदि वह सीमा का उल्लघँन कर जाये अथवा उसमें मानवीय गुणों का अभाव हो जाय । भारत ऐसे विकासशील देश के लिए जनसंख्या में तीब्र गति से बृद्धि निर्धनता का ही आमँत्रण है । एक ओर तो हम आर्थिक नियोजन से अपने आर्थिक संसाधनों में अभिबृद्धि करते हैं , दूसरी ओर जनसंख्या में बृद्धि उस आर्थिक संरचना को धराशायी कर देती है । माल्थंस के अनुसार जनसंख्या का आकार देश में खाद्यान्न की मात्रा पर निर्भर करता है अर्थात यदि खाद्यान्न उत्पादन इतना पर्याप्त नहीं है कि देश की सम्पूर्ण जनसंख्या का भरण पोषण करने में समर्थ हो तो ऐसी दशा में जनसंख्या एक समस्या वन जाती है । स्पष्ट है कि मानवीय संसाधन आर्थिक विकास के साधन एवं लक्ष्य है । साधन के रूप में मानवीय संसाधन श्रम शक्ति एवं उद्यमियों को सेवाएं प्रदान करते हैं जिनकी सहायता से उत्पत्ति के अन्य साधनों का प्रयोग सम्भव हो पाता है । मानवीय संसाधनों की इस भूमिका पर देश में कुल उत्पादन का स्तर निर्भर करता है , इसके दूसरी ओर अर्थव्यवस्था में जितनी भी विकासात्मक क्रियाएं सम्पन्न की जाती है उनका उद्देश्य मानव समुदाय को जीवन की अच्छी सुविधाएं प्रदान करना होता है । उपभोग की ईकाई के रूप में मानवीय संसाधन देश के कुल उत्पादन का उपभोग करते हैं । इस प्रकार मानवीय संसाधन की दोहरी भूमिका होती है (क) साधन सेवाओं के रूप में (ख) उपभोग की ईकाईयों के रूप में ।

साधन सेवाओं के रूप में मानवीय संसाधन श्रम तथा उद्यमी को सेवाएं प्रदान करते हैं । किस सीमा तक मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन करता है इस पर आर्थिक विकास का स्तर निर्भर करता है । यदि मानवीय संसाधन उच्च कोटि के हैं तो आर्थिक विकास की गति तेज हो जाती है । अतः आर्थिक विकास की दर के निर्धारण में मानवीय संसाधनों की गुणात्मक श्रेष्ठता का महत्वपूर्ण स्थान होता है । इस बात की आवश्यकता है कि मानवीय पूँजी के निर्माण हेतु निवेश की विभिन्न परियोजनाएं भौतिक पूँजी निर्माण और मानवीय पूँजी निर्माण सम्मिलित रूप से आर्थिक विकास की गति को तीव्रता प्रदान करती है । उपभोग की ईकाई के रूप में मानवीय संसाधन राष्ट्रीय उत्पाद - के लिए माँग का निर्माण करते हैं । यदि मनुष्यों की संख्या राष्ट्रीय उत्पादन की तुलना में अधिक है तो जनसंख्या सम्बन्धी अनेक समस्याएं उठ खड़ी होती है । जैसे बढ़ती जनसंख्या के कारण देश में खाद्यान्नों की माँग बढ़ जाती है इससे खाद्यान्नों की स्वल्पता की समस्या उत्पन्न हो जाती है, इसके अतिरिक्त बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण राष्ट्रीय उत्पादन के एक बड़े भाग का उपयोग , उपभोग कार्यों के लिए कर लिया जाता है । और निवेश कार्यों के लिए बहुत कम उत्पादन उपलब्ध हो पाता है इससे पूँजी निर्माण की गति धीमी पड़ जाती है । साथ ही बढ़ती जनसंख्या बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न करती है । जिसके आर्थिक एवं सामाजिक परिणाम बहुत दुष्कर होते हैं । सर्वाधिक महत्व एवं चिन्ता की बात यह है कि हमारे देश की जनसंख्या निरन्तर तेज गति से बढ़ रही है , जनसंख्या में तीव्र बृद्धि के कारण जीवन को गुणात्मक श्रेष्ठता और उन्नत बनाने के सभी प्रयास असफल सिद्ध हुए हैं भारत जैसे विकासशील देश में जहाँ पूँजी का अभाव है और मानवीय संसाधन की बहुलता है, वहाँ जनसंख्या परि सम्पत्ति की बजाय दायित्व बन गई है ।

आर्थिक विकास का ऐतिहासिक अनुभव और आर्थिक विकास की सैद्धान्तिक व्याख्या यह स्पष्ट करती है कि आर्थिक विकास की प्रारम्भिक अवस्था में प्रत्येक अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है । विकसित अर्थ व्यवस्थाओं के विकास अनुभव भी इस तथ्य की पुष्टि करते हैं । विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के राष्ट्रीय उत्पाद, रोजगार और निर्यात की संरचना में कृषि क्षेत्र का योगदान उद्योग और सेवा क्षेत्र की तुलना में अधिक होता है । ऐसी स्थिति में कृषि का पिछड़ापन सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को पिछड़े पन में बनाए रखता है । ग्रामीण अर्थव्यवस्था के कमजोर वर्ग के लोग जिसमें लघु एवं अति लघु कृषक और खेतिहर मजदूर सम्मिलित है और जिनकी संख्या अपेक्षाकृत अधिक होती है । अधिकाँशतः गरीबी के दुश्चक्र में फँसे रहते हैं । इनकी गरीबी अर्थव्यवस्था के पिछड़ेपन का मुख्य कारण होती है ।

आज के विभिन्न विकसित देशों का आर्थिक इतिहास यह स्पष्ट करता है कि कृषि विकास ने ही उनके औद्योगिक क्षेत्र के विकास का मार्ग प्रसस्त किया है । कृषि क्षेत्र ने ही उनके परिवहन और गैर कृषि आर्थिक क्रियाओं के लिए भूमिका प्रदान किया है । आज के विकसित पूँजीवाद और समाजवादी अर्थव्यवस्थाओं के विकास के आरम्भिक चरण में कृषि क्षेत्र ने वहां के गैर कृषि क्षेत्र के विकास हेतु श्रम शक्ति, कच्चा पदार्थ भोज्य सामग्री और पूँजी की आपूर्ति की । यू0एस0एस0आर0 ने 1927 में सामूहिक कृषि प्रणाली अपनाकर बड़े पैमाने पर यंत्रीकृत कृषि प्रणाली अपनाकर कृषि विकास किया । सामूहिक कृषि फार्मो पर भारी करारोपण एवं औद्योगिक उत्पादों की कीमतें बढ़ाकर कृषि अतिरेक को गैर कृषि क्षेत्र के विकास हेतु प्रयुक्त किया गया ।खाद्यान्न एवं व्यापारिक फसलों का उत्पादन तेजी से बढ़ा और कृषि श्रमिकों की उत्पादकता में 1926 से 1938 की अवधि में 25 से 30 प्रतिशत तक की बृद्धि हुई । कृषि श्रमिकों और कृषि क्षेत्रों की उत्पादकता बढ़ने के कारण श्रमिक गैर कृषि कार्यो के लिए उपलब्ध हो गये । इन माध्यमों से रूस ने कृषि क्षेत्र का आर्थिक विकास में उपयोग किया । जापान ने भी आर्थिक विकास की प्राथमिक अवस्था में कृषि अतिरेक का गैर कृषि कार्यो में प्रयोग किया । विकसित एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के उपरोक्त अनुभव यह स्पष्ट करते हैं कि किसी अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास की पूर्वापेक्षा कृषि क्षेत्र का विकास है । कृषि क्षेत्र का विकास कृषि एवं सम्बद्ध कियाओं में लगे लोगों की आर्थिक स्थिति में तो सुधार करता ही है । साथ साथ यह गैर कृषि क्षेत्र के लिए खाद्यान्न, कच्चा पदार्थ, बाजार और श्रमशक्ति की आपूर्ति करता है ।

अर्ध- विकसित अर्थव्यवस्थाओं में खाद्यान्न उत्पादन में तीब्र बृद्धि आवश्यक है क्योंकि इन अर्थव्यवस्थाओं में जनसंख्या बृद्धि दर अत्यन्त ऊँची 1.5 से 3.0 प्रतिशत तक होती है , दूसरी ओर व्यापक जन समूह का उपभोग स्तर अत्यन्त नीचा होता है । जनसंख्या बृद्धि, नगरीकरण और आय बृद्धि के कारण कृषि उत्पादन की माँग बढ़ती है । जन संख्या और आय बृद्धि दर तथा खाद्यान्न की आय माँग की लोच ध्यान में रखकर खाद्यान्न की माँग में वार्षिक बृद्धि निम्नलिखित प्रकार से स्पष्ट की जा सकती है ।

$$D = P + ng$$

यहाँ,

D = खाद्यान्न की माँग की वार्षिक बृद्धि

P = जनसंख्या बृद्धि दर

g = प्रति व्यक्ति आय बृद्धि दर

n = खाद्यान्न हेतु आय माँग की लोच

इस आधार पर यदि जनसंख्या की वार्षिक बृद्धि दर 2.5 प्रतिशत, प्रति व्यक्ति वार्षिक आय बृद्धि दर 2 प्रतिशत और खाद्यान्नों के लिए आय माँग की लोच 0.8 प्रतिशत हो तो कृषि उत्पादनमें (2.5 + 2 × 0.8) = 4 प्रतिशतम से कुछ अधिक बृद्धि की आवश्यकता होगी ताकि कृषि उतपादन की कीमतों को स्थिर रखा जा सके ।यह अनुमान है कि विश्व की लगभग दो तिहाई जनसंख्या अल्पपोषित है, इनके आहार स्तर में सुधार के लिए कृषि उत्पादन बृद्धि की आवश्यकता है । विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सुविधाओं में प्रसार और पोषक तत्वों में बृद्धि होने के कारण मृत्यु दर घटी है परन्तु जन्मदर में तद्नुसार कमी होने के कारण जनसंख्या में तीव्र बृद्धि हो रही है । विकसित देशों की खाद्यान्न की आय माँग की लोच 0.3 या इससे कम होती है जबकि विकासशील अर्थव्यवस्थाओं के लिए यह 0.6 या इससे अधिक है । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि इन अर्थव्यवस्थाओं में लोग अपने कुल उपभोग व्यय का 50 से 60 प्रतिशत तक भाग खाद्यान्नों पर व्यय करते हैं और 60 से 85 प्रतिशत तक ऊष्मांक (ऊर्जा) खाद्यान्नों से प्राप्त करते हैं । औद्योगिक तथा व्यापारिक प्रतिष्ठानों के श्रमिक अपने भोज्य पदार्थो के लिए पूर्णतः कृषि क्षेत्र पर निर्भर रहते हैं । एशिया और सुदूर पूर्व के देशों में अल्पपोषण तथा कुपोषण की स्थिति है । इनके उपभोग स्तर को उन्नत करने की आवश्यकता है ।

विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं के आर्थिक विकास के अनुभवों से स्पष्ट होता है कि इनके आर्थिक विकास की प्रारम्भिक अवस्था में कृषि क्षेत्र की महत्वपूर्ण भूमिका रही है, इससेआर्थिक विकास हेतु वित्त की आपूर्ति हुई है । कृषि विकासशील अर्थव्यवस्थाओं का प्रमुख व्यवसाय होता है, इसलिए कृषि को न केवल खाद्य पूर्ति करना चाहिए अपितु अतिरेक भी सृजित करना चाहिए . ताकि विनियोग आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके । कृषि क्षेत्र की ऐच्छिक बचत का विनियोग किया जा सकता है । कृषि क्षेत्र की ऐच्छिक बचत से जापान और इंगलैण्ड के आर्थिक विकास की प्रारम्भिक अवस्था में सहायता प्राप्त हुई थी , यदि बचत का सम्यक उपयोग न हुआ तो वाँछित परिणाम नहीं मिलते तथा भारत में एक बड़ी समयावधि तक कृषि अतिरेक का उपयोग बड़े भूस्वामियों ने सुविधा एवं विलासिता युक्त जीवन यापन में किया । **एम0 एल0 डार्लिंग** ने अपने अध्ययन में इस भारतीय प्रवृत्ति पर खेद व्यक्त किया था ।

1. **कृषि उत्पादकता मापन विधियाँ** :

कृषि अध्ययन में कृषि उत्पादकता को निर्धारित के करने के लिए विधि सम्बन्धी पर्याप्त साहित्य मिलता है । स्टाम्प[1] ने प्रति ईकाई क्षेत्र की कृषि उत्पादकता को निर्धारित करते समय यह बताया कि कृषि उत्पादकता में क्षेत्रीय अन्तर अंशतः जलवायु एवं अन्य प्राकृतिक अनुकूलित दशाएं तथा अंशतः फार्मिंग क्षमता की देन है । उत्पादकता कृषि क्षमता का मापक होती है जिसमें उत्पादन बृद्धि के दृष्टिकोण से लागत कारकों का प्रयोग किया जाता है । कृषि उत्पादकता में बृद्धि का सम्बन्ध लागत चुनाव मात्रा तथा तकनीकी कुशलता से है जिनका

उत्पादन प्रक्रियाओं के रूप में प्रयोग किया जाता है तथा जिससे उत्पादन में बृद्धि होती है । कृषि उत्पादकता तथा कृषि क्षमता के मापन का प्राथमिक सम्बन्ध प्रति एकड़ उत्पादन से है जो सभी भौतिक एवं सांस्कृतिक कारकों के अर्न्तसम्बन्धों की देन है ।

भिन्न भिन्न विद्वानों ने कृषि उत्पादकता को निर्धारित करने में अलग अलग विधियों को अपनाया है । विधि सम्बन्धी इन सभी उपागमों को सात वर्गों में विभाजित किया जा सकता है :-

1- कृषि उत्पादन से प्राप्त आय पर — आधारित विधि ।

2- प्रति श्रम लागत ईकाई उत्पादन पर आधारित विधि ।

3- कृषि उत्पादन से प्रति व्यक्ति उपलब्ध अन्न पर आधारित विधि ।

4- कृषि लागत आय पर आधारित विधि ।

5- प्रति एकड़ उपज तथा कोटि गुणांक पर आधारित विधि ।

6- फसल क्षेत्र तथा प्रति क्षेत्र इकाई उत्पादन पर आधारित विधि ।

7- भूमि के पोषक भार क्षमता पर आधारित विधि ।

उपर्युक्त विधियों में से एक, दो तथा चौथे उपागम के लिए संसार के अधिकांश देशों में उपर्युक्त आंकड़े नहीं मिल पाते हैं । भारतवर्ष के अधिकांश राज्यों में कृषि आंकड़े इस दृष्टिकोण से अधूरे हैं । संकाल्पनिक दृष्टिकोण से चौथी विधि का औचित्य जीवन निर्वाहन कृषि व्यवस्था में नगण्य है । तृतीय उपागम अर्थात कृषि उत्पादन से प्रति व्यक्ति उपलब्ध अन्न पर आधारित विधि को सर्व प्रथम बक[2] महोदय ने अपनाया । इसे अन्न तुल्य विधि भी कहते हैं । बक महोदय ने अनुभव किया कि चीन जैसे देश में जहाँ जीवन निर्वाहन व्यवस्था प्रचलित है, कृषि उत्पादकता का मूल्याँकन मुद्रा के रूप में उचित नहीं होगा , जबकि अमेरिका तथा पश्चिमी यूरोप की कृषि क्षमता का निर्धारण अन्न तुल्य विधि के आधार पर उचित नहीं होगा क्यों कि वहाँ पर अनेक व्यापारिक मुद्रा दायिनी फसलों का उत्पादन होता है, इनको अन्न के बराबर या किसी भार इकाई के बराबर बदलना न्यायकर नहीं प्रतीत होता है । संसार के विभिन्न देशों में विनिमय की दर में अदला-बदली दरके कारण भी परिणाम में अन्तर का होना स्वाभाविक है । एक ही देश में विनिमय की दर में भी अन्तर मिलता है । ब्रीज महोदय ने भी कृषि उन्नति को निर्धारित करने के लिए "अन्नतुल्य पद्धति" का प्रयोग किया है । इन्होंने एशियायी देशों के सभी प्रकार के उत्पादित अन्न को प्रति व्यक्ति चावल की आवश्यकता की मात्रा में बदला । इस प्रकार इनकी चावल तुल्य विधि बक की

प्रारम्भिक विधि में सुधार थी , जिसमें ब्रीज महोदय ने अनेक प्रकार के अन्नों को स्थानीय बाजार की कीमत के आधार पर बदला· जबकि **बक महोदय** ने सभी अन्नों की समान इकाई मानी । **क्लार्क तथा हैसवेल** [3] ने भी ठीक यही विधि अपनाई जो प्रति व्यक्ति गेहूँ तुल्य पर आधारित है । कुछ विद्वानों ने अन्तर्राष्ट्रीय संघ के **भार** पद्धति को अपनाया, जिसकी कृषि उत्पादन सूची संख्या निर्धारित करने में प्रयोग किया गया था । इस मापक में सम्पूर्ण कृषि उत्पादन को प्रति व्यक्ति वार्षिक गेहूँ की मात्रा (किलोग्राम) के रूप में प्रदर्शित किया गया । इस आधार पर कृषि उन्नति का तुलनात्मक अध्ययन आसानी से किया जा सकता है ।

प्रति एकड़ उपज तथा कोटि गुणांक पर आधारित विधि का सम्बन्ध फसलों की प्रति एकड़ उपज से है । **केन्डल**[4] की कृषि क्षमता निर्धा**रण** विधि प्रति क्षेत्र इकाई के उत्पादन पर आधारित है । इन्होंने इंगलैंड के 48 काउन्टीज की क्षमता निर्धारण में दस मुख्य फसलों के प्रति एकड़ उपज को आधार माना तथा श्रेणी गुणांक विधि को अपनाया । **स्टाम्प महोदय** ने केन्डाल की श्रेणी गुणांक विधि का प्रयोग अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर तुलनात्मक अध्ययन के लिए किया, इसके लिए स्टाम्प महोदय ने बीस देशों को चुना, नौ प्रमुख फसलों के प्रति एकड़ उत्पादन के आधार पर अध्ययन किया । भारत वर्ष में इस विधि का सर्वपथम प्रयोग **मुहम्मद सफी** ने किया । इन्होंने उत्तर प्रदेश के सभी जनपदों की कृषि क्षमता का निर्धारण आठ खाद्यान्न फसलों के प्रति एकड़ उपज के आधार पर किया । केन्डल के श्रेणी गुणांक विधि का विस्तृत विवरण इस प्रकार है : (1) प्रत्येक फसल को प्रति एकड़ उत्पादन के आधार पर श्रेणी बनाना (2) चुनी फसलों की प्रत्येक इकाई की गणना श्रेणी को जोड़ना (3) प्रत्येक इकाई की श्रेणी से प्राप्त जोड़ को चुनी फसलों की संख्या से विभाजित करना तथा (4) इस प्रकार श्रेणी गुणांक की प्राप्ति हो जाती है । इस विधि की मुख्य आलोचना इस आधार पर की गई कि फसलों के प्रति एकड़ उत्पादन के विश्लेषण के साथ उस फसल के क्षेत्र का ध्यान नहीं दिया जाता है । उदाहरण के लिए "अ" इकाई की श्रेणी गेहूँ के प्रति एकड़ उत्पादन के लिए प्रथम स्थान पर है लेकिन क्षेत्र केवल एक प्रतिशत है, प्रति एकड़ उत्पादन अधिक होते हुए भी क्षेत्र के दृष्टिकोण से स्थान नगण्य हो सकता है । फलस्वरूप "अ" इकाई का महत्व कृषि उत्पादकता की दृष्टि से कम महत्वपूर्ण होगा जबकि श्रेणी गुणांक विधि के अनुसार कृषि क्षमता अधिक होगी ।

श्रेणी गुणांक विधि की इस कमी को **सप्रे तथा देश पाण्डे**[5] ने दूर किया। इन्होंने फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र को स्थान देकर श्रेणी गुणांक उपागम में सुधार किया । इन्होंने श्रेणियों के साधारण औसत के स्थान पर श्रेणियों के भारित औसत का प्रयोग किया । अनेक फसलों की श्रेणियों के लिए भार सम्पूर्ण फसल क्षेत्र में से प्रत्येक फसल के अन्तर्गत गणना की गई प्रतिशत की अनुपातीय है । इस विधि की मूल कमी यह है कि इसमें प्रत्येक फसल की

प्रतिशत की गणना कुल फसल क्षेत्र से किया गया है जबकि कृषि क्षमता निर्धारित करते समय कुल बोई गई भूमि का प्रयोग करना चाहिए क्योंकि कटाई क्षेत्र या कुल बोई गई भूमि ही उत्पादन तथा प्रति एकड़ पैदावार को प्रभावित करती है । उदाहरणार्थ "क" इकाई में चावल की प्रति एकड़ उपज की दो श्रेणी, गेहूँ–3, ज्वार–मक्का –4, रुई–13 तथा दालें–9 हैं तथा "क" इकाई में ही चावल के अन्तर्गत 10 प्रतिशत क्षेत्र गेहूँ 15 प्रतिशत , मक्का 20 प्रतिशत, रुई 25 प्रतिशत, दालें 20 प्रतिशत तथा शेष सभी फसलों में 10 प्रतिशत क्षेत्र हैं । **सप्रे तथा देश पाण्डे** ने इन सभी प्रतिशतों को भार के रूप में प्रयोग किया है जिसकी गणना इस प्रकार की है । (2 × 10) + (3×15) + (4×20) + (13 × 25) + (9×20) = 650 तथा पुन क्षेत्र प्रतिशत के कुल जोड़ द्वारा विभाजित करना: 10 +15 + 20 + 25 + 20 = 90 इस प्रकार "क" इकाई की सूची = 650/90 = 7·2 प्राप्त होगी परन्तु जब उपज आकड़ों की गणना कुल बोई गई भूमि के सन्दर्भ में करते हैं स्थिति में परिवर्तन हो जाता है । यदि मान लिया जाय कि कुल बोई भूमि का चावल, गेहूँ, मक्का, रुई, दालें आदि फसलों के अन्तर्गत क्रमशः 19, 18,16,10 तथा 22 प्रतिशत क्षेत्र है इस सम्बन्ध में श्रेणियों का औसत भार= (2×19) + (3×18)+ (4×16) + (13×10) + (9×22)= 484 प्राप्त हुआ , **तथा** पुनः भार के सम्पूर्ण योग द्वारा विभाजित करना : 19+18+16+10+22= 85 होगा, इस प्रकार "क" इकाई की सूची =484/85=5·7 प्राप्त होगी । फलस्वरूप कुल फसल क्षेत्र के स्थान पर कुल बोई गई भूमि क्षेत्र से विभिन्न फसलों की प्रतिशत की गणना करना अधिक उचित होगा ।

गाँगुली[6] ने फसल उपज सूची विधि को अपनाया है । इन्होंने नौ मुख्य फसलों को चुना तथा प्रत्येक फसल की सूची की गणना की । इनका उपज सूची सूत्र निम्न है –

$$\frac{\text{अध्ययन इकाई के "क" फसल की प्रति एकड़ उपज}}{\text{सम्पूर्ण प्रदेश में "क" फसल की औसत उपज}} \times 100$$

उपज सूची ज्ञान करने के बाद, उस फसल की प्रतिशत (जो कुल उपज क्षेत्र से निकाली गई है) से गुणा करके **फार्म** क्षमता सूची की गणना की गई है । इस अध्ययन में भी **फार्म** क्षमता सूची की गणना कुल फसल क्षेत्र के स्थान पर कुल बोई गई भूमि के सन्दर्भ में किया गया होता तो परिणाम अधिक उचित होता । **भाटिया**[7] ने उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलों की कृषि क्षमता निर्धारित करने में एक विशेष सूत्र का प्रयोग किया है, इनका अनुमान है कि (क) प्रति एकड़ उपज भौतिक एवं मानवीय पर्यावरण का प्रतिफल है, (ख)अनेक फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र भूमि उपयोग से सम्बन्धित अनेक कारकों के प्रभाव को प्रदर्शित करता है, फलस्वरूप , कृषि क्षमता प्रति एकड़ उत्पादन तथा फसल क्षेत्र दोनों तथ्यों की देन है । उदाहरण के लिए "क" क्षेत्र में गेहूँ की प्रति एकड़ उपज 1000 पौण्ड है जो क्षेत्रीय औसत का 115 प्रतिशत है तथा चावल की प्रति एकड़ उपज 1200 पौण्ड है जो क्षेत्रीय

औसत का 140 प्रतिशत है । गेहूँ के अन्तर्गत कुल क्षेत्र का 50 प्रतिशत है जबकि चावल के अन्तर्गत केवल 10 प्रतिशत है । फलस्वरूप फसल क्षेत्र का प्रभाव भी कृषि क्षमता पर अलग अलग पड़ेगा । दूसरे उदाहरण में मान लीजिए कि तम्बाकू की प्रति एकड़ उपज दो इकाईयों (क तथा ख) में समान है तथा क क्षेत्र में तम्बाकू के अन्तर्गत 40 प्रतिशत है तथा "ख" में केवल 10 प्रतिशत है : फलतः क तथा ख क्षेत्रों में कृषि क्षमता अलग अलग होगी तथा "ख" क्षेत्र की तुलना में "क" क्षेत्र में कृषि क्षमता निर्धारण में तम्बाकू फसल का योगदान अधिक होगा । इन्हीं तथ्यों को ध्यान में रखते हुए **भाटिया** ने निम्नलिखित सूत्र के आधार पर उत्तर प्रदेश की कृषि क्षमता को निर्धारित किया है ।

(1) $$Lya = \frac{Yc}{Yr} \times 100$$

जहाँ Lya= 'a' फसल की उपज सूची ।

Yc= 'a' फसल की प्रति एकड़ उपज ।

Yr= 'a' फसल की सम्पूर्ण क्षेत्र की प्रति एकड़ उपज

(ii) $$Ei = \frac{Lya.\ Ca + Lyb.\ Cb + \ldots\ldots\ldots + Lyn.\ Cn}{Ca + Cb + \ldots\ldots\ldots\ldots + Cn}$$

Ei= कृषि क्षमता की सूची

Lya, Lyb..Lyn= अनेक फसलों की उपज सूची ।

Ca, Cb.....Cn= अनेक फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र का कुल फसल क्षेत्र से प्रतिशत ।

उपर्युक्त सूत्र के आधार पर **भाटिया** ने उत्तर प्रदेश की कृषि क्षमता को चार वर्गो में विभाजित किया है –

(1)उच्च कृषि क्षमता	109.6
(2) मध्यम कृषि क्षमता	100.0
(3) निम्न कृषि क्षमता	88.8
(4)न्यूनतम कृषि क्षमता	88.8

सिन्हा [8] ने **भाटिया** की विधि का समर्थन करते हुए जनपद स्तरीय अध्ययन के लिए दोषी बताया, इन्होंने भारतवर्ष स्तर पर आँकड़ों की ओर ध्यान दिलाते हुए कृषि क्षमता निर्धारण में प्रतिहेक्टेयर उपज को ही

लाभकर बताया । सिंह [9] ने कृषि क्षमता का निर्धारण प्रति एकड़ भूमि भार क्षमता के आधार पर किया है ।इनके मतानुसार कृषि क्षमता, भूमि भार क्षमता तथा उत्पादकता में कोई विशेष अन्तर नहीं है । इनका मत है कि प्रति क्षेत्र इकाई में उत्पादन जितना अधिक होगा , भूमि पोषक क्षमता भी उतनी ही अधिक होगी, फलतः फार्मिंग क्षमता भी अधिक होगी । वास्तव में भूमिभार पोषक क्षमता विधि की मुख्य विशेषता यह है कि संसार के किसी भी भाग में फसलों की विभिन्नताओं का तुलनात्मक अध्ययन आसानी से किया जा सकता है । इस विधि में उत्पादन को कैलोरीज में बदल दिया जाता है । इन्होंने कृषि क्षमता की सूची संख्या को इस प्रकार निर्धारित किया –

$$Lae = \frac{CPe}{Cpr} X 100$$

जहाँ Lae= इकाई की कृषि क्षमता सूची ।

Cpe= इकाई की भूमि भार पोषक क्षमता ।

Cpr= सम्पूर्ण प्रदेश की भूमि भार पोषक क्षमता ।

इस विधि में –

(1) प्रत्येक फसल के प्रति एकड़ उपज को ध्यान में रखा गया ।

(2) प्रत्येक फसल के अन्तर्गत कटाई क्षेत्र की ही गणना की गई है ।

(3) अन्न, दालें, अन्य खाद्य तथा तिलहन फसलें जो कुल फसल क्षेत्र के 85 प्रतिशत से 95 प्रतिशत पर बोई जाती है , कृषि क्षमता निर्धारण में गणना की गई है ।

(4) कुल उत्पादन में 16.8 प्रतिशत उत्पादन घटाकर भोजन के लिए शुद्ध उपलब्धि के आधार पर पोषक क्षमता की गणना की गई है ।

(5) प्रत्येक फसल से प्राप्त कैलोरिक मात्रा का निर्धारण किया गया है ।

(6) प्रति व्यक्ति मानक पोषक तत्व इकाई को भी निर्धारित किया गया है ।

यह उपागम उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त होगा जहाँ कुल फसल क्षेत्र के 95 प्रतिशत क्षेत्र पर केवल खाद्यान्न फसलें उगाई जाती है ।

कृषि क्षमता के स्थान पर कृषि उत्पादकता शीर्षक के अन्तर्गत अध्ययन करने वाले विद्वान **ईनेदी**[10] ने कृषि की मौलिक किस्मों का वर्णन करते समय कृषि उत्पादकता को निर्धारित करने के लिए निम्न सूत्र प्रतिपादित किया–

$$\frac{Y}{Yn} \% \frac{T}{Tn} \quad \text{अथवा} \quad \frac{Y}{Yn} \times \frac{Tn}{T}$$

जहाँ, Y= इकाई क्षेत्र में चुनी फसल की पैदावार की कुल मात्रा ।

Yn= राष्ट्रीय स्तर पर फसल की पैदावार की कुल मात्रा ।

T= जिला में फसल के अन्तर्गत कुल क्षेत्र ।

Tn= राष्ट्रीय स्तर पर फसल के अन्तर्गत कुल क्षेत्र ।

इनेदी ने सूत्र को उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया है जैसे किसी इकाई के राष्ट्रीय स्तर पर फसल के अन्तर्गत कुल क्षेत्र 5.7 मिलियन हेक्टेयर है जिसमें गेहूँ के अन्तर्गत 1 मिलियन हेक्टेयर है तथा प्रति हेक्टेयर उत्पादन 15 क्विंटल है । इस प्रकार गेहूँ का कुल उत्पादन 15 मिलियन क्विंटल होगा । जनपद स्तर पर "क" इकाई में फसल का कुल क्षेत्र 50000 हेक्टेयर है तथा 15000 हेक्टेयर पर गेहूँ की खेती की जाती है तथा गेहूँ का प्रति हेक्टेयर उत्पादन 23 क्विंटल है तो कुल उत्पादन 345000 क्विंटल होगा ।

$$= \frac{345000}{15000000} \times \frac{5700000}{50000} = 2.62$$

फलस्वरूप गेहूँ के लिए "क" जनपद की उत्पादकता राष्ट्रीय इकाई की अपेक्षा 162 प्रतिशत अधिक होगी ।

सफी [11] ने भारत वर्ष के वृहत मैदान की कृषि उत्पादकता को निर्धारित करते समय **इनेदी** के सूत्र में संशोधन प्रस्तुत किया । **इनेदी** के सूत्र में मुख्य दोष यह था कि उत्पादकता सूची पर फसल क्षेत्र की मात्रा का अधिक प्रभाव पड़ता था । राष्ट्रीय या जिलास्तर पर प्रति हेक्टेयर पैदावार समान या कम होने पर भी राष्ट्रीय स्तर की अपेक्षा जिला स्तर पर उत्पादकता सूची अधिक होती है । उदाहरण के लिए "क" जनपद में गेहूँ की पैदावार 15 क्विंटल/हेक्टेयर, राष्ट्रीय स्तर पर गेहूँ की पैदावार 15 क्विंटल/हेकटेयर, जनपद में फसल का क्षेत्र 15000 हेक्टेयर राष्ट्रीय स्तर पर फसल का क्षेत्र 1000000 हेक्टेयर, जनपद में सम्पूर्ण फसल क्षेत्र 50000 हेकटेयर राष्ट्रीय स्तर पर सम्पूर्ण फसल क्षेत्र 5.7 मिलियन हेक्टेयर । **इनेदी** के सूत्र के अनुसार –

$$= \frac{225000}{15000000} \times \frac{5700000}{50000} = 1.71$$

उत्पादकता गुणाँक = 171-100=71 प्रतिशत/स्पष्ट है कि गेहूँ की उपज राष्ट्रीय स्तर पर समान होते हुए भी जनपद की उत्पादकता राष्ट्रीय स्तर की अपेक्षा 71 प्रतिशत अधिक है, यह निष्कर्ष त्रुटिपूर्ण प्रतीत होता है ।

सफी ने इनेदी के सूत्र में सुधार किया जो इस प्रकार हैं :

$$\pounds \frac{y_1}{t_1} + \frac{y_2}{t_2} + \ldots\ldots\ldots n : \pounds \frac{Y_1}{T_1} + \frac{Y_2}{T_2} + \ldots\ldots\ldots n$$

$$\pounds \frac{Yn}{tn} : \pounds \frac{Yn}{Tn}$$

जहाँ, $y_1, y_2 \ldots n$ = ईकाई क्षेत्र में चुनी गई फसलों का कुल उत्पादन ।

$t_1, t_2 \ldots\ldots n$ =ईकाई क्षेत्र में चुनी गई फसलों का कुल क्षेत्रफल

$Y_1, Y_2 \ldots\ldots n$ =राष्ट्रीय स्तर पर उन, फसलों का कुल उत्पादन ।

$T_1, T_2 \ldots n$ =राष्ट्रीय स्तर पर उन फसलों का कुल क्षेत्रफल ।

n = चुनी गई फसलें ।

इस सूत्र में जनपद में सभी फसलों से प्राप्त कुल उपज को सभी फसलों के कुल क्षेत्र से विभाजित किया गया और प्रति हेक्टेयर उपज मालूम की गई है, इसी प्रकार राष्ट्रीय स्तर पर सभी फसलों से प्राप्त कुल उपज को भी कुल क्षेत्र से विभाजित करके प्रति हेक्टेयर उपज मालूम की गई है । तत्पश्चात जनपद के प्रति हेक्टेयर उपज में राष्ट्रीय स्तर के प्रति हेक्टेयर उपज से विभाजित कर दिया गया है ।

हुसैन[12] ने सतलज गंगा मैदान की कृषि उत्पादकता प्रदेश निर्धारण में एक नूतन विधि का सुझाव दिया है । इनका कहना है कि उत्पादकता अध्ययन में सभी उत्पादित फसलों की गणना की जानी चाहिए । ऐसा देखा जाता है कि किसी एक ईकाई में कुछ फसलें क्षेत्र के दृष्टिकोण से प्रमुख होती है तथा ऐसी अनेक फसलें होती हैं, जो मुद्रा के दृष्टिकोण से प्रमुख होती हैं जबकि क्षेत्र न्यूनतम होता है । अब तक अपनाई गई विधियों में न्यून क्षेत्र वाली फसलों की गणना नहीं की जाती है । इन्होंने सभी उत्पादित फसलों की उपज से प्राप्त मुद्रा की गणना की । इनका सूत्र इस प्रकार है :

$$Lj = \frac{\sum_{j=i}^{n} Yij\ Cij}{aij} \times \frac{\sum_{i=j}^{n} YiCi}{Ai}$$

जहाँ Lj = j जनपद में कृषि उत्पादकता सूची ।

Yij = j जनपद में i फसल का उत्पादन ।

Cij = j जनपद में i फसल का मूल्य ।

n = j जनपद में उगाई गई फसलों की कुल संख्या ।

aij = j जनपद में i फसल के अन्तर्गत क्षेत्र ।

Yi = सम्पूर्ण प्रदेश में i फसल का उत्पादन ।

Ci = सम्पूर्ण प्रदेश में i फसल का औसत मूल्य ।

Ai = सम्पूर्ण प्रदेश में i फसल के अन्तर्गत कुल क्षेत्र ।

सूत्र का स्पष्टीकरण इस प्रकार भी किया जा सकता है :

$$\text{Productivity index.} = \frac{\text{Productivity value in money of all crops in a unit}}{\text{Total cropped area in a district}} \times \frac{\text{Production value in money of all crops in the region.}}{\text{Total cropped area in region}}$$

उदाहरण के लिए किसी प्रदेश के "क" इकाई में बीस फसलें उगाई जाती है तथा कुल उत्पादन का मूल्य 2000000 रुपया है । कुल फसल क्षेत्र 10000 हेक्टेयर है जबकि सम्पूर्ण प्रदेश में उगाई गई कुल फसलों का मूल्य 10 करोड़ रुपया है तथा प्रदेश में कुल फसल क्षेत्र 15 लाख हेक्टेयर है । सूत्र के आधार पर "क" इकाई की फसल उत्पादकता सूची इस प्रकार होगी :

$$\text{उत्पादकता सूची} = \frac{2000000}{10000} \times \frac{1500000}{100000000} = 3$$

(1) अतिनिम्न उत्पादकता < 20

(2) निम्न उत्पादकता < 23

(3) मध्यम उत्पादकता < 26

(4) उच्च उत्पादकता < 30

(5) अति उच्च उत्पादकता > 30

उक्त श्रेणियों के आधार पर **हुसैन** ने सम्पूर्ण प्रदेश को पाँच वर्गो में बाँट कर अध्ययन किया ।

2. **अध्ययन क्षेत्र में कृषि उत्पादकता का स्तर** :

किसी भी क्षेत्र में कृषि सक्रियता, कृषि गहनता एवं कृषि कुशलता को प्रदर्शित करने में कृषि उत्पादकता का विशेष स्थान है । यदि उत्पादकता क्षीण होती है तो स्वतः कृषि कुशलता घट जाती है । कृषि उत्पादकता बढ़ाने में जिन कारकों का महत्वपूर्ण योगदान है, उनमें भौतिक पृष्ठभूमि के अतिरिक्त सुधरे हुए बीजों, उर्बरकों, सिंचन सुविधाओं , कृषि कार्यो में यन्त्रों का प्रयोग तथा कृषक प्रशिक्षण आदि विशेष उल्लेखनीय हैं । कुछ विद्वानों ने उर्वरकों के आधार पर उत्पादकता बढ़ाने के प्रयासों का विश्लेषण किया है ।उनके अनुसार रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग एक सीमा तक ही लाभदायक होता है, उस सीमा के बाद उर्वरकों का प्रयोग हानिकारक सिद्ध होता है । अतः उस उपयुक्त सीमा का निर्धारण करना आवश्यक हो जाता है जिस पर उर्वरकों की सीमान्त उत्पादकता अधिकतम हो । साधारण कृषक ऐसे प्रायोगिक पक्षों से अनभिज्ञ होते है , इसलिए कृषि प्रसार सेवाओं द्वारा कृषकों को इस सम्बन्ध में ज्ञान कराया जाना चाहिए ।

कृषि उत्पादकता में असन्तुलन भी एक ऐसा कारक है कि जिससे कृषि कुशलता के होते हुए भी उत्पादन क्षीण होने लगता है । यह असंतुलन कई कारकों से होता है जिनमें क्षेत्रीय विषमताएं, खेतों के छोटे छोटे आकार, प्राविधिक कारक, प्रवंधकीय कारक, यातायात के साधन , सामाजिक रूप रेखा , जल उपलब्धि, उर्वरकों का सन्तुलित प्रयोग, अच्छे बीजों का प्रयोग कीड़ों और बीमारियों से फसलों की सुरक्षा इत्यादि उल्लेखनीय है । **शाह** ने (1969) में यह प्रदर्शित किया है कि सिंचन सुविधाओं में असन्तुलन के कारण तथा यान्त्रिक साधनों में कमी के कारण किस प्रकार उच्च उत्पादन देने वाली किस्मों की उपज में असमानताएं पाई जाती हैं, यद्यपि भौतिक पृष्ठभूमि और अन्य आर्थिक सुविधाएं समान रहती हैं । **अली मोहम्मद** [13] के अनुसार सुविधाओं के आधार पर गहन खेती का अभियान चलाने से भारत के कुछ क्षेत्रों में उत्पादन अवश्य बढ़ा है लेकिन इससे क्षेत्रीय उत्पादन में असन्तुलन उत्पन्न हो गया है । इसके उचित विपणन की समस्या भी उत्पन्न हो गई है । यदि यह असन्तुलन और बढ़ेगा तो कम उत्पादन वाले क्षेत्रों में कृषकों को अपने उत्पादन का उचित लाभ नहीं मिल सकेगा ।

कृषि उत्पादकता से कृषि उत्पादन का गहरा सम्बन्ध है क्योकि कृषि उत्पादकता जहाँ सक्षमता का द्योतक है वही कृषि उत्पादन वास्तविकता का प्रतीक है । यदि कृषि उत्पादकता बृद्धि के सक्रिय प्रयास के बावजूद भी वास्तविक कृषि उत्पादन अधिक न बढ़ सके तो सारा प्रयास असफल दीखता है । अतः अध्ययन क्षेत्र में कृषि उत्पादकता तथा कृषि उत्पादन का निर्धारण भी आवश्यक हो जाता है । जिससे कृषि उत्पादकता बृद्धि के प्रयासों के प्रतिफल को ज्ञात किया जा सके । कुछ विद्वानों ने इसके लिए फसल गहनता तथा फसल उपज समकक्षता संकेताको का प्रयोग किया है । फसल गहनता में फसलों की लागत को ध्यान में रखकर अतिरिक्त उपज का अनुमान लगाया जा सकता है , जबकि फसल उपज समकक्षता द्वारा भिन्न भिन्न फसलों के सापेक्ष महत्व का अनुमान लगाया जा सकता है ।

(अ)<u>फसल गहनता</u> :(Cropping Intensity)

फसल गहनता से आशय उस फसल क्षेत्र से है जिस पर वर्ष में एक फसल के अतिरिक्त अन्य कई फसलें उगाई जाती है । शुद्ध कृषि क्षेत्र तथा दुहरी या अनेक फसल क्षेत्र को मिलाकर कुल फसल क्षेत्र का सम्बोधन होता है । किसी भी क्षेत्र में शुद्ध बोया गया क्षेत्र की अपेक्षा कुल फसल क्षेत्र का अधिक हाना फसल गहनता की मात्रा को प्रदर्शित करता है । फसल गहनता वह सामयिक बिन्दु है जहाँ भूमि , श्रम, पूँजी तथा प्रबन्ध का सम्मिश्रण सर्वाधिक लाभप्रद सिद्ध होता है । भारतवर्ष की वर्तमान कृषि अर्थव्यवस्था में फसल गहनता का निर्धारण इन चरों के अनुपात में नहीं किया जाता है क्योकि भूमि एक स्थाई कारक है, मानवीय श्रम की अधिकता तथा बेरोजगारी भी अधिक है, कृषि जीवन निर्वाहन का एक माध्यम मात्र है, फार्म का आकार छोटा है और कृषि उद्यम का रूप धारण नहीं कर पाई है । वास्तव में यहाँ फसल गहनता सिंचाई के साधन , बीज, खाद तथा मशीनों की उपलब्धि पर आधारित रही है । यही कारण है कि भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में बड़े कृषि फार्मो की अपेक्षा छोटे आकार के फार्मो में फसल गहनता अधिक होती है , क्योकि कृषक, पारिवारिक श्रम तथा अन्य लागतों का भरपूर प्रयोग करता है , जबकि बड़े आकार के फार्मो में पूँजी का वितरण असमान हो जाता है । इस प्रकार फसल गहनता संकल्पना का प्रार्दुभाव एक ही खेत में एक ही वर्ष में एक से अनेक फसलों की उत्पादन मात्रा से होता है । फसल गहनता की गणना निम्न लिखित सूत्र के आधार पर की जाती है ।

$$\text{फसल गहनता सूची} = \frac{\text{कुल फसल क्षेत्र (Total cropped area)}}{\text{शुद्ध बोया गया क्षेत्र (Net area sown)}} \times 100$$

ETAWAH DISTRICT
CROPPING INTENSITY 1990-91
150 AND ABOVE
130 - 150
BELOW-130
0
20
km
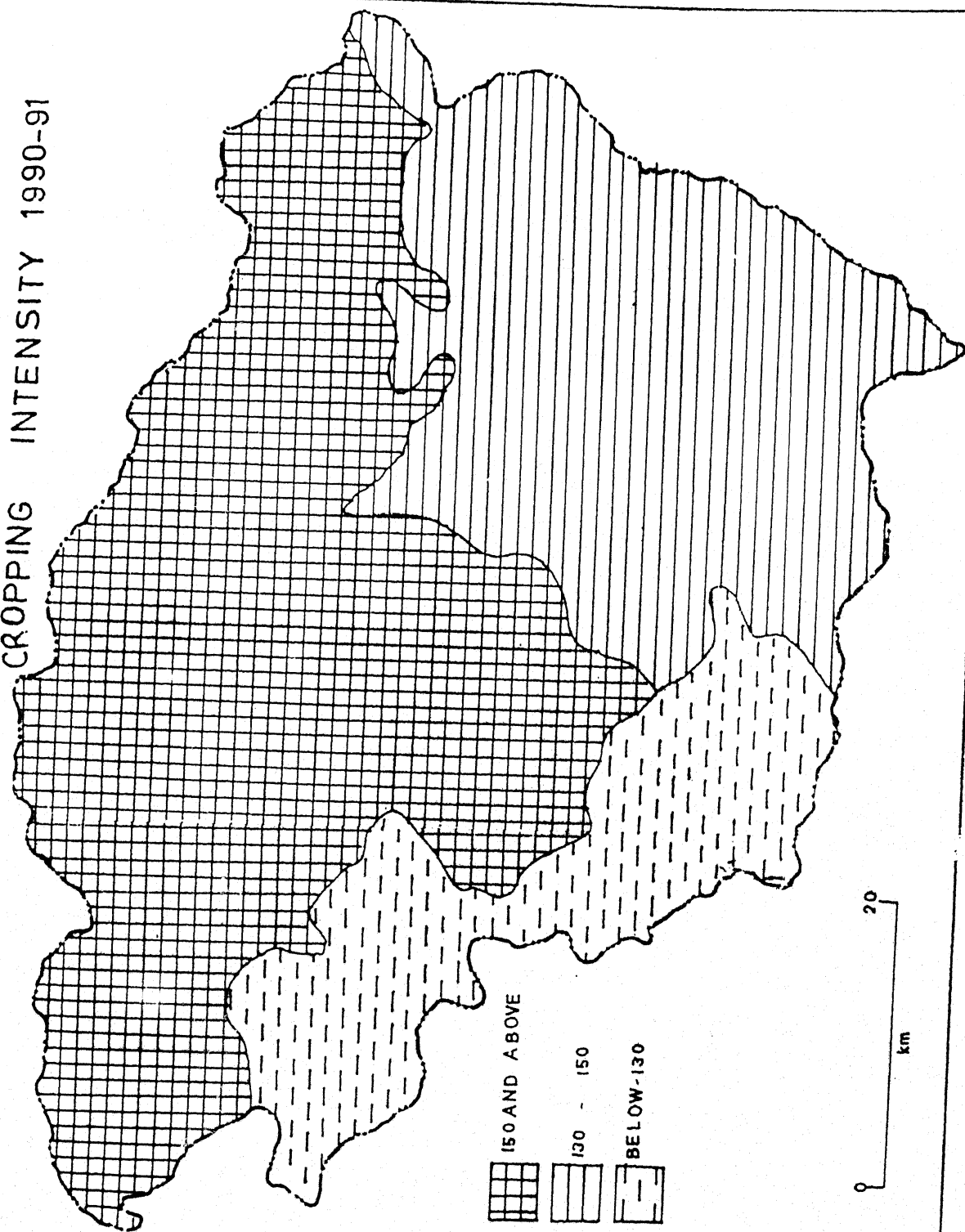
FIG. 18

उदाहरण के लिए "क" इकाई में शुद्ध बोया गया क्षेत्र 100 हेक्टेयर तथा 20 हैक्टेयर दो फसली क्षेत्र है, इस प्रकार कुल फसल क्षेत्र 100 + 20 = 120 हेक्टेयर होगा । फलस्वरूप फसल गहनता सूची = $\frac{120}{100} \times 100 = 120$ प्रतिशत हसेगी । अध्ययन क्षेत्र में फसल गहनता सूची तालिका क्रमांक 5.1 में दर्शायी गई है : –

तालिका क्रमांक 5.1 अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड स्तर पर फसल गहनता सूची 1990–91

विकास खण्ड	शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	सकल बोया गया क्षेत्रफल	फसल गहनता
1. जसवन्त नगर	27,060	41,863	154.70
2. बढ़पुरा	16,788	21,368	127.28
3. बसरेहर	27,855	45,921	164.86
4. भरथना	18,993	29,279	154.16
5. ताखा	17,862	28,155	157.63
6. महेवा	23,400	36,511	156.03
7. चकरनगर	15,978	16,961	106.15
8. अछल्दा	19,429	28,557	146.98
9. विधूना	20,018	30,930	154.51
10. एखा कटरा	15,885	24,504	154.26
11. सहार	20,267	30,334	149.67
12. औरैया	29,347	38,252	130.34
13. अजीतमल	16,766	24,834	148.12
14. भाग्यनगर	19,702	27,341	138.77
ग्रामीण योग	2,89,350	4,24,810	146.2
समस्त नगरीय	341	527	154.55
योग जनपद	2,89,691	4,25,337	146.82

स्रोत जनपदीय सांख्यिकीय पत्रिका 1992

तालिका क्रमांक 5.1 जनपद इटावा में विकास खण्ड स्तर पर फसल गहनता का चित्र प्रस्तुत कर रही है । तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद की फसल गहनता का स्तर 146.82 प्रतिशत अर्थात 46.82 प्रतिशत क्षेत्रफल पर एक से अधिक बार कृषि फसलें बोई जाती है । जनपदीय फसल गहनता के स्तर से ऊँचा स्तर प्रदर्शित करने वाले विकास खण्डों में व वसरेहर विकास खण्ड 164.86 प्रतिशत फसल गहनता रखकर सर्वोच्च स्तर को प्राप्त कर रहा है, दूसरे तथा तीसरे क्रम में ताखा तथा महेवा विकास खण्डों का स्थान आता है जो क्रमशः 157.63 प्रतिशत तथा 156.03 प्रतिशत फसल गहनता के स्तर को प्राप्त करके कमोवेश समान स्थिति में है । इसी प्रकार जसवन्त नगर, भरथना, विधूना तथा एखाकटरा विकास खण्ड क्रमशः 154.70 प्रतिशत , 154.16 प्रतिशत, 154.51 प्रतिशत तथा 154.26 प्रतिशत फसल गहनता दर्शाते हुए कमोवेश एक समान स्थिति का प्रदर्शन कर रहे हैं । जबकि सिंचन सुविधाओं की दृष्टि से यदि देखा जाये तो वसरेहर विकास खण्ड के बाद जसवन्त नगर विकास खण्ड का स्थान आता है । फसल गहनता की दृष्टि से सर्वाधिक दयनीय स्थिति में चकरनगर विकास खण्ड है जो केवल 106.15 प्रतिशत फसल गहनता दर्शाकर न्यूनतम क्षेत्र में एक से अधिक बार फसलों को बोने की सुविधा पा रहा है । अन्य विकास खण्ड कमोवेश मध्यम स्थिति इस दृष्टि से प्राप्त कर रहे हैं ।

सारिणी 5.2 फसल गहनता का स्तर :

फसल गहनता सूची	फसल गहनता का स्तर	विकास खण्डो की संख्या	विकास खण्डों के नाम
100–115	अतिनिम्न	1	चकरनगर
115–130	निम्न	1	बढ़पुरा
130–145	मध्यम	2	औरैया, भाग्यनगर
145–160	उच्च	9	जसवन्त नगर, भरथना, ताखा, महेवा, विधूना, एखा कटरा, सहार, अजीतमल तथा अछल्दा
160 से अधिक	अति उच्च	1	वसरेहर

फसल गहनता की दृष्टि से यदि देखा जाये तो अध्ययन क्षेत्र में अधिकाँश विकास खण्डों की स्थिति उच्च फसल गहनता वाली है क्योंकि इस वर्ग में 9 विकास खण्ड आते हैं जिनकी फसल गहनता 145 से 160 के मध्य है । जबकि 2 विकास खण्ड 130–145 के मध्य स्थित होने के कारण

मध्यम फसल गहनता को दर्शा रहे हैं । एक -एक विकास खण्ड अतिनिम्न तथा निम्न फसल गहनता वाला है तथा एक विकास खण्ड बसरेहर अति उच्च फसल गहनता की श्रेणी में है ।

(ब) प्रति एकड़ उपज के आधार पर कृषि क्षमता :

प्रो0 शफी के सूत्र के आधार पर अध्ययन क्षेत्र की कृषि क्षमता को निर्धारित करने का प्रयास किया गया है । जनपद की दस फसलों से प्राप्त कुल उपज को दसों फसलों के कुल क्षेत्र से विभाजित किया गया है जिससे प्रति हेक्टेयर उपज ज्ञात हो गई तत्पश्चात राष्ट्रीय स्तर पर उन्हीं फसलों से प्राप्त कुल उपज को उन्हीं फसलों के क्षेत्रफल से विभाजित करके प्रतिहेक्टेयर उपज ज्ञात की गई । इसके उपरान्त जनपद की प्रति हेक्टेयर उपज में राष्ट्रीय स्तर की प्रतिहेक्टेयर उपज का भाग दिया गया है । इस क्रिया से विकासखण्ड स्तर पर कृषि उत्पादकता सूची ज्ञात की गइ है । उत्पादकता सूची में 100 का गुणा करके उत्पादकता गुणांक प्राप्त किया गया है ।

सारिणी: 5.3 विकास खण्ड वार उत्पादकता सूची तथा उत्पादकता गुणांक ।

विकास खण्ड	उत्पादकता सूची	उत्पादकता गुणांक
1. जसवन्त नगर	1.7036	170.36
2. बढ़पुरा	1.3311	133.11
3. बसरेहर	1.7983	179.83
4. भरथना	1.5844	158.44
5. ताखा	1.5953	159.53
6. महेवा	1.5394	153.94
7. चकरनगर	0.9418	94.18
8. अछल्दा	1.4246	142.46
9. विधूना	1.5045	150.45
10. एखा कटरा	1.4569	145.69
11. सहार	1.4813	148.13
12. औरैया	1.1528	115.28
13. अजीतमल	1.3919	139.19
14. भाग्यनगर	1.4028	140.28
जनपद	1.4738	147.38

सारिणी 5.3 विकासखण्ड स्तर पर अध्ययन क्षेत्र की कृषि उत्पादकता के स्तर का चित्र प्रस्तुत कर रही है । **प्रो0 सफी** के सूत्र के आधार पर अध्ययन क्षेत्र की कृषि उत्पादकता सूची 1.4738 प्राप्त की गई है जिसे सामान्य कहा जा सकता है । विकास खण्ड स्तर पर देखे तो चकरनगर विकास खण्ड वरीयता क्रम में सर्वाधिक निचले स्तर को प्रकट कर रहा है । इसी प्रकार सर्वाधिक उच्च स्तर को दर्शाने वाला विकास खण्ड वसरेहर है जिसकी कृषि उत्पादकता सूची 1.7983 है । अन्य विकास खण्ड इन दोनों सीमाओं के मध्य अपनी स्थिति को दर्शा रहा है ।

सारिणी 5.4 विकास खण्ड स्तर पर कृषि उत्पादकता का स्तर ।

कृषि उत्पादकता गुणांक	कृषि उत्पादकता का स्तर	विकास खण्डों की संख्या	विकास खण्डों के नाम
75–100	अति निम्न	1	चकरनगर
100–125	निम्न	1	औरैया
125–150	मध्यम	6	बढ़पुरा, अछल्दा, एखाकटरा, सहार, अजीतमल तथा भाग्यनगर
150–175	उच्च	5	जसवन्त नगर, भरथना, ताखा, महेवा तथा विधूना
175–200	अति उच्च	1	बसरेहर

अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड स्तर पर कृषि उत्पादकता के स्तर को सारिणी 5.4 में दर्शाया गया है जिसके अनुसार अति निम्न कृषि उत्पादकता स्तर को दर्शाने वाला अकेला विकास खण्ड चकरनगर हे जो अपनी प्राकृतिक स्थिति के कारण तमाम प्रयासों के बावजूद कृषि उत्पादकता के ऊँचे स्तर को नहीं पाप्त कर पा रहा है । इसी विकास खण्ड से मिलती जुलती स्थिति वाला विकास खण्ड औरैया का कृषि उत्पादन निम्न स्तरीय है, परन्तु यह चकरनगर से अच्छी स्थिति में है । मध्यम उत्पादकता स्तर वाले विकास खण्ड बढ़पुरा, अछल्दा, एखाकटरा, सहार, अजीतमल तथा भाग्यनगर हैं जो 125 से 150 के मध्य स्थित है । पॉच विकास खण्ड, जसवन्त नगर, भरथना, ताखा, महेवा तथा विधूना उच्च उत्पादकता स्तर 150 से 175 मध्य स्थित है । बसरेहर विकास खण्ड सर्वाधिक उच्च उत्पादकता स्तर का प्रदर्शन कर रहा

है और यह 175 से 200 के वर्ग में स्थित है । उत्पादकता स्तर की दृष्टि से देखा जाय तो अध्ययन क्षेत्र औसत रूप में मध्यम उत्पादकता स्तर वाला है जिसकी उत्पादकता सूची 1.4738 तथा उत्पादकता गुणांक 147.38

3. कृषि भूमि पर जनसंख्या का भार :

प्राकृतिक संसाधन किसी देश की अमूल्य निधि होते हैं , परन्तु उन्हें गतिशील बनाने , जीवन देने और उपयोगी बनाने का दायित्व देश की मानव शक्ति पर ही निर्भर करता है । इस दृष्टि से देश की जनसंख्या उसके आर्थिक विकास और समृद्धि का आधार स्तम्भ होती है । जनसंख्या को मानवीय पूँजी कहना कदाचित अनुचित न होगा । विकसित देशों की वर्तमान प्रगति तथा समृद्धि व सम्पन्नता की पृष्ठभूमि में वहां की मानव शक्ति ही है । जिसने प्राकतिक संसाधनों पर नियंत्रण और शासन द्वारा उन्हें अपनी समृद्धि का अंग बना लिया है । परन्तु हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि जनसंख्या देश की मानवीय पूँजी की श्रेणी में तभी आ सकती है जबकि वह शिक्षित हो, कुशल हो, दूरदर्शी हो और उसकी उत्पादकता उच्च कोटि की हो । यदि ऐसा न हुआ तो मानवीय संसाधन के रूप में वह वरदान के स्थान पर अभिशाप में परिणत हो जायेगी क्योंकि उतपादक कार्यो में उसका विनियोग सम्भव नहीं हो सकेगा । स्पष्ट है कि मानवीय शक्ति किसी देश के निवासियों की संख्या पर नहीं वरन गुणों पर निर्भर करती है । इस लिए **प्रो0 ह्विप्पिल** ने लिखा है कि "एक देश की वास्तविक सम्पत्ति उसकी भूमि, जल, वनों, खानों, पश पक्षियों के झण्डों और डालरों में नहीं, वरन देश के समृद्ध एवं प्रसन्न चित्त , पुरुषों स्त्रियों और बच्चों में निहित होती है ।

जनांकिकीय संक्रमण के सिद्धान्त में आर्थिक विकास से सम्बन्धित जन्म और मृत्युदरों की तीन अवस्थाएं स्वीकार की गई हैं । जनांकिकी संक्रमण की प्रथम अवस्था में घटिया भोजन, अविकसित सफाई व्यवस्था और प्रभावशाली चिकित्सा की सहायता के अभाव के कारण कृषि अर्थव्यवस्था की प्रथम अवस्था में मृत्युदर ऊँची होती है । इस अवस्था में व्यापक निरक्षरता परिवार नियोजन के तरीकों के विषय में ज्ञान का अभाव, छोटी आयु में विवाह , परिवार के आकार के विषय में दृढ़ सामाजिक विश्वासों और प्रथाओं तथा बच्चों के प्रति मनोभाव इत्यादि के कारण जन्मदर ऊँची होती है । जनांकिकी संक्रमण की दूसरी अवस्था में आय के स्तर में बृद्धि के परिणाम स्वरूप जनता अपने भोजन में सुधार करने के योग्य हो जाती है ।आर्थिक विकास के कारण सर्वांगीण सुधार होता है जिससे मृत्युदर कम हो जाती है , इस प्रकार द्वितीय अवस्था में जन्मदर ऊँची रहती है किन्तु मृत्युदर में तीव्र गिरावट आती है जिस कारण जनसंख्या बृद्धि की गति बढ़ जाती है । उच्च जन्मदर और घटती हुई मत्युदर के कारण द्वितीय अवस्था में परिवार का औसत

आकार बड़ा हो जाता है । तृतीय अवस्था में आर्थिक विकास के कारण अर्थव्यवस्था का स्वरूप कृषक से परिवर्तित होकर अंशतः औद्योगिक हो जाता है । औद्योगीकरण में बृद्धि के परिणामस्वरूप जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों से औद्योगिक और वाणिज्यिक केन्द्रों की ओर स्थानान्तरित होने लगती है । शहरी जनसंख्या में बृद्धि और स्त्रियों के लिए घर से बाहर आर्थिक कार्यो से विकास के परिणामस्वरूप आर्थिक गतिशीलता की सम्भावना बढ़ जाती है जिसे छोटे परिवारों के सहारे भली भाँति प्राप्त किया जा सकता है परिणामतः बड़े परिवारों की आर्थिक लाभ कारिता कम हो जाती है । इस प्रकार तृतीय अवस्था में निम्न जन्मदर, निम्न मृत्युदर, छोटा परिवार ओर जनसंख्या बृद्धि की निम्न दर यह जनसंख्या में कमी की अवस्था है ।

जब कोई अर्थव्यवस्था जनांकिकी संक्रमण की प्रथम अवस्था से द्वितीय अवस्था में प्रवेश करती है तो घटती हुई मृत्युदर किन्तु अपेक्षाकृत स्थिर जन्मदर के कारण उनमें असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है । ऐतिहासिक दृष्टि से यह देखा गया है कि मृत्युदर का नियंत्रण अपेक्षाकृत सरल है क्योंकि मृत्युदर घटाने के उपाय बाह्यजात होने के कारण जनता उन्हें तत्परता पूर्वक स्वीकार कर लेती है । किन्तु जन्मदर में कमी के लिए अन्तरजात तत्वों को परिवर्तित करना पड़ता है । इसके लिए सामाजिक मनोवृत्तियों और प्रथाओं तथा परिवार के आकार और विवाह आदि के सम्बन्ध में विश्वासों और सिद्धान्तों में परिवर्तन करना आवश्यक है । मृत्युदर में कमी की अपेक्षा इसके लिए अधिक समय अपेक्षित होता है परिणामतः जन्म दर में गिरावट विलम्ब से आती है इस लिए जनांकिकीय विकास की दूसरी अवस्था को जनसंख्या विस्फोट की अवस्था कहा गया है , विकासमान अर्थव्यवस्था के लिए यह अवस्था सर्वाधिक संकटमय होती है । अध्ययन क्षेत्र जनांकिकी संक्रमण की प्रथम अवस्था से द्वितीय अवस्था में अवस्थित है, अर्थात आय के आकार में बृद्धि के साथ जनसंख्या अपने भोजन में सुधार के लिए प्रयत्नशील है ।

1. **जनसंख्या वितरण** :

जनसंख्या वितरण के अध्ययन से किसी क्षेत्र में जनसंख्या संतुलन का बोध होता है । इस जनसंख्या वितरण को विभिन्न प्रकार के घनत्वों के माध्यम से अच्छी प्रकार वर्णित किया जा सकता है

ETAWAH DISTRICT
ARITHMATIC DENSITY
PERSONS DENSITY
475 _ 550
400 _ 450
325 _ 400
250 _ 325
BELOW-250
0
20
KM
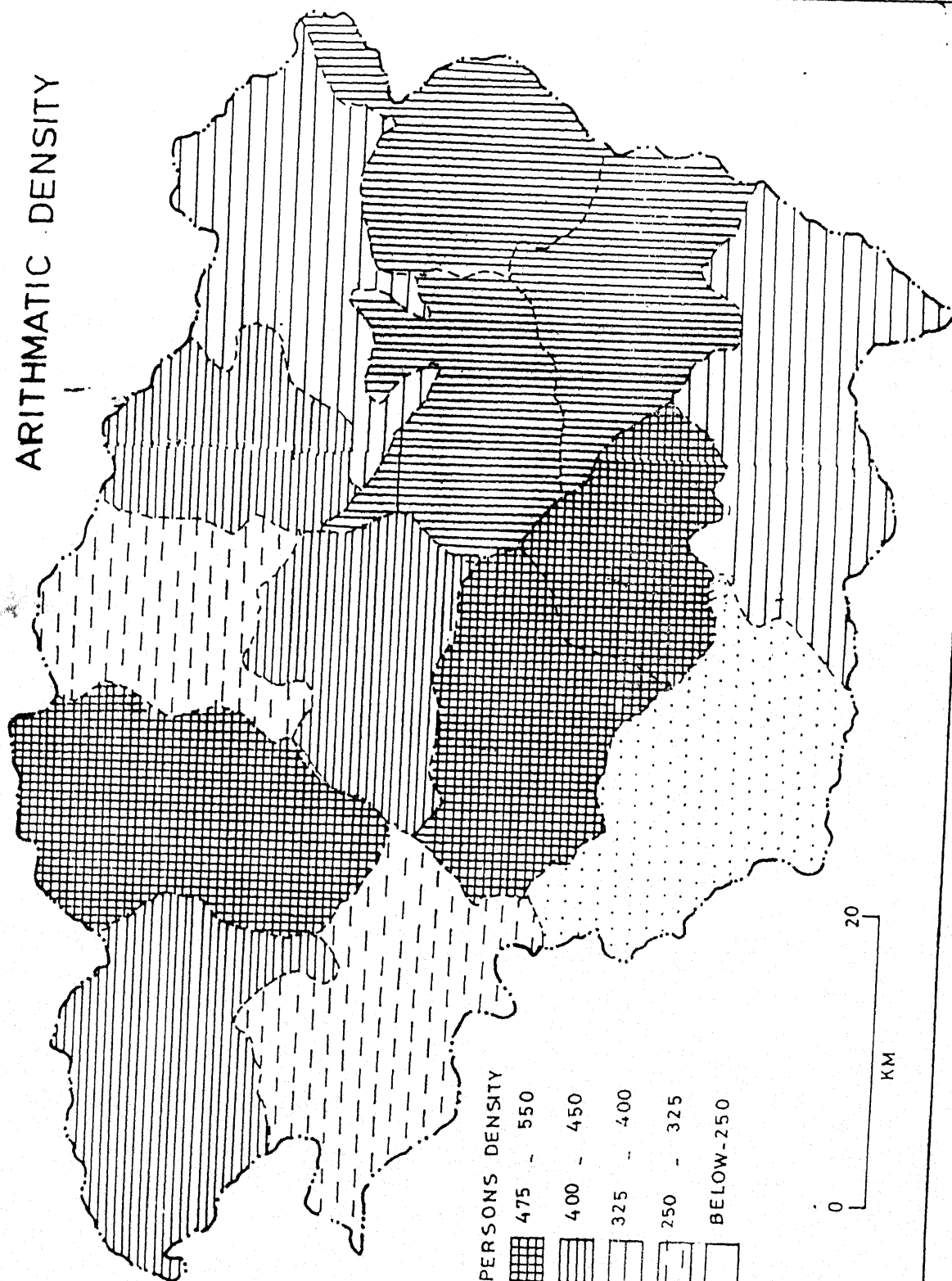
FIG.20

(अ) सामान्य घनत्व :

किसी क्षेत्र की कुल जनसंख्या में कुल क्षेत्रफल के अनुपात को सामान्य घनत्व कहा जाता है । अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड स्तर पर जनसंख्या एवं उनके सामान्य घनत्व को तालिका क्रमांक 5.5 में प्रदर्शित किया गया है –

सारिणी क्रमांक 5.5 विकासखण्ड वार जनसंख्या का सामान्य घनत्व 1991

विकास खण्ड	कुल जनसंख्या 1991	क्षेत्रफल वर्ग किलोमीटर	घनत्व प्रति वर्ग किलोमीटर	श्रेणीयन
1. जसवन्त नगर	170275	382.57	445	6
2. बढ़पुरा	109683	356.53	308	13
3. बसरेहर	185263	387.33	478	3
4. भरथना	113874	263.29	432	8
5. ताखा	102938	318.00	324	12
6. महेवा	169523	325.32	521	2
7. चकरनगर	69291	371.60	186	14
8. अछल्दा	122395	277.89	440	7
9. विधूना	123473	311.82	396	10
10. एखा कटरा	75705	224.74	426	9
11. सहार	125676	280.32	448	5
12. औरैया	157093	425.54	369	11
13. अजीतमल	117448	214.89	546	1
14. भाग्यनगर	128317	282.29	454	4
समस्त विकास खण्ड	1790954	4422.13	404	–
योग नगरीय	333701	63.58	5248	–
योग जनपद	2124655	4485.71	474	–

ETAWAH DISTRICT
PHYSIOGRAPHIC DENSITY
PERSONS PER/KM2
500 AND ABOVE
450 - 500
400 - 450
350 - 400
BELOW-350
0
20
KM.
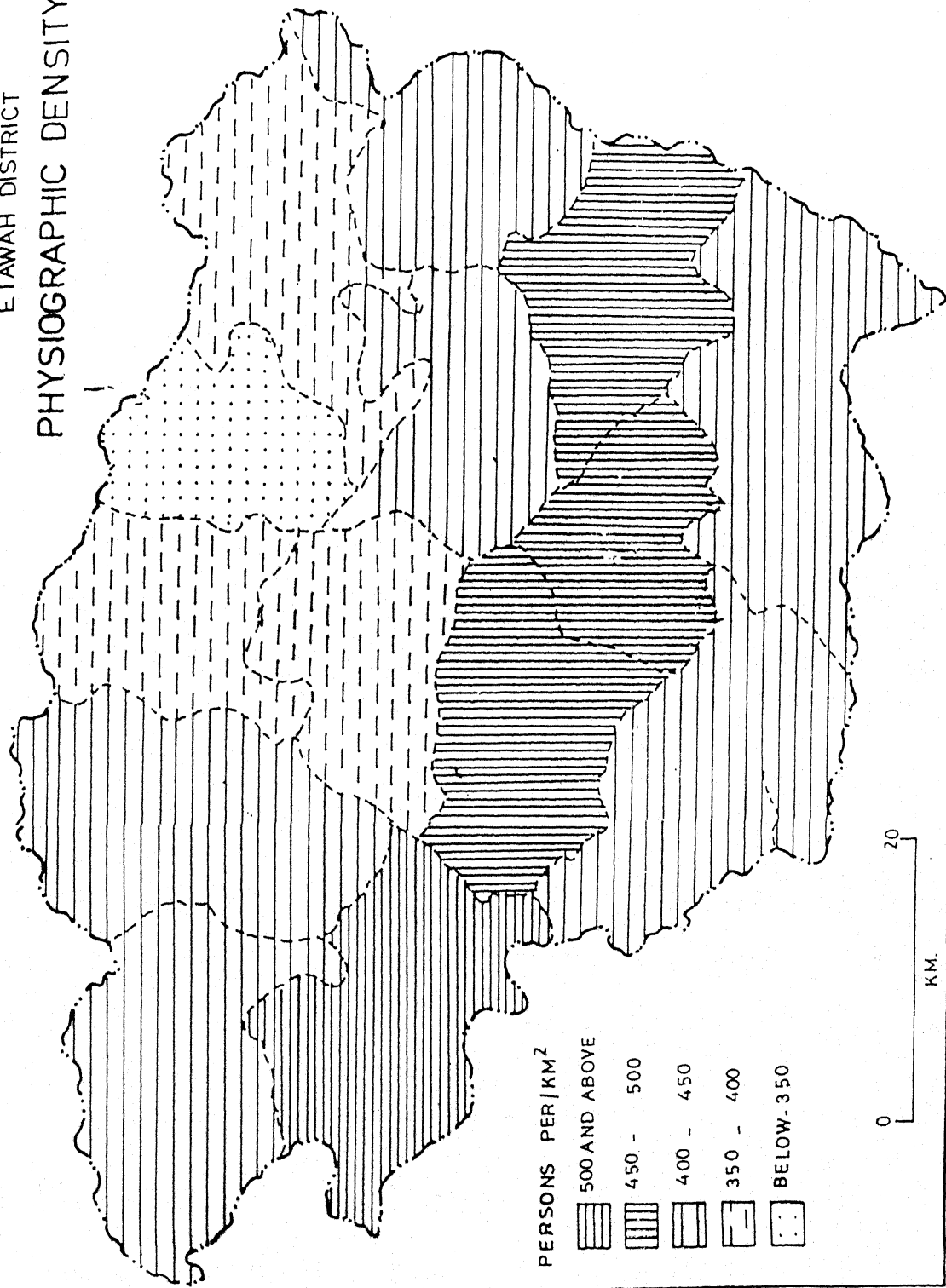
FIG-21

सारिणी क्रमांक 5.5 अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्डवार सामान्य घनत्व को प्रदर्शित कर रही है । यद्यपि जनसंख्या का सर्वाधिक घनत्व नगरीय क्षेत्र में है जो कि स्वाभाविक भी है । विकास खण्डों की स्थिति को जब इस दृष्टि से देखा जाता है तो पता चलता है कि जनसंख्या का सर्वाधिक घनत्व अजीतमल विकास खण्ड का है जहाँ पर 546 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर पर रहते हैं , दूसरे स्थान पर महेवा विकास खण्ड 521 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 आता है । यही दो विकास खण्ड है जिनका सामान्य घनत्व 500 या - उससे अधिक व्यक्ति है । वसरेहर तथा भाग्यनगर क्रमशः तृतीय एवं चतुर्थ स्थान पर है जिनमें 478 तथा 454 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 निवास करते हैं । 400 से 450 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 सामान्य घनत्व वाले विकास खण्ड सहार, जसवन्त नगर, अछल्दा , भरथना तथा एखाकटरा है जो क्रमशः 448, 445, 440, 432 तथा 426 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 रखकर इस वर्ग में आते हैं । जनसंख्या का न्यूनतम घनत्व मात्र 186 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 चकरनगर विकास खण्ड में दिखाई पड़ता है, अन्य विकास खण्ड 300 से 400 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 वाले वर्ग में आते हैं । यदि जनपदीय औसत से तुलना करें तो केवल तीन विकास खण्ड अजीतमल, महेवा तथा वसरेहर ही ऐसे विकास खण्ड हैं जो जनपदीय औसत 474 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर के स्तर को पार करते हैं अन्य विकास खण्ड जनपदीय औसत से नीचे घनत्व वाले हैं ।

(2) कायिक घनत्व :

किसी क्षेत्र की कुल कृषित भूमि एवं उस क्षेत्र की कुल जनसंख्या के अनुपात को कायिक घनत्व कहा जाता है । विकास खण्ड स्तर पर कायिक घनत्व को सारिणी क्रमांक 5.6 में दर्शाया गया है ।

सारिणी क्रमांक 5.6 विकास खण्ड कायिक घनत्व वर्ष 1991

विकास खण्ड	जनसंख्या	कृषित भूमि (हेक्टेयर)	घनत्व प्रति (हेक्टेयर)	घनत्व प्रति वर्ग कि0मी0	श्रेणीयन
1	2	3	4	5	6
1. जसवन्त नगर	170275	41863	4.07	407	9
2. बढ़पुरा	109683	21368	5.13	513	1
3. वसरेहर	185263	45921	4.03	403	10

1	2	3	4	5	6
4. भरथना	113874	29279	3.89	389	12
5. ताखा	102938	28155	3.66	366	13
6. महेवा	169523	36511	4.64	464	4
7. चकरनगर	69291	16961	4.09	409	8
8. अछल्दा	122395	28557	4.29	429	5
9. विधूना	123473	30930	3.99	399	11
10. एखा कटरा	75705	24504	3.09	309	14
11. सहार	125676	30334	4.14	414	6
12. औरैया	157093	38252	4.11	411	7
13. अजीतमल	117448	24834	4.73	473	2
14. भाग्यनगर	128317	27341	4.69	469	3
समस्त विकास खण्ड	1790954	424810	4.22	422	–
समस्त नगरीय	333701	527	633.21	63321	–
योग जनपद	2124655	425337	4.99	499	–

स्रोत– सांख्यिकीय पत्रिका जनपद इटावा 1992

सारिणी क्रमांक 5.6 अध्ययन क्षेत्र में कायिक घनत्व का विकास खण्डवार चित्र प्रस्तुत कर रही है । अध्ययन क्षेत्र का औसत कायिक घनतव 4.99 व्यक्ति प्रति हेक्टेयर पर या 499 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर कृषित क्षेत्र में हैं । विकास खण्ड स्तर पर इसमें पर्याप्त भिन्नता दिखाई पड़ती है । सर्वाधिक कायिक घनत्व बढ़पुरा विकास खण्ड में दिखाई पड़ती है जिसमें कृषित भूमि पर 513 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर के औसत से निवास कर रहे हैं जबकि न्यूनतम कायिक घनत्व एखा कटरा विकास खण्ड में दृष्टिगोचर हो रहा है जिसमें 309 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर रह रहे हैं । सारिणी से यह तथ्य भी स्पष्ट

ETAWAH DISTRICT
AGRICULTURAL DENSITY -1991
AGRICULTURAL DENSITY
110 - 115
105 - 110
100 - 105
95 - 100
BELOW - 95
0
20
KM
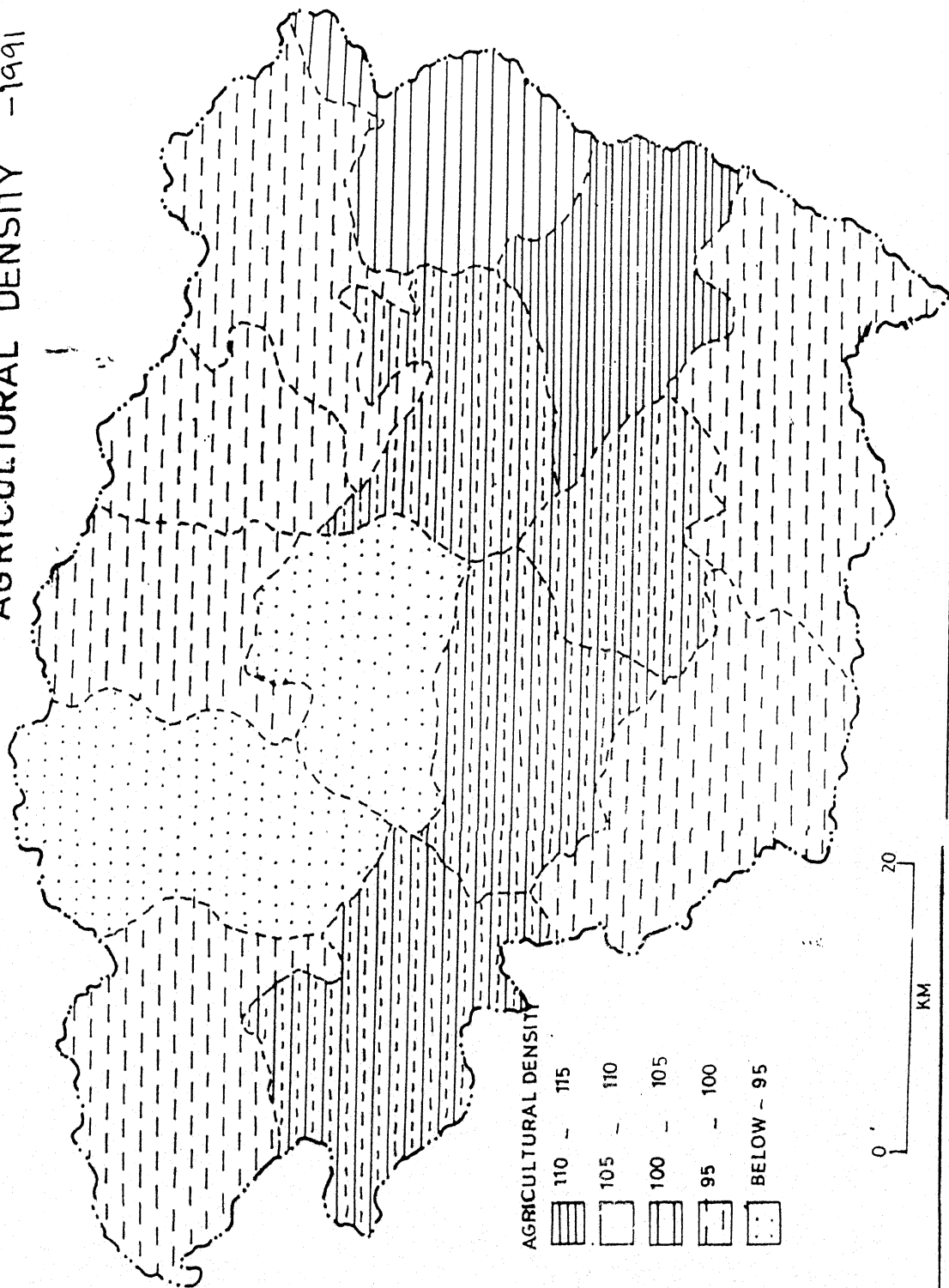
FIG.22

हो रहा है कि केवल बढ़पुरा विकास खण्ड ही 500 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 या इससे अधिक स्तर को पार कर रहा है जबकि 400 तथा 500 के मध्य कायिक घनत्व वाले विकास खण्ड अजीतमल 473 , भाग्यनगर 469, महेवा 464, अछल्दा 429, सहार 414, औरैया 411, चकरनगर 409, जसवन्त नगर 407 तथा वसरेहर 403 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 है । अन्य चार विकास खण्ड विधूना 399, भरथना 389, ताखा 366 तथा एखा कटरा 309 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 कायिक घनत्व रखते हैं । इस प्रकार यदि कायिक घनत्व के दृष्टिकोण से अध्ययन क्षेत्र पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होता है कि अध्ययन क्षेत्र में अभी कायिक घनत्व का स्तर अधिक उच्च नहीं है, सभी विकास खण्डों में मध्यम कायिक घनत्व देखा जा रहा है, केवल बढ़पुरा विकास खण्ड को छोड़कर क्योंकि यह विकास खण्ड कायिक घनत्व के उच्च स्तर की ओर बढ़ रहा है ।

(3) कृषि घनत्व :

अनुपात को कृषि घनत्व कहा जाता है इससे कृषि भूमि पर जनसंख्या के

किसी क्षेत्र में कृषि भूमि एवं कृषि कार्य में लगी हुई जनसंख्या के भार का आभास मिलता है, जिससे ग्रामीण विकास तथा नियोजन में सहायता मिलती है । अध्ययन क्षेत्र में कृषि घनत्व के वितरण को सारिणी क्रमांक 5.7 में दर्शाया गया है ।

सारिणी क्रमांक 5.7 विकास खण्डवार कृषि घनत्व का वितरण 1991

विकास खण्ड	कृषि गत जनसंख्या	कृषि गत क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	घनत्व प्रति हेक्टेयर	घनत्व प्रति वर्ग किलोमीटर	श्रेणीयन
1	2	3	4	5	6
1. जसवन्त नगर	40528	41863	0.97	97	11
2. बढ़पुरा	23515	21368	1.10	110	2.5
3. वसरेहर	41237	45921	0.90	90	14
4. भरथना	27644	29279	0.94	94	13
5. ताखा	27895	28155	0.99	99	8
6. महेवा	39470	36511	1.08	108	5

1	2	3	4	5	6
7. चकर नगर	16463	16961	0.97	97	11
8. अछल्दा	31177	28557	1.09	109	4
9. विधूना	30836	30930	1.00	100	7
10. एखा कटरा	24101	24504	0.98	98	9
11. सहार	31914	30334	1.05	105	6
12. औरैया	37088	38252	0.97	97	11
13. अजीतमल	27422	24834	1.10	110	2.5
14. भाग्यनगर	31018	27341	1.13	113	1
समस्त विकास खण्ड	430398	424810	1.01	101	-
नगरीय	16918	527	32.10	3,210	
योग जनपद	447316	425337	1.05	105	

सारिणी क्रमांक 5.7 अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड स्तर पर कृषि घनत्व को प्रदर्शित कर रही है । सारिणी से ज्ञात होता है कि सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र का कृषि घनत्व समस्त विकास खण्डों में 90 से लेकर 113 के मध्य अवस्थित है जहाँ सर्वाधिक कृषि घनत्व 1.13 व्यक्ति प्रति हेक्टेयर भाग्यनगर विकास खण्ड का है वही न्यूनतम कृषि घनत्व 0.90 व्यक्ति प्रति हेक्टेयर वसरेहर विकास खण्ड का है । 1.10 व्यक्ति प्रति हेक्टेयर बढ़पुरा तथा अजीतमल विकास खण्ड का एक समान है , कृषि घनत्व के दृष्टिकोण से ये दोनों एक समान जनभार का वहन कर रहे हैं । चौथे, पाँचवें छठवें तथ सातवें स्थान पर क्रमशः अछल्दा 109, महेवा 108, सहार 105 तथा विधूना 100 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर कृषि घनत्व रख रहे

हैं , शेष विकास खण्ड 90 से 99 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर कृषि घनत्व वाले हैं । सारिणी में यह तथ्य भी स्पष्ट हो रहा है कि समस्त विकास खण्डों में से ठीक आधे अर्थात सात विकास खण्ड 100 या इससे अधिक व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर स्तर वाले हैं शेष आधे विकास खण्ड अर्थात सात ही विकास खण्ड 100 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 स्तर से कम कृषि घनत्व वाले हैं । यदि हम जनपदीय औसत से तुलना करें तो जनपदीय औसत स्तर से अधिक कृषि घनत्व वाले विकास खण्ड केवल छः विकास खण्ड हैं जबकि जनपदीय स्तर से कम कृषि घनत्व वाले आठ विकास खण्ड हैं । सहार विकासखण्ड जनपदीय कृषि घनत्व स्तर 105 व्यक्ति प्रति वर्ग कि0मी0 के ठीक बराबर हैं ।

(4) विभिन्न घनत्वों का तुलनात्मक विवेचना :—

सामान्य घनत्व , कायिक घनत्व तथा कृषि घनत्व के क्षेत्रीय वितरण के तुलनात्मक अध्ययन को सारिणी क्रमांक 5.8 में दर्शाया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 5.8 विकास खण्डवार जनसंख्या घनत्वों का तुलनात्मक वितरण ।

विकास खण्ड	घनत्व प्रति वर्ग किलोमीटर						स्तरीय मानों का योग	औसत स्तरीय मान	कोटिक्रम
	सामान्य घनत्व	स्तरीय मान	कायिक घनत्व	स्तरीय मान	कृषि घनत्व	स्तरीय मान			
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
1. जसवन्त नगर	445	6	407	9	97	11	26	8.67	7
2. बढ़पुरा	308	13	513	1	110	2.5	16.5	5.5	5
3. बसरेहर	478	3	403	10	90	14	27	9.0	8
4. भरथना	432	8	389	12	94	13	33	11.0	13
5. ताखा	324	12	366	13	99	8	33	11.0	13
6. महेवा	521	2	464	4	108	5	11	3.67	3
7. चकरनगर	186	14	409	8	97	11	33	11.0	13
8. अछल्दा	440	7	429	5	109	4	16	5.33	4
9. विधूना	396	10	399	11	100	7	28	9.33	9
10. एखाकटरा	426	9	309	14	98	9	32	10.67	11
11. सहार	448	5	414	6	105	6	17	5.67	6

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
12.औरैया	369	11	411	7	97	11	29	9.67	10
13.अजीतमल	546	1	473	2	110	2.5	5.5	1.83	1
14.भाग्यनगर	454	4	469	3	113	1	8	2.67	2

सारिणी क्रमांक 5.8 में अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि पर जनसंख्या भार के वितरण को सामान्य घनत्व कायिक घनत्व तथा कृषि घनत्व की गणना करके तीनों का ही तुलनात्मक विवरण दिया गया है । सारिणी देखने से स्पष्ट होता है कि इन घनत्वों के क्षेत्रीय प्रतिरूपों में अर्न्तसम्बन्ध होता है । इनके समायोजन से अध्ययन क्षेत्र को तीन घनत्व कोटियों के अन्तर्गत रखा जा सकता है ।

(अ) उच्च घनत्व :

इसके अर्न्तगत अजीतमल, भाग्यनगर, महेवा, अछल्दा , बढ़पुरा तथा सहार विकास खण्ड आते हैं । ये सभी विकास खण्ड अधिकतम जनसंख्या के सर्वाधिक पोषक हैं । इनमें उपजाऊ बहुसस्थीय भूमि तथा मुद्रादायिनी फसलों की बहुलता है । सिंचाई के साधनों की उपलब्धता, नवीन कृषि पद्धतियों के प्रयोग तथा यातायात के साधनों के विकास के कारण इन विकास खण्डों में अधिक जनसंख्या का पोषण हो रहा है ।

(ब) मध्यम घनत्व :

इसके अन्तर्गत जसवन्तनगर, वसरेहर, विधूना तथा औरैया विकास खण्ड आते हैं । इनमें कृषि सम्बन्धी लगभग सभी सुविधाएं सुलभ है परन्तु जसवन्त नगर और वसरेहर विकास खण्डों में सिंचाई के साधनों में सर्वाधिक राजकीय नहरों द्वारा सिंचाई की जाती है जिनमें काभी–कभी आवश्यकता के समय पर्याप्त मात्रा में जल उपलब्ध न हो पाने के कारण फसलों की पैदावार घट जाती है जबकि विधूना तथा औरैया विकास खण्डों में यातायात के साधनों का पर्याप्त विकास न हो पाने के कारण जनसंख्या का घनत्व मध्यम श्रेणी का पाया जाता है ।

(स) <u>न्यून घनत्व</u> :

इसके अन्तर्गत एखाकटरा, भरथना, ताखा तथा चकरनगर विकास खण्ड आते हैं । इनमें चकरनगर विकास खण्ड यमुना और चम्बल नदियों के किनारे स्थित है जिसमें वर्षाकाल में प्रति वर्ष बाढ़ का प्रकोप रहता है जिससे खरीफ की लगभग आधे से अधिक फसलें बाढ़ की चपेट में आ जाने के कारण लगभग नष्ट हो जाती है, जहाँ बाढ़ के कारण केवल रबी की फसलें ही भली प्रकार हो पाती है , कभी–कभी असमय वर्षा से रबी की फसलों को भी नुकशान पहुँचता है । यहाँ सिंचाई के साधनों का भी अभाव है । यातायात तथा आर्थिक साधन भी बहुत कम विकसित हैं । भर्थना, ताखा तथा एखाकटरा विकास खण्डों में भी यातायात के साधनों का अपर्याप्त विकास हो सका है जिससे कृषि कार्यो में नवीन पद्धतियों के प्रयोग में कठिनाई होती है । इसीलिए इन विकास खण्डों में जनसंख्या का वितरण कुछ विरल है जिससे घनत्व न्यून है ।

2. <u>अध्ययन क्षेत्र में पशुधन</u> :

भारतीय कृषि तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था में पशुधन का महत्वपूर्ण स्थान है । भारतीय कृषि अतीतकाल से ही पशुश्रम पर आधारित रही है । आज भी कृषि कार्यो में अभिनव परिवर्तनों के वावजूद भी पशुधन के महत्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है । जब कभी इनकी संख्या में ह्रास हुआ है, कृषिगत अर्थव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ा है । यद्यपि भारतीय कृषक पशुपालन करने में असमर्थ है क्योकि यहाँ पर जनसंख्या के अधिक भार के कारण खाद्यान्न उत्पन्न करना अधिक लाभप्रद समझा जाता है । फलस्वरूप अत्यधिक जनसंख्या भार के कारण पशु पालन अर्थव्यवस्था आर्थिक दृष्टि से सम्भव नहीं है, इस लिए यहाँ पर सामान्यतः हल जोतने के लिए ही पशुओं को पाला जाता है । अध्ययन क्षेत्र में कृषि कार्य हेतु पशु श्रम का विशेष महत्व है । इन्हीं पशुओं से दूध, माँस, खाद तथा अण्डे आदि सुलभ होते हैं । चयनकृत गावों का सर्वेक्षण करने से यह विदित हुआ है कि ट्रैक्टर रखने वाले कृषक भी बैल एवं अन्य पशुओं को पालते हैं, यहाँ तक कि कृषकों की सम्पन्नता के मापन में पशुधन को भी एक आधार माना जाता है । इस कारण भूमि पर जनसंख्या की उदरपूर्ति का ही भार नहीं है बल्कि उपलब्ध पशुधन के पोषण का भी भार पड़ता है ।

अध्ययन क्षेत्र में पशुओं के वितरण को तालिका क्रमांक 5.9 में दर्शाया गया है –

तालिका क्रमांक 5.9 विकास खण्डवार पशुओं का वितरण (क्षेत्रीय प्रतिशत में) ।

विकास खण्ड	कुल गोवंशीय	कुल महिष जातियां	कुल भेंड़	कुल बकरे बकरियां	सुअर	अन्य पशु	कुल पशु	कुल कुक्कुट
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1. जसवन्त नगर	9.70	11.28	4.80	10.53	7.40	4.33	10.34	7.83
2. बढ़पुरा	8.14	2.44	5.63	4.74	1.64	6.54	4.72	1.29
3. वसरेहर	7.41	8.18	2.67	5.76	6.16	5.92	7.03	7.02
4. भरथना	7.34	8.07	3.27	6.58	6.48	5.25	7.24	6.75
5. ताखा	5.42	6.75	9.11	4.38	4.80	6.25	5.66	5.60
6. महेवा	8.65	11.22	11.25	11.17	10.15	4.64	10.47	7.91
7. चकरनगर	7.26	3.20	11.21	6.27	2.77	6.09	5.41	0.84
8. अछल्दा	8.75	7.62	6.67	6.76	8.64	5.19	7.64	8.72
9. विधूना	5.17	6.64	10.44	5.77	6.82	6.97	6.07	14.08
10. एखाकटरा	4.43	5.79	5.02	4.92	5.43	6.72	5.14	8.52
11. सहार	5.36	6.57	8.55	6.43	10.40	5.41	6.36	6.80
12. औरैया	9.39	6.72	11.96	9.39	8.29	6.01	8.41	8.26
13. अजीतमल	5.42	6.73	4.43	5.88	4.66	5.56	6.01	4.76
14. भाग्यनगर	5.61	6.16	4.80	6.34	5.54	13.19	6.06	5.99
योग ग्रामीण	98.05	97.38	99.81	94.92	89.18	88.09	96.56	94.37
योग नगरीय	01.95	2.62	0.19	5.08	10.82	11.91	3.44	5.63
योग जनपद	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00	100.00

सारिणी 5.9 विकास खण्ड स्तर पर सभी प्रकार के पशुधन के वितरण काचित्र प्रस्तुत कर रही है । विकास खण्ड स्तर पर सर्वाधिक पशुओं की संख्या 114544 विकास खण्ड महेवा में पाई जा रही है जो जनपद के कुल पशु धन का 10.47 प्रतिशत है, इसके बाद दूसरा स्थान विकास खण्ड जसवन्त नगर का है जो अपने यहाँ 113134 पशुओं के भार को वहन करते हुए सम्पूर्ण जनपद में 10.34 प्रतिशत की हिस्सेदारी कर रहा है , औरैया विकास खण्ड 8.41 प्रतिशत भागेदारी करके तृतीय स्थान पर स्थित है । 7 प्रतिशत से 8 प्रतिशत तक हिस्सेदारी करने वाले विकास खण्ड अछल्दा 7.64 प्रतिशत, भरथना 7.24 प्रतिशत तथं वसरेहर 7.03 प्रतिशत है । पशुधन के दृष्टिकोण से बढ़पुरा विकास खण्ड न्यूनतम हिस्सेदारी 4.72 प्रतिशत रख रहा है । अन्य विकास खण्ड 5 प्रतिशत से 7 प्रतिशत के मध्य अपनी भागेदारी प्रदर्शित कर रहे हैं ।

(अ) गोवंशीय पशु :

गोवंशीय पशुओं का ग्रामीण क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान है इनसे न केवल हमें पौष्टिक पदार्थ "दूध" की प्राप्ति होती है अपितु कृषि कार्यो को संचालित करने के लिए पशु श्रम शक्ति भी प्राप्त होती है । अध्ययन क्षेत्र में गोपशुओं की संख्या कुल पशुओं की संख्या का 26.19 प्रतिशत है । विकास खण्ड स्तर पर गोपशुओं की सर्वाधिक संख्या 27715 जसवंतनगर विकास खण्ड में पाई जाती है जो जनपद में गोवंशीय पशुओं की कुल संख्या का 9.70 प्रतिशत हिस्सेदारी करके प्रथम स्थान पर है जबकि दूसरा स्थान इस दृष्टि से औरैया विकासखण्ड प्राप्त कर रहा है जिसकी हिस्सेदारी 9.39 प्रतिशत तथा संख्या 26836 है । विकास खण्ड अछल्दा भी 8.75 प्रतिशत भागेदारी रखकर तृतीय स्थान पर स्थित है । इस दृष्टि से एखाकटरा विकास खण्ड कुल 12655 गोवंशीय पशुओं का अपने यहाँ निर्वाह करते हुए वरीयता क्रम में न्यूनतम स्थिति को दर्शा रहा है । जिसकी भागेदारी 4.43 प्रतिशत ही है । अन्य विकास खण्ड 5 से 6 प्रतिशत तथा 7 प्रतिशत तक हिस्सेदारी करके न्यूनाधिक बहुत असमान स्थिति में नहीं है ।

(ब) महिष वंशीय :

अध्ययन क्षेत्र में महिष वंशीय पशुओं की संख्या कुल पशुओं की संख्या का 36.96 प्रतिशत उपलब्ध है जिनमें से 11.69 प्रतिशत नर पशु कृषि कार्य योग्य है जबकि 12.59 प्रतिशत मादा पशु पाये जाते

हैं, शेष 12.68 प्रतिशत 3 वर्ष से कम के पड़वा पड़िया हैं । महिष वंशीय पशुओं की संख्या सर्वाधिक 45626 विकास खण्ड जसवन्तनगर में विद्यमान है जो क्षेत्रीय भागेदारी में 11.28 प्रतिशत है जबकि दूसरा स्थान महेवा विकास खण्ड प्राप्त कर रहा है जिसकी हिस्सेदारी 11.22 प्रतिशत तथा कुल संख्या 45371 है । इस दृष्टि से सबसे कम संख्या बढ़पुरा विकास खण्ड में है जिसकी क्षेत्रीय भागेदारी मात्र 2.44 प्रतिशत तथा संख्या 9881 है । अन्य विकास खण्ड 6 प्रतिशत से अधिक भागेदारी कर रहे हैं केवल एखाकटरा 5.79 प्रतिशत तथं चकरनगर 3.20 प्रतिशत की भागेदारी को छोड़कर जो 6 प्रतिशत से कम भागेदारी प्रदर्शित कर रहे हैं ।

(स) भेंडें :

अध्ययन क्षेत्र में भेड़ों का पालन मुख्य रूप से गड़रिया (पाल) जाति के लोगों द्वारा किया जाता है । इस जाति के अधिकांश लोगों के पास कृषि भूमि की कमी के कारण अपने अतिरिक्त पारिवारिक श्रम को भेंड़ पालन के कार्य में समायोजित किया जाता है । भेंड़ पालन से एक ओर तो वालों के रेशे विक्रय करके आर्थिक लाभ प्राप्त किया जाता है , दूसरी ओर भेड़ो को क्रय विक्रय करके लार्भाजन किया जाता है । क्षेत्र में भेड़ों का माँस लगभग न के बराबर सेवन किया जाता है । इस दृष्टि से देखें तो कुल पशुओं में भेड़ों की केवल 2.27 प्रतिशत भागेदारी है । विकास खण्ड स्तर पर भेंड़ पालन की दृष्टि से औरैया विकास खण्ड सबसे अच्छी स्थिति में है जो संख्या की दृष्टि से 2965 भेंड़ों का पालन करके 11.96 प्रतिशत हिस्सेदारी कर रहा है । 11 प्रतिशत से अधिक भागेदारी रखने वाले विकास खण्डों में महेवा 11.25 प्रतिशत तथा चकरनगर 11.21 प्रतिशत हिस्सा रखकर लगभग एक समान स्थिति में रहते हुए भी द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त कर रहे हैं । इस दृष्टि से वसरेहर विकास खण्ड मात्र 2.67 प्रतिशत भागेदारी करके न्यूनतम स्थिति को दर्शा रहा है । अन्य विकास खण्ड 4 से 11 प्रतिशत के मध्य की स्थिति में अवस्थित है केवल भरथना विकास खण्ड को छोड़कर जो 3.27 प्रतिशत क्षेत्रीय भागेदारी करके , वसरेहर विकास खण्ड से थोड़ी अच्छी स्थिति का प्रदर्शन कर रहा है ।

(द) बकरा एवं बकरियाँ :

इस समुदाय के पशु सामान्यतः निर्धन एवं भूमिहीन लोगों के मुख्य पशु हैं , इनको गरीबों की गाय" भी कहा जाता है । इनका पालन दूध एवं माँस उपलब्धता, दोनों ही उद्देश्यों को लेकर किया जाता है । बकरियों के दूध तथा बकरों के माँस सेवन का अध्ययन क्षेत्र में प्रचलन है । अध्ययन क्षेत्र में इस वर्ग के पशुओं की उपलब्धता कुल पशुओं की 31.36 प्रतिशत है । विकास खण्ड स्तर पर देखे तो महेवा विकास खण्ड

क्षेत्रीय वितरण में 11.17 प्रतिशत इस वर्ग के पशुओं का पालन करके सबसे अच्छी स्थिति में है, जबकि जसवन्त नगर 10.53 प्रतिशत भागेदारी करके द्वितीय स्थान पर स्थित है । इस वर्ग के पाशुओं के पालने की दृष्टि से चकर नगर तथा बढ़पुरा विकास खण्ड की भौगोलिक परिस्थितियां अनुकूल है परन्तु ये दोनों ही विकास खण्ड क्रमशः 6.27 प्रतिशत तथा 4.74 प्रतिशत भागेदारी करके क्षेत्रीय वरीयता क्रम में आठवां तथा बारहवां स्थान प्राप्त कर रहे हैं । अन्य विकास खण्ड भी न्यूनाधिक एक समान स्थिति में है । ताखा विकास खण्ड 4.38 प्रतिशत बकरे बकरियों का पालन करके वरीयता क्रम में चौदहवें और अन्तिम स्थान पर स्थित है ।

(य) सुअर :

अध्ययन क्षेत्र में सुअरों का पालन सामान्यतया मेहतर जाति के लोगों द्वारा किया जाता, इस जाति के लोग सुअर का मांस भी सेवन करते हैं । अध्ययन क्षेत्र में इस जाति के पशुओं की उपलब्धता 2.73 प्रतिशत है । विकास खण्ड स्तर पर वितरण की दृष्टि से इस जाति के पशुओं का सर्वाधिक प्रतिशत सहार विकास खण्ड 10.40 प्रतिशत है । महेवा विकास खण्ड इससे कुछ कम 10.15 प्रतिशत रखकर द्वितीय स्थान प्राप्त कर रहा है । बढ़पुरा विकास खण्ड 1.64 प्रतिशत हिस्सेदारी करके समस्त विकास खण्डों में न्यूनतम उपलब्धता को दर्शा रहा है । चकरनगर विकास खण्ड इससे कुछ अच्छी स्थिति 2.77 प्रतिशत दर्शा रहा है । अन्य विकास खण्डों की स्थिति न्यूनाधिक 4 से 9 प्रतिशत के मध्य में है ।

(र) कुक्कुट :

अध्ययन क्षेत्र में कुक्कुट पालन का व्यवसायिक दृष्टि से मल्हौसी मुर्गी फार्म में किया जाता है । जो कि विधूना विकास खण्ड में स्थिति है जहाँ पर 4 से 6 हजार के मध्य अण्डों का प्रतिदिन उत्पादन प्राप्त होता है । अन्य विकास खण्डों में भी कुछ छोटे आकार के मुर्गी फार्म कार्यरत हैं , परन्तु छोटे पैमाने पर किए जाने वाले उत्पादन का क्षेत्रीय उपभोग किया जाता है । अध्ययन क्षेत्र में कुक्कुटों की कुल संख्या 60413 है । जिनमें से 59830 देशी किस्म के मुर्गे मुर्गियाँ तथा चूजे हैं और मात्र 583 कुक्कुट उन्नतिशील किस्म के हैं, यह संख्या इस तथ्य को दर्शा रही है कि व्यवसायिक दृष्टि से उन्नत किस्म के मुर्गी फार्मो का सरकार के तमाम प्रयासों के बाद भी अभी नितान्त अभाव सा है । जबकि अण्डों का सेवन न तो मांसाहार में आता है और न शाकाहारी कहलाता है परन्तु पौष्टिकता के दृष्टिकोण से सन्तुलित खुराक में अण्डों का सेवन अत्यन्त ही लाभाकारी होता है ।

:

अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्डवार इसका वितरण देखे तो विधूना विकास खण्ड 14.08 प्रतिशत हिस्सेदारी करके क्षेत्रीय वितरण में सर्वोपरि स्थान रखता है जबकि अन्य विकास खण्ड 9 प्रतिशत से कम की भागेदारी प्रदर्शित कर रहे हैं । इस वर्ग के पक्षियों की उपलब्धता की दृष्टि से चकरनगर विकास खण्ड सर्वाधिक असहाय स्थिति में प्रतीत होता है क्योकि यहाँ पर मात्र 505 या 0.84 प्रतिशत ही अभी तक कुक्कुटों की उपलब्धता हो सकी है, बढ़पुरा विकास खण्ड भी इससे कुछ ही अच्छी स्थिति 1.29 प्रतिशत का प्रदर्शन कर रहा है। इस प्रकार कुक्कुट पालन की दृष्टि से 8 से 9 प्रतिशत के मध्य क्षेत्रीय भागेदारी करने वाले विकास खण्ड अछल्दा 8.72 प्रतिशत, एखा कटरा 8.52 प्रतिशत तथा औरैया 8.26 प्रतिशत है । जबकि 7 से 8 प्रतिशत के मध्य महेवा 7.91 प्रतिशत, जसवन्तनगर 7.83 प्रतिशत तथा वसरहर 7.02 प्रतिशत स्थित हैं । भरथना 6.75 प्रतिशत तथा सहार 6.80 प्रतिशत की भागेदारी करके सामान्य प्रदर्शन कर रहे हैं । अन्य विकास खण्ड 6 प्रतिशत से कम हिस्सेदारी कर रहे हैं ।

(र) डेयरी उद्योग :

अध्ययन क्षेत्र में दुग्ध उत्पादन उद्योग का विकास आधुनिक पद्धति पर अभी तक सम्भव नहीं हो सका है जबकि सन्तुलित भोजन के लिए दुग्ध तथा दूध से बने पदार्थो की भी आवश्यकता होती है क्योकि दूध से वे सभी तत्व आवश्यक मात्रा में प्राप्त हो जाते हैं जिनकी मनुष्य को स्वस्थ्य रहने के लिये आवश्यकता होती हैं । परन्तु दुर्भाग्य से सरकारी प्रयासों के बावजूद भी इस क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलता अभी तक प्राप्त नहीं हो सकी है । हमारे यहाँ का अभी भी दूध का औसत उत्पादन अत्यन्त कम है । न्यूजीलैण्ड तथा आस्ट्रेलिया में गायों का प्रतिदिन औसत दुग्ध उत्पादन देखते हुये भारतीय तथा अध्ययन क्षेत्र की गायों को "टी कप काऊज" ही कहा जा सकता है । इसका कारण मुख्य रूप से जनसंख्या के अधिक भार से कृषि कार्य से बची हुई निकृष्ट भूमि पर ही पशुचारण व्यवस्था सम्भव है जिससे एक तो पशुचारण भूमि पर पशुओं का भार अत्याधिक है साथ ही निकृष्ट भूमि पर उचित चारे का भी उत्पादन सम्भव नहीं है जिस कारण पशुओं की नस्ल सुधार के प्रयास निरर्थक सिद्ध हो रहे हैं । इसके अतिरिक्त पशु पालक प्रायः अशिक्षित एवं निर्धन होते हैं इन्हें पशु पालन के वैज्ञानिक ढंगों का कुछ भी ज्ञान नहीं होता है । क्षेत्र में नर सांड़ घटिया किस्म के मिलते हैं जिससे इनकी संतति भी घटिया किस्म की होती है । कृत्रिम गर्भादान केन्द्रों का अभाव भी नस्लसुधार कार्यक्रम को सफल नहीं होने दे रहा है । पशुओं का रहन सहन अत्यन्त निम्न स्तरीय होता है जिसके कारण पशु अनेक रोगों का शिकार हो जाते हैं । परिणाम स्वरूप उनकी दुग्ध उत्पादन क्षमता अत्यन्त कम हो जाती है ।

व्यक्तिगत स्तर पर कुछ प्रगतिशील कृषक अच्छी नस्ल की दुधारु गायों तथा भैंसों को पालते हैं, परन्तु ऐसे कृषकों का सकेन्द्रण नगरीय क्षेत्रों के आस पास ही अधिक होता है । इस क्षेत्र में कुछ आधार भूत सुविधाएं उपलब्ध कराकर दुग्ध उद्योग का विकास किया जा सकता है । आधारभूत सुविधाओं में कृषकों को पशु पालन का ज्ञान एवं प्रशिक्षण, उत्तम आहार तथा चिकित्सा सुविधा, दुग्ध तथा दूध से बने पदार्थो का उचित मूल्य आदि प्रमुख हैं ।

5.4 खाद्यान्न उत्पादन एवं जनसंख्या सन्तुलन :

मानवीय संसाधन आर्थिक कियाओं के साधन एवं लक्ष्य दोनों हैं । साधन के रूप में मानवीय संसाधन श्रम शक्ति एवं उद्यमियों की सेवायें प्रदान करते हैं जिनकी सहायता से उत्पत्ति के अन्य साधनों का उपभोग सम्भव हो पाता है । मानवीय संसाधनों की इस भूमिका पर देश में कुल उत्पादन का स्तर निर्भर करता है । इसके दूसरी ओर अर्थव्यवस्था में जितनी भी विकासात्मक क्रियाएं सम्पन्न की जाती हैं इनका उद्देश्य मानव समुदाय को जीवन की अच्छी सुविधाएं प्रदानकरना होता है । उपभोग की इकाई के रूप में मानवीय संसाधन देश के कुल उत्पादन का उपभोग करते हैं । इस प्रकार मानवीय संसाधनों की दोहरी भूमिका होती है (क) साधन सेवाओं के रूप में (ख) उपभोग की इकाईयों के रूप में ।

(क) साधन सेवाओं के रूप में मानवीय संसाधन :

साधन सेवाओं के रूप में मानवीय संसाधन श्रम तथा उद्यमी की सेवायें प्रदान करते हैं । किस सीमा तक मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन करता है इस पर आर्थिक विकास का स्तर निर्भर करता है । यदि मानवीय संसाधन उत्कृष्ट कोटि के हैं, तो आर्थिक विकास की गति तेज हो जाती है । अतएव आर्थिक विकास की दर से निर्धारण में मानवीय संसाधनों की गुणात्मक श्रेष्ठता का महत्वपूर्ण स्थान होता है । इस लिए वे सभी क्रियाएं जो मानवीय संसाधनों के कौशल को बढ़ाने में सहायक होती है ,उत्पादक क्रियायें कहलाती हैं । इस बात की आवश्यकता है कि मानवीय पूँजी के निर्माण हेतु निवेश की विभिन्न योजनाएं प्रारम्भ की जानी चाहिए । भौतिक पूँजी निर्माण और मानवीय पूँजी निर्माण सम्मिलित रूप से आर्थिक विकास की गति को तीव्रता प्रदान करते हैं ।

(ख) उपभोग इकाइयों के रूप में मानवीय संसाधन :

उपभोग इकाई के रूप में मानवीय संसाधन राष्ट्रीय उत्पाद के लिए मांग का सृजन करते हैं । यदि मनुष्यों की संख्या राष्ट्रीय उत्पादन की तुलना में अधिक है तो जनसंख्या सम्बन्धी अनेक समस्यायें उत्पन्न हो जाती हैं । इसको हम अति जनसंख्या के नाम से सम्बोधित करते हैं । अति जनसंख्या के कारण एक देश के सामने प्रमुख रूप से निम्नलिखित समस्यायं उत्पन्न होती है –

(1) बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण देश में खाद्यान्नों की मॉंग बढ़ जाती है और सामान्यतया खाद्यान्नों की पर्ति इसकी मांग की तुलना में कम रह जाती है ।

(2) बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण राष्ट्रीय उत्पादन के एक बडे भाग का उपयोग उपभोग कार्यो के लिए कर लिया जाता है । और निवेश कार्यो के लिए बहुत कम उत्पादन उपलब्ध हो पाता है । इससे पूँजी निर्माण की गति धीमी पड़ जाती है ।

(3) अधिक जनसंख्या अल्पविकसित देशों के लिए भुगतान सन्तुलन को भी प्रतिकूल बना देती है क्योंकि खाद्यान्नें की पर्याप्त मात्रा में पूर्ति न होने के कारण इसका विदेशों से आयात करना पड़ता है और इसके लिए विकासात्मक आयात का त्याग करना पड़ता है ।

(4) अति जनसंख्या के कारण बेरोजगारी की समस्या उतपन्न हो जाती है और इसके आर्थिक और सामाजिक परिणाम बहुत दुष्कर होते हैं ।

(5) बढ़ती हुई जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए देश को सामाजिक सेवाओं आदिपर बहुत अधिक व्यय करना पड़ता है । इस प्रकार अर्थव्यवस्था के संसाधनों को भौतिक पूँजी के स्थान पर मानवीय उपभोग की ओर स्थानान्तरण करना होता है ।

सर्वाधिक महत्व और चिन्ता की बात यह है कि भारत की जनसंख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है, ऊँची जन्मदर (1991 में 30.55 प्रति हजार) तथा तेज दर से गिरती हुई मृत्युदर (1991 में 10.2 प्रति हजार) में कमी के कारण जनसंख्या में अत्याधिक बृद्धि हुई है । जनसंख्या में तीव्र बृद्धि के कारण योजनाओं में निर्धारित आर्थिक सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में कठिनाइयां उपस्थित हुई है । जनसंख्या की बृद्धि के कारण जीवन को गुणात्मक श्रेष्ठता और उन्नत बनाने के सभी प्रयास असफल सिद्ध हुए हैं । भारत जैसे विकासशील देश में जहाँ पूँजी का अभाव है और मानवीय संसाधनों

की बहुलता है, वहाँ जनसंख्या परिसम्पत्ति होने की बजाय दायित्व बन गई है । बढ़ती हुई जनसंख्या का देश की प्रगति पर निम्नलिखित प्रभाव परिलक्षित हो रहे हैं–

(1) बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण प्रति व्यक्ति आय के स्तर एवं रहन सहन के स्तर में सुधार सम्भव नहीं होता है । इसके कारण कृषि उत्पादन एवं औद्योगिक उत्पादन में होने वाली बृद्धि का वास्तविक लाभ लोगों को नहीं मिल पाता है ।

(2) जनसंख्या की मात्रा में बृद्धि होने के कारण भूमि पर जनसंख्या का भार निरन्तर बढ़ रहा है । सन 1911 में प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता 1.1 एकड़ थी लेकिन अतिरिक्त भूमि के उपयोग के बावजूद भी 1990 में प्रति व्यक्ति भूमि की उपलब्धता घटकर 0.25 एकड़ रह गई है ।

(3) जनसंख्या की बृद्धि का उपभोग के स्तर पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा क्योंकि कार्य करने वाले हाथों की तुलना में खाने वाले मुहों की संख्या बढ़ गई है । परिणामस्वरूप भावी आर्थिक विकास , धन एवं आय की असमानताओं में बृद्धि हुई है ।

(4) जनसंख्या में बृद्धि के कारण खाद्यान्नों एवं अन्य भोज्य पदार्थो की बढ़ती हुई माँग की समस्या उत्पन्न हुई है । जनसंख्या में बृद्धि के अनुपात में प्रति व्यक्ति खाद्यान्नों की उपलब्धता में कोई विशेष बृद्धि नहीं हो सकी है जिससे भारत में प्रति वर्ष लगभग 10 लाख बच्चे कुपोषण के कारण मृत्यु को प्राप्त हो । लगभग एक तिहाई लोगों को दो वक्त का भोजन उपलब्ध नहीं हो पाता है । यदि भविष्य में जनसंख्या बृद्धि के साथ ही साथ खाद्यान्नों के उत्पादन में आनुपातिक बृद्धि नहीं होती है तो देश को खाद्यान्नों की स्वल्पता, दुर्भिक्ष कुपोष्ण आदि समस्याओं का सामना करना पड़ेगा ।

(5) जनसंख्या में बृद्धि के कारण बेरोजगारी की समस्या गम्भीर रूप धारण कर लेती है , क्योंकि रोजगार के अवसर इतनी तेजी से नहीं बढ़ पाते हैं जितनी तेजी से जनशक्ति बढ़ती है ।

(6) अनियन्त्रित जनसंख्या के कारण नई सामाजिक समस्याएं भी उत्पन्न होती हैं । गावों में रोजगार के अवसर उपलब्ध न होने के कारण बड़ी संख्या में लोग शहरों की ओर पलायन करते हैं जिसके कारण शहरीकरण की नई समस्याओं का सामना करना पड़ता है । बड़े परिवारों के भारको वहन न कर सकने के कारण लोगों के मस्तिष्क में उद्वेग अशान्ति आदि उत्पन्न होने लगती है और वे अनेक कुठाओं से घिर

जाते हैं । जनसंख्या बृद्धि का प्रभाव सार्वजनिक सेवाओं की उपलब्धि पर भी पड़ता है । अधिक जनसंख्या से देश में असमान वितरण के कारण राजनैतिक और सामाजिक उपद्रवों को बढ़ावा मिलता है । जिन लोगों को रोजगार प्राप्त नहीं हो पाता है । वे गैर सामाजिक गतिविधियों में उलझ जाते हैं , इनलोगों की क्रियाओं से सभ्य समाज के लिए असुरक्षा और संकट की स्थिति उत्पन्न हो जाती है ।

(7) बढ़ती जनसंख्या का प्रभाव फसलों के प्रतिरूप पर भी पड़ता है । प्रत्येक कृषक ऐसी फसलों को प्राथमिकता देता है जिसमें लागत कम तथा जोखिम की मात्रा भी कम हो ।यह सर्व विदित है कि अधिक उपज वाली फसलों की लागत अधिक तथा जोखिम भी अधिक होता है । मोटे अनाज जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का आदि की फसलों में जोखिम कम होता है । कृषक कम जोखिम वाली फसलों का उत्पादन करने को बाध्य हो जाता है क्योंकि ऐसा करने से उसे कम से कम जीवन निर्वाह के साधन तो मिल जाते हैं ।

(8) खेती की एक जोत पर निर्भर परिवार के सदस्यों की संख्या का एक प्रभाव यह भी पड़ता है कि किसान अपनी कृषि उपज के एक बड़े भाग को स्वः उपभोग के लिए अपने पास रखने के लिए बाध्य हो जाता है , एक अनुमान के अनुसार खाद्यान्न के कुल उत्पादन का 60 प्रतिशत से 70प्रतिशत भाग किसान द्वारा अपने पास स्वः उपभोग, बीज, पशुओं के चारे के वास्ते रख लिया जाता है । परिणामस्वरूप विक्री योग्य कृषि उत्पादन कें अतिरेक की मात्रा कम हो जाती है ।

पर्याप्त खाद्य पदार्थ जीवन की प्राथमिक आवश्यकता है । खाद्य समस्या से आशय क्षेत्रीय आवश्यकता के सन्दर्भ में खाद्यान्न की कमी से है । यह कमी खाद्यान्न की मात्रात्मक न्यूनता के रूप में हो सकती है या सामान्य पोषण स्तर तक खाद्य पदार्थ उपलब्ध न हो सकने के रूप में हो सकती है । खाद्यान्नों की मात्रात्मक कमी का भी दबाव अर्थव्यवस्था पर लगातार बना हुआ है । पूर्ति पर मॉंग का आधिक्य बने रहने के कारण लोगों को न्यूनतम आवश्यक कैलोरी के लिए भी खाद्यान्न नहीं उपलब्ध हो सके हैं । खाद्य और कृषि संगठन के अनुमान के अनुसार "सामान्य रूप से प्रति व्यक्ति दैनिक खाद्यान्न उपलब्धि 440 ग्राम होना चाहिए ।" खाद्य समस्या के गुणात्मक पक्ष का सम्बन्ध भारतीयों के भोजन में पोषक तत्वों की कमी से है । प्रोटीन, विटामिन, खनिज, वसा आदि संतुलित भोजन के आवश्यक घटक हैं परन्तु अधिकांश लोगों के भोजन

में किसी न किसी तत्व की कमी बनी रहती है । इस कुपोष्ण और अल्पपोषण के कारण उनकी कार्यक्षमता घटती है और वे कुसमय बीमारियों के शिकार होने लगते हैं । पोषण सलाहकार समिति ने 1958 में यह अनुमान लगाया था कि 20-30 आयु वर्ग के एक स्वस्थ्य पुरुष के लिये 2780 कैलोरी और इस आयु वर्ग की स्वस्थ्यय महिला के लिए 2080 कैलोरी प्रदान करने वाले भोजन की आवश्यकता है । औसत आधार पर समस्त जनसंख्या के लिए प्रतिदिन 2250-3000 कैलोरी और 62 ग्राम प्रोटीन की आवश्यकता होती है ।" खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ0ए0ओ0) ने भी पुरुष और सभी के लिए क्रमशः 2600 और 1900 कैलोरी का आहार आवश्यक माना है । प्रोटीन, विटामिन, खनिज आदि पोषक तत्व शारीरिक विकास सम्यक कार्यक्षमता और शरीरिक तन्तुओं को स्वस्थ्य बनाए रखने के लिए आवश्यक है ।" अब हम उक्त दोनों दृष्टियों से अध्ययन क्षेत्र में खाद्यान्न उत्पादन तथा जनसंख्या सन्तुलन का विश्लेषण करेंगें -

(1) परिमाणात्मक पहलू :

किसी क्षेत्र में खाद्यान्नों की मांग को प्रभावित करने वाले तत्व उस क्षेत्र की जनसंख्या तथा क्षेत्र वासियों द्वारा प्रति व्यक्ति उपभोग की मात्रा होते हैं । क्षेत्र में खाद्यान्नों की पूर्ति खाद्यान्नों का उत्पादन एवं उसके समुचित वितरण की मात्रा पर निर्भर करती है । अध्ययन क्षेत्र में खाद्यान्नों के उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता को सारिणी क्रमांक 5.10 में दर्शाया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 5.10 अध्ययन क्षेत्र में खाद्यान्न उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति उपभोग की मात्रा ।

फसलें	क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	कुल उत्पादन (क्विंटल)	औसत उत्पादन (क्विंटल)	प्रतिशत	प्रति व्यक्ति उपभोग की मात्रा (किलोग्राम)
1. धान	68,578	13,77,712	20.09	21.58	64.84
2. गेहूँ	1,38,543	35,44,611	25.58	55.52	166.83
3. जौ	15,013	2,89,434	19.28	4.53	13.62
4. ज्वार	4,936	50,051	10.14	0.78	2.36
5. बाजरा	53,691	8,17,154	15.22	12.80	38.46
6. मक्का	22,602	3,05,013	13.50	4.78	14.36
कुलधान्य	3,03,363	63,83,975	21.04	100.00	300.47

सारिणी 5.10 अध्ययन क्षेत्र में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपभोग की मात्रा का चित्र प्रस्तुत कर रही है । कुल उत्पादन की दृष्टि से देखे तो ज्ञात होता है कि — अध्ययन क्षेत्र में गेहूँ और धान दोनों की प्रधानता है और ये धान्य कुल धान्य उत्पादन का 77 प्रतिशत से अधिक उत्पादन दे रहे हैं, जिसमें गेहूँ 55.52 प्रतिशत भागेदारी करके प्रथम स्थान पर है, औसत उत्पादकता की दृष्टि से भी गेहूँ की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता 25.58 क्विंटल सर्वाधिक है, यह प्रति व्यक्ति उपलब्धता के आधार पर भी प्रथम स्थान पर है जिसकी मात्र 166.83 किलोग्राम प्रति व्यक्ति है । प्रति व्यक्ति मात्रात्मक उपलब्धता के आधार पर धान दूसरे स्थान पर हे जिसकी प्रति व्यक्ति मात्रा 64.84 किलोग्राम है । उत्पादन, औसत उत्पादन, प्रति व्यक्ति उत्पादन की दृष्टि से ज्वार खाद्यान्न का अत्यन्त निम्न स्तर है । बाजरा तीसरे स्थान पर है , यद्यपि औसत उत्पादन की दृष्टि से यह चौथे स्थान पर है, परन्तु प्रति व्यक्ति मात्रात्मक उपलब्धता 38.46 किलोग्राम है । सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता 300.47 किलोग्राम है । विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल, कुल उत्पादन, औसत उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति उपलब्धता की दृष्टि से देखें तो गेहूँ , धान तथा बाजरा ही प्रतिनिधित्व करते प्रतीत हो रहे हैं , यह तथ्य इस बात की ओर संकेत करता है कि अध्ययन क्षेत्र में हरितक्रान्ति के प्रभाव के परिणामस्वरूप ही उक्त तीनों फसलों की प्रधानता है ।

अन्न उपलब्धता के अतिरिक्त कार्यशील जनसंख्या के लिए दालों की उपलब्धता भी अनिवार्य है क्योंकि दालों में प्रोटीन की मात्रा अधिक होने के कारण भारतीय भोजन में इनकी प्रमुखता होती है और अधिकांश कार्यशील जनशक्ति दालों से प्रोटीन की अधिकांश मात्रा प्राप्त करती है । अध्ययन क्षेत्र में पाई जाने वाली दालों में अरहर, उर्द/मूँग, चना तथा मटर प्रमुख रूप से पायी जाती है । दालों का विस्तृत विवरण सारिणी क्रमांक 5.11 में दर्शाया जा रहा है ।

सारिणी 5.11 अध्ययन क्षेत्र में दालों का वितरण ।

दलहनी फसलें	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	कुल उत्पादन (क्विंटल)	औसत उत्पादन (क्विंटल)	प्रतिशत	प्रति व्यक्ति उपलब्धता (किलोग्राम)
1–उर्द/मूँग	8,253	33,780	4.09	4.48	1.59
2–चना	25,093	3,13,231	12.48	41.50	14.74
3–मटर	15,146	2,49,913	16.50	33.11	11.76
4–अरहर	12,021	1,57,142	13.07	20.81	7.40
5–अन्य	105	751	7.15	0.10	0.03
कुल दलहन	60,618	7,54,817	4.58	100.00	35.53

सारिणी क्रमांक 5.11 अध्ययन क्षेत्र में दलहन के वितरण का चित्र प्रस्तुत कर रही है । इन दलहनी फसलों में प्रमुख रूप से अरहर, उर्द/मूँग तथा यदा कदा चने को दालों के रूप में सेवन किया जाता । मटर को सामान्यतया दालों के रूप में सेवन का प्रचलन नहीं है । इस दृष्ट से देखा जाय तो लगभग 9 किलोग्राम प्रति व्यक्ति दालों की उपलब्धता है , यदि 10 प्रतिशत चने की दाल सेवन को भी सम्मिलत कर लिया जाये तो जनपद में प्रति व्यक्ति दालों की मात्रा लगभग 10.5 किलोग्राम उपलब्ध है । विभिन्न दलहनी फसलों की भागेदारी की दृष्टि से देखे तो चना तथा मटर दोनों सम्पूर्ण उत्पादन का लगभग 75 प्रतिशत हिस्सा लोगों को उपलब्ध करा रहे हैं जबकि अरहर मात्र 20.81 प्रतिशत हिस्सेदारी कर रही है जो प्रमुख रूप से दालों के रूप में सेवन की जाती हे । सम्पूर्ण दलहनी फसलों की प्रति व्यक्ति कुल उपलब्धता मात्रा 35.53 किलोग्राम प्रति वर्ष है । और यदि प्रमुख रूप से सेवन की जाने वाली अरहर मात्र 7.40 किलोग्राम प्रति व्यक्ति उपलब्ध है । अन्य दलहनी फसलों में मसूर ही प्रमुख है जिसने जनपद में अभी घुसपैठ ही बनाई है । औसत उत्पादन की दृष्टि से मटर का औसत उत्पादन 16.50 क्विंटल प्रति हेक्टेयर सर्वाधिक है और इस दृष्टि से यह फसल प्रथम स्थान पर है । उर्द/मूँग का औसत उत्पादन 4.09 क्विंटल प्रति हेक्टेयर न्यूनतम स्थिति दर्शा रही है । इस प्रकार समस्त खाद्यान्नों की दृष्टि से देखे तो अध्ययन क्षेत्र में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न की मात्रात्मक उपलब्धता केवल 336 कि0ग्रा0 है ।

विकास खण्ड स्तर पर खाद्यान्न उपलब्धता :

विकास खण्ड स्तर पर खाद्यान्नों की उपलब्धता को जानने के लिए शोध कर्ता ने समस्त विकास खण्डों से एक-एक गाँव दैव निदर्शन आधार चुना ।चुने हुए गावों का व्यक्तिगत सम्पर्क करके गहन सर्वेक्षण किया गया जिसमें प्रश्नावलियों तथा अनुसूचियों को माध्यम बना कृषि सम्बन्धी जानकारियां प्राप्त की गई । सर्वेक्षण के आधार पर विभिन्न फसलों की प्रत्येक गाँव की औसत उपज ज्ञात की गई है, और इस औसत उपज को विकास खण्ड की विभिन्न फसलों की औसत उपज का आधार मानकर विकास खण्ड स्तर पर प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता की गणना की गई है । विकास खण्ड स्तर पर जो परिणाम प्राप्त हुए उन्हें सारिणी क्रमांक 5.12 में दर्शाया गया है ।

सारिणी क्रमांक 5.12 विकास खण्ड स्तर पर प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता ।

विकास खण्ड	अन्न			दलहन			कुल खाद्यान्न	
	कुल उत्पादन (क्विंटल)	प्रति व्यक्ति (कि0ग्रा0)	प्रतिदिन (ग्रा0)	कुल उत्पादन (क्विंटल)	प्रति व्यक्ति (कि0ग्रा0)	प्रतिदिन (ग्रा0)	प्रति व्यक्ति (कि0ग्रा0)	प्रतिदिन (ग्रा0)
1. जसवन्त नगर	5,30,764	311.71	854	88,832	52.17	143	363.88	997
2. बढ़पुरा	2,28,580	208.40	571	50,515	46.06	126	254.46	687
3. वसरेहर	7,98,473	430.99	1,181	34,353	18.52	51	449.51	1,232
4. भरथना	5,00,766	439.75	1,205	32,431	28.48	78	468.23	1,283
5. ताखा	5,42,992	527.49	1,445	17,478	16.98	47	544.47	1,492
6. महेवा	4,68,245	276.21	757	91,306	53.86	148	330.62	905
7. चकरनगर	1,64,056	236.76	649	58,046	83.77	230	320.53	879
8. अछल्दा	4,45,738	364.18	998	34,511	28.20	77	392.38	1,075
9. विधूना	5,56,368	450.60	1,235	29,092	23.56	65	474.16	1,300
10. एखा कटरा	4,24,493	443.54	1,215	24,256	25.34	69	468.88	1,284
11. सहार	5,09,594	405.48	1,111	41,021	32.64	89	438.12	1,200
12. औरैया	4,39,083	279.51	766	1,08,530	69.09	189	348.60	955
13. अजीतमल	3,06,610	261.06	715	79,744	67.90	186	328.96	901
14. भाग्यनगर	4,18,940	326.49	895	44,199	34.45	94	360.92	989
ग्रामीण औसत	63,34,702	353.71	969	734314	41.00	112	394.71	1,081

सारिणी क्रमांक 5.12 विकास खण्ड स्तर पर खाद्यान्न उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पादन तथा प्रतिदिन खाद्यान्नों की मात्रात्मक उपलब्धता दर्शा रही है । विकास खण्ड स्तर पर अन्न उत्पादन तथा दलहन उत्पादन की भी गणना की गई है । अन्न में धान, गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा तथा मक्का का उत्पादन सम्मिलित है जबकि दलहनी फसलों में चना मटर, अरहर तथा उर्द/मूँग प्रमुख फसलों के उत्पादन की गणना की गई है । औसत उत्पादन की दृष्टि से विभिन्न विकास खण्डों में बहुत असमानता है इसी कारण प्रति व्यक्ति अन्न और दलहन के उत्पादन में अत्यधिक अन्तर देखने को मिलता है । परन्तु यह तथ्य भी प्रकाश में आया है कि जिन विकास खण्डों में अन्न उत्पादन अधिक होता है वहाँ पर दलहनी फसलों का कम उतपादन होता है और जहाँ पर अन्न का कुल उत्पादन कम है वहाँ दलहनी फसलों का उत्पादन अधिक किया जाता है ।

विकास खण्ड स्तर पर प्रति व्यक्ति अन्न उत्पादन की दृष्टि से देखें तो ताखा विकास खण्ड 527.49 किलोग्राम प्रति व्यक्ति उत्पादन करके प्रथम स्थान पर है, इस विकास खण्ड की भूमि चिकनी होने के कारण धान तथा गेहूँ की प्रमुखता है और इस विकास खण्ड के कुल उत्पादन के 90 प्रतिशत से भी अधिक की हिस्सेदारी इन्हीं दोनों फसलों की है । अन्न उत्पादन की दृष्टि से बढ़पुरा विकास खण्ड मात्र 208.40 किलोग्राम प्रति व्यक्ति अन्न उत्पादन करके अपने निम्न स्तर पर संकेत कर रहा है । अपनी ऊँची नीची भूमि के कारण यहाँ गेहूँ तथा बाजरा का उत्पादन लगभग समान स्तर पर हो रहा है जिनका कुल अन्न उत्पादन में लगभग 82 प्रतिशत का योगदान है । बढ़पुरा विकास खण्ड से मिलती जुलती भौगोलिक स्थिति वाला विकास खण्ड चकरनगर प्रति व्यक्ति 236.76 किलोग्राम अन्न उतपादित करके बढ़पुरा से कुछ अच्छी स्थिति दर्शा रहा है इस विकास खण्ड में बाजरा गेहूँ तथा जौ प्रमुख फसलें उगाई जाती है और इन तीनों फसलों का कुल अन्न उत्पादन में लगभग 99.6 प्रतिशत का योगदान है जिसमें बाजरा 52.24, गेहूँ 25.78 तथा जौ की 21.53 प्रतिशत हिस्सेदारी है । अन्न उतपादन की दृष्टि से विधूना विकास खण्ड 450.60 किलोग्राम प्रति व्यक्ति अन्न का उतपादन करके वरीयता क्रम में द्वितीय स्थान पर है, इस विकास खण्ड में धान और गेहूँ प्रमुख रूप से उत्पन्न किए जाते जिनका कुल अन्न उत्पादन में लगभग 88 प्रतिशत योगदान है । इससे मिलते जुलते स्तर को प्रदर्शित करने वाले विकास खण्ड जो 400 कि0ग्रा0 से 450 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति के मध्य अन्न उत्पादन के स्तर को प्राप्त कर रहे हैं । उनमें से एखाकटरा 443.54 कि0ग्रा0, भरथना 439.75, वसरेहर 430.99 तथा सहार 405.48 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति अन्न उत्पादित करके लगभग एक समान स्थिति में है, इन सभी विकास खण्डों में धान तथा गेहँ के उतपादन की प्रधानता है । 350 कि0ग्रा0 से 400 कि0ग्रा0 के मध्य अन्न उत्पादन करने वाला अकेला विकास खण्ड अछल्दा है जो 364.18 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति अन्न

उत्पादित कर रहा है । 300 कि0ग्रा0 से 350 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति अन्न उत्पादन स्तर को प्राप्त करने वाले विकास खण्डों में भाग्यनगर 326.49 कि0ग्रा0 था जसवन्त नगर 311.71 कि0ग्रा0 हैं । जिनमें से भाग्यनगर में गेहूँ , धान तथा बाजरा एवं जसवन्त नगर विकास खण्ड में गेहूँ , बाजरा तथा धान प्रमुख अन्न उत्पादक है, इस विकास खण्ड में मक्का भी चोथे स्थान की फसल है।

दलहन के उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति उपलब्धता के दृष्टिकोण से देखें तो सभी विकास खण्डों में चना, मटर, अरहर तथा उर्द/मूँग की ही प्रमुखता है, परन्तु दालों के प्रमुख रूप में अरहर तथा उर्द/मूँग को ही पसन्द किया जाता है कहीं–कहीं चने की दाल का भी यदा कदा प्रयोग किया जाता है । विकास खण्ड स्तर पर दलहन के उत्पादन की दृष्टि से देखें तो अन्न उत्पादन की दृष्टि से द्वितीय निम्नतम स्तर को प्रदर्शित करने वाले विकास खण्ड चकर नगर की स्थिति सर्वोच्च है जो 83.77 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति दलहन का उत्पादन करके वरीयता क्रम में प्रथम स्थान पर स्थित है । जिसमें चना तथा अरहर दोनों मिलकर 98 प्रतिशत से अधिक की भागेदारी कर रही है । वरीयता क्रम में द्वितीय स्थान पर औरैया विकास खण्ड है जो 69.09 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति दलहन का उतपादन कर रहा है जिसमें चना 43.37 प्रतिशत, मटर 33.55 प्रतिशत तथा अरहर 22.53 प्रतिशत हिस्सेदारी कर रही है । अजीतमल विकास खण्ड 67.90 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति दलहन उत्पादित करके वरीयता क्रम में तीसरा स्थान दर्ज कर रहा है । इस विकास खण्ड में मटर तथा चना ही प्रमुख दलहनी फसलें हैं जो कुल दलहन उत्पादन में लगभग 82 प्रतिशत का योगदान कर रही है, इसमें भी मटर का योगदान 54 प्रतिशत से अधिक है । दलहनी फसलों की दृष्टि से ताखा विकास खण्ड सबसे दयनीय स्थिति को दर्शा रहा है यह विकास खण्ड 16.98 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति दलहन का उत्पादन करके वरीयता क्रम में अन्तिम स्थान पर है जबकि अन्न उतपादन में यह प्रथम स्थान पर है । इस विकास खण्ड से मिलती जुलती स्थिति वसरेहर विकास खण्ड प्रदर्शित कर रहा है जो 18.52 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति उत्पादित करके द्वितीय निम्न स्तर को प्राप्त कर रहा है । इन दोनों विकास खण्डों में चना तथा मटर दलहनों का ही प्रभुत्व है । 20 से 30 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति दलहन उत्पादन स्तर को प्राप्त करने वाले विकास खण्ड अछल्दा 28.20 , एखाकटरा 25.34 तथा विधूना 23.56 कि0ग्रा0 है । जबकि 30 से 40 कि0ग्रा0 के मध्य उत्पादन स्तर भाग्य नगर 34.45 तथा सहार विकास खण्ड 32.64 कि0ग्रा0 प्राप्त कर रहे हैं । 40 से 50 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति उत्पादित करने वाले विकास खण्डों में बढ़पुरा विकास खण्ड 46.06

कि0ग्रा0 का उत्पादन करके इस वर्ग में अकेला है, जब कि 50 से 60 कि0ग्रा0 के मध्य महेवा 53.86 कि0ग्रा0 तथा जसवन्त नगर 52.17 कि0ग्रा0 उत्पादन कर रहे हैं ।

कुल खाद्यान्नों के औसत (प्रति व्यक्ति) की दृष्टि से 500 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति से अधिक उत्पन्न करने वाला एक मात्र विकास खण्ड ताखा है जो 544 कि0ग्रा0 से अधिक प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पन्न कर रहा है, जब कि इस दृष्टि से बढ़पुरा विकास खण्ड 254.46 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पादित करके वरीयता क्रम में अन्तिम स्थान पर है । शेष विकास खण्ड इन दोनों विकास खण्डों के मध्य में स्थित हैं । सारिणी से यह तथ्य भी स्पष्ट हो रहा है कि जो विकास खण्ड अन्न उत्पादन अग्रणी हैं वे दालों के उत्पादन में पिछड़ रहे हैं और जो विकास खण्ड अन्न के उत्पादन में पिछड़ रहा है, वे दालों के उत्पादन में अग्रणी हैं अर्थात अन्न की प्रति विकास खण्ड स्तर पर प्रति व्यक्ति उपलब्धता तथा दालों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में विपरीत सह सम्बन्ध हैं ।

(2) गुणात्मक पहलू :

अध्ययन क्षेत्र में अधिकाँश पोषक तत्व खाद्यान्नों से प्राप्त किए जाते हैं । यह अनुमन्य है कि कुल प्राप्त कैलोरी में से दो तिहायी भाग खाद्यान्नों से मिलता है तथा साथ ही साथ अपेक्षित स्तर का नहीं होता है । खाद्य और कृषि संगठन के एक अध्ययन के अनुसार वे देश जहां के आहार में खाद्यान्न, जड़दार शब्जियों और चीनी की बहुलता हो वहां पोषण सम्बन्धी स्पस्ट असन्तुलन पाया जाता है । भारतीय आहार में इन तत्वों का अंश दो तिहायी से अधिक है । भारत में मध्यवर्गीय परिवारों को छोड़कर शेष लोग संतुलित आहार नहीं पाते हैं जिसके कारण वे कुपोष्ण के शिकार हैं । विश्व बैंक की एक रिपोर्ट (1992) के अनुसार "प्रति व्यक्ति औसतन अपने भोजन से 1965 में प्रतिदिन 2021 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त करता था जो 25 वर्षो बाद 1989 में बढ़ कर 2229 कैलोरी हो गई है जो जीवित रहने के लिए आवश्यक ऊर्जा (2250 कैलोरी) से 21 कैलोरी कम है । पौष्टिक और संतुलित आहार न मिलने के कारण गर्भवती माताएं जिन बच्चों को जन्म देती हैं उनमें से लगभग 30 प्रतिशत बच्चे सामान्य बजन से कम होते हैं, बच्चों को तरह तरह की कुपोष्ण जन्म बीमारियां होती हैं तथा शिशु मृत्युदर बहुत अधिक है और जीवन प्रत्याशा अन्य देशों की तुलना में कम है ।

पोषण स्तर के अध्ययन के लिए प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पादन तथा उपभोग के लिए प्रति व्यक्ति शुद्ध खाद्यान्न उपलब्धता दोनों भिन्न पहलू हैं जहाँ प्रति व्यक्ति उत्पादन कृषि क्षेत्र के उत्पादन स्तर का सूचक है वहीं प्रति व्यक्ति शुद्ध खाद्यान्न उपलब्धता पोषण स्तर का प्रतीक है । यहाँ यह बात ध्यान रखने की है कि सन्तुलित आहार में केवल खाद्यान्नों की मात्रा का ही योगदान नहीं होता है बल्कि खाद्यान्नों से प्राप्त होने वाली कैलोरिक ऊर्जा पर निर्भर करता है जैसा कि ऊपर बताया गया है कि अध्ययन क्षेत्र में लोग अपनी अधिकांश कैलोरिंग ऊर्जा खाद्यान्नों से ही प्रापत करते हैं कयोंकि लोगों के आहार में खाद्यान्नों का ही प्रमुख योगदान पाया जाता है । विकास खण्ड स्तर पर विभिन्न खाद्यान्नों से प्राप्त होने वाली कैलोरिक ऊर्जा तथा प्रति व्यक्ति कैलोरिक उपलब्धता को दर्शाने के पूर्व हमें यहाँ इस बात का उल्लेख करना भी समीचीन प्रतीत होता है कि कुल उत्पादन में से खाने योग्य खाद्यान्न की गणना विभिन्न भूगोल वेन्ताओं ने की है । **सिंह जसवीर** (1974) ने कुल उत्पादन में से 16.80 प्रतिशत , **तिवारी पी० डी०** [14] (1988) ने 15 प्रतिशत **सिंह एस० पी०** ने 24 प्रतिशत मात्रा घटाकर शुद्ध उत्पादन उपभोग के लिए प्राप्त किया है । यहाँ पर हम विभिन्न खाद्यान्नों से उपभोग के लिए शुद्ध उत्पादन प्राप्त करने के लिए **सिंह एस०पी०** [15] के आधार को मानते हुए विकास खण्ड स्तर पर खाद्यान्नों से प्रति व्यक्ति कैलोरिक ऊर्जा की गणना कर रहे हैं । **सिंह एस०पी०** ने विकास खण्ड अमेठी का सर्वेक्षण करके प्रति व्यक्ति वास्तविक खाद्यान्नों की उपलब्धता की गणना की । उनके अनुसार विभिन्न खाद्यान्नों में खाने योग्य मात्रा निम्न प्रकार से गणना की जाती है ।

सारिणी क्रमांक 5.13 विभिन्न खाद्यान्नों से खाने योग्य भाग ।

खाद्यान्न	बीज, पशु आहार तथा भण्डारण क्षय (प्रतिशत)	खाने योग्य अनुपात प्रतिशत	छीजन (क्षय)
1. धान	10	60	40
2. गेहूँ	10	95	05
3. जौ	10	90	10
4. मोटे अनाज (ज्वार बाजरा, मक्का आदि)	10	90	10
5. अरहर	10	65	35
6. उर्द/मूँग	10	70	30
7. चना	10	65	35
8. मटर	10	70	30

)स्रोतः सिंह एस0पी0 " पावर्टी, फूड एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया 1991 पी. 68 (

सारिणी क्रमांक 5.13 विभिन्न खाद्यान्नों से प्राप्त होने वाले शुद्ध उत्पादन का विवरण प्रस्तुत कर रही है । डा0 सिंह का मत है कि कुल उत्पादन में से प्रत्येक खाद्यान्न में से 10 प्रतिशत हिस्सा बीज तथा भण्डारण में होने वाले छीजन से घटाने के उपरान्त शेष उत्पादन में से खाने योग्य हिस्से की गणना की जानी चाहिए । इस गणना के आधार पर विभिन्न खाद्यान्नों की शुद्ध उपलब्धता विकास खण्ड स्तर पर सारिणी क्रमांक 5.14में प्रस्तुत की गई है ।

अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड वार खाद्यान्न उपलब्धता सारिणी क्रमांक 5.14 में दर्शायी गई है । प्रति व्यक्ति अन्न उपलब्धता के दृष्टिकोण से ताखा विकास खण्ड 392.98 किलोग्राम प्रति व्यक्ति अन्न उपलब्ध कराकर वरीयता क्रम में प्रथम स्थान पर है इस विकास खण्ड के अन्नोत्पादन में धान और गेहूँ की प्रधानता है । एखाकटरा विकास खण्ड 348.20 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति अन्न का उत्पादन करके द्वितीय स्थान पर है । तीसरा स्थान प्राप्त करने वाला विकास खण्ड विधूनाहै जहाँ पर 343.61 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति की दर से अन्नोत्पादन किया जा रहा है । वास्तविक मात्रा उपभोग के लिए विकास खण्ड बढ़पुरा मात्र 169.25 कि0 ग्रा0 प्रति व्यक्ति अन्न उपलब्ध कराकर वरीयता क्रम में अन्तिम स्थान पर है जबकि चकरनगर की भौगोलिक स्थिति बढ़पुरा के लगभग समान होते हुए भी कुछ अच्छी स्थिति में है और यह विकास खण्ड 194.48 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति अन्न उपलब्ध करा रहा है । 200 से 300 कि0ग्रा0 अन्न उपलब्ध कराने वाले विकास खण्डों में अजीतमल 212.57 कि0ग्रा0, औरैया 224.91 कि0ग्रा0, महेवा 223.31 कि0ग्रा0, जसवन्त नगर 247.41 कि0ग्रा0, भाग्यनगर 257.92 कि0ग्रा0 तथा अछल्दा विकास खण्ड 280.25 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति अन्न उपलब्ध करा रहे हैं । सहार विकास खण्ड 305.28 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति के स्तर को पहुँच रहा है ।

दलहन का वास्तविक उपलब्ध मात्रा के दृष्टि कोण से चकरनगर विकास खण्ड सर्वोत्तम स्थिति में है और यह 49.06 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति दालों का वास्तविक उपाभोग कर रहा है जबकि दूसरे स्थान पर अजीतमल विकास खण्ड की औसत उपलब्धता है और यह 41.59 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति दालों को उपभोग के लिए प्रस्तुत कर रहा है । महेवा विकास खण्ड 32.94 कि0ग्रा0 तथा सहार विकास खण्ड 32.85 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति दालों का उपभोग करके लगभग एक समान स्थिति में हैं । इन्हीं से मिलता जुलता प्रदर्शन औरैया विकास खण्ड का है जो 30.64 प्रति व्यक्ति की दर से दालों का उपभोग कर रहा है ताखा विकास खण्ड जो अन्न के उपभोग में प्रथम स्थान पर है वह दालों के उपभोग में अन्तिम स्थान पर स्थित है और यह अपने यहाँ मात्र 10.11 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति दालों का उपभोग कर रहा है ।

सारिणी क्रमांक 5.14 अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड स्तर पर उपभोग योग्य मात्रा ।

विकासखण्ड	अन्न			दलहन			कुल खाद्यानन	
	उपभोग योग्य (क्विंटल)	प्रति व्यक्ति (कि0ग्रा0)	प्रतिदिन (ग्रा0)	उपभोग योग्य (क्विंटल)	प्रति व्यक्ति (कि0ग्रा0)	प्रतिदिन (ग्रा0)	प्रति व्यक्ति (कि0ग्रा0)	प्रतिदिन (ग्रा0)
1. जसवन्त नगर	421276	247.41	678	45315	26.61	73	274.02	751
2. बढ़पुरा	185638	169.25	464	29720	27.10	74	196.35	538
3. बसरेहर	601621	324.74	890	20658	11.15	31	335.89	921
4. भरथना	382980	336.32	921	19612	17.22	47	353.54	968
5. ताखा	404523	392.98	1077	10406	10.11	28	403.09	1105
6. महेवा	378553	223.31	612	55834	32.94	90	256.25	702
7. चकरनगर	134756	194.48	533	33993	49.06	134	243.54	667
8. अछल्दा	343010	280.25	768	20935	17.10	47	297.35	815
9. विधूना	424270	343.61	941	17254	13.97	38	357.58	979
10. एखाकटरा	333240	348.20	954	14823	15.49	42	363.69	996
11. सहार	383666	305.28	836	41290	32.85	90	338.13	926
12. औरैया	353317	224.91	616	47657	30.64	84	255.55	700
13. अजीतमल	249659	212.57	582	48841	41.59	114	254.16	696
14. भाग्यनगर	330957	257.92	707	26483	20.64	57	278.56	764
सम्पूर्ण औसत	4927466	275.13	754	441821	24.67	68	299.80	822

कमोवेश यही प्रदर्शन वसरेहर विकास खण्ड कर रहा है जहाँ इससे थोड़ा अधिक अर्थात 11.15 कि0ग्रा0 प्रति व्यक्ति की दर से दालों का उपभोग हो रहा है । कुल खाद्यान्न की प्रति व्यक्ति उपलब्धता देखी जाये तो ताखा विकास खण्ड प्रथम स्थान पर है जबकि बढ़पुरा विकास खण्ड अन्तिम स्थान पर है ।

<u>कैलोरिक उपलब्धता के आधार पर भूमि भार वहन क्षमता</u> :

सामान्य रूप में कृषि भूमि पर जैसे जैसे मनुष्यों का भार बढ़ता जाता है, प्रति व्यक्ति उत्पादन कम होता जाता है । प्रति व्यक्ति उतपादन न गिरने देने के लिए यह आवश्यक है कि प्रति इकाइ क्षेत्र में अधिक पूँजी का विनियोग करके उत्पादन बढ़ाया जाये । इस प्रकार किसी भी क्षेत्र के कृषि विकास तथा नियोजन में जनसंख्या तथा पोषण क्षमता के पारस्परिक सम्बन्ध का अपना एक विशेष महत्व है क्षेत्र की जनसंख्या पोषण क्षमता से अधिक हो जाने पर जनसंख्या की समस्या उत्पन्न हो जाती है । किसी क्षेत्र में निवास करने वाली जनसंख्या के पोषण स्तर को एक सामान्य स्तर पर बनाये रखने के लिए उस क्षेत्र में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पादन की आवश्यक मात्रा की तो आवश्यकता होती है, साथ यह भी देखना होता है कि उस क्षेत्र की कृषि भूमि की वास्तविक भार वहन क्षमता कितनी है अर्थात जो भी कृषि उपज प्राप्त हो रही है वह कितने व्यक्तियों का पोषण करने में सक्षम है । इसके लिए हमें यह देखना होता है कि क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली कृषि उपज से कितनी कैलोरिक ऊर्जा प्राप्त होती है यह कैलोरिक उपलब्धता ही उस क्षेत्र के कृषि क्षेत्र की पोषण क्षमता होती है ।

भूमि भार वहन क्षमता की गणना के लिए डा0 जसवीर सिंह [16] (1974) में एक सरल माडल का प्रतिपादन किया जिसमें प्रति इकाई कृषि क्षेत्र के कुल उत्पादन के आधार पर कैलोरिक ऊर्जा में परिवर्तित किया और इसी कैलोरिक उपलब्धता को उस क्षेत्र की भूमि भार वहन क्षमता का नाम दिया । यहाँ पर हम डा0 सिंह के माडल के आधार पर अध्ययन क्षेत्र की भूमि भार वहन क्षमता का विश्लेषण कर रहे हैं ।

सारिणी क्रमांक 5.15 अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा की भूमि भार वाहन क्षमता ।

खाद्य फसलें	प्रति हेक्टेयर उत्पादन (कि0ग्रा0)	कुल जोती गई भूमि प्रतिशत	सकल उत्पादन (कि0ग्रा0)	बीज तथा भण्डारण आदि क्षय (%)	कुल शुद्ध उत्पादन (कि0ग्रा0)	खाने योग्य भाग (%)	खाने योग्य शुद्ध मात्रा (कि0ग्रा0)	प्रति कि0ग्रा0 (कैलोरी)	कुल कैलोरिक उपलब्धता
1. धान	2,009	16.14	32,425.26	10	29182.73	60	17,509.64	3,450	6,04,08,258
2. गेहूँ	2,558	32.58	83,339.64	10	75005.68	95	71,255.40	3,460	24,65,43,684
3. जौ	1,928	3.53	6,805.84	10	6125.26	90	5,512.73	3,360	1,85,22,773
4. ज्वार	1,014	1.16	1,176.24	10	1058.62	90	952.76	3,490	33,25,132
5. बाजरा	1,522	12.63	19,222.86	10	17300.57	90	15,570.51	3,610	5,62,09,541
6. मक्का	1,350	5.31	7,168.50	10	6451.65	90	5,806.49	3,420	1,98,58,196
7. उर्द/मूँग	436	1.73	754.28	10	678.85	70	475.20	3,480	16,53,696
8. चना	1,248	5.90	7,363.20	10	6626.88	65	4,307.47	3,720	1,60,23,788
9. अरहर	1,307	2.83	3,698.81	10	3328.93	65	2,163.80	3,350	72,48,730
10. मटर	1,650	3.56	5,874.00	10	5286.60	70	3,700.62	3,150	1,16,56,953
11. लाही	1,247	6.37	7,943.39	2	7784.52	36	2,802.43	9,000	2,52,21,870
12. आलू	19,104	2.23	42,601.92	25	31951.44	–	31,951.44	970	3,09,92,897
13. गन्ना	32,845	1.03	33,830.35	10	30447.32	12	3,653.68	3,830	1,39,93,594
		95.00							51,16,59,112

$$\text{प्रति वर्ग किलोमीटर कृषि क्षेत्र में कैलोरिक उपलब्धता} = \frac{\text{कुल कैलोरिक उपलब्धता}}{\text{सकल जोतिका प्रतिशत}} \times 100$$

$$= \frac{511659112}{95} \times 100$$

$$= 538588539.3$$

सारिणी क्रमांक 5.15 अध्ययन क्षेत्र में जनपदीय स्तर पर विभिन्न फसलों के उत्पादन से प्राप्त प्रतिवर्ग किलोमीटर कृषि क्षेत्र पर कैलोरिक उपलब्धता को दर्शा रही है । जनपदीय स्तर पर प्रमुख रूप से तेरह फसलें उगाई जाती हैं जिनमें गेहूँ की प्रधानता है, धान का स्थान दूसरा है । मोटे अनाजों में बाजरा तथा मक्का का महत्वपूर्ण स्थान है । दलहनी फसलों में चना, अरहर, तथा मटर का ही प्रभुत्व है , उर्द/मूँग का भी उत्पादन किया जाता है । जड़दार फसलों में आलू तथा व्यापारिक फसलों में गन्ना उगाया जाता है । इन तेरह प्रधान फसलों के द्वारा जनपद के कुल कृषि क्षेत्र का 95 प्रतिशत हिस्सा आच्छादित रहता है । शेष कृषि क्षेत्र पर अन्य फसलें जिनमें शब्जियां , तिल, रेड़ी तथा दलहनी फसलों में मसूर, सोयाबीन आदि फसलें बोयी जाती है । रेशेदार फसलों में सनई , मसालेदार फसलों में प्याज, लहसुन,धनियां, मिर्च तथा कुछ क्षेत्रों में कलौंजी का भी प्रचलन है, परन्तु ये पुसलें नाम मात्र के क्षेत्र में ही बोई जाती है ।इस प्रकार 95 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाने वाली फसलों के कुल उत्पादन से खाद्य योग्य मात्रा की गणना करके कुल कैलोरिक उपलब्धता की गणना की गई है ।

जनपदीय स्तर पर ही विभिन्न आयु वर्ग की औसत वार्षिक कैलोरिक आवश्यकता की गणना भारतीय चिकित्सा अनुसन्धान परिषद 1988 द्वारा संस्तुत मात्रा के आधार पर की गई है जिससे सारिणी क्रमांक 5.16 में दर्शाया गया है ।

सारिणी क्रमांक 5.16 विभिन्न आयु वर्ग के लोगों की औसत वार्षिक कैलोरिक आवश्यकता ।

आयु वर्ग	कुल जनसंख्या का प्रतिशत			प्रतिदिनं संस्तुत मात्रा कैलोरी (आई0 सी0 एम0आर0 1968)	कुल मात्रा (कैलोरी)
	बच्चे	पुरुष	स्त्री		
1 वर्ष से कम	4.12			700	2,884
1 वर्ष से 3वर्ष	8.16			1,200	9,792
3 वर्ष से 6वर्ष	8.13			1,500	12,195
6 वर्ष से 9 वर्ष	7.59			1,800	13,662
9 वर्ष से 12 वर्ष	7.84			2,100	16,464
12 वर्ष से 15 वर्ष		4.74		2,500	11,850
12 वार्ष से 15 वर्ष			3.38	2,200	7,436
15 वर्ष से 18 वर्ष		4.44		3,000	13,320
15 वर्ष से 18 वर्ष			3.68	2,200	8,096
18 वर्ष से अधिक		25.24		2,800	70,672

	कुल जनसंख्या का प्रतिशत			प्रतिदिन संस्तुत मात्रा कैलोरी (आई0सर0एम0आर0 1968)	कुल मात्रा (कैलोरी)
	बच्चे	पुरुष	स्त्री		
18 वर्ष से अधिक			18.56	2,200	40,832
गर्भ वती महिलायें			4.12	2,500	10,300
	35.84	34.42	29.74		2,17,503

* दूध पिलाने वाली माताओं को संस्तुत मात्रा ।

सारिणी 5.16 में प्रस्तुत सांख्यिकीय की गणना के अनुसार अध्ययन क्षेत्र में 100 व्यक्तियों की प्रतिदिन कुल 217503 कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता होती है । इस प्रकार एक वर्ष (365.25 दिवस) में प्रति व्यक्ति आवश्यक कैलोरी की मात्रा 794430 कैलोरी होगी इस आधार पर अध्ययन क्षेत्र में जनपदीय स्तर पर गणना करने पर –

$$\text{अनुकूलतम भूमि वहन क्षमता} = \frac{\text{प्रति वर्ग किलोमीटर कृषि क्षेत्र में कैलोरिक उपलब्धता}}{\text{प्रति व्यक्ति वार्षिक कैलोरिक आवश्यकता}}$$

प्रति वर्ग कि.मी. कृषि क्षेत्र में कैलोरिक उपलब्धता = 538588539 कैलोरी

प्रति व्यक्ति वार्षिक कैलोरिक आवश्यकता = 794430 कैलोरी

$$\text{अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता} = \frac{538588539}{794430} = 677.96$$

अथवा 678 व्यक्ति

विकास खण्ड स्तर पर अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता :

अध्ययन क्षेत्र में विकास खण्ड स्तर पर भी अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता की गणना की गई है, जिसमें यह देखा या है कि प्रत्येक विकास खण्ड में इस दृष्टि से पर्याप्त अन्तर मिलता है । विकास खण्ड स्तर पर अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता को सारिणी क्रमांक 5.17 में दर्शाया गया है ।

ETAWAH DISTRICT
CARRYING CAPACITY OF LAND
701 – 750
651 – 700
601 – 650
551 – 600
500 – 550
0
20
KM
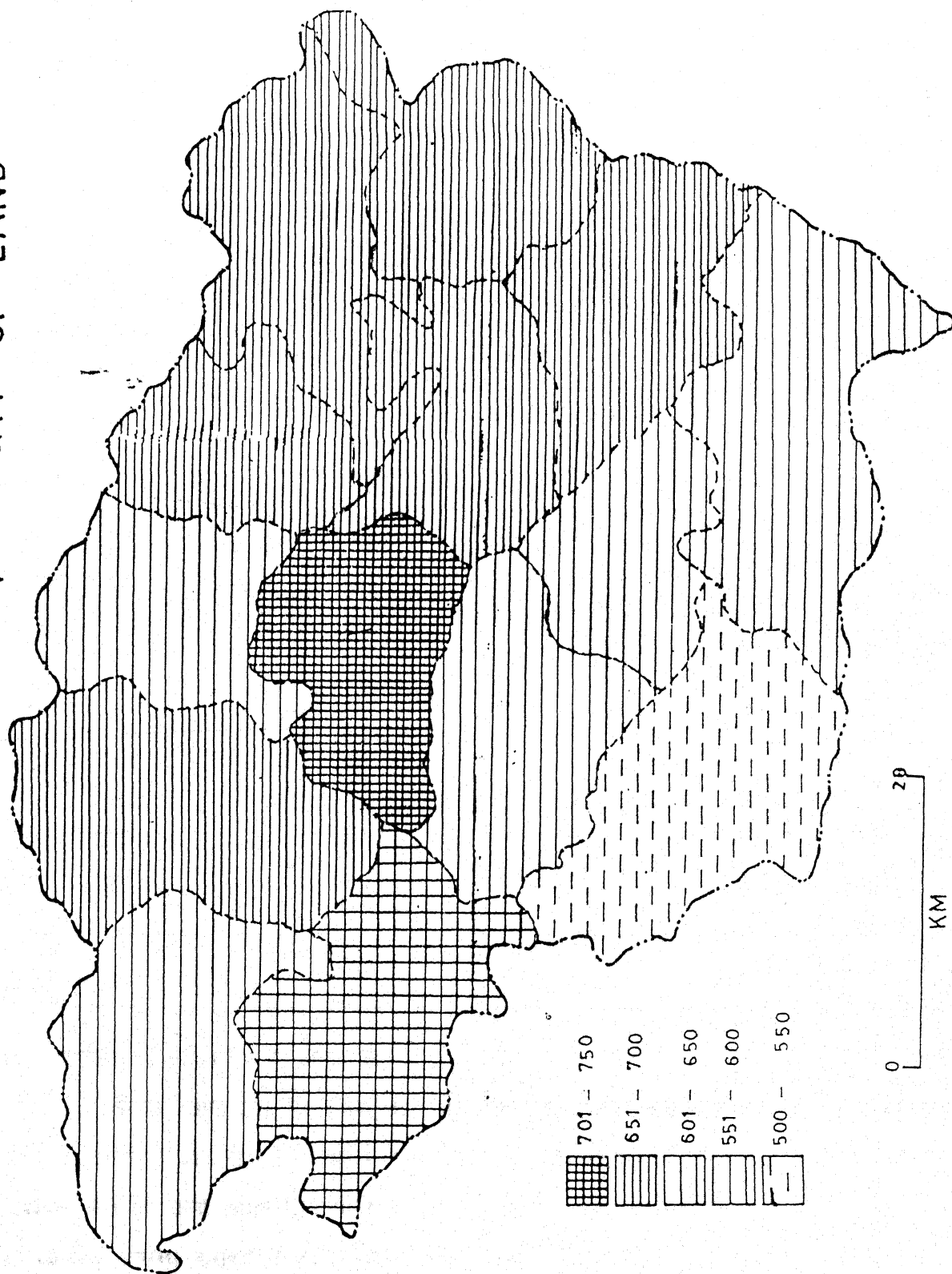
FIG. 23

सारिणी क्रमांक 5.17 विकास खण्ड स्तर पर अनुकूलता भूमि भार वहन क्षमता ।

विकास खण्ड	अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता	श्रेणीयन	कार्यक घनत्व	अन्तर
1. जसवन्त नगर	589	10	407	182
2. बढ़पुरा	601	8	513	88
3. वसरेहर	699	2	403	296
4. थरथना	726	1	389	337
5. ताखा	578	11	366	212
6. महेवा	559	12	464	95
7. चकरनगर	517	14	409	108
8. अछल्दा	657	7	429	228
9. विधूना	669	6	399	270
10. एरवा कटरा	676	4	309	367
11. सहार	674	5	414	260
12. औरैया	565	13	411	154
13. अजीतमल	600	9	473	127
14. भाग्यनगर	683	3	469	214
सम्पूर्ण	678		499	179

स्रोत– सर्वेक्षण की सांख्यिकीय के आधार पर ।

विकास खण्ड स्तर पर अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता सारिणी क्रमांक 5.17 में प्रस्तुत की गई है । सारिणी से ज्ञात होता है सर्वाधिक भूमि भार वहन क्षमता भरथना की है । जहां 726 व्यक्तियों के लिए आवश्यक कैलोरिक ऊर्जा खाद्यान्नों से प्राप्त हो रही है ओर यह विकास खण्ड अभी 337 अतिरिक्त व्यक्तियों को खाद्यान्न उपलब्ध कराकर उनका आवश्यक पोषण करने में सक्षम है । इस दृष्टि से वसरेहर विकास

खण्ड दूसरे स्थान पर स्थित है और यह अपने यहां उपलब्ध कृषि उत्पादन से 699 व्यक्तियों को आवश्यक ऊर्जा उपलब्ध कराने में सक्षम है जबकि इस विकास खण्ड का काभिक घनत्व 403 है, अतः 296 अतिरिक्त व्यक्तियों को पोषण प्रदान कर सकता है । तीसरा स्थान भाग्यनगर विकास खण्ड प्राप्त कर रहा है जिसकी भूमि वहन क्षमता 683 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है, यह विकास खण्ड 214 अतिरिक्त व्यक्तियों के लिए आवश्यक खाद्य सामग्री उपलब्ध कराने में सक्षम है । चकर नगर विकास खण्ड न्यूनतम भूमि वहन क्षमता को प्रदर्शित कर रहा है, यह अपने यहाँ उपलब्ध खाद्यान्नों द्वारा केवल 517 व्यक्तियों के भरण पोषण की क्षमता रखता है जबकि इस क्षेत्र का कायिक घनत्व 409 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है और यह अभी भी 108 अतिरिक्त व्यक्तियों की उदरपूर्ति करने में सक्षम हे । द्वितीय न्यूनतम भूमि वहन क्षमता 565 व्यक्ति औरैया विकास खण्ड प्रदर्शित कर रहा है परन्तु जब कायिक घनत्व से तुलना करते हैं तो यह विकास खण्ड 154 अतिरिक्त व्यक्तियों को अभी खाद्यान्न आपूर्ति करने में सक्षम है । अनुकूलतम भूमि वहन क्षमता की दृष्टि से देखे तो वरीयता क्रम में चौथे स्थान पर एरवा कटरा 676 व्यक्ति, पॉचवे स्थान पर सहार 674 व्यक्ति, छठवें स्थान पर विधूना 669 व्यक्ति तथा सातवें स्थान पर अछल्दा 657 व्यक्तियों को पोषण क्षमता रखकर लगभग एक सी स्थिति का प्रदर्शन कर रहे हैं । बढ़पुरा विकास खण्ड 601 व्यक्ति तथा अजीतमल 600 व्यक्तियों की पोषण क्षमता रखकर एक सी स्थिति में हैं ।

कायिक घनत्व से यदि तुलना करें तो एरवा कटरा विकास खण्ड प्रथम स्थान पर स्थित है जो भूमि वहन क्षमता के आधार पर 676 व्यक्तियों के भरण पोषण में सक्षम है परन्तु 309 व्यक्ति ही इस विकास खण्ड में प्रति वर्ग किलोमीटर निवास कर रहे हैं इस दृष्टि से यह विकास खण्ड 367 अतिरिक्त व्यक्तियों को उपलब्ध कैलोरिक ऊर्जा के आधार पर भोजन उपलबध करा सकता है । कायिक घनत्व के आधार पर बढ़पुरा विकास खण्ड को न्यूनतम अन्तर दृष्टिगोचर हो रहा है, अर्थात यह अपनी उत्पादन क्षमता के आाधार पर मात्र 88 अतिरिक्त व्यक्तियों को ही खाद्य सामग्री उपलब्ध करा सकता है । इस दृष्टि से यदि देखा जाय .तो यही विकास खण्ड सर्वाधिक जनाभार वाला है और अब मात्र 88 व्यक्ति ही यहां समायोजित हो सकते हैं । इसके उपरान्त महेवा विकास की स्थिति स्पष्ट हो रही है कि यह क्षेत्र केवल 95 अतिरिक्त व्यक्तियों को ही भोजन की दृष्टि से समायोजित कर सकता है । 100 व्यक्तियों से अधिक परन्तु 200 व्यक्तियों से अधिक अतिरिक्त समायोजित कर सकने वाले विकास खण्डों में चकरनगर 108, अजीतमल 127, औरैया 154, तथा जसवन्त नगर 182 व्यक्ति हैं । 200 से 300 अतिरिक्त व्यक्तियों

के भरण पोषण में सक्षम विकास खण्डों में ताखा 212, भाग्यनगर 214, अछल्दा 228 , सहार 260, विधूना 270 तथा वसरेहर 296 व्यक्ति हैं । अन्य विकास खण्ड 300 या 300 से अधिक अतिरिक्त व्यक्तियों को अभी खाद्य सामग्री उपलब्ध कर सकते हैं ।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो रहा है कि चाहे खाद्यान्न उपलब्धता की दृष्टि से देखें अथवा चाहे अनुकूलतम भूमि उपयोग क्षमता की दृष्टि से देखे तो अध्ययन क्षेत्र के किसी भी विकास खण्ड में दोनों ही दृष्टियों से प्रति व्यक्ति आवश्यक खाद्यान्न तथा खाद्यान्नों से प्राप्त औसत कैलोरिक ऊर्जा पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है । परन्तु भूमि का असमान वितरण भोजन खाद्यान्नों की प्रमुखता, भोजन में आवश्यक तत्वों के ज्ञान का अभाव, अशिक्षा तथा संतुलित भोजन में विभिन्न खाद्य वस्तुओं की आवश्यक मात्रा के समायोजन का सामान्य जन को ज्ञान न होना कुपोषण की समस्या को जन्म देते हैं । अध्ययन क्षेत्र भी इन समस्याओं से मुक्त नहीं है, इसलिए खाद्यान्नों की आवश्यक मात्रा पर्याप्त होने के बाद भी अध्ययन क्षेत्र कुपोषण तथा कुपोषण से उत्पन्न होने वाली बीमारियों का शिकार है ।

सारिणी क्रमांक 5.18 भूमि भार वहन क्षमता की श्रेणी ।

भूमि भार वहन क्षमता	भार वहन क्षमता की श्रेणी	विकास खण्डों की संख्या	विकास खण्ड का नाम
500 से 550	निम्नतम	1	चकरनगर
551 से 600	निम्न	5	महेवा, औरैया, ताखा जसवन्तनगर, अजीतमल
601 से 650	मध्यम	1	बढ़पुरा
651 से 700	उच्च	6	अछल्दा, विधूना, सहार, एरवा कटरा, भाग्यनगर, वसरेहर
701 से 750	उच्चतम	1	भरथना

तालिका 5.18 से स्पष्ट है कि सर्वोच्च भूमि भार वहन क्षमता के स्तरपर केवल एक विकास खण्ड भरथना है, जबकि उच्च स्तर को प्राप्त करने वाले विकास खण्डों की संख्या 6 है 5 विकास खण्ड जिनमें महेवा, औरैया, ताखा, जसवन्तनगर तथा अजीतमल है । स्पष्ट है कि अधिकांश विकास खण्ड निम्न और उच्च स्तर को प्राप्त कर रहे हैं । अतिनिम्न स्तर पर चकरनगर, मध्यम स्तर बढ़पुरा तथा सर्वोच्च स्तर पर भरथना स्थित है ।

****

1. स्टाम्प, एल0डी0 (1940) "फर्टिलिटी, प्रोडक्टिविटी एण्ड क्लासीफिकेशन ऑफ लैंण्ड इन ब्रिटेन " ज्योग्रेफी जरनल वाल्यूम 114 (6)

2. बक जे0एल0 (1967) "लैंण्ड यूटीलाइजेशन इन चाइना वाल्यूम 1 नानकिंग विश्वविद्यालय ।

3. क्लार्क सी0 एण्ड हैसवेल एम0 (1967) दि् इकोनोमिक्स ऑफ सब्सिसटेंस एग्रीकल्चर" पी-67

4. कैन्डाल एम0 जी0 (1939)" ज्योग्रेफीकल डिस्ट्रीव्यूशन ऑफ क्राप प्रोडकिटीविटी इन इंगलैंड जरनल ऑफ रायल स्टैटिस्टिक्स सोसाइटी 102, 21-62

5. सापर एस0जी0 एण्ड देश पाण्डे (1964)" इन्टर डिस्ट्रिक्ट वैरिएशन्स इन एग्रीकल्चर इफीसिएन्सी इन महाराष्ट्र स्टेट" इण्डियन जरनल ऑफ एग्रीकल्चर इकोनोमिक्स वाल्यूम 19 नं0 पीपी 242-252

6. गाँगुली बी0एन0 (1938)" ट्रेन्डस ऑफ एग्रीकल्चर एण्ड पापुलेशन इन दि गंगाज वैली लण्दन पी.पी. 39-94

7. भाटिया एस0एस0 (1967) "ए न्यू मीजर्स ऑफ एग्रीकल्चर इफीसिएन्सी इन यू0पी0 इन इण्डिया " इकोनामिक ज्योग्रेफी 43 (3) 248

8. सिन्हा बी0एन0 (1968) " एग्रीकल्चरल इफीसिएन्सी इन इण्डिया " यदि ज्योग्रेफर वाल्यूम 15, स्पेशल आई0जी0यू0 वाल्यूम ।

9. सिंह जसवीर (1972)" ए न्यू टैक्नीक फॉर मीजरिंग एग्रीकल्चरल प्रोडक्टिविटी इन हरयाना, इण्डिया" दि ज्योग्रेफर 19 पी.पी. 14-33

10. इन्मेदी (1967) दि चेन्जिग फेस ऑफ एग्रीकल्चर इन ईस्टर्न यूरोप, ज्योग्राफिकल रिव्यू 57 पी.पी. 358-72

11. सफी एम0 (1972)" मेजरमेन्ट ऑफ एग्रीकल्चरल प्रोडक्टिविटी ऑफ ग्रेट इण्डियन प्लेन्स " दि ज्योग्रेफर वाल्यूम 19 नं0 1 पी.पी. 4-13

12. हुसैन मजीद (1978) ए –न्यू एप्रोच टु दि एग्रीकल्चरल प्रोडकिटविटी रीजन्स ऑफ दि सतलज-गंगा प्लेन्स ऑफ इण्डिया " ज्योग्रेफिकल रिव्यू ऑफ इण्डिया वाल्यूम 38 नं0 3 पी.पी. 230-236

13. मुहम्मद अली (1978) " रीजनल इम्वैलन्सेस इन-लेवेल्स एण्ड ग्रोथ ऑफ एग्रीकल्चरल प्रोडक्टिविटी– ए केश स्टडी ऑफ विहार – कन्सेप्ट पब्लिशिंग कं0 दिल्ली ।

14. तिवारी पी0 डी0 (1988) " पैटर्न ऑफ एग्रीकल्चर प्रोडक्शन, अवेविलिटी एण्ड न्यूट्रीशन इन मध्य प्रदेश " यू0वी0वी0पी0 वाल्यूम 23 नं0 2

15. सिंह एस0पी0 (1987) " पावर्टी , फूड एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया " पब्लिश्ड इन 1991 चुग पब्लिकेशन इलाहाबाद ।

16. भाटिया एस0एस0 (1965) "पैटर्न ऑफ क्राप कन्सेन्ट्रेशन एण्ड डाइवर्जीफिकेशन इन इण्डिया " इकोनामिक ज्योग्रेफी 41 पी.पी. 40–56

17. सिंह जसवीर (1976)" एन एग्रीकल्चरल ज्योग्रेफी ऑफ हरियाना " कुरुक्षेत्र (1976) पी.पी. 254 एण्ड 313–320

****

षष्टम अध्याय

प्रतिचयित कृषकों का कृषि प्रारूप एवं पोषण :

किसी देश अथवा प्रदेश के फसलों के प्रतिरूप में परिवर्तन की सम्भावना के विषय में दो मत हैं । कुछ विद्वानों का मत है कि फसलों के प्रतिरूप में परिवर्तन नहीं किया जा सकता, जबकि दूसरे विद्वान यह मानते हैं कि सुविचारित नीति के सहारे इसे बदला जा सकता है । **श्री बसु के० डी० सिन्हा** ने यह मत व्यक्त किया कि " परम्परा बद्ध तथा ज्ञान के अत्यन्त निम्न स्तर वाले देश के किसान प्रयोग करने को उद्यत नहीं होते हैं । वे प्रत्येक बात को विरक्ति और भाग्यवाद की भावना से स्वीकार करते हैं । उनके लिए कृषि वाणिज्य व्यापार की वस्तु न होकर जीवन की एक प्रणाली है– एक ऐसे कृषि प्रधान समाज में जिसके सदस्य परम्पराबद्ध और अशिक्षित है, फसल में परिवर्तन की अधिक सम्भावना नहीं रहती ।"[1] अब इस मत को सही नहीं समझा जाता है जैसा कि पँजाब में फसल–प्रतिरूप में परिवर्तन से स्पष्ट हो गया है । अब यह बात अधिकतर विद्वानों द्वारा स्वीकार कर ली गई है कि भारत जैसे देश में भी फसल प्रतिरूप बदला जा सकता है और इसे बदलना चाहिए । फसलों के प्रतिरूप को निर्धारित करने वाले बहुत से कारक होते हैं भौतिक, तकनीकी, आर्थिक, सामाजिक, प्रशासनिक और यहाँ तक कि राजनीतिक भी । इनमें आर्थिक तत्वों का महत्व सबसे अधिक है ।

(अ) भौतिक एवं तकनीकी तत्व :

किसी प्रदेश का फसल प्रतिरूप उसकी भौतिक विशिष्टताओं अर्थात मिट्टी, जलवायु, मौसम, वर्षा आदि पर निर्भर करता है । उदाहरणतया, एक ऐसे शुष्क क्षेत्र में जिसमें थोड़ी वर्षा होती है तथा मानसून बहुत अनिश्चित होता है ज्वार और बाजरा पर अधिक निर्भर रहना पड़ता है क्योंकि ये फसलें कम वर्षा में भी हो सकती हैं । फसल चक्र का निर्धारण भी भौतिक कारणों से होता है , किन्तु तकनीकी उपायों से फसल चक्र बदला जा सकता है, तो भी कुछ परिस्थितियों में भौतिक बाधाएं निर्णायक होती हैं । उदाहरणतया पंजाब के संगरूर और लुधियाना जिलों के कुछ भागों में जलरोध के कारण चावल के उत्पादन क्षेत्र में बृद्धि हो गई है क्योंकि अन्य फसलों के मुकाबले चावल की खेती अतिरिक्त पानी को भली भाँति सह सकती है । मध्य प्रदेश में जिस भूमि का हाल ही में पुनरुद्धार किया गया है उसमें चावल उगाने के पहले वर्षों तक मोटा अनाज उगाया जा रहा था ।

मिट्टी एवम् जलवायु के अतिरिक्त किसी क्षेत्र की फसलों क्षेत्र की फसलों के प्रतिरूप पर सिंचाई सुविधाओं के प्रकार एवम् उनकी उपलब्धता का भी प्रभाव पड़ता है । जहाँ पानी उ । जहाँ पानी उपलब्ध हो जाता है, वहाँ न केवल विभिन्न प्रकार की फसल बोई जा सकती है बल्कि दोहरी व तेहरी फसहरी व तेहरी फसल भी सम्भव हो सकती है । जब नई सिंचाई सुविधाऐं उपलब्ध कराई जाती हैं तो कृषि का पूरा ढंग ही बदा पूरा ढंग ही बदल जाता है । एक नया फसल चक्र कायम किया जा सकता है या एक से अधिक श्रेष्ठ फसल चक्र सम्भव सल चक्र सम्भव हो सकता है । यह सम्भव है कि पूँजी का अभाव, अच्छे औजार, अधिक उपज देने वाले उन्नत किस्म के उन्नत किस्म के बीज, और रासायनिक उर्वरकों के लिए वित्त न मिलने के कारण, उचित प्रकार की फसलें न उगाई गई सलें न उगाई गई हों , परन्तु जैसे ही ये सुविधाएं उपलब्ध कराई जाती है फसलों के ढाँचे में परिवर्तन हो जाता है । जाता है ।

(ब) आर्थिक तत्व :

किसी प्रदेश की फसलों के प्रतिरूप का निर्धारण करने में आर्धारण करने में आर्थिक कारणों का महत्व सबसे अधिक है । आर्थिक तत्वों में महत्वपूर्ण तत्व निम्न हैं :

(1) कीमत और आय को अधिकतम करना :

अनेक व्यावहारिक अध्ययनों से कीमत में परिवर्तनों और फ परिवर्तनों और फसलों के ढाँचे में परस्पर सम्बन्ध स्थापित होता है । डा0 **बन्सल पी0सी0** [2] ने कीमत समता अनुपात" की ता अनुपात" की गतियों और गन्ने के अखिल भारतीय क्षेत्रफल में परिवर्तन के बीच तथा पटसन एवं चावल के अधीन क्षेत्रफल औअधीन क्षेत्रफल और इन वस्तुओं की सापेक्ष कीमतों के बीच घनिष्ट सम्बन्ध को प्रमाणित किया है । खाद्य और कृषि मंत्रालय ार कृषि मंत्रालय के अध्ययन से पता चलता है कि कीमतों का परिवर्तन का क्षेत्रफल के परिवर्तन पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़तात्रपूर्ण प्रभाव पड़ता है ।" ऐसा प्रतीत होता है कि कीमतों का फसलों के अधीन क्षेत्रफल पर दो रूपों में प्रभाव पड़ता है ।एभाव पड़ता है ।एक ओर तो अन्तः कीमत समता से फसल के बीच और दूसरी ओर ऊँची कीमतों की अपेक्षा कीमत स्तर का कीमत स्तर को स्थिर रखने से उत्पादकों को उत्पादन बढ़ाने की कहीं अधिक प्रेरणा मिलती है बशर्ते कि इस स्तर को कि इस स्तर को अनेक वर्षो तक कायम रखने में अनिश्चितता न हो ।" **बर्गीज** [3] का मत है कि अधिकतम आय की प्रेरणा ा आय की प्रेरणा भी फसलों का ढाँचा बदलने पर और भी अधिक प्रभाव डालती है क्योंकि कृषक उसी फसल को उगाना पसन्द को उगाना पसन्द करेगा जिससे उसे अधिकतम आय प्राप्त होगी ।" किन्तु **डा0 भाटिया** [4] का मत है कि फसलों के प्रतिरूसलों के प्रतिरूप को प्रभावित करने वाला मुख्य कारण प्रति एकड़ सापेक्ष लाभ होता है । स्पष्ट है कि किसी भी परिस्थिकिसी भी परिस्थिति में फसल का चुनाव करने में किसान पर विभिन्न वस्तुओं के बीच कीमत समता, आय का अधिकतम ह का अधिकतम होना, और प्रति एकड़ सापेक्ष लाभ का ही अधिक प्रभाव पड़ता है ।

(2) खेत का आकार :

खेत के आकार और फसलों के ढाँचे के बीच भी सम्बन्ध रहता है । छोटे किसान बड़े किसानों के मुकाबले व्यापारिक फसलों के लिए कम सापेक्ष क्षेत्रफल का उपयोग करते हैं । इसका कारण यह है कि छोटे कृषक सर्व प्रथम अपनी आवश्यकता पूर्ति हेतु खाद्यान्न उत्पन्न करना चाहते हैं । परन्तु हाल ही में उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले के अध्ययन से स्पष्ट हुआ है कि लगभग सभी कृषक, बड़े तथा छोटे, कुछ नकद फसलें उगाने का प्रयत्न करते हैं ।यह सत्य है कि निर्वाह की आवश्यकता के कारण छोटे कृषकों की फसलों का ढाँचा परम्परा से प्रभावित होता आया है किन्तु उनकी मौद्रिक आय की सीमान्त आवश्यकता किसी भी प्रकार बड़े कृषकों से अधिक नहीं हो सकती है । अर्थ व्यवस्था की प्रगति के साथ साथ छोटे कृषकों द्वारा अपनी आय अधिकतम करने के उद्देश्य से अपने शस्य प्रतिरूप में अत्यन्त महत्वपूर्ण सीमान्त परिवर्तन होने की सम्भावना है ।

(3) जोखिम के विरुद्ध बीमा :

फसल विकास का जोखिम कम से कम करने की आवश्यकता का भी फसलों के ढाँचे पर प्रभाव पड़ता है । उदाहरणतया, अनेक क्षेत्रों में ज्वार बाजरे आदि मोटे अनाज की खेती के लगातार होने का कारण मुख्यतः वर्षा की अनिश्चितता से बचने का प्रयत्न है ।

(4) आदानों की उपलब्धता :

शस्य प्रतिरूप उन्नत बीज, रासायनिक उर्वरक, पानी संग्रहण विपणन और परिवहन आदि आदानों पर भी निर्भर रहता है । एन० सी० ए० ई० आर० ने यह अनुमान लगाया है कि यदि पंजाब में अतिरिक्त सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध कराई जायें , तो 34 लाख एकड़ भूमि पर फसलों के ढाँचे में परिवर्तन हो सकता है । जिसमें से चने के अधीन 16 लाख एकड़ भूमि को अन्य अधिक लाभकारी फसलों के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है ।[5] मूँगफली के बीज की उपलब्धता के कारण मध्य प्रदेश में अनेक कृषकों को मूँगफली की खेती अधिक विस्तृत क्षेत्र में करनेकी प्रेरणा मिली । कृषकों द्वारा रुई के मुकाबले मूँगफली को श्रेष्ठ समझने का एक कारण यह भी है कि रुई की फसल विलम्ब से तैयार होती है जबकि मूँगफली की फसल शीघ्र पककर तैयार हो जाती है ।

(5) भू-धारण

फसल बटाई प्रणाली के अन्तर्गत भू-स्वामी को फसलों के चुनाव का प्रमुख अधिकार होता है जिसके परिणामस्वरूप आय को अधिक करने वाला फसलों का ढाँचा अपनाया जाता है ।

(स)राजनैतिक कारण :

सरकार वैधानिक और प्रशासनिक उपायों से फसलों के ढाँचे के निर्धारण पर प्रभाव डाल सकती है । कृषकों को कृषिगत आदान और ज्ञान उपलब्ध कराने में सहायता प्रदान कर सकती है । सरकार कुछ फसलों के लिए विशेष सुविधाएं उपलब्ध करा सकती है । यद्यपि खाद्य शस्य अधिनियम, भू उपयोग अधिनियम, धान, कपास , तिलहन आदि की सघन खेती की योजनाएं उत्पादन शुल्क तथा निर्यात शुल्क आदि के प्रयोग से या इन विभिन्न उपायों के एक साथ प्रयोग से कल्पित दिशा में फसलों के ढांचे को प्रभावित किया जा सकता है तथापि सम्भव है कि उक्त समस्त उपायों का सम्पूर्ण फसलों के ढांचे पर कुल प्रभाव ऐसा न पड़े जो राष्ट्रीयय आवश्यकताओं के अनुरूप हो ।

प्रस्तुत शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य खाद्यान्न उत्पादन के भूमि संसाधन के उपयोग का स्तर, कृषि भूमि वहन क्षमता तथा उसके पोषण स्तर का विश्लेषण करना है क्योंकि मानव द्वारा उपभोग किए जाने वाले खाद्य पदार्थो की मात्रा तथा उनका गुणात्मक स्तर बहुत कुछ कृषि उत्पादन पर निर्भर करता है । इस अध्ययन का एक व्यवहारिक पक्ष यह भी है कि ग्रामीण पोषण स्तर सम्बन्धी अध्ययन निर्वल वर्ग के आर्थिक एवं सामाजिक उत्थान के लिए नीति निर्धारकों तथा सरकारी कार्यक्रमों के सफलता पूर्वक क्रियान्वयन के लिए अत्यधिक उपयोगी होगा। वास्तव में ग्रामीण कुपोष्ण की समस्या निवारण के लिए संचालित एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम पर यह अध्ययन और अधिक ध्यान दिए जाने पर बल देता है । जिसके लिए दैव निदर्शन पद्धति के आधार पर प्रत्येक विकास खण्ड से एक-एक ग्राम का चयन किया गया है । प्रतिचयित ग्रामों का एक व्यापक सर्वेक्षण करके प्रत्येक ग्राम का कृषि भूमि उपयोग प्रमुख फसलों की औसत उत्पादता, प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता तथा प्रति व्यक्ति उपलब्ध खाद्य पदार्थो से प्राप्त पोषक तत्वों की गणना "खाद्य सन्तुलन पत्रक" विधि के आधार पर की गई है ।

ETAWAH DISTRICT
LOCATION OF SAMPLE VILLAGE
NAGLA RAMSUNDAR
AKBAR PUR
SUTIYANI
FAIZULLPUR
ASJANA
KUSMARA
ABARI
MORHI
JHABRA
INDRAVAKHI
BARCHAULI
SAFAR
BINPURPUR
TURKI PUR
0
20
KM
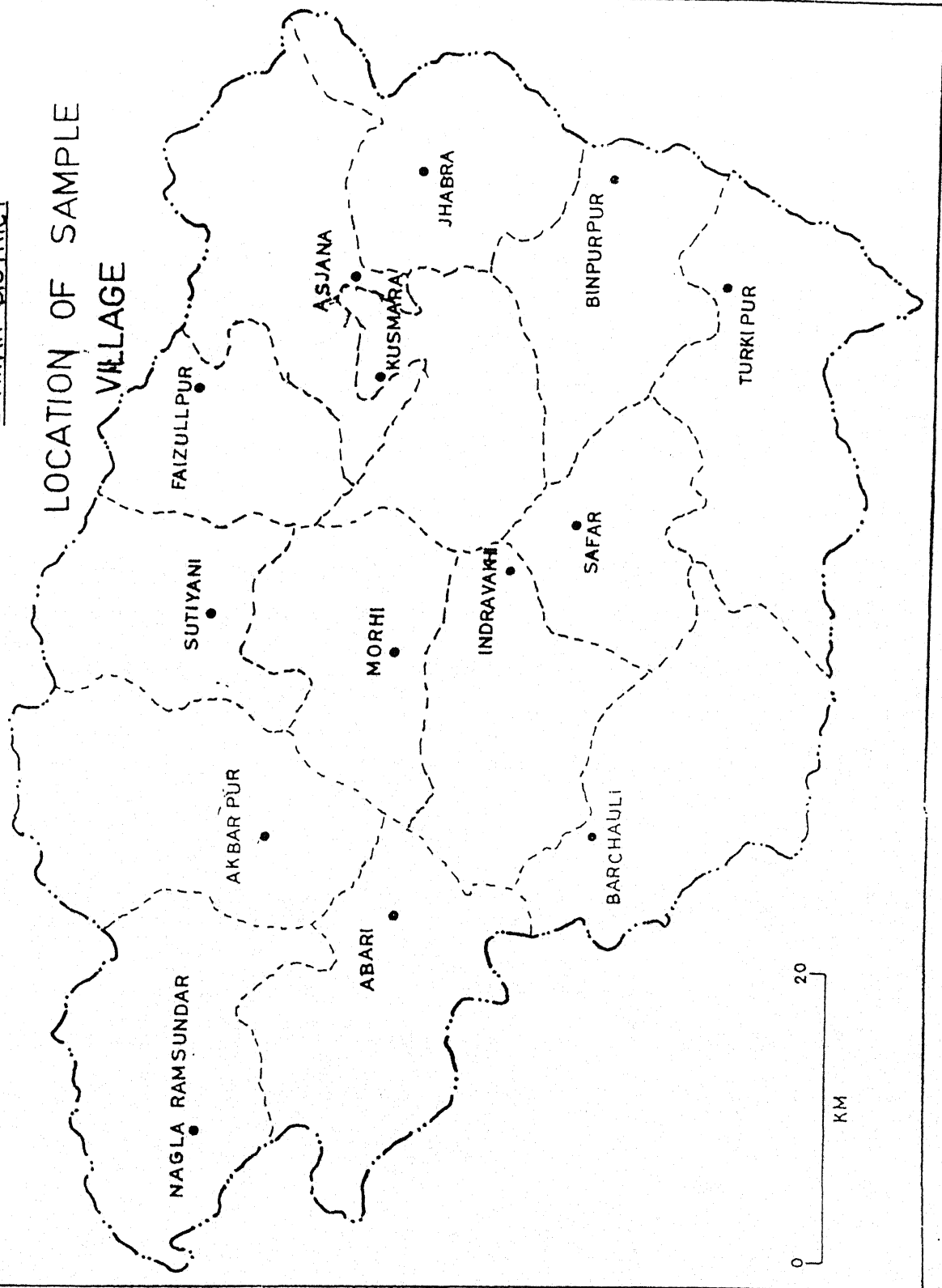
FIG. 24

1– **ग्राम–नगला राम सुन्दर** :

स्थिति : नगला राम सुन्दर ग्राम विकास खण्ड जसवन्त नगर में 26^{0}.84' उत्तरी आक्षांस तथा 78^{0}.58' पूर्वी देशान्तर में विकास खण्ड मुख्यालय से लगभग 9 किलोमीटर पूर्वोत्तर में स्थित है । यह इटावा–आगरा राजमार्ग (मुगलरोड) के उत्तर में लगभग 3 किलोमीटर पर स्थित होने के कारण डामरीकृत सम्पर्क मार्ग से जुड़ा हुआ है । इस गाँव में रबी में मुख्यतः गेहूँ तथा खरीफ में बाजरा, धान तथा मक्का प्रमुख रूप से उगाया जाता है । 575 हेक्टेयर क्षेत्रफल वाले इस ग्राम में 415 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर फसलें उगाई जाती हैं । परिवहन के साधनों की दृष्टि से यह गाँव विकास खण्ड मुख्यालय के पास स्थित होने के कारण क्रय विक्रय के लिए एक बड़े बाजार की सुविधा भी प्राप्त कर रहा है ।

ग्राम में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों को नहर, सरकारी नलकूप तथा निजी डीजल पम्प सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराते हैं । 580 से 790 मिलीमीटर औसत वार्षिक वर्षा वाले इस ग्राम में 92 प्रतिशत से भी अधिक वर्षा जून से अक्टूबर के मध्य केवल 5 महीनों में ही हो जाती है, इसलिए रबी की फसलों को सफलता पूर्वक उगाने के लिए मानसून पर निर्भर नहीं रहा जा सकता । रबी की फसल गेहूँ को उगाने के लिए कृत्रिम सिंचाई के साधनों का प्रयोग करके पलेवट देकर उगाया जाता है । इसके उपरान्त मानसूनी वर्षा के अभाव के कारण न केवल गेहूँ बल्कि रबी की अन्य फसलों को कृत्रिम सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है ।

शस्य भूमि उपयोग :

नगला राम सुन्दर ग्राम में वर्ष में रबी–खरीफ तथा जायद तीनों मौसमों की फसलों को उगाया जाता है । विभिन्न फसलों का क्षेत्रफलीय वितरण तालिका संख्या 6.1 में दर्शाया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक: 6.1 नगला राम सुन्दर ग्राम का शस्य भूमि उपयोग ।

	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत
1– प्रतिवेदित क्षेत्रफल	575	–
2– शुद्ध बोया गया क्षेत्र	415	72.17
3– एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	224	53.98
4– सकल बोया गया क्षेत्र	639	153.98
5– शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल	335	85.54
6– सकल सिंचित क्षेत्रफल	448	70.11
7– रबी का क्षेत्रफल	352	55.08
8– खरीफ का क्षेत्रफल	272	42.57
9– जायद का क्षेत्रफल	15	2.35

सारिणी क्रमांक 6.1 नगला राम सुन्दर ग्राम के भूमि उपयोग पर प्रकाश डाल रही है । यह ग्राम अपने सम्पूर्ण प्रतिवेदित क्षेत्रफल में 72.17 प्रतिशत क्षेत्र को विभिन्न फसलें उगाने में प्रयोग कर रहा है । कुल 415 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र में 53.98 प्रतिशत क्षेत्रफल पर एक से अधिक फसलें उगाई जा रही है तथा सम्पूर्ण कृषि क्षेत्र में 85.54 प्रतिशत भूमि को कृत्रिम सिंचाई सुविधाएं उपलब्ध हे । यदि विभिन्न फसलों को प्रापत होने वाली सिंचाई सुविधाओं की दृष्टि से देखें तो 70.11 प्रतिशत सकल फसलों को सिंचन सुविधाएं प्राप्त हैं । सकल बोये गये क्षेत्रफल 639 हेक्टेयर में 55.08 प्रतिशत क्षेत्रफल पर रबी की फसलें , 42.57 प्रतिशत क्षेत्रफल पर खरीफ की फसलें तथा जायद की फसलों का क्षेत्रफल मात्र 2.35 प्रतिशत देखा गया ।

तालिका 6.2 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण ।

फसल का नाम	क्षेत्रफल हेक्टेयर में	सकल बोये गये क्षेत्रफल का प्रतिशत	प्रतिशत
खरीफ की फसलें	272	42.57	खरीफ का प्रतिशत
1–धान	73	11.73	26.84
2–ज्वार	8	1.25	2.94
3– बाजरा	110	17.21	40.44
4–मक्का	50	7.83	18.38
5–अरहर	23	3.60	8.46
6– अन्य	8	1.25	2.94
रबी की फसलें	352	55.08	रबी का प्रतिशत
1– गेहूँ	1.86	29.11	52.84
2– जौ	18	2.82	5.11
3–चना	21	3.29	5.97
4–मटर	47	7.36	13.35
5– लाही	33	5.16	9.38
6– आलू	34	5.32	9.66
7–गन्ना	6	0.94	1.70
8–अन्य	7	1.10	1.99
जायद की फसलें	15	2.25	–
योग	639	100.00	

तालिका क्रमांक 6.2 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत बोये जाने वाले क्षेत्रफल का चित्र प्रस्तुत कर रही है । नगला राम सुन्दर ग्राम में विभिन्न फसलों में केवल तीन फसलों का प्रभुत्व दिखाई पड़ता है जो सकल बोये गये क्षेत्रफल का लगभग 58 प्रतिशत क्षेत्र घेरे हुए है । खरीफ के मौसम में उगाई जाने वाली फसलों में धान तथा बाजरा फसलों की प्रमुखता है अन्य फसलों में मक्का, अरहर तथा ज्वार उगाई जाती है । इसके अतिरिक्त अन्य फसलों में शब्जियों की प्रधानता है । रबी के मौसम में गेहूँ की प्रधानता है । मटर की फसल दूसरे स्थान पर है । लाही तथा आलू की फसलें लगभग समान स्तर का प्रदर्शन कर रही है । अन्य फसलों में इस मौसम में भी शब्जियों का बोल वाला रहता है । जायद की फसलों में, खरबूजा, तरबूज, ककड़ी की प्रधानता रहती है, इस मौसम में उर्द/मूँग भी उगाई जाती है । खरीफ की फसलों में धान, बाजरा तथा मक्का ही प्रमुख फसलें हैं जो खरीफ फसल क्षेत्र का 85 प्रतिशत से भी अधिक क्षेत्रफल पर आच्छादित है । अन्य तीन फसलें जिनमें ज्वार, अरहर तथा खरीफ की शब्जियां 15 प्रतिशत से भी कम क्षेत्रफल पर उगाई जाती है । रबी की फसलों में गेहूँ और मटर केवल दो ही फसलें 65 प्रतिशत से अधिक क्षत्रफल का प्रतिनिधित्व कर रही है । दलहनी फसलों में अरहर, चना तथा मटर ही प्रमुख रूप से उगाई जाती है, परन्तु अरहर जो कि लोगों द्वारा अपने भोजन में दाल के स्थान पर प्रयुक्त की जाती है, का क्षेत्रफल अत्यनत निम्न हे जबकि भोजन में अधिकांश प्रोटीन दालों के सेवन से ही प्राप्त होता है । यह भी एक आश्चर्यजनक तथ्य है कि उक्त ग्राम में नकदी फसलों का नितान्त अभाव है । नकदी फसलों के रूप में केवल धान तथा लाही का ही उत्पादन किया जाता है ।

खरीफ मोसम में कुल 639 हेक्टेयर कृषि भूमि का केवल 42.57 भाग ही विभिन्न फसलों के अन्तर्गत प्रयोग किया जाता है जिसमें बाजरा का क्षेत्रफल 40.44 प्रतिशत है । इस बाजरे की फसल के बाद उसमें चने अथवा मटर की फसल सरलता से प्राप्त की जा सकती है परन्तु चने की फसल की अपेक्षा मटर की फसल को सिंचाई की आवश्यकता अधिक पड़ती है ।धान की फसल खरीफ की फसल में 26.84 प्रतिशत क्षेत्र में उगाई जाती है । इस फसल के बाद यदि सिंचाई की सुविधा है तो धान के खेतों में धान के बाद गेहूँ का उतपादन किया जाता है । नगला राम सुन्दर में सिंचाई की सुविधा पर्याप्त होने के कारण रबी की फसल में गेहूँ का क्षेत्रफल आधे से भी अधिक हो जाता है । दूसरा स्थान रबी की फसल में लाही का आता है जिसे लोग न केवल स्वयं की तेल की आवश्यकता पूरा करने के लिए उगाते हैं बल्कि इससे लोगों को कुछ न कुछ राशि भी प्राप्त हो जाती है । गन्ना और आलू का लगभग समान महत्व है और ये दोनों फसलें क्रमशः 9.66 तथा 9.38 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाई जाती है । जनपद अथवा क्षेत्र में कोई भी चीनी मिल न होनेके कारण गन्ना नकदी तो प्रदान नहीं करता है परन्तु कृषक गन्ने की पेराई करके गुड़ तैयार करते हैं जो स्वयं उपयोग करते हैं और बचे हुए गुड़ को बाजार में बेचकर

सारिणी संख्या 6.3 भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का का क्षेत्र	खरीफ का का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
प्रति व्यक्ति	0.1736	0.1253	0.0676	0.1929	0.1072	0.1353	0.1078	0.0806	0.0045

नकदी भी प्राप्त करते हैं । ठीक यही स्थिति आलू की भी है । जायद की फसलों में खरबूजा, तरबूज, ककड़ी प्रमुख रूप से उगाये जाते हैं, इस फसल में शब्जियों का भी प्रमुख स्थान है जिनमें लौकी, कद्दू, करेला तथा भिण्डी प्रमुख रूप से उगाई जाती है । इस गाँव को जसवन्त नगर कस्बा पास में ही होने के कारण बाजार सुविधा भी प्राप्त हो जाती है, इस कस्बे में कृषि मण्डी समिति भी है ।

भूमि पर जनसंख्या का भार :

ग्राम नगला राम सुन्दर में कृषि भूमि पर जनसंख्या का भार भी ज्ञात करने का प्रयास किया गया है जिसे सारिणी क्रमांक 6.3 में दर्शाया गया है ।

सारिणी क्रमांक 6.3 ग्राम की उपलब्ध भूमि को विभिन्न वर्गो में विभाजित करके प्रति व्यक्ति भूमि उपलब्धता को दर्शा रही है । ग्राम नगला राम सुन्दर की कुल जनसंख्या 3312 है , जबकि कृषि कार्यो के लिए कुल उपलब्ध भूमि 415 हेक्टेयर है, इसलिए प्रति व्यक्ति कृषित भूमि 0.1253 हेक्टेयर है जबकि प्रतिवेदित क्षेत्रफल प्रति व्यक्ति 0.1736 हेक्टेयर है । यद्यपि प्रति व्यक्ति कृषि भूमि 0.1253 हेक्टेयर है परन्तु खरीफ मौसम में यह घटकर मात्र 0.0806 हेक्टेयर तथा रबी मौसम में 0.1078 हेक्टेयर रह जाती है तथा जायद फसल के लिए मात्र 0.0045 हेक्टेयर ही प्रयोग की जा रही है । सारिणी यह भी चित्रण कर रही है कि एक से अधिकबार बोया गया प्रति व्यक्ति क्षेत्रफल मात्र 0.0676 हेक्टेयर है जबकि प्रति व्यक्ति सकल बोया गया क्षेत्र 0.1929 हेक्टेयर है, दूसरे शब्दों में ग्राम नगला राम सुन्दर में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पादन करने के लिए 0.1929 हेक्टेयर भूमि प्रयोग की जा रही है । सिंचन सुविधाओं की दृष्टि से देखे तो प्रति व्यक्ति 0.1072 हेक्टेयर शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल है जबकि 0.1353 हेक्टेयर सकल सिंचित क्षेत्रफल है ।

यदि गाँव की जनसंख्या की व्यवसायिक संरचना ज्ञात हो तो भूमि पर जनसंख्या के भार को मालूम किया जा सकता है । व्यवसायिक संरचना के दृष्टिकोण से देखे तो सर्वेक्षण में जो सूचनाएं प्राप्त हुई हैं उसके अनुसार नगला राम सुन्दर की कुल जनसंख्या प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से कृषि उत्पादन पर ही निर्भर करती है क्योकि कुल जनसंख्या का 85 प्रतिशत भाग प्राथमिक रूप से कृषि पर निर्भर है, लगभग 13 प्रतिशत द्वितीय स्तर के ग्रामीण है जो कृषकों पर ही निर्भर करते हैं, लगभग 2 प्रतिशत जनसंख्या लाभान्वित वर्ग में आती है और जो गाँव के बाहर रहकर जीवनयापन के साधन जुटा रही है ।

बाहर रहने वाले लोग यदा कदा अपने परिवार के लोगों की आर्थिक सहायता का अधिकांश हिस्सा या तो राजस्व चुकाने में अथवा छोटे मोटे कृषि यंत्रों को क्रय करने में व्यय हो जाती है परन्तु इस आर्थिक सहायता के बदले परिवार को भी यदा कदा खाद्य पदार्थो के रूप में उन लोगों की सहायता करनी पड़ती है, परन्तु समयानुकूल यदि कृषकों को अपने कृषि कार्यो का संचालन व्यय अन्य स्रोतों से भी प्राप्त हो जाता है तो यह कृषि के लिए अत्यन्त लाभकारी होता है । इस प्रकार व्यवसायिक संरचना की दृष्टि से भी देखे तो भी ग्राम की सम्पूर्ण जनसंख्या को कुल भार कृषि भूमि को ही वहन करना पड़ता है ।

विभिन्न फसलों का प्रति हेक्टेयर उत्पादन :

नगला राम सुन्दर के कृषकों द्वारा उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन सारिणी क्रमांक 6.4 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.4 विभिन्न फसलों का प्रति हेक्टेयर उतपादन दर्शा रही है । यह औसत उत्पादन सर्वेक्षण से प्राप्त किया गया है । नगला राम सुन्दर के समस्त कृषक परिवारों की सूची में से निदर्शन पद्धति से 20 कृषक परिवारों का चुनाव किया गया , जिनके द्वारा विभिन्न फसलों से प्राप्त किए गये उत्पादन के आधार पर औसत उत्पादकता का आंकलन किया गया है । इस औसत उत्पादन के आधार पर ही विभिन्न फसलों का कुल उत्पादन प्राप्त किया गया ।

इस प्रकार कुल जनसंख्या के उपभोग के लिए उपलब्ध विभिन्न खाद्य उत्पादन के आधार पर ग्राम की "खाद्य सन्तुलन पत्रक" तैयार किया गया जिसमें प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्धता की गणना की गई है, प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता के आधार पर पोषण स्तर का आंकलन किया गया है ।क्योंकि ग्रामीण जनसंख्या के आहार में खाद्यान्नों का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान रहता है । सामान्यतया माँस, मछली तथा अण्डों का प्रयोग नगण्य रहता है इसलिए ग्रामीण जनसंख्या को कैलोरिक ऊर्जा का अधिकांश हिस्सा खाद्यान्नों से प्राप्त होता है । खाद्य संतुलन पत्रक के आधार पर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन विभिन्न खाद्यान्नों से विभिन्न पोषक तत्वों की कितनी कितनी मात्रा प्राप्त करता है, इस तथ्य की गणना सारिणी क्रमांक 6.5 में दर्शायी गई है । सारिणी नगला राम सुन्दर ग्राम में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्धता तथा खाद्यान्नों के प्राप्त पोषक तत्वों का चित्र प्रस्तुत कर रही है जिसमें 79.26 प्रतिशत ऊर्जा खाद्यान्नों से तथा 20.74 प्रतिशत ऊर्जा अन्य पदार्थो – तेल, आलू तथा गुड़ से प्राप्त की जा रही है । यदि फसलवार प्राप्त होने वाली ऊर्जा के दृष्टिकोण से देखें तो रबी की फसलों से उत्पन्न खाद्यान्नों से 48.64 प्रतिशत तथा खरीफ की फसलों से 30.62 प्रतिशत ऊर्जा ग्रामीणों को प्राप्त हो रही है । यदि खाद्यान्नों में भी अन्न तथा दालों को अलग–अलग कर दें तो

सारिणी 6.4 विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन (किलोग्राम में)

फसल	प्रति हेक्टेयर उत्पादन (किलोग्राम)	जनपद का उत्पादन	जनपदीय उत्पादन स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत में)
1–धान	2,115	1,970	+7.36
2–ज्वार	1,055	1,025	+2.93
3– बाजरा	1,485	1,523	–2.49
4– मक्का	1,274	1,377	–7.48
5–गेहूँ	2,426	2,506	–3.19
6–जौ	1,869	1,906	–1.94
7–अरहर	1,125	1,326	–15.16
8–चना	1,258	1,283	–1.95
9– मटर	1,534	1,650	–7.03
10–उर्द/मूँग	419	473	–11.42
11–लाही	1,417	1,247	+13.63
12. आलू	18,942	18,688	+1.36
13–गन्ना	30,822	33,699	–8.54

तालिका क्रमांक 6.5 प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्नों की मात्रा तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम –नगला राम सुन्दर)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाई- ड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवो- फ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विट सी
1. चावल	68.97	237.95	5.17	0.69	0.62	0.41	52.90	6.90	131.04	2.21	1.38	0.14	0.11	2.69	–
2. ज्वार	5.66	19.75	0.59	0.11	0.09	0.09	4.11	1.41	12.56	0.33	2.66	0.02	0.01	0.17	–
3. बाजरा	109.45	395.11	12.70	5.47	2.52	1.31	73.88	45.97	323.97	5.47	144.47	0.36	0.27	2.52	–
4. मक्का	42.68	148.53	4.74	1.54	0.64	1.15	28.25	4.27	148.53	0.85	38.41	0.31	0.04	0.77	–
5. गेहूँ	319.14	1104.22	37.66	4.79	4.79	3.83	227.23	130.85	976.57	15.64	204.25	1.44	0.54	17.55	–
6. जौ	22.54	75.73	2.59	0.29	0.27	0.88	15.69	5.86	48.46	0.68	2.25	0.11	0.04	1.22	–
7. अरहर	12.52	41.94	2.79	0.21	0.44	0.19	7.21	9.14	38.06	0.73	16.53	0.05	0.02	0.36	–
8. चना	12.78	47.54	2.66	0.72	0.34	0.15	7.78	16.48	42.30	1.16	16.49	0.05	0.02	0.33	–
9. मटर	37.57	118.35	7.40	0.41	0.83	1.69	21.23	28.18	111.96	1.92	14.65	0.18	0.07	1.28	
10. उर्द/ मूँग	1.09	3.79	0.24	0.01	0.03	0.06	0.62	3.13	3.39	0.09	0.77	0.01	0.002	0.01	0.01
11. लाही/* तेल	13.65	122.85	–	13.65	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
12. आलू	399.56	387.57	6.39	0.40	2.40	1.60	90.30	39.96	159.82	2.80	95.89	0.40	0.04	4.79	67.92
13. गन्ना/ गुड़+	16.52	63.27	0.07	0.02	0.10	–	15.69	13.22	6.61	1.88	27.75	0.03	0.01	0.08	–
योग	1062.13	2766.60	83.00	28.31	13.07	11.37	544.90	305.36.	2003.28	33.75	565.52	3.10	1.192	31.79	67.93

* लाही के कुल उत्पादन से 36 प्रतिशत की दर से तेल की गणना की गई है ।

+ गन्ना के कुल उत्पादन से 12 प्रतिशत की दर से गुड़ की गणना की गई है ।

अनाज से 71.61 प्रतिशत तथा दालों से मात्र 7.65 प्रतिशत ऊर्जा प्राप्त हो रही है । दालों में यद्यपि मटर अकेले 60 प्रतिशत से अधिक ऊर्जा उपलब्ध करा रही है परन्तु नगला राम सुन्दर ग्राम में दाल के रूप में मटर का प्रयोग नहीं किया जाता है । इसी प्रकार खरीफ की फसलों में बाजरा तथा रबी की फसलों में गेहूँ का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है ।

2. ग्राम-अवारी:

स्थिति :

विकास खण्ड बढ़पुरा के अन्तर्गत ग्राम अवारी भौगोलिक दृष्टि से $26^0.74^1$ उत्तरी अक्षाँश तथा $78^0.66^1$ पूर्वी देशान्तर पर इटावा-भिण्ड राजमार्ग पर जनपद मुख्यालय से दक्षिण में लगभग 11 किलोमीटर दूर स्थित है । इस ग्राम के उत्तर में यमुना नदी के लगभग 9 किलोमीटर तथा दक्षिण में चम्बल नदी लगभग 9 किलोमीटर दूरी पर बहती है। यमुना तथा चम्बल नदियोंके मध्य में स्थित होने के कारण यहाँ की भूमि अत्यनत ऊँची नीची है, ग्राम के पश्चिम में एक नाला है जो वर्षाकाल में क्षेत्र का पानी लेकर चम्बल नदी में डालता है, शेष समय यह नाला सूखा रहता है, परन्तु इस नाले के कारण ग्राम की कुछ भूमि का ढाल पश्चिम की ओर तथा कुछ भूमि का ढाल पूर्व की ओर है, जिससे सिंचाई के साधनों का अभाव रहता है । उक्त दानों नदियों के कारण ग्राम का जलस्तर भी 10 से 15 मीटर गहरा रहता है । यहाँ की भूमि काली और कंकड़युक्त होने के कारण यहाँ पर खरीफ में बाजरा तथा रबी में गेहूँ, लाही, जौ तथा चना की फसल महत्वपूर्ण हो जाती है । सिंचाई के अभाव के कारण अधिक उपज देने वाला गेहूँ न बोकर देशी प्रजातियां उगाई जाती हैं । जो कम सिंचाई में भी उत्पन्न की जा सकती है ।

इस गाँव में अधिकाँश कृषि फसलें मानसूनी वर्षा पर ही निर्भर रहती है है जो कि अधिकतर जून से अक्टूबर के मध्य पाँच महीनों में ही समाप्त हो जाती है, इसके उपरान्त दिसम्बर तथा फरवरी के मध्य भी यदि एक दो बार वर्षा हो जाती है तो कृषि उपज बहुत अच्छी हो जाती है अन्यथा कृषि फसलों की औसत उपज कम रह जाती है ।

शस्य भूमि उपयोग :

ग्राम अवारी में वर्ष की दो ही प्रमुख फसलें खरीफ तथा रबी की फसलें ही उगाई जाती है । जायद की फसलें अधिकाँश चम्बल के किनारे जिसे क्षेत्रीय भाषा में कछार कहा जाता है, में ही उगाई जाती है जिनमें खरबूजा, तरबूज, ककड़ी , खीरा तथा शब्जियों की ही प्रमुखता रहती है । जिन कृषकों के पास अपने निजी सिंचाई के साधन सुलभ हैं, वे ही आधुनिक कृषि तकनीक का अत्यन्त सीमित प्रयोग कर पा रहे हैं । ग्राम के शस्य भूमि उपयोग को सारिणी क्रमांक 6.6 में दर्शाया जा रहा है ।

तालिका क्रमांक 6.6 अवारी ग्राम का शस्य भूमि उपयोग ।

	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत
1. प्रतिवेदित क्षेत्रफल	388	-
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	274	70.62
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	78	28.47
4. सकल बोया गया क्षेत्र	352	128.47
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	105	38.22
6-सकल सिंचित क्षेत्र	122	34.66
7- रबी का क्षेत्र	195	55.40
8. खरीफ का क्षेत्र	152	43.80
9-जायद का क्षेत्र	05	1.42

सारिणी 6.6 अवारी ग्राम के शस्य भूमि उपयोग को दर्शा रही है जहाँ कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल 388 हेक्टेयर में से 70.62 प्रतिशत भूमि पर कृषि की जा रही है । सिंचन सुविधाओं के अभाव में एक से अधिक बार बोई गई फसलों का प्रतिशत भी केवल 28.47 प्रतिशत है जिसका अर्थ है कि यदि सिंचाई की सुविधाएं और अधिक उपलब्ध हो तो कृषि भूमि का और अधिक अच्छा उपयोग किया जा सकता है । इस ग्राम में कृषि के लिए उपलब्ध कुल भूमि में से मात्र 38.32 प्रतिशत भूमि को ही सिंचन सुविधाएं उपलब्ध हैं । यदि फसलवार विचार करें तो 34.66 प्रतिशत फसलों को ही सिंचाई की सुविधाएं प्राप्त हैं । सकल बोये गये क्षेत्र में से मात्र 43.18 प्रतिशत भूमि पर खरीफ की फसलें उगाई जा रही है जिसमें बाजरा फसल की प्रधानता है, जबकि 55.40 प्रतिशत क्षेत्र पर रबी की फसलें उगाई जा रही है जिसमें गेहूँ , जौ, चना तथा लाही ही प्रमुख फसलें हैं । जायद मौसम में शब्जियों , खीरा, ककड़ी, खरबूजा, तरबूज की ही प्रधानता है जो अधिकाँश चम्बल नदी की तलहटी में ही उगाई जाती हैं।

तालिका 6.7 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण (हेक्टेयर में) ।

फसल का नाम	क्षेत्रफल	प्रतिशत (सकल बोये गये क्षेत्र से)	प्रतिशत
(अ) खरीफ की फसलें	152	43.18	खरीफ का
धान	13	3.69	8.55
2. ज्वार	08	2.27	5.26
3. बाजरा	98	27.84	64.47
4. मक्का	09	2.56	5.92
5. अरहर	19	5.40	12.50
6. अन्य	05	1.42	3.29
(ब) रबी की फसलें	195	55.40	रबी का
1. गेहूँ	59	16.76	30.26
2. जौ	26	7.39	13.33
3. चना	42	11.93	21.54
4. मटर	01	0.28	0.51
5. लाही	48	13.64	24.62
6. आलू	8	2.27	4.10
7. गन्ना	7	1.99	3.59
8. अन्य	4	1.14	2.05
(स) जायद की फसलें	05	1.42	-
योग	352	100.00	-

तालिका क्रमांक 6.7 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत बोये जाने वाले क्षेत्रफल का विश्लेषण प्रस्तुत कर रही है । ग्राम अवारी में खरीफ फसल का क्षेत्र का 43.18 प्रतिशत क्षेत्र है और रबी फसल 55.40 प्रतिशत भागेदारी कर रही है । जायद फसलों का क्षेत्र अत्यल्प 1.42 प्रतिशत ही है । यदि सम्पूर्ण वर्ष के फसल वितरण को देखे वर्ष भर में बाजरा, गेहूँ तथा लाही केवल तीन फसलें ही लगभग 58 प्रतिशत क्षेत्रफल पर हिस्सेदारी कर रही है जिसका अर्थ है कि ये तीनों फसलें अवारी ग्राम में प्रभुत्व स्थापित किए हुए हैं, जिसमें बाजरा की फसल अकेले लगभग 29 प्रतिशत की हिस्सेदारी कर रही है । चना की फसल लगभग 12 प्रतिशत भागेदारी करके एक महत्वपूर्ण फसल के रूप में उगाई जाती है । अन्य फसलें कमोवेश एक समान स्तर को प्रदर्शित कर रही है ।

खरीफ के मौसम में इस ग्राम में पॉच फसलें ही प्रमुख रूप से उगाई जाती है जिसमें बाजरा फसल 64 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल पर बोई जाती है, बाजरा फसल की प्रधानता इस तथ्यय को स्पष्ट करता है कि अवारी ग्राम की भूमि ढालू है जो पानी को एक स्थान पर इकट्ठा नहीं होनेदेती है जिसके कारण बाजरा फसल के उतपादन के लिए परिस्थितियां अनुकूल है क्योकि जून से अक्टूबर तक अधिक वर्षा होने के कारण तथा वर्षा का पानी भूमि के ढालू होने के कारण खेतों में एकत्रित भी नहीं हो पाता है जिस कारण बाजरे की फसल अधिक बोई जाती है । क्योकि धान के लिए चिकनी मिट्टी जो पानी को अधिक धारण करने की क्षमता रखती हो, में ही सफलतापूर्वक उगाई जाती है । ग्राम के पूर्व तथा पश्चिम पूर्व में जो भूमि समतल है उसी पर कृषकों द्वारा धान की फसल उगाई जाती है । अरहर भी एक महत्वपूर्ण फसल के रूप में अपना एक स्थान रखती है, परन्तु अब देशी अरहर के स्थान पर शीघ्र पकने वाली अरहर बोई जाती है जिसके कटने के बाद गेहूँ, जौ तथा चने की फसल सफलता पूर्वक प्राप्त की जाती है । रबी मौसम की फसलों में यद्यपि गेहूँ का महत्व अन्य क्षेत्रों की भाँति इस ग्राम के लिए नहीं है परन्तु फिर भी गेहूँ अन्य फसलों की अपेक्षा प्रथम स्थान पर है, परन्तु जिन कृषकों के पास निजी सिंचाई के साधन है वे तो उन्नत किस्म का गेहूँ बोकर अधिक उपज प्राप्त कर पाते हैं अन्य कृषक अपनी खाद्यान्न आवश्यकता के लिए तथा जानवरों के लिए चारे की व्यवस्था हेतु देशी गेहूँ को ही अधिक प्राथमिकता देते हैं क्योंकि उन्नत किस्म का गेहूँ बौनी जाति का होने के कारण चारे का कम अनुपात रहता है । चारे की आवश्यकता को पूरा करने के लिए कुछ कृषकों द्वारा जौ की कृषि को भी प्राथमिकता देते हैं यह फसल कम पानी तथा कम उर्वरक पाकर भी उपज अच्छी देती है । कम लागत पर अच्छी उपज के कारण यह फसल 13.33 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है । इस ग्राम में तिलहन का एक

महत्वपूर्ण स्थान है, तिलहन उत्पादन से कृषकों की न केवल तेल की आवश्यकता ही पूरी होती है अपितु इस ग्राम के लिए यह फसल नकदी भी प्रदान करती है । लाही के उत्पादन में भी कम लागत आती है परन्तु प्रतिफल अच्छा प्राप्त हो जाता है इस कारण इस सफसल का इस ग्राम के लिए द्वितीय महत्वपूर्ण स्थान है । चने की फसल 21.54 प्रतिशत क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्शा रही है, यह फसल सामान्यतः बाजरे की फसल लेने के बाद खाली हुए खेतों में सफलता पूर्वक उगाई जाती है, यदि इस फसल को प्राकृतिक अथवा कृत्रिम एक पानी फसल में फूल आने के पहले प्राप्त हो जाता है तो यह फसल भी कृषकों को अच्छी उपज देती है और नकदी फसल का स्थान ले लेती है । इस मौसम में आलू की फसल स्वयं उपभोग के लिए की जाती है जो वर्ष भर कृषकों के शब्जी के काम आता है। गन्ने की फसल भी अधिकॉश स्वयं के लिए ही उगाई जाती है, गन्ने से गुड़ बनाकर उपभोग किया जाता है । जायद की फसलों में कोई फसल अधिक महत्त्व की नहीं उगाई जाती है । चम्बल नदी के कछार में इसका अधिकांश क्षेत्रफल स्थिति है जो मल्लाह जाति के लोगों द्वारा कुछ नकदी प्राप्त करने के उद्देश्य से उगाई जाती है । यह क्षेत्रफल न केवल ग्राम के कुछ धनी लोगों की शब्जी की आवश्यकता को पूरा करता है बल्कि ग्राम के पास लगभग आध्घा किलोमीटर दूर स्थित उदी कस्बे की आवश्यकता को भी पूरा करता है । जायद फसलों के कुछ उत्पादन को यहाँ से लगभग 11 किलोमीटर दूर स्थिति जनपद मुख्यालय भी भेजा जाता है । जहाँ पर इन फसलों की कीमत कुछ अधिक प्राप्त हो जाती है । परन्तु जनपद मुख्यालय तक उत्पादन ले जाने में कृषकों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जिसमें अधिक परिवहन व्यय मण्डी में अनेक अनाधिकृत कटौतियां तथा कम तौल आदि प्रमुख है इसलिए कृषकों द्वारा स्थानीय बिक्री ही उपयुक्त लगती है, केवल बचे हुए माल को ही मण्डी भेजा जाता है ।

भूमि पर जनसंख्या का भार

ग्राम अवारी में जनसंख्या के भार का विवरण तालिका क्रमांक 6.8 में दर्शाया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 6.8 अवारी ग्राम में जनसंख्या के भार को चित्रित कर रही है । इस ग्राम में कृषि के लिए प्रति व्यक्ति उपलब्ध भूमि 0.1492 हेक्टेयर है जबकि प्रति व्यक्ति उपलब्ध इस कृषि भूमि को खरीफ फसलों के लिए मात्र 0.0828 हेक्टेयर उपयोग में लाई जा रही है जबकि रबी फसलों के लिए यह मात्रा थोड़ी बढ़कर 0.1062 हेक्टेयर हो जाती है, और जायद फसलों के लिए मात्र 0.0027 हेक्टेयर प्रति व्यक्ति उपयोग में लाई जा रही है । एक से अधिक बार बोया क्षेत्रफल अत्यन्त निम्न 0.0425 हेक्टेयर है जो इस तथ्य को स्पष्ट कर रहा है कि इस ग्राम में बहुफसली क्षेत्र अत्यन्त निम्न है । तीनों फसलों रबी, खरीफ तथा जायद में अवारी ग्राम की जनसंख्या के जीवन यापन के लिए प्रति व्यक्ति 0.1917 हेक्टेयर भूमि उपलब्ध है ।

तालिका 6.8 कृषि भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
प्रति व्यक्ति	0.2113	0.1492	0.0425	0.1917	0.0572	0.0664	0.1062	0.0828	0.0027

अवारी ग्राम की जनसंख्या की व्यावसायिक संरचना के आधार पर कृषि भूमि पर पड़ने वाले भार के महत्व को जाना जा सकता है । व्यावसायिक संरचना के आधार पर इस ग्राम में 83 प्रतिशत जनसंख्या आधार भूत रूप से कृषि कार्यों में संलग्न है और अपने समस्त दायित्व कृषि उपज से ही पूरी करती है , जबकि 15 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या द्वितीय स्तर की ग्रामीणजनसंख्या है जो कृषि कार्यों के अतिरिक्त कुछ अन्य व्यावसायिक कार्य सम्पन्न कर लेती है ।मात्र 27 लोग इस प्रकार के हैं जो गॉव से बाहर रहकर अपने जीवन यापन के साधन जुटाते हैं , इनमें से 6 व्यक्ति अकेले बाहर रहते हैं तथा 10 लोग सपरिवार अन्य स्थानों पर रहकर नौकरी पेशा में लगे हुए हैं ।

विभिन्न फसलों का प्रति हेक्टेयर औसत उत्पादन :

अवारी ग्राम का प्रति हेक्टेयर औसत उत्पादन सारिणी क्रमांक 6.9 में दर्शायया जा रहा है ।

सारिणी 6.9 विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन (प्रति हैक्टेयर (किलोग्राम में (

फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/ कम (प्रतिशत में (
1.धान	1,962	1,970	−0.41
2.ज्वार	1,073	1,025	+4.68
3.बाजरा	1,544	1,523	+1.38
4.मक्का	1,275	1,377	−7.41
5.गेहूँ	2.299	2,506	−8.26
6.जौ	1,991	1,906	+4.46
7.अरहर	1,458	1,326	+9.95
8.चना	1,158	1,283	−9.74
9.मटर	1,517	1,650	−8.06
10.उर्द/मँग	480	473	+1.48
11.लाही	1,361	1,247	+9.14
12.आलू	20,372	18,688	+9.01
13.गन्ना	32,613	33,699	−3.22

सारिणी क्रमांक 6.9 ग्राम अवारी में उत्पादित होने वाली पमुख फसलों के औसत उत्पादन का चित्रण कर रही है । जिसमें ग्राम की विभिन्न फसलों में जनपदीय स्तर से ज्वार 4.48 प्रतिशत बाजरा

सारिणी 6.10 प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्नों की मात्रा तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम अवारी)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाई-ड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लोह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवो-फ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	20.55	70.90	1.54	0.21	0.185	0.123	15.762	2.055	39.045	0.657	0.411	0.043	0.033	0.801	
2. ज्वार	10.38	36.23	1.08	0.20	0.166	0.166	7.536	2.595	23.043	0.602	4.878	0.038	0.013	0.322	
3. बाजरा	184.76	666.98	21.43	9.24	4.249	2.217	124.713	77.599	546.889	9.239	243.883	0.609	0.462	0.249	
4. मक्का	13.87	48.27	1.54	0.50	0.208	0.374	9.182	1.387	48.267	0.277	12.483	0.100	0.014	0.249	
5. गेहूँ	175.99	608.92	20.77	2.64	2.640	2.112	125.305	72.156	538.529	8.623	112.633	0.792	0.299	9.679	
6. जौ	58.74	197.37	6.75	0.76	0.705	2.291	40.883	15.272	126.291	1.762	5.874	0.276	0.117	3.172	
7. अरहर	24.18	81.00	5.39	0.41	0.846	0.363	13.928	17.651	73.507	1.402	31.917	0.109	0.046	0.701	
8. चना	42.46	157.95	8.83	2.38	1.146	0.509	25.858	54.773	140.542	3.864	54.773	0.161	0.076	1.104	
9. मटर	1.43	4.49	0.28	0.01	0.031	0.064	0.806	1.069	4.249	0.073	0.556	0.007	0.003	0.048	
10. उर्द/मूँग	0.90	3.14	0.20	0.01	0.029	0.048	0.516	2.588	2.805	0.076	0.640	0.004	0.002	0.013	0.009
11. लाही/तेल*	28.02	252.18	–	28.02	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
12. आलू	182.42	176.95	2.92	0.18	1.094	0.730	41.227	18.242	72.968	1.277	43.781	0.182	0.018	2.189	31.011
13. गन्ना/गुड़ +	36.79	140.91	0.15	0.04	0.221	–	34.950	29.432	14.716	4.194	61.807	0.073	0.015	0.184	–
योग	780.49	2445.29	70.88	44.60	11.520	8.997	440.666	294.819	1630.851	32.046	573.636	2.394	1.098	22.711	31.020

* लाही का 36 प्रतिशत तेल
+ गन्ना का 12 प्रतिशत गुड़

1.38 प्रतिशत, जौ 4.46 प्रतिशत, अरहर 9.95 प्रतिशत,उर्द/मूँग 1.48 प्रतिशत, लाही 9.14 प्रतिशत तथा आलू 9.01 प्रतिशत अधिक उत्पादन हो रहा है , इसके विपरीत धान 0.41 प्रतिशत, मक्का 7.41 प्रतिशत, मक्का 7.41 प्रतिशत, चना 9.74 प्रतिशत, मटर 8.06 प्रतिशत तथा गन्ना का 3.22 प्रतिशत कम उत्पादन हो रहा है । सारिणी इस तथ्य को भी स्पष्ट कर रही है कि जिन फसलों को अधिक सिंचन सुविधाओं की आवश्यकता है उनका उत्पादन जनपदीय स्तर की तुलना में कम हो रहा है और उन फसलों का जिनको सिंचाई की कम आवश्यकता होती है उनका उत्पादन जनपद के औसत उत्पादन से अधिक हो रहा है । आलू का उत्पादन छोटे पैमाने पर होने के कारण औसत उत्पादन अधिक है ।

सारिणी 6.9 प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों का विवरण दे रही है । जिसके अनुसार अवारी ग्राम में प्रतिदिन प्रति व्यक्ति अन्न की मात्रा 464.29 ग्राम है जबकि दालों की मात्रा मात्र 68.97 ग्राम अन्य शब्दों में यदि कृषि उत्पादन को ही लोगों के भोजन का आधार माना जाये तो अन्नों की भागेदारी 59.49 प्रतिशत तथा दालों की 8.84 प्रतिशत है ।तेल, आलू तथा गुड़ की भागेदारी 31.67 प्रतिशत है । प्रति व्यक्ति खाद्य पदार्थो की औसत उपलब्धता के आधार पर प्रत्येक गाँव का आहार सन्तुलन पत्रक तैयार किया गया है जिसके अनुसार इस ग्राम में खरीफ के खाद्यान्नों से प्राप्त होने वाली प्रतिव्यक्ति ऊर्जा की मात्रा 36.94 प्रतिशत है तथा रबी के खाद्यान्नों से यह मात्रा 39.75 प्रतिशत है । अन्य फसलों लाही, आलू तथा गन्ने की भागेदारी 23.31 प्रतिशत है । खाद्यान्नों में अन्न तथा दालों की अलग –अलग हिस्सेदारी देखे तो अन्न का हिस्सा 66.61 प्रतिशत तथा दालों का हिस्सा 10.08 प्रतिशत प्राप्त हुआ । अन्नोत्पादन की दृष्टि से बाजरा 40 प्रतिशत खाद्यान्न आवश्यकता को पूरा करके सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है जबकि गेहूँ की भागेदारी 38 प्रतिशत है और यह द्वितीय महत्वपूर्ण फसल है । ये दोनों फसलें लोगों की लगभग 78 प्रतिशत आवश्यकता को पूर्ण करती है । दालों में चना सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है और यह दलहनी आवश्यकता के 61.56 प्रतिशत हिस्से की पूर्ति करती है ।

3– <u>ग्राम– अकबरपुर</u> :

<u>स्थिति</u>: विकास खण्ड बसरेहर का ग्राम अकबरपुर जनपद मुख्यालय से लगभग 10 किलोमीटर उत्तर पश्चिम में इटावा –फरुखाबाद राजमार्ग से लगभग 1 किलोमीटर पश्चिम में स्थिति है । यह ग्राम विकास खण्ड मुख्यालय से लगभग 2 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम में स्थित है । भौगोलिक दृष्टि से यह ग्राम $26^{0}.78'$

उत्तरी अक्षाँश तथा $78^{0}.78'$ पूर्वी देशान्तर पर स्थिति है ।परिवहन सुविधाओं से युक्त यह ग्राम सिंचाई के लिए नहरों , राजकीय नलकूप तथा निजी नलकूप/पम्पिंग सेट्स का उपयोग कर रहा है । जनपद मुख्यालय तथा विकास खण्ड मुख्यालय के पास स्थित होने के कारण यहां के कृषक कृषि के आधुनिकीकरण की ओर अग्रसर है परन्तु जोतों का आकार छोटा होने के कारण अभी तक सीमित मात्रा में ही आधुनिक तकनीक का प्रयोग कर सके हैं परन्तु फिर भी इस ग्राम के कृषक सीमित ही सही , आधुनिक तकनीक का प्रयोग कर रहे हैं जिनमें से ट्रैक्टर, थ्रेसर, उन्नत किस्म के बीज , रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग और सिंचाई के साधनों में निजी पम्पिंग सेट्स के प्रयोग का प्रचलन है । यहाँ की भूमि चौरस तथा अधिक उपजाऊ है । कृषि की अनेक सुविधाओं से युक्त यह ग्राम अभी भी परम्परागत फसलों को ही अधिक महत्व देता है व्यावसायिक फसलों का नितांत अभाव है, नकदी फसलों में शब्जियां तथा जायद की फसलों में खरबूजा तथा तरबूज ही अधिकाँश उगाए जाते हैं ।

शस्य भूमि उपयोग :

ग्राम अकबरपुर में भी खरीफ , तथा रबी मौसम की फसलों की ही प्रधानता है । जायद की फसलें भी सीमित मात्रा में उगाई जाती है । इस ग्राम में शस्य भूमि उपयोग को सारिणी क्रमांक 6.11 में दर्शाया गया है ।

सारिणी 6.11 अकबरपुर ग्राम का शस्य भूमि उपयोग :

	क्षेत्रफल (हैक्टेयर)	प्रतिशत
1. प्रतिशत क्षेत्रफल	409	–
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	328	80.20
3. एक से अधिक बार गया क्षेत्र	215	65.55
4. सकल बोया गया क्षेत्र	543	165.55
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	316	96.34
6. सकल सिंचित क्षेत्र	481	88.58
7. रबी का क्षेत्र	280	51.57
8. खरीफ का क्षेत्र	250	46.04
9. जायद का क्षेत्र	13	2.39

सारिणी 6.11 अकबरपुर ग्राम के शस्य भूमि उपयोग का चित्र प्रस्तुत कर रही है जिसके कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल के 80.20 प्रतिशत क्षेत्र पर विभिन्न कृषि फसलें उगाई जा रही हैं । इस कृषि क्षेत्र के 65.55 प्रतिशत क्षेत्र पर दो या दो से अधिक बार फसलोत्पादन किया जा रहा है शुद्ध बोये गये क्षेत्र के 96.34 प्रतिशत क्षेत्र को सिंचाई की सुविधाएं प्राप्त हैं परन्तु फिर भी केवल 65.55 प्रतिशत क्षेत्र पर एक से अधिक फसलें उगाई जा रही है जिसका अर्थ है कि लगभग 31 प्रतिशत कृषि क्षेत्र को दो फसली नहीं बनाया जा सका है जबकि इस क्षेत्र को सिंचाई की सुविधाएं प्राप्त है जिसका मूल कारण है नहरों में अनियमित जल की आपूर्ति । साथ ही राजकीय नलकूप विद्युत चालित होने के कारण विद्युत की अनियमित आपूर्ति भी इस भूमि को दो फसली बनाने में बाधा उपस्थिति करती है । यदि विद्युत आपूर्ति नियमित हो तो इस भूमि के एक बड़े भाग से दो या दो से अधिक फसलें प्राप्त की जा सकती हैं । शुद्ध बोये गये क्षेत्र में से लगभग 85 प्रतिशत क्षेत्रफल पर रबी की विभिन्न फसलें उगाई जाती है जबकि खरीफ की फसलें लगभग 76 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोई जाती है । यदि कुल कृषि क्षेत्र पर विचार करें तो 51.57 प्रतिशत क्षेत्रफल पर रबी की फसलें, 46.04 प्रतिशत क्षेत्र पर खरीफ की फसलें तथा जायद की फसलें 2.39 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती हैं ।

तालिका 6.12 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण ।

फसल	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत (सकल बोये गये क्षेत्रसे)	प्रतिशत
खरीफ की फसलें	250	46.04	खरीफ का
1. धान	160	29.47	64.00
2. ज्वार	05	0.92	2.00
3. बाजरा	26	4.79	10.40
4. मक्का	37	6.81	14.80
5. अरहर	14	2.58	5.60
6. अन्य	8	1.47	3.20
(ब) रबी की फसलें	280	51.57	रबी का
1. गेहूँ	214	39.41	76.43
2. जौ	12	2.21	4.29
3. चना	12	2.21	4.29
4. मटर	04	0.74	1.43
5. लाही	10	1.84	3.57
6. आलू	23	4.24	8.21
7. गन्ना	02	0.37	0.71
8. अन्य	03	0.55	1.07
(स) जायद की फसलें	13	2.39	–
योग	543	100.00	–

तालिका 6.12 ग्राम अकबरपुर के फसल वितरण को दर्शा रही है जिसमें लगभग 70 प्रतिशत कुल फसल क्षेत्र पर धान तथा गेहूँ का वर्चस्व दिखाई पड़ रहा है ।खरीफ मौसम में बोई जाने वाली विभिन्न फसलों में धान अकेले 64 प्रतिशत क्षेत्र पर अधिपत्य स्थापित किए हुए है, मक्का 14.80 प्रतिशत क्षेत्र पर स्थापित होने के कारण द्वितीय स्थान पर है, तृतीय स्थान बाजरे का है जो 10.40 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जा रही है । सकल कृषि क्षेत्र की दृष्टि से मक्का 6.81 प्रतिशत तथा बाजरा 4.79 प्रतिशत क्षेत्र पर अपनी उपस्थिति दर्शा रही है । खरीफ की फसल में धान यका बर्चस्व इसलिए है एक तो इस ग्राम की भूमि चिकनी तथा मटियार दोमट है, दूसरे सिंचाई के साधनों के कारण यदि मानसून की बारिस धोखा दे जाय तो कृत्रिम सिंचाई के द्वारा धान की उपज सरलता से प्राप्त की जा सके । धान काटने के बाद इस भूमि पर गेहूँ का उत्पादन किया जा सकता है और यही कारण है कि रबी की फसल में गेहूं का क्षेत्रफल तीन चौथाई से भी अधिक हो जाता है । यद्यपि जौ कम लागत पर उत्पन्न किया जा सकता है, परन्तु सामान्यतः जौ का उत्पादन जानवरों के रातिव के लिए किया जाता है । इसी प्रकार चना की भी वही स्थिति है जो ग्राम में जौ के उत्पादन की है । रबी की फसलों में गेहूँ 76.43 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाये जाने के कारण प्रथम स्थान पर है जबकि आलू मात्र 8.21 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाया जाता है परन्तु कम भागेदारी होते हुए भी यह फसल द्वितीय स्थान पर है तीसरा स्थान लाही सरसों का है और जो केवल 10 हेक्टेयर क्षेत्र पर अपनी उपस्थिति दर्शा कर हिस्सेदारी की दृष्टि से चौथे स्थान पर है । तीसरे स्थान पर जौ तथा चना जो समान क्षेत्रफल में उगाई जा रही है ।

जायद की फसलों में गर्मी की शब्जियां, खरबूजा, तरबूज तथा उर्द्/मूँग प्रमुख फसलें हैं । गर्मी की शब्जियों में काशीफल, लौकी, भिण्डी, करेला, तरोई आदि प्रमुख शब्जियां हैं जो 13 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर उगाई जाती हैं । शब्जियों के क्षेत्र में आशातीत बृद्धि हुई है जो नगरीय प्रभाव , आर्थिक महत्व, परिवहन तथा सिंचाई की सुविधाओं से सम्बन्धित है। यह ग्राम खरबूजे की खेती में अपना विशेष स्थान रखता है ।

<u>भूमि पर जनसंख्या का भार :</u>

ग्राम अकबरपुर में जनसंख्या के वितरण को सारिणी क्रमांक 6.13 में दर्शाया गया है जिसमें विभिन्न प्रकार की कृषि भूमि को प्रति व्यक्ति उपलब्धता का विवरण दिया जा रहा है ।

सारिणी 6.13 भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	सकल कृषि क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
प्रति व्यक्ति	0.1833	0.1470	0.0964	0.2434	0.1416	0.2156	0.1255	0.1121	0.0058

सारिणी 6.13 ग्राम अकबरपुर में कृषि भूमि पर पड़ने वाले जनसंख्या के भार को दर्शा रही है जिससे यह तथ्य स्पष्ट हो रहा है कि इस ग्राम में प्रति व्यक्ति 0.1833 हेक्टेयर क्षेत्र कुल भूमि उपलब्ध है जिसमें कृषि फसलों के उत्पादन के लिए प्रति व्यक्ति 0.1470 हेक्टेयर क्षेत्रफल उपलब्ध है । कृषि फसलों के लिए प्रति व्यक्ति उपलब्ध क्षेत्र पर रबी, खरीफ तथा जायद की फसलें बोई जाती है । इन तीनों मौसमों में विभिन्न फसलों के लिए उपयोग की जाने वाली भूमि प्रति व्यक्ति 0.2434 हेक्टेयर है जिसमें 0.1121 हेक्टेयर भूमि पर खरीफ की फसलें तथं 0.1255 हेक्टेयर भूमि पर रबी की फसलें तथा मात्र 0.0058 हेक्टेयर भूमि पर जायद की फसलें उगाई जाती हैं । सिंचित क्षेत्रफल की दृष्टि से देखे तो प्रति व्यक्ति 0.1470 हेक्टेयर क्षेत्र में से 0.1416 हेक्टेयर क्षेत्र को सिंचन सुविधाएं प्राप्त हैं परन्तु फिर भी खरीफ की फसलों के लिए प्रतिव्यक्ति 0.1255 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर ही विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं जबकि सिंचन सुविधाओं को देखते हुए 0.1416 हेक्टेयर क्षेत्रफल खरीफ की फसलों के अन्तर्गत प्रयोग में लाया जा सकता है । इसी प्रकार रबी की फसलों के लिए भी इतना ही क्षेत्रफल उपयोग किया जा सकता है जिसमें खाद्यान्न फसलें उगाकर पोषण स्तर को बढ़ाया जा सकता है, या व्यावसायिक फसलों के क्षेत्रफल में बृद्धि करके आर्थिक स्तर को और ऊँचा उठाया जा सकता है ।

ग्राम अकबरपुर की कुल जनसंख्या 2231 है जिसमें 79 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या प्राथमिक रूप से कृषि पर ही आश्रित है तथा 17 प्रतिशत जनसंख्या जनसमुदाय कृषि तथा उसके सहायक उद्योग धन्धों में संलग्न रहकर अपने जीवनयापन के लिए अतिरिक्त आय प्राप्त कर लेते हैं ओर 4 प्रतिशत से भी कम लोग गॉव के बाहर रहकर नौकरी करते हैं , इनमें से 3 प्रतिशत से भी अधिक लोग एक हजार रुपये से कम मासिक वेतन पर नौकरी करते हैं तथा मात्र 21 लोग ही एक हजार रुपये से अधिक मासिक वेतन प्राप्त करते है । स्वाभाविक है गाँव की लगभग सभी जनशक्ति कृषि पर ही आश्रित है ।

<u>विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन</u> :

अकबरपुर ग्राम में उत्पन्न होने वाली विभिन्न फसलों के औसत उत्पादन को सारिणी 6.14 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.14 विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन (प्रति हेक्टेयर किलोग्राम में)

फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत में)
1.धान	1,882	1,970	−4.47
2.ज्वार	940	1,025	−8.29
3.बाजरा	1,542	1,523	+1.25
4.मक्का	1,379	1,377	+0.15
5.गेहूँ	2,592	2,506	+3.43
6.जौ	1,879	1,906	−1.42
7.अरहर	1.322	1,326	−0.30
8.चना	1,254	1,283	−2.26
9.मटर	1,736	1,650	+5.21
10.उर्द/मूँग	539	473	+13.95
11.लाही	1,109	1,247	−11.07
12.आलू	18,739	18,688	+0.27
13.गन्ना	32,845	33,699	−2.53

सारिणी 6.14 अकबरपुर ग्राम की कृषि फसलों के औसत उत्पादन व्यक्त कर रही है जिसमें यह ग्राम जनपदीय स्तर से बाजरा के उत्पादन में 1.25 प्रतिशत अधिक मक्का 0.15 प्रतिशत, गेहूँ में 3.43 प्रतिशत , मटर में 5.21 प्रतिशत, उर्द/मँग के उत्पादन में 13.95 प्रतिशत तथा आलू के उत्पादन में 0.27 प्रतिशत बढ़त प्राप्त किए हुए हैं जबकि धान के उत्पादन में 4.47 प्रतिशत , ज्वार 8.29 प्रतिशत, जौ में 1.42 प्रतिशत , अरहर में 0.30 प्रतिशत , चना 2.26 प्रतिशत, लाही 11.07 प्रतिशत तथा गन्ना में 2.53 प्रतिशत पिछड़ रहा है । इस प्रकार यह गाँव अन्नोत्पादन में बाजरा, मक्का तथा

तालिका 6.15 प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्नों की मात्रा तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम–अकबरपुर)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाईड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लोह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	199.68	688.90	14.98	1.997	1.797	1.198	153.15	19.97	379.39	6.390	3.994	0.419	0.319	7.787	–
2. ज्वार	4.67	16.30	0.48	0.089	0.075	0.075	3.39	1.17	10.37	0.271	2.195	0.017	0.006	0.145	–
3. बाजरा	39.85	143.86	4.62	1.992	0.916	0.478	26.90	16.74	117.96	1.992	52.602	0.131	0.099	0.916	–
4. मक्का	50.72	176.50	5.63	1.826	0.761	1.369	33.58	5.07	176.50	1.014	45.648	0.365	0.050	0.913	–
5. गेहूँ	582.40	2015.10	68.72	8.736	8.736	6.989	414.67	238.78	1782.14	28.538	372.736	2.621	0.990	32.032	–
6. जौ	22.43	75.36	2.58	0.291	0.269	0.875	15.61	5.83	48.22	0.673	2.243	0.105	0.045	1.211	
7. अरहर	13.30	44.55	2.96	0.226	0.465	0.199	7.66	9.71	40.43	0.771	17.556	0.060	0.025	0.386	–
8. चना	10.81	40.21	2.25	0.605	0.292	0.130	6.58	13.94	35.78	0.984	13.945	0.041	0.019	0.281	–
9. मटर	5.37	16.91	1.06	0.059	0.118	0.242	3.03	4.03	16.00	0.274	2.094	0.025	0.010	0.182	–
10. उर्द/मूँग	2.08	7.25	0.46	0.010	0.067	0.111	1.19	5.98	6.48	0.175	1.480	0.009	0.004	0.031	0.021
11. लाही/तेल	5.90	53.10	–	5.90	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
12. आलू	396.95	385.04	6.35	0.397	2.381	1.588	89.71	39.69	158.78	2.779	95.268	0.397	0.040	4.763	67.481
13. गन्ना/गुड	8.71	33.36	0.03	0.009	0.052	–	8.27	6.97	3.48	0.993	14.633	0.017	0.003	0.043	–
योग	1342.87	3696.44	110.12	22.137	15.929	13.254	763.74	367.88	2775.53	44.854	624.394	4.207	1.610	48.690	67.502

गेहूँ के उत्पादन में जनपदीय स्तर से श्रेष्ठ है जबकि धान, ज्वार तथा जौ के उत्पादन में उस स्तर से नीचे है । दलहन के उत्पादन में उर्द/मूँग में 13.95 प्रतिशत तथा मटर के उत्पादन में 5.21 प्रतिशत अधिक उत्पादन प्राप्त कर रहा है जबकि अरहर में 0.30 प्रतिशत तथा चना के उत्पादन में 2.26 प्रतिशत पिछड रहा है । तिलहन तथा गन्ने के उत्पादन में क्रमशः 11.07 प्रतिशत तथा 2.53 प्रतिशत पीछे है जबकि आलू के उत्पादन में मात्र 0.27 प्रतिशत श्रेष्ठता प्राप्त किए हुए है ।

विभिन्न फसलों से प्राप्त उत्पादन से ग्राम के लोगों को प्रति व्यक्ति कितने कितने पोषक तत्व प्राप्त होते हैं , की गणना सारिणी 6.15 में दर्शायी गयी है । ग्राम अकबरपुर में विभिन्न खाद्यान्न फसलों से प्रति व्यक्ति 1342.47 ग्राम खाद्य सामग्री उपलब्ध है जो औसत आवश्यकता से बहुत अधिक है, इसमें खरीफ की फसलों से 308.22 ग्राम , रबी की फसलों से 621.01 ग्राम तथा शेष अन्य फसलों से खाद्य पदार्थ प्राप्त होते हैं । पोषक तत्वों में ग्रामीण जनों को 28.95 प्रतिशत ऊर्जा खरीफ के खाद्यान्नों से प्राप्त हो रही है जबकि 58.29 प्रतिशत ऊर्जा रबी फसलों के खाद्य पदार्थों से प्राप्त हो रही है । अन्य खाद्य पदार्थों आलू, तेल तथा गुड़ से 12.76 प्रतिशत ऊर्जा प्राप्त हो रही है । अन्न और दलहन को यदि अलग–अलग करके देखे तो अन्न से 84.29 प्रतिशत तथा दलहन से मात्र 2.95 प्रतिशत ऊर्जा प्रापत हो रही है , स्पष्ट है कि दलहन की भागेदारी अत्यन्त निम्न है । प्रति व्यक्ति अन्य उपलब्धता की दृष्टि से गेहूँ और चावल की उपलब्धता 782.08 ग्राम है दूसरे शब्दों में इन दोनों खाद्यान्नों की 58 प्रतिशत से भी अधिक है । आलू की प्रति व्यक्ति उपलब्धता 29 प्रतिशत से भी अधिक है इन तीनों खाद्य पदार्थों की हिस्सेदारी 87 प्रतिशत से भी अधिक हो जाती है , स्वाभाविक है कि ग्रामीणों के भोजन में भी इन तीनों खाद्य पदार्थों की ही प्रमुखता रहती है । प्रोटीन का लगभग 82 प्रतिशत हिस्सा केवल इन्हीं तीन खाद्य पदार्थों से प्रापत होता है ।

4. ग्राम मोढ़ी

स्थिति :विकास खण्ड भरथना में स्थित मोढ़ी ग्राम विकास खण्ड मुख्यालय से लगभग 4 किलोमीटर दूर उत्तर पूर्व में स्थित है । यह ग्राम भरथना –विधूना सड़क से लगभग 6 किलोमीटर दक्षिण पूर्व में एक कच्चे सम्पर्क मार्ग से जुड़ा हुआ है । भौगोलिक दृष्टि से इस ग्राम की स्थिति $26^{0}.68'$ उत्तरी अक्षांश तथा $78^{0}.98'$ पूर्वी देशान्तर पर है । इस ग्राम के दक्षिण में लगभग 1 किलोमीटर की दूरी पर रिन्द नदी बहती है जिसके कारण ग्राम का ढाल दक्षिण की ओर है । विकास खण्ड मुख्यालय से दूर स्थिति होने के कारण तथा परिवहन की सुविधाओं से वँचित यह ग्राम परम्परागत कृषि कार्यो में संलग्न है । यद्यपि भरथना स्वयं में एक विकसित कस्बा तथा गल्ले की एक बहुत बड़ी मण्डी के रूप में विख्यात है परन्तु फिर भी गाँव से डामरीकृत सड़क तक आने जाने का प्रमुख साधन ट्रैक्टर तथा बैलगाड़ी ही है , साथ ही नीची भूमि होने के कारण वर्षा का पानी

भी आस पास के क्षेत्रों में भर जाता है जिससे आवागमन का एक मात्र कच्चा मार्ग ही शेष रह जाता है । सिंचाई के साधनों में नहर तथा निजी नलकूप/पम्पिंग सेट्स का बाहुल्य है जिससे कृषि फसलों को मानसूनी वर्षा के अतिरिक्त कृत्रिम सिंचाई सरलता से प्राप्त हा जाती है, परन्तु फिर भी कृषकों द्वारा परम्परागत फसलें ही अधिकांश उगाई जाती हैं ।

<u>शस्य भूमि उपयोग</u> :

मोढ़ी ग्राम में भी वर्ष में खरीफ, रबी तथा जायद फसलों में परम्परागत फसलें ही अधिकाँश बोई जाती है, जो ग्रामीण जनसंख्या की दैनिक आवश्यकताओं को पूरा करती है । इस गाँव के शस्यय भूमि उपयोग को सारिणी 6.16 में दर्शाया गया है ।

सारिणी 6.16 शस्य भूमि उपयोग :

	मद	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत
1.	प्रतिवेदित क्षेत्रफल	522	–
2.	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	351	67.24
3.	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	193	54.99
4.	सकल बोया गया क्षेत्र	544	154.99
5.	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	310	88.32
6.	सकल सिंचित क्षेत्र	462	84.93
7.	रबी का क्षेत्र	321	59.01
8.	खरीफ का क्षेत्र	211	38.79
9.	जायद का क्षेत्र	12	2.20

तालिका 6.16 ग्राम मोढ़ी की भूमि उपयोग पर प्रकाश डाल रही है । इस ग्राम की कुल प्रतिवेदित भूमि 522 हेक्टेयर है जिसमें 67.24 प्रतिशत भूमि पर विभिन्न फसलें उगाई जाती है । इस दृष्टि से 22 प्रतिशत से भी अधिक भूमि का उपयोग नहीं हो पा रहा है । इस अप्रयुक्त भूमि का एक हिस्सा रिन्द नदी के कारण प्रयोग नहीं किया जा सकता है तथा कुछ भूमि तालाबों , नहरों तथा निर्माण कार्यों में प्रयुक्त होने के कारण कृषि के लिए अप्रयुक्त है शेष लगभग 10 प्रतिशत भूमि जो ऊसर तथा बंजर के रूप में पड़ती पड़ी हुई है उसे कृषि फसलों के लिए थोड़ा प्रयास करने के बाद प्रयोग किया जा सकता है । ग्राम की 351 हैक्टेयर कृषि भूमि में से 88.32 प्रतिशत भूमि को सिंचाई की सुविधाएं प्राप्त हैं, परन्तु दो या दो से अधिक फसलों वाली भूमि केवल 54.99 प्रतिशत ही है दूसरे शब्दों में लगभग 45 प्रतिशत भूमि एक फसली है जिसकों दुफसली क्षेत्र में परिवर्तित करके कृषि उत्पादन को विस्तृत किया जा सकता है । वर्ष में विभिन्न फसलों के अन्तर्गत इस ग्राम में कुल 544 हेक्टेयर भूमि प्रयोग की जाती है जिसमें खरीफ फसलों के अन्तर्गत केवल 38.79 प्रतिशत , रबी फसलों के अन्तर्गत 59.01 प्रतिशत जबकि जायद फसलों के अन्तर्गत मात्र 2.20 प्रतिशत भूमि प्रयुक्त की जा रही है । यदि शुद्ध बोये गये क्षेत्र पर विचार करें तो गाँव में कुल कृषि के लिए उपलब्ध 351 हेक्टेयर क्षेत्रफल में से खरीफ फसलों के अन्तर्गत लगभग 60 प्रतिशत क्षेत्र प्रयोग हो रहा है जिसका अर्थ है कि लगभग 40 प्रतिशत क्षेत्र अप्रयुक्त रहता है।

सारिणी 6.17 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण :

फसल	क्षेत्रफल (हैक्टेयर)	प्रतिशत (सकल बोये गये क्षेत्र से)	प्रतिशत
(अ) खरीफ की फसलें	211	38.79	खरीफ का
1.धान	128	23.53	60.66
2.ज्वार	7	1.29	3.32
3.बाजरा	39	7.17	18.48
4.मक्का	30	5.51	14.22
5. अरहर	2	0.37	0.95
6.अन्य	5	0.92	2.37

फसल	क्षेत्रफल(हेक्टेयर)	प्रतिशत (सकल बोये गये क्षेत्र से)	प्रतिशत
(ब) रबी की फसलें	321	59.01	रबी का
1. गेहूँ	235	43.20	75.32
2. जौ	17	3.13	5.30
3. चना	17	3.13	5.30
4. मटर	13	2.39	4.05
5. लाही	18	3.31	5.61
6. आलू	12	2.20	3.74
7. गन्ना	3	0.55	0.93
8. अन्य	6	1.10	1.87
(स) जायद की फसलें	12	2.20	–
योग	544	100.00	–

सारिणी 6.17 ग्राम मोढ़ी में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल का विवरण दे रही है । वर्ष में बोई जाने वाली समस्त फसलों में गेहूँ सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है जो अकेले 43.20 प्रतिशत क्षेत्र पर बोई जा रही है, धान की फसल द्वितीय महत्व की है और यह 23.53 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोई जा रही है यदि इन दोनों फसलों को एक साथ कर दिया जाय तो वर्ष भर में ये दोनों फसलें लगभग 67 प्रतिशत क्षेत्र पर अपना अधिपत्य स्थापित किए हुए है। सिंचाई की सुविधाएं तथा भूमि का मटियार दोमट होना इन दोनों फसलों को महत्वपूर्ण बनाए हुए है ।

सारिणी 6.18 भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर)

	कुल प्रति वेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया गया	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
	1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्रति व्यक्ति	0.2254	0.1516	0.0833	0.2349	0.1338	0.1995	0.1386	0.0911	0.0052

यदि फसलवार क्षेत्रीय विवरण की दृष्टि से देखें तो खरीफ की फसल में उगाई जाने वाली फसलों में धान, बाजरा, मक्का तथा ज्वार प्रमुख फसलें हैं जिसमें धान 60.66 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है । तथा बाजरा और मक्का क्रमशः 18.48 प्रतिशत तथा 14.22 प्रतिशत हिस्सेदारी कर रही हैं । इसी प्रकार रबी मौसम में गेहूँ 75.32 प्रतिशत पर अपना अधिपत्य स्थापित किए हुए है, जौ तथा चना दोनों लगभग सामान क्षेत्रफल घेरे हुए हैं । जब कि तिलहनी फसल लाही इन दोनों फसलों से कुछ अधिक 5.61 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोई जा रही है । इस गाँव में परम्परागत खाद्यान्न फसलों के उगाए जाने का कारण यह है कि ये फसलें बौनी जाति की होने के कारण अन्न की तो अच्छी उपज देती है परन्तु वर्ष भर जानवरों के चारे की व्यवस्था करने में ये फसलें पूर्णतया सफल नहीं है, और यही कारण है कि रबी में गेहूँ की फसल तीन चौथाई क्षेत्रफल से भी अधिक क्षेत्रफल पर उगाई जाती है जिससे अन्न एवं चारे दोनों की आवश्यकता पूरी होती है ।

जनसंख्या का भार :

ग्राम मोढ़ी की जनसंख्या का प्रमुख व्यवसाय कृषि है जो न केवल खाद्यान्न आवश्यकताओं को ही पूरा करती है बल्कि वर्ष भर की अन्यान्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आय भी प्रदान करती है । ग्राम मोढ़ी में 398 परिवार निवास करते है। जिनकी कुल जनसंख्या 2316 है । अतः कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र पर जनसंख्या के भार को सारिणी 6.18 में दर्शाया जा रहा है ।

तालिका 6.18 ग्राम मोढ़ी में प्रति व्यक्ति विभिन्न प्रकार की कृषि भूमि की उपलब्धता का का विवरण दे रही है । इस ग्राम में प्रति व्यक्ति शुद्ध बोया गया क्षेत्र 0.1516 हेक्टेयर है जिसमें से 0.0911 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर खरीफ की फसलें बोई जाती है और रबी की फसलों के लिए 0.1386 हेक्टेयर क्षेत्रफल उपयोग में लाया जा रहा है जायद की फसलें जिसमें खरबूजा तरबूज तथा शब्जियाँ प्रमुख फसलें हैं, केवल 0.0052 हेक्टेयर क्षेत्रफल उपयोग में लाया जा रहा है । 0.1516 हेक्टेयर क्षेत्र में 0.0833 हेक्टेयर क्षेत्रफल दुफसली या बहुफसली क्षेत्र है । प्रति व्यक्ति शुद्ध कृषि क्षेत्र 0.1516 हेक्टेयर में से .1338 हेक्टेयर क्षेत्रफल को सिंचन सुविधाएं प्राप्त हैं, परन्तु फिर भी सकल बोये ये क्षेत्र में उतनी बृद्धि देखने को नहीं मिलती है जिस अनुपात में भूमि को सिंचाई की सुविधाएं प्राप्त हैं क्योंकि सकल कृषि क्षेत्र प्रति व्यक्ति 0.2349 हेक्टेयर ही है । इस कमी का मूल कारण यह है कि ग्राम की कृषि भूमि की निम्न उत्पादकता के कारण कुछ भूमि

वार्षिक फसलों के लिए परती छोड़ दी जाती है जैसे तिलहनी फसल लाही के लिए खरीफ की फसलों से इस फसल के लिए परती भूमि छोड़ दी जाती है, यही स्थिति गन्ने की फसल की भी है ।

जनसंख्या के दबाव को ग्राम की जनसंख्या की व्यावसायिक संरचना के आधार पर मालूम किया जा सकता है, इस दृष्टि से यदि देखें तो इस ग्राम की कुल जनसंख्या का लगभग 86 प्रतिशत जनसंख्या प्राथमिक रूप से कृषि पर निर्भर है और 12 प्रतिशत से भी अधिक जनशक्ति कृषि के सहायक व्यवसायों में संलग्न रहने के कारण द्वितीयक रूप से कृषि भूमि पर निर्भर है । 2 प्रतिशत से भी कम जनसंख्या ग्राम के बाहर नौकरी अथवा व्यवसायों में संलग्न है इस प्रकार लगभग सम्पूर्ण जनसंख्या कमोवेश कृषि भूमि से ही अपने जीवनयापन के साधन प्राप्त करती है ।

विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता :

ग्राम मोढ़ी में उत्पन्न होने वाली विभिन्न फसलों के औसत उत्पादन को सारिणी 6.19 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.19 विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता (किलोग्राम /हेक्टेयर)

फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय उत्पादन स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत में)
1.धान	1.921	1,970	-2.49
2.ज्वार	1,061	1,025	+3.51
3.बाजरा	1,454	1,523	-4.53
4.मक्का	1.280	1,377	-7.04
5.गेहूँ	2.538	2,506	+1.28
6.जौ	1,971	1,906	+3.41
7.अरहर	1,330	1,326	+0.30
8.चना	1,487	1,283	+15.90
9.मटर	1,705	1,650	+3.33
10.उर्द/मूँग	433	473	-8.46
11.लाही	1,139	1,247	-8.66
12.आलू	18,984	18,688	+1.58
13.गन्ना	35,649	33,699	+5.79

तालिका 6.20 प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम मोढ़ी)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्बोहाइ-ड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइबो-फ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन मि0ग्रा0
1. चावल	156.34	539.37	11.72	1.563	1.407	0.938	119.91	15.634	297.05	5.003	3.127	0.328	0.250	6.097	
2. ज्वार	7.12	25.02	0.75	0.136	0.115	0.115	5.21	1.792	15.92	0.416	3.370	0.027	0.009	0.222	
3. बाजरा	54.33	196.13	6.30	2.716	1.249	0.652	36.67	22.819	160.82	2.716	71.716	0.179	0.136	1.249	
4. मक्का	36.79	128.03	4.08	1.324	0.552	0.993	24.35	3.679	128.03	0.736	33.111	0.265	0.037	0.662	
5. गेहूँ	603.25	2087.24	71.18	9.049	9.049	7.239	429.51	247.332	1845.94	29.559	386.080	2.715	1.026	33.179	
6. जौ	32.11	107.89	3.69	0.417	0.385	1.252	22.35	8.349	69.04	0.963	3.211	0.151	0.064	1.734	
7. अरहर	1.84	6.16	0.41	0.031	0.064	0.028	1.06	1.343	5.59	0.107	2.429	0.008	0.003	0.053	
8. चना	17.49	65.06	3.64	0.979	0.472	0.210	10.65	22.562	57.89	1.592	22.562	0.066	0.031	0.455	
9. मटर	16.52	52.04	3.25	0.182	0.363	0.743	9.33	12.390	49.23	0.842	6.443	0.077	0.031	0.562	
10. उर्द/मूँग	0.97	3.37	0.21	0.004	0.031	0.051	0.55	2.784	3.02	0.081	0.689	0.004	0.002	0.015	0.0097
11. लाही तेल	8.56	77.04	–	8.560	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
12. आलू	202.12	196.06	3.23	0.202	1.213	0.808	45.68	20.212	80.85	1.415	48.509	0.202	0.020	2.425	34.3604
13. गन्ना/गुड़	13.66	52.32	0.05	0.014	0.082	–	12.98	10.928	5.46	1.557	22.949	0.027	0.005	0.068	
योग	1151.10	3535.73	108.51	25.177	14.982	13.029	718.265	369.824	2718.84	44.987	604.196	4.049	1.614	46.721	34.3701

ग्राम मोढ़ी में सर्वेक्षण से प्राप्त विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता को सारिणी 6.19 में प्रस्तुत किया जा रहा है जिसमें ग्रामीण जनसंख्या को अन्न उपलब्ध कराने वाली फसलों में से ज्वार , गेहूँ तथा जौ की औसत उत्पादकता जनपदीय औसत उत्पादन से अधिक है और ये फसलें क्रमशः 3.51 प्रतिशत, 1.28 प्रतिशत तथा 3.41 प्रतिशत अधिक उत्पादन प्रदान कर रही है जबकि धान 2.49 प्रतिशत, बाजरा 4.53 प्रतिशत तथा मक्का 7.04 प्रतिशत कम उतपादन प्रदान कर रही है । दलहनी फसलों में उर्द/मूँग को छोड़कर अन्य फसलें–अरहर 0.30 प्रतिशत, चना 15.90 प्रतिशत तथा मटर 3.33 प्रतिशत अधिक उतपादन देकर दालों की आवश्यकता को पूरा कर रही है । लाही का उत्पादन 8.66 प्रतिशत कम तथा आलू और गन्ना क्रमशः 1.58 प्रतिशत तथा 5.79 प्रतशत अधिक उत्पादन दे रहे हैं ।

विभिन्न फसलों से प्राप्त होने वाले कुल उत्पादन तथा उस उत्पादन पर निर्भर रहने वाली जनसंख्या के आधार पर ग्राम का आहार सन्तुलन पत्रक" तैयार किया गया है जिसमें प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थों की उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की गणना की गई है जिसे सारिणी क्रमांक 6.20 में प्रस्तुत किया जा रहा है । आहार सन्तुलन पत्रक के आधार पर की गई गणना के अनुसार ग्राम की कुल जनसंख्या का भरण पोषण कृषि फसलों पर ही निर्भर है और वे अपनी समस्त ऊर्जा का 25.30 प्रतिशत हिस्सा खरीफ मौसम में उत्पन्न होने वाले खाद्यान्नों से प्राप्त करते हैं जबकि रबी के कृषि मौसम में उत्पन्न होने वाली विभिन्न फसलों से प्राप्त होने वाले खाद्यान्नों से 65.49 प्रतिशत ऊर्जा प्राप्त करते हैं जिसमें लाही तथा आलू सम्मिलत नहीं हैं । इससे यह तथ्य भी स्पष्ट होता है कि मोढ़ी ग्राम के भरण पोषण के लिए रबी मौसम में उगाई जाने वाली खाद्यान्न फसलों का महत्व अधिक है ।रबी फसलों में गेहूँ सर्वाधिक महत्व की फसल है जो 52 प्रतिशत से भी अधिक ऊर्जा की आपूर्ति करता है । इस ग्राम में विभिन्न खाद्यान्नों से प्राप्त होने वाली प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ऊर्जा 3535.73 कैलोरी है जो औसत आवश्यकता से कहीं अधिक है । जिसमें से गेहूँ तथा चावल दोनों मिलकर 2626 कैलोरी से भी अधिक ऊर्जा की आपूर्ति करते हैं । यदि अन्न तथा दलहन को अलग–अलग कर दिया जाये तो ज्ञात होता है कि विभिन्न प्रकार के अनाज से 87 प्रतिशत से भी अधिक ऊर्जा की आवश्यकता की आपूर्ति होती है जबकि दालों का हिस्सा मात्र 3.58 प्रतिशत अत्यन्त न्यून है । लाही , आलू तथा गन्न की फसलों से 9.21 प्रतिशत ऊर्जा की आपूर्ति होती है ।

5. ग्राम –सुतियानी

स्थिति : विकास खण्ड ताखा का ग्राम सुतियानी भरथना–ऊसराहर पक्के मार्ग पर भर्थना से लगभग 14 किलोमीटर उत्तर में स्थित है । इस मार्ग के लगभग मध्य में स्थित यह एक कस्बा हैजिसमें कृषि से सम्बन्धित आवश्यक हल्के उपकरण, रासायनिक उर्वरक बीज तथा खरपतवार एवं कीटनाशक औषधियों के अतिरिक्त ग्रामीण समुदाय की अन्य आवश्यकताओं की सामान्य वस्तुएं प्राप्त हो जाती हैं, यहाँ साप्ताहिक बाजार भी लगता है । भौगोलिक दृष्टि से यह ग्राम $26^0.90'$ उत्तरी अक्षांस तथा $78^0.96'$ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है । छोटा मोटा कस्बा होने के कारण यह ग्राम नगरीय जीवन पद्धति की ओर अग्रसर है , यहाँ के ग्राम वासियों की जीवन पद्धति पर नगरीकरण का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है, यद्यपि यहाँ के निवासियों का आधार भूत व्यवसाय कृषि ही है परन्तु ग्राम के कुछ परिवार कृषि के अतिरिक्त अन्य व्यवसायों से भी कुछ आय प्राप्त करके अपने आर्थिक स्तरको ऊँचा उठाने के लिए प्रयासरत है परन्तु फिर भी उनके व्यवसायों का आकार छोटा है और अधिकतर वस्तु विनिमय व्यापार से ही जुड़े हुए हैं। परन्तु कृषि के लिए सामान्य सुविधाएं इस ग्राम को प्राप्त हैं । इस ग्राम से लगभग 14 किलोमीटर दूर स्थित भर्थना कस्बा एक बड़ा और अच्छा बाजार है यहाँ गल्ला मण्डी भी स्थित है । सिंचाई के लिए इस ग्राम में नहर के अतिरिक्त निजी पम्पिंग सेट्स का बाहुल्य है, जिससे रबी , जायद तथा आवश्यकता पड़ने पर खरीफ की फसलों को आवश्यक सिंचाई सुविधाएं प्रापत हैं । इसलिए इस ग्राम में खरीफ में धान तथा रबी में गेहूँ महत्वपूर्ण फसलें हैं ।

शस्य भूमि उपयोग :

ग्राम सुतियानी में वर्ष में खरीफ तथा रबी मौसम में विभिन्न प्रकार की परम्परागत फसलें उगाई जाती है । जायद मौसम में अधिकांश कृषकों द्वारा खरबूजा, तरबूज तथा शब्जियां उगाई जाती हैं । इस ग्राम का शस्य भूमि उपयोग सारिणी 6.21 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.21 शस्य भूमि उपयोग ।

	मद	क्षेत्रफल(हेक्टेयर)	प्रतिशत
1.	प्रतिवेदित क्षेत्र	515	–
2.	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	380	73.79
3.	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	228	60.00
4.	सकल बोया गया क्षेत्र	608	160.00

	मद	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत
5.	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	358	94.21
6.	सकल सिंचित क्षेत्र	557	91.61
7.	रबी का क्षेत्र	314	51.65
8.	खरीफ का क्षेत्र	287	47.20
9.	जायद का क्षेत्र	07	1.15

सारिणी 6.21 ग्राम सुतियानी में शस्य भूमि उपयोग का चित्रण कर रही है जिसमें इस ग्राम का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 515 हेक्टेयर है । इस सम्पूर्ण क्षेत्र में से 73.79 प्रतिशत कृषि क्षेत्र है जिसमें वर्ष में विभिन्न फसलें उगाई जाती है कुल 380 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र में 60 प्रतिशत भूमि पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती है । दो से अधिक फसलों वाला कृषि क्षेत्र सामान्यतया धान फसल काक्षेत्र है जिसमें धान फ-सल के बाद गेहूँ की फसल बोई जाती है ।सिंचाई के साधनों की उपलब्धता के कारण गेहूँ सरलता से उत्पन्न हो जाता है जबकि धान के बाद चना भी उगाया जा सकता है जिसकी उत्पादन लागत गेहूँ की अपेक्षा कम है परन्तु जानवरों के चारे के लिए चने की फसल अधिक उपयोगी नहीं रहती है इसलिए कृषकों की बाध्यता गेहूँ बोने की रहती है । सिंचाई की दृष्टि से यदि देखा जाये तो कुल 380 हेक्टेयर कृषि क्षेत्र में से 94.21 प्रतिशत भू भाग को या तो नहर अथवा निजी नलकूप की सुविधा प्राप्त है । इसी कारण सकल बोया गया क्षेत्र 608 हेक्टेयर अर्थात कुल कृषि क्षेत्र का 160 प्रतिशत है । इस सकल कृषि क्षेत्र में 51 प्रतिशत से भी अधिक क्षेत्र रबी फसलों का है तथा लगभग 47 प्रतिशत क्षेत्रफल पर खरीफ फसलें उगाई जाती है ।

सारिणी 6.22 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण ।

फसल	क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	प्रतिशत	प्रतिशत
(अ) खरीफ	287	47.20	खरीफ का

फसल	क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	प्रतिशत	प्रतिशत
1.धान	208	34.21	72.47
2.ज्वार	04	0.66	1.39
3.बाजरा	15	2.47	5.23
4.मक्का	45	7.40	15.68
5.अरहर	13	2.14	4.53
6.अन्य	2	0.33	0.70
(ब) रबी	314	51.65	रबी का
1.गेहूँ	251	41.28	79.94
2.जौ	11	1.81	3.50
3.चना	16	2.63	5.10
4.मटर	2	0.33	0.64
5.लाही	14	2.30	4.46
6.आलू	14	2.30	4.46
7.गन्ना	3	0.49	0.95
8.अन्य	3	0.49	0.95
(स) जायद	7	1.15	–
योग	608	100.00	–

ग्राम सुतियानी में विभिन्न फसलों के अन्तर्गत प्रयोग की जा रही भूमि का वितरण सारिणी 6.22 में प्रदर्शित की गई है जिसमें इस ग्राम में गेहूँ तथाधान दो फसलों का महत्व दृष्टिगोचर हो रहा है । जो सकल कृषि क्षेत्र के क्रमशः 41.28 तथा 34.21 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जा रही है दोनों यदि मिलाकर देखा जाये तो 75 प्रतिशत से भी अधिक हिस्सा बैठता है । शेष 25 प्रतिशत से भी कम क्षेत्र पर अन्य फसलें उगाई जा रही हैं । अन्य फसलों में मक्का तथा बाजरा लगभग 10 प्रतिशत क्षेत्र अधिकृत किए हुए हैं । दलहनी फसलों का अत्यन्त निम्न क्षेत्रफल है, वर्ष भर में दलहनी फसलें मात्र 5.10 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाई जाती है । लाही और आलू दोनों फसलें मिलकर 4.60 प्रतिशत क्षेत्र पर काविज है ।

यदि खरीफ तथा रबी कृषि मौसम की दृष्टि से देखें तो खरीफ मौसम में धान अकेले 72 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल पर उगाई जाती है जब कि मक्का का क्षेत्रफल 15.68 प्रतिशत अँकित है । ज्वार, बाजरा तथा अरहर तीनों मिलाकर लगभग 12 प्रतिशत क्षेत्रफल पर हिस्सेदारी कर रही है । इसी प्रकार रबी मौसम में गेहूँ का क्षेत्रफल लगभग 80 प्रतिशत है, अन्य फसलें केवल अपनी उपस्थिति ही दर्शा पा रही हैं । जायद की फसलों में खरबूजा तथा तरबूज अधिक महत्वपूर्ण है, कुछ कृषक शब्जियां भी उगाते हैं । इस मौसम में उर्द/मूँग का क्षेत्रफल लगभग नगण्य साही है । विभिन्न फसलों के क्षेत्रफलीय वितरण को देखते हुए यह स्पष्ट हो रहा है कि इस ग्राम में खाद्यान्न फसलों का ही बर्चस्व है, नकदी फसलें नगण्य स्थान रखती है ।

<u>भूमि पर जनसंख्या का भार</u> :

ग्राम सुतियानी में 483 परिवार निवास करते हैं जिनकी कुल जनसंख्या 2764 है । ग्राम वासियों का प्रमुख व्यवसायय कृषि है, कुछ ग्रामवासी व्यापार आदि में भी लगे हुए हैं परन्तु व्यापार का आकार अत्यन्त छोटा है । मूलतः कृषि पर आधारित जनसंख्या के भूमि पर पड़ने वाले दबाव को सारिणी 6.23 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

ग्राम सुतियानी में प्रति व्यक्ति कुल भूमि 0.1863 हेक्टेयर है जिसमें 0.1375 हेक्टेयर प्रति व्यक्ति की दर से विभिन्न फसलों को उगाने के लिए कृषि क्षेत्र उपयोग में लाया जा रहा है खरीफ की विभिन्न फसलों के लिए जिनमें धान प्रमुख फसल है 0.1038 हेक्टेयर भूमि का उपयोग किया जा रहा है जबकि रबी की फसलों जिनमें गेहूँ ~~प्रधान~~ प्रधान फसल है के लिए प्रतिव्यक्ति 0.1136 हेक्टेयर भूमि का उपयोग किया जा रहा है ।0.1375 हेक्टेयर पर शुद्ध कृषि क्षेत्र में 0.1295 हेक्टेयर क्षेत्रफल को सिंचन सुविधाएं प्राप्त हैं परन्तु फिर भी खरीफ का क्षेत्रफल मात्र 0.1038 हेक्टेयर है इसका मूल कारण है कि ग्राम की कुछ भूमि निचली

सारिणी 6.23 भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
	1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्रति व्यक्ति	0.1863	0.1375	0.0825	0.2200	0.1295	0.2015	0.1136	0.1038	0.0025

होने के कारण वर्षा से प्रभावित रहती है और उस पर कोई फसल लेना सम्भव नहीं रहता है । इसी प्रकार रबी की फसलें भी प्रति व्यक्ति 0.1136 हेक्टेयर भूमि का उपयोग किया जा रहा है । एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र 0.0825 हेक्टेयर प्रति व्यक्ति है । जिससे सकल बोया गया क्षेत्र 0.22 हेक्टेयर प्रति व्यक्ति तक बढ़ जाता है ।

व्यावसायिक संरचना के आधार पर इस ग्राम की जनसंख्या का 76 प्रतिशत हिस्सा प्राथमिक रूप से कृषि व्यवसाय में लगा हुआ है और 22 प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या कृषि के अतिरिक्त कृषि के सहायक कार्यो तथा वाणिज्य /व्यापार में लगी हुई है , मात्र 2 प्रतिशत से कम जनसंख्या गॉव के बाहर रहकर नौकरी पेशे से जीवन यापन के साधन जुटा रहे हैं ।

विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता :

ग्राम सुतियानी में विभिन्न फसलों से प्रापत होने वाले औसत उत्पादन को सारिणी क्रमांक 6.24 में प्रस्तुत किया जा रहा है

सारिणी 6.24 विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता (किलोग्राम/हेक्टेयर)

फसल	उत्पादन	जनपदीय उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत में)
1. धान	2,083	1,970	+5.74
2. ज्वार	965	1,025	−5.85
3. बाजरा	1,495	1,523	−1.84
4. मक्का	1,356	1,377	−1.52
5. गेहूँ	2,617	2,506	+4.43
6. जौ	1,928	1,906	+1.15
7. अरहर	1,336	1,326	+0.75
8. चना	1,292	1,283	+0.70

फसल	उत्पादन	जनपदीय उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत में)
9. मटर	1,769	1,650	+7.21
10. उर्द/मूँग	671	473	+41.86
11. लाही	1,424	1,247	+14.19
12. आलू	20,556	18,688	+10.00
13. गन्ना	30.762	33.699	-8.71

सुतियानी ग्राम में ज्वार, बाजरा, मक्का तथा गन्ने की औसत उत्पादकता जनपदीय स्तर से कम है अन्य फसलों की औसत उत्पादकता जनपदीय स्तर से अधिक है । धान की औसत उत्पादकता जनपदीय स्तर से 5.74 प्रतिशत अधिक है इसी प्रकार गेहूँ की भी औसत उत्पादता 4.43 प्रतिशत अधिक है । औसत उतपादकता में उर्द/मूँग सभी फसलों में अग्रणी है और इसकी औसत उतपादकता 41.86 प्रतिशत अधिक है परन्तु इस फसल का महत्व क्षेत्र की दृष्टि से नगण्य है । लाही की औसत उत्पादकता 14.19 प्रतिशत अधिक है जो कि इस बात का प्रतीक है कि तिलहन के उतपादन में यह ग्राम अग्रणी है, परन्तु क्षेत्रफल की दृष्टि से इस फसल को केवल 14 हेक्टेयर क्षेत्र में उगाया जाता है जो प्रतिशत की दृष्टि से 4.46 प्रतिशत है । मटर का क्षेत्रफल मात्र 2 हैक्टेयर है इस फसल का भी औसत उत्पादन जनपदीय स्तर से अधिक है । नकदी फसलों में आलू का उत्पादन 10 प्रतिशत अधिक है आलू जो ग्रामीण भोजन में वर्ष भर शब्जी के रूप में प्रयोग किया जाता है की बृद्धि एक अच्छा संकेत है । इसके विपरीत गन्ने की औसत उतपादकता में 8.71 प्रतिशत का ह्रास दिखाई पड़ रहा है जिसका उपयोग गन्ने से गुड़ बनाकर किया जाता है और ग्रामीणों के लिए यही चीनी का कार्य करता है ।

विभिन्न फसलों से प्राप्त उत्पादन को जनसंख्या का भाग देकर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्धता की गणना की गई है तथा इन खाद्य पदार्थों की उपलब्धता के आधार पर "आहार सन्तुलन पत्रक" तेयार किया गया है । ग्राम सुतियानी के आहार सन्तुलन पत्रक के आधार पर पोषक तत्वों की गणना की गई है और इस गणना का तालिका 6.24 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

तालिका क्रमांक 6.25 विभिन्न खाद्यान्नों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम–सुतियानी)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	231.92	800.12	17.39	2.319	2.087	1.391	177.88	23.19	440.65	7.421	4.638	0.487	0.371	9.045	
2. ज्वार	3.10	10.82	0.32	0.059	0.049	0.050	2.25	0.78	6.88	0.180	1.457	0.011	0.004	0.096	
3. बाजरा	18.01	65.02	2.09	0.901	0.414	0.216	12.16	7.56	53.31	0.901	23.773	0.059	0.045	0.414	
4. मक्का	48.99	170.48	5.44	1.763	0.735	1.323	32.43	4.90	170.48	0.980	44.091	0.353	0.050	0.882	
5. गेहूँ	559.07	1934.38	65.97	8.386	8.386	6.709	398.06	229.22	1710.75	27.394	357.805	2.516	0.950	30.749	
6. जौ	17.03	57.22	1.96	0.221	0.204	0.664	11.85	4.43	36.61	0.511	1.703	0.080	0.034	0.920	
7. अरहर	10.07	33.73	2.25	0.171	0.352	0.151	5.80	7.35	30.61	0.584	13.292	0.045	0.019	0.292	
8. चना	11.99	44.60	2.49	0.671	0.324	0.144	7.30	15.47	39.69	1.091	15.467	0.046	0.022	0.312	
9. मटर	2.21	6.96	0.44	0.024	0.048	0.099	1.25	1.66	6.58	0.113	0.862	0.010	0.004	0.075	
10. उर्द/मूँग	0.42	1.46	0.09	0.002	0.013	0.022	0.24	1.21	1.31	0.035	0.298	0.002	0.001	0.006	0.0042
11. लाही/तेल	6.97	62.73	–	6.970	–	–	–	–		–	–	–	–		–
12. आलू	213.94	207.52	3.42	0.214	1.284	0.856	48.35	21.39	85.57	1.498	51.345	0.214	0.021	2.567	36.3698
13. गन्ना/गुड़	9.88	37.84	0.04	0.010	0.059	–	9.38	7.90	3.95	1.126	16.598	0.020	0.004	0.049	–
योग	1133.60	3432.88	101.90	21.711	13.955	11.625	706.95	325.06	2586.39	41.834	531.329	3.843	1.525	45.407	36.3740

ग्राम सुतियानी में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 1133.60 ग्राम खाद्य पदार्थ उपलब्ध है जिनमें चावल, गेहूँ तथा आलू तीनों खाद्य पदार्थ 1004.93 ग्राम की भागेदारी कर रहे हैं । विभिन्न खाद्यान्नों से इस ग्राम में 3432.88 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है जो सामान्य ऊर्जा आवश्यकता से अधिक है । ऊर्जा की इस मात्रा में 85 प्रतिशत से अधिक चावल गेहूँ तथा आलू की हिस्सेदारी है । यदि वर्ष में विभिन्न फसलों की दृष्टि से विचार करें तो खरीफ की फसलों से उत्पन्न होने वाले खाद्यान्नों से 31.47 प्रतिशत ऊर्जा प्रापत होती है जबकि रबी की फसलों से 59.56 प्रतिशत ऊर्जा प्राप्त होती है, इनको यदि मिलाकर गणना करें तो रबी तथा खरीफ के खाद्यान्नों से 91.03 प्रतिशत कुल ऊर्जा प्राप्त होती है ।शेष हिस्सा आलू, तेल तथा गुड़ से प्राप्त होता है । रबी तथा खरीफ फसलों से जो ऊर्जा प्राप्त होती है उसमें अनाज की भागेदारी 88.50 प्रतिशत है और दालों की हिस्सेदारी मात्र 2.53 प्रतिशत ही है जो कि अत्यन्त न्यून है, चूँकि ग्रामीण जनसंख्या को अधिकांश प्रोटीन दालों से ही प्राप्त होता है परन्तु दालों के उपयोग की मात्रा अत्यन्त न्यून होने के कारण अधिकांश प्रोटीन की अनाजों से ही प्राप्त होती है । दालों से केवल 5.17 प्रतिशत प्रोटीन प्राप्त होता है । जबकि अनाजों की भागेदारी 93.17 प्रतिशत है ।

6. ग्राम–इन्द्रावखी

स्थिति : महेवा विकास खण्ड का ग्राम इन्द्रावखी महेवा–निवाड़ी पक्के मार्ग से लगभग 4 किलोमीटर तथा विकास खण्ड मुख्यालय से लगभग 17 किलोमीटर दूर उत्तर पूर्व में स्थित है । यह गाँव एक कच्चे मार्ग से जुड़ा हुआ है जो लगभग 4 किलोमीटर पश्चिम में चलकर पक्के मार्ग से जुड़ता है । यहाँ की भूमि समतल तथा कृषि कार्य के लिए उपयुक्त है । भौगोलिक दृष्टि से यह ग्राम $26^{0}.56'$ उत्तरी अक्षाँश तथा $78^{0}.99'$ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है । इस गाँव से लगभग 3 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम में स्थित अहेरीपुर कस्बा ग्रामीणों की दैनिक सामान्य आवश्यकताओं को पूरा करता है । कृषि सम्बन्धी छोटी मोटी आवश्यकताएं भी यह कस्बा पूर्ण करता है यहाँ सप्ताह में दो दिन साप्ताहिक बाजार भी लगता है ।

सिंचाई सुविधा के लिए इस गाँव के दक्षिणी किनारे से एक नहर निकलती है जो रबी, खरीफ तथा जायद तीनों कृषि मौसमों में सिंचाई की आवश्यकता को पूरा करती है इसके अतिरिक्त निजी नलकूप तथा पम्पिंग सेट भी पर्याप्त मात्रा में लगे हुए हैं जो नहर में पानी न आने अथवा किसी कारणवश पर्याप्त पानी न मिल पाने की स्थिति में कृषि भूमि को आवश्यक सिंचन सुविधाएं उपलबध कराते हैं । खरीफ मौसम में बाजरा तथा रबी मौसम मं गेहूँ सर्वाधिक महत्व पूर्ण फसलें हैं, जायद में उर्द/मूँग का इस गाँव में विशेष महत्व है ।अन्य

परम्परागत फसलें भी यहाँ के कृषकों द्वारा उगाई जाती हैं । जिनमें रबी मौसम में जौ, चना मटर तथा लाही, आलू प्रमुख है और खरीफ मौसम में धान, मक्का तथा अरहर की फसलें भी महत्वपूर्ण हैं ।

शस्य भूमि उपयोग :

ग्राम इन्द्रावखी में वर्ष के तीनों मौसमों में परम्परागत फसलें उगाई जाती हैं । इस ग्राम के शस्य भूमि उपयोग को सारिणी क्रमांक 6.26 में दर्शाया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 6.26 ग्राम इन्द्रावखी में शस्यय भूमि उपयोग :

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	प्रतिशत
1. कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	630	-
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	428	67.94
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र ।	281	65.65
4. सकल बोया गया क्षेत्र	709	165.65
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	334	78.04
6. सकल सिंचित क्षेत्र	436	61.50
7. रबी क्षेत्र	397	55.99
8. खरीफ क्षेत्र	293	41.33
9. जायद क्षेत्र	19	2.68

ग्राम इन्द्रावखी का कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 630 हेक्टेयर है जिसके 67.94 प्रतिशत भूमि पर विभिन्न फसलें उगाई जाती है , इसका अर्थ है कि 32 प्रतिशत से अधिक भूमि कृषि के लिए अनुपयुक्त है अथवा कृषि के अन्तर्गत प्रयोग में नहीं लाई जा रही है । यह भूमि कुल भूमि की लगभग एक तिहाई है ,जो कुल भूमि का एक बड़ा हिस्सा है । इस गाँव में कृषि के लिए 428 हेक्टेयर भूमि उपलब्ध है जिसके 65.65 प्रतिशत क्षेत्र पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती हैं । कृषि के लिए उपलब्ध भूमि का 78.04 प्रतिशत सिंचित क्षेत्र है, परन्तु वर्ष भर में 709 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर विभिन्न फसलें बोई जाती है जिसमें 61.50 प्रतिशत क्षेत्रफल पर सिंचाई सुविधाएं प्राप्त हैं । वर्ष भर के लिए उपलब्ध कृषि भूमि में 65.99 प्रतिशत क्षेत्र

पर रबी की फसलें , 41.33 प्रतिशत क्षेत्र पर खरीफ की फसलें तथा 2.68 प्रतिशत क्षेत्रफल पर जायद की फसलें उगाई जाती हैं । जायद की फसलों में इस गाँव में उर्द/मूँग तथा गर्मी की शब्जियों का प्रमुख स्थान है ।

सारिणी 6.27 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण ।

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत	प्रतिशत
(अ) खरीफ	293	41.33	खरीफ का
1. धान	43	6.07	14.68
2. ज्वार	23	3.24	7.85
3. बाजरा	143	20.17	48.81
4. मक्का	39	5.50	13.31
5. अरहर	22	3.10	7.51
6. अन्य	23	3.24	7.85
(ब) रबी	397	55.99	रबी का
1. गेहूँ	190	26.80	47.86
2. जौ	38	5.36	9.57
3. चना	34	4.79	8.56
4. मटर	55	7.76	13.85
5. लाही	49	6.91	12.34
6. आलू	18	2.54	4.53
7. गन्ना	8	1.13	2.02
8. अन्य	5	0.70	1.26
जायद	19	2.68	–
योग	709	100.00	–

सारिणी क्रमांक 6.27 ग्राम इन्द्रावखी में वर्ष भर में विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल के वितरण को दर्शा रही है जिसमें कुल कृषि क्षेत्र 709 हेक्टेयर में 41.33 प्रतिशत क्षेत्रफल पर खरीफ की फसलें, 55. 99 प्रतिशत क्षेत्रफल पर रबी की फसलें उगाई जाती हैं, जायद की फसलें मात्र 2.68 प्रतिशत क्षेत्र पर आच्छादित हैं । खरीफ मौसम में बाजरा फसल सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जो 48.81 प्रतिशत क्षेत्रफल पर अपना अधिपत्य जमाए हुए है । धान तथा मक्का लगभग समान महत्व की फसलें हैं जो क्रमशः 14.68 प्रतिशत तथा 13.31 प्रतिशत क्षेत्र पर बोई जा रही हैं । इसी प्रकार ज्वार तथा अरहर की फसलें भी कमोवेश एक सी स्थिति का प्रदर्शन कर रही हैं । रबी मौसम की फसलों में गेहूँ 47.86 प्रतिशत क्षेत्रफल अधिकृत करके अपने महत्व को स्पष्ट कर रहा है, जबकि मटर 13.85 प्रतिशत क्षेत्र पर बोया जा रहा है और रबी फसलों में इसका दूसरा महत्वपूर्ण स्थान है । इस गाँव में लाही भी 49 हेक्टेयर में बोई गई जिसका अर्थ है कि तिलहनी फसलों के लिए यहाँ अनुकूल परिस्थितियां हैं । दलहनी फसलों में मटर के बाद चना का स्थान है जो 8.56 प्रतिशत क्षेत्र पर आच्छादित है । गन्ना की फसल कोई बहुत अच्छा प्रदर्शन नहीं कर रही है और मात्र 2.02 प्रतिशत क्षेत्रफल घेर कर केवल अपनी उपस्थिति भर दर्शा रही है । जायद की फसलों में उर्द/मूँग का इस गाँव में विशेष महत्व है जो 14 हेक्टेयर में बोया जाता है और गर्मियों की फसलों में यह लगभग एक तिहाई क्षेत्रफल घेर लेती है जायद फसलों के अतिरिक्त खरीफ मौसम में भी उर्द/मूँग इस गाँव में बोई जाती है ।

भूमि पर जनसंख्या का भार :

ग्राम इन्द्रावखी में कुल 546 परिवार निवास करते हैं जिनकी कुल जनसंख्या 3656 है । गाँव की अधिकाँश जनसंख्या मूलतः कृषक है और कृषि व्यवस्था से ही अपने भरण पोषण के साधन जुटाते हैं । गाँव के थोड़े लोग कृषि के सहायक धन्धों अथवा छोटे स्तर के व्यवसाय में लगे हुए हैं , कुछ व्यक्ति गाँव से बाहर रहकर निजी/सरकारी सेवाओं में लगे हुए हैं । गाँव की जनसंख्या मूलतः कृषक होने के कारण लगभग पूर्ण रूपेण कृषि पर आधारित हैं । कृषि भूमि पर जनसंख्या के भार को सारिणी 6.28 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

इन्द्रावखी ग्राम में प्रति व्यक्ति कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 0.1737 हेक्टेयर है जिसके मात्र 0.1180 हेक्टेयर क्षेत्र पर कृषि फसलें उगाई जाती हैं जिसका आर्थ है कि 0.0557 हेक्टेयर क्षेत्र या तो कृषि के लिए अनुपयुक्त है या कृषि के लिए अप्रयुक्त है जबकि प्रति व्यक्ति कृषि भूमि उपयोग की दृष्टि से खरीफ मौसम में इससे थोड़ा ही अधिक क्षेत्र फल प्रयोग में लाया जा रहा है । प्रति व्यक्ति 0.1180 हेक्टेयर भूमि कृषि के लिए उपलब्ध होने के बावजूद भी 0.0808 हेक्टेयर खरीफ मौसम की फसलों के लिए प्रयुक्त हो रहा है जबकि प्रति

सारिणी 6·28 भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
	1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्रति व्यक्ति	0·1737	0·1180	0·7750	0·1955	0·0921	0·1202	0·1095	0·0808	0·0052

व्यक्ति शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल 0.0921 हेक्टेयर है । स्पष्ट है कि इन्द्रावखी ग्राम में उपलब्ध कृषि भूमि का पूरीक्षमता से उपयोग नहीं किया जा रहा है । सिंचन सुविधाओं पर विचार करें तो इस ग्राम में नहर तथा निजी नलकूप/पम्पिंग सेट्स सिंचाई का कार्य करते हैं और प्रति व्यक्ति 0.1180 हेक्टेयर में से 0.0921 हेक्टेयर क्षेत्रफल को सिंचन सुविधाएं उपलब्ध है जो सिंचाई की दृष्टि से सामान्य से अच्छी स्थिति कही जा सकती है, परन्तु सिंचन सुविधाओं के होते हुए भी कृषि भूमि का उतनी कुशलता से उपयोग नहीं हो पा रहा है जितना होना चाहिए ।

व्यावसायिक संरचना की दृष्टि से गाँव की 88 प्रतिशत जनसंख्या प्राथमिक रूप से कृषि उत्पादन पर आश्रित है जबकि लगभग 11 प्रतिशत जनसंख्या कृषि के अतिरिक्त अन्य व्यवसायों में संलग्न होने के कारण द्वितीयक रूप से कृषि पर आश्रित है। मात्र 1 प्रतिशत से भी कुछ कम जनसंख्या गाँव से बाहर रहकर निजी/सरकारी सेवाओं से अपने लिए आर्थिक संसाधन जुटाते हैं, इनमें से भी अधिकांश लोग अपने जीवनस्तर को ऊँचा उठाने में सफल हुए हैं , परन्तु खाद्यान्न आवश्यकता की आपूर्ति के लिए गाँव पर ही आश्रित हैं । जिससे कुल मिलाकर सम्पूर्ण जनसंख्या की उदरपूर्ति गाँव को ही करनी पड़ती है ।

<u>विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता</u> :

ग्राम इन्द्रावखी में वर्ष भर उगाई जाने वाली प्रमुख फसलों की औसत उत्पादकता को सारिणी 6.29 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.29 विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता (किलोग्राम /हेक्टेयर)

फसल	उत्पादन	जनपदीय उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत में
1. धान	2,209	1,970	+, 12.13
2. ज्वार	1,021	1,025	− 0.39
3. बाजरा	1,545	1,523	+ 1.44
4. मक्का	1,581	1,377	+, 14.81
5. गेहूँ	2.529	2,506	+ 0.92

फसल	उत्पादन	जनपदीय उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत में)
6. जौ	1,903	1,906	− 0.16
7. अरहर	1,297	1,326	− 2.19
8. चना	1,243	1,283	− 3.12
9. मटर	1,658	1,650	+ 0.48
10. उर्द/मूँग	630	473	+, 33.19
11. लाही	1,105	1,247	−11.39
12. आलू	19,004	18,688	+ 1.69
13. गन्ना	35,273	33,699	+ 4.67

ग्राम इन्द्रावखी में विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता की दृष्टि से सर्वाधिक सफल उर्द/मूँग की फसल है जिसकी औसत उत्पादकता जनपदीय स्तर से 33.19 प्रतिशत अधिक है, इसके उपरान्त मक्का की फसल 14.81 प्रतिशत अधिक उत्पादन का प्रदर्शन कर रही है । धान की फसल भी 12.13 प्रतिशत अधिक उत्पादन के स्तर का प्रदर्शन करके एक अच्छी फसल की श्रेणी में रखी जा सकती है । जनपदीय स्तर से अधिक उत्पादन देने वाली अन्य फसलों में बाजरा 1.44 प्रतिशत, गेहूँ 0.92 प्रतिशत , मटर 0.48 प्रतिशत, आलू 1.69 प्रतिशत तथा गन्ने की फसल 4.67 प्रतिशत अधिक उत्पादन दे रही है । जनपदीय स्तर से कम उत्पादन प्रदान करने वाली फसलों में लाही 11.39 प्रतिशत कम उत्पादन देकर न्यूनतम स्तर पर हैं जबकि इसके अतिरिक्त चना 3.12 प्रतिशत, अरहर 2.19 प्रतिशत जौ 0.16 प्रतिशत तथा ज्वार 0.39 प्रतिशत तथा ज्वार 0.39 प्रतिशत कम उत्पादन दे रही है । खाद्यान्न फसलों में केवल ज्वार तथा जौ ही न्यून स्तर को प्रदर्शित कर रही है जबकि अन्न फसलें जनपदीय स्तर से उच्च स्तर पर हैं । दलहनी फसलों में मटर तथा उर्द/मूँग ऊँचे सतर को तथा चना और अरहर न्यून स्तर को दर्शा रही हैं ।

विभिन्न फसलों से प्राप्त होने वाले कुल उत्पादन में ग्राम की कुल जनसंख्या का भाग देकर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थों की औसत उपलब्धता की गणना की गई है और इस आधार पर ग्राम इन्द्रावखी

सारिणी क्रमांक 6.30 विभिन्न खाद्यान्नों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम–इन्द्रावखी)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाइ–ड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवो–फ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	38.44	132.62	2.88	0.384	0.346	0.231	29.48	3.84	73.04	1.230	0.769	0.081	0.062	1.499	
2. ज्वार	1.86	6.49	0.19	0.035	0.030	0.030	1.35	0.47	4.13	0.108	0.874	0.007	0.002	0.058	
3. बाजरा	134.11	484.14	15.56	6.705	3.084	1.609	90.52	56.33	396.96	6.705	177.025	0.442	0.335	3.084	
4. मक्का	27.83	96.85	3.09	1.002	0.417	0.751	18.42	2.78	96.85	0.557	25.047	0.200	0.028	0.501	
5. गेहूँ	307.86	1065.20	36.33	4.618	4.618	3.694	219.19	126.22	942.05	15.085	197.030	1.385	0.523	16.932	
6. जौ	43.89	147.47	5.05	0.571	0.527	1.712	30.55	11.41	94.36	1.317	4.389	0.206	0.088	2.370	
7. अरहर	12.47	41.77	2.78	0.212	0.436	0.187	7.18	9.10	37.91	0.723	16.460	0.056	0.024	0.362	
8. चना	18.53	68.93	3.85	1.038	0.500	0.222	11.28	23.90	61.33	1.686	23.904	0.070	0.033	0.482	
9. मटर	43.05	135.61	8.48	0.473	0.947	1.937	24.32	32.29	128.30	2.195	16.789	0.202	0.082	1.464	
10. उर्द/मूँग	8.79	30.59	1.93	0.044	0.281	0.466	5.03	25.23	27.34	0.738	6.241	0.037	0.018	0.132	0.0879
11. लाही/तेल	14.31	128.79	–	14.31	–	–	–	–	–	–	–	–	5 -	–	–
12. आलू	192.26	186.49	3.08	0.192	1.153	0.769	43.45	19.23	76.90	1.346	46.142	0.192	0.019	2.307	32.6842
13. गन्ना/गुड़	22.84	87.48	0.09	0.023	0.137	–	21.70	18.27	9.14	2.604	38.371	0.046	0.009	0.114	–
योग	866.24	2612.43	83.31	29.608	12.476	11.608	502.47	329.07	1948.31	34.294	553.041	2.924	1.223	29.305	32.7721

का आहार सन्तुलन पत्रक" तैयार किया गया है जिसमें विभिन्न खाद्य पदार्थों की औसत उपलब्धता तथा उससे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की गणना की गई है । इस गणना को सारिणी क्रमांक 6.28 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

ग्राम अन्द्रावखी के "आहार सन्तुलन पत्रक " के अनुसार इस गाँव में प्रति व्यक्ति खाद्य पदार्थों की प्रतिदिन 866.24 ग्राम मात्रा उपलब्ध है जिसमें 553.99 ग्राम अन्न तथा 82.84 ग्राम दालें और शेष खाद्य पदार्थ लाही, आलू तथा गन्ने की फसलों से प्राप्त होते हैं । खरीफ फसलों के उत्पादन से 214.71 ग्राम ~~तथा रबी की फसलों से~~ तथा 413.33 ग्राम रबी की फसलों से खाद्य पदार्थ प्राप्त होते हैं । इन खाद्य पदार्थों से ग्रामीजन समुदाय को प्राप्त होने वाली ऊर्जा पर विचार करें तो प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 2612.43 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त हो रही है जो कि औसत आवश्यकता से अधिक है । खरीफ की फसलों से 29.16 प्रतिशत तथा रबी की फसलों 55.42 प्रतिशत ऊर्जा प्राप्त हो रही है । यदि खाद्यान्न तथा दालों को पृथक–पृथक कर दिया जाये तो खाद्यान्नों से 73.98 प्रतिशत तथा दालों से 10.60 प्रतिशत ऊर्जा प्रापत हो रही है । लगभग 16 प्रतिशत ऊर्जा लाही, आलू तथा गन्ने की फसलों से प्राप्त होती है । प्रोटीन की दृष्टि से विचार करें तो इस गॉव में दालों का उपयोग स्तर अत्यन्त कम है जबकि ग्रामीण भोजन में अधिकाँश मात्रा दालों में प्राप्त होती है , जबकि कुल प्रोटीन की मात्रा में से आधे से भी कम प्रोटीन गेहूँ की फसल से प्राप्त हो रही है, इसके बाद बाजरा का स्थान आता है जिससे 18 प्रतिशत से भी अधिक प्रोटीन प्राप्त की जाती है , परन्तु बाजरा का सेवन अब निर्धनों की खाद्य सामग्री में शामिल रहता है जबकि मध्यम तथा उच्च वर्ग के लोग बाजरे का सेवन करना अपनी शान के खिलाफ समझते हैं ।

7. ग्राम – बरचौली

स्थिति: चकर नगर विकास खण्ड का ग्राम बरचौली यमुना और चम्बल नदियों के मध्य में स्थित है जिससे इस ग्राम की भूमि ऊँची नीची होने के कारण कृषि के आधुनिकीकरण के लिए सर्वथा अनुपयुक्त है । ऊबड़ खाबड़ भूमि के कारण सिंचाई के साधनों का नितान्त अभाव है । जिससे यहाँ पर केवल उन्हीं फसलों का अधिक महत्व है जिनको पानी की कम आवश्यकता पडती है । ग्राम के उत्तर में कुछ भूमि समतल है, इस समतल भूमि पर दो कृषकों ने अपने निजी नलकूप/पम्पिंग सेट लगा रखे हैं, और इस ग्राम में यही एक मात्र सिंचाई के साधन हैं । भौगोलिक दृष्टि से यह ग्राम $26^{0}.52'$ उत्तरी अक्षांश तथा $78^{0}.77'$ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है । विकास खण्ड चकरनगर से उदी को जाने वाली पक्की सड़क से यह ग्राम लगभग 2 किलोमीटर दक्षिण में और विकास

खण्ड मुख्यालय से पश्चिम में लगभग 10किलोमीटर दूर स्थिति है । इस ग्राम के लिए चकरनगर कस्बा ही देनिक सामान्य आवश्यकता की वस्तुएं उपलब्ध कराता है ।

शस्य भूमि उपयोग :

सिंचाई की सुविधाओं से वँचित इस ग्राम में वर्ष में खरीफ तथा रबी की फसलें ही उगाई जाती है, जायद की फसलों में घरेलू उपयोग के लिए कुछ शब्जियां उगाई जाती हैं । इस ग्राम का शस्य भूमि उपयोग सारिणी 6.31 में दर्शाया गया है ।

सारिणी 6.31 ग्राम बरचौली का शस्य भूमि उपयोग ।

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	प्रतिशत
1.कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	365	-
2.शुद्ध बोया गया क्षेत्र	279	76.44
3.एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र ।	26	9.32
4.सकल बोया गया क्षेत्र	305	109.32
5.शुद्ध सिंचित क्षेत्र	36	12.90
6.सकल सिंचित क्षेत्र	43	14.10
7. रबी का क्षेत्र	173	56.72
8. खरीफ का क्षेत्र	131	42.95
9.जायद का क्षेत्र	01	0.33

ग्राम बरचौली के शस्य भूमि उपयोग को सारिणी 6.31 में प्रस्तुत किया गया है जिसमें इस ग्राम का कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 365 हेक्टेयर है जिसका 76.44 प्रतिशत हिस्सा कृषि फसलों के अन्तर्गत उपयोग में लाया जा रहा है । सिंचन सुविधाओं के अभाव के कारण इस ग्राम में दो या दो से अधिक फसलें उगाई जा सकने वाली भूमि केवल 9.32 प्रतिशत है जिससे सकल कृषि क्षेत्र में भी कोई उल्लेखनीय बृद्धि नहीं दिखाई पड़ रही

है क्योंकि शुद्ध कृषि क्षेत्र में मात्र 12.90 प्रतिशत क्षेत्र को सिंचन सुविधाएं प्राप्त हैं । सकल कृषि क्षेत्र 305 हेक्टेयर है जिसमें मात्र 14.10 प्रतिशत क्षेत्र ही सिंचाई युक्त है, शेष कृषि क्षेत्र असिंचित है और मानसूनी वर्षा पर निर्भर रहता है । यदि मानसूनी वर्षा समय से हो जाती है तो कृषि उत्पादकता में भी बृद्धि हो जाती है और यदि वर्षा का अभाव रहता है तो फसलों में अपेक्षित उत्पादन प्राप्त नहीं होता है । और यही कारण है कि इस ग्राम में उन्हीं फसलों को अधिक प्राथमिकता दी जाती है जिनको पानी की कम आवश्यकता पड़ती है ।सकल बोये गये क्षेत्रफल 305 हेक्टेयर में से 56.72 प्रतिशत क्षेत्र पर रबी की फसलें तथा 42.95 प्रतिशत क्षेत्र पर खरीफ की फसलें उगाई जाती हैं । जायद का क्षेत्र केवल 1 हेक्टेयर है जो सकल बोये गये क्षेत्र का मात्र 0.33 प्रतिशत है ।

सारिणी 6.32 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण ।

फसल	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत	प्रतिशत
(अ) खरीफ	131	42.95	खरीफ का
1.धान	–	–	–
2.ज्वार	–	–	–
3.बाजरा	95	31.15	72.52
4.मक्का	03	0.98	2.29
5.अरहर	31	10.16	23.66
6.अन्य	2	0.66	1.53
(ब) रबी	173	56.72	रबी का
1.गेहूँ	28	9.18	16.18
2.जौ	34	11.15	19.65
3.चना	56	18.36	32.37
4.मटर	01	0.33	0.58
5.लाही	52	17.05	30.06
6.आलू	01	0.33	0.58
7.गन्ना	–	–	–
8.अन्य	01	0.33	0.58
(स) जायद	01	0.33	–
योग	305	100.00	–

सारिणी 6.32 ग्राम बरचौली की कृषि भूमि पर विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल के वितरण को दर्शा रही है । सकल बोये गये क्षेत्र 305 हेक्टेयर में 56.72 प्रतिशत क्षेत्र रबी की फसलें घेरे हुए हैं, जबकि खरीफ की फसलें 42.95 प्रतिशत क्षेत्र पर आच्छादित है और जायद की फसलें मात्र 0.33 प्रतिशत क्षेत्र का प्रदर्शन करके केवल अपनी उपस्थिति ही दर्शा पा रही है । सिंचाई के साधनों से वंचित इस ग्राम में धान तथं ज्वार की फसलों की पूर्णतया अनुपस्थिति है । धान की अनुपस्थिति तो सिंचाई के साधनों के अभाव के कारण तथा ऊँची नीची भूमि होने के कारण समझ में आती है , परन्तु ज्वार फसल की पूर्णतया अनुपस्थिति एक समझ में न आने वाला तथ्य है, जबकि ज्वार तथा अरहर का संयोजन प्रायः हर क्षेत्र में मिलता है, परन्तु इस ग्राम में अरहर एक स्वतंत्र फसल के रूप में उगाई जा रही है जो एक आश्चर्यजनक तथ्यय है और सामान्य प्रचलन के विपरीत अपवाद स्वरूप है । खरीफ मौसम में बाजरा तथा अरहर दो महत्वपूर्ण फसलें हैं जो 96 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है। तीसरी फसल मक्का 2.29 प्रतिशत क्षेत्र पर उपस्थिति है । रबी मौसम की फसलों में चना तथा लाही महत्वपूर्ण फसलें हैं और ये दोनों फसलें इस मौसम में 62 प्रतिशत से भी अधिक क्षेत्र पर अधिपत्य स्थापित किए हुए हैं । तीसरी महत्वपूर्ण फसल जौ है जो 19.65 प्रतिशत क्षेत्र घेर रही है । गेहूँ जिसे पानी की अधिक आवश्यकता होती है । 16.18 प्रतिशत क्षेत्र को अधिकृत करके चौथे स्थान पर स्थित है । गन्ना फसल की इस ग्राम में पूर्णतया अनुपस्थिति है । जायद मौसम में अत्यन्त छोटे पैमाने पर शब्जियाँ उगाई जाती है जिनमें लोकी, काशीफल, करेला तथा भिण्डी प्रमुख रूप से उगाई जाती है ।

भूमि पर जनसंख्या का भार:

बरचौली ग्राम में 234 परिवार निवास कर रहे है जिनकी कुल जनसंख्या 1636 है । ग्राम की अधिकांश जनसंख्या मूलतः कृषि पर आश्रित है और कृषि उत्पादन से ही अपनी दैनिक आवश्यकताओं की आपूर्ति करते हैं । अतः कृषि पर आश्रित जनसंख्या के लिए प्रति व्यक्ति कृषि भूमि की उपलब्धता ज्ञात करना आवश्यक है । इस ग्राम की कुल कृषि भूमि पर जनसंख्या के भार की गणना सारिणी 6.38 में प्रस्तुत की जा रही है ।

प्रति व्यक्ति विभिन्न प्रकार की कृषि भूमि की प्रति व्यक्ति उपलब्धता सारिणी 6.33 में प्रस्तुत है जिसके अनुसार प्रति व्यक्ति कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 0.2231 हेक्टेयर है जिसमें से 0.1705 हेक्टेयर भूमि विभिन्न फसलें उगाने के लिए प्रयुक्त की जा रही है । सिंचाई की अपर्याप्तता के कारण 0.0159 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर एक से अधिक फसलें प्राप्त की जा रही है जिसके कारण सकल कृषि क्षेत्र में उल्लेखनीय बृद्धि नहीं हो पा रही है और यह केवल प्रति व्यक्ति 0.1864 हेक्टेयर तक ही बढ़ पा रहा है । कृषि के लिए प्रति व्यक्ति शुद्ध क्षेत्रफल 0.1705 है परन्तु इसमें मात्र 0.0801 हेक्टेयर क्षेत्र ही खरीफ मौसम में प्रयुक्त हो पा रहा है

सारिणी क्रमांक 6.33 भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
	1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्रति व्यक्ति	0.2231	0.1705	0.0159	0.1864	0.0220	0.0263	0.1057	0.0801	0.0006

औसत उत्पादन की दृष्टि [illegible] देखा जाये तो बरचौली ग्राम में अन्न की फसलों में बाजरा, मक्का तथा जौ में क्रमशः 1.71 प्रतिशत, 4.79 प्रतिशत तथा 3.51 प्रतिशत जनपदीय उत्पादन स्तर से अधिक उत्पादन प्राप्त हो रहा है जबकि दलहनी फसलों में मटर तथा उर्द/मूँग में बढ़त प्रापत है, जबकि क्षेत्रफल की दृष्टि से इन फसलों का क्षेत्रफल नगण्य ही कहा जायेगा , इसके विपरीत अरहर तथा चना फसलों के उत्पादन के लिए अनुकूल परिस्थितियां होते हुए भी उत्पादन की दृष्टि से जनपदीय स्तर से पिछड़ रही है और अरहर 7.39 प्रतिशत तथा चना 8.42 प्रतिशत कम उत्पादन प्रदान कर रहा है । इसी प्रकार लाही का उत्पादन भी जनपदीय स्तर से 0.56 प्रतिशत कम हे, आलू के कम उत्पादन का कारण यह हो सकता है कि यह फसल घरेलू उपयोग के लिए कृषकों द्वारा अत्यन्त छोटे पैमाने पर उगाई जाती है जिससे यथोचित मात्रा में आगतो का प्रयोग नहीं हो पाता है ।

बरचौली ग्राम के कुल उत्पादन तथा उसमें रहने वाली जनसंख्या के आधार पर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थो की उपलब्धता की गणना की गई है और इस मात्रात्मक खाद्य पदार्थो की उपलब्धता के आधार पर "आहार सन्तुलन पत्रक" तैयार किया गया जिसमें उपलब्ध मात्रा से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की गणना करके सारिणी क्रमांक 6.33 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारिणी 6.33 ग्राम बरचौली में विभिन्न खाद्यान्नों की प्रति व्यक्ति मात्रा तथा उस मात्रा से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की गणना प्रस्तुत की गई है , सारिणी इस तथ्य को स्पष्ट कर रही है कि इस ग्राम की जनसंख्या को प्रति व्यक्ति खाद्यान्न की मात्रा 392.65 ग्राम है और दालों की उपलब्ध मात्रा 104.23 ग्राम है, अर्थात कुल उपलब्ध मात्रा 558.31 ग्राम में से 70 प्रतिशत से अधिक की भागेदारी अन्न की है और लगभग 19 प्रतिशत दालों की उपलब्धता है शेष अन्य दो फसलों लाही तथा आलू से प्राप्त हो रही है। प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न की उपलब्ध मात्रा से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों में से ऊर्जा पर विचार करें तो ग्रामीण जनसमुदाय को प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 211.83 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है जो कि आवश्यक मानक स्तर से अत्यन्त कम है । इस कुल ऊर्जा का 65.14 प्रतिशत हिस्सा अन्न से, 17.60 प्रतिशत दलहनी फसलों से तथा 16.19 प्रतिशत ऊर्जा तिलहन से तथा शेष 1.07 प्रतिशत ऊर्जा आलू से प्राप्त होती है । ऊर्जा की उपलब्धता के दृष्टिकोण से देखे तो तिलहन तथा दालों से प्रति व्यक्ति ऊर्जा प्राप्ति कर स्तर तो ठीक है परन्तु अन्न का भाग यदि देखे तो आवश्यक मानक स्तर से कम होने के कारण उसकी हिस्सेदारी अन्य गावों की तुलना में कम है ।

जबकि लगभग इतना ही क्षेत्रफल अगली फ़सल के लिए परती रहता है या वर्ष भर अप्रयुक्त रहता है । इसका मूल कारण यह है कि अरहर जो फसल खरीफ मौसम में बोई जाती है तथा रबी फसलों के साथ कटती है, इस फसल में प्रयोग की गई भूमि वर्ष भर के लिए इसी फसल में बंधी रहती है । साथ ही बाजरा की फसल कटने के बाद सिचाई के साधनों के अभाव के कारण बाजरा कटने के बाद उसमें कोई अन्य फसल नहीं उगाई जाती है जिससे रबी मौसम में भी क्षेत्रफल 0.107 हेक्टेयर विभिन्न फसलों के लिए प्रयुक्त हो पाता है ।

व्यावसायिक संरचना की दृष्टि से इस गाँव की लगभग 92 प्रतिशत जनसंख्या प्राथमिक रूप से कृषि पर ही आश्रित है और लगभग 6 प्रतिशत जनसंख्या कृषि के साथ साथ अन्य कार्यो से भी आंशिक आय प्राप्त कर लेती है तथा 2 प्रतिशत से भी कम जनसंख्या गाँव के बाहर निवास करती है परन्तु या तो आँशिक रूप से अथवा पूर्ण रूप से कृषि उत्पादन पर ही निर्भर है । अतः लगभग सम्पूर्ण जनसंख्या की उदरपूर्ति इस गाँव के कृषि उत्पादन पर निर्भर है ।

सारिणी 6.34 विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता (किलोग्राम/हेक्टेयर) ।

फसल	उत्पादन	जनपदीय उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत में)
1.धान	–	1.970	–
2.ज्वार	–	1.025	–
3.बाजरा	1,549	1,523	+ 1.71
4.मक्का	1,443	1,377	+ 4.79
5.गेहूँ	2.399	2,506	–4.27
6.जौ	1,973	1,906	+ 3.51
7.अरहर	1,228	1,326	–7.39
8.चना	1.175	1,283	–8.42
9.मटर	1.652	1,650	+ 0.12
10.उर्द/मूँग	579	473	+. 22.41
11. लाही	1.240	1,247	–0.56
12.आलू	18,579	18,688	– 0.58
13.गन्ना	–	33,699	–

सारिणी 6.35 विभिन्न फसलों से प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थों की उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम–वरचौली)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लोह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
2. ज्वार	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
3. बाजरा	199.61	720.59	23.15	9.980	4.591	2.395	134.74	83.84	590.84	9.980	263.48	0.659	0.499	4.591	–
4. मक्का	5.87	20.43	0.65	0.211	0.088	0.158	3.89	0.59	20.43	0.117	5.28	0.042	0.006	0.106	–
5. गेहूँ	96.18	332.78	11.35	1.443	1.443	1.154	68.48	39.43	294.31	4.713	61.55	0.433	0.163	5.290	
6. जौ	90.99	305.73	10.46	1.183	1.092	3.548	63.33	23.66	195.63	2.730	9.10	0.428	0.182	4.913	
7. अरहर	37.29	124.92	8.32	0.634	1.305	0.559	21.48	27.22	113.36	2.163	49.22	0.168	0.071	1.081	
8. चना	64.46	239.79	13.41	3.610	1.740	0.773	39.26	83.15	213.36	5.866	83.15	0.245	0.116	1.676	–
9. मटर	1.74	5.48	0.34	0.019	0.038	0.078	0.98	1.31	5.18	0.089	0.68	0.008	0.003	0.059	–
10. उर्द/मूँग	0.74	2.58	0.16	0.004	0.024	0.039	0.42	2.12	2.30	0.062	0.52	0.003	0.001	0.011	0.0074
11. लाही/तेल	38.10	342.90	–	38.100	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
12. आलू	23.33	22.63	0.37	0.023	0.140	0.093	5.27	2.33	9.33	0.163	5.60	0.023	0.002	0.280	3.9661
13. गन्ना/गुड़	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
योग	558.31	2117.83	68.23	55.208	10.461	8.797	337.85	263.65	1444.74	25.883	478.58	2.009	1.043	18.007	3.9735

इसका मुख्य का चावल तथा ज्वार फसलों की अनुपस्थिति तथा गेहूँ का क्षेत्रफल अपेक्षित स्तर का न होने के कारण खाद्यान्नों की मात्रा में गेहूँ की मात्रा का कम होना है । यदि ज्वार तथा गेहूँ के उतपादन क्षेत्र में बृद्धि हो सके तो अन्न की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में बृद्धि की जा सकती है जिसकी कि इस गाँव के लिए नितान्त आवश्यक है ।

8. ग्राम – कुसमरा

स्थिति :विकास खण्ड अछल्दा का ग्राम कुसमरा अछल्दा –विधूना डामरीकृत सड़क के मध्य रुरुगंज कस्बे के उत्तर पश्चिम में सड़क से लगभग 2 किलोमीटर दूर तथा विकास खण्ड मुख्यालय से लगभग 14 किलोमीटर दूर स्थित है । यह ग्राम एक कृषि प्रधान ग्राम है । भौगोलिक दृष्टि से यह गाँव $26^{0}.62'$ उत्तरी अक्षांश तथा $79^{0}.18'$ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है । इस ग्राम की दैनिक सामान्य आवश्यकता की वस्तुएं रुरुगंज बाजार आपूर्ति करता है जबकि इससे बड़े दो कस्बे क्रमशः अछल्दा इस गाँव के दक्षिण में तथा विधूना उत्तर में लगभग 13 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है । गाँव की कृषि भूमि की सिंचाई के लिए इस गाँव के उत्तर में नहर तथा निजी नलकूप/पम्पिंग सेट्स यह सुविधा उपलब्ध कराते हैं । इस गाँव में भी लगभग सभी परम्परागत फसलें उगाई जाती हैं ।

शस्य भूमि उपयोग :

सिंचाई की सामान्य सुविधाओं से युक्त यह ग्राम लगभग सभी परम्परागत फसलें उत्पन्न करता है । इस ग्राम के शस्य उपयोग को सारिणी 6.36 में दर्शाया गया है ।

सारिणी 6.36 कुसमरा ग्राम का शस्य भूमि उपयोग ।

मद	क्षेत्रफल(हेक्टेयर)	प्रतिशत
1. कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	545	–
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	372	68.26
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र ।	194	52.15
4. सकल बोया गया क्षेत्र	566	152.15
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	328	88.17
6. सकल सिंचित क्षेत्र	468	82.69
7. रबी का क्षेत्र	343	60.60
8. खरीफ का क्षेत्र	215	37.99
9. जायद का क्षेत्र	08	1.41

सारिणी 6.36 कुसमरा ग्राम के शस्य भूमि उपयोग का चित्रण कर रही है जिसमें इस ग्राम की कुल प्रतिवेदित भूमि 545 हेक्टेयर में से 68.26 प्रतिशत भूमि कृषि उपयोग में लाई जा रही है । शुद्ध बोये गये क्षेत्र 372 हेक्टेयर कृषि भूमि पर 52.15 प्रतिशत क्षेत्र पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती है जिस कारण इस ग्राम का सकल बोया गया क्षेत्र 566 हेक्टेयर हो जाता है । इस सकल बोये गये क्षेत्रफल में 60.60 प्रतिशत भूमि पर रबी मौसम की विभिन्न फसलें उगाई जाती है, जबकि 37.99 प्रतिशत क्षेत्रफल पर खरीफ की फसलें उगाई जाती हैं जायद मौसम की फसलों ने केवल 1.41 प्रतिशत क्षेत्र घेर रखा है । इस गाँव में सिंचाई की सुविधाएं 88.17 प्रतिशत क्षेत्र को प्राप्त है जिस कारण रबी की फसलें शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल के 92 प्रतिशत से भी अधिक क्षेत्र में उगाई जाती है । जायद की फसलों में खरबूजा, तरबूज तथा जायद की शब्जियां अधिक महत्वपूर्ण हैं । कुछ कृषकों द्वारा उर्द/मूँग भी सीमित क्षेत्र पर उगाया जाता है ।

सारिणी 6.37 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण ।

फसल	क्षेत्रफल	प्रतिशत	प्रतिशत
(अ) खरीफ	215	37.99	खरीफ का
1. धान	103	18.20	47.91
2. ज्वार	02	0.35	0.93
3. बाजरा	42	7.42	19.54
4. मक्का	48	8.48	22.32
5. अरहर	16	2.83	7.44
6. अन्य	4	0.71	1.86
(ब) रबी	343	60.60	रबी का
1. गेहूँ	203	35.87	59.18
2. जौ	26	4.59	7.58
3. चना	34	6.01	9.91
4. मटर	19	3.36	5.54
5. लाही	42	7.42	12.24
6. आलू	8	1.41	2.33
7. गन्ना	4	0.71	1.67
8. अन्य	7	1.23	2.04
(स) जायद	08	1.41	-
योग	566	-	-

सारिणी 6.37 में ग्राम कुसमरा मं विभिन्न फसलों के अन्तर्गत बोये गये क्षेत्रफल के वितरण को दर्शाया गया है जिसमें खरीफ फसलों के अन्तर्गत 215 हेक्टेयर, रबी फसलों के अन्तर्गत 343 हेक्टेयर तथा जायद फसलों के अन्तर्गत 8 हेक्टेयर क्षेत्रफल का उपयोग किया जा रहा है । विभिन्न फसलों में इस गाँव के लिए गेहूँ की फसल सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जो सकल बोये गये क्षेत्र के 35.87 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जा रही है, इसके बाद धान की फसल का स्थान आता है और यह फसल 18.20 प्रतिशत क्षेत्रफल पर अधिकृत है । लाही तथा बाजरा समान महत्व की फसलें हैं जिसमें बाजरा खरीफ की फसल तथा लाही रबी की फसल है । परन्तु इन दोनों फसलों से मक्का की फसल अधिक महत्वपूर्ण है जो 8.48 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है । यदि खरीफ फसल के दृष्टिकोण से विचार करें तो धान इस मौसम की सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल और यह खरीफ फसल के लगभग आधे क्षेत्रफल पर आच्छादित है । मक्का तथा बाजरा द्वितीय एवं तृतीय स्थान पर है और ये क्रमशः 22.32 प्रतिशत तथा 19.54 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उत्पन्न की जा रही है । अरहर की 7.44 प्रतिशत हिस्सेदारी है । इसी प्रकार रबी की फसलों में गेहूँ के बाद लाही का स्थान आता है जो 12.24 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जा रही है नकदी फसलों का नितान्त अभाव है । जायद की फसलें 8 हेक्टेययर क्षेत्रफल पर उगाई जाती है जिनमें खरबूजा, तरबूज तथा शब्जियाँ प्रमुख हैं । कुछ कृषक उर्द/मूँग भी उगाते हैं । उर्द/मूँग खरीफ में भी सीमित क्षेत्र पर उगाई जाती है ।

<u>भूमि पर जनसंख्या का भार</u> :

432 परिवारों वाले कुसमरा गाँव में कुल 3050 व्यक्ति निवास करते हैं । यह ग्राम मूलतः कृषि प्रधान है और लगभग सम्पूर्ण जनसंख्या आँशिक अथवा पूर्णतया कृषि उत्पादन पर आश्रित है । इस गाँव की भूमि पर पड़ने वाले जनसंख्या के दबाव को सारिणी 6.38 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.38 कुसमरा ग्राम की विभिन्न प्रकार की कृषि भूमि पर जनसंख्या के पड़ने वाले भार का विवरण प्रस्तुत कर रही है । इस गाँव में प्रति व्यक्ति 0.1787 हेक्टेयर कुल प्रतिवेदित क्षत्र है जिसमें 0.1220 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर कृषि फसलें उगाई जाती हैं । प्रति व्यक्ति सिंचित क्षेत्र 0.10 हेक्टेयर होने के कारण सकल कृषि क्षेत्र का हिस्सा बढ़कर 0.1856 हेक्टेयर हो जाता है क्योंकि 0.0636 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती हैं । प्रति व्यक्ति शुद्ध कृषि क्षेत्र 0.1220 हेक्टेयर होने के बावजूद भी खरीफ मौसम में मात्र 0.0705 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर फसलें उगाई जाती है जो शुद्ध फसल क्षेत्र के आधे से कुछ अधिक है जबकि खरीफ मौसम में ओर अधिक भूमि को उपयोग में लाया जा सकता है । रबी मौसम में इस

सारिणी 6.38 भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
	1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्रति व्यक्ति	0.1787	0.1220	0.0636	0.1856	0.1075	0.1534	0.1125	0.0705	0.0026

गॉव की भूमि का अधिक कुशलता से उपयोग किया जा रहा है जहाँ प्रति व्यक्ति 0.1125 हेक्टेयर क्षेत्रफल का उपयोग किया जा रहा है ।

विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता :

कुसमरा ग्राम में तीनों मौसमों में उत्पन्न होने वाली फसलों की औसत उत्पादकता का विवरण सारिणी 6.39 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.39 विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता (किलोग्राम/हेक्टेयर) ।

फसल	उत्पादन	जनपदीय उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत)
1. धान	2,009	1,970	+ 1.98
2. ज्वार	980	1,025	−4.39
3. बाजरा	1,474	1,523	−3.22
4. मक्का	1,272	1,377	−7.63
5. गेहूँ	2,543	2,506	+ 1.48
6. जौ	1,888	1,906	− 0.94
7. अरहर	1.362	1,326	+ 2.71
8. चना	1,195	1,283	− 6.86
9. मटर	1,672	1,650	+ 1.33
10. उर्द/मूँग	578	473	+. 22.20
11. लाही	1,412	1,247	+. 13.23
12. आलू	17,885	18,688	− 4.30
13. गन्ना	34.051	33.699	+1.04

सारिणी 6.39 ग्राम कुसमरा की विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता का जनपदीय औसत उत्पादन से तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत करती है जिसमें इस ग्राम की विभिन्न फसलों में औसत उत्पादकता की दृष्टि ह्रास अधिक दिखाई पड़ रहा है, क्योंकि अन्न उत्पादन करने वाली छः फसलों में से चार फसलों क्रमशः ज्वार में 4.39 प्रतिशत, बाजरा में 3.22 प्रतिशत, मक्का में 7.63 प्रतिशत तथा जौ में 0.94 प्रतिशत उत्पादन में ह्रास दिखाई पड़ रहा है जबकि जनपदीय स्तर से बढ़त दर्शाने वाली फसलों में गेहूँ 1.489 प्रतिशत तथा धान 1.98 प्रतिशत है । बढ़त प्रदर्शित करने वाली फसलों की बढ़त 2 प्रतिशत से भी कम है जबकि ह्रासमान फसलों में लगभग 8 प्रतिशत तक ह्रास दिखाई पड़ रहा है । दलहनी फसलों में केवल चना की फसल जनपदीय स्तर से 6.86 प्रतिशत का ह्रास प्रदर्शित कर रही है जबकि अरहर 2.71 प्रतिशत, मटर 1.33 प्रतिशत तथा उर्द/मूँग सर्वाधिक 22.20 प्रतिशत बृद्धि का संकेत कर रही है, इस गाँव के लिए दलहनी फसलें अच्छा प्रतिफल दे रही है । वाणिज्यक फसलों में लाही तथा गन्ना क्रमशः 13.23 प्रतिशत तथा 1.04 प्रतिशत की बृद्धि दे रही है जबकि आलू की फसल 4.30 प्रतिशत ह्रास का संकेत कर रही है । लाही के औसत उत्पादन में जनपदीय स्तर से 13.23 प्रतिशत अधिक उत्पादन कृषकों के लिए एक अच्छा संकेत है क्योंकि यह फसल न केवल चिकनाई की आवश्यकता को पूरा करती है बल्कि नकदी भी प्रदान करने वाली एक प्रमुख फसल है ।

गाँव की विभिन्न फसलों के कुल उत्पादन में ग्रामीण जनसंख्या का भाग देकर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्धता की गणना की गई है जिसके आधार पर ग्राम का एक "आहार सन्तुलन पत्रक" तेयार किया गया है जिसमें प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता तथा उससे होने वाले पोषक तत्वों की भी गणना की गई है जिसे सारिणी 6.38 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारिणी 6.40 कुसमरा की ग्रामीण जनसंख्या की प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता तथा उनससे प्राप्त पोषक तत्वों का विवरण दे रही है । सारिणी से ज्ञात होता है कि विभिन्न फसलों से ग्रामीण जनसंख्या को प्रतिदिन 770 ग्राम विभिन्न प्रकार के खाद्यान्न उपलब्ध है इसमें से 590.18 ग्राम अन्न, 51.43 ग्राम दालें तथा 128.39 ग्राम लाही, आलू और गन्ने की फसलों की भागेदारी है । दूसरे शब्दों में इस ग्राम की ग्रामीण जनसंख्या को कुल खाद्यान्नों में से 76.65 प्रतिशत अन्न , 6.68 प्रतिशत दलहन तथा 16.67 प्रतिशत अन्य फसलों की भागेदारी है । विभिन्न मौसम की फसलों में खरीफ का योगदान 21.60 प्रतिशत तथा लगभग 78

सारिणी 6.40 में विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम–कुसमरा)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	100.37	346.28	7.53	1.004	0.903	0.602	76.98	10.04	190.70	5.212	2.007	0.211	0.160	3.914	–
2. ज्वार	1.43	4.99	0.15	0.027	0.023	0.023	1.04	0.36	3.17	0.083	0.672	0.005	0.002	0.044	–
3. बाजरा	4.50	16.24	0.52	0.225	0.103	0.054	3.04	1.89	13.32	0.225	5.940	0.015	0.011	0.103	–
4. मक्का	44.42	154.58	4.93	1.599	0.666	1.199	29.41	4.44	154.58	0.888	39.978	0.320	0.044	0.799	–
5. गेहूँ	396.47	1371.78	46.78	5.947	5.947	4.757	282.29	162.55	1213.20	19.427	253.741	1.784	0.674	21.806	–
6. जौ	42.99	144.44	4.94	0.559	0.516	1.677	29.92	11.18	92.43	1.290	4.299	0.202	0.086	2.321	–
7. अरहर	11.45	38.36	2.55	0.195	0.401	0.172	6.59	8.36	34.81	0.664	15.114	0.051	0.022	0.332	
8. चना	21.35	79.42	4.44	1.196	0.576	0.256	13.00	27.54	70.67	1.943	27.541	0.081	0.038	0.555	–
9. मटर	17.98	56.64	3.54	0.198	0.396	0.809	10.16	13.48	53.58	0.917	7.012	0.084	0.034	0.611	–
10. उर्द / मूँग	0.65	2.26	0.14	0.003	0.021	0.034	0.37	1.86	2.02	0.054	0.461	0.003	0.001	0.010	0.0065
11. लाही/तेल	18.79	169.11	–	18.79	–	–		–	–	–	–	–	–	–	–
12. आलू	96.39	93.50	1.54	0.096	0.578	0.385	21.78	9.64	38.56	0.675	23.133	0.096	0.009	1.157	16.3863
13. गन्ना/गुड़	13.21	50.59	0.05	0.013	0.079	–	12.55	10.57	5.28	1.506	22.193	0.026	0.005	0.066	–
योग	770.00	2528.19	77.11	29.851	10.209	9.968	487.13	261.91	1872.32	30.884	402.091	2.878	1.086	31.718	16.3928

प्रतिशत रबी फसलों का योगदान है ।यदि दलहनी फसलों के योगदान को देखें तो दालों की हिस्सेदारी 6.68 प्रतिशत है । इन खाद्य पदार्थो से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों में ऊर्जा पर विचार करें तो ज्ञात होता है कि विभिन्न खाद्य पदार्थो से ग्रामीण जनसमुदाय को प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 2528.19 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है जो मानक स्तर के लगभग बराबर है । इसमें अन्न के प्राप्त होने वाली ऊर्जा की भागेदारी 80 प्रतिशत से अधिक है और दालों की भागेदारी 9 प्रतिशत से भी कम है , स्पष्ट है कि ग्रामीण जनसमुदाय के भोजन में दालों की मात्रा अत्यन्त निम्न है, और इसी कारण प्रोटीन की कुल उपलब्ध मात्रा 77.11 ग्राम में 60 प्रतिशत से अधिक भागेदारी गेहूँ की है, अन्य फसलों की प्रोटीन में भागेदारी 8 प्रतिशत से भी कम है ।

6. ग्राम –असजना

स्थिति: विधूना विकास खण्ड का ग्राम असजना विकास खण्ड मुख्यालय से दक्षिण पूर्व में लगभग 7 किलोमीटर दूर स्थिति है । इस ग्राम के दक्षिण में लगभग 2 किलोमीटर दूर रिन्द नदी बहती है इस लिए ग्राम की भूमि का ढाल दक्षिण की ओर है, परन्तु अधिकाँश भूमि समतल होने के कारण कृषि फसलों के लिए उत्पादन उपयुक्त है । भौगोलिक दृष्टि से यह ग्राम $26^0.78'$ उत्तरी अक्षाँश तथं $79^0 22'$ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है । ग्राम के उत्तर में भूमि का एक भाग ऊसर एवं छोटी छोटी झाड़ियों से युक्त बंजर है जो वर्ष भर परती पड़ा रहता है । सिंचाई के साधनों में नहर, एक राजकीय विद्युत चालित नलकूप तथा निजी नलकूप/पंम्पिग सेट्स प्रमुख हैं जो यहाँ की विभिन्न फसलों को कृत्रिम सिंचाई उपलब्ध कराते हैं । इस ग्राम के लिए प्रमुख एवं निकटतम बाजार विधूना कस्बा ही है जो दैनिक सामान्य आवश्यकता तथा कृषि से सम्बन्धित सुविधाएं उपलब्ध कराता है ।

शस्य भूमि उपयोग :

असजना ग्राम में वर्ष भर खरीफ , रबी तथा जायद की तीन मौसमों में विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं, परन्तु इनमें रबी तथा खरीफ ही प्रमुख है, जायद मौसम में अत्यन्त कम भूमि पर फसलें उगाई जाती है । इस ग्राम के शस्य भूमि उपयोग को सारिणी 6.41 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.41 असजना ग्राम का शस्य भूमि उपयोग ।

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत
1.कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	415	–
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	295	71.08
3.एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र ।	172	58.31
4.सकल बोया गया क्षेत्र	467	158.31
5.शुद्ध सिंचित क्षेत्र	282	95.59
6.सकल सिंचित क्षेत्र	347	74.30
7.रबी का क्षेत्र	264	56.53
8. खरीफ का क्षेत्र	197	42.18
9.जायद का क्षेत्र	6	1.29

असजना ग्राम की कुल प्रतिवेदित भूमि 415 हेक्टयर में से 71.08 प्रतिशत क्षेत्र पर विभिन्न फसलें उगाई जाती है । इस ग्राम की कुल शुद्ध भूमि में से 95.59 प्रतिशत क्षेत्रफल की सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध हैं जिससे 58.31 प्रतिशत कृषि क्षेत्रफल पर एक से अधिक बार फसलें उगाई जाती हैं । सकल कृषि क्षेत्र 467 हेक्टेयर क्षेत्रफल में से 56.53 प्रतिशत भूमि पर रबी मौसम की फसलें, 42.18 प्रतिशत भूमि पर खरीफ फसलें तथा जायद की फसलें मात्र 1.29 प्रतिशत क्षेत्र पर बोई जाती है । शुद्ध बोये गयेय क्षेत्रफल 295 हेक्टेयर में से लगभग 67 प्रतिशत भूमि पर खरीफ फसलें तथा इस कृषि क्षेत्र में 95.59 प्रतिशत भूमि पर रबी की फसलें उगाई जाती है, जबकि जायद की फसलें 2.71 प्रतिशत क्षेत्र में उगाई जाती है । जायद की फसलों में यहॉ पर यउर्द/मूँग तथा गर्मियों की शब्जियों का विशेष महत्व है । कुछ कृषक खरबूजा तथा तरबूज भी घरेलू तथा क्षेत्रीय उपयोग के लिए उगाते हैं परन्तु क्षेत्रफल की दृष्टि से इन फसलों का क्षेत्र अत्यन्त सीमित है ।

सारिणी 6.42 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण ।

फसल	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत	प्रतिशत
(अ) खरीफ	19.7	42.18	खरीफ का
1. धान	109	23.34	55.33
2. ज्वार	09	1.93	4.57
3. बाजरा	17	3.64	8.63
4. मक्का	43	9.21	21.83
5. अरहर	12	2.57	6.09
6. अन्य	07	1.50	3.55
(ब) रबी	264	56.53	रबी का
1. गेहूँ	190	40.68	71.97
2. जौ	06	1.29	2.27
3. चना	20	4.28	7.58
4. मटर	03	0.64	1.14
5. लाही 18	3.85	3.85	6.82
6. आलू	10	2.14	3.79
7. गन्ना	8	1.71	3.03
8. अन्य	9	1.93	3.41
(स) जायद	06	1.29	–
योग	467	100.00	–

सारिणी क्रमांक 6.43 भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
	1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्रति व्यक्ति	0.2241	0.1593	0.0929	0.2522	0.1522	0.1874	0.1425	0.1064	0.0032

ग्राम असजना में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल वितरण को सारिणी क्रमांक 6.42 में दर्शाया गया है । सारिणी से ज्ञात होता है कि इस ग्राम में कुल जोती गई भूमि के 42.18 प्रतिशत क्षेत्रफल पर खरीफ की फसलें उगाई जाती हैं जिसमें धान 23.34 प्रतिशत भागेदारी करके सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है । मक्का 9.21 प्रतिशत क्षेत्र अधिकृत करके द्वितीय महत्वपूर्ण फसल है ये दोनों फसलें खरीफ मौसम के 77 प्रतिशत से भी अधिक हिस्से पर अपना अधिपत्य स्थापित किए हुए हैं जबकि बाजरा, ज्वार तथा अरहर क्रमशः सकल बोये गये क्षेत्र का 3.64 प्रतिशत, 1.93 प्रतिशत तथा 2.57 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है । ये तीनों फसलें मिलकर और मक्का के बराबर क्षेत्रफल पर नहीं उगाई जा रही है । यदि केवल खरीफ मौसम पर विचार करें तो बाजरा 8.63 प्रतिशत, ज्वार 4.57 प्रतिशत तथा अरहर 6.09 प्रतिशत क्षेत्रफल की हिस्सेदारी कर रही है । रबी का क्षेत्रफल सकल बोये गये क्षेत्र का 56.53 प्रतिशत है और जिसमें गेहूँ लगाभग 72 प्रतिशत क्षेत्र पर एकाधिकार बनाए हुए है । चना 7.58 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाया जा रहा हैं जबकि आलू तथा गन्ना लगभग एक समान महत्व प्रदर्शित कर रहे है मटर और जौ की हिस्सेदारी केवल अपनी उपस्थिति तक ही सीमित है जिसका अर्थ है कि इस गाँव में धान की फसल कटने के बाद उस क्षेत्र के अधिकाँश हिस्से पर गेहूँ की फसल का प्रतिस्थापन किया जाता है । जायद की फसलों में उर्द/मूँग तथा गर्मियों की शब्जियों का स्थान महत्वपूर्ण है ।

भूमि पर जनसंख्या का भार :

306 परिवारों वाले ग्राम असजना अर्थ व्यवस्था मूलतः कृषि प्रधान है और 1852 लोगों के भरण पोषण का दायित्व निर्वाह कर रही है । इस गाँव की जनसंख्या का भूमि पर पड़ने वाले भार को सारिणी 6.43 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 6.43 देखने से ज्ञात होता है कि असजना ग्राम में प्रति व्यक्ति 0.2241 हेक्टेयर कुल भूमि उपलब्ध है जिस पर विभिन्न कृषि फसलों के लिए 0.1593 हेक्टेयर भूमि प्रयोग की जा रही है, दूसरे शब्दों में 0.0648 हेक्टेयर की दर से भूमि या तो परती है या कृषि कार्यो के लिए अनुपयुक्त है । खरीफ की फसल में शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 0.1064 हेक्टेयर विभिन्न फसलों को उगाने में प्रयोग किया जा रहा है , इस मौसम में कृषि के लिए उपलब्ध भूमि का एक बड़ा हिस्सा उपयोग नहीं हो पा रहा है, वह या तो वार्षिक फसलों जैसे गन्ना, तथा अरहर आदि में फंस जाता है या फिर लाही जैसी फसलों के लिए परती छोड़ दिया जाता है, जिस कारण एक से अधिक फसलों का क्षेत्रफल मात्र 0.0929 हेक्टेयर ही प्रयुक्त

हो पाता है जबकि सिंचाई की दृष्टि से प्रति व्यक्ति 0.1522 हेक्टेयर क्षेत्रफल की यह सुविधा प्राप्त है जो कि शुद्ध बोये गये क्षेत्र का 95 प्रतिशत से भी अधिक हिस्सा बैठता है परन्तु फिर भी खरीफ फसलों के लिए 0.1064 हेक्टेयर भूमि को प्रयोग में लाना कहीं न कहीं भूमि के कुप्रबन्ध की ओर संकेत करता है यदि भूमि का प्रबन्ध उचित तरीके से किया जाय तो खरीफ फसलों के अन्तर्गत और अधिक भूमि प्रयोग में लाई जा सकती है । जायद फसलों का क्षेत्रफल 0.0032 हेक्टेयर अपेक्षित स्तर से अत्यन्त कम है, इस मौसम में उर्द/मूँग तथा शब्जियों का प्रभुत्व है, खरबूजा तरबूज आदि कुछ कृषकों द्वारा घरेलू अथवा क्षेत्रीय उपयोग के लिए अत्यन्त छोटे पैमाने पर किए जाते हैं ।

विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता :

असजना ग्राम में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता तथा जनपदीय स्तर से तुलना सारिणी 6.44 में दर्शाई जा रही है ।

सारिणी 6.44 विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता (किलोग्राम /हेक्टेयर) ।

फसल	उत्पादन	जनपदीय उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत)
1.धान	1,949	1.970	- 1.07
2.ज्वार	1,017	1,025	- 0.78
3.बाजरा	1.534	1,523	+ 0.72
4.मक्का	1,393	1,377	+ 1.16
5.गेहूँ	2581	2.506	+ 2.99
6.जौ	1,839	1,906	- 3.51
7.अरहर	1.458	1,326	+ 9.95
8.चना	1,296	1,283	+ 1.01
9.मटर	1,731	1.650	+4.91
10.उर्द/मूंग	620	473	+. 31.08
11.लाही	1.190	1,247	- 4.57
12.आलू	19,085	18,688	+ 2.11
13.गन्ना	31,681	33699	- 5.99

सारिणी 6.44-ग्राम असजना की विभिन्न फसलों के औसत उत्पादन का चित्र प्रस्तुत कर रही है जिसमें खाद्यान्न फसलों में से बाजरा , मक्का तथा गेहूँ की उत्पादकता जनपदीय स्तर से अधिक है और ये फसलें क्रमशः 0.72 प्रतिशत, 1.16 प्रतिशत तथा 2.99 प्रतिशत की बृद्धि दर्शा रही है जबकि ह्रासमान खाद्यान्न फसलों में धान, ज्वार तथा जौ है जो क्रमशः 1.07 प्रतिशत , 0.78 प्रतिशत तथा 3.51 प्रतिशत की कमी दर्शा रही है । दलहनी फसलों में सभी फसलें जनपदीय औसत से अच्छा प्रदर्शना कर रही है इनमें से उर्द /मूँग 31.08 प्रतिशत अधिक उत्पादन करके ग्राम में अपनी श्रेष्ठता प्रदर्शित कर रही है जबकि अरहर 9.95 प्रतिशत की बृद्धि दर्ज करके अच्छा प्रतिफल दे रही है । मटर तथा चना क्रमशः 4.91 प्रतिशत तथा 1.01 प्रतिशत बृद्धि दर्ज करा रही है । अन्य फसलों में आलू ही जनपदीय स्तर से अधिक उत्पादन दे रही है जबकि लाही 4.57 प्रतिशत तथा गन्ना 5.99 प्रतिशत कम उत्पादन कर रही है ।

मूलतःकृषि प्रधान ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कुल उत्पादन में ग्रामीण जनसंख्याय का भाग देकर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्धता को प्राप्त किया गया है प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धि तथा उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की जानकारी के लिए गाँव का एक "आहार सन्तुलन पत्रक" तैयार किया गया है । इस पत्रक के आधार पर यह जानने का प्रयास किया गया है कि विभिन्न फसलों से प्राप्त होने वाले कुल उत्पादन से ग्रामीण जनसंख्या को आवश्यक मानक स्तर के अनुसार विभिन्न पोषक तत्वों की प्राप्ति हो पा रही है अथवा नहीं, यहाँ पर कुल उत्पादन तथा कुल जनसंख्या का सम्बन्ध स्थापित करके प्रति व्यक्ति उपलब्ध खाद्यान्न की मात्रा की गणना की गई है जिसे सारिणी 6.45 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.45 असजना ग्राम के आहार असन्तुलन पत्रक" का चित्र प्रस्तुत कर रही है जिससे ज्ञात होता है कि इस ग्राम में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 1225.29 ग्राम विभिन्न कृषि उत्पादन से प्राप्त खाद्यान्न पदार्थ उपलब्ध है जो मानक स्तर से अधिक है इन खाद्यान्न पदार्थो से 3795.39 कैलोरी ऊर्जा, 129.26 ग्राम प्रोटीन तथा 32.546 ग्राम बसा प्राप्त होता है जिसमें ऊर्जा तथा प्रोटीन तो मानक स्तर से अधिक है परन्तु बसा मानक स्तर के आधे से कम है । हमारे शरीर को विभिन्न खाद्य पदार्थो से विभिन्न पोषक तत्वों को ग्रहण करना पड़ता है जिससे शरीर स्वस्थ्य तथा बलिष्ठ बना रहे । असजना ग्राम के सन्तुलन पत्रक के अनुसार प्रति व्यक्ति 1225.29 ग्राम खाद्य पदार्थों में से 917.18 ग्राम अन्न, 44.69 ग्राम दलहन तथा 263.42 ग्राम आलू , चिकनाई तथा गुड़ की भागेदारी है, स्पष्ट है कि कुल आहार में लगभग 75 प्रतिशत हिस्सा अन्न का , 3.65 प्रतिशत हिस्सा दालों का है इस दृष्टि से देखें तो दालों का उत्पादन स्तर अत्यन्त न्यून है हमारे ग्रामीण समुदाय को प्रोटीन की आपूर्ति में दालों का एक बड़ा योगदान रहता है । यदि विभिन्न खाद्य पदार्थो से प्राप्त होने वाली ऊर्जा पर विचार करें तो 3795.39 कैलोरी प्रति व्यक्ति ऊर्जा की उपलब्धता मानक स्तर से कही अधिक है परन्तु इस ऊर्जा में 3176.94 कैलोरी अर्थात 83.70 प्रतिशत केवल खाद्यान्नों से प्राप्त हो रही है जबकि

सारिणी क्रमांक 6.45 विभिन्न फसलों से प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम–असजना)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	169.71	585.50	12.73	1.697	1.527	1.018	130.17	16.97	322.45	5.431	3.394	0.356	0.271	6.168	–
2. ज्वार	10.97	38.28	1.14	0.208	0.175	0.175	7.96	2.74	24.35	0.636	5.156	0.041	0.014	0.340	–
3. बाजरा	31.25	112.88	3.63	1.563	0.719	0.375	21.11	13.13	92.56	1.563	41.276	0.103	0.078	0.719	
4. मक्का	71.77	249.76	7.97	2.584	1.076	1.938	47.51	7.18	249.76	1.435	64.593	0.517	0.072	1.292	
5. गेहूँ	620.26	2146.10	73.19	9.304	9.304	7.443	441.62	254.31	1897.99	30.393	396.966	2.791	1.054	34.114	–
6. जौ	13.22	44.42	1.52	0.172	0.158	0.516	9.20	3.44	28.42	0.397	1.322	0.062	0.026	0.714	
7. अरहर	15.11	50.62	3.37	0.257	0.529	0.227	8.70	11.03	45.93	0.876	19.945	0.068	0.029	0.438	
8. चना	22.43	83.44	4.66	1.256	0.605	0.269	13.66	28.93	74.24	2.041	28.935	0.085	0.040	0.583	
9. मटर	4.84	15.25	0.95	0.053	0.106	0.218	2.73	3.63	14.42	0.247	1.887	0.023	0.009	0.164	
10. उर्द/मूँग	2.31	8.04	0.51	0.011	0.074	0.122	1.32	6.63	7.18	0.194	1.640	0.010	0.004	0.035	0.0231
11. लाही/तेल	11.18	100.62	–	11.180	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
12. आलू	211.75	205.40	3.39	0.212	1.270	0.847	47.85	21.17	84.70	1.482	50.820	0.212	0.021	2.541	35.9975
13. गन्ना/गुड़	40.49	155.08	16.20	4.049	24.294	–	38.46	32.40	16.18	4.616	68.021	8.098	1.619	0.202	
योग	1225.29	3795.39	129.26	32.546	39.837	13.148	770.29	401.56	2858.18	49.311	683.955	12.366	3.237	47.760	36.0206

दालों से मात्र 157.35 कैलोरी अर्थात 4.15 प्रतिशत प्राप्त होती है । यदि फसलवार पोषक तत्वों पर विचार करें तो खरीफ की फसलों से 27.32 प्रतिशत लोगों को ऊर्जा प्राप्त होती है और रबी फसलों की भागेदारी 68.38 प्रतिशत है । दोनों मौसमों की गेहूँ तथा धान फसलों को मिला दिया जाये तो ग्रामीण समुदाय को प्रति व्यक्ति प्रतिदिन प्राप्त होने वाली कुल ऊर्जा का लगभग 72 प्रतिशत हिस्सा ये दोनों फसलें आपूर्ति कर रही है । अन्य फसलें केवल 28 प्रतिशत हिस्से की आपूर्ति कर रही है । अन्य गाँवों की भाँति इस गाँव में भी दलहन की भागेदारी अत्यन्त निम्न है इसलिए भोजन के दृष्टिकोण से दालों के उत्पादन को बढाया जाना चाहिए ।

10. ग्राम– फैजुल्लापुर

स्थिति : विकास खण्ड एरवाकटरा का ग्राम फैजुल्लापुर विकास खण्ड मुख्यालय से 8 किलोमीटर दक्षिण पूर्व में तथा किशनी–विधूना पक्के मार्ग से लगभग 4 किलोमीटर दक्षिण में स्थित है । भौगोलिक दृष्टि से यह गाँव $26^0.81'$ उत्तरी अक्षाँश तथा $79^0.11'$ पूर्वी देशान्तर पर अपनी सीमा निर्धारित करता है । जहाँ की भूमि निचली तथा समतल है जिससे खरीफ में धान तथा रबी में गेहूँ प्रमुख हैं । सिंचाई के लिए यहाँ पर नहर तथा विद्युत अथवा डीजल चालित निजी नलकूप/पम्पिंग सेट्स प्रमुख साधन है, यहाँ की अधिकांश भूमि सिंचित है । कृषि के लिए प्रमुख आदान प्रदान करने का स्थान एरवा कटरा कस्बा है जो न केवल कृषि के लिए आवश्यक सुविधाएं उपलब्ध कराता है बल्कि घरेलू उपयोग के लिए भी आवश्यक सामान्य वस्तुएं भी यह कस्बा सुलभ कराता है ।एरवा कटरा में सप्ताह में दो बार बाजार भी लगता है । परिवहन की दृष्टि से यह गाँव एरवा कटरा से कुदर कोट जाने वाली पक्की सड़क ने लगभग 2 किलोमीटर पूर्व में स्थित है और इस सड़क से एक कच्चे मार्ग से जुड़ा हुआ है ।

शस्य भूमि उपयोग :

ग्राम फैजुल्लापुर एक कृषि प्रधान गाँव है जहाँ कुल उपलब्ध भूमि के लगभग 73 प्रतिशत भाग पर कृषि फसलें उगाई जाती हैं । इस गाँव के शस्य भूमि उपयोग का विवरण सारिणी क्रमांक 6.46 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 6.46 शस्य भूमि उपयोग ।

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत
1. कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	364	–
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	268	73.63
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र ।	146	54.48
4. सकल बोया गया क्षेत्र	414	154.48
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	226	84.33
6. सकल सिंचित क्षेत्र	305	73.67
7. रबी क्षेत्र	238	57.49
8. खरीफ क्षेत्र	171	41.30
9. जायद क्षेत्र	5	1.21

सारिणी क्रमांक 6.46 ग्राम फैजुल्लापुर के शस्य भूमि उपयोग का चित्रण कर रही है जिसमें इस गाँव के कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 364 हेक्टेयर में 73.63 प्रतिशत भूमि पर विभिन्न फसलें उगाई जा रही हैं , शेष 26.27 प्रतिशत क्षेत्रफल या तो परती है या कृषि के लिए अनुपयुक्त है शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल 268 हेक्टेयर क्षेत्र में से 84.33 प्रतिशत कृषि भूमि को सिंचाई की सुविधाएं प्राप्त हैं जिससे 54.48 प्रतिशत क्षेत्र पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जा रही हैं, अतः कुल फसल क्षेत्र 414 हेक्टेयर में 57.49 प्रतिशत भूमि पर रबी की फसलें 41.30 प्रतिशत क्षेत्र पर खरीफ की फसलें तथा 1.21 प्रतिशत क्षेत्र पर जायद की फसलें उगाई जाती हैं । जायद फसलों में खरबूजा, तरबूज तथा शब्जियों को प्रमुख स्थान प्राप्त है । कुछ कृषक अत्यन्त छोटे पैमाने पर उर्द/मूँग भी इस मौसम ममें बोते हैं । वैसे उर्द/मूँग की फसल खरीफ में भी उगाई जाती है । इस गाँव में तीनों मौसमों में खाद्यान्न फसलों का ही महत्वपूर्ण स्थान है, नकदी फसलें अत्यन्त सीमित क्षेत्र में उगाई जाती हैं। नकदी फसलों में केवल लाही का क्षेत्रफल ही कुछ अधिक है , आलू तथा गन्न का क्षेत्र अत्यनत सीमित है ।

<u>विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल वितरण</u>

ग्राम फैजुल्लापुर में वर्ष में रबी, खरीफ तथा जायद तीनों कृषि मौसमों में विभिन्न फसलें उगाई जाती है । खरीफ में धान, ज्वार, बाजरा , मक्का तथा अरहर महत्वपूर्ण फसलें हैं इनमें से धान सर्वाधिक क्षेत्रफल पर उगाई जाती है जबकि रबी की फसलों गेहूँ , जौ, चना मटर तथा लाही, आलू प्रमुख है । जायद में खरबूजा, तरबूज तथा शब्जियाँ प्रमुख हैं । सारिणी 6.47 में विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल दर्शाया जा रहा है

सारिणी 6.47 विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल वितरण ।

फसल	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत	प्रतिशत
(अ) खरीफ	171	41.30	खरीफ का
1. धान	91	21.98	53.22
2. ज्वार	06	1.45	3.51
3. बाजरा	13	3.14	7.60
4. मक्का	51	12.32	29.82
5. अरहर	07	1.69	4.09
6. अन्य	03	0.72	1.75
(ब) रबी	238	57.49	रबी का
1. गेहूँ	170	41.06	71.43
2. जौ	08	1.93	3.36
3. चना	20	4.83	8.40
4. मटर	03	0.72	1.26
5. लाही	26	6.28	10.92
6. आलू	07	1.69	2.94
7. गन्ना	02	0.48	0.84
8. अन्य	02	0.48	0.84
(स) जायद	05	1.21	-
योग	414	-	-

सारिणी क्रमांक 6.47 ग्राम फैजुल्लापुर में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों में क्षेत्रफल वितरण का चित्र प्रस्तुत कर रही है जिसके अनुसार इस ग्राम में सकल बोये गये क्षेत्रफल में 57.49 प्रतिशत भूमि पर रबी की फसलें 41.30 प्रतिशत खरीफ की फसलें तथा 1.21 प्रतिशत भूमि पर जायद की फसलें उगाई जा रही हैं । वर्ष भर उगाई जाने वाली फसलों में अकेले गेहूँ की फसल 41.06 प्रतिशत क्षेत्र पर काविज होकर एकाधिकार की स्थिति का प्रदर्शन कर रही है जबकि द्वितीय महत्वपूर्ण फसल धान की है जो 21.98 प्रतिशत पर उगाई जाती है । मक्का भी 12.52 प्रतिशत क्षेत्र पर अधिकृत होकर अपने महत्व को दर्शा रही है । वाणिज्यक फसलों में लाही 6.28 क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है । अन्य फसलें केवल अपनी उपस्थिति ही दर्ज करा पा रही है । रबी तथा खरीफ मौसम के दृष्टिकोण से विचार करें तो 83 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल पर धान तथा मक्का फसलें खरीफ कृषि मौसम में अपना महत्व दर्शा रही है शेष 17 प्रतिशत से भी कम क्षेत्रफल पर ज्वार, बाजरा. अरहर तथा अन्य फसलें उगाई जा रही है , अन्य फसलों में उर्द/मूँग की फसलें इस मौसम में महत्वपूर्ण हैं । रबी कृषि मौसम में 71.43 प्रतिशत क्षेत्र पर अकेले गेहूँ की फसल काविज है और यह फसल रबी सीजन में तीन चौथाई से कुछ भी कम क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है इसलिए इस गाँव में गेहूँ का अपना विशिष्ट स्थान है । वाणिज्यिक फसलों में लाही, आलू तथा गन्ना तीनों फसलें मिलकर लगभग 14 प्रतिशत क्षेत्र पर बोई जाती है जिसमें लाही अकेले 10.92 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोई जाती है । जबकि गन्ना 0.84 प्रतिशत क्षेत्र को घेर कर केवल अपनी उपस्थिति ही दर्शा पा रहा है । सारिणी से स्पष्ट है कि खाद्यान्न फसलों में गेहूँ तथा धान के साथ साथ मक्का की फसल भी महत्वपूर्ण है जबकि नकदी फसलों में लाही का इस गाँव के लिए विशेष महत्व है । दलहनी फसलों में केवल चना ही कुछ महत्व पूर्ण लगता है, अन्य दलहनी फसलें विशेष महत्व की नहीं हैं ।

भूमि परं जनसंख्या का भार :

ग्राम फैजुल्लापुर में 258 परिवारों में 1572 लोग कृषि भूमि से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से जुड़े हुए हैं । अधिकाँश जनसंख्या कृषि पर आश्रित होने के कारण कृषि भूमि ही उनकी दैनिक आवश्यकता की आपूर्ति के लिए साधन जुटाती है । इस ग्राम की कृषि भूमि पर जनसंख्या के भार को सारिणी 6.48 में दिया जा रहा है ।

सारिणी 6.48 ग्राम फैजुल्लापुर की कृषि भूमि पर पड़ने वाले जनसंख्या के भार का विवरण प्रस्तुत कर रही है जहाँ पर प्रति व्यक्ति कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 0.2316 हेक्टेयर उपलब्ध है जिसमें से 0.1705 हेक्टेयर क्षेत्र पर कृषि कार्य सम्पन्न किया जा रहा है । इस कृषि भूमि में से 0.0929 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जा रही हैं । शुद्ध कृषि क्षेत्र 0.1705 हेक्टेयर में से 0.1438 हेक्टेयर क्षेत्र को सिंचन सुविधाएं प्राप्त हैं, परन्तु फिर भी 0.1088 हेक्टेयर क्षेत्र पर खरीफ की विभिन्न फसलें उगाई जा रही हैं इस दृष्टि से रबी का क्षेत्रफल अधिक है क्यों इस कृषि मौसम में 0.1514 हेक्टेयर क्षेत्रफल का

सारिणी क्रमांक 6.48 भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	एक से अधिक बार क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
	1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्रति व्यक्ति	0.2316	0.1705	0.0929	0.2634	0.1438	0.1940	0.1514	0.1088	0.0032

उपयोग किया जा रहा है । जायद फसलों के अन्तर्गत 0.0032 हेक्टेयर क्षेत्रफल ही उपयोग में लाया जा रहा है । जिसका कारण यह है कि सिंचाई के साधनों में अधिकाँश डीजल चालित नलकूप/पम्पिंग सेट्स होने के कारण इन फसलों की उत्पादन लागत अधिक हो जाती है । तेज गर्मी और दिन भर तेज लू के कारण इन फसलों को अत्यधिक पानी की आवश्यकता होती है । सरकारी नहर इस मौसम में न तो उचित मात्रा में और न उपयुक्त समय पर पानी उपलब्ध करा पाती है जिस कारण इस मौसम में कम क्षेत्र पर कृषि कार्य सम्पन्न हो पाता है ।

विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता :

इस ग्राम में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन तथा इस उत्पादन की जनपदीय औसत उत्पादन से तुलना सारिणी 6.49 में प्रस्तुत की जा रही है ।

सारिणी क्रमांक 6.49 विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता (किलोग्राम/हेक्टेयर) ।

फसल	उत्पादन	जनपदीय उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत में)
1. धान	1,976	1.970	+ 0.30
2. ज्वार	977	1,025	- 2.73
3. बाजरा	1,606	1.523	+ 5.45
4. मक्का	1,367	1,377	- 0.73
5. गेहूँ	2,478	2,506	- 1.12
6. जौ	2.087	1,906	+ 9.50
7. अरहर	1,667	1,326	+. 25.72
8. चना	1,465	1.283	+. 14.18
9. मटर	1.785	1,650	+8.18
10. उर्द/मूँग	429	473	- 9.30
11. लाही	1,376	1,247	+. 10.34
12. आलू	19,158	18.688	+ 2.51
13. गन्न	38,095	33,699	+. 13.04

सारिणी 6.49 ग्राम फैजुल्लापुर में उगाई जाने वाली फसलों के औसत उत्पादन तथा जनपद की विभिन्न फसलों के औसत उत्पादन का तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत कर रही है । सारिणी के अनुसार इस ग्राम अधिकांश फसलो का औसत उत्पादन जनपदीय स्तर की तुलना में श्रेष्ठ है । ज्वार, मक्का, गेहूँ तथा उर्द/मूँग ही ऐसी फसलें हैं जो जनपदीय स्तर की तुलना में निम्न उत्पादकता का प्रदर्शन कर रही है , इनमें से उर्द/मूँग 9.30 प्रतिशत कम उत्पादन करके ~~अन्य~~ अन्य फसलों की तुलना में न्यूनतम उत्पादन स्तर को प्रदर्शित कर रही है जबकि क्षेत्रफल की दृष्टि से इस गाँव के लिए यह फसल नगण्य है । मुख्य फसल गेहूँ की औसत उत्पादकता में 1.12 प्रतिशत की कमी अवश्य इस गाँव के लिए चिन्ता की बात है क्योंकि इस फसल का इस गाँव पर एकाधिकार है और खाद्यान्नों में यह फसल सर्वाधिक मात्रा की आपूर्ति करती है । ग्रामीण जनसमुदाय के भोजन में प्रोटीन एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व की आवश्यकता होती है जिसकी सर्वाधिक आपूर्ति दलहनी फसलें करती हैं । यह इस गाँव के लिए सर्वाधिक सन्तोष जनक तथ्य है कि सभी दलहनी फसलों की औसत उत्पादकता जनपदीय स्तर से अधिक है इनमें से अरहर की औसत उत्पादकता सर्वाधिक 25.72 प्रतिशत है यह एक प्रसन्नता की बात है । इसी प्रकार चना तथा मटर भी क्रमशः 14.18 प्रतिशत और 8.18 प्रतिशत अधिक उत्पादन करके श्रेष्ठ प्रदर्शन कर रही है , परन्तु इनका क्षेत्रफल अत्यन्त कम होने के कारण बहुत अच्छे परिणाम देने की स्थिति में ये फसलें नहीं हैं इसलिए इनके क्षेत्रफल में बृद्धि करके सुखद परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं । उत्पादन की दृष्टि से वाणिज्यिक फसलों का प्रदर्शन दलहनी फसलों से अधिक पीछे नहीं है, इनमें से लाही की औसत उत्पादकता 10.34 प्रतिशत अधिक होने से इस गाँव के लिए यह फसल अधिक उपयोगी हैं क्योंकि यह न केवल तेल की आवश्यकता को ही पूरा करती है बल्कि कृषकों को नकद धन भी उपलब्ध कराती है साथ ही लागत कम होने के कारण लाभदायक भी है । यद्यपि नकदी फसलों में गन्ना का उत्पादन सर्वाधिक अच्छा प्रदर्शन कर रहा है परन्तु क्षेत्रफल में अत्यन्त कम होने के कारण इसका अधिक लाभ कृषकों को नहीं प्राप्त हो पाता है । हाँ आलू वर्ष भर शब्जी के रूप में उपयोग किया जाता है इस फसल की अधिक उत्पादकता सन्तोष की बात है ।

प्रति व्यक्ति खाद्य पदार्थों की प्राप्ति तथा कुल उत्पादन के आधार पर इस गाँव का एक आहार सन्तुलन पत्रक तैयार किया गया है जिसमें खाद्यान्न की उपलब्ध मात्रा तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्वों का आकलन किया गया है जिसे सारिणी क्रमांक 6.50 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.50 विभिन्न फसलों से प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थों की उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम–फैजुल्लापुर)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्बोहाइ-ड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवो-फ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	169.23	583.84	12.69	1.692	1.523	1.015	129.80	16.92	321.54	5.415	3.384	0.355	0.271	6.600	
2. ज्वार	8.27	28.86	0.86	0.157	0.132	0.132	6.00	2.07	18.36	0.479	3.887	0.031	0.011	0.256	
3. बाजरा	29.47	106.38	3.42	1.473	0.678	0.354	19.89	12.38	87.23	1.473	38.900	0.097	0.074	0.678	
4. मक्का	98.42	342.50	10.92	3.543	1.476	2.657	65.15	9.84	342.50	1.968	88.578	0.708	0.098	1.771	
5. गेहूँ	594.69	2057.63	70.17	8.920	8.920	7.136	423.42	243.82	1819.75	29.140	380.601	2.676	1.011	32.708	
6. जौ	23.57	82.80	2.86	0.436	0.403	1.309	23.36	8.73	72.17	1.007	3.357	0.158	0.067	1.813	
7. अरहर	11.90	39.86	2.65	0.202	0.416	0.178	6.85	8.69	36.18	0.690	15.708	0.053	0.022	0.345	
8. चना	29.87	111.12	6.21	1.673	0.806	0.358	18.19	38.53	98.87	2.718	38.532	0.113	0.054	0.777	
9. मटर	5.88	18.52	1.16	0.065	0.129	0.264	3.32	4.41	17.52	0.300	2.293	0.027	0.011	0.200	
10. उर्द/मूँग	0.942	3.28	0.21	0.005	0.030	0.050	0.54	2.70	2.93	0.079	0.669	0.004	0.002	0.014	0.0094
11. लाही/तेल	22.00	198.00	–	22.00	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
12. आलू	175.29	170.03	2.80	0.175	1.052	0.701	39.61	17.53	70.12	1.227	42.069	0.175	0.017	2.103	29.7993
13. गन्ना/गुड़	14.34	54.92	0.06	0.014	0.086	–	13.62	11.47	5.73	1.635	24.091	0.029	0.006	0.072	
योग	1183.872	3797.74	114.01	40.355	15.651	14.154	749.75	377.09	2892.90	46.131	642.069	4.426	1.644	47.337	29.8087

सारिणी 6.50 ग्राम फैजुल्लापुर में वर्ष भर उत्पन्न की जाने वाली विभिन्न फसलों से प्राप्त होने वाले उत्पादन की प्रति व्यक्ति मात्रात्मक तथा गुणात्मक उपलब्धता का चित्रण कर रही है । सारिणी से ज्ञात होता है कि अन्न की मात्रात्मक उपलब्धि 923.67 ग्राम प्रति व्यक्ति है, जबकि दलहन फसलों के उत्पादन की 48.59 ग्राम तथा 211.63 ग्राम नकदी फसलों से प्राप्त उत्पादन से होती है । प्रति व्यक्ति मात्रात्मक उपलब्धता 1183.87 है जो कि मानक स्तर से बहुत अधिक है । यदि कृषि मौसम की फसलों पर विचार करें तो 317.29 ग्राम तथा रबी की फसलों का 654.03 ग्राम हिस्सा है और शेष वाणिज्यिक फसलें उपलब्ध करा रही है । इस मात्रात्मक उपलब्धता में 50 प्रतिशत से अधिक हिस्सा गेहूँ की फसल का है । विभिन्न खाद्य पदार्थो से प्राप्त होने वाली कुल ऊर्जा 3797.74 कैलोरी है जो मानक स्तर से बहुत अधिक है इसमें से 3202.01 कैलोरी अन्न से तथा 172.78 कैलोरी ऊर्जा दालों से प्राप्त हो रही है स्पष्ट है कि इस गाँव के लोगों को 84 प्रतिशत से अधिक ऊर्जा में अन्न की भागेदारी है और दालों की हिस्सेदारी 4.55 प्रतिशत है अर्थात 5 प्रतिशत से भी कम है । अन्न की फसलों से एक मात्र फसल गेहूँ 54 प्रतिशत से भी अधिक की भागेदारी कर रही है ।दालों में लगभग 3 प्रतिशत की भागेदारी चना की फसल कर रही है । इस गाँव में कृषि फसलों के उत्पादन में परम्परागत अन्न की फसलों को अधिक महत्व दिया जा रहा है जबकि मोटे अनाज तथा दालों की भागेदारी सामान्य से कम है , इनके क्षेत्रफल में बृद्धि की महती आवश्यकता है ।

11. ग्राम– झबरा

स्थिति : सहार विकास खण्ड का यह ग्राम विकास खण्ड मुख्यालय से पश्चिम में लगभग 13 किलोमीटर दूर दिबियापुर–रसूलावाद मार्ग के उत्तर में स्थित है और सड़क से लगभग 1 किलोमीटर उत्तर में यह ग्राम पूर्णतया कृषि प्रधान है । इस गाँव की भौगोलिक स्थिति $26^0.74$ उत्तरी अक्षांस तथा $79^0.41$ पूर्वी देशान्तर है । इस गाँव से लगभग 1 किलोमीटर दक्षिण में स्थित लहरापुर ग्राम एक छोटा बाजार स्थल भी है जहाँ पर सप्ताह में दो दिन साप्ताहिक बाजार लगता है, यह बाजार ही इस गाँव की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति करता है । सिंचाइ के साधनों में इस गाँव की कृषि भूमि को नहर तथा निजी डीजल चालित नलकूप/पम्पिंग सेट्स से ही सिंचन सुविधाएं प्राप्त हैं । धान और गेहूँ प्रमुख फसलें होते हुए भी अन्यय फसलें भी इस गाँव में उगाई जाती हैं । कृषि कार्यो के लिए छोटी–मोटी आवश्यकताएं लहरापुर बाजार आपूर्ति करता है, अन्य

आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इस गाँव के उत्तर में रसूलावाद कस्बा लगभग 10 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम में दिबियापुर कस्बा लगभग 15 किलोमीटर दूर स्थिति है जो सीधे कानपुर महानगर से जुड़े हुए हैं, आपूर्ति करते हैं , इन दोनों कस्बों में कृषि उत्पादन का क्रय विक्रय भी बड़े पैमाने पर होता है ।

<u>शस्य भूमि उपयोग</u> :

इस गाँव में वर्ष में तीनों कृषि मौसमों में विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं । शस्यय भूमि उपयोग का विवरण तालिका क्रमांक 6.51 में दिया जा रहा है ।

तालिका क्रमांक 6.51 झबरा ग्राम का शस्य भूमि उपयोग ।

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत
1.कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	401	–
2.शुद्ध बोया गया क्षेत्र	312	77.81
3.एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र ।	166	53.21
4.सकल बोया गया क्षेत्र	478	153.21
5.शुद्ध सिंचित क्षेत्र	288	92.31
6.सकल सिंचित क्षेत्र	422	88.28
7.रबी का क्षेत्र	278	58.16
8.खरीफ का क्षेत्र	192	40.17
9. जायद का क्षेत्र	8	1.67

तालिका 6.51 ग्राम झबरा के शस्यय भूमि उपयोग का चित्रण कर रही है जिसके अनुसार इस ग्राम के कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 401 हेक्टेयर में से 77.81 प्रतिशत भूमि कृषि फसलों के लिए प्रयोग में लाई जा रही है । इस भूमि के 166 हेक्टेयर भूमि पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जा रही है जिससे सकल बोया गया क्षेत्र 478 हेक्टेयर हो जाता है । शुद्ध बोये गये 312 हेक्टेयर क्षेत्र में से 92.31 प्रतिशत क्षेत्रफल को सिंचन सुविधाएं प्राप्त है जिसमें विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं । विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल 422 हेक्टेयर में से 58.16 प्रतिशत क्षेत्र पर रबी मौसम की फसलें उगाई जाती हैं जबकि 40.17 प्रतिशत भूमि पर खरीफ फसलें उगाई जाती हैं । जायद की फसलें केवल 1.67 प्रतिशत क्षेत्रफल प र उगाई जाती हैं जिसमें खरबूजा,

तरबूज तथा शब्जियों का ही प्रमुख स्थान है । इस गाँव की शस्य गहनता सूचकांक 153.21 है । रबी की फसलों में गेहूँ तथा खरीफ की फसलों में धान का प्रमुख स्थान है । गेहूँ की फसल के अतिरिक्त लाही की फसल भी महत्वपूर्ण है इसी प्रकार खरीफ मौसम में बाजरा तथा मक्का का महत्वपूर्ण स्थान है ।

विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल वितरण :

ग्राम झबरा में तीनों कृषि मौसमों में कुल 478 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं जिनके क्षेत्रफल वितरण को सारिणी क्रमांक 6.52 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 6.52 विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल वितरण ।

फसल	क्षेत्रफल	प्रतिशत	प्रतिशत
(अ) खरीफ	192	40.17	खरीफ का
1. धान	98	20.50	51.04
2. ज्वार	8	1.67	4.17
3. बाजरा	31	6.49	16.15
4. मक्का	36	7.53	18.75
5. अरहर	15	3.14	7.18
6. अन्य	04	0.84	2.08
(ब) रबी	278	58.16	रबी का
1. गेहूँ	180	37.66	64.75
2. जौ	13	2.72	4.68
3. चना	25	5.23	8.99
4. मटर	4	0.84	1.44
5. लाही	37	7.74	13.31
6. आलू	14	2.93	5.04
7. गन्ना	2	0.42	0.72
8. अन्य	3	0.63	1.08
(स) जायद	08	1 67	-
योग	478	100.00	-

सारिणी 6.52 विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल वितरण का विवरण प्रस्तुत कर रही है जिसमें ग्राम झबरा में सकल जोती गई भूमि के 40.17 प्रतिशत भूमि पर खरीफ की फसलें बोई जा रही हैं तथा 58.16 प्रतिशत भूमि पर रबी की फसलें उगाई जा रही हैं। जायद की फसलों का क्षेत्रफल मात्र 1.67 प्रतिशत है। खरीफ मौसम की फसलों में सर्वाधिक महत्वूपर्ण फसल धान है जो आधे से अधिक क्षेत्रपुल पर उगाई जा रही है। मक्का तथा बाजरा का महत्व इस ग्राम के लिए लगभग एक समान है और ये दोनों फसलें क्रमशः 18.75 प्रतिशत तथा 16.15 प्रतिशत भूमि पर अधिकार करके अपने महत्व का प्रदर्शन कर रही है, अरहर भी 7.18 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है ओर यह फसल ग्रामीणों की दालों की आवश्यकता को पूरा करती है। अन्य फसलों में इस गाँव के लिए उर्द/मूँग महत्वपूर्ण है कुछ कृषक सोयाबीन की भी कृषि अत्यन्त छोटे पैमाने पर करते देखे गये हैं परन्तु इसका न तो बाजार ही उपलब्ध है और न इससे तेल निकालने के लिए मशीन इसलिए यह कृषि अभी प्रायोगिक स्तर पर ही है यही स्थिति सुरजमुखी की है। रबी की फसल में गेहूँ सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जो 64.74 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जा रही है। दलहनी फसलों में चना लगभग 9 प्रतिशत क्षेत्र का प्रदर्शन करके अपना महत्व दर्शा रहा है। वाणिज्यिक फसलों में लाही का क्षेत्रफल 13.31 प्रतिशत है जो तिलहन की आवश्यकता के साथ साथ नकदी भी प्रदान करने वाली फसल है। आलू का क्षेत्रफल भी 5.04 प्रतिशत ग्रामीण आवश्यकता पूर्ण करने के लिए पर्याप्त है। गन्ना तो केवल अवनी उपस्थिति ही दर्शा पा रहा है।

भूमि पर जनसंख्या का भार:

ग्राम झबरा की लगभग सम्पूर्ण जनसंख्याय कृषि पर आश्रित होने के कारण इस गाँव की भूमि का महत्व लोगों के लिए बढ़ जाता है और कृषि कार्य के लिए उपलब्धा भूमि से अपनी आवश्यकता की पूर्ति करने के लिए यहाँ का कृषक समुदाय प्रयासरत है। ग्राम झबरा की भूमि पर पड़ने वाले भार का विवरण सारिणी क्रमांक 6.53 में दिया जा रहा है।

ग्राम झबरा में 367 परिवारों में कुल 1914 व्यक्ति निवास करते हैं। इस गाँव की जनसंख्या मूलतः कृषि पर आश्रित होने के कारण कृषि भूमि पर सम्पूर्ण जनसंख्या का भार पड़ता है जिसे सारिणी 6.51 में दर्शाया गया है। कुल प्रतिवेदित क्षेत्र में 0.2095 हेक्टेयर प्रति व्यक्ति हिस्सेदारी है जिसमें प्रति व्यक्ति 0.1630 हेक्टेयर भूमि कृषि के लिए उपलब्ध है, इस भूमि को प्रति व्यक्ति 0.1505 हेक्टेयर की दर से सिंचन सुविधाएं प्राप्त हैं जिस पर दो या दो से अधिक फसलोत्पादन के कारण सकल बोये गये क्षेत्रफल में 0.2497 हेक्टेयर की बृद्धि हो जाती है। परन्तु 0.1630 हेक्टेयर उपलब्ध कृषि क्षेत्र वाले इस गाँव में 0.1003 हेक्टेयर क्षेत्र पर खरीफ की फसल उगाई जाती है और 0.0627 हेक्टेयर क्षेत्रफल को परती छोड़ा जाता है। रबी की फसल कुल उपलब्ध कृषि क्षेत्र में से 0.1452 हेक्टेयर क्षेत्र का उपयोग करके सन्तोष जनक स्थिति में है। जायद का क्षेत्र अत्यन्त न्यून है परन्तु जब नहर समय से पानी दे देती हे तो इसका क्षेत्रफल बढ़ जाताा है।

सारिणी क्रमांक 6.53 भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेद्ध	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
	1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्रति व्यक्ति	0.2095	0.1630	0.0867	0.2407	0.1505	0.2205	0.1452	0.1003	0.0026

विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता :

ग्राम झबरा में भी परम्परागत कृषि फसलें ही उगाई जाती हैं जिनके औसत उत्पादन की जनपदीय स्तर से तुलना की गई है जिसे सारिणी 6.54 में प्रदर्शित किया जा रहा है ।

सारिणी 6.54 विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन किलोग्राम/हैक्टेयर ।

फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत में)
1. धान	1,944	1,970	-1.22
2. ज्वार	1,014	1,025	-1.07
3. बाजरा	1,562	1,523	+2.56
4. मक्का	1,303	1,377	-5.30
5. गेहूँ	2,528	2,506	+0.88
6. जौ	2,083	1,906	+9.29
7. अरहर	1,323	1,326	-0.23
8. चना	1,536	1,283	+19.72
9. मटर	1,960	1,650	+2.42
10. उर्द/मूँग	565	473	+19.45
11. लाही	1,237	1,247	-0.80
12. आलू	19,015	18,688	+1.75
13. गन्ना	32,902	33,699	-2.37

सारिणी क्रमांक 6.54 ग्राम झबरा की विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन तथा जनपद की विभिन्न फसलों के औसत उत्पादन का तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत कर रही है जिसके अनुसार अन्न के उत्पादन में यह ग्राम जनपदीय उत्पादन की तुलना में बाजरा 2.56 प्रतिशत, गेहूँ 0.88 प्रतिशत तथा जौ के उत्पादन में 9.29 प्रतिशत अधिक उत्पादन का प्रदर्शन कर रहा है जबकि धान के उत्पादन में 1.22 प्रतिशत, ज्वार 1.07 प्रतिशत तथा मक्का में 5.30 प्रतिशत पिछड़ रहा है । दलहनी फसलों पर यदि विचार किया जाये यतो चना, मटर तथा उर्द/मूँग के औसत उत्पादन में यह ग्राम जनपदीय स्तर से श्रेष्ठ है और क्रमशः 19.72 प्रतिशत, 2.42 प्रतिशत तथा 19.45 प्रतिशत अधिक उत्पादन कर रहा है परन्तु इन फसलों का क्षेत्रफल कम होने के

कारण इस बढ़त का लाभ इस ग्राम को उतना प्राप्त नहीं हो रहा है जितना कि उत्पादन में बढ़त हो रही है । अरहर का क्षेत्रफल अन्य दलहनी फसलों की अपेक्षा अधिक है परन्तु इस फसल का औसत उत्पादन 0.23 प्रतिशत पिछड़ रहा है । वाणिज्यिक फसलों में आलू जो ग्रामीणों के मध्य वर्ष भर शब्जी के रूप में प्रचलित रहता है का उत्पादन 1.75 प्रतिशत अधिक हो रहा है जो एक सन्तोष की स्थिति है परन्तु लाही का उतपादन 0.80 प्रतिशत कम होना एक चिन्ता की बात है । गन्न का यद्यपि उत्पादन 2.37 प्रतिशत कम है परन्तु इसका क्षेत्रफल कम होने के कारण गाँव की अर्थव्यवस्था का प्रभाव विशेष नकरात्मक नहीं पड़ रहा है ।

गाँव के उत्पादन तथा उस पर निर्भर जनसंख्या के आधार पर इस गाँव का एक "आधार सन्तुलन पत्रक" तैयार किया गया है जिसके अनुसार प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न की मात्रात्मक उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्वों की गणना की गई है जिसको सारिणी क्रमांक 6.55 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.55 ग्राम झबरा के आहार सन्तुलन को प्रस्तुत कर रहा है जिसके अनुसार इस गाँव में प्रति व्यक्ति खाद्य पदार्थो की मात्रात्मक उपलब्धि 1238.61 ग्राम है जो कि आवश्यक मानक स्तर से अत्यधिक है इनमें से 863.13 ग्राम अन्न 56.41 ग्राम दालें तथा 319.07 ग्राम अन्य फसलों का योगदान है । अन्न उत्पादित करने वाली फसलों में अकेले गेहूँ की हिस्सेदारी 64.88 प्रतिशत है तथा 17.06 प्रतिशत हिस्सेदारी चावल की है शेष लगभग 18 प्रतिशत की भागेदारी ज्वार, बाजरा, मक्का तथा जौ की फसलें कर रही हैं । वाणिज्यिक फसलों में आलू अकेले लगभग 90 प्रतिशत का योगदान कर रहा है । इस मात्रात्मक खाद्य पदार्थो के गुणात्मक पक्ष को देखें तो प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 3715.69 कैलोरी ऊर्जा इस गाँव के निवासियों को उपलब्ध है जो कि आवश्यक मानक स्तर से कहीं ज्यादा है । इस ऊर्जा का 52 प्रतिशत से अधिक हिस्सा गेहूँ से प्राप्त हो रहा है स्वाभाविक है कि गेहूँ की फसल का महत्व इस गाँव के लिए सर्वाधिक है । यदि हम विभिन्न फसलों के दृष्टिकोण से देखें तो यह तथ्य स्पष्ट होता है कि ग्रामीणों को उपलब्ध कुल ऊर्जा में से 80 प्रतिशत से अधिक ऊर्जा अन्नोत्पादित फसलों से उपलब्ध है जबकि दलहन की भागेदारी लगभग 5.38 प्रतिशत है । शेष भागेदारी लाही, आलू तथा गन्ना की है । इसी प्रकार प्रोटीन की भी उपलब्धि 50 प्रतिशत से अधिक गेहूँ से हो रही है । स्पष्ट है कि चाहे ऊर्जा उपलब्धि के दृष्टिकोण से देखें या प्रोटीन की प्राप्ति के दृष्टिकोण से , दोनों ही दृष्टि से अन्न फसलों का योगदान 75 प्रतिशत से अधिक है अतः इस गाँव के लिए अन्न उत्पादन करना विशेष महत्व रखता है जबकि दालों की भागेदारी अत्यन्त कम है, अतः दालों के उत्पादन को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए ।

सारिणी 6.55 प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थों की उपलब्ध मात्रा तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम झबरा)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाइड्रेटस ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्राम	थियामिन मि0ग्रा0	राइवोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	147.26	508.05	11.04	1.473	1.325	0.884	112.95	14.72	279.79	4.712	2.945	0.309	0.236	5.743	
2. ज्वार	9.41	32.84	0.98	0.179	0.151	0.151	6.83	2.35	20.89	0.546	4.423	0.035	0.012	0.292	
3. बाजरा	56.14	202.66	6.51	2.807	1.291	0.674	37.89	23.58	166.17	2.807	74.105	0.185	0.140	1.291	
4. मक्का	58.92	205.04	6.54	2.121	0.884	1.591	39.01	5.89	205.04	1.178	53.028	0.424	0.059	1.061	
. गेहूँ	560.00	1937.60	66.08	8.400	8.400	6.720	398.72	229.60	1713.60	27.440	358.400	2.520	0.952	30.800	
6. जौ	31.40	105.50	3.61	0.408	0.377	1.224	21.85	8.16	67.51	0.942	3.140	0.148	0.063	1.696	
7. अरहर	16.62	55.68	3.71	0.282	0.582	0.249	9.57	12.13	50.52	0.964	21.938	0.075	0.032	0.482	
8. चना	32.16	119.63	6.70	1.801	0.868	0.386	19.58	41.48	106.45	2.926	41.486	0.122	0.058	0.836	
9. मटर	6.10	19.21	1.20	0.067	0.134	0.274	3.45	4.57	18.18	0.311	2.379	0.029	0.012	0.207	
10. उर्द/मूँग	1.53	5.32	0.34	0.007	0.049	0.081	0.87	4.39	4.76	0.128	1.086	0.006	0.003	0.023	0.0153
11. लाही/तेल	23.11	207.99	–	23.110	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–
12. आलू	285.79	277.22	4.57	0.286	1.715	1.143	64.59	28.58	114.32	2.000	68.590	0.286	0.029	3.429	48.5843
13. गन्ना/गुड़	10.17	38.95	0.04	0.010	0.061	–	9.66	8.13	4.07	1.159	17.086	0.020	0.004	0.051	
योग	1238.61	3715.69	111.32	40.951	15.837	13.377	724.97	383.59	2751.30	45.113	648.606	4.159	1.600	45.911	48.5996

12. ग्राम-तुर्कीपुर

स्थितिः औरैया विकास खण्ड का ग्राम तुर्कीपुर विकास खण्ड मुख्यालय से लगभग 4 किलोमीटर उत्तर में तथा औरैया -दिबियापुर सड़क से लगभग 1 किलोमीटर पश्चिम में स्थित है । भौगोलिक दृष्टि से $26^0.35'$ उत्तरी अक्षांश तथा $79^0.32'$ पूर्वी देशान्तर पर स्थित यह गाँव एक कृषि प्रधान गाँव है । समतल भूमि तथा सिंचाई के विभिन्न साधनों से युक्त यह गाँव औरैया विकास खण्ड के पास स्थित होने के कारण कृषि सम्बन्धी अनेक सुविधाओं का लाभ उठा रहा है । इटावा के बाद के स्तर का कस्बा औरैया कृषकों को न केवल विभिन्न प्रकार की कृषि सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति कर रहा है अपितु कृषि उत्पादनों के उपयोग का एक बड़ा बाजार भी है । सिंचाई के साधनों में इस गाँव की दक्षिण दिशा में लगभग 1 किलोमीटर की दूरी पर नहर बहती है इसके अतिरिक्त विद्युत चालित राजकीय नलकूप के साथ-साथ कृषकों के भी विद्युत /डीजल चालित निजी नलकूप तथा पम्पिंग सेट्स विभिन्न फसलों को सिंचन सुविधाएं उपलब्ध कराते हैं । कस्बे के पास स्थित होने के कारण विभिन्न खाद्यान्न फसलों के साथ साथ शब्जियों का भी उत्पादन इस गाँव के लिए महत्व रखता है क्योकि परिवहन सुविधा प्राप्त यह गाँव शब्जियों को मण्डीतक पहुँचाकर अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने का प्रयास कर रहा है । औरैया कस्बा में एक राजकीय गल्ला मण्डी भी है जहाँ पर कृषकों को अपनी उपज का मूल्य भी अच्छा प्राप्त होता है । कृषि कार्यो हेतु कृषकों को कृषि आदान प्रदान भी सरलता से प्राप्त हो जाते हैं ।

शस्य भूमि उपयोग :

ग्राम तुर्कीपुर एक कृषि प्रधान गाँव होते हुए भी यहाँ के ग्राम वासियों पर शहरी जीवन का प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है स्वाभाविक है कि यहाँ के ग्राम वासियों में उच्च जीवन स्तर बनाने के लिए उपयोग स्तर में बृद्धि करने की होड़ सी देखी गई है । चूँकि ग्रामीण अर्थव्यवस्था मूलतः कृषि पर निर्भर है अतः जीवन स्तर ऊँचा उठाने के लिए कृषि उत्पादन को बढ़ाना यहाँ के नागरिकों की आवश्यकता है । इस आवश्यकता की पूर्ति न केवल गहरी खेती, अपितु विस्तृत खेती द्वारा सम्भव होती है जिसके लिए इस गाँव मं विभिन्न फसलों के लिए भूमि का आवँटन ~~किस~~ किस प्रकार किया जा रहा है इसका वितरण सारिणी क्रमांक 6.56 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 6.56 ग्राम तुर्कीपुर का शस्य भूमि उपयोग ।

मद	क्षेत्रफल (हैक्टेयर)	प्रतिशत	प्रतिशत
1. कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	388	-	-
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	320	-	82.47
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	165	-	51.56
4. सकल बोया गया क्षेत्र	485		151.56
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	195	-	60.94
6. सकल सिंचित क्षेत्र	286	-	58.97
7. रबी का क्षेत्र	278	-	57.32
8. खरीफ का क्षेत्र	195	-	40.21
9. जायद का क्षेत्र	12		2.47

सारिणी 6.56 ग्राम तुर्कीपुर के शस्य भूमि उपयोग का विवरण प्रस्तुत कर रही है जिसमें इस गाँव के लिए उपलब्ध कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 388 हेक्टेयर में से 82.47 प्रतिशत क्षेत्रफल को विभिन्न कृषि फसलों को उगाने के लिए उपयोग में लाया जा रहा है । सिचाई के विभिन्न साधनों द्वारा 60.94 प्रतिशत क्षेत्र को सिंचन सुविधाएं प्राप्त हैं । कुल कृषि भूमि 320 हेक्टेयर भूमि का आधे से अधिक क्षेत्रफल दो या दो से अधिक फसलों को उगाने हेतु प्रयोग किया जा रहा है जिसकारण इस गाँव का सकल बोया गया क्षेत्र 485 हेक्टेयर अर्थात 151.66 प्रतिशत हो जाता है । इस सकल बोये गये क्षेत्र में से 57.32 प्रतिशत क्षेत्र पर रबी की फसलें बोई जा रही हैं । 40.21 प्रतिशत क्षेत्र पर खरीफ की फसलें उगाई जाती हैं तथं 2.47 प्रतिशत क्षेत्रफल पर जायद की फसलें अधिकृत हैं । जायद की फसलों में शब्जियां, खरबूजा, तरबूज, ककड़ी तथा उर्द/मूँग महत्वपूर्ण फसलें हैं, सूरजमुखी ने भी इस गाँव में अपना प्रभाव स्थापित करना प्रारम्भ कर दिया है परन्तु यह फसल अभी प्रायोगिक स्तर पर ही कृषकों द्वारा की जा रही है क्योंकि सूरजमुखी का बाजार न होने के कारण यह फसल अभी तक कृषकों में रुचि उत्पन्न करने में सफल नहीं हो सकी है ।

सारिणी क्रमांक 6.57 विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल वितरण ।

फसल	क्षेत्रफल (हैक्टेयर)	प्रतिशत	प्रतिशत
(अ) खरीफ	195	40.21	खरीफ का
1.धान	31	6.39	15.90
2.ज्वार	05	1.03	2.56
3.बाजरा	107	22.06	54.87
4.मक्का	15	3.09	7.69
5.अरहर	20	4.12	10.26
6.अन्य	17	3.51	8.72
(ब) रबी	278	57.32	रबी का
1. गेहूँ	106	21.86	38.13
2.जौ	29	5.98	10.43
3.चना	44	9.07	15.83
4.मटर	24	4.95	8.63
5.लाही	52	10.72	18.71
6.आलू	2	0.41	0.72
7. गन्ना	5	1.03	1.80
8. अन्य	16	3.30	5.75
(स) जायद	12	2.47	-
योग	485	100.00	-

सारिणी क्रमांक 6.57 ग्राम तुर्कीपुर में उगाई जाने वाली फसलों के क्षेत्र फलीय वितरण का दृश्य प्रस्तुत कर रही है जिसमें विभिन्न फसलों के अन्तर्गत खरीफ मौसम की बाजरा तथा रबी फसल की गेहूँ लगभग समान महत्व प्रदर्शित कर रही है ।खरीफ मौसम के दृष्टिकाण से बाजरा की फसल 54.87 प्रतिशत क्षेत्र पर अधिकृत होकर आधे से भी अधिक क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है, द्वितीय महत्वूपर्ण फसल धान है जो 15.90 प्रतिशत क्षेत्र पर उत्पन्न की जा रही है तीसरी महत्वपूर्ण फसल धान है जो 15.90 प्रतिशत क्षेत्र पर उत्पन्न की जा रही है तीसरी महत्वपूर्ण दलहनी फसल अरहर है जो 10.26 प्रतिशत क्षेत्रफल पर आच्छादित है । अन्य फसलों में खरीफ सीजन की शब्जियां महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं शब्जियों में लौकी, तरोई, भिण्डी तथा टिण्डा महत्वपूर्ण क्षेत्रफल पर उगाई जाती हैं । इस मौसम में उर्द/मूँग भी इस गाँव के लिए एक महत्वपूर्ण फसल है । रबी मौसम में गेहूँ सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है जो 38.13 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है इस मौसम में द्वितीय महत्वपूर्ण फसल लाही/सरसों है जो 18.71 प्रतिशत क्षेत्र पर अपना अधिकार किए हुए है । दलहनी फसलों में चना 15.83 प्रतिशत क्षेत्र पर सर्वाधिक महत्व प्रदर्शित कर रहा है । अन्य फसलों में इस मौसम में भी शब्जियों का महत्पूर्ण स्थान है जिनमें बैंगन, टमाटर, गोभी, बन्द गोभी, ~~बन्द गोभी~~, शब्जियों वाली मटर तथा मिर्च का स्थान प्रमुख है । यह तथ्य अत्यन्त आश्चर्यजनक है कि इस सीजन में आलू का क्षेत्र अत्यन्त सीमित है और यह फसल केवल 2 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर उगाई जाती है ।

<u>भूमि पर जनसंख्या का भार</u>:

ग्राम तुर्कीपुर में 366 परिवारों में कुल 2268 जनसंख्या निवास करती है जो मूलतः कृषि तथा कृषि के सहायक कार्यों पर आधारित है । प्रति व्यक्ति विभिन्न प्रकार की भूमि उपलब्धता के आधार पर जनसंख्या के भार की गणना सारिणी 6.58 में प्रस्तुत की गई है ।

सारिणी क्रमांक 6.58 ग्राम तुर्कीपुर की भूमि पर पड़ने वाले भार का विवरण प्रस्तुत कर रही है जिसके अनुसार इस गाँव की प्रति व्यक्ति उपलब्ध 0.1711 हेक्टेयर भूमि से 0.1411 हेकटेयर भूमि का उपयोग विभिन्न कृषि फसलों के लिए किया जा रहा है यह हिस्सा इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि इस गाँव में विस्तृत खेती पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है परन्तु सिंचाई के साधनों के आधार पर कृषि भूमि को अधिक गहराई से प्रयोग करने की प्रवृत्ति नहीं दिखाई पड़ रही है क्योकि दो या दो अधिक फसलों का प्रति व्यक्ति केवल 0.0728 हेक्टेयर है जो एक सामान्य स्तर का है । साथ ही प्रति व्यक्ति 0.1411 हेक्टेयर क्षेत्र कृषि फसलों के लिए उपलब्ध होने के बावजूद भी खरीफ फसलों के लिए मात्र 0.0860 हेक्टेयर क्षेत्रफल का उपयोग यह दर्शा रहा है कि कृषि भूमि का कुशलतम उपयोग अभी तक नहीं हो पाया है । रबी फसलों के अन्तर्गत

सारिणी क्रमांक 6.58 भूमि पर जनसंख्या का भार (हैक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
	1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्रति व्यक्ति	0.1711	0.1411	0.0728	0.2138	0.0860	0.1261	0.1226	0.0860	0.0053

...: 0.1261 प्रति व्यक्ति भूमि का उपयोग अवश्य भूमि के कुशल उपयोग की ओर संकेत करता है । जायद फसलों के अन्तर्गत 0.0053 हेक्टेयर क्षेत्र का उपयोग अन्य गावों की अपेक्षा अधिक क्षेत्रफल दर्शा रहा है परन्तु इतना अधिक नहीं कि जिसका लाभ कृषकों को प्राप्त हो सके , वैसे भी इस उद्देश्य हेतु भूमि उपयोग की लागत अन्य फसलों की अपेक्षा अधिक होती है क्योंकि इस मौसम में फसलों को सिंचाई की आवश्यकता अधिक होती है ।

व्यवसायिक संरचना के आधार पर देखा जाये तो इस गाँव की 84 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या पूर्णतया कृषि उत्पादन पर आधारित है और 14 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या कृषि के सहायक कार्यों में संलग्न होने के कारण द्वितीयक रूप से कृषि पर आश्रित है, जनसंख्या का एक नगण्य भाग गाँव के बाहर रहकर नौकरी या व्यवसायिक कार्यों में संलग्न है जिनकी आँशिक अथवा पूर्णतः खाद्यान्न आपूर्ति गाँव पर ही निर्भर है । इस प्रकार गाँव की लगभग सम्पूर्ण जनसंख्या आँशिक अथवा पूर्ण रूप से कृषि क्षेत्र पर ही निर्भर है ।

विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन :

ग्राम तुर्कीपुर में उत्पन्न की जाने वाली विभिन्न फसलों तथा जनपद की फसलों से प्राप्त औसत उत्पादन का तुलनात्मक विवरण सारिणी 6.59 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 6.59 विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन (किलोग्राम/हेक्टेयर)

फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत)
1. धान	1,920	1,970	- 2.54
2. ज्वार	1,034	1,025	+ 0.88
3. बाजरा	1,561	1,523	+ 2.50
4. मक्का	1,408	1,377	+2.25
5. गेहूँ	2,536	2,506	+ 1.20
6. जौ	1,870	1,906	- 1.89
7. अरहर	1,286	1,326	-3.02
8. चना	1,362	1,283	+ 6.16
9. मटर	1,746	1,650	+ 5.82
10. उर्द/मूँग	504	473	+ 6.55
11. लाही/सरसों	1133	1,247	- 6.90
12. आलू	20,656	18,688	+10.53
13. गन्ना	34,753	33,699	+3.13

सारिणी 6.59 विभिन्न फसलों के औसत उत्पादन का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करती है जिसके अनुसार तुर्कीपुर ग्राम में उत्पादित की जाने वाली विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन जनपदीय स्तर से अच्छी स्थिति को प्रदर्शित कर रहा है । यह गाँव केवल धान के उत्पादन में 2.54 प्रतिशत, जौ 1.89 प्रतिशत, अरहर 3.02 प्रतिशत तथा लाही /सरसों के उत्पादन में 6.90 प्रतिशत पिछड़ रहा है, जबकि अन्न उत्पादित करने वाली अन्य फसलों में ज्वार में 0.88 प्रतिशत, बाजरा में 2.50 प्रतिशत, मक्का में 2.25 प्रतिशत तथा गेहूँ के उत्पादन में 1.20 प्रतिशत अधिक श्रेष्ठता प्राप्त किए हुए है । दलहनी फसलों में केवल अरहर का उत्पादन जनपदीय औसत उत्पादन से पिछड़ रहा है अन्य फसलें चना 6.16 प्रतिशत, मटर 5.82 प्रतिशत तथा उर्द/मूँग का उत्पादन 6.55 प्रतिशत अधिक है । दलहनी फसलों में चना तथा मटर के उत्पादन का आधिक्य कृषकों को लाभान्वित कर रहे हैं । वाणिज्यिक फसलों में लाही का उत्पादन पिछड़ रहा है जो निश्चित ही एक चिन्ता का विषय है क्योंकि क्षेत्रफल की दृष्टि से इस ग्राम की यही एक प्रमुख फसल है, अन्य फसलें आलू तथा गन्ना यद्यपि बढ़त से रही है परन्तु क्षेत्रफल में अत्यन्त सीमित होने के कारण इनका लाभ लाही/सरसों के उत्पादन की कमी से होने वाली हानि की क्षतिपूर्ति नहीं कर पा रही है, अतः इस ओर ध्यान देना आवश्यक है कि तिलहनी फसल के औसत उत्पादन को बढ़ाने का प्रयास किया जाय क्योंकि यह फसल न केवल तेल के उपयोग की आपूर्ति करती है बल्कि नकद धन भी उपलब्ध कराती है ।

ग्राम में उत्पन्न होने वाली विभिन्न फसलों के कुल उत्पादन तथा गाँव की कुल जनसंख्या के आधार पर गाँव का "आहार सन्तुलन पत्रक" तैयार किया गया है जिसमें विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की गणना सारिणी क्रमांक 6.60 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 6.60 ग्राम तुर्कीपुर के खाद्य सन्तुलन को प्रस्तुत कर रही है जिसके अनुसार इस गाँव की ग्रामीण जनसंख्या को प्रति व्यक्ति 720.19 ग्राम खाद्य पदार्थ उपलब्ध है जो आवश्यक मानक स्तर के आस पास है । इस मात्रात्मक उपलब्धता में 548.74 ग्राम खाद्य अन्न उत्पादित फसलों से प्राप्त हो रहा है जबकि 87.55 ग्राम दलहनी फसलों से तथा शेष 83.90 ग्राम वाणिज्यिक फसलों आलू, लाही/सरसों तथा गन्ना से प्राप्त हो रहा है जिसका अर्थ है कि 76 प्रतिशत से अधिक खाद्य अन्न उत्पादित फसलों से उपलब्ध हो रहे हैं । दलहन की हिस्सेदारी केवल 12 प्रतिशत है । विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों में ऊर्जा उपलब्ध की दृष्टि से देखें तो प्रति व्यक्ति ऊर्जा की उपलब्धता 2563.06 कैलोरी ऊर्जा प्रतिदिन प्राप्त हो रही है जिसमें 1918.32 कैलोरी ऊर्जा अन्न उत्पादित खाद्य से हो रही है और यह कुल उपलब्ध ऊर्जा का लगभग 75 प्रतिशत है । दलहन की इस दृष्टि से भागेदारी 11.73 प्रतिशत है । वाणिज्यिक फसलों से 344.11 कैलोरी ऊर्जा उपलब्ध है जिसमें 65.67 प्रतिशत हिस्सा लाही/सरसों फसल की है । इसी प्रकार यदि प्रोटीन की उपलब्धि की दृष्टि से देखें तो कुल 81.29 ग्राम प्रोटीन में से 64 प्रतिशत से अधिक की भागेदारी गेहूँ तथा बाजरा के उत्पादन से उपलब्ध हो रही है । कुल पोषक तत्वों की उपलब्धता में विभिन्न मौसम की फसलों के आधार पर खरीफ फसलों का योगदान 32.60 प्रतिशत है जबकि 53.60 प्रतिशत की भागेदारी रबी की खाद्यान्न फसलें कर रही हैं अन्य पोषक तत्वों की उपलब्धि वाणिज्यिक फसलों से होती है ।

सारिणी 6.60 विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम –तुर्कीपुर)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाइ- ड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवो- फ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	38.83	133.96	2.91	0.388	0.349	0.233	29.78	3.88	73.78	1.243	0.777	0.081	0.062	1.514	
2. ज्वार	5.06	17.66	0.53	0.096	0.081	0.081	3.67	1.26	11.23	0.293	2.378	0.019	0.007	0.157	
3. बाजरा	167.26	603.81	19.40	8.363	3.847	2.007	112.90	70.25	495.09	8.363	220.783	0.552	0.418	3.847	
4. मक्का	6.89	23.98	0.76	0.248	0.103	0.186	4.56	0.69	23.98	0.138	6.201	0.050	0.007	0.124	
5. गेहूँ	277.64	960.63	32.76	4.164	4.164	3.332	197.68	113.83	849.58	13.604	177.690	1.249	0.472	15.270	
6. जौ	53.06	178.28	6.10	0.690	0.637	2.069	35.93	13.80	114.08	1.592	5.306	0.249	0.106	2.865	
7. मटर	16.76	56.14	3.74	0.285	0.587	0.251	9.65	12.23	50.95	0.972	22.123	0.075	0.032	0.486	
8. चना	36.13	134.40	7.51	2.023	0.975	0.433	22.00	46.61	119.59	3.288	46.608	0.137	0.065	0.939	
9. मटर	31.89	100.45	6.28	0.351	0.701	1.435	18.02	23.92	95.03	1.626	12.437	0.150	0.061	1.084	
10. उर्द/ मूँग	2.77	9.64	0.61	0.014	0.088	0.147	1.58	7.95	8.61	0.233	1.967	0.012	0.005	0.042	0.0277
11. लाही/ तेल	25.11	225.99	–	25.110	–	–		–	–	–	–	–	–		–
12. आलू	37.43	36.31	0.60	0.037	0.225	0.150	8.46	3.74	14.97	0.262	8.983	0.037	0.004	0.449	6.3631
13. गन्ना/ गुड़	21.36	81.81	0.09	0.021	0.128	–	20.29	17.09	8.54	2.435	35.885	0.043	0.008	0.107	
योग	720.19	2563.06	81.29	41.80	11.885	10.324	465.52	315.25	1865.43	34.049	541.138	2.654	1.247	26.884	6.3908

13. ग्राम सांफर

स्थिति: विकास खण्ड अजीतमल का ग्राम सांफर विकास खण्ड मुख्यालय के उत्तर पश्चिम में लगभग 1 किलोमीटर दूर तथा अटसू–निवाड़ी पक्के सम्पर्क मार्ग पर स्थिति है । यह सम्पर्क मार्ग बाबरपुर–दिबियापुर मुख्य मार्ग से अटसू में तथा महेवा–निवाड़ी से निवाड़ी कस्बे को जोड़ता है । भौगोलिक दृष्टि से यह गाँव $26^{0}.51'$ उत्तरी अक्षांस तथा $79^{0}.08'$ पूर्वी देशान्तर पर स्थित मूलतः कृषि प्रधान ग्राम है । इस गाँव की भूमि समतल तथा दो राजकीय नहरों के आसपास स्थित होने के कारण अधिकाँश सिंचित है । यहाँ पर परम्परागत कृषि फसलें ही उगाई जाती है परन्तु यहाँ की कृषि में उच्च आदानों के प्रयोग के साथ–साथ मशीनीकरण भी बढ़ाता जा रहा है । इस ग्राम की दैनिक सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु यहाँ से 6 किलोमीटर दूर स्थित अटसू एक छोटा कस्बा है जहाँ सप्ताह में दो बार बाजार लगता है तथा यहाँ से 9 किलोमीटर दूर अजीतमल बाबरपुर एक बड़ा कस्बा है जहाँ से भी यहाँ के कृषकों की दैनिक सामान्य आवश्यकताओं तथा कृषि सम्बन्धी आवश्यकताओं की आपूर्ति होती है । यहाँ का अधिकांश कृषि उत्पादन गाँव में ही छोटे व्यापारियों के हाथों बेच दिया जाता है छोटे व्यापारी किसानों की उपज खरीदकर औरैया मण्डी अथवा भर्थना मण्डी लेजाकर बेच देते हैं , कुछ बड़े कृषक अपनी उपज इन मण्डियों तक स्वयं ले जाकर बेचते हैं ये दोनों मण्डियां इस गाँव से लगभग 30 किलोमीटर दूर स्थित हैं । यहाँ से 9 किलोमीटर दूर स्थित अजीतमल कस्बे में जो कि इस गाँव का विकासखण्ड भी है, में एक कृषि महाविद्यालय कृषि सम्बन्धी उच्चचच्च शिक्षा का केन्द्र है, जहाँ से शिक्षित इस गाँव के बेरोजगार कृषि स्नातक तथा परास्नातक अपने खेतों पर ही प्रयोग करके कृषि उत्पादन में बृद्धि का प्रयास करते हैं जिससे इस गाँव में ही नहीं बल्कि क्षेत्र में कृषि आदानों में बृद्धि तथा मशीनीकरण को बढ़ावा मिला है।

शस्य भूमि उपयोग :

जनसंख्या तथा कृषि क्षेत्रफल दोनों ही दृष्टियों से यह गाँव सर्वेक्षित समस्त गावों से बड़ा है । इस गाँव के शस्य भूमि उपयोग को सारिणी 6.61 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारिणी 6.61 ग्राम साफर का शस्य भूमि उपयोग ।

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	प्रतिशत
1. कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	692	-
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	548	79.19
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	284	51.83
4. सकल बोया गया क्षेत्र	832	151.83
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	408	74.45
6. सकल सिंचित क्षेत्र	596	71.63
7. रबी का क्षेत्र	484	58.17
8. खरीफ का क्षेत्र	332	39.90
9. जायद का क्षेत्र	16	1.92

सारिणी 6.61 ग्राम सांफर के शस्य भूमि उपयोग का चित्र प्रस्तुत करती है जिसमें कुल प्रतिवेदित क्षेत्र के 79.19 प्रतिशत क्षेत्रफल पर विभिन्न फसलें उगाई जाती है । दो नहरों से सिंचित होने के कारण कुल कृषि भूमि का 74.45 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित है । नहरों के अतिरिक्त डीजल चालित निजी नलकूप अथवा पंम्पिंग सेट्स भी इस गाँव की भूमि को सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराते हैं । जिसके कारण सकल बोये गये क्षेत्र में 51.83 प्रतिशत की बृद्धि हो जाती है और सकल बोया गया क्षेत्रफल 8.32 हेक्टेयर हो जाता है । इस सकल बोये गये क्षेत्र के 58.17 प्रतिशत भूमि पर रबी मौसम की फसलें 39.90 प्रतिशत पर खरीफ मौसम की फसलें तथं जायद मौसम में 1.92 प्रतिशत आच्छादित रहता है ।शुद्ध बोये गये क्षेत्र के 51.83 प्रतिशत य भूमि पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती हैं । जायद मौसम में यहाँ ककड़ी, खरबूजा, तरबूज तथा शब्जियों का प्रमुख स्थान है ।

सारिणी 6.62 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल वितरण ।

फसल	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	प्रतिशत	प्रतिशत
(अ) खरीफ	332	39.90	खरीफ का
1.धान	72	8.65	21.69
2.ज्वार	20	2.40	6.02
3.बाजरा	152	18.27	45.78
4.मकका	30	3.61	9.04
5.अरहर	36	4.33	10.84
6.अन्य	22	2.64	6.63
(ब) रबी	484	58.17	रबी का
1.गेहूँ	217	26.08	44.84
2.जौ	29	3.49	5.99
3.चना	52	6.25	10.74
4.मटर	103	12.38	21.28
5.लाही/सरसों	49	5.89	10.12
6.आलू	08	0.96	1.65
7.गन्ना	08	0.96	1.65
8.अन्य	18	2.16	3.72
(स) जायद	16	1.92	–
योग	832	100.00	–

सारिणी 6.62 ग्राम सांफर में वर्ष में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल वितरण को दर्शा रही है जिसके अनुसार इस ग्राम में वर्ष में गेहूँ, बाजरा तथा मटर फसलें महत्वपूर्ण हैं और ये क्रमशः 26.08 प्रतिशत, 18.27 प्रतिशत तथा 12.38 प्रतिशत क्षेत्र पर अधिकृत है ये तीनों फसलें 56 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल पर अपना आधिपत्य स्थापित किए हुए है, इनमें से गेहूँ तथा बाजरा खाद्यान्न फसलें तथा मटर दलहनी फसल है । खरीफ मौसम में खाद्यान्न फसलों में धान भी सकल बोये गये क्षेत्र 8.65 प्रतिशत क्षेत्रफल अधिकृत करके अपने महत्व को स्पष्ट कर रही है । यदि खरीफ मौसम में बोये जाने वाले क्षेत्रफल की दृष्टि से विचार करें तो खरीफ मौसम के सम्पूर्ण क्षेत्रफल के 45.78 प्रतिशत क्षेत्र पर बाजरा की फसल उगाई जाती है जबकि इस मौसम में धान की फसल 21.69 प्रतिशत क्षेत्रफल पर हिस्सेदारी कर रही है , इन दोनों फसलों द्वारा 66 प्रतिशत से अधिक हिस्सा अधिकृत किया जाता है । अरहर तथा मक्का लगभग एक समान स्तर का प्रदर्शन कर रही है । अन्य फसलों में इस गाँव में ढेंचा और सनई का भी प्रचलन है । ढेंचा किसानों को दो फायदे पहुँचाता है , प्रथम तो इसकी पत्तियाँ जमीन पर गिर जाने से हरी खाद का कार्य करती हैं, दूसरे ढेंचा के डण्ठल जलाने के काम आते हैं और भोजन पकाने के लिए तापीय ऊर्जा का कार्य करते हैं । रबी मौसम में बोई जाने वाली फसलों में गेहूँ का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण है और यह फसल 44.84 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है , मटर इस मौसम में दूसरी महत्वपूर्ण फसल है जो 21.28 प्रतिशत क्षेत्र पर अधिकार किए हुए है । ये दोनों फसलें इस मौसम की 66 प्रतिशत से अधिक भूमि पर उगाई जाती है । इस मौसम में चना तथा लाही/सरसों की फसलें लगभग एक समान स्तर को प्रदर्शित कर रही है । इसके अतिरिक्त जौ 5.99 प्रतिशत क्षेत्र पर अधिकार करके कुछ कम महत्व को दर्शा रही है । शेष फसलें अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करती प्रतीत हो रही है । जायद फसलों में ककड़ी, खरबूजा, तरबूज तथा शब्जियों का स्थान प्रमुख है उर्द/मूँग की फसल भी इस गाँव के लिए महत्वपूर्ण है ।

<u>भूमि पर जनसंख्या का भार</u> :

ग्राम सांफर की कुल कृषि भूमि 672 परिवारों में रहने वाले 3884 व्यक्तियों की आहार आवश्यकता को पूरा करती । इस गाँव की भूमि इस जनसंख्या की उदरपूर्ति हेतु न केवल खाद्यान्न ही उपलब्ध कराती है बल्कि अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति का अधिकाँश भाग भी कृषि उपज पर ही निर्भर करता है । इस ग्राम की भूमि पर जनसंख्या के भार का विवरण सारिणी क्रमांक 6.63 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी क्रमांक 6.63 ग्राम सांफर की भूमि पर जनसंख्या के भार को व्यक्त कर रही है । जिसके अनुसार प्रति व्यक्ति कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल 0.1782 हेक्टेयर में से 0.1411 हेक्टेयर भूमि पर विभिन्न फसलें उगाई जाती है । शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल 0.1411 हेक्टेयर भूमि में से 0.0731 हेक्टेयर क्षेत्र पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती है जिस कारण वर्ष भर में प्रति व्यक्ति 0.2142 हेक्टेयर भूमि विभिन्न फसलों को उगाने के लिए उपलब्ध हो जाती है । ~~इस सकल जोते जाने वाले क्षेत्रफल में से विभिन्न फसलों को उगाने के लिए उपलब्ध हो जाती है~~ । इस सकल जोते जाने वाले क्षेत्रफल में से 0.1535 हेक्टेयर क्षेत्रफल को सिंचन सुविधाएं उपलब्ध हैं । दो नहरों के आसपास स्थित भूमि को और अधिक सिंचित बनाने के लिए प्रयास किया जाना चाहिए । मौसम के अनुसार ~~विभिन्न फसलों के क्षेत्रपुल पर विचार की दृष्टि से रबी मौसम में 0.1246 हेक्टेयर क्षेत्रफल~~ विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल पर विचार की दृष्टि से रबी मौसम में 0.1246 हेक्टेयर क्षेत्रफल विभिन्न फसलों द्वारा आच्छादित रहता है जबकि खरीफ मौसम में केवल 0.0855 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर कृषि फसलें उगाई जाती हैं । जायद की फसलों के लिए मात्र 0.0041 हेक्टेयर क्षेत्रफल उपयोग में लाया जा रहा है ।

व्यावसायिक संरचना के आधार पर भूमि पर पड़ने वाले भार की दृष्टि से विचार करें तो ग्राम सांफर की 82 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या मूलतः कृषि तथा कृषि उपज पर आश्रित हैं और अपनी समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति कृषि प्रतिफल द्वारा ही करता है जबकि 15 प्रतिशत से कम जनसंख्या कृषि के सहायक कार्यो में संलग्न रहकर कृषि पर आँशिक अथवा पूर्ण रूप से निर्भर करती है । तीन प्रतिशत से भी कम जनसंख्या गाँव से बाहर रहकर सरकारी /निजी नौकरी अथ्वा अन्य व्यावसायिक कार्यो में संलग्न है अतः गांव की लगभग सम्पूर्ण जनसंख्या आँशिक अथ्वा पूर्णरूप से कृषि पर ही निर्भर है ।

विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन :

ग्राम की विभिन्न फसलों का तथा जनपद की विभिन्न फसलों के औसत उत्पादन का तुलनात्मक विवेचन सारिणी 6.64 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारिणी क्रमांक 6.63 भूमि पर जनसंख्या का भार (हैक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
	1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्रतिव्यक्ति	0.1782	0.1411	0.0731	0.2142	0.1050	0.1535	0.1246	0.0855	0.0041

सारिणी 6.64 विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन (किलोग्राम/हेक्टेयर)

फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत)
1. धान	2,054	1,970	+ 4.26
2. ज्वार	1,037	1,025	+ 1.17
3. बाजरा	1,512	1,523	-0.72
4. मक्का	1,424	1,377	+ 3.41
5. गेहूँ	2,666	2,506	+ 6.38
6. जौ	1,928	1,906	+ 1.15
7. अरहर	1,271	1,326	-4.22
8. चना	1,450	1,283	+, 13.02
9. मटर	1,475	1,650	-10.61
10. उर्द/मूँग	451	473	-4.65
11. लाही/सरसों	1390	1,247	+, 11.47
12. आलू	20,396	18,688	+ 9.14
13. गन्ना	29,904	33,699	-11.26

ग्राम सांफर में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन जनपदीय स्तर से तुलनात्मक रूप में सारिणी 6.64 में प्रस्तुत किया गया है । सारिणी से ज्ञात होता है कि इस ग्राम में अन्नोत्पादन वाली फसलों में केवल बाजरा की औसत उत्पादकता जनपदीय स्तर से 0.72 प्रतिशत कम है, अन्य सभी अन्नोत्पादन वाली फसलों गेहूँ की सर्वाधिक 6.38 प्रतिशत, धान की 4.26 प्रतिशत, मक्का की 3.41 प्रतिशत , ज्वार की 1.17 प्रतिशत तथा जौ की औसत उत्पादकता जनपद की तुलना में 1.15 प्रतिशत अधिक है । परन्तु दलहनी फसलों में केवल चना औसत उत्पादन में 13.02 प्रतिशत बढ़त बनाए हुए है, जबकि अरहर 4.22 प्रतिशत , मटर 10.61 प्रतिशत तथा उर्द/मूँग 4.65 प्रतिशत पिछड़ रही है । वाणिज्यिक फसलों में लाही/सरसों तथा आलू के औसत उत्पादन में क्रमशः 11.47 प्रतिशत तथा 9.14 प्रतिशत की बृद्धि कृषकों के लिए सन्तोष की बात है, जबकि गन्ने का उत्पादन 11.26 प्रतिशत पिछड़ना गन्ने की फसल के लिए

सारिणी 6.65 विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध मात्रा तथा उससे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम–सांफर)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाई–ड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लोह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवो–फ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	48.51	167.36	3.64	0.485	0.437	0.291	37.21	4.85	92.17	1.552	0.970	0.102	0.078	1.892	
2. ज्वार	5.93	20.70	0.62	0.113	0.095	0.095	4.31	1.48	13.16	0.344	2.787	0.022	0.008	0.184	
3. बाजरा	131.31	474.03	15.23	6.565	3.020	1.576	88.63	55.15	388.68	6.565	173.329	0.433	0.328	3.020	
4. मक्का	16.27	56.62	1.81	0.586	0.244	0.439	10.77	1.63	56.62	0.325	14.643	0.117	0.016	0.293	
5. गेहूँ	348.91	1207.23	41.17	5.234	5.234	4.187	248.42	143.05	1067.66	17.097	223.302	1.570	0.593	19.190	
6. जौ	31.95	107.35	3.67	0.415	0.383	1.246	22.24	8.31	68.69	0.959	3.195	0.150	0.064	1.725	
7. अरहर	13.64	45.69	3.04	0.232	0.477	0.205	7.86	9.96	41.46	0.791	18.005	0.061	0.026	0.396	
8. चना	31.11	115.73	6.47	1.742	0.840	0.373	18.95	40.13	102.97	2.831	40.132	0.118	0.056	0.809	
9. मटर	67.51	212.66	13.30	0.743	1.485	3.038	38.14	50.63	201.18	3.443	26.329	0.317	0.128	2.295	
10. उर्द / मूँग	10.02	34.87	2.20	0.050	0.321	0.531	5.73	28.76	31.16	0.842	7.114	0.042	0.020	0.150	0.1002
11. लाही/ तेल	16.95	152.55	–	16.950	–		–	–	–	–	–	–	–	–	–
12. आलू	86.32	35.23	0.58	0.036	0.218	0.145	8.21	3.63	14.53	0.254	8.717	0.036	0.004	0.436	6.1744
13. गन्ना/ गुड़	18.23	69.82	0.07	0.018	0.109	–	17.32	14.58	7.29	2.078	30.626	0.036	0.007	0.091	–
योग	826.66	2699.83	91.80	33.169	12.863	12.126	507.79	362.16	2085.57	37.081	549.149	3.004	1.328	30.481	6.2746

निराशाजनक स्थिति पैदा करता है ।

गाँव के कुल कृषि उत्पादन तथा जनसंख्या के आधार पर एक आहार सन्तुलन पत्रक तैयार किया गया है, जिसमें गाँव की कुल जनसंख्या को प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थो की औसत उपलब्धता तथा उस मात्रा से उपलब्ध पोषक तत्वों की गणना की गई है जिसे सारिणी 6.65 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.65 ग्राम सांफर की ग्रामीण जनसंख्या को कुल उपलब्ध खाद्यान्न पदार्थो में से प्रति व्यक्ति मात्रात्मक उपलब्धता तथा उनसे उपलब्ध पोषक तत्वों के आधार पर खाद्य पदार्थो के गुणात्मक पक्ष को प्रस्तुत कर रही है जिसके अनुसार इस ग्राम को कुल कृषि उत्पादन से प्रति व्यक्ति 826.66 ग्राम खाद्य पदार्थ उपलब्ध है इनमें से 582.88 ग्राम अन्न, 122.28 ग्राम दालें तथा 121.50 ग्राम अन्य फसलों लाही /तेल, आलू तथा गन्ना की भागेदारी है । दूसरे शब्दों में कुल उपलब्ध खाद्य पदार्थो में 70.51 प्रतिशत अन्न, 14.79 प्रतिशत दालें तथा 14.70 प्रतिशत लाही, आलू तथा गन्ना की सहभाजिता है । दलहन और वाणिज्यिक फसलें इस दृष्टि से समान प्रदर्शित कर रही हैं । विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त होने वाली उुर्जा तथा प्रोटीन के दृष्टिकोण से देखें तो ऊर्जा उपलब्धता में यह गाँव प्रति व्यक्ति 2699.83 कैलोरी तथा प्रोटीन की उपलब्धता 91.80 ग्राम के स्तर को प्राप्त कर रहा है, जबकि ऊर्जा उपलब्धता में 2033.29 कैलोरी अन्न से 408.95 कैलोरी दलहनी फसलों से तथा शेष 257.60 कैलोरी ऊर्जा अन्य वाणिज्यिक फसलों से उपलब्ध है अर्थात 75.31 प्रतिशत ऊर्जा अन्न से प्राप्त हो रही है जबकि दालों की हिस्सेदारी केवल 15.15 प्रतिशत है । अन्नोत्पादन फसलों में केवल गेहूँ तथा बाजरा दो फसलों से ही 62 प्रतिशत से अधिक ऊर्जा यप्रापत हो रही है । इसी प्रकार प्रोटीन उपलब्धता में 72 प्रतिशत से अधिक प्रोटीन अन्न की फसलों से , 27 प्रतिशत से अधिक दलहनी फसलों से तथा शेष अन्य वाणिज्यिक फसलों से प्रोटीन उपलब्ध है ।

14. <u>ग्राम बिनपुरापुर</u>

<u>स्थिति</u>:विकास खण्ड भाग्य नगर का गाँव विनपुरापुर विकास खण्ड मुख्यालय से पूर्व में लगभग 17 किलोमीटर ताथा ककोर–कंचौसी पक्के सम्पर्क मार्ग से लगभग 5 किलोमीटर पूर्व में स्थित है । यह गाँव जनपद की पूर्वी सीमा का अन्तिम गाँव है । इस गाँव के उत्तर में लगभग 4 किलोमीटर पर हावड़ा दिल्ली रेलमार्ग गुजरता है, इस मार्ग पर कानपुर देहात जनपद की पश्चिमी सीमा तथा इटावा जनपद की पूर्वी सीमा पर स्थित कंचौसी रेलवे स्टेशन से दक्षिण में लगभग 4 किलोमीटर दूर स्थिति है । इस गाँव के दक्षिण में लगभग 2 किलोमीटर दूर सेंगर नदी बहती है जिस कारण इस गाँव की भूमि का ढाल दक्षिण की ओर है । आने जाने के लिए एक कच्चा मार्ग कंचौसी रेलवे स्टेशन से इस गाँव को जोड़ता है । जिस कारण वर्षा काल में आवागमन लगभग अवरुद्ध सा ही रहता है । कंचौसी जो एक छोटा कस्बा भी है , इस गाँव को सामान्य आवश्यकता की आपूर्ति करता है यह कस्बा कृषि सम्बन्धी छोटी मोटी आवश्यकताओं के लिए कृषकों को औरैया तक की

यात्रा करनी पड़ती है जो इस गाँव से लगभग 20 किलोमीटर दूर स्थित है । भौगोलिक दृष्टि से यह गाँव $26^0.48'$ उत्तरी अक्षांश तथा $79^0.18'$ पूर्वी देशान्तर पर स्थिति है । सिंचाई के लिए गाँव के उत्तर में राजकीय नहर तथा विद्युत और डीजल चालित निजी नलकूप/पम्पिंग सेट्स उपलब्ध हैं ।

शस्य भूमि उपयोग :

ग्राम विनपुरापुर में उपलब्ध भूमि का विभिन्न उद्देश्यों हेतु प्रयोग में किस प्रकार लाया जा रहा है, का विवरण सारिणी 6.66 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.66 ग्राम विनपुरापुर का शस्यय भूमि उपयोग ।

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)	प्रतिशत
1.कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	349	-
2.शुद्ध बोया गया क्षेत्र	282	80.80
3.एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र ।	127	45.04
4. सकल बोया गया क्षेत्र	409	145.04
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	198	70.21
6.सकल सिंचित क्षेत्र	262	64.06
7.रबी का क्षेत्र	247	60.39
8.खरीफ का क्षेत्र	156	38.14
9.जायद का क्षेत्र	6	1.47

सारिणी क्रमांक 6.66 ग्राम विनपुरापुर में विभिन्न उपयोग में लाई जा रही भूमि का विवरण प्रस्तुत कर रही है जिसके अनुसार इस गाँव का कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल 349 हेक्टेयर में से 80.80 प्रतिशत भूमि विभिन्न फसलों को उगाने हेतु उपयोग में लाई जा रही है । इस उपलब्ध कृषि क्षेत्र के 70.21 प्रतिशत भाग को सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध हैं, परन्तु शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 45.04 प्रतिशत क्षेत्र ही दो या दो से अधिक फसलों को उगाने के उपयोग में लाया जा रहा है । जिससे इस गाँव की फसल गहनता सूचकांक 145.04सदृश्य हो रहा है । सकल बोये गये क्षेत्रफल 409 हेक्टेयर के 156 हेक्टेयर अर्थात मात्र 38.14 प्रतिशत कृषि क्षेत्र को खरीफ की फसलों के लिए उपयोग में लाया जा रहा है जबकि रबी फसलों के अन्तर्गत

247 हेक्टेयर अर्थात 60.39 प्रतिशत क्षेत्र उपयोग में लाया जा रहा है । जायद फसलों में अन्य गाँवों की तरह इस गाँव में भी खरबूजा, तरबूज, शब्जियाँ तथा उर्द/मूँग की प्रमुखता देखी गई । उर्द/मूँग फसलें खरीफ की फसलों के साथ भी उगायी जाती है ।

सारिणी 6.67 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल वितरण

फसल	क्षेत्रफल(हेक्टेयर)	प्रतिशत	प्रतिशत
(अ) खरीफ	156	38.14	खरीफ का
1. धान	58	14.18	37.18
2. ज्वार	12	2.93	7.69
3. बाजरा	50	12.23	32.05
4. मक्का	15	3.67	9.62
5. अरहर	14	3.42	8.97
6. अन्य	7	1.71	4.49
(ब) रबी	247	60.39	रबी का
1. गेहूँ	140	34.23	56.68
2. जौ	19	4.65	7.69
3. चना	26	6.36	10.53
4. मटर	10	2.44	4.05
5. लाही/सरसों	39	9.54	15.79
6. आलू	2	0.49	0.81
7. गन्ना	3	0.73	1.21
8. अन्य	8	1.95	3.24
(स) जायद	6	1.47	-
योग	409	100.00	-

ग्राम विनपुरापुर में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल के वितरण का विवरण सारिणी 6.67 प्रस्तुत कर रही है जिसमें खरीफ मौसम में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों में धान तथा बाजरा सर्वाधिक महतवपूर्ण फसलें हैं और ये दोनों फसलें क्रमशः खरीफ क्षेत्र के 37.18 प्रतिशत तथा 32.05 प्रतिशत अर्थात कुल 69.23 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है, शेष लगभग 30 प्रतिशत क्षेत्रफल पर ज्वार, मक्का, अरहर तथा खरीफ की अन्य फसलें उर्द/मूँग तथा शब्जियाँ उगाई जाती है। रबी कृषि मौसम में गेहूँ 56.68 प्रतिशत क्षेत्र पर अधिकार करके अपने सर्वाधिक महत्व को प्रदर्शित कर रहा है जबकि द्वितीय महत्वपूर्ण वाणिज्यिक फसल लाही /सरसों है जो 15.79 प्रतिशत क्षेत्र पर अपना प्रभुत्व स्थापित किए हुए है। चना तीसरे महत्व की पुसल है जो 10 प्रतिशत से कुछ अधिक क्षेत्रफल पर स्थापित है। गन्ना तथा आलू की फसलें अपने अस्तित्व को बचाने के प्रयास में दिखती है। जौ फसल 7.69 प्रतिशत क्षेत्रफल आच्छादित है। जायद के मौसम में खरबूजा, तरबूज, शब्जियाँ तथा उर्द/मूँग प्रमुख फसलें हैं जो सकल बोये गये क्षेत्र के 1.47 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जा रही है।

भूमि पर जनसंख्या का भार :

ग्राम विनपुरापुर में निवास करने वाले 341 परिवारों में रहने वाले 2174 लोगों का मूल आधार कृषि है और लगभग सम्पूर्ण ग्रामवासी कृषि भूमि से ही जावकोपार्जन के साधन जुटाते हैं। इस गाँव की भूमि पर जनसंख्या के भार का विवरण सारिणी 6.68 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

ग्राम विनपुरापुर की भूमि पर पड़ने वाले जनसंख्या के भार को सारिणी 6.68 में प्रस्तुत किया गया है जिसमें इस गाँव में प्रति व्यक्ति कुल उपलब्ध भूमि 0.1605 हेक्टेयर है जिसमें से 0.1297 हेक्टेयर पर विभिन्न फसलें बोई जाती है। इस कृषि भूमि में से 0.0911 हेक्टेयर क्षेत्र को सिंचाई की सुविधा प्राप्त है इस कारण 0.0584 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती हैं। प्रति व्यक्ति उपलब्ध कृषि क्षेत्र 0.1297 हेक्टेयर में से 0.9718 हेक्टेयर क्षेत्र पर खरीफ ॠतु की विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं जबकि 0.1136 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर रबी मौसम की विभिन्न फसलें बोई जाती हैं। जायद फसलों के लिए मात्र 0.0028 हेक्टेयर क्षेत्रफल उपयोग में लाया जा रहा है।

व्यवसायिक संरचना के आधार पर यदि इस गाँव को देखें तो 86 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या प्राथमिक रूप से कृषि पर निर्भर है जबकि लगभग 12 प्रतिशत जनसंख्या कृषि के सहायक कार्यो में संलग्न है यह जनसंख्या की कृषि भूमि पर ही निर्भर है। 2 प्रतिशत से भी कम जनसंख्या बाहर रहकर

सारिणी क्रमांक 6.68 भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेयर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
	1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्रति व्यक्ति	0.1605	0.1297	0.0584	0.1881	0.911	0.1205	0.1136	0.0718	0.0028

सरकारी/निजी सेवाओं तथा व्यवसाय आदि से जीवन यापन के साधन जुटाते हैं परन्तु ये लोग भी आँशिक अथवा पूर्ण रूपेण खाद्य पदार्थों के लिए कृषि उपज पर निर्भर हैं ।

विभिन्न फसलों की औसत उतपादकता :

ग्राम विनपुरापुर के कृषकों द्वारा उत्पादित विभिन्न फसलों की औसत उतपादकता तथा जनपदीय औसत उत्पादकता का तुलनात्मक विवरण सारिणी 6.69 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.69 विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता (किलोग्राम/हेक्टेयर)

फसल	उतपादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत)
1. धान	2,060	1,970	+ 4.57
2. ज्चार	1,016	1,025	− 0.88
3. बाजरा	1,571	1,523	+ 3.15
4. मक्का	1,350	1,377	− 1.96
5. गेहूँ	2,633	2,506	+ 5.07
6. जौ	1,864	1,906	− 2.20
7. अरहर	1,311	1,326	+ 1.13
8. चना	1,043	1,283	−, 18.71
9. मटर	1,610	1,650	− 2.42
10. उर्द/मूँग	554	473	+17.12
11. लाही/सरसों	1,234	1,247	− 1.04
12. आलू	18,995	18,688	+ 1.64
13. गन्ना	33,183	33,699	− 1.53

सारिणी 6.69 ग्राम विनपुरापुर में उत्पादित की जाने वाली विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता तथा जनपदीय औसत उत्पादकता का तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत करती है जिसके अनुसार इस ग्राम में अन्न उत्पादित करने वाली फसलों में धान 4.57 प्रतिशत , बाजरा 3.15 प्रतिशत तथा गेहूँ 5.07 प्रतिशत जनपदीय स्तर से अधिक उत्पादन दे रही है जबकि इसी वर्ग की अन्य फसलें ज्वार 0.88 प्रतिशत, मक्का 1.96 प्रतिशत तथा जौ 2.20 प्रतिशत जनपदीय स्तर से कम उत्पादन करके पिछड़ रही है , परन्तु क्षेत्रफल की दृष्टि से पिछड़ने वाली फसलों का क्षेत्रफल अधिक उत्पादन वाली फसलों से तुलनात्मक रूप से कम है अतः अन्न उत्पादन करने वाली फसलों का कृषकों को लाभ मिल रहा है । इसी प्रकार दलहनी फसलों में छोटे पैमाने पर उत्पादित की जाने वाली फसल उर्द/मूँग का औसत उत्पादन जनपदीय स्तर से 17.12 प्रतिशत अधिक है, परन्तु तुलनात्मक रूप से इस फसल से अधिक क्षेत्रफल वाली अन्य दलहनी फसलों में अरहर 1.13 प्रतिशत चना 18.71 प्रतिशत तथा मटर 2.42 प्रतिशत कम उतपादन करके पिछड़ रही है । वाणिज्यिक फसलों में अधिक क्षेत्रफल वाली लाही/सरसों का औसत उत्पादन जनपदीय स्तर से 1.04 प्रतिशत कम है जबकि आलू तथा गन्ना जो लगभग एक समान क्षेत्रफल वाली फसलें हैं इनमें से आलू का 1.64 प्रतिशत अधिक और गन्ने का 1.53 प्रतिशत कम उत्पादन स्तर को बता रहे हैं ।

ग्राम के कुल उत्पादन तथा गाँव मं रहने वाली कुल जनसंख्या के आधार पर गाँव का एक आहार सन्तुलन पत्रक तैयार किया गया है जिसमें विभिन्न फसलों द्वारा-प्राप्त कुल उत्पादन को प्रति व्यक्ति मात्रात्मक उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की गणना की गई है जिसे सारिणी 6.70 में प्रस्तुत किया गया है ।

सारिणी 6.70 ग्राम विनपुरापुर के कुल कृषि उत्पादन द्वारा प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता का चित्र प्रस्तुत कर रही है जिसके अनुसार इस ग्राम में प्रति व्यक्ति 737.83 ग्राम खाद्य पदार्थ उपलब्ध है जो मानक स्तर से अधिक हैं । यह मात्रा में 627.94 ग्राम अन्न की 48.06 ग्राम दालों की तथ 61.83 ग्राम वाणिज्यिक फसलों की भागेदारी है । स्पष्ट है कि इस गाँव में अन्न की भागेदारी 85 प्रतिशत से अधिक हे और दालों की हिस्सेदारी केवल 6.51 प्रतिशत हे । अन्न में भी गेहूँ एक ऐसा खाद्यान्न है जो अकेले लगभग 54 प्रतिशत योगदान कर रहा है । यदि विभिन्न कृषि मौसमों में विभिन्न फसलों के योगदान पर विचार करें तो खरीफ मौसम में उत्पन्न होने वाली फसलों का योगदान लगभग 28 प्रतिशत है जबकि शेष योगदान रबी

सारिणी 6.70 विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति उपलब्ध मात्रा तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम –विनपुरापुर)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	81.31	280.52	6.10	0.813	0.732	0.488	62.36	8.13	154.49	2.602	1.626	0.171	0.130	0.171	17·
2. ज्वार	12.45	43.45	1.29	0.236	0.199	0.199	9.04	3.11	27.64	0.722	5.851	0.046	0.016	0.386	
3. बाजरा	80.18	289.45	9.30	4.009	1.844	0.962	54.12	33.68	237.33	4.009	105.837	0.265	0.200	1.844	
4. मक्का	20.67	71.93	2.29	0.744	0.310	0.558	13.68	2.07	71.93	0.413	18.603	0.149	0.021	0.372	
5. गेहूँ	397.18	1374.24	46.87	5.958	5.958	4.766	282.79	162.84	1215.37	19.462	254.195	1.787	0.675	21.845	
6. जौ	36.15	121.46	4.16	0.450	0.434	1.410	25.16	9.40	77.72	1.085	3.615	0.170	0.072	1.952	
7. अरहर	13.53	45.32	3.02	0.230	0.473	0.203	7.79	9.88	41.13	0.785	17.860	0.061	0.026	0.392	
8. चना	19.99	74.36	4.16	1.119	0.540	0.240	12.17	25.79	66.17	1.819	25.787	0.076	0.036	0.520	
9. मटर	12.78	40.26	2.52	0.140	0.281	0.575	7.22	9.59	38.08	0.652	4.984	0.060	0.024	0.434	
10. उर्द/मूँग	1.76	6.12	0.39	0.009	0.056	0.093	1.01	5.05	5.47	0.148	1.250	0.007	0.003	0.026	0.176
11. लाही/तेल	21.40	192.60	–	21.40	–	–		–	–	–	–	–	–	–	–
12. आलू	35.91	34.83	0.57	0.036	0.215	0.143	8.12	3.59	14.36	0.251	8.618	0.036	0.004	0.431	6.1047
13. गन्ना/गुड़	4.52	17.31	0.022	0.004	0.027	–	4.29	3.62	1.81	0.515	7.593	0.009	0.002	0.023	
योग	737.83	2591.85	80.69	35.168	11.069	9.637	487.75	276.75	1951.50	32.463	455.819	2.837	1.209	31.396	6.1223

मौसम की फसलों का है । इस ग्राम की जनसंख्या के लिए विभिन्न फसलों से प्राप्त होने वाले कृषि उत्पादन से प्रति व्यक्ति 2591.85 कैलोरी ऊर्जा उपलब्ध है इस उपलब्ध उुर्जा में 84 प्रतिशत से अधिक योगदान अन्नोत्पादित फसलों का है, 6.41 प्रतिशत योगदान दलहनी फसलों का है तथा शेष योगदान वाणिज्यिक फसलों का है । ऊर्जा में भी आधे से अधिक योगदान गेहूँ की फसल का है । प्रोटीन पर विचार करें तो इस गॉव में प्रत्येक व्यक्ति को 81.69 ग्राम प्रोटीन उपलब्ध है जिसमें गेहूँ 46.67 ग्राम प्रोटीन उपलब्ध कराकर योगदान में आधे से अधिक की हिस्सेदारी कर रहा है । कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण भोजन में अन्न की मात्रा आधे से अधिक रहती है, स्वाभाविक है कि विभिन्न पोषक तत्व जो शरीर की कार्यशक्ति को बनाए रखते हैं अन्न से ही प्राप्त होते हैं । दलहन तथा अन्य पदार्थो का योगदान अत्यन्त कम रहता है ।

6.2 <u>कृषकों का आहार प्रतिरूप</u> :

डा0 रन्धावा [6] के अनुसार भोजन मनुष्य की सर्वाधिक महत्वपूर्ण आधार भूत आवश्यकता है जिसके बिना कोई भी प्राणी जीवन की कल्पना नहीं कर सकता है । जीवन के प्रारम्भ से जीवन के अन्त तक भूख को शान्त करने तथा शरीरिक विकास के लिए मनुष्य को भोजन की आवश्यकता होती है । भोजन की आदत तथा पर्यावरण जिसमें मनुष्य जीवन यापन करता है, में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है जिसके लिए मनुष्य सर्व प्रथम स्वयं पर्यावरण से सम्बन्ध स्थापित करता है तत्पश्चात उस पर्यावरण के अनुसार वह अपनी आदतें तथा स्वभाव को समायोजित करता है । इन आदतों में मनुष्य सर्व प्रथम भोजन की आदतों का समायोजन तथा बाद में अन्य आवश्यकताओं में सन्तुलन स्थापित करता है । इस दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा में भोजन की आदतों में बहुत अधिक भिन्नता देखने को नहीं मिलती है, परन्तु भोजन तथा खानपान की आदतों के निर्धारण में आय का आकार सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है । खानपान की आदतों में लगभग समानता रहते हुए भी आय का आकार तथा भोज्य पदार्थो की उपलब्धता भोजन की आदतों में न्यूनाधिक अन्तर उत्पन्न करते हैं । सर्वेक्षण में भोजन की आदतों सम्बन्धी प्राप्त सूचनाएं , विभिन्न वर्गो की भोजन सम्बन्धी आदतों के बारे में समग्र रूप से एक पेचीदा चित्र प्रस्तुत करती है । यद्यपि जनपद के विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले लोग एक ही प्रशासनिक तंत्र से नियंत्रित है परन्तु फिर भी विभिन्न क्षेत्रों में परिस्थितिकीय अन्तर, लोगों की भोजन की आदतों में अन्तर उत्पन्न करती हैं । इसलिए **अली मोहम्मद** [7] का मत है कि क्षेत्रीय खाद्य आदतें जो एक बार लोगों की वाध्यता या मजबूरी के कारण उनकी आदतों में शामिल होती है वे समय अन्तराल के साथ स्थाई आदतों, स्थाई पसंद तथा स्थाई रुचियों में परिवर्तित हो जाती हैं । परिस्थितिकीय अन्तर, आय का आकार, परिवार का आकार, खाद्य पदार्थो की उपलब्धता तथा लोगों के जीने का ढंग आदि कारण लोगों की भोजन आदतों में अन्तर के लिए उत्तरदायी होते हैं ।

अध्ययन क्षेत्र में कृषकों के प्रचलित आहार प्रति रूप की जानकारी के लिए प्रत्येक विकास खण्ड से एक गाँव तथा प्रत्येक गाँव से 20 कृषकों का चुनाव किया गया है । इस प्रकार 280 परिवारों की खानपान आदतों के बारे में सूचनाएं एकत्रित की गई हैं, इन सूचनाओं के आधार पर कृषकों के आहार प्रतिरूप को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है । इसके लिए सभी परिवारों को सर्व प्रथम जोत के आकार के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है जिसमें भूमिहीन जिनके पास कृषि भूमि नहीं है, सीमान्त कृषक (जो 0.4 हेक्टेयर या इसके कम कृषि भूमि के स्वामी हैं), लघु कृषक जो 0.4 हेक्टेयर से 1 हेक्टेयर तक कषि भूमि के स्वामी हैं), मध्यम कृषक (जो 1 हेक्टेयर से 2 हेक्टेयर तक कृषि भू स्वामी हैं) तथा बड़े कृषक) जो 2 हेक्टेयर से अधिक कृषि भूमि के स्वामी हैं) वर्गों में विभाजित किया गया है ।

सारिणी क्रमांक 6.71 कृषकों की जोत का आकार ।

जोत का आकार	श्रेणी	संख्या	प्रतिशत
जिनके पास कृषि भूमि नहीं है	भूमिहीन	34	12.14
0.4 हेक्टेयर से कम	सीमान्त कृषक	69	24.64
0.4 से 1 हेक्टेयर तक	लघु कृषक	85	30.36
1 हेक्टेयर से 2 हेक्टेयर तक	मध्यम कृषक	71	25.36
2 हेक्टेयर से अधिक	बड़े कृषक	21	7.50
योग		280	100.00

सर्वेक्षित 280 परिवारों को पाँच वर्गों में सारिणी 6.71 में दर्शाया गया है जिसमें जोत की आकार के आधार पर 12.14 प्रतिशत परिवार भूमिहीन प्राप्त हुए जिनके पास कृषि कार्य हेतु किसी भी प्रकार की भूमि नहीं है और ये कृषि के सहायक कार्य अथवा ग्रामीण क्रियाओं द्वारा अपने जीवनयापन हेतु साधन जुटाते हैं । 24.64 प्रतिशत सीमान्त कृषक प्राप्त हुए जो कषि के साथ साथ मजदूरी आदि करके अपनी तथा अपने परिवार की उदर पूर्ति एवं अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं । 30.36 लघु कृषक की श्रेणी में आते हैं, ये कृषक अपनी भूमि पर कृषि कार्य करने के साथ साथ कुछ भूमि बटाई अथवा रीत पर भूमि लेकर कृषि कार्य करते हैं इसके अलावा परिवार के कुछ सदस्य मजदूरी आदि करके अपनी आवश्यकताओं

की पूर्ति करते हैं । 25.36 प्रतिशत कृषक मध्यम श्रेणी के वर्ग में आते हैं तथा 7.50 प्रतिशत कृषक बड़े आकार के कृषकों की श्रेणी में आते हैं ।

सारिणी 6.72 कृषकों का धर्म /जातिगत आधार पर वर्गीकरण ।

जाति/धर्म	भूमिहीन	सीमान्त कृषक	लघु कृषक	मध्यम कृषक	बड़े कृषक	योग
उच्च जाति	4	15	25	18	6	68
पिछड़ी जाति	11	21	32	28	11	103
हरिजन	14	26	24	19	1	84
मुसलमान	5	7	4	6	3	25
योग	34	69	85	71	21	280

सारिणी 6.72 कृषकों को जातिगत आधार पर वर्गीकृत करती है जिसके अनुसार 25 कृषक हिन्दू तथा 25 कृषक मुसलमान श्रेणी के हैं । हिन्दुओं में उच्च वर्ग के 68 कृषक परिवार हैं जिनमें ब्राह्मण, क्षत्रिय बनियां तथा कायस्थ वर्ग के लोग सम्मिलित हैं । 103 कृषक परिवार पिछड़ी जाति के हैं, इनमें से नाई, कहार, लोहार, तेली, यादव, सोनार, कुम्हार, बढ़ई, पाल, तथा मल्लाह आदि जाति के लोग सम्मिलित हैं । हरिजन वर्ग के 84 कषक परिवारों में कोरी, चमार, धानुक, धोबी तथा पासी जाति के लोग सम्मिलित हैं । 25 परिवार मुस्लिम धर्म के सम्मिलित हैं ।

सारिणी 6.73 कृषक परिवारों का आकार ।

परिवार के सदस्यों की संख्या	भूमिहीन	सीमान्त कृषक	लघु कृषक	मध्यम कृषक	बड़े कृषक	योग
1 से 4 तक	9	14	17	22	2	64
5 से 6 तक	11	21	36	21	9	98
7 से 8 तक	8	26	21	12	4	71
8 से अधिक	6	8	11	16	6	47
योग	34	69	85	71	21	280

सारिणी 6.73 सर्वेक्षित कृषक परिवारों के आकार का चित्र प्रस्तुत कर रही है जिसमें 64 परिवार 1 से 4 सदस्य वाले हैं । 5 से 6 सदस्यों वाले परिवारों की संख्या सर्वाधिक 98 हैं । 71 परिवार ऐसे हैं जिनमें 7 से आठ सदस्य तक अपनी यआवश्यकताओं की पूर्ति कर रहे हैं जबकि सामान्य से कहीं अधिक बड़े परिवार जिनकी सदस्य संख्या 8 से अधिक है उनकी संख्या 47 है । इस प्रकार सामान्य यआकार वाले परिवार 162 हैं जबकि सामान्य से बड़े परिवारों की संख्या 118 हैं ।

सारिणी सं. 6.74 आयु के अनुसार जनसंख्या का वितरण

आयु	भूमिहीन		सीमान्त कृषक		लघु कृषक		मध्यम कृषक		बड़े कृषक		योग	
	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
14वर्ष से कम	39	36	69	74	98	103	90	78	24	18	320	309
14वर्ष से 45वर्ष तक	57	53	117	108	125	106	103	93	41	34	443	394
45 वर्ष से अधिक	22	17	42	31	52	45	44	38	18	13	178	144
योग	118	106	228	213	275	254	237	209	83	65	941	847
महा योग		224		441		529		446		148,	1788	

सारिणी 6.74 आयु के अनुसार जनसंख्या के वितरण को दर्शा रही है जिसके अनुसार सभी सर्वेक्षित परिवारों की सदस्य संख्या कुल 1788 है जिसमें 941 पुरुष तथा 847 स्त्रियां हैं । 14 वर्ष से कम आयु के बालक 320 तथा बालिकाओं की संख्या 309 है जबकि 14 से 45 वर्ष के मध्य आयु वाले पुरुष 443 तथा स्त्रियों की संख्या 394 हैं । 45 वर्ष से अधिक आयु वाले पुरुष वर्ग में 178 तथा स्त्री वर्ग में 144 संख्या प्राप्त हुई है ।

सारिणी 6.75 जनसंख्या की खाद्य आदतें ।

खाद्य आदतें	भूमिहीन	सीमान्त कृषक	लघु कृषक	मध्यम कृषक	बड़े कृषक	योग
शाकाहारी पुरुष	47	139	167	154	61	568
स्त्री	41	111	178	136	56	522
माँसाहारी पुरुष	71	89	103	83	22	373
स्त्री	65	102	76	73	09	325
योग	224	441	529	446	148	1,788

सारिणी 6.75 सर्वेक्षित परिवारों के सदस्यों की खाद्य आदतों का चित्र प्रस्तुत करती है जिसके अनुसार सम्पूर्ण सदस्यों को दो वर्गो –शाकाहारी तथा माँसाहारी में रखा गया है । कुल 1788 सदस्यों में से 568 पुरुष तथा 522 स्त्रियां शाकाहारी वर्ग में प्राप्त हुई जब कि माँसाहारी वर्ग में 373 पुरुष तथा 325 स्त्रियां प्राप्त हुई । केवल सीमान्त कृषकों के वर्ग में माँसाहारी पुरुष कम तथा माँसाहारी स्त्रियां अधिक प्राप्त हुई जबकि अन्य वर्गो में माँसाहारी पुरुष अधिक तथा माँसाहारी स्त्रियां कम प्राप्त हुई हैं ।

प्रस्तुत शोध के इस अध्याय में कृषकों के आहार प्रति रूप का विश्लेषण किया गया है । इसके लिए सर्वेक्षण से प्राप्त खाद्य पदार्थो को तीन प्रमुख वर्गो में विभाजित किया गया है प्रथम –मुख्य खाद्य पदार्थ द्वितीय सहायक खाद्य पदार्थ तृतीय विशिष्ट खाद्य पदार्थ/मुख्य खाद्य पदार्थ तो सामान्यतया सभी वर्ग के लोगों द्वारा पेट भरने के लिए ग्रहण किए जाते हैं ये पदार्थ न केवल प्रचुर मात्रा में ग्रहण किए जाते हैं बल्कि लोगों के भोजन में इन पदार्थो की भागेदारी भी सर्वाधिक रहती है । "खाद्य आदतों में एक वर्ग से दूसरे वर्ग में न्यूनाधिक भिन्नता देखने को मिलती है परन्तु यह भिन्नता छोटे कृषक परिवारों में तथा बड़े कृषक परिवारों में अधिक दिखाई पड़ती है । उदाहरण के लिए रोटी तथा दाल विभिन्न वर्गो में प्रमुख खाद्य पदार्थो के रूप में प्रचलित है परन्तु भात सामान्यतया भूमिहीन, सीमान्त कृषक तथा लघु कृषक परिवारों के मुख्य खाद्य के रूप में प्रचलित हैं । जबकि मध्यम तथा बड़े आकार वाले कृषक परिवारों में भात मुख्य खाद्य पदार्थ के रूप में सम्मिलित नहीं रहता है यह वर्ष के केवल कुछ दिनों ही चावल के रूप में मध्यान्ह भोजन में प्रचलित हैं ।"[8] और रात्रिकालीन भोजन के साथ यदा कदा ही सेवन किया जाता है ।" इसी प्रकार शब्जियां जिन्हें क्षेत्रीय भाषा में तरकारी कहते हैं बड़े तथा मध्यम आकार वाले कृषक परिवारों में मुख्य खाद्य पदार्थो के रूप में प्रचलित है जबकि भूमिहीन तथा छोटे आकार वाले कृषक परिवारों में शब्जियां पूर्णतया दाल की स्थानापन्न हैं और शब्जियों का कम ही प्रयोग किया जाता है जब मुख्य भोजन में दाल का समावेश होता है तब तरकारी का भोजन में अभाव रहता है और जब भोजन संयोजन में तरकारी सम्मिलित रहती है । तब दाल का अभाव हो जाता है ।"[9]

थापर [10] के मतानुसार अन्य मुख्य खाद्य पदार्थो में भूमिहीन तथा छोटे कृषक परिवारों में माँसाहार प्रचलित हैं परन्तु बड़े तथा मध्यम कृषक परिवारों में माँसाहार कम प्रचलित हैं इन परिवारों में कुछ सदस्य ही यदाकदा ही माँसाहार सेवन करते हैं वैसे माँसाहार मुस्लिम परिवारों में मुख्य खाद्य पदार्थ के रूप में प्रचलित है जिसमें मछली, बकरे का माँस, पक्षियों का माँस आदि की प्रमुखता रहती है, कुछ लोगों द्वारा विशेष अवसरों पर अंडे भी प्रयोग किए जाते हैं । भोजन की आदतों का विश्लेषण करते समय विभिन्न वर्गो में प्रचलित कुछ विशेष , खाद्य पदार्थो

को मुख्य भोजन में सम्मिलित किया जा सकता है उदाहरण के लिए पराठा, खिचड़ी, सत्तू, महेरी, गादा तथा कोहरी भूमिहीन तथा छोटे कृषकों में प्रातः कालीन भोजन में सामान्य रूप में प्रचलित है जबकि मध्यम तथा बड़े आकार के कृषक परिवारों में हलुआ, पूड़ी दही सत्तू तथा खिचड़ी प्रातः कालीन भोजन में अधिक पसन्द किए जाते हैं । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सम्पूर्ण क्षेत्र में सभी लोग मुख्य भोज्य पदार्थो को ऐन केन प्रकारेण प्राप्त करते हैं क्योंकि वे अपने जीवन यापन हेतु कठोर परिश्रम करते हैं और कटिन परिश्रम के लिए पर्याप्त कार्यशक्ति प्राप्त करने, दूसरे शब्दों में जीने के लिए मुख्य खाद्य पदार्थ ही एक मात्र साधन है ।

एक अन्य महत्वपूर्ण खाद्य आदतों के वर्ग में सहायक खाद्य पदार्थ आते हैं , जिनको सूची नं0 1 मे दर्शाया गया है । सहायक खाद्य पदार्थो का महत्व यह दर्शाता है कि ये खाद्य पदार्थ या तो स्वाद बदलने के लिए मुख्य भोजन के साथ सेवन किए जाते हैं या फिर मुख्य भोजन की मात्रात्मक बृद्धि के लिए प्रयोग किए जाते हैं । स्वाद बदलने के लिए तो कुछ लोगों द्वारा ही इन पदार्थो का सेवन किया जाता है, सामान्यतया इनका प्रयोग अनजाने ही शरीर की अम्लीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए किया जाता है परन्तु फिर भी ये खाद्य पदार्थ लोगों को प्रचुर मात्रा में उपलब्ध नहीं है और इनका प्रयोग अत्यन्त सीमित तथा कम मात्रा में हो पाता है । सर्वेक्षण में यह पाया गया कि अचार, चटनी तथा मट्ठे का प्रचलन इनकी उपलब्धता के आधार पर लगभग सभी वर्गो में है जबकि दही, मुरब्बा, घी तथा मक्खन का प्रचलन कुछ बड़े लोगों तक ही सीमित है । शराब का यदा कदा प्रचलन लगभग सभी वर्गो में न्यूनाधिक मात्रा में पाया गया परन्तु कच्ची शराब, ठेकेवाली तथा अंग्रेजी शराब के सेवन का आधार आय का आकार बताया गया ।

अध्ययन क्षेत्र में खाद्य पदार्थो का एक तीसरा महत्वपूर्ण वर्ग गौंण खाद्य पदार्थ के रूप में सूचीबद्ध किया गया है जिनमें से कुछ स्वादिष्ट तथा यदाकदा अथवा विशेष अवसरों पर ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थ हैं , इनमें से कुछ तो सभी लोगों में प्रचलित महत्वपूर्ण खाद्य पदार्थ है तथा कुछ पदार्थ सामान्य हैं । गौण खाद्य पदार्थो में अनेक खाद्य पदार्थ मिश्रित व्यंजन के रूप में सेवन किए जाते है परन्तु गुणात्मक भिन्नता वाले ये खाद्य पदार्थ लोगों द्वारा स्वल्प मात्रा में ग्रहण किये जाते हैं, क्योंकि इनमें से कुछ तो अत्यन्त मँहगे होने के कारण केवल आर्थिक रूप से सम्पन्न , शिक्षित तथा छोटे आकार वाले कृषक परिवारों की पहुँच में आते हैं जबकि आर्थिक रूप से विपन्न परिवारों की पहुँच से बाहर होने के कारण ये व्यंजन यदा कदा त्यौहारों तथा विशेष अवसरों पर ही सुलभ हो पाते हैं । इन खाद्य पदार्थो का उपयोग परिवार का स्तर, जाति गत परम्परा तथा व्यक्तिगत आर्थिक स्थिति को चित्रित करता है । सूची नं0 1 विभिन्न वर्ग के परिवारों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले शाकाहार तथा माँसाहार खाद्य पदार्थो का चित्र प्रस्तुत कर रही है ।परन्तु इन खाद्य पदार्थो का महत्व और उनका उपयोग भिन्न भिन्न वर्ग के लोगों के लिए भिन्न भिन्न है ।

सूची नं0 1 विभिन्न खाद्य पदार्थ – एक सामान्य सर्वेक्षण ।

मुख्य खाद्य पदार्थ				
भूमिहीन	सीमान्त कृषक	लघु कृषक	मध्यम कृषक	बड़े कृषक
रोटी	रोटी	रोटी	रोटी	रोटी
दाल	दाल	दाल	शब्जी	शब्जी
भात	भात	भात	दाल	दाल
साग	साग	तरकारी	चावल	चावल
तरकारी	चोखा	साग	पराठा	पूड़ी
भर्ता	खिचड़ी	भुर्ता	पूड़ी	पराठा
खिचड़ी	सत्तू	खिचड़ी	खिचड़ी	खीर
खिचरी	लप्सी	पराठा	सत्तू	हलुआ
कोहरी	घुघरी			खिचरी
लप्सी	सालन			सत्तू
करायल				

सहायक खाद्य पदार्थ				
चटनी	चटनी	चटनी	अचार	अचार
महेरी	कढ़ी	अचार	मुरब्बा	चटनी
कढ़ी	महेरी	महेरी	चटनी	मुरब्बा
मठ्ठा	मट्ठा	कढ़ी	दही	रायता
		मट्ठा	रायता	दही
			घी	घी
				सलाद

गौण खाद्य पदार्थ

भूमिहीन	सीमान्त कृषक	लघु कृषक	मध्यम कृषक	बड़े कृषक
परांठा	परांठा	पूड़ी	पूड़ी	पूड़ी
चिल्ला	पुआ	पुआ	कचौड़ी	दही
भकोसा	सेवंई	परांठा	मालपुआ	कचौड़ी
दालपूरी	दालपूरी	सेंवई	हलुआ	मालपुआ
बेढ़ई	कचौड़ी	दही	पकौड़ी	चिनी की पूड़ी
गुलगुला	चौसेला	सिंघाड़ा	सिंघाड़ा	शकरपारे
फुलौरी	बेढ़ई	मुगौरा	खीर	पकौड़ी
गादा	चिल्ला	बरा	दही बरा	सेंवई
सेंवई	भकोसा	गादा	मुगौरा	बिस्कुट
पकौड़ी	घट्टा	आलू बड़े	कुम्हड़ौरी	दालमोठ
पुआ	गादा	बेढ़ई	चावलवरी	चाय
लाईचना	गुलगुला	मिथौरी	चिप्स	आलू चाप
पंजीरी	बरा	निमोना	मठरी	आलू पापड़
पेठा	मुगौरा	कचौड़ी	बिस्कुट	चावलबरी
खोया	मलीदा	पकौड़ी	चाय	सिंघारा
जलेबी	जलेबी	गादा	नमकीन	मुगौड़ा
पेड़ा	लड्डू	जलेबी	सोहन पापड़ी	बरा
भूँजा	पंजीरी	लड्डू	पेड़ा	कुम्हड़ौरी
मछली	बतासा	बतासा	जलेबी	सोनपापड़ी
मांस	मछली	आलू पापड़	बर्फी	लड्डू
अण्डे	मांस	चिप्स	आलू पापड़	गुलाब जामुन
	अण्डे	चावलवरी	मांस	बर्फी
		मछली	मछली	पेड़ा
		मांस	अण्डे	मांस फल
		अण्डे	चाट फल	

भूमिहीन	सीमान्त कृषक	लघु कृषक	मध्यम कृषक	बड़े कृषक
		गुलगुला	भूँजा	–
		चौसेला	रसियाउर	रसियाउर
		चिल्ला	गुलगुला	जलेबी
		रसियाउर	निमोना	सेंवई
			सिंघाड़ा	बालूसाही
			गादा	चाट
			कोहरी	भूँजा
			सोयाबीनवरी	आलू बड़े
				निमोना
				गादा
				सिंघाड़ा
				कोहरी
				सोयाबीनवरी

मौसम के अनुसार खाद्य पदार्थो की क्षेत्रीय उपलब्धता गौंण खाद्य पदार्थो के उपभोग की महत्वपूर्ण निर्धारक होती है, ये खाद्य पदार्थ लगभग सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में वर्ष के कुछ दिवसों में ही उपभोग किए जाते हैं । अतः विभिन्न वर्ग के लोगों द्वारा वर्ष में इनकी मात्रा तथा उपभोग अवधि की गणना करना एक अत्यन्त दुष्कर कार्य है परन्तु फिर भी अनेक तर्क वितर्को के उपरान्त निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि मुख्य खाद्य पदार्थ तथा सहायक खाद्य पदार्थ वर्ष के अधिकांश दिवसों में उपभोग किए जाते है और गौण खाद्य पदार्थ स्वाद बदलने के लिए या विशेष अवसरों पर या त्यौहारों पर अथवा स्वास्थ्य लाभ या व्यक्तिगत रुचि के लिए सेवन किए जाते हैं ।

परम्परागत खाद्य पदार्थो की पहचान के लिए पुनः खाद्य पदार्थो को तीन भागों में बाँटा गया है जिन्हें सूची नं0 2 में वर्गीकृत करके रखा गया है । इनमें से प्रथम वर्ग में परम्परागत सामान्य खाद्य पदार्थ, दूसरे वर्ग में विशिष्ट खाद्य पदार्थ तथा तीसरे वर्ग में आधुनिक खाद्य पदार्थ रखे गये हैं । खाद्य पदार्थो की इस पहचान का उद्देश्य

यह है कि वर्षभर सेवन किए जाने वाले विभिन्न क्षेत्रीय खाद्य पदार्थो को क्षेत्रीय परम्परागत खाद्य पदार्थ तथा ग्रहण किए गये (गैर परम्परागत (खाद्य पदार्थो को अलग–अलग विभाजित किया जा सके । पराम्परागत खाद्य पदार्थ कृषकों द्वारा अपने खेतों पर अथवा क्षेत्र में उत्पन्न किए जाते हैं, जबकि ग्रहण किए जाने वाले (तदर्थ(खाद्य पदार्थ या तो बाजार से अपक्व रूप में क्रय करके खाने योग्य तैयार किए जाते हैं अथवा खाने योग्य परिपक्व अवस्था में बाजार से क्रय करके उपभोग किए जाते हैं ।

सूची नं0 2 परम्परागत तथा गैर परम्परागत खाद्य पदार्थो का वर्गीकरण ।

भूमिहीन	सीमान्त कृषक	लघु कृषक	मध्यम कृषक	बड़े कृषक
		परम्परागत सामान्य खाद्य पदार्थ		
रोटी, दाल, भात, तरकारी, शब्जी, साग, सत्तू, खिचरी, दूध, घी, दही, माठा. कढ़ी महेरी, गादा, कोहरी	रोटी, दाल, भात, तरकारी, साग, सत्तू खिचरी, दूध, घी, दही, माठा. महेरी, कढ़ी, लप्सी, गादा, घुघरी, शब्जी	रोटी, दाल, भात, तरकारी, सत्तू, खिचरी, परांठा. दूध, घी, दही, महेरी, माठा. कढ़ी, शब्जी ।	रोटी, दाल, चावल, शब्जी, खिचरी, सत्तू, महेरी, माठा. दूध, घी, परांठा ।	रोटी, शब्जी, दाल, चावल, खिचरी, सत्तू, महेरी, माठा. दूध, घी, दही, परांठा ।
		विशिष्ट खाद्य पदार्थ		
दाल, पूड़ी, परांठा. कचौड़ी, बेढ़ई, भकोसा. सेंवई, गुलगुला, चिल्ला, करायल, लप्सी	पुआ, परांठा. सेंवई, दाल, पूड़ी, कचौड़ी, मलीदा. चौसेला, बेढ़ई, गुलगुला, भकोसा, चिल्ला, बरा. मुगौरा. सालन. चोखा, पंजीरी, घट्टा	पूड़ी, पुआ, कचौड़ी, सेंवई, गादा, पंजीरी, बेढई, चौसेला, रसियाउर. परांठा, आलूबड़े, सिंघाड़ा, चिल्ला	पूड़ी, मालपुआ, कचौड़ी, खीर, सेंवई, रसियाउर, निमोना, गादा, कोहरी, फल, कढ़ी	पूड़ी, कचौड़ी, खीर. मालपुआ, शकरपारे, सेंवई, रसियाउर, निमोना, आलू बड़े, हलुआ, कोहरी
		आधुनिक खाद्य पदार्थ		
पकोड़ी, जलेबी, पेठा, मांस, मछली, बिस्कुट, नमकीन, मिठाई, बतासा, अण्डे	जलेबी, लड्डू, मछली, मांस, पकौड़ी, आलूचिप्स, बिस्कुट, मिठाई, अण्डे	पकौड़ी, दालमोठ, सिंघाड़ा, लड्डू, बतासा. जलेबी, आलू बड़े, आलू पापड़, चिप्स, चावलवरी, मछली, मांस, डबलरोटी, बिस्कुट, नमकीन, अण्डे	पकौड़ी, बिस्कुट, नमकीन, मछली, मांस, सोहनपापड़ी, जलेबी, बच्चों के खाद्य दही बरा. मुगौड़ा, आलू पापड़, चाट. रायता. मुरब्बा, मिठाई, अण्डे, सलाद, सोयाबीन वरी	पकौड़ी, बिस्कुट, दालमोठ, आलूदम सोहनपापड़ी, मिठाई, चाट. पोलाव, बच्चों के खाद्य, चिप्स आलू पापड़, चावलवरी, मुगौरा. मांस, मछली, तस्मई, मुरब्बा, मेवा. अण्उे, डबलरोटी, सलाद, सोयाबीनवरी, सूतफेनी

सूची नं0 2 वर्गीकृत सामान्य खाद्य पदार्थ सभी क्षेत्रों में सामान्य रूप से उपभोग किए जाते हैं । ये खाद्य पदार्थ सम्पूर्ण रूप से क्षेत्रीय हैं तथा अति प्राचीन समय से प्रचलन में हैं । इस सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि रोटी, दाल, भात/चावल तरकारी /शब्जी, सत्तू, खिचरी अध्ययन क्षेत्र के सभी लोगों के लिए प्रमुख खाद्य हैं । विशिष्ट खाद्य पदार्थों को इस अर्थ में विशिष्ट कहा जाता है कि ये अधिकांश विशिष्ट अवसरों पर अथवा व्यक्तिगत इच्छानुसार ही उपभोग किए जाते हैं । अधिकाँश आधुनिक खाद्य पदार्थ या तो क्षेत्रीय साप्ताहिक बाजारों से या अर्द्धशहरी बाजारों से क्रय किए जाते हैं । इन खाद्य पदार्थों में वे पदार्थ भी सम्मिलत हैं जो भोजन की आँशिक पूर्ति करते हैं अथवा नाश्ते के रूप में ग्रहण किए जाते हैं, इनमें से कोई भी पदार्थ सम्पूर्ण भोजन का स्थान नहीं ग्रहण कर पाता है । इस प्रकार यह वर्गीकरण परम्परागत तथा आधुनिक खाद्य पदार्थों के मध्य एक विभाजन रेखा खींचने में सहायक हो सकता है ।

खाद्य पदार्थों का एक अन्य महत्वपूर्ण वर्गीकरण उनके उपभोग का आवृत्ति के अनुसार किया गया है, जिसे विभिन्न जातियों के उपभोग के महत्व के आधार पर सूची नं03 में प्रस्तुत किया गया है । उपभोग की आवृत्ति के अनुसार खाद्य पदार्थों का वर्गीकरण सामाजिक ढाँचे की भोजन व्यवस्था समझने में सहायक हो सकता है । सूची में प्रस्तुत अतिउच्च आवृत्ति का अर्थ है कि वर्ष में ये खाद्य पदार्थ लोगों के भोजन में 70 प्रतिशत से अधिक की भागेदारी करते हैं । उच्च आवृत्ति के अन्तर्ग्रत वे खाद्य पदार्थ आते हैं जिनकी भागेदारी 40 से 70 प्रतिशत के मध्य रहती है । निम्न आवृत्ति 10 से 40 प्रतिशत के मध्य भागेदारी को प्रकट करती है जबकि अतिनिम्न आवृत्ति के अन्तर्गत 10 प्रतिशत से कम या यदा कदा ही उपभोग किए जाने वाले खाद्य पदार्थ रखे गये हैं । इन खाद्य पदार्थों का सेवन आर्थिक प्रतिष्ठा, अनिवार्य सामाजिक परम्पराओं अथवा निजी रुचियों के निर्वहन के लिए किए जाते हैं । इस प्रकार का वर्गीकरण करने पर देखा गया कि विभिन्न जातियों के मध्य तुलनात्मक रूप में कुछ अधिक ही अन्तर विद्यमान है । यह वर्गीकरण यह तथ्य भी स्पष्ट करता है कि परम्परागत खाद्य आदतों के कारण विभिन्न वर्ग के लोग उन खाद्य पदार्थों के उपभोग में विशेष रुचि रखते हैं जिन्हें वे एक लम्बे समय से उपभोग करते आ रहे हैं, उदाहरण के लिए विभिन्न जातियों के मध्य रोटी और दाल का उपभोग अति उच्च आवृत्ति प्रदर्शित करता है ।

सूची नं0 3 से यह तथ्य भी स्पष्ट होता है कि हरिजन परिवारों के सम्बन्ध में तथा कुछ हद तक पिछड़ी जातियों में यह देखा गया है कि विभिन्न खाद्य पदार्थो के उपभोग की आवृतित मौसम के अनुसार खाद्य पदार्थो की क्षेत्रीय उपलब्धता पर भी निर्भर करता है । उदाहरण के लिए सभी जातियों में रोटी का उपभोग अति उच्च आवृत्ति का प्रदर्शन कर रहा है परन्तु उच्चजातियों में सामान्यतया गेहूँ की रोटी प्रचलन में अधिक है जबकि मोटे अनाजों तथा मक्का, ज्वार, बाजरा का उपभोग रोटी के रूप में अत्यन्त सीमित है जबकि हरिजन परिवारों तथा कुछ हद तक पिछड़ी जातियों के परिवारों में सितम्बर से फरवरी तक मोटे अनाजों का प्रचलन है और गेहूँ की रोटी का उपभोग इन परिवारों में अत्यन्त सीमित है, मोटे अनाजों में भी दिसम्बर से फरवरी तक इन जातियों के भोजन में भात का प्रमुख स्थान रहता है । यह भी देखा गया है कि एक ही खाद्य पदार्थ का विभिन्न जातियों में भिन्न-भिन्न पद्धति से उपभोग प्रचलन है, सामान्यतया किसी खाद्य पदार्थ के उपभोग की पद्धति लोगों की आर्थिक स्थिति से प्रभावित होती है उदाहरण के लिए कच्चे-पक्के ज्वार से तेयार होने वाला गादा, गेहँ -चना से तैयार होने वाली कोहरी तथा बाजरा और मकका से निर्मित होने वाली घुघरी, हरिजन तथा पिछड़ी जातियों के निम्न आय वर्ग के लोगों में केवल उबालकर तथा नमक मिलाकर सेवन करने का प्रचलन है जबकि उच्च आय वर्ग के लोगों में उक्त खाद्य सामग्री में मिर्च, मसाले, खटाई आदि मिलाकर अथवा तलकर खाने का प्रचलन है । कुछ खाद्य पदार्थो के सम्बन्ध में यह देखा गया कि कुछ लोगों द्वारा इनका सेवन सामाजिक संस्कृति का एक अनिवार्य अंग है, परन्तु कुछ लोगों का जीवन पद्धति में इनका सेवन पूर्णतया वर्जित है, जैसे मांस, मछली का सेवन मुस्लिम संस्कृति में पारम्परिक रूप से अनिवार्य है, परन्तु कुछ हिन्दू परिवारों में इनका प्रयोग पूर्णतया वर्जित है अन्य मध्यभार्गी परिवारों में भी मांस-मछली का प्रयोग पूर्णतया स्वतंत्र नहीं है इसी कारण उनमें भी मांसाहारी आँशिक रूप से प्रयोग किया जाता है । हरिजन परिवारों में तो ऐसे अनेक परिवार प्राप्त हुए जिनके समस्त सदस्य मांसाहारी हैं परन्तु मांसाहारी अत्यन्त मंहगा होने के कारण लोग चाहकर भी स्वतंत्र उपभोग से वँचित हैं और अत्यन्त सीमित मात्रा में ही प्रयोग कर पा रहे हैं । हरिजन तथा मुस्लिम परिवारों को छोड़कर अन्य कोई भी जाति का कोई ऐसा परिवार प्राप्त नहीं हुआ जिसके समस्त सदस्य मांसाहारी प्रवृत्ति के हों । इसी प्रकार यह भी देखा गया कि कुछ खाद्य पदार्थो को पकाने की कुछ परिवारों में अत्यन्त सरल विधि है जबकि कुछ परिवारों में इन खाद्य पदार्थो की पकाने की विधि अत्यन्त जटिल है । उच्च जाति की अधिकांश महलाओं में यह प्रवृत्ति पाई गई कि उनके लिए स्वादिष्ट , उत्तम तथा जटिल पद्धति से खाना पकाना एक सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रश्न होता है ओर एक ही खाद्य पदार्थ को विभन्न विधियों से तेयार करना उनकी पाक विद्या की श्रेष्ठता तथा पाक कुशलता का प्रतीक माना जाता है, जबकि हरिजन तथा पिछड़ी जातियों के परिवार की महिलाओं में पुरुषों के समान शारीरिक श्रम तथा कार्यकुशलता को ही महत्व प्रदान किया जाता है ।

सूची–3 खाद्य पदार्थो के उपभोग की तीव्रता ।

अति उच्च आवृत्ति	उच्च आवृत्ति	निम्न आवृत्ति	अतिनिम्न आवृत्ति
		उच्च जाति	
रोटी(गेहूँ)दाल (अरहर) दूध	सत्तू(मकका, चना जौ) परांठा, खिचरी, शब्जी	रोटी(ज्वार, बाजरा, मक्का) चावल पूड़ी, खीर, हलुआ, दही, अचार, चटनी, मुरब्बा, घी, रायता, सेंवई, कचौड़ी, दाल (उर्द/मूँग/चना) मिठाई, खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, सूतफेनी ।	मालपुआ, शकरपारे, रसियाउर, पकौड़ी, बिस्कुट, दालमोठ, पुआ, गादा, कोहरी, भूँजा, सिंघाड़ा, आलूदम, आलूचिप्स, चावलवरी, कुम्हड़ौली, मिथौरी, साग, निमोना, कढ़ी, महेरी, साग, करायल, समोसा, माठा, डबलरोटी, मांस, मछली, अण्डे, समोसा, फल सोयाबीन वरी ।
		पिछड़ी जाति	
रोटी(मक्का, ज्वार, बाजरा) दाल(चना, मटर, अरहर), सत्तू ।	तरकारी(हरी शब्जियां) खिचरी, गादा, कोहरी, साग(पत्तेदार) माठा, भुर्ता ।	कढ़ी, महेरी, चटनी, करायल, सालन, परांठा, भकोसा, लप्सी, बहुरी, घुघरी, मिठाई, दूध(अधिकांश बच्चों को) रोटी (गेहूँ), लप्सी ।	दालपूड़ी, बेढ़ई, पकौड़ी चौसेला, गुलगुला मलीदा, सेंवई, शमोसा, घी खरबूजा, तरबूज, दही, अचार, सिंघाड़ा, अण्डे, पूड़ी, कचौड़ी, पुआ, दाल (उर्द/मूँग) अमरूद, बेर ।
		हरिजन जाति	
रोटी(मक्का, ज्वार, बाजरा), भात, गादा, कोहरी, साग, सालन, तरकारी, भुर्ता	सत्तू, खिचरी, लप्सी, करायल, महेरी	दाल(अरहर, चना, मटर) रोटी(गेहूँ) कढ़ी, चटनी, भकोसा, बहुरी, जलेबी, माठा, मछली, मांस	पराठा, पूड़ी, कचौड़ी, चौसेला, चिल्ला, गुलगुला, सेंवई, पकौड़ी, निमोना, दालपूड़ी, पुआ, अचार, सिंघाड़ा, पुआ, दूध (अधिकांश बच्चों को) अण्डे, दाल (उर्द/मूँग) खरबूजा, तरबूज, अमरूद ककड़ी, बेर, मिठाई
		मुस्लिम जाति	
रोटी, (मक्का, ज्वार, बाजरा, गेहूँ) दाल (अरहर, चना), चावल	दाल(उर्द/मूँग) तरकारी, शब्जी पुलाव, मांस, मछली, अण्डे, सेंवई	गादा, कोहरी, विरियानी, चटनी, खरबूजा, तरबूज, माठा, घी, सोयाबीन बरी, सूतफेनी ।	बिस्कुट, डबलरोटी, सलाद, तस्मई, खीर, रसियाउर, चाट, रायता, बरा, मुगौरा, बरा, चिप्स, पापड़, चावलवरी, समोसा, अचार, मुरब्बा, आम, दूध, सिंघाड़ा, दालमोठ, फल, मिठाई, कवाब ।

अध्ययन क्षेत्र में प्रचलित आहार प्रतिरूप को समग्र रूप से देखने पर यह तथ्य स्पष्ट होता है कि उपलब्ध समस्त क्षेत्रीय खाद्य पदार्थों को या तो अपक्व या पकाकर या उबालकर या तलकर एकत्र रूप में अथवा अन्य खाद्य पदार्थों के साथ मिश्रित रूप में उपभोग करने का प्रचलन है, परन्तु भोजन पकाने की विधि एक वर्ग से दूसरे वर्ग में अथवा एक परिवार से दूसरे परिवार में भिन्न–भिन्न विधि प्रचलित है । भोजन पकाने के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि उच्च जाति की महिलाओं में विभिन्न खाद्य पदार्थों को पकाने की विभिन्न विधियां, सामाजिक श्रेष्ठता, प्रतिष्ठा अथवा उच्च सामाजिक गुण तथा विभिन्न महिलाओं के मध्य सम्बन्ध स्थापन में एक पुल का कार्य करती है । इस सबके बावजूद भी पुरुषों तथा महिलाओं दोनों में सन्तुलित आहार, पौष्टिक भोजन तथा कुपोषण के ज्ञान का सर्वथा अभाव पाया गया ।

6.3 कृषकों का आहार सन्तुलन पत्रक :

इस शीर्षक के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र के लोगों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थों तथा खाद्य सम्बन्धी आदतों को समझने का प्रयास किया गया है । इस सम्बन्ध में यह देखने में आया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में भी आधुनिक शहरी संस्कृति की घुसपैठ तेजी से बढ़ रही है परिणामस्वरूप लोगों की भोजन पद्धति में भी तेजी से परिवर्तन होता जा रहा है । **प्रकाश विश्व**[11] के अनुसार परिवर्तन के इस दौर में लोगों द्वारा कम पोषक तत्वों से युक्त क्षेत्रीय खाद्य पदार्थों का परित्याग कर अधिक पोषक तत्वों से युक्त खाद्य पदार्थों को महत्व दिया जाने लगा है, परन्तु यह परिवर्तन अभी तक बहुत सीमित स्तर तक ही देखने में आता है और जिन परिवारों का आर्थिक स्तर ऊँचा है या जो परिवार शिक्षित है, केवल उन्हीं परिवारों में भोजन की पौष्टिकता की ओर कुछ ध्यान आकर्षित किया जा रहा है, परन्तु सन्तुलित और पौष्टिक भोजन में विभिन्न खाद्य पदार्थों का संयोजन किस प्रकार किया जाये , इस बारे में ग्रामीण क्षेत्र अभी तकव अनजान है ।

अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न प्रमुख खाद्य पदार्थों का प्रबन्ध खाद्य पदार्थों की क्षेत्रीय उपलब्धता , बाजार से क्रय विक्रय तथा खाद्य पदार्थों के एकत्रण ~~खाद्य पदार्थों का एकत्रण~~ उन विभिन्न जातियों द्वारा किया जाता है जो ग्रामीण क्रियाओं में संलग्न रही है इनमें से नाई,, धोबी, कहार, कुम्हार, चमार, लुहार, बढ़ई, धानुक, मेहतर तथा मनिहार आदि प्रमुख हैं । इन जातियों के परिवारों के प्रमख अपने कृषकों से वर्ष में अपनी सेवाओं के बदले एक निश्चित मात्रा में खाद्यान्न प्राप्त करते हैं । इन खाद्य पदार्थों को एकत्रित करके ये जातियां उपभोग करती हैं । दूसरे महत्वपूर्ण पक्ष में दैनिक, साप्ताहिक तथा विशिष्ट अवसरों पर ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थों को सम्मिलित किया जा सकता है, इसके अतिरिक्त गर्भवती महिलाओं, शिशु जन्म के बाद तथा शिशुओं को दूध पिलाती माताओं की खाद्य आदतों को सम्मिलित किया जा सकता है । 3 वर्ष से कम आयु के बच्चों को दिए जाने वाले खाद्य पदार्थ

विवाहोत्सव तथं अन्त्येष्टि सम्बन्धी धार्मिक कृत्य सम्पन्न करने के अवसर दिए जाने भोज आदि में सम्मिलित खाद्य पदार्थों का क्षेत्रीय खाद्य आदतों में महत्वपूर्ण स्थान होता है । लोगों द्वारा प्रातः कालीन, मध्यान्ह तथा सान्ध्यकालीन भोजन में ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थों के साथ–साथ , कार्य दिवसों तथा अवकाश दिवसों में की जाने वाली खाद्य व्यवस्था. लोगों द्वारा अपने वर्ग के रिश्ते नातेदारों, अन्य जातियों के आगन्तुकों तथा धार्मिक क्रिया कलाप सम्पन्न कराने वाले पुरोहितों, मौलवियों आदि के लिए की जाने वाली भोजन व्यवस्था को भी इसी शीर्षक के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि भोजन न केवल लोगों को कार्यशक्ति प्रदान करता है बल्कि सामाजिक क्रिया कलापों के निर्वहन में व्यक्तिगत तथा सामाजिक सम्बन्धों के निर्धारण में भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है ।

अध्ययन क्षेत्र में जब समस्त ग्रामीण जनों की खाद्य आदतों के एकीकरण अथवा तुलनात्मक सन्तुलन स्थापित करने का प्रयास किया गया तो विभिन्न वर्ग के लोगों अथवा एक ही वर्ग के विभिन्न लोगों की खाद्य आदतों में स्पष्ट करना एक अत्यन्त कठिन कार्य प्रतीत हुआ क्योंकि विभिन्न लोगों द्वारा खाद्य पदार्थों के चुनाव में उनका अपना दृष्टिकोण महत्वपूर्ण होता है और यह दृष्टिकोण उनके आर्थिक स्तर, विभिन्न खाद्य पदार्थों की सामाजिक स्वीकृति, खाद्य पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों के ज्ञान का स्तर, खाद्य पदार्थों की सामाजिक उपलब्धता तथा कभी कभी खाद्य पदार्थों के संयोजन और उनको पकाने की विधि सम्बन्धी जटिलताएं आदि पर निर्भर करता है । इसीलिए विभिन्न लोगों द्वारा खाद्य पदार्थों के चुनाव में भिन्न भिन्न मत व्यक्त किए गये ।

<u>खाद्य पदार्थों की उपलब्धता तथा सुरक्षा :</u>

विभिन्न वर्ग के लोगों द्वारा प्रमुख खाद्य पदार्थों का प्रबन्ध अनेक साधनों द्वारा किया जाता है । खाद्य पदार्थों की उपलब्धता का महत्वपूर्ण साधन कृषि उत्पादन अथवा क्रय विक्रय अथवा खाद्यान्नों का एकत्रण अथवा यदा कदा वस्तुविनिमय प्रणाली प्रचलित है । 70 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या खाद्यान्नों तथा दालों को या तो अपने खेत में उतपादित करती है अथवा क्रय करती है । यदि इन पदार्थों को एकत्रित करने वाली जनसंख्या को इसमें जोड़ दिया जायेय तो यह 84 प्रतिशत से भी अधिक हो जाती है । वस्तु विनिमय प्रणाली भी इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण भागेदारी करती है जिसके द्वारा भी खाद्य पदार्थों का प्रबन्ध किया जाता है । इस प्रकार खाद्यान्नों तथा अन्य खाद्य पदार्थों को मुख्य रूप से कृषि उत्पादन, क्रय, विक्रय तथा एकत्रण /संग्रहण द्वारा किया जाता है ।

सर्वेक्षण में यह पाया गया कि कुछ परिवार प्रमुख खाद्य पदार्थो के अतिरिक्त अन्य खाद्य पदार्थो का भी उत्पादन करते हैं जैसे शब्जियाँ , फल, मुर्गीपालन द्वारा अण्डे तथा मांस , पशपालन द्वारा दूध बकरीपालन द्वारा, दूध तथा मांस, सुअरपालन तथा मछलीपालन द्वारा मांस गन्ने द्वारा गुड़ आदि , परन्तु कोई भी परिवार अकेले स्वयं के उत्पादन द्वारा अपनी तथा अपने परिवार की समस्त आवश्यकताओं की आपूर्ति नहीं कर सकता है, इस लिए वे अन्य सहायक खाद्य पदार्थो को क्रय करके अपनी खाद्य आवश्यकताओं की आपूर्ति करते हैं । सामान्यता क्रय किए जाने वाले खाद्य पदार्थो को क्षेत्रीय साप्ताहिक बाजार अथवा अर्द्धशहरी बाजार से खरीदा जाता है । क्रय किए जाने वाले खाद्य पदार्थो के एक भाग की आपूर्ति ग्रामीण व्यापारी जो अपने निजी आवासों पर दुकान रखकर क्रय विक्रय सम्पन्न करते हैं तथा मौसमी खाद्य पदार्थो को फेरी लगाने वाले भी ग्रामीणों को क्रय करके उपभोग करने की सुविधा प्रदान करते हैं । वास्तव में यह व्यवस्था एक ग्रामीण अधिवासीय व्यवस्था के अन्तर्गत आता है , यह व्यवस्था एक ग्रामीण परिवार के लिए ग्रामीण सुविधाओं का निर्धारण करती है । इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि देश और प्रदेश की भाँति अध्ययन क्षेत्र का अधिकांश ग्रामीण वर्ग (84 प्रतिशत से अधिक) भावी उपभोग के लिए खाद्य पदार्थो में प्रमुख रूप से खाद्यान्नों का संरक्षित भण्डारण करके रखते हैं क्योंकि अधिकांश ग्रामीणों के जीवन यापन का आधार कृषि है इसलिए वे यथासम्भव कृषि उपज के भण्डारण को प्राथमिकता देते हैं ।

खाद्यान्नों के साथ –साथ दूसरा महत्वपूर्ण खाद्य पदार्थ अचार होता है जिसके संरक्षित भण्डारण की आवश्यकता होती है, अध्ययन क्षेत्र में लोग अचार बनाने के लिए आम, नीबू , मिर्च, इमली, ऑवला, लभेड़ा तथा सिंघाड़े आदि खाद्य पदार्थो का उपभोग करते हैं ।शीघ्र नष्ट होने वाले अन्य खाद्य पदार्थो तथा फलों का भण्डारण नहीं किया जाता है अतः इन खाद्य पदार्थो का उपभोग मौसमी उत्पादन के अनुसार किया जाता है । यद्यपि इन खाद्य पदार्थो के संरक्षित भण्डारण की क्षेत्र में तीव्र आवश्यकता है परन्तु आलू के भण्डारण के अतिरिक्त अन्य पदार्थो के भण्डारण की सुविधाओं का क्षेत्र में नितान्त अभाव है । इसलिए कुछ विशेष अवसरों को छोड़कर नाते रिश्तेदारों को भी लोगों द्वारा सामान्य भोज्य पदार्थ ही प्रस्तुत किए जाते हैं । कृषि फसलों को पुनः उगाने के लिए बीज के रूपमें भी कुछ खाद्यान्नों का भण्डारण कृषकों द्वारा किया जाता है ।

खाद्य पदार्थो की आपूर्ति के स्रोत :

ग्रामीण परिवारों के दृष्टिकोण से घर के अतिरिक्त भोज्य पदार्थो के प्राप्त करने के स्रोतों में भोजनालय तथा जलपानग्रह प्रमुख होते हैं कुछ खाद्य पदार्थो को गाँवों में फेरीलगाने वालों से क्रय किए जा सकते हैं सर्वेक्षण के समय यह देखा गया कि ग्रामीण क्षेत्रों की 78.5 प्रतिशत जनसंख्या आवश्यकता पड़ने पर खाद्य पदार्थों

को प्राप्त करने के लिए भोजनालय तथा जलपानगृह की शरण ले सकते हैं, जबकि 39.5 प्रतिशत लोगों ने फेरी लगाने वाले तथा सड़कों के किनारे बैठने वाले खाद्य पदार्थों के विक्रेताओं से भोज्यय पदार्थों को क्रय यकरके उपभोग करने से स्पष्ट इन्कार किया । सामान्यतया भोजनालय तथा जलपानगृह से क्रय करके उपभोग किए जाने वाले भोज्य पदार्थों में रोटी चावल, शब्जी , दाल ,चटनी आदि तथा सहायक खाद्य पदार्थों में चाय, नमकीन, कचौड़ी, पकौड़ी, भुजिया, जलेबी, खस्ता तथा मिष्ठान आदि प्रमुख हैं । स्टालों तथा फेरी लगाने वालों से शब्जियां मौसमीफल, आइसकैण्डी, मीठी पापड़ी तथा चाट आदि क्रय करके उपभोग का प्रचलन है । बाजार से भी अपने बच्चें के उपभोग के लिए यदा कदा मीठे खाद्य पदार्थो को क्रय करके लाने का भी प्रचलन है ।

लोगों की खाद्य आवश्यकताएं :

ग्रामीण लोगों द्वारा प्रतिदिन तथा विशिष्ट अवसरों पर उपभोग किए जाने वाले खाद्य पदार्थों की विस्तृत जानकारी के आधार पर ही उनकी खाद्य आदतों की व्याख्या की जा सकती है । **स्वामीनाथन** [12] के एक प्रतिवेदन के आधार पर क्षेत्र में प्रातः किए जाने वाले खाद्य पदार्थों में जिसे क्षेत्रीय भाषा में नाश्ता, चवेना तथा कलेवा आदि के नाम से जाना जाता है, सामान्य रूप से परांठा , अचार, सत्तू तथा महेरी का प्रचलन है कुछ परिवार इन खाद्य पदार्थों के साथ पेय पदार्थ जैसे दूध, चाय , माठा आदि का भी सेवन करते हैं , कुछ परिवार दूध से बने पदार्थो जैसे खीर, सेंवई, दही, का सेवन प्रातः कालीन नाश्ते में करते हैं । कुछ परिवार मौसमी उपलब्धता के आधार पर कोहरी, गादा, भूँजा, चिल्ला, चौसेला आदि खाद्य पदार्थ नाश्ते में लेना पसन्द करते हैं , यदा कदा नाश्ते में पूड़ी, कचौड़ी,पकौड़ी, आलू बंडे आदि का भी प्रचलन है परन्तु ये पदार्थ आर्थिक रूप से सम्पन्न परिवारों द्वारा ही सेवन किए जाते हैं । मध्यान्ह का भोजन जिसे क्षेत्रीय भाषा में खाना कहा जाता है , में रोटी , दाल, भात, तरकारी, सालन प्रमुख रूप से उपभोग किए जाते हैं । कुछ परिवारों में इस समय मांसाहारी भोजन भी प्रचलित है । संध्याकालीन भोजन जिसे क्षेत्रीय भाशा में बयारु के नाम से जाना जाता है में भी मध्यान्ह के भोजन में प्रचलित खाद्य पदार्थों का ही अधिकांश प्रचलन है । मांसाहारी अधिकांश हिन्दू परिवार सांध्यकालीन भोजन में मांसाहार को प्राथमिकता देते हैं । परम्पराएं तथा निर्धनता लोगों में विशिष्ट प्रकार के खाद्य पदार्थ तथा मांसाहार को हतोत्साहित करती हैं । यही नहीं निर्धन परिवारों के लिए उनकी निर्धनता सामान्य भोज्य पदार्थों की आवश्यक मात्रा में उपभोग में भी एक बड़ी बाधा है । जिससे निम्न जाति के कठिन परिश्रम करने वाले लोगों में मादक पेय पदार्थों के सेवन की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है । निर्धनता के कारण ग्रामीण समाज का एक बड़ा वर्ग इस स्थिति में नहीं है कि वह अपने सामान्य भोजन में किसी विशिष्ट खाद्य पदार्थ का समायोजन कर सके । लगभग 16 प्रतिशत परिवार ही विशेष आहार के अन्तर्गत विशिष्ट शाकाहारी भेंजन ग्रहण कर सकते हैं, मुस्लिम परिवारों को छोड़कर लगभग 6 प्रतिशत हिन्दू परिवार ही सामान्य भोजन में मांसाहार अथवा अन्य विशिष्ट खाद्य पदार्थ सेवन करने की स्थिति में है ।

सिंह 13 के अनुसार विशिष्ट खाद्य पदार्थो की श्रेणी में गर्भवती महिलाओं , शिशुजन्म के बाद जच्चा महिलाओं , शिशुओं को दूध पिलाती माताओं, बच्चों , जन्मोत्सव, वैवाहिक समारोहों, मृत्यु संस्कारों के विशेष अवसरों पर तथा विशिष्ट अतिथियों के आगमन पर तैयार किए जाने वाले भोज्य पदार्थ आते हैं । अध्ययन क्षेत्र में अधिकांश लोग अब गर्भवती महिलाओं बच्चों तथा शिशुओं को दूध पिलाने वाली माताओं को परिष्कृत शाकाहारी खाद्य पदार्थो के सेवन करने लगे हैं । गर्भधारित महिलाओं के लिए गर्म तासीर वाला तथा खट्टे खाद्य पदार्थो का सेवन निषिद्ध माना जाता है और शिशु जन्म के बाद जच्चा महिलाओं को यदि सम्भव हो तो भोजन में घी और दूध को शामिल करना श्रेयष्कर समझा जाता है तथा उनके भेजन में खाँड़, हल्दीयुक्त भोज्य,सुठौरा और हरीरा आदि की अधिक मात्रा रखना पसंद किया जाता है । कुछ ही परिवार जो मांसाहारी खाद्य पदार्थो के सेवन को प्राथमिकता देते हैं , नवजात शिशु की मां को केवल उबले हुए मांसाहारी खाद्य पदार्थो की अनुमति दे देते हैं । इसी प्रकार 3 वर्ष से कम आयु के बच्चों के खान पान पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता अनुभव की जाती है । जिस कारण लगभग 66 प्र तिशत परिवारों द्वारा ऐसे बच्चों को मां के दूध पर पूर्णतया निर्भर बताया गया. जबकि लगभग 30 प्रतिशत परिवारों में बच्चों के खाद्य पदार्थो में गाय /भैंस का दूध, शिशु आहार, स्वास्थ्यवर्धक एवं भरपूर पोषक तत्वों से युक्त टानिक , फल, बिस्कुट आदि को भी सम्मिलित करते हैं , परन्तु इन पदार्थो की मात्रात्मक उपलब्धता का निर्धारण परिवारों का आर्थिक स्तर करता है । जब हम जन्मोत्सव संस्कार, वैवाहिक संस्कार तथा मृत्यु संस्कार पर तैयार किए जाने वाले खाद्य पदार्थो पर दृष्टि डालते हैं तो सामान्य रूप से शाकाहारी भेजन की प्रधानता पाई गई, परन्तु मुस्लिम परिवारों में ऐसे विशेष अवसरों पर शाकाहारी तथा मांसाहारी दोनों प्रकार के खाद्य पदार्थो का प्रचलन है । हिन्दू परिवारों में लगभग 36 प्रतिशत परिवार विवाहोत्सव जन्मोत्सव तथा विशिष्ट अतिथियों के आगमन के अवसर पर शाकाहारी तथा मांसाहारी दोनों ही प्रकार के खाद्य पदार्थो को सेवन के लिए तैयार किया जाता है । अन्यत्र परिवारों में ऐसे अवसरों पर विशिष्ट शाकाहारी खाद्य पदार्थ ही तैयार कराये जाते हैं । इस प्रकार की भोजन व्यवस्था को क्षेत्रीय भाषा में पक्की तथा कच्ची भोजन व्यवस्था कहा जाता है । पक्की भोजन व्यवस्था में पूड़ी, कचौड़ी, शब्जी, अचार, दही/रायता, पुलाव तथा मिष्ठान आदि प्रस्तुत किए ज़ाते हैं जबकि कच्ची भोजन व्यवस्था में रोटी,दाल/कढ़ी, शब्जी, चावल,चटनी/अचार , दही, बरा आदि खाद्य पदार्थो का प्रचलन है । मांसाहारी भेजन भी कच्ची भोजन व्यवस्था के अन्तर्गत आता है जिसमें मांस/मछली रोटी तथा चावल ही प्रमुख खाद्य प्रस्तुत किए जाते हैं, इस व्यवस्था में कुछ लोगों द्वारा मादक पेय के सेवन का भी प्रचलन है । मुस्लिम संस्कृति में चावल के स्थान पर पुलाव तथा विरियानी का प्रचलन है ।

कुछ खाद्य पदार्थ उन सदस्यों के लिए सामाजिक स्वीकृति प्राप्त है जिनकी सामाजिक, धार्मिक स्थिति विशेष प्रकार की है जैसे विधवा महिलाएं तथा धार्मिक उपवास व्रत आदि रहने वाले व्यक्तियों के लिए स्वीकृत खान पान व्यवस्था । सर्वेक्षण में यह पाया गया कि मुस्लिम परिवारों को छोड़कर विधवाओं में पूर्णतया शाकाहारी भोजन प्रचलित है जिसमें प्याज तथा लहसुन का प्रयोग भी निषिद्ध है । इसी प्रकार जो लोग साप्ताहिक विशेष दिवसों में, एकादशी, जन्माष्टमी, शिवरात्रि तथा राम नवमी आदि मासिक/वार्षिक दिवसों पर धार्मिक उपवास तथा व्रत आदि रखते हैं उनमें भी शुद्ध शाकाहारी भेंजन प्रचलित है जिसमें लहसुन, प्याज, नमक तथा कभी कभी खाद्यान्न का सेवन पूर्णतया अथवा आंशिक रूप से वर्जित होता है । इनलोगों में अधिकांश फलाहार तथा दूध अथवा दूध से बने पदार्थों के सेवन का प्रचलन है । उपवास तथा व्रत रखने वाले लोगों द्वारा कुछ अवसरों पर प्रसाद के रूप में खाद्य पदार्थों के वितरण का भी प्रचलन है । कुछ खाद्य पदार्थ दान दक्षिणा के रूप में पुरोहितों, ब्राह्मणों को भी अर्पित किए जाते हैं , सामान्यतया ये पदार्थ अपक्व अवस्था में होते हैं । साधू –सन्तों तथा भिखारियों को भी दान में खाद्य पदार्थ ही प्रदान किए जाते हैं ।

खाद्य आदतें और सामाजिक सम्बन्ध :

किसी क्षेत्र में एक परिवार के लिए उसकी भोजन पद्धति सामाजिक सम्बन्धों की महत्वपूर्ण निर्धरक होती है । यह देखा गया है कि लोग अपने वर्ग के आगन्तुकों, नाते रिश्तेदारों के लिए सामान्यतया किसी विशेष प्रकार की भोजन व्यवस्था नहीं करते हैं बल्कि सामान्य भोजन व्यवस्था जिसमें रोटी, दाल, शब्जी, चावल, अचार/चटनी आदि खाद्य प्रमुख होते हैं । प्रस्तुत कुछ विशेष अवसरों पर लोग आगन्तुक अतिथियों के लिए पूड़ी, कचौड़ी , एक से अधिक शब्जियां, खीर , रायता , दही, हलुआ, सेंवई, मालपुआ तथा मिष्ठान आदि की व्यवस्था करते हैं । यह विशिष्ट प्रकार का भोजन विभिन्न वर्गो में उनके आर्थिक स्तर के अनुसार भिन्न भिन्न होता है । विशेष भोजन व्यवस्था में मांसाहारी खाद्य पदार्थों के अन्तर्गत मांस (बकरे अथवा पक्षियों का) मछली, अण्डे की व्यवस्था के साथ साथ मादक तरल सेवन का भी प्रचलन है । अन्य पेय पदार्थों में चाय तथा शर्वत का आम प्रचलन है । शायद आर्थिक कठिनाइयों के कारण लगभग 67 प्रतिशत परिवारों में अपने वर्ग के मेहमानों के लिए सामान्य भोजन व्यवस्था का ही प्रचलन है जबकि लगभग 13 प्रतिशत परिवारों में विशेष शाकाहारी तथा लगभग 20 प्रतिशत परिवारों में मांसाहारी भोजन प्रस्तुत करने का प्रचलन है । वास्तव में लगभग सभी मुस्लिम परिवारों में मेहमानों को विशेष मांसाहारी भोजन व्यवस्था की जाती है । जातिगत तथा आर्थिक स्तर के अनुसार अतिथि सत्कार में प्रचलित खाद्य पदार्थों का भी वर्गीकरण किया जा सकता है । सामान्यतया उच्च जातियों के मध्य अतिथि सत्कार में विशिष्ट खाद्य पदार्थों का प्रचलन हे जबकि निम्न जातियों में इनसे भिन्न कुछ अन्य विशिष्ट खाद्य पदार्थों का प्रचलन है ।

मौसमी परिवर्तन तथा खाद्य आदतें :

किसी क्षेत्र की खाद्य आदतें बहुत कुछ मौसमी परिवर्तन द्वारा नियंत्रित रहती हैं , क्योकि क्षेत्रीय खाद्य पदार्थो के उत्पादन में विभिन्न मौसमों में भिन्नता पाई जाती है । सर्वेक्षण में यह पाया गया कि अध्ययन क्षेत्र में सत्तू, कोहरी, गादा तथा परांठा प्रातः कालीन नाश्ते में परम्परागत रूप से प्रचलित है परन्तु मौसम परिवर्तन के साथ साथ इन खाद्य पदार्थो की आवृत्ति बदलती रहती है जैसे मई, जून तथा जुलाई में चना अथवा चना–जौ के मिश्रण से तैयार सत्तू का अधिकांश प्रचलन है जबकि अक्टूबर तथा नवम्बर में मक्का का सत्तू प्रचलन में आ जाता है । जुलाई–अगस्त तथा सितम्बर में जब धान की रोपाई का समय होता है तो गेहूँ –चना मटर, ज्वार तथा बाजरा को उबालकर तैयार होने वाली कोहरी प्रचलन में रहती है , परन्तु नवम्बर, दिसम्बर में गादा जो हरे बाजरा को उबालकर बनाया जाता है का प्रचलन रहता है , अन्यय दिवसों में परांठा . चटनी/अचार, खीर. महेरी, लप्सी, चिल्ला, भकोसा. चौसेला तथा सेंवई का सेवन प्रचलित है । इसी प्रकार सांयकालीन तथा मध्यान्ह के भोजन में खाद्य पदार्थो का प्रचलन विभिन्न वर्गो में भिन्न भिन्न देखा गया जैसे उच्च वर्ग तथा आर्थिक रूप से सम्पन्न अधिकांश परिवारों में लगभग वर्षभर गेहूँ की रोटी के सेवन की प्रवृत्ति पाई गई, इन परिवारों में मोटे अनाजों ज्वार–बाजरा तथा मक्का की रोटी का सेवन केवल स्वाद परिवर्तन के रूप में ही देखा गया, जबकि निम्न जातियों तथा आर्थिक रूप से विपन्न परिवारों में मोटे अनाज तथा ज्वार–बाजरा तथा मक्का की रोटी अधिकांश प्रचलित है, इन परिवारों में गोजई (गेहूँ तथा जौ) की रोटी भी प्रचलित है । इसी प्रकार दालों के सम्बन्ध में भिन्नता देखने को मिलती है । उच्च वर्ग द्वारा अरहर उर्द/मूँग की दालों का अधिकांश प्रयोग होता है जबकि निम्न वर्ग में चना तथा मटर की दाल का अधिक प्रयोग होता है । यही अन्तर चावल के उपभोग में देखा गया । सामान्यतया उच्च जातियों में चावल का प्रयोग निम्न वर्ग की अपेक्षा कम किया जाता है । इसी प्रकार चावल बनाने की विधि में भी अन्तर पाया गया । जहाँ उच्च वर्ग में माड़ी निकला हुआ चावल के प्रयोग का प्रचलन है वहीं निम्न वर्ग में माड़ी युक्त चावल, भात के रूप में प्रयोग किया जाता है । इस वर्ग में दिसम्बर, जनवरी तथा फरवरी के महीनों में चावल/भात की आवृत्ति अत्यधिक बढ जाती है और दिन में तीनों ही समय चावल के प्रयोग का प्रचलन है जबकि मार्च के बाद इसका प्रयोग कम हो जाता है।

शब्जियों का उपभोग भी मौसम परिवर्तन द्वारा नियंत्रित रहता है । अप्रैल से सितम्बर तक लौकी, कद्दू, तरोई, चचेड़ा, घुइयां, भिण्डी, करेला तथा टिण्डा आदि का प्रयोग किया जाता है जबकि अक्टूबर के बाद आलू , टमाटर, फूलगोभी, बन्द गोभी तथा बैंगन, मूली आदि प्रमुख रूप से प्रचलित रहती है, आलू का प्रयोग न्यूनाधिक वर्ष भर किया जाता है । पत्तेदार शब्जियों में उच्च वर्ग में पालक चौलाई, मूली, बथुआ, मेथी, हरे चने की पत्तियां

(साग) सरसों की पत्तियां, बाकड़ा की पत्तियां, लहिया की पत्तियां , नुनियां, पोइ नारी तथा घुइयां की पत्तियों के प्रयोग का प्रचलन है जबकि निम्न वर्ग में साग, चौलाई, मूली के पत्ते, बथुआ, नारी तथा नुनियां का ही अधिकांश प्रचलन है क्योंकि ये पदार्थ कम कीमत अथवा निःशुल्क प्राप्त हो जाते हैं । इस प्रकार स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में अधिकांश परिवार अपनी पसंद तथा अपनी आवश्यकतानुसार उत्तम खाद्य पदार्थों का स्वतंत्रतापूर्वक उपभोग नहीं कर पाते हैं क्योंकि उन्हें क्षेत्रीय तथा मौसमी खाद्य पदार्थों पर निर्भर रहना पड़ता है ।

जैसा कि पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि अध्ययन क्षेत्र में मुख्यतः हिन्दू और मुस्लिम संस्कृति के लोग निवास करते हैं और ये दानों संस्कृतियों की खाद्यआदतों में बहुत अधिक भिन्नता पाई जाती है । जहाँ तक हिन्दू परिवारों का प्रश्न है तो आर्थिक रूप से सुदृढ़ परिवारों का भोजन मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों ही दृष्टियों से आर्थिक रूप से निर्वल परिवारों की तुलना में बेहतर है । निर्धन परिवारों के सदस्य भोजन के गुणात्मक पक्ष तथा उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों पर ध्यान दिए बगैर केवल अपने उदर की पूर्ति पर ही ध्यान केन्द्रित रखते हैं । आर्थिक रूप से दुर्बल परिवारों के सदस्यों का भोजन न तो मात्रात्मक रूप से पर्याप्त होता है और व गुणात्मक रूप से ही श्रेष्ठ होता है ।

विभिन्न वर्गो द्वारा खाद्य पदार्थो का मात्रात्मक उपभोग :

अध्ययन क्षेत्र का एक व्यापक सर्वेक्षण करके विभिन्न वर्ग के परिवारों द्वारा वर्ष में उपभोग किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थो की वास्तविक मात्रा के आधार पर उनका आहार सन्तुलन पत्रक तैयार किया गया है जिनका विवरण क्रमशः दिया जा रहा है ।

सारिणी 6.76 भूमिहीन परिवारों का प्रति व्यक्ति प्रतिदिन औसत उपभोग (ग्राम)

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋतु	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	औसत	प्रतिशत
1. खाद्यान्न	551.82	592.64	618.28	587.58	61.37
2. दालें	64.85	42.36	106.54	71.25	7.44
3. जड़दार शब्जियां	80.17	194.92	110.62	128.57	13.43
4. पत्तेदार तथा अन्य हरी शब्जियां	92.10	140.80	35.48	89.46	9.34
5. तेल घी	8.04	10.45	12.68	10.39	1.09
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ ।	16.70	18.88	10.68	15.42	1.61
7. चीनी/गुड़	14.26	16.34	11.28	13.96	1.46
8. मांसाहार	16.18	26.75	24.51	22.48	2.35

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋतु	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	औसत	प्रतिशत
9. फल	12.40	10.24	32.44	18.36	1.92
योग	856.52	1,053.33	962.51	957.47	100.00

सारिणी 6.76 भूमिहीन परिवारों के सदस्यों द्वारा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन सेवन किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों का विवरण तीनों मौसमों के अन्तर्गत दिया गया है । यह देखा गया है कि सामान्यतः सभी वर्गों में गर्मी के मौसम में खाद्यान्नों का उपभोग बढ़ जाता है , इसी प्रकार गर्मी के मौसम में दालों की भी खपत बढ़ जाती है परन्तु शब्जियों का उपभोग शीत ऋतु में बढ़ता है क्योंकि शीत ऋतु में आलू–टमाटर सस्ता हो जाता है जिससे इस मौसम में शब्जियों का उपभोग अन्य मौसमों की अपेक्षा बढ जाता है । पत्तेदार शब्जियों में इस मौसम में चने की पत्तियां जिसे क्षेत्रीय भाषा में साग कहा जाता है, बिना किसी कीमत का भुगतान किए अथवा अत्यन्त कम कीमत पर प्राप्त हो जाती है का इस वर्ग द्वारा अधिकांश उपभोग किया जाता है, इस मौसम में बथुआ तथा मूली भी सरलता से प्राप्त हो जाती है । इस वर्ग के सदस्यों में दूध, चीनी/गुड़ तथा मांसाहार का भी प्रयोग अन्य मौसमों की अपेक्षा अधिक हो जाता है जबकि फलों का उपभोग गर्मी के मौसम में अधिक हो जाता है क्योंकि इस मौसम में ,आम, जामुन. खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, खीरा, आदि फसलें क्षेत्रीय स्तर पर उगाई जाती है अतः इन फलों का उपभोग ग्रामीण समुदाय द्वारा अधिक किया जाता है । **रफी[14] के अनुसार** संतरा, सेव. अंगूर आदि फलों के मंहगे होने के कारण केवल पथ्य के रूप में ही उपभोग किए जा सकते हैं । समग्र दृष्टि से यदि देखा जाये तो इस वर्ग द्वारा विभिन्न खाद्य पदार्थो का प्रति व्यक्ति शीत ऋतु में 1053.38 ग्राम है जो अन्य मौसमों की अपेक्षा अधिक है, द्वितीय स्तर पर गर्मी का मौसम हे जिसमें विभिन्न खाद्य पदार्थों की 962.51 ग्राम मात्रा उपभोग की जाती है । वर्षा के दिनों में उपभोग की मात्रा न्यूनतम 856.52 ग्राम रहती है । सम्पूर्ण भोजन में यदि विभिन्न खाद्य पदार्थों के आनुपातिक वितरण को देखा जाये तो खाद्यान्नों तथा दालों की भागेदारी लगभग 69 प्रतिशत की है जबकि शब्जियों का अनुपात 22 प्रतिशत से भी अधिक देखा जा रहा है इन दोनों खाद्य पदार्थो के अनुपात को यदि देखा जाये तो 91 प्रतिशत से अधिक भागेदारी करके भूमिहीन परिवारों के मध्य खाद्यान्न तथा शब्जियां अपने महत्व का प्रदर्शन कर रही है जिसका अर्थ है कि अन्य खाद्य पदार्थो का उपभोग अत्यन्त न्यून मात्रा में किया जाता है । जबकि स्वस्थ मनुष्य के आहार में पौष्टिक तत्वों के समन्वय के लिए अन्य खाद्य पदार्थो का भी समयोजन किया जाना चाहिए जिनमें चिकनाई, दूध तथा फलों का महत्वपूर्ण स्थान होता है, सन्तुलित भोजन में इन खाद्य पदार्थों की मात्रा बढ़ाई जानी चाहिए परन्तु इस वर्ग की आय का आधार निम्न होने के कारण यह वर्ग खाद्यान्न , दालों तथा कम मूल्य वाली सब्जियों परही निर्भर रहता है ।

सीमान्त कृषक परिवार के सदस्यों के उपभोग का स्तर :

इस वर्ग में वे परिवार सम्मिलित हैं जिनके पास 0.4 हेक्टेयर या इससे कम कृषि भूमि उपलब्ध है । इस वर्ग में 69 कृषक परिवारों की खाद्य आदतों का अध्ययन किया गया है जिसमें 15 परिवार उच्च जाति के 21 परिवार पिछडी जाति के 26 परिवार हरिजन जाति के तथा 7 परिवार मुस्लिम संस्कृति के पाये गये । इन समस्त परिवारों के सदस्यों द्वारा उपभोग किए जाने वाले खाद्य पदार्थों के आधार पर इस वर्ग का आहार सन्तुलन पत्रक तैयार

किया गया जिसमें वर्ष के तीनों मौसमों में उपभोग किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों की गणना प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपभोग के आधार पर की गई है जिसे सारिणी 6.77 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.77 सीमान्त कृषक परिवारों का प्रति व्यक्ति प्रतिदिन औसत उपभोग ⟮ग्राम⟯

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋृतु	शीत ऋृतु	ग्रीष्म ऋृतु	औसत	प्रतिशत
1. खाद्यान्न	507.35	565.55	602.42	558.44	59.63
2. दालें	55.74	52.28	98.76	68.92	7.36
3. जड़दार शब्जियां	73.43	181.77	116.44	123.88	13.23
4. पत्तेदार तथा अन्य हरी शब्जियां ।	112.36	91.65	57.47	87.16	9.31
5. तेल/घी	7.08	13.12	10.46	10.22	1.09
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ ।	22.75	18.62	14.01	18.46	1.97
7. चीनी/गुड़	13.92	11.14	12.20	12.42	1.33
8. मांसाहार	31.66	34.28	19.05	28.33	3.02
9. फल	26.82	20.74	38.48	28.68	3.06
योग	851.11	989.15	969.29	936.52	100.00

सारिणी 6.77 सीमान्त कृषक परिवारों के सदस्यों के औसत उपभोग स्तर का विवरण प्रस्तुत कर रही है । इस वर्ग में भी ग्रीष्म ऋृतु में खाद्यान्नों तथा दालों का उपभोग औसत से अधिक हो जाता है जबकि अन्य यदो मौसमों में खाद्यान्नों का उपभोग शीत ऋृतु में तो औसत से कुछ अधिक रहता है परन्तु वर्षा ऋृतु मकें इसका उपभोग औसत से कम हो जाता है जबकि दालों का उपभोग दोनों ही मौसमों में औसत से कम रहता है । जड़दार शब्जियों का उपभोग प्राथमिकता क्रम में शीत, ग्रीष्म तथा वर्षा ऋृतु का रहता है जबकि पत्तेदार तथा अन्य हरी शब्जियों में वर्षा ऋृतु, शीत तथा ग्रीष्म का क्रम हो जाता है । चिकनाई का उपभोग शीत ऋृतु में सर्वाधिक रहता है जबकि ग्रीष्म ऋृतु दूसरे स्थान पर

है जो औसत से अधिक उपभोग का प्रदर्शन कर रही है । दूध का उपभोग इस वर्ग में वर्षा ऋतु में अधिक किया जाता है इसके उपरान्त ऋतु परिवर्तन के साथ साथ इसका उपभोग घटता जाता है । मांसाहार इस वर्ग में भी शीतऋतु में तथा वर्षा ऋतु में औसत से अधिक किया जाता है । फलों का उपभोग ग्रीष्म ऋतु में बढ़ जाता है जबकि अन्य मौसमों में औसत से कम उपभोग किए जाते हैं । समग्र दृष्टि से देखें तो वर्ष में विभिन्न खाद्य पदार्थो के उपभोग में खाद्यान्नों की भागेदारी लगभग 60 प्रतिशत है जबकि दालों की भागेदारी केवल 7.36 प्रतिशत ही है, इन दोनों खाद्यान्नों की भागेदारी लगभग 67 प्रतिशत हो रही है । सम्पूर्ण खाद्य पदार्थों में शब्जियों की भागेदारी 22 प्रतिशत से अधिक हो रही है । मांसाहार तथा फल दोनों मिलकर 6 प्रतिशत से अधिक की हिस्सेदारी कर रहे हैं इनखाद्य पदार्थों की भागेदारी केवल उनकी उपस्थिति तक सीमित दिखाई पड़ रही है । भोजन में वसा प्रदान करने वाले पदार्थ चिकनाई तथा दूध की भागेदारी लगभग 3 प्रतिशत है जो अत्यन्त न्यून है ।[15] एक स्वस्थ्यय मनुष्य के सन्तुलित भोजन में विभिन्न खाद्य पदार्थों की आवश्यक मात्रा का अभाव दृष्टिगत होता. कुछ खाद्य पदार्थो का उपभोग आवश्यक मात्रा से अधिक किया जा रहा है जबकि शरीर के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की दृष्टि से कुछ खाद्य पदार्थों का अत्यन्त न्यून मात्रा में उपभोग किया जा रहा है ।

लघु कृषक परिवार के सदस्यों का उपभोग स्तर :-

इस वर्ग में उन कृषक परिवारों को सम्मिलित किया गया है जिनके पास 0.4 हेक्टेयर से अधिक तथा 1 हेक्टेयर से कम अपनी कृषि भूमि है । इनमें 85 कृषक परिवारों की खाद्य आदतों का अध्ययन किया गया है, जिसमें 25 परिवार उच्च जाति के 32 परिवार पिछडी जाति के 24 परिवार हरिजन जाति के तथा 4 परिवार मुस्लिम संस्कृति के प्राप्त हुए । इन समस्त परिवारों के सदस्यों द्वारा वर्ष में उपभोग किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों के आधार पर इस वर्ग का आहार सन्तुलन पत्रक तैयार किया यगया जिसमकें प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपभोग किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों के आधार पर गणना की गई है जिसे सारिणी 6.78 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.78Aलघु कृषक परिवारों का प्रति व्यक्ति प्रतिदिन औसत उपभोग (ग्राम)

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋतु	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	औसत	प्रतिशत
1.खाद्यान्न	519.89	568.36	597.84	562.03	59.31
2. दालें	76.37	55.28	107.42	79.69	8.41
3.जड़दार शब्जियां	63.24	166.72	104.48	111.48	11.76

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋतु	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	औसत	प्रतिशत
4. पत्तेदार तथा अन्य हरी शब्जियां ।	118.16	110.24	62.09	96.83	10.22
5. तेल/घी	10.14	15.22	11.12	12.16	1.28
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ ।	19.88	16.92	13.24	16.68	1.76
7. चीनी/गुड़	15.16	13.64	14.22	14.34	1.51
8. मांसाहार	30.72	28.62	17.28	25.54	2.70
9. फल	28.56	26.76	31.44	28.92	3.05
योग	882.12	1,001.76	959.13	947.67	100.00

सारिणी 6.78A लघु कृषकों के आहार सन्तुलन पत्रक को संस्तुत कर रही है जिसमें इस वर्ग के कृषक परिवार के सदस्यों द्वारा सर्वाधिक खाद्य पदार्थो का उपभोग शीत ऋतु में किया जाता है जबकि न्यूनतम मात्रा वर्षा ऋतु में रहती है । प्रतिदिन उपभोग किए जाने वाले खाद्य पदार्थो में खाद्यान्न की सर्वाधिक भागेदारी 59.31 प्रतिशत की है, जबकि दालों की 8.41 प्रतिशत तथा जडदार एवं पत्तेदार शब्जियों का हिस्सा क्रमशः 11.76 प्रतिशत और 10.22 प्रतिशत है यदि इन चारों खाद्य पदार्थो की एक साथ हिस्सेदारी देखे तो कुल उपभोग के 89.70 प्रतिशत की आपूर्ति इनसे हो रही है । दूध की मात्रा इस वर्ग में भी अत्यन्त कम उपभोग की जा रही, न्यूनाधिक यही स्थिति चिकनाई की है । इस वर्ग के समग्र खाद्य पदार्थो पर दृष्टिपात करें तो लगता है कि यह अपने उदर की पूर्ति कर रहा है परन्तु सन्तुलित भोजन में जिस मात्रा में विभिन्न खाद्य पदार्थो का उपभोग किया जाना चाहिए उसका उपभोग कुछ पोषक तत्व आवश्यकतानुसार शरीर को उपलब्ध नहीं हो पाते हैं । यदि मौसम परिवर्तन के अनुसार विभिन्न खाद्य पदार्थो के उपभोग को देखे तो इस वर्ग में मांसाहार का वर्षा ऋतु में औसत से अधिक प्रचलन है, इसी प्रकार दूध की भी खपत अन्य मौसमों की अपेक्षा वर्षा ऋतु में अधिक है । फलों का उपभोग ग्रीष्म ऋतु में अधिक किया जाता है । चिकनाई का प्रयोग शीतऋतु में बढ जाता है । परन्तु खाद्यान्न को छोड़कर अन्य खाद्य मानक स्तर से अत्यन्त कम है, जबकि शरीर को

स्वस्थ बनाए रखने के लिए विभिन्न पोषक तत्वों का भोजन में सामन्जस्य स्थापित करना आवश्यक होता है ।

मध्यम कृषक परिवार के सदस्यों का उपभोग स्तर :

इस वर्ग के अन्तर्गत वे कृषक परिवार सम्मिलित किए गये हैं जिनके पास 1 हेक्टेयर से अधिक तथा 2 हेक्टेयर से कम अपनी कृषि भूमि उपलब्ध है । इनमें 18 परिवार उच्च जाति के 28 कृषक परिवार पिछडी जाति के 19 परिवार हरिजन जाति के तथा 6 परिवार मुस्लिम संस्कृति के मिलाकर कुल 71 कृषक परिवारों की खाद्य आदतों का अध्ययन किया गया है । इन मध्यम आकार के परिवारों के सदस्यों द्वारा वर्ष में उपभोग किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों के आधार पर इस वर्ग का आहार सन्तुलन पत्रक तैयार किया गया जिसे सारिणी 6.78 में प्रस्तुत किया गया हे ।

सारिणी 6.78 मध्यम कृषक परिवारों का प्रति व्यक्ति प्रतिदिन औसत उपभोग (ग्राम)

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋतु	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	औसत	प्रतिशत
1. खाद्यान्न	501.08	536.72	592.64	543.48	57.74
2. दालें	67.36	58.98	102.14	76.16	8.09
3. जड़दार शब्जियां	76.50	172.46	118.66	122.54	13.02
4. पत्तेदार तथा अन्य हरी शब्जियां	104.38	88.42	72.04	88.28	9.38
5. तेल/घी	13.62	20.14	15.62	16.46	1.75
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ ।	32.92	30.66	22.46	28.68	3.05
7. चीनी/घी	15.41	13.22	12.83	13.82	1.47
8. मांसाहार	14.16	23.52	15.27	17.65	1.88
9. फल	31.72	28.64	42.33	34.23	3.63
योग	857.15	972.76	993.99	941.30	100.00

सारिणी 6·78 मध्यम कृषक परिवारों के आहार सन्तुलन पत्रक का विवरण प्रस्तुत कर रही है । जिसमें इस वर्ग द्वारा विभिन्न खाद्य पदार्थों का सर्वाधिक मात्रात्मक उपभोग ग्रीष्म ऋतु में किया जाता है इसके बाद शीत ऋतु आती है जिसमें प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 972·76 ग्राम विभिन्न खाद्य पदार्थों का उपभोग किया जाता है । न्यूनतम उपभोग 857·15 ग्राम उपभोग की मात्रा वर्षा ऋतु में रहती है । ग्रीष्म ऋतु में खाद्यान्नों तथा दालों का उपभोग बढ़ जाता है और यह क्रमशः 592·64 ग्राम तथा 102·14 ग्राम तक उपभोग किए जाते हैं, जबकि दालों के उपभोग में वर्षा ऋतु दूसरे स्थान पर तथा खाद्यान्न शीत ऋतु में दूसरे स्थान पर आते हैं । जड़दार शब्जियों का उपभोग सर्वाधिक 172·46 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन शीत ऋतु की भागेदारी है जबकि इस खाद्य पदार्थ का ग्रीष्म ऋतु में 118·66 ग्राम उपभोग किया जाता है । पत्तेदार तथा अन्य हरी शब्जियों का सर्वाधिक उपभोग 104·38 ग्राम वर्षा ऋतु में किया जाता है । इस वर्ग में दूध का उपभोग अन्य वर्गों की अपेक्षा कुछ अधिक किया जाता है परन्तु सन्तुलित भोजन में जितनी इस खाद्य पदार्थ की आवश्यक मात्रा होनी चाहिए उसकी यह लगभग 14 प्रतिशत ही है । फलों की मात्रा भी पिछले वर्गों की अपेक्षा कुछ अधिक है । समग्र रूप से देखे तो भोजन में खाद्यान्नों तथा दालों का योगदान 65·85 प्रतिशत है जबकि शब्जियों का 22·40 प्रतिशत योगदान है । दूध तथा फलों की भागेदारी न्यूनाधिक एक ही समान हो रही है । परन्तु जैसा कि पिछले वर्गों में देखने में आया कि इस वर्ग में भी खाद्यान्नों तथा दालों का योगदान 65 प्रतिशत से भी अधिक है अन्य खाद्य पदार्थों का योगदान 35 प्रतिशत से भी कम है जो एक स्वस्थ व्यक्ति के लिए पोषक तत्वों के दृष्टिकोण से असन्तुलन उत्पन्न करता है ।

बडे आकार के कृषक परिवार के सदस्यों का उपभोग स्तर :

इस वर्ग के कृषक परिवारों में 2 हेक्टेयर से अधिक निजी कृषि भूमि को रखने वाले 21 कृषक परिवारों की वार्षिक खाद्य आदतों का अध्ययन किया गयाय है जिसमकें 6 परिवार उच्च्च जाति के , 11 परिवार पिछडी जाति के 1 परिवार हरिजन तथा 3 परिवार मुस्लिम संस्कृति के सम्मिलित हुए हैं । इन बड़े आकार के कृषक परिवार के सदस्यों द्वारा वर्ष में उपभोग किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों के आधार पर आहार सन्तुलन पत्रक तैयार किया गया है और इसके आधार पर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन विभिन्न खाद्य पदार्थों के मात्रात्मक उपभोग की गणना की गई जिसे सारिणी 6·79 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6·79 बड़े आकार के कृषक परिवारों का प्रति व्यक्ति प्रतिदिन औसत उपभोग (ग्राम)

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋतु	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	औसत	प्रतिशत
1·खाद्यान्न	448·90	521·22	582·14	517·42	53·53
2·दालें	77·40	78·46	92·18	82·68	8·55

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋतु	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	औसत	प्रतिशत
3.जड़दार शब्जियां	108.72	144.22	121.40	124.78	12.91
4.पत्तेदार तथा अन्य हरी शब्जियां ।	102.67	112.44	107.87	107.66	11.14
5.तेल/घी	18.26	20.08	17.61	18.65	1.93
6.दूध तथा दूध से बने पदार्थ ।	54.18	44.35	27.89	42.14	4.36
7.चीनी/गुड़	16.18	12.65	13.65	14.16	1.46
8. मांसाहार	16.42	25.88	18.45	20.25	2.09
9.फल	24.81	45.60	46.17	38.86	4.03
योग	867.54	1,004.90	1,027.36	966.60	100.00

सारिणी 6.79 बड़े आकार वाले कृषक परिवार के सदस्यों का प्रति व्यक्ति प्रतिदिन औसत आहार प्रस्तुत किया गया है जिसमें इस वर्ग के सदस्यों द्वारा ग्रीष्म ऋतु में 1027.36 ग्राम खाद्य पदार्थो का उपभोग करके सर्वाधिक उपभोग स्तर को प्राप्त किया जा रहा है । इस मौसम में खाद्यान्नों तथा दालों का भी सर्वाधिक प्रयोग किया जा रहा है । शब्जियों में इस वर्ग द्वारा अन्य वर्गो की अपेक्षा पत्तेदार तथा अन्य हरी शब्जियों के उपभोग स्तर को ऊँचा रखा जा रहा है जबकि जड़दार शब्जियों का उपभोग न्यनाधिक अन्य वर्गो की भाँति हो रहा है । दूध तथा चिकनाई के उपभोग में भी यह वर्ग श्रेष्ठता प्राप्त किए हुए हैं । फलों का भी उपभोग 38.86 ग्राम प्रति व्यक्ति की दर से उपभोग किया जाता है । समग्र रूप से देखे तो समस्त खाद्य पदार्थो में 62 प्रतिशत से कुछ अधिक खाद्यान्नों तथा दालों का योगदान है , जबकि शब्जियां 24 प्रतिशत से अधिक की भागेदारी कर रही हैं , ये चारों खाद्य पदार्थ सम्पूर्ण भोजन में 86 प्रतिशत से अधिक का योगदान कर रहे हैं ।दूध तथा फलों की भागेदारी क्रमशः 4.36 प्रतिशत तथा 4.03 प्रतिशत कर रहे हैं । परन्तु आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न माने जाने वाले इस वर्ग द्वारा यद्यपि खाद्यान्नों की भागेदारी अन्य वर्गो की अपेक्षा कम है, परन्तु इस वर्ग द्वारा भी खाद्यान्नों को छोड़कर अन्य खाद्य पदार्थों का उपभोग मानक स्तर से अत्यन्त कम किया जा रहा है । भोजन का सही समन्वय न हो पाने के कारण विभिन्न खाद्य पदार्थो से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों में असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है जिससे जनित अनेक बीमारियों के शिकार अनजाने ही लोग हो जाते हैं ।

सारिणी 6.80 विभिन्न वर्गो में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थो के उपभोग में विचलन –(ग्राम)

खाद्य पदार्थ	भूमिहीन	सीमान्त कृषक	लघु कृषक	मध्य कृषक	बड़े कृषक
1. खाद्यान्न	587.58	558.44	562.03	543.48	517.42
2. दालें	71.25	68.92	79.69	76.16	82.68
3. जड़दार शब्जियां	128.57	123.88	111.48	122.54	124.78
4. पत्तेदार तथा अन्य हरी शब्जियां	89.46	87.16	96.83	88.28	107.66
5. तेल/घी	10.39	10.22	12.16	16.46	18.65
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	15.42	18.46	16.68	28.68	42.14
7. चीनी/गुड़	13.96	12.42	14.34	13.82	14.16
8. मांसाहार	22.48	28.33	25.54	17.65	20.25
9. फल	18.36	28.68	28.92	34.23	38.86
योग	957.97	936.52	947.67	941.30	966.60

सारिणी 6.80 विभिन्न खाद्य पदार्थो के औसत उपभोग का चित्र प्रस्तुत कर रही है । जिसमें विभिन्न वर्गो के मध्य खाद्यान्नों के उपभोग में 517.42 ग्राम से 587.58ग्राम तक विचलन देखने में आ रहा है । खाद्यान्नों का सर्वाधिक प्रयोग भूमिहीन पीरवारों द्वारा तथा न्यूनतम प्रयोग बड़े कृषक परिवारों द्वारा किया जा रहा है । दालों के उपभोग में 68.92 ग्राम से 82.68 ग्राम तक अन्तर की गणना की गई है । जड़दार शब्जियों में आलू, घुइयां (अरबी (मूली तथा प्याज का ही अधिक क्षेत्रीय प्रचलन है , 111.48 ग्राम से लेकर 128.57 ग्राम तक विचलन दिखाई पड़ रहा है जबकि पत्तेदार तथा अन्य हरी शब्जियों में 87.16 ग्राम से य107.66 ग्राम तक अन्तर नोट किया गया है, इन शब्जियों में पालक, बथुआ मूली, चने का साग, नारी , नुनियां तथा कद्दू , लौकी, तरोई, टिण्डा, चचेड़ा का ही प्रचलन अधिक है । तेल/घी के उपभोग में 10.39 ग्राम से 18.65 ग्राम तक विचलन प्राप्त हुआ । इस खाद्य पदार्थ का उपभोग जैसे जैसे परिवारों के जोत के आकार में बृद्धि होती जा रही है वैसे वैसे उपभोग की मात्रा बढती जा रही है । दूध का न्यूनतम उपभोग 15.42 ग्राम भूमिहीन परिवारों द्वारा तथा 42.14 ग्राम बड़े कृषक परिवारों में उपभोग किया जा रहा है ।

चीनी और गुड़ का सर्वाधिक उपभोग 14.34 ग्राम लघु कृषक परिवारों द्वारा तथा न्यूनतम 12.42 ग्राम सीमान्त कृषकों द्वारा किया जा रहा है । माँसाहार तथा अण्डों का उपभोग सर्वाधिक सीमान्त कृषकों में पाया गया जबकि इस खाद्य पदार्थ का न्यूनतम उपभाग 17.65 ग्राम मध्यम कृषकों द्वारा किया जा रहा है । फलों के उपभोग का वितरण जोत की आकार में बृद्धि के साथ बढ़ रहा है और इसमें 18.36 ग्राम से 38.86 ग्राम तक अन्तर पाया गया है ।

इस प्रकार विभिन्न वर्गो के आहार सन्तुलन पत्रक के आधार पर यह देखा गया है कि केवल खाद्यान्नों के उपभोग में सभी वर्ग आवश्यक मानक स्तर से अधिक उपभोग कर रहे हैं जबकि अन्य खाद्य पदार्थो का उपभोग मानक स्तर से अत्यन्त नीचा है जिसके कारण एक स्वस्थ्य मनुष्य के शरीर को आवश्यक पोषक तत्वों में असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है ।

6.4 कृषकों के आहार में पोषक तत्व :

शरीर को स्वस्थ्य नीरोग और क्रियाशील रखने के लिए भोजन की उसी प्रकार आवश्यकता है जिस प्रकार मोटर के लिए पेट्रोल की । सतत क्रियाशील रहने के कारण मोटर के विविध पुर्जो की भाँति ही शरीर के अवयव भी घिसते , छीजते व नष्ट होते रहते हैं । इस क्षति की पूर्ति करना अनिवार्य है । यह क्षतिपूर्ति भोजन के माध्यम से ही सम्भव होती है । अतः संक्षेप में भोजन के कार्यो को इस प्रकार देख सकते हैं ।

(1) भोजन का प्रमुख कार्य है, शरीर के लिए शक्ति व उष्णता प्रदान करना जैसे यदि हम कुछ समय भोजन ग्रहण न करें तो हमें भूख की अनुभूति होने लगेगी, भूख लगने पर भोजन न लें तो कार्यशक्ति क्षीण पड़ती जायेगी और एक समय ऐसा आयेगा कि चलने फिरने में भी हम असमर्थ हो जायेंगें । अतः निश्चित है कि भोजन द्वारा ही शरीर क्रियाशील रहता है तथा इसी से शरीर को शक्ति व उष्णता प्राप्त होती है ।

(2) शारीरिक बृद्धि एवं विकास भोजन द्वारा ही सम्भव है । एक बालक की लगभग 25 वर्षो तक शरीरिक बृद्धि होती रहती है । बाल्यावस्था से युवावस्था तक शरीर को पहुँचाने का श्रेय भोजन को ही है । क्योंकि भोजन नई कोशिकाओं के निर्माण में अपना सहयोग देता है । यही कारण है कि भेजन कोशिका अभिबृद्धि ही नहीं , नन्हें शिशु को एक वयस्क रूप प्रदान करती है । निरन्तर कार्यरत रहने से कोशिकाओं की जो क्षति होती है, उसकी पूर्ति भी भोजन द्वारा ही होती है ।

(3) शरीर व स्वास्थ्य के लिए आवश्यक पदार्थ प्रस्तुत करना भी भोजन का ही कर्तब्य है । भोजन द्वारा शरीर की विभिन्न क्रियाएं नियंत्रित होकर शरीर को स्वस्थ्य एवं रोगमुक्त बनाए रखती हैं । भोजन के इन कार्यो के आधार पर भोज्य पदार्थो को निम्नलिखित तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है ।

(अ) शरीर निर्माण करने वाले पदार्थ ।

(ब) शारीरिक विकास तथा बृद्धि करने वाले पदार्थ ।

(स) स्वास्थ्य बर्धक पदार्थ ।

भोजन के पोषक तत्व :

हमारे दैनिक भोज्य पदार्थों में जो तत्व विद्यमान रहते हैं, उन्हें वैज्ञानिकों ने विश्लेषण करके देखा है कि उनकी रचना अनेक प्रकार के रासायनिक अवयवों से हुई है जिन्हें भोजन में पोषक तत्वों की संज्ञा दी जाती है । सुविधा की दृष्टि से पोषक तत्वों को तीन विभागों में विभाजित किया जा सकता है –

(क) शरीर निर्माण करने वाले पदार्थ –प्रोटीन

(ख) शक्ति बर्द्धक पदार्थ–कार्वोहाइड्रेट्स वसा एवं जल।

(ग) स्वास्थ्य बर्द्धक पदार्थ– विटामिन तथा खनिज लवण ।

हमारे द्वारा किए जाने वाले भोजन चाहे वह चावल, दाल.रोटी, दही, घी, मक्खन, शब्जी, फल, दूध , मेवा या मांसाहार आदि कोई भी क्यों न हों, उसमें प्रोटीन, वसा . जल, विटामिन, लवण खनिज आदि की उचित मात्रा का ध्यान रखना चाहिए ताकि आवश्यक पदार्थों का ही उचित मात्रा में सेवन किया जा सके ।

(क) प्रोटीन :

प्रोटीन शब्द "प्रथमीन " से बना है जिसका अर्थ है प्रथम । वास्तव में प्राणियों के शरीर निर्माण में इसका स्थान प्रथम ही है । रक्त, मांस तथा मस्तिष्क हमारे द्वारा प्राप्त किए गये भोजन का ही परिणाम होते हैं । प्रोटीन शक्ति देती है । प्रोटीन की मात्रा रक्त में बहुत होती है । गर्भवती महिलाओं को प्रोटीन की बहुत आवश्यकता होती है , क्योकि गर्भस्थ शिशु का शरीर माँ के रक्त से ही तैयार होता है । जन्म लेने के उपरान्त शिशु को मां के दूध से प्रोटीन मिलने लगती है और मां के दूध में प्रोटीन उस भोजन से बनती है, जिसे मां ग्रहण करती है ।

प्रोटीन के द्वारा बालक का शरीर बढ़ता है, उनमें मानसिक दक्षता की बृद्धि होती है । वैसे प्रोटीन की आवश्यकता 35 वर्ष तक ही अधिक होती है । इस अवस्था के बाद यदि प्रोटीन बहुत न ली जाये तो कोई परेशानी की बात नहीं है क्यों कि प्रोटीन जनित पदार्थ गरिष्ठ होते हैं , अतः कम प्रोटीन लेने से पाचन शक्ति क्षींण नहीं होती है । प्रोटीन द्वारा रोग निवारण शक्ति उत्पन्न होती है इसके अभाव में आक्सीजन लेने की शक्ति क्षीण पड़ जाती है, फलतः रोगाणु शीघ्रता से शरीर में प्रविष्ट होकर मनुष्य को रोगी बना देते हैं । बालकों के लिए प्रोटीन वरदान है क्योकि शरीर के बढाने में इसका स्थान महत्वपूर्ण होता है । प्रोटीन के अभाव में बहुत से बच्चे कुपोषण तथा अल्पपोषण के शिकार हो जाते हैं जिससे अल्पावस्थों में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं । प्रोटीन द्वारा ही पाचक रसों की उत्पत्ति होती है तथा शरीर के नष्ट तथा टूटे फूटे तन्तुओं का निर्माण भी प्रोटीन ही करती है । कुछ को छोड़कर अधिकांश प्रोटीन घुलनशील होते हैं ।

प्रोटीन किन्हीं पदार्थों में बहुत कम और किन्हीं में बिल्कुल नहीं तथा किसी किसी पदार्थ में अत्याधिक मात्रा में पायी जाती है । तेल. घी, शहद, खांड़ में प्रोटीन बिल्कुल नहीं होती है, दूध , दही, पनीर , माठा, गेहूँ, चना, दाल. बादाम आदि में यह पर्याप्त मात्रा में मिलती है । मांसाहारी खाद्य पदार्थों में इसकी मात्रा और भी अधिक होती है । अण्डा. दूध, मांस, मछली, पनीर आदि से प्राप्त होने वाली प्रोटीन "ए" वर्ग की होती है जो उत्तम . उपयोगी तथा अत्याधिक लाभप्रद होती है । गेहूँ , जौ, चना. चावल, अरहर. मटर तथा हरे पत्ते वाले शाक आदि से प्राप्त होने वाली वनस्पति प्रोटीन "बी" वर्ग की कहलाती है क्योंकि यह देर में पहुँचती हैं । सभी वर्ग के पदार्थों में सर्वाधिक मात्रा में प्रोटीन सोयाबीन में पाया जाता है । अनाजों में गेहूँ में सबसे अधिक प्रोटीन होता है । ऐसा तिवारी[16] का मत है है ।

(ख) <u>कार्वोहाईड्रेट्स</u> :

शक्ति बर्द्धक पदार्थों में इसका भी प्रमुख स्थान है । इसमें आक्सीजन, हाइड्रोजन तथा कार्वन का मिश्रण होता है । कार्वोहाइड्रेट्स दो प्रकार के होते हैं :

(1) स्टार्च देने वाले पदार्थ ।

(2) शर्करा वाले पदार्थ ।

(1) <u>स्टार्च देने वाले पदार्थ</u> :

गेहूँ, जौ, चना. चावल, दालें, आलू, अरबी शकरकन्द आदि में यह पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है । भोजन का पचना स्टार्च की सहायता से ही प्रारम्भ होता है । यही करण है कि भोजन चबाकर खाने में अधिक लाभकारी होता है । आमाशय में पाचन क्रिया से कार्वोहाईड्रेट्स नन्हें कणों में विभाजित होकर तरल और सूक्ष्म हो जाते हैं , तब छोटी आतों में प्रविष्ट होते हैं और वहाँ वे रक्त कोशिकाओं द्वारा अवशोषित कर लिए जाते हैं । इस क्रिया से रक्त द्वारा समस्त शरीर में पहुँचकर आक्सीजन के संयोग से शक्ति पैदा करते हैं ।

(2) <u>शर्करा वाले पदार्थ</u> :

इस प्रकार के पदाथो में मुख्यतः गुड़, चीनी, मीठे फल जैसे आम, अंगूर. केला आदि, मुरब्बे, शरबत मिठाइयां आती हैं । अंगूर में ग्लूकोज, अन्य फलों में फ्रक्टोज तथा दूध से प्राप्त लेक्टोज के रूप में शक्कर शीघ्र ही रक्त में मिल जाती है। स्टार्च तथा शक्कर देने वाले पदार्थों के सेवन से मांस पेशियों की क्रियाशीलता उत्तम बनी रहती है। बर्टन[17] "यह शरीर में ईधन का काम करके शरीर के लिए गर्मी व ताकत को स्थिर बनाए रखते हैं अतः शरीरिक परिश्रम करने वाले लोगों को इनकी अधिक आवश्यकता पड़ती है ।"

(ग) वसा :

वसा का कार्य शरीर को गर्मी शर्दी से बचाकर सुरक्षित तो रखता है ही , साथ ही बाहरी आघात से बचाव करना भी इसका प्रमुख कार्य है । यह शरीर में शक्ति तथा ऊर्जा बनाए रखती है और शरीर के विभिन्न अंगों में जो जोड़ व गड्ढे हैं वे इसी के कारण भरे हुए लगते हैं अन्यथा मानव शरीर एक ढाँचा और बेढंगा दिखाई देने लगेगा । वसा में कार्वोहाईड्रेट्स से लगभग ढाई गुनी शक्ति तथा ताप अधिक होती है । जब शरीर में स्टार्च व शक्कर वाले पदार्थों की कमी हो जाती है तो वसा उस अभाव की पूर्ति करके शरीर की शक्ति को बनाए रखता है । किन्तु वसा का प्रयोग उचित अनुपात में ही करना चाहिए क्योंकि इसके अधिक प्रयोग से पाचन क्रिया खराब हो जाती है । कठिन शारीरिक परिश्रम करने वाले लोगों को वसा के प्रयोग की अधिक आवश्यकता होती है , परन्तु मानसिक कार्य करने वाले लोगों को वसा का अधिक उपयोग ठीक नहीं रहता है । वसा से जीवनशक्ति (ऊष्मा) तो प्राप्त होती ही है , साथ ही विटामिन ए तथा डी भी प्राप्ति होते हैं । वसा की प्राप्ति दो प्रकार से होती है (1) वनस्पति वाले पदार्थ जैसे घी, तिल, मँगफली सरसों तथा नारियल का तेल (2) पशु पक्षियों से प्राप्त जैसे अण्डा, दूध, खोया. मछली, बकरे आदि का मांस आदि ।

(घ) विटामिन :

प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि वह स्वस्थ्य रहे । स्वस्थ भोजन करके ही मनुष्य स्वस्थ रह सकता है । वैज्ञानिकों ने खोज करके पता लगाया है कि हमारा शरीर भोजन के विभिन्न पदार्थो का पूर्ण उपभोग नहीं कर सकता है यदि हमारे भोजन में विटामिन न हो । वास्तव में विटामिन कोई आहार नहीं हैं । इनसे न तो ऊर्जा की उपलब्धि होती है और न ऊष्मा की । विटामिन शरीर में कोई निर्माण क्रिया भी नहीं करते हैं फिर भी विटामिन की लेशमात्र उपस्थिति से ही शारीरिक क्रियाओं में तीव्रता आ जाती है परन्तु इनमें स्वयं कोई परिवर्तन नहीं होता है । विटामिन्स एक प्रकार के रासायनिक पदार्थ जो भोजन तथा भोज्य पदार्थों में कम या अधिक मात्रा में उपस्थिति रहते हैं । सिंह [18] के अनुसार विटामिन्स प्राकृतिक रूप से साधारण शाक-शब्जियों, ताजे पके फलों, दूध मांस , मछली, अण्डे, नीबू , सन्तरे, टमाटर तथा अंकुरित अनाज आदि में पाये जाते हैं । मांस में विटामिन अल्पल्प मात्रा में पाये जाते हैं । जिस प्रकार से प्राकृतिक रूप में विटामिन्स शाक. शब्जी, फल आदि से उपलब्ध होते हैं उसी भाँति आजकल कृत्रिम रूप में इनका निर्माण रासायनिक प्रयोगशालाओं में होने लगा है, इन्हें जल में घुलनशीलता के आधार पर दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है –

(1) जल में घुलनशील विटामिन जैसे "बी" व "सी"

(2) वसा में घुलनशील विटामिन जैसे "ए" डी ई तथा के

(ड़0) <u>खनिज लवण</u> :

शरीर के सभी अंग सही ढंग से कार्यरत रह सकें, उनमें रक्त संचरण की स्थिति उत्तम बनी रहे तथा स्वास्थ्य पूर्णतः विकसित हो सके, यह विभिन्न खाद्य पदार्थो के माध्यम से शरीर में प्रवृष्टि हुए खनिज लवणों के ऊपर ही निर्भर करता है । ये खनिज लवण-लोहा. कैल्शियम, फास्फोरस सबसे महत्वपूर्ण है विभिन्न प्रकार के नमक शरीर के किसी न किसी अंग के निर्माण में सहायक होते हैं ।

(1) <u>लोहा</u>:

लोहा शरीर में रुधिर की लाल कणिकाओं (हीमोग्लोविन) के निर्माण में अत्यन्त आवश्यक है । शरीर में लोहे की कमी से रक्त हीनता का रोग हो जाता है । भोजन का यह आवश्यक तत्व लोहा अनाज मेथी, पालक, टमाटर, पोदीना. विविध दालों, मांस, अण्डे की जर्दी, अंजीर, अंगूर आदि में पाया जाता है ।

(2) <u>केल्शियम</u> :

इसकी आवश्यकता युवकों की अपेक्षा बच्चों को अधिक होती है क्योंकि बालकपन में ही शरीर की हड्डिया बनती और बढ़ती हैं । गर्भवती तथा बच्चों को स्तनपान कराने वाली महिलाओं को कैल्शियम की बहुत अधिक आवश्यकता पड़ती है । हड्डियों तथा फेफड़ों की बीमारियों में यह बहुत काम आता है । कैल्शियम दूध, पनीर, दही, मक्खन, बादाम, तिल, अण्डे आदि में पर्याप्त मात्रा में मिलता है ।

(3) <u>फास्फोरस</u> :

फास्फोरस अस्थियों तथा दातों के निर्माण में बहुत सहायक होता है । रक्त को शुद्ध रखने तथा स्नायुमण्डल को स्वस्थ रखने में फास्फोरस का विशेष महत्व है । शारीरिक क्रिया अथवा श्रम करने से जो ऊर्जा नष्ट या कम हो जाती है , फास्फोरस द्वारा उसकी बहुत कुछ मात्रा में पूर्ति हो जाती है । इसकी उपलब्धि हमें दूध, दही, पनीर, सेव. मछली, मांस. अण्डे तथा विविध प्रकार की शब्जियों आदि से होती है । वास्तविकता यह है कि शरीर में जितने खनिज पदार्थ होते हैं उनका लगभग चौथाई भाग फास्फोरस होता है ।

उपर्युक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि उत्तम भोजन वही है जिसमें प्रोटीन , स्टार्च, शक्कर, वसा, विटामिन, पानी , लोहा . कैल्शियम, फास्फोरस आदि पौष्टिक तत्व उचित मात्रा में हों क्योंकि स्वस्थ्यय और शक्ति की बृद्धि के लिये हमारा शरीर इन्हीं भोज्य पदार्थो पर निर्भर रहता है । अतः अध्ययन क्षेत्र के विभिन्न वर्गो द्वारा ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों का विश्लेषण अग्रांकित है ।

(1) **भूमिहीन परिवारों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थो से प्राप्त पोषक तत्व :**

इस वर्ग के अन्तर्गत वे परिवार हैं जिनके पास निजी कोई कृषि भूमि नहीं हैं और जो अपने तथा परिवार के जीवन यापन के लिए दैनिक मजदूरी, कृषि की सहायक क्रियाएं तथा ग्रामीण क्रियाओं आदि पर निर्भर हैं । कुछ परिवार के बड़े कृषकों की भूमि बटाई पर लेकर कृषि कार्य करते हैं परन्तु अधिकांश परिवार कृषि मजदूर तथा पैत्रक व्यवसायों में संलग्न हैं । ग्रामीण समाज में आज भी ग्रामीण क्रियाएं जातिगत आधार पर निर्धारित होती है, यद्यपि नगरीय जीवन में तेजी से परिवर्तन होता जा रहा है परन्तु ग्रामीण जीवन आज भी सैकड़ों वर्षो से चली आ रही परम्पराओं का निर्वाह कर रहा है उदाहरण के लिए मेहतर, जिसे क्षेत्रीय भाषा में भंगी कहा जाता है , का पुत्र आज भी मैला ढोने , गलियों , नालियों की सफाई के कार्य में लगा हुआ है, मोची का पुत्र जूते गाँठने के कार्य में संलग्न हैं , नाइ का पुत्र बाल बनाने तथा अन्य पारम्परिक सामाजिक कार्यो में संलग्न हैं । इन ग्रामीण सेवाओं के बदले कृषक परिवारों द्वारा उन्हें अनाज तथा अन्य वस्तुओं के रूप में भुगतान किया जाता है । खाली समय में दैनिक मजदूरी करके ये परिवार कुछ और आय अर्जित करते हैं । जैसा कि पूर्व में भी बताया जा चुका है । कि इन परिवारों की खाद्य आदतें तथा इनके द्वारा ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थो की मात्रा एवं खाद्य पदार्थो के गुणों में एक जाति से दूसरी जाति तथा एक परिवार से दूसरे परिवार में अत्यधिक भिन्नता मिलती है और इन परिवारों का खान पान अनेक बातों से प्रभावित होता है । इसी लिए इन परिवारों की खाद्य आदतों में अनिवार्य खाद्य वस्तुओं जैसे दूध, घी, मांस अण्डे तथा दूध से बने पदार्थो का अभाव अथवा अत्यन्त कम मात्रा में उपभोग किया जाता है । सिंह [19] परन्तु जिन खाद्य पदार्थो का उपभोग किया जाता है उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्व तथा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन आवश्यक पोषक तत्वों का तुलनात्मक विवरण तालिका क्रमांक 6.81 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

भूमिहीन परिवार सभी वर्गो से तुलनात्मक रूप में सर्वाधिक निचले आय वर्ग में आते हैं , इन परिवारों के खान पान का स्तर भी सर्वाधिक चिन्तनीय हैं , क्योंकि अधिकांश परिवारों के सदस्य दैनिक मजदूरी द्वारा ही अपने तथा अपने परिवार के भरण पोषण का कार्य करते हैं जिससे इन परिवारों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थो में पोषक तत्वों का असन्तुलन एक सामान्य सी बात देखी गई । (सारिणी 6.81) इस वर्ग के लोगों के भोजन में प्रोटीन , फास्फोरस, लौह, थियामिन तथा नियासिन की मात्रा तो मानक स्तर से अधिक पाइ गई , जबकि अन्य पोषक तत्वों की भोजन में मात्रात्मक कमी देखी गई है । जिसमें इस वर्ग में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ऊर्जा 21.14 कैलोरी, वसा 2.53 ग्राम, खनिज 15.66 ग्राम, कार्वोहाईड्रेट्स 48.10 ग्राम, कैल्शियम 113.84 मिलीग्राम, कैरोटीन 812.07 म्यूग्राम तथा राइवोफ्लेविन 0.35 मि0ग्रा0 पोषक तत्व मानक स्तर से कम पाये गये एक बात जो सर्वाधिक ध्यान आकर्षित कराने वाली है वह है खाद्यान्नों का उपभोग । यह देखने में आता है कि ग्रामीण समुदाय द्वारा ग्रहण किए जाने

सारिणी 6.81 भूमिहीन कृषक परिवारों द्वारा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व ।

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाई-ड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0
1. खाद्यान्न	587.58	2,055.38	66.98	16.452	7.638	10.576	421.88	199.78
2. दालें	71.25	245.46	15.82	0.926	2.351	1.496	40.90	126.82
3. जडदार शब्जियां	128.57	126.90	2.06	0.129	0.771	0.514	29.06	12.86
4. पत्तेदार तथा, अन्य शब्जियां	89.46	32.74	1.88	0.179	1.073	0.537	2.59	60.83
5. तेल/घी	10.39	93.51	–	10.390	–	–	–	–
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	15.42	15.11	0.51	0.833	0.123	–	0.74	25.44
7. चीनी/गुड़	13.96	53.47	0.06	0.014	0.084	–	13.26	11.17
8. माँसाहार	22.48	37.77	6.38	1.529	0.270	–	0.040	7.19
9. फल	18.86	9.52	0.13	0.019	0.057	–	3.07	2.07
योग	957.97	2,669.86	93.82	30.471	12.367	13.123	511.90	446.16
आवश्यक मानक	–	2,691	61.00	33	28.03	7.80	560	560
अल्पता– आधिक्य +	–	–21.14	+32.82	–2.53	–15.66	+5.32	–48.10	–,113.84

क्रमशः

क्रमशः सारिणी 6.81

खाद्य पदार्थ	फास्फोरस मि०ग्रा०	लौह मि०ग्रा०	कैरोटीन म्यू०ग्रा०	थियामिन मि०ग्रा०	राइबो-फ्लेविन मि०ग्रा०	नियासिन मि०ग्रा०	विटामिन ए	एस्कोर्बिक एसिड मि०ग्रा०
1.	1,445.45	24.091	229.16	2.115	1.057	24.678	–	–
2.	218.74	5.059	76.95	0.306	0.142	1.567	–	–
3.	51.43	0.900	30.863	0.128	0.013	1.543	24.70	21.70
4.	16.10	9.125	1,762.36	0.027	0.188	0.358	–	14.92
5.	–	–	–	–	–	–	–	–
6.	16.04	0.038	27.45	0.006	0.028	0.028	7.4016	–
7.	5.58	1.591	23.45	0.003	0.006	0.070	–	–
8.	44.51	0.247	46.76	0.022	0.056	0.011	–	–
9.	3.39	0.038	354.94	0.015	0.017	0.170	–	1.38
योग	1,801.24	41.089	2,551.93	2.622	1.507	28.425	7.4016	38.00
आवश्यक मानक	900	28	3,364	1.72	1.86	22.80	840	56
अल्पता– आधिक्य +	+.901.24	+13.09	–,812.07	+0.90	–0.35	+5.62	–,832.60	–18

वाले खाद्य पदार्थों में अधिकांश खाद्यान्न की मात्रा का ही महत्व है , जो न केवल लोगों की भूख को ही शान्त करते हैं बल्कि विभिन्न पोषक तत्वों का 50 प्रतिशत से अधिक भाग, कुछ पोषक तत्वों का 80 प्रतिशत से भी अधिक भाग खाद्यान्नों से ही प्राप्त किया जाता है । जैसे ऊर्जा का 76.98 प्रतिशत, प्रोटीन का 71.39 प्रतिशत, वसा का 53.99 प्रतिशत, खनिज 71.76 प्रतिशत , कार्वोहाईड्रेट्स 82.41 प्रतिशत, फास्फोरस 80.25 प्रतिशत, लौह 58.63 प्रतिशत , राइवोफ्लेविन 70.20 प्रतिशत थियामिन 80.66 प्रतिशत , नियासिन 86.82 प्रतिशत खाद्यान्न से ही प्राप्त किए जाते हैं जिसका अर्थ है कि ग्रामीण जनसंख्या तथा इस वर्ग के लोगों की खाद्य आदतें मुख्यतः खाद्यान्नों पर ही निर्भर है ।

(2) **सीमान्त कृषक परिवारों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व :**

इस वर्ग में वे परिवार सम्मिलित हैं जिनके पास 0.4 हेक्टेयर तक अपनी कृषि भूमि है । कम कृषि भूमि होने के कारण ये भी परिवार मुख्य रूप से दैनिक मजदूरी , बटाई पर भूमि लेकर कृषि कार्य, कृषि के सहायक कार्य तथा ग्रामीण सेवाओं सम्बन्धी कार्य करके अपने तथा अपने परिवार के जीवन यापन के साधन जुटाते हैं परन्तु भूमिहीन परिवारों की भाँति इन परिवारों के जीवन स्रोत कृषि के अतिरिक्त अन्य ग्रामीण सेवाओं पर ही निर्भर है अतः भोजन सम्बन्धी आदतों में भी दोनों वर्गों में लगभग समानता है । यद्यपि सीमान्त कृषक परिवार, भूमिहीन परिवारों की तुलना में कुछ अच्छी स्थिति में देखे गये । खान पान में क्षेत्रीय खाद्य प्रचलन के अतिरिक्त इस वर्ग पर भी अन्य अनेक महत्वपूर्ण कारणों का प्रभाव दिखाई पडता है इनमें से आय का आकार परिवार के सदस्यों की संख्या , क्षेत्रीय खाद्य पदार्थों की उपलब्धता आदि प्रमुख है । इन कृषक परिवारों के सदस्यों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थ तथा उन खाद्य पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों को सारिणी 6.82 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.82 सीमान्त कृषक परिवारों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थों तथा उन खाद्य पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की मात्रा का विवरण प्रस्तुत कर रही है । सारिणी से ज्ञात होता है कि इस वर्ग के भोजन में भी खाद्यान्नों की ही प्रमुखता है क्योंकि प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों की 936.52 ग्राम मात्रा में 558.44 ग्राम की भागेदारी खाद्यान्नों की ही है । स्वाभाविक है कि भोजन में खाद्यान्नों का योगदान अधिक होने के कारण विभिन्न पोषक तत्वों की कुल मात्रा में भी खाद्यान्नों की भागेदारी अधिक है । इस वर्ग द्वारा ग्रहण किए जाने वाले भोजन में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन पोषक तत्वों का स्तर भूमिहीन परिवारों के लगभग समान है और यह वर्ग भी ऊर्जा के आवश्यक मानक स्तर से 155.27 कैलोरी कम ऊर्जा प्राप्त कर रहा है , बसा 3.98 ग्राम, खनिज 16 36 ग्राम कार्वोहाईड्रेट्स 81 08 ग्रा0 , कैल्शियम 133.17 ग्राम, कैरोटीन 708.58 म्यूग्राम, राइवोफ्लेविन

सारिणी 6.82 सीमान्त कृषक परिवारों द्वारा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व ।

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कोर्वोहाइ-ड्रेट्स	कैल्शियम मि0ग्रा0
1. खाद्यान्न	558.44	1,953.42	63.66	15.636	7.260	10.052	400.96	189.87
2. दालें	68.92	237.43	15.30	0.896	2.274	1.447	39.56	122.68
3. जड़दार शब्जियां	123.88	122.27	1.98	0.124	0.743	0.495	28.00	12.39
4. पत्तेदार तथा अन्य शब्जियां	87.16	31.90	1.83	0.174	1.046	0.523	2.53	59.27
5. तेल/घी	10.22	91.98	–	10.220	–	–	–	–
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	18.46	18.09	0.61	0.997	0.148	–	0.89	30.46
7. चीनी/गुड़	12.42	47.57	0.05	0.012	0.075	–	11.80	9.94
8. माँसाहार	28.33	47.59	8.05	1.926	0.340	–	0.51	9.07
9. फल	28.68	14.48	0.20	0.029	0.086	–	4.67	3.15
योग	936.52	2,564.73	91.68	30.014	11.972	12.517	484.92	436.83
आवश्यक मानक		2,720	62	34	28.33	7.88	566	570
अल्पता – आधिक्य +		–,155.27	+29.68	–3.98	–16.36	+4.64	–81.08	–,133.17

क्रमशः

क्रमशः सारिणी 6.82

खाद्य पदार्थ	फास्फोरस मि०ग्रा०	लौह मि०ग्रा०	कैरोटीन म्यू०ग्रा०	थियामिन मि०ग्रा०	राइबो-फ्लेविन मि०ग्रा०	नियासिन मि०ग्रा०	विटामिन ए	एसकोर्बिक एसिड मि०ग्रा०
1.	1.373.76	22.986	217.79	2.010	1.005	23.454	–	–
2.	211.58	4.893	74.43	0.296	0.138	1.516	–	–
3.	49.55	0.867	29.73	0.124	0.012	1.487	–	20.91
4.	15.69	8.890	1,717.05	0.026	0.183	0.349	–	14.54
5.	–	–	–	–	–	–	–	–
6.	19.20	0.046	32.86	0.007	0.033	0.033	8.8608	– ,
7.	4.97	1.416	20.87	0.002	0.005	0.062	–	–
8.	56.09	0.312	58.93	0.028	0.071	0.014	–	–
9.	5.16	0.057	539.76	0.023	0.026	0.258	–	2.10
योग	1,736.00	39.777	2,691.42	2.516	1.473	27.173	8.8608	37.55
आवश्यक मानक	910	28	3,400	1.73	1.86	22.80	850	56
अल्पता – आधिक्य +	+.826	+11.38	–,708.58	+0.786	–0.387	+4.37	–,843.14	–18.45

0.387 मिलीग्राम तथा एसकोर्विक एसिड 18.45 मि0ग्रा0 कम ग्रहण कर रहे हैं जबकि आवश्यक मानक स्तर से अधिक पोषक तत्वों , प्रोटीन 29.68 ग्राम. फाइवर 4.64 ग्राम, फास्फोरस 826 मिलीग्राम , लौह 11.38 ग्राम. थियामिन 0.79 मिलीग्राम तथा नियासिन 4.37 मिलीग्राम को ग्रहण किया जा रहा है । इस वर्ग द्वारा ग्रहण किए जाने वाले पोषक तत्वों में अधिकांश मात्रा में खाद्यान्नों से प्राप्त की जा रही है जिसमें ऊर्जा 76.16 प्रतिशत , प्रोटीन 69.44 प्रतिशत वसा 50 प्रतिशत से अधिक , खनिज 60.64 प्रतिशत, कार्वोहाईड्रेट्स 82.69 प्रतिशत फास्फोरस 79.13 प्रतिशत . कैल्शियम 43.46 प्रतिशत, थियामिन 79.89 प्रतिशत. राइवोफ्लेविन 68.23 प्रतिशत, नियासिन 86.31 प्रतिशत केवल खाद्यान्नों से प्राप्त किए जा रहे हैं , स्पष्ट है कि इस वर्ग के लोग भी विभिन्न पोषक तत्वों के लिए खाद्यान्नों पर अत्यधिक निर्भर हैं ।अन्य पदार्थो का सेवन या तो बिल्कुल नहीं या अल्पल्प मात्रा में किया जा रहा है, जिसमें दूध और दूध से बने पदार्थ मात्र 18.46 ग्राम, तेल/घी मात्र 10.22 ग्राम सेवन किया जा रहा है जो इस बात का प्रतीक है कि भोजन में पोषक पदार्थो से युक्त खाद्य पदार्थो का नितांत अभाव है । जबकि सन्तुलित आहार में न केवल विभिन्न पोषक तत्वों का समायोजन उचित होना चाहिए बल्कि भोजन में विभिन्न पोषक तत्वों से युक्त विभिन्न खाद्य पदार्थो का आवश्यक समायोजन किया जाना चाहिए क्यों कि यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो खाद्यान्नों से केवल सामयिक आवश्यकता को तो पूरा किया जा सकता परन्तु लम्बे समय तक शारीरिक स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए विभिन्न पोषक तत्वों से युक्त खाद्य पदार्थो का समायोजन भोजन में आवश्यक हो जाता है ।

(3) <u>लघु कृषक परिवार द्वारा ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थो से प्राप्त पोषक तत्व</u> :

इस वर्ग में उन परिवारों को सम्मिलित किया गया है जिनके पास 0.4 हेक्टेयर से अधिक परन्तु 1 हेक्टेयर तक अपनी कृषि भूमि उपलब्ध है । इस वर्ग के परिवारों में भी पिछडी जाति तथा हरिजन जाति की प्रमुखता है । इस वर्ग के पास प्रति परिवार लगभग 2 एकड़ भूमि होने के कारण अधिकांश खाद्य पदार्थ अपनी ही भूमि की उपज से प्राप्त करते हैं , साथ ही इन परिवारों में अधिकांश पिछडी तथा हरिजन जातियों में कृषि मजदूरी का प्रचलन है जिससे अपने जीवन यापन के लिए अपनी भूमि के अतिरिक्त मजदूरी आदि से प्राप्त आय भी एक साधन है । इस वर्ग के कृषकों में अधिकांश पिछडी जातियों में जिनमें से पाल तथा यादव प्रमुख हैं पशु पालन को महत्व दिया जाता है जबकि काछी तथा कुछ यादव परिवार शब्जी उत्पादन को प्रमुखता देते हैं , परन्तु इन जातियों में दुग्ध तथा शब्जियों का अधिक उत्पादन होने के बावजूद भी इन खाद्य पदार्थो का उपभोग उनके उत्पादन स्तर के अनुपात में नहीं होता है । दूध तथा दूध से बने पदार्थो का उपभोग 16.68 ग्राम तथा हरी शब्जियों का 96.83 ग्राम इस बात का प्रतीक है कि यह वर्ग दुग्ध तथा हरी शब्जियों का अतिरिक्त उत्पादन तो करता है परन्तु उनका उपभोग स्वयं न करके अतिरिक्त आय एका साधन बनाए हुए हैं क्योंकि आज के भौतिक युग में प्रत्येक परिवार अधिक से अधिक आय अर्जित करके भौतिक सुख साधन एकत्रित करना चाहता है , इसलिए खान पान में विशेष ध्यान न देते हुए भौतिकता की चमक दमक में अपने

सारिणी 6.83 लघु कृषक परिवारों द्वारा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व ।

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाइ-ड्रेट्स ग्रॉम	कैल्शियम मि0ग्रा0
1. खाद्यान्न	562.03	1,965.98	64.07	15.737	7.306	10.117	403.54	191.09
2. दालें	79.69	274.53	17.69	1.036	2.630	1.673	45.74	141.85
3. जडदार शब्जियां	111.48	110.03	1.78	0.111	0.669	0.446	25.19	11.15
4. पत्तेदार तथा अन्य शब्जियां	96.83	35.44	2.03	0.194	1.162	0.581	2.81	65.84
5. तेल/घी	12.16	109.44	–	12.160	–	–	–	–
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	16.68	16.35	0.55	0.901	0.133	–	0.80	27.52
7. चीनी/गुड़	14.34	54.92	0.06	0.014	0.086	–	13.62	11.47
8. माँसाहार	25.54	41.23	6.97	1.669	0.294	–	0.44	7.85
9. फल	28.92	14.60	0.20	0.029	0.087	–	4.71	3.18
योग	947.67	2,622.52	93.35	31.851	12.367	12.817	496.85	459.95
आवश्यक मानक		2,648	60.68	33.10	27.58	7.67	552	550
अल्पता– आधिक्य +	25.48	– +25.48	+32.67	–1.25	–15.21	+5.15	–55.15	–90.05

क्रमशः

क्रमशः सारिणी 6.83

खाद्य पदार्थ	फास्फोरस मि०ग्रा०	लौह मि०ग्रा०	कैरोटीन म्यू०ग्रा०	थियामिन मि०ग्रा०	राइवो–फ्लेविन मि०ग्रा०	नियासिन मि०ग्रा०	विटामिन ए	एसकोर्विक एसिड मि०ग्रा०
1.	1.382.59	23.04	219.19	2.023	1.012	23.605	–	–
2.	244.65	5.66	86.07	0.343	0.159	1.753	–	–
3.	44.59	0.78	26.76	0.111	0.011	1.338	5	18.82
4.	17.43	9.88	1,907.55	0.029	0.203	0.387	–	16.15
5.	–	–	–	–	–	–	–	–
6.	17.35	0.04	29.69	0.007	0.030	0.030	8.0064	–
7.	5.74	1.63	24.09	0.003	0.006	0.072	–	–
8.	48.59	0.27	51.04	0.025	0.061	0.012	–	–
9.	5.21	0.06	544.27	0.023	0.026	0.260	–	2.12
योग	1,766.15	41.36	2,888.66	2.564	1.508	27.457	8.0064	37.09
आवश्यक मानक	880	27.58	3,310	1.69	1.83	22.43	827	55.16
अल्पता – आधिक्य +	+.886.15	+13.78	–,421.34	+0.87	–0.32	+5.03	–,819	–18.07

को छिपाये रखना चाहता है । इस वर्ग द्वारा विभिन्न खाद्य पदार्थों का उपभोग तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्वों की सारिणी 6.83 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

लघु कृषक परिवारों द्वारा विभिन्न खाद्य पदार्थों की कुल मात्रा 947.67 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन की दर से उपभोग की जा रही है जिसमें 50.31 प्रतिशत खाद्यान्न तथा 8.41 प्रतिशत दालों का योगदान है जबकि दूध तथा दूध से बने पदार्थों का मात्र 1.76 प्रतिशत तथा हरी शब्जियों का 10.22 प्रतिशत योगदान है । स्पष्ट है कि यह वर्ग भी आवश्यक पोषक तत्वों के लिए खाद्यान्न तथा दालों पर ही निर्भर है । इन दो खाद्य पदार्थों पर अत्याधिक निर्भरता के कारण विभिन्न पोषक तत्वों के सन्तुलन के लिए अन्य पदार्थो का उपभोग अत्यन्त सीमित है जिसके कारण कुछ पोषक तत्वों की उपलब्धता मानक स्तर से अधिक तथा कुछ की मानक स्तर से कम रह जाती है । मानक स्तर से अधिक ग्रहण किए जाने वाले पोषक तत्वों में प्रोटीन 32.67 ग्राम, फास्फोरस 886.15 मिलीग्राम, लौह 13.78 मिलीग्राम, थियामिन 0.87 मिलीग्राम तथा नियासिन 5.03 मिलीग्राम है जबकि मानक स्तर से कम उपयोग किए जाने वाले पोषक तत्वों में ऊर्जा 25.48 कैलोरी, वसा 1.25 ग्राम खनिज 15.21 ग्राम, कार्वोहाईड्रेट्स 55.15 मिलीग्राम कैल्शियम 90.05 मिलीग्राम कैरोटीन 421.34 म्यूग्राम , राइवोफ्लेविन 0.32 मिलीग्राम तथा एसकोर्बिक एसिड 18.07 मिलीग्राम है । विभिन्न पोषक तत्वों की उपलब्धता में विभिन्न खाद्य पदार्थो के योगदान को देखें तो खाद्यान्न की अकेले भागेदारी ऊर्जा में लगभग 75 प्रतिशत , प्रोटीन 68.63 प्रतिशत, वसा में 49 प्रतिशत से अधिक , कार्वोहाईड्रेट्स 81.22 प्रतिशत, कैल्शियम में 41.55 प्रतिशत , फास्फोरस में 78 प्रतिशत से अधिक , लौह में 55.71 प्रतिशत है । इसी प्रकार अन्य पोषक तत्वों में भी खाद्यान्नों का योगदान 80 प्रतिशत से अधिक है यदि खाद्य पदार्थों में दालों को भी सम्मिलित कर लिया जाये तो अन्य पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्व लगभग नगण्य ही रहते हैं ।

(4) <u>मध्यम आकार वाले कृषक परिवारों द्वारा उपभोग किए जाने वाले खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व</u> :

इस श्रेणी के अन्तर्गत वे कृषक परिवार आते हैं जिनके पास 1 हेक्टेयर से 2 हेक्टेयर तक अपनी कृषि भूमि है । इस वर्ग के कृषक भी अपनी भूमि पर विभिन्न प्रकार की खाद्यान्न फसलों के साथ साथ शब्जियों को भी उगाते हैा , इसके अतिरिक्त अधिकांश कृषक परिवार दूध की व्यवस्था के लिए पशुपालन भी करते हैं , परन्तु दूध तथा दूध से बने पदार्थों का उपभोग प्रतिव्यक्ति 28.68 ग्राम इस बात का प्रतीक है कि भोज्यय पदार्थों में आवश्यक दूध जैसे खाद्य पदार्थ की अत्यल्प मात्रा का उपभोग करना भोजन के प्रति लोगों की उदासीनता दर्शा रहा है । जैसा कि पूर्व में बताया जा चुका है कि आधुनिक जीवन पद्धति अब गावों में भी प्रवेश कर चुकी है और इसी जीवन पद्धति का

परिणाम है कि लोगों के परम्परागत भोजन पर किए जाने वाले उपभोग व्यय यको भौतिक सुख साधनों से प्रतिस्थापित किया जा रहा है , इसी लिए दूध को एकत्रित करके शहर में बेचने वाले लोगों का गावों में तेजी से प्रसार होता जा रहा है । यही कारण है कि जहाँ कुछ वर्ष पूर्व गावों में घड़ी, रेडियो, साइकिल आदि वस्तुएँ दुर्लभ मानी जाती थी, आज ये वस्तुएं गाँव के लोगों को भी सामान्य सी लगने लगी है यहाँ तक कि अब दूर दर्शन भी ग्रामीण क्षेत्रों के लिए दुर्लाभ नहीं रह गया है । निस्संदेह इस बीच कृषि उत्पादन तेजी से बढ़ा है परन्तु खाने वाले लोग भी इतनी ही तेजी से बढ़े हैं, शायद इसी लिए आजकल विभिन्न खाद्य पदार्थो में खाद्यान्नों का योगदान बढ़ा है । इस वर्ग द्वारा उपभोग किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थो से प्राप्त पोषक तत्वों को सारिणी 6.84 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.84 में मध्यम आकार वाले कृषक परिवारों द्वारा उपभोग किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थो तथा उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों का चित्र प्रस्तुत कर रही है जिसमें इस वर्ग द्वारा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 941.30 ग्राम विभिन्न खाद्य पदार्थो का उपभोग किया जा रहा है जिसमें खाद्यान्नों का योगदान 57.74 प्रतिशत है, जबकि दूध तथा दूध से बने पदार्थो का उपभोग मात्र 3.04 प्रतिशत ही है जो मानक स्तर से बहुत कम है । सारिणी यह तथ्य भी स्पष्ट कर रही है कि केवल खाद्यान्नों को छोड़कर अन्य खाद्य पदार्थो का उपभोग मानक स्तर से अत्यनत कम है । इसी लिए विभिन्न खाद्य पदार्थो से प्राप्त विभिन्न पोषक तत्वों में खाद्यान्न का योगदान भी अत्यधिक है । इस वर्ग के लिए यह एक प्रसन्नता की बात है कि ऊर्जा की उपलब्धता इस वर्ग के लिए आवश्यक मानक स्तर से अधिक है अन्य पोषक तत्व जो इस वर्ग के लिए आवश्यक मानक स्तर से अधिक ग्रहण किए जा रहे हैं । उनमें प्रोटीन 30.94 ग्राम, वसा 4.11 ग्राम, फास्फोरस 872.15 मिलीग्राम , लौह 13.08 मिलीग्राम, थियामिन 0.88 मिलीग्राम तथा नियासिन 5.31 मिलीग्राम प्रमुख है जब कि मानक स्तर से कम प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों में खनिज 14.38 ग्राम, कार्वोहाईड्रेट्स 42.90 ग्राम, कैल्शियम 69.58 मिलीग्राम, राइवोफलेविन 0.29 मि0ग्राम0 तथा एसकोर्विक एसिड 14.83 मिलीग्राम प्रमुख है । परन्तु इस वर्ग के द्वारा भी उपभोग किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थो में खाद्यान्नों की ही प्रमुखता है और इसी खाद्य पदार्थ से विभिन्न पोषक तत्वों की अधिकांश मात्रा में इस वर्ग द्वारा ग्रहण की जा रही है , खाद्यान्नों की भागेदारी ऊर्जा में 73 प्रतिशत से अधिक, प्रोटीन में लगभग 70 प्रतिशत वसा में 42.55 प्रतिशत , कार्वोहाईड्रेट्स में 80 प्रतिशत से अधिक , फास्फोरस में 78 प्रतिशत से अधिक है । ऐसा लगता है जैसे अन्य वर्ग के लोगों की भाँति इस वर्ग के लोग भी जाने अनजाने केवल पेट भरने के लिए ही भोजन करते हैं , न कि भोजन ग्रहण करने का आधार विभिन्न खाद्य पदार्थो की पौष्टिक अथवा गुणात्मकता रहती है ।

सारिणी 6.84 मध्यम कृषक परिवारों द्वारा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य से प्राप्त पोषक तत्व ।

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाइ-ड्रेट्स ग्रॉम	कैल्शियम मि0ग्रा0
1. खाद्यान्न	543.48	1,901.09	61.96	15.217	7.065	9.783	390.22	184.78
2. दालें	76.16	262.37	16.91	0.990	2.513	1.599	43.72	135.56
3. जडदार शब्जियां	122.54	120.95	1.96	0.123	0.735	0.490	27.69	12.25
4. पत्तेदार तथा अन्य शब्जियां	88.28	32.31	1.85	0.177	1.059	0.530	2.56	60.03
5. तेल/घी	16.46	148.14	–	16.460	–	–	–	–
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	28.68	28.11	0.95	1.549	0.229	–	1.38	47.32
7. चीनी/गड़	13.82	52.93	0.06	0.014	0.083	–	13.13	11.06
8. मांसाहार	17.65	29.65	5.01	1.200	0.212	–	0.32	5.65
9. फल	34.23	17.29	0.24	0.034	0.103	–	5.58	3.77
योग	941.30	2,592.84	88.94	35.764	11.999	12.402	484.60	460.42
आवश्यक मानक		2.532	58	31.65	26.38	7.33	527.5	530
अल्पता – आधिक्य +		+60.94	+30.94	+4.11	–14.38	+5.07	–42.90	–69.58

क्रमशः

क्रमशः सारिणी 6.84

खाद्य पदार्थ	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइवो-फ्लेविन फ्लेविन	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन ए	एसकोर्विक एसिड मि0ग्रा0
1.	1.336.96	22.283	211.96	1.956	0.978	22.826	–	–,
2.	233.81	5.407	82.25	0.327	0.152	1.675	–	–
3.	49.02	0.858	29.41	0.122	0.012	1.470	–	20.68
4.	15.89	9.005	1,739.12	0.026	0.185	0.353	–	14.73
5.	–	–	–	–	–	–	–	–
6.	29.83	0.072	51.05	0.011	0.052	0.052	13.77	–
7.	5.53	1.575	23.22	0.003	0.006	0.069	–	–
8.	34.95	0.194	36.71	0.018	0.044	0.009	–	–
9.	6.16	0.068	644.21	0.027	0.031	0.308	–	2.51
योग	1,712.15	39.462	2,817.93	2.490	1.460	26.762	13.77	37.92
आवश्यक मानक	840	26.38	3,165	1.61	1.75	21.45	790	52.75
अल्पता– आधिक्य +	+,872.15	+13.08	–,347.07	+0.88	–0.29	+5.31	–,776.23	–14.83

(5) **बड़े आकार वाले कृषक परिवारों द्वारा उपभोग किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व :**

2 हेक्टेयर से अधिक निजी भूमि वाले कृषक परिवार इस वर्ग के अन्तर्गत सम्मिलित किए गये हैं । इन परिवारों की आर्थिक स्थिति अन्य वर्गों की तुलना में अच्छी है जिसका प्रभाव इन परिवारों की खाद्य आदतों के सन्दर्भ में देखा जा सकता है , परन्तु खाद्यान्नों के अतिरिक्त उपभोग किए जाने वाले अन्य खाद्य पदार्थों की मात्रा अभी भी मानक स्तर से कम है । उदाहरण के लिए दूध की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपभोग की जाने वाली मात्रा 42.18 ग्राम है, हरी शब्जियों की मात्रा 107.66 ग्राम, फलों की 38.86 ग्राम तथा तेल/घी की मात्रा 18.65 ग्राम है । यद्यपि ये मात्राएं अन्य वर्गों के परिवारों द्वारा उपभोग किए जाने वाले खाद्य पदार्थों की मात्राओं से अधिक है, परन्तु इतनी अधिक नहीं कि इन पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्व इस वर्ग के परिवारों के सदस्यों को कुपोष्ण जनित बीमारियों से पूर्णतया सुरक्षित बनाए रख सकें । फिर भी खाद्यान्न की भोजन में सह भागिता कम हुई है यह एक अच्छा संकेत है, इसी कारण शरीर के लिए आवश्यक खनिजों को छोड़कर अन्य पोषक तत्वों के ग्रहण करने के सम्बन्ध में यह वर्ग आधिक्य की स्थिति में है । आर्थिक तथा सामाजिक सम्पन्नता के कारण भी इस वर्ग के परिवारों के उपभोग का स्तर अन्य वर्गों की अपेक्षा बेहतर है । इस वर्ग द्वारा उपभोग किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्वों का विवरण तालिका 6.85 में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

सारिणी 6.85 में बड़े आकार वाले कृषक परिवारों में जिनमें पिछड़ी जातियों की प्रमुखता है अधिकांश परिवार कृषि कार्यों में संलग्न हैं । इन परिवारों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों में कुछ तो मानक स्तर से अधिक तथा कुछ मानक स्तर से कम ग्रहण किए जा रहे हैं । मानक स्तर से कम पोषक तत्वों में से कार्वोहाइड्रेट्स जो भोजन को पचाने में महत्वपूर्ण सहयोग करता है, का उपभोग 45.05 ग्राम कैल्शियम जो बच्चों की शारीरिक बृद्धि के समय हड्डियों के विकास तथा मजबूती के लिए आवश्यक है का उपभोग 19.61 ग्राम, खनिज लवण के विभिन्न अंगों को सुचारुरूप से कार्यरत रखने में महत्वपूर्ण सहयोग करते हैं का 13.60 ग्राम प्रमुख है । इसके अतिरिक्त राइवोफ्लेविन तथा एसकोर्विक एसिड की भी मात्रा मानक स्तर से कम ग्रहण की जा रही है । इन पोषक तत्वों के अतिरिक्त अन्य पोषक तत्वों की मात्रा मानक स्तर से अधिक ग्रहण की जा रही है । जिनमें से ऊर्जा 90.35 कैलोरी, प्रोटीन 32.07 ग्राम, वसा 7.21 ग्राम, फास्फोरस 862.55 मिलीग्राम तथा लौह 15.08 मिलीग्राम, कैरोटीन 209.20 म्यू ग्राम, थियामिन 0.78 मिलीग्राम तथा नियासिन 4.94 मिलीग्राम प्रमुख हैं । परन्तु जिन पोषक तत्वों का उपभोग स्तर मानक स्तर से अधिक है वह खाद्यान्नों की अधिक मात्रा उपभोग के कारण उपलब्ध है ।

सारिणी 6.85 बड़े कृषक द्वारा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व ।

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइवर ग्राम	कार्वोहाइ-ड्रेट्स ग्राम	कैल्शियम मि0ग्रा0
1. खाद्यान्न	517.42	1,809.94	58.99	14.488	6.726	9.314	371.51	175.92
2. दालें	82.68	284.83	18.35	1.075	2.728	1.736	47.46	147.17
3. जडदार शब्जियां	124.78	123.16	2.00	0.125	0.749	0.499	28.20	12.48
4. पत्तेदार तथा अन्य शब्जियां	107.66	39.40	2.26	0.215	1.292	0.646	3.12	73.21
5. तेल/घी	18.65	167.85	–	18.650	–	–	–	–
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	42.14	41.30	1.39	2.276	0.337	–	2.02	69.53
7. चीनी/गुड़	14.16	54.23	0.06	0.014	0.085	–	13.45	11.33
8. मांसाहार	20.25	34.02	5.75	1.377	0.243	–	0.36	6.48
9. फल	38.86	19.62	0.27	0.039	0.117	–	6.33	4.27
योग	968.60	2,574.35	89.07	38.259	12.277	12.195	472.45	500.39
आवश्यक मानक	–	2,484	57	31.05	25.88	7.19	517.5	520
अल्पता– आधिक्य +		+90.35	+32.07	+7.21	−13.60	+5.00	−45.05	−19.61

क्रमशः

क्रमशः सारिणी 6.85

खाद्य पदार्थ	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटीन म्यू0ग्राम	थियामिन मि0ग्रा0	राइवो–फ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन ए	एसकोर्बिक एसिड मि0ग्रा0
1.	1.272.85	21.214	201.79	1.863	0.931	21.731	–	–
2.	253.83	5.870	89.29	0.356	0.165	1.819	–	–
3.	49.91	0.873	29.95	0.125	0.012	1.497	–	21.063
4.	19.38	10.981	2,120.90	0.032	0.226	0.431	–	17.958
5.	–	–	–	–	–	–	–	–
6.	43.83	0.105	75.01	0.017	0.076	0.076	20.23	–
7.	5.66	1.614	23.79	0.003	0.006	0.071	–	–
8.	40.10	0.223	42.12	0.020	0.051	0.010	–	–
9.	6.99	0.078	731.35	0.031	0.035	0.350	–	2.8446
योग	1,692.55	40.958	3,314.20	2.447	1.502	25.985	20.23	41.8656
आवश्यक मानक	830	25.88	3,105	1.58	1.72	21.04	776	51.75
अल्पता– आधिक्य +	+.862.55	+15.08	+.209.2	+0.87	–0.22	+4.94	–,755.77	–9.88

क्योंकि विभिन्न पोषक तत्वों की उपलब्धता में खाद्यान्नों की सहभागिता के दृष्टिकोण से देखें तो ऊर्जा 73.18 प्रतिशत, प्रोटीन 66.23 प्रतिशत, वसा 37.87 प्रतिशत, फास्फोरस 75.20 प्रतिशत, लौह 51.79 प्रतिशत, थियामिन 44.26 प्रतिशत तथा नियासिन 83.62 प्रतिशत खाद्यान्नों से प्राप्त किए जा रहे हैं। जबकि आवश्यकता इस बात की है कि दूध तथा दूध से बने पदार्थों तथा घी या तेल चिकनाई के उपभोग स्तर को और अधिक बढ़ाया जाये तथा इन्हें खाद्यान्नों के स्थान पर प्रतिस्थापित किया जाये। जहाँ तक दूध/घी के उत्पादन का प्रश्न है तो इस क्षेत्र में इन पदार्थों का उत्पादन इतना कम नहीं है जितना कि कम मात्रा प्रति व्यक्ति उपभोग की जा रही है जिसका सीधा अर्थ है कि दुग्ध का उत्पादन केवल इसलिए नहीं किया जा रहा है कि उस सम्पूर्ण उत्पादन का उत्पादक द्वारा उपभोग किया जाये बल्कि अब उत्पादक के लिए शायद यह पदार्थ आयका भी एक महत्वपूर्ण स्रोत बन गया है।

कुछ अपेक्षाओं सहित यदि विभिन्न वर्गों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो पाँचों वर्गों में प्राप्त पोषक तत्वों की मात्रा में अत्यन्त कम अन्तर दिखाई पड़ता है। यह प्रमुख रूप से विभिन्न वर्गों के परिवारों में प्रचलित सामान्य खाद्य आदतों में समानता तथा प्रत्येक वर्ग के परिवारों की खाद्यान्नों पर अत्यधिक निर्भरता के कारण हैं। बड़े आकार वाले कृषक परिवारों की खाद्य आदतें, अन्य वर्गों के परिवारों की खाद्य आदतों से गुणात्मक रूप से कोई विशेष उल्लेखनीय श्रेष्ठता नहीं प्राप्त किए हुए हैं। कुछ वरस पहले यदि देखे तो अध्ययन क्षेत्र के गामीण क्षेत्रों में लगने वाले साप्ताहिक हाट। बाजारों में आलू, प्याज के अतिरिक्त अन्य शब्जियों की उपस्थिति बड़े पैमाने पर नहीं रहा करती थी, हाँ कुछ शिक्षित उच्च्व आर्थिक स्तर वाले लोग विभिन्न प्रकार की हरी शब्जियों का अपने भोजन में सम्मिश्रण कर पाते थे, परन्तु आजकल हरी शब्जियों का भी उत्पादन बड़े पैमाने पर हो रहा है परन्तु इनका अधिकांश हिस्सा शहरी तथा अर्द्धशहरी क्षेत्रों को स्थानान्तरित हो जाता है। किसी किसी समय तो छोटी जोत वाले कृषक परिवारों में कुछ परिवारों का खाद्य स्तर बड़ी जोत वाले कृषक परिवारों में कुछ परिवारों से बेहतर हो जाता है। चूँकि आधुनिक जीवन पद्धति का ग्रामीण क्षेत्रों में भी आजकल तेजी से प्रवेश हो रहा है, इसलिए अधिकांश परिवारों की प्रवृत्ति आधुनिक जीवन पद्धति की ओर आकर्षित हुई जिससे वे अपने भोजन पर उचित ध्यान नहीं दे पा रहे हैं क्योंकि आधुनिक जीवन शैली, परम्परागत जीवन शैली की तुलना में अधिक खर्चीली है। परम्परागत जीवन शैली में दूध तथा घी का अधिकाधिक उपभोग परिवार की शान का प्रतीक था परन्तु आजकल दूध/घी का उत्पादन तुलनात्मक रूप से कुछ कम हुआ है, परन्तु इस खाद्य पदार्थ का विभिन्न वर्गों द्वारा अत्यल्प मात्रा में उपभोग इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि परम्परागत भोजन में लिए जाने वाले खाद्य पदार्थ दूध घी का स्थान आधुनिक जीवन शैली में चाय और वनस्पति लेते जा रहे हैं। दूध का उत्पादन अब अतिरिक्त आय प्राप्ति के उद्देश्य से किया जाने लगा है।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि भोजन में आवश्यक ऊर्जा की कमी निचले तीन वर्गों में पाई गई जबकि मध्यम तथा बड़े कृषकों में इन वर्गों के मानक स्तर से कुछ अधिक ऊर्जा ग्रहण की जा रही है । निचले वर्गों में ऊर्जा की कमी का कारण इन वर्गों के सदस्यों द्वारा भारी तथा कठिन कार्यों का अधिक किया जाना है क्योंकि भारी कार्यों के लिए ऊर्जा की आवश्यकता भी अधिक होती है जबकि मध्यम तथा बड़े कृषक परिवार के सदस्यों द्वारा अधिकाँश हल्के कार्य सम्पन्न किए जाते हैं जिनमें कम ऊर्जा की आवश्यकता होती है । उदाहरण के लिए जहाँ सीमान्त कृषक परिवार के सदस्यों को प्रति व्यक्ति 2720 कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता पड़ती है वहीं बड़े कृषक परिवारों को मात्र 2484 कैलोरी प्रति व्यक्ति ऊर्जा चाहिए । विभिन्न वर्गों में प्रोटीन धनात्मक विचलन का प्रदर्शन कर रही है । इसी प्रकार फाइवर , फास्फोरस, लौह थियामिन तथा नियासिन भी धनात्मक विचलन का प्रदर्शन करके सभी वर्गों में इन पोषक तत्वों की उपलब्धता की समान प्रवृत्ति की ओर संकेत करते हैं । वसा भूमिहीन सीमान्त तथा लघु कृषक परिवारों में ऋणात्मक विचलन जबकि मध्यम तथा बड़े कृषक परिवारों में यह तत्व धनात्मक विचलन प्रस्तुत कर रहा है सभी वर्गों में ऋणात्मक प्रवृत्ति का प्रदर्शन करने वाले पोषक तत्वों में खनिज, कार्वोहाईड्रेट्स, कैल्शियम राइवोफ्लेविन तथा एसकार्विक एसिड हैं । कैरोटीन केवल बड़े कृषक परिवारों को छोड़कर अन्य वर्गों के लिए ऋणात्मक प्रवृत्ति का प्रदर्शन कर रहा है । इस प्रकार सभी वर्गों द्वारा सेवन किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्वों की दृष्टि से देखें तो सभी वर्गों में कुछ अल्पवादों को छोड़कर विभिन्न पोषक तत्वों का न्यूनाधिक उपभोग करके लगभग एक समान प्रवृत्ति की ओर संकेत करते हैं ।

****

1. बसु के0डी0 (1946) " स्टडीज आब प्रोटीन, पैट, एण्ड मिनरल मेटा बोलिज्म इन इण्डिया "नई दिल्ली ।

2. बन्सल पी0सी0 (1958) "इण्डियन फूड रिसर्सेज एण्ड पॉपुलेशन " वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई ।

3. बर्गीज, एनी0 एण्ड डीन (1962)" मालन्यूट्रीशन एण्ड फूड हैविट्स" तवीस्टाक पब्लिकेशन , लन्दन ।

4. इण्डियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च (1964) " दि न्यूट्रीटिव वैल्यू ऑफ इण्डियन फूड्स एण्ड प्लानिंग आफ सैटिस्फैक्टरी डाइट्स" नई दिल्ली ।

5. भाटिया बी0एम0 (1970) "इण्डियाज फूड प्रोब्लेम्स एण्ड पॉलिसी सिन्स इण्डियेन्डेन्ट्स " बाम्बे ।

6. रन्धावा एम0एस0 (1974) " ग्रीन रिवोलूशन" विकास पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली ।

7. अली मोहम्मद (1976) "एग्रीकल्वरल लैंडयूज एण्ड न्यूट्रीशन "इण्डियन जरनल ऑफ ज्योग्राफिकल स्टडीज, पटना, 1978

8. ए.एम. (1977) "फूड एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया" के0बी0 पब्लिकेशन, नई दिल्ली ।

9. अली एम. (1978) "सिचुएशन ऑफ एग्रीकल्चर फूड एण्ड न्यूट्रीशन इन रुरल इण्डिया कन्सेट पब्लिशिंग कम्पनी , नई दिल्ली ।

10. थापर आर.एस. (1981) "अवर फूड " आत्माराम एण्ड सन्स दिल्ली ।

11. प्रकाश विश्व (1983) "भोजन द्वारा पूर्ण स्वास्थ्य" दिल्ली ।

12. स्वामीनाथन एम0 (1983) " ह्यूमन न्यूट्रीशन एण्ड डाइट" बैंगलोर प्रिटिंग एण्ड पब्लिशिंग कम्पनी, बैंगलोर

13. सिंह शुकदेव प्रसाद (1984) "स्वास्थ्य और भोजन " हिन्द पाकेट बुक्स दिल्ली ।

14. सफी एम0 (1984) " फूड प्रोडक्शन एण्ड कन्जाम्पशन इन डिवलपड एण्ड डिवलपिंग कन्ट्रीज," रुरल सिस्टम, वाल्यूम 11 नं0 4 दिसम्बर ।

15. " (1984) "एग्रीकल्चरल प्रोडक्टिविटी एण्ड रीजनल इम्वैलेस" नई दिल्ली ।

16. तिवारी पी0डी0 (1984) "एग्रीकल्चर एण्ड लेवल ऑफ न्यूट्रीशन इन मध्य प्रदेश " यू0वी0वी0पी0 वाल्यूम 20 नं0 1 जून ।

17. बर्टन बेन्जामिन टी0 (1986) "ह्यूमन न्यूट्रीशन" टाटा मैकग्रा हिल पब्लि0 नई दिल्ली ।

18. सिंह वी0 आर0 (1986) "पापुलेशन शोध एण्ड अवेविलिटी ऑफ फूड ग्रेन्स इन उत्तर प्रदेश " रुरल सिस्टम वाल्यूम 4 नं0 4 दिसम्बर ।

19. सिंह एस0पी0 (1991)" पावर्टी फूड एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया " चुग पब्लिकेशन इलाहाबाद ।

*****

सप्तम अध्याय

प्रतिचयित कृषक परिवारों का स्वास्थ्य :

भोजन, आहार और खाना पर्यायवाची शब्द है । अन्न शब्द का अर्थ है जो खाया जाये । इस तरह मौलिक अर्थ में अनाज, फल, सब्जी, मांस , मछली सभी अन्न हैं । किन्तु आजके संकुचित अर्थ में खेतों में उपजने वाले दाने-अनाज को ही अन्न कहते हैं । "अन्नादि भवति भूतानि" (अन्न से ही प्राणियों का अस्तित्व है) यह गीता का लोक प्रसिद्ध वाक्य है । संसार के सभी धर्मों में अन्न को महत्व दिया गया है । सभी ने अन्न के अनादर को अधर्म माना है । अन्न की महत्ता का ही फल है कि इसकी उपज में सहायक जल तथा धरती आदि को हमारे पूर्वजों ने देवता माना । उपनिषद वाक्य है–माता भूमि सूनोडहं पृथिव्याम् "– (धरती माता है और पृथ्वी पर रहने वाले हम सारे प्राणी उसकी सन्तान हैं ।) संसार भर के ईसाईयों की प्रातः कालीन प्रार्थना है– ओ गाड, शिव मी माई डेली ब्रेड" (परमात्मा, मुझे दैनिक भोजन दे)। इस प्रकार भोजन करना प्राणि मात्र की अनिवार्य आवश्यकता है । संसार के समस्त प्राणियों का आधार भूत कारण भोजन ही है । इसी के कारण प्राणियों की देह एवं प्राणों की स्थिति है । जन्म लेते ही प्राणी सबसे पहले आहार की ओर प्रवृत होता है , क्योकि यह उसकी नैसर्गिक एवं स्वाभाविक प्रवृत्ति है ।

यह बात तो निर्विवाद सिद्ध है कि विधिपूर्वक भोजन करने वाले व्यक्ति की जीवन शक्ति दीर्घकाल तक सबल और सक्रिय रहती है । इसके विपरीत जो व्यक्ति अपने खान पान में विशेष ध्यान नहीं देते हैं उनकी जीवन शक्ति निर्वल, निष्क्रिय तथा निस्तेज बनी रहती है । जिस प्रकार बिना ईधन के अग्नि की धधकती ज्वालाएँ मन्द पड़ जाती है उसी भाँति भोजन के अभाव में उदर की जठराग्नि धीमी पड़ने लगती है और व्यक्ति दिन प्रति दिन कृषकाय होकर काल के गाल में समाहित हो जाता है । उत्तम भोजन प्राप्त होते रहने से मानवशरीर रूपी मशीन निर्बाधरूप से वर्षो तक चलकर मन, इन्द्रिय व प्राणों को चेतन्य प्रफुल्ल एवं प्रमुदित रख सकती है । वर्तमान काल में व्यक्ति का स्वास्थ्य पूर्वकाल की अपेक्षा काफी गिरचुका है । मानसिक एवं शारीरिक विकृतियाँ उसे परेशान करती रहती हैं । अब वाल्यावस्था से ही कैंसर, हैजा, चेचक, ट्यूमर आदि व्याधियाँ देखी जा सकती हैं । वस्तुतः जितने डाक्टर, हकीम, चिकित्सालय बढ़े हैं उतना ही मानव ने स्वास्थ्य से हाथ धोये हैं । "स्वास्थ्य सबल और श्रेष्ठ व्यक्तित्व का स्वामी बनने के लिए हमें पुनः "पोषकतत्वों से युक्त " आहार की ओर लौटना होगा –ऐसे भोजन की ओर, जिसमें निहित पोषकतत्वों में हमारे शरीर को शक्ति शाली बनने की क्षमता हो व जिसके तरंगित विद्युतकम्प एवम् अन्य पोषक तत्व हमारे मस्तिष्क को ताजगी प्रदान कर सकते हों । हमें अपने शरीर की पोषण पाचन प्रक्रिया को स्वाभाविक रास्ते पर लाना ही होगा । स्वस्थ शरीर का अभिप्राय है – शान्त मन तथा समृद्ध व्यक्तित्व । परिपोषक आहार का मतलब है– प्रचुर शक्ति ।"[1]

सफी० एम० का अभिमत है कि यदि हमने भोजन सम्बन्धी मूलों का निराकरण नहीं किया तो हम पूर्णतः विनष्ट हो जायेंगे । हमें शुद्ध पानी, हवा , भोजन व प्रकाश के मध्य जीवन जीना होगा । दूषित वातावरण, धुवाँ व रेडियेशनयुक्त प्रकाश तथा हानिकर रासायनिक तत्वों से युक्त भोजन से छुटकारा पाना ही होगा । आज शरीर को गतिशील रखने के लिए मादक और उत्तेजनात्मक औषधियों का सेवन किया जा रहा है किन्तु वास्तविक स्वास्थ्य एवं शक्ति प्राप्त करने के लिए यह उपचार उत्तम नहीं है । स्वस्थ रूप से जीवन बिताने का तो सीधा रास्ता है कि हम जो भी अनाज ,सब्जी, फल, दूध , मेवा आदि खाद्य पदार्थ ग्रहण करें उन्हें उनके प्राकृतिक रूप में तथा उचित ढंग से ग्रहण करें ।ताकि वे हमारे स्वास्थ्य में स्थाई लाभ पहुँचा सकें । वास्तव में हम जितना व्यर्थ और तामसिक भोजन पर खर्च करते हैं उसका आधा भी यदि हम उत्तम भोजन पर खर्च करें तो कोई ऐसा कारण नहीं है कि हम विभिन्न रोगों से मुक्त होकर देश की सेवा में सशक्त और सक्रिय भूमिका निभा सकें ।

मनुष्य का समस्त ढाँचा उसक पाचन संस्थान के आधार पर बना हुआ है, इसका अभिप्राय यह है कि मनुष्य जिस प्रकार का खाता है और उसके पाचक अँश जिस प्रकार खाये हुए भोजन को शरीर का अंश बनाते हैं तद्नुसार ही उसका शारीरिक स्वास्थ्य बनता है, यह मानव शरीर सम्बन्धी विभिन्न तथ्य हैं ।

भोजन का उद्देश्य:

क्या हम भूख मिटाने के लिए भोजन करते हैं ? यह केवल अर्द्ध सत्य है क्योंकि यदि हम केवल भूख मिटाने के लिए ही खाना खाते तो बहुत सी चीजों से भूख मट सकती है , पेट भरा जा सकता है । किन्तु भोजन का उद्देश्य भूख मिटाने से बड़ा है । वास्तव में हम जी सके, इसलिए खाते है, काम कर सकें, बढ़ सके, और शरीर के तोड़ फोड़ और ह्रास की मरम्मत कर सकें इस लिए खाते हैं । किन्तु सभी भोजन इन सभी उद्देश्यों की पूर्ति नहीं कर सकते । जैसे– आलू केवल काम करने के लिए शक्ति दे सकता है परन्तु बच्चों के शरीरिक विकास का साधन नहीं बन सकता । दूध दोनों काम कर सकता है । अलग–अलग प्राणियों को अपनी जाति, जलवायु, कार्य आदि के अनुरूप विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ चाहिए । हिरण और खरगोश का काम घास फूस से चल जायेगा , परन्तु बाघ –सिंह को मांस अवश्य चाहिए । घर में चूहे अनाज, कागज, कपड़े आदि से भोजन पा लेगें , परन्तु बिल्ली को शुद्ध प्राणी प्रोटीन चाहिए ।स्पष्ट है भोजन में जितने उपादानों की हमें जरुरत है सभी की आवश्यक पूर्ति होनी चाहिए । उनमें से एक की भी कमी शरीर को रोगी बना देगी । आदिम मनुष्य किसी भी खाने लायक चीज से अपना पेट भर लेते थे । जंगलों में पहाड़ों पर और नदियों आदि में उन्हें आसानी से भोजन मिल

जाता था । खेतों की कमी नहीं थी, खेतिहरों की कमी थी । जब जनसंख्या बढ़ती गई खेतों पर दबाव पड़ा, जंगल आबाद हुए , फिर भी खाद्य पदार्थों की कमी पड़ती गई । आज संसार के कई देशों की, जिसमें भारत भी एक देश है, भोजन की समस्या विकट हो गई है, किसी भी खाद्यान्न की प्रचुरता नहीं है । इस गरीबी में यह सोचना आवश्यक हो गया है कि कम से कम पैसे में खाने की कौन कौन सी चीजें खोजी जायें जिससे पेट तो भरे ही साथ ही शरीर भी स्वस्थ रह सके ।

भोजन में स्वाद और रुचि का भी बड़ा महत्व है । किसी को उड़द की दाल पसंद है तो किसी को मसूर की । स्वाद की खुशामद मेंमसालों का आदर बढ़ गया है , यद्यपि मसाले लाभ कम पहुँचाते हैं, नुकशान अधिक । मांस , एक तो भारत जैसे गरीब देश में अधिकाँश लोगों को मिल नहीं पाता , जिन्हें मिल भी सकता है उनमें कुछ लोग इसे निषिद्ध अखाद्य मानते हैं । मांस की तो कौन कहे , बहुत लोग धार्मिक भावना से प्याज, लहसुन, शलजम आदि वनस्पति को भी निषिद्ध मानते हैं । भोजन के मामले में परम्पराओं (रिवाज) की समस्या अलग है । "आइए , रुचि, निषेध, अन्धविश्वास और परम्परा आदि के बादलों से ऊपर उठकर भोजन के प्रश्न पर हम केवल वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ही विचार करें । भोजन के रूप में जितनी चीजों को खाते हैं उनकी संख्या अनगिनत है । प्रायः सभी पशु पक्षी, पेड़ पौधे, लता का कोई न कोई भाग अवश्य खाया जाता है ।"[3] खाद्य पदार्थों पर काफी अनुसंधान किए गये हैं और अभी भी किए जा रहे हैं । खाद्य पदार्थों के रासायनिक विश्लेषण से पता चला है कि भोजन के विभिन्न रासायनिक तत्व शरीर के लिए आवश्यक हैं । इनमें से एक का भी अभाव शरीरको अस्वस्थ कर देगा और एक नएक रोगअवश्य पैदा करेगा ।

7.1 <u>कुपोषण जन्य बीमारियों का वर्गीकरण</u> :

जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि प्रत्येक प्राणी को उसके कार्य के अनुसार विभिन्न पोषक तत्वों से युक्त भोजन की आवश्यकता होती है ।" सामान्यतया भारी कार्य करने वाले व्यक्तियों को अधिक पोषक तत्वों से युक्त भोजन चाहिए , जबकि हल्का कार्य करने वाले लोगों को कम पोषक तत्वों से युक्त भोजन चाहिए । महिलाओं के भोजन में आवश्यक पोषक तत्वों की भी उनके कार्य के अनुसार आवश्यकता होती है , परन्तु गर्भवती तथा स्तनपान कराने वाली महिलाओं को अधिक पोषकतत्व चाहिए ।"[4] इसी प्रकार विभिन्न आयु के बच्चों के लिए अलग –अलग पोषक तत्वों से युक्त भोजन की आवश्यकता होती है । परन्तु जब शरीर के लिए आवश्यक विभिन्न पोषक तत्वों में असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है तब शरीर विभिन्न प्रकारके रोगों का शिकार हो जाता है । भारत जैसे देश में जहाँ की

अधिकाँश जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है और कठिन परिश्रम करके भोजन की आवश्यक जुटाती है । जिसको यह भी ज्ञान नहीं कि शरीरको नीरोग बनाए रखने के लिए केवल मात्रात्मक रूप से ही भोजन की आवश्यकता नहीं होती है बल्कि वह गुणात्मक रूप से भी श्रेष्ठ होना चाहिए ।" अज्ञानता तथा निर्धनता के कारण ग्रामीण जन भोजन का उद्देश्य केवल उदरपूर्ति तक ही सीमित समझते हैं । इसी कारण ग्रामीण क्षेत्रों में अल्प पोषण तथा कुपोषण की विकराल समस्या विद्यमान है जिसके कारण विभिन्न प्रकार की कुपोषण जनित बीमारियों के शिकार हैं ।"[5] विभिन्न पोषक तत्वों की कमी से कौन–कौन से रोग सम्भावित है ? की आगे व्याख्या की जा रही है ।

(1) **प्रोटीन कैलोरी की अल्पता जन्य बीमारियाँ:**

प्रोटीन केवल दिन प्रतिदिन के खर्च के लिए शरीर को शक्ति ही नहीं देती है बल्कि शरीर के तोड़ फोड़ की मरम्मत भी करती है, साथ ही शरीर के विकास में भी सहायक होती है । प्रोटीन शक्ति देती है । प्रोटीन की मात्रा रक्त में बहुत होती है ।गर्भवती महिलाओं को प्रोटीन की बहुत आवश्यकता होती है क्योंकि गर्भस्थ शिशु का शरीर माँ के रक्त से ही तैयार होता है । प्रोटीन द्वारा रोग निवारण शक्ति उत्पन्न होती है , इसके अभाव में आक्सीजन लेने की शक्ति क्षीण पड़ जाती है , फलतः रोगाणु शीघ्रता से शरीर मे प्रविष्ट होकर मनुष्य को रोगी बना देते हैं । बालकों के लिए तो प्रोटीन वरदान है क्योंकि शरीर बढ़ाने में इसका स्थान महत्वपूर्ण है । प्रोटीन के अभाव में बहुत से बच्चे अल्पावस्था में ही मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं । अतः बच्चों के भोजन में ऊर्जा तथा प्रोटीन का महत्वपूर्ण स्थान होता है, ऊर्जा तथा प्रोटीन अल्पता के लिए हमारे यहाँ उच्च्व जन्मदर तथा निर्धनता के कारण बच्चों का रोगग्रस्त होना उत्तरदायी है । इन दोनों पोषक तत्वों की कमी न केवल बच्चों के शरीरिक विकास को ही रोकती है बल्कि उनके मस्तिष्क के विकास के विकास को भी अवरुद्ध करते हैं । प्रोटीन ऊर्जा की कमी बच्चों में दो प्रकार के रोग उत्पन्न करती है । प्रथम प्रकार क्वाशीकोर के नाम से जाना जाता है जिसमें शारीरिक विकास रुक जाना, अतिसार, त्वचा का बदरंग होना , बालों का झड़ना,एनीमियां,हाथों पैरों में सूजन आदि लक्षण होते हैं। दूसरे प्रकार को मरास्मस कहा जाता है जिसमें शारीरिक मांस पेसियाँ नष्ट हो जाती है ।

(2) **खनिज लवण की कमी से उत्पन्न बीमारियाँ :**

भारतीय भाषाओं में लवण का अर्थ प्रायः वह नमक है जो हम प्रतिदिन खाते हैं । किन्तु विज्ञान की शब्दावली में यह अनेक नमकों में से एक नमक है । विभिन्न प्रकार के नमक शरीर के किसी न किसी अंग के निर्माण में सहायक होते हैं । शरीर के लिए आवश्यक लवणों में से लोहा, कैल्शियम, फास्फोरस तथा सोडियम आदि प्रमुख हैं ।

(अ) लोहा:

लोहा शरीर में रुधिर की लाल कणिकाओं (हीमोग्लोबिन) के निर्माण में अत्यन्त आवश्यक है। शरीर में लोहे की कमी से रक्त में कमी आने लगती है जिससे रक्ताल्पता (एनीमियां) का रोग हो जाता है । रोगी व्यक्ति के चेहरे पर मुर्दों के समान पीलापन छा जाता है। किसी भी कार्य के करने में उसका मन नहीं लगता है । उदासी, आलस्य, थोड़े से ही श्रम में थक जाना आदि लक्षण प्रकट होने लगते हैं । लोहा रक्त कणों का एक अनिवार्य भाग होता है । हीमोग्लोबिन फेफड़ों से आक्सीजन-वायु. को ग्रहण करके उसे रक्त के प्रभाव के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर के अँगों को भेजता है ।

(ब) कैल्शियम :

कैल्शियम हड्डियों तथा फेफड़ों की बीमारियों में बहुत काम करता है । इसकी कमी होने पर बच्चों में रिकेट्स तथा स्त्रियों को मृदुलास्थि (ओस्टोमलेशिया) रोग हो जाता है ।कैल्शियम के अभाव में त्वचा की अनेक बीमारियाँ हो जाती हैं ।

(स) फास्फोरस :

रक्त को शुद्ध करने तथा स्नायुमण्डल को स्वस्थ रखने में फास्फोरस का विशेष महत्व है । फास्फोरस के अभाव में तन्त्रिकाओं का कार्य सुचारुरूप से नहीं हो पाता है। हड्डियों तथा दाँतों के निर्माण में फास्फोरस बहुत सहायक होता है ।

(द) सोडियम :

शरीर में सोडियम का यदि अभाव होता है तो शरीर में थकावट अधिक आती है , अंग प्रत्यंगों में ऐंठन होने लगती है और शरीरिक सक्रियता कम हो जाती है । हृदयय की गति के लिए भी सोडियम आवश्यक है । रक्त में यदि सोडियम न रहे तो हृदय का धड़कना बन्द हो जाये और जीवन दीप बुझ जाये ।

(3) विटामिन की कमी से उत्पन्न बीमारियाँ :

विटामिन का अर्थ है जीवनदाता । ये सहायक भोज्य पदार्थ है । बीसवीं श्ताब्दी में भोजन के जिस तत्व ने लोगों में सबसे बड़ी दिलचस्पी पैदा की है , वह विटामिन है । इसकी जरुरत बहुत कम मात्रा में होती है किन्तु इनका अभाव अनेक तरह के रोग पैदा करता है ।

(अ)<u>विटामिन "बी"$_1$</u> :

शारीरिक परिश्रम करने वाले व्यक्तियों को मानसिक श्रम करने वाले व्यक्ति की अपेक्षा बी$_1$ की आवश्यकता कम होती है । इसके उचित प्रयोग करते रहने से हृदय रोग आक्रमण नहीं कर पाता है, पाचन शक्ति में बृद्धि होती है, नेत्रों में पनपने वाले रोगों से मुक्ति मिलती है तथा नाड़ी मण्डल और मांस पेशियां स्वस्थ्य और सबल बनी रहती है । "बी$_1$ की कमी होने पर शरीर में बेरी–बेरी नामक रोग हो जाता है , जिससे मांस पेशियां व्यर्थ हो जाती हैं और हृदय अत्यधिक दुर्बल हो जाता है । शरीर के असक्त और दुर्बल हो जाने से रोगी व्यक्ति सदैव आलस्य और तन्द्रा में घिरा रहता है । मन्दाग्नि, अरुचि, लो ब्लड प्रेशर का शिकार होने लगता है और स्वभाव में चिड़चिड़ापन आ जाता है। विटामिन बी$_1$ का रासायनिक नाम थियामिन है ऐसा जैदी [6] का अभिमत है ।

(ब) <u>विटामिन बी$_2$</u> :

विटामिन बी$_2$ का मानव स्वास्थ्य की रक्षा में महत्वपूर्ण योगदान है । इस विटामिन के कारण ही प्राणी का शरीर उचित मात्रा में बृद्धि को प्राप्त होता है । त्वचा के विभिन्न रोगों –झाँई, धब्बा,चम्बल, खुजली, खाज,फोड़ा फुन्सियों से शरीर की रक्षा करता है , नेत्र तथा पलकों को स्वस्थ्य रखकर नेत्रों में धुन्ध, जाली, लालिमा, जलन, दिवान्धता, दृष्टिहीनता, पलकों की शोथ व गुहेरी आदि नहीं होने देता है । इसके अभावमें सिर के बाल कमजोर होकर झड़ने लगते हैं, असमय वालों में सफेदी आने लगती है , शरीर में स्फूर्ति, चुस्ती कम होने लगती है । ओठों, मुख व कानों की श्लैष्मिक त्वचा का रंग सफेद पड़ने लगता है तथा त्वचा तथा नेत्रों के अनेक रोग मोतियाबिन्द, दृष्टिमांध आदि व्यक्ति को घेरने लगते हैं । इस विटामिन का रासायनिक नाम राइवोफ्लैविन है ।

(स) <u>विटामिन बी$_3$</u> :

इस विटामिन के समुचित प्रयोग से स्नायुसंस्थान भली प्रकार से कार्य करते रहते हैं , आंते स्वस्थ्य और मजबूत रहती हैं । इस विटामिन के अभाव में भोजन की नली सुचारुरूप से कार्य नहीं कर पाती है जिससे अजीर्ण,मन्दाग्नि आदि उदर की बीमारियां हो जाती हैं । दांत, जिव्हा तथा मसूढ़ों की श्लैष्मिक झिल्ली पर सूजन आ जाती है । मानसिक दबाव बढ़ जाने से अनिद्रा, थकान, कार्य करने में अनुत्साह आदि लक्षण प्रकट होने लगते हैं और पैलेगा रोग हो जाता है । इसका रासायनिक नाम निकोटिनिक अम्ल अथवा नियासिन है ।

(द) <u>विटामिन सी</u> :

विटामिन सी के समुचित प्रयोग से रक्त शुद्ध रहता है परन्तु इसके अभाव में स्कर्वी रोग होता है स्कर्वी रोग में रक्त वाहिनी नलिकायें कमजोर हो जाती हैं, मसूढ़े फूल जाते हैं , मस्तिष्क कमजोर पड़ जाता है, हड्डिया कमजोर पड़ जाती है । शरीर में आलस्य और थकान का अनुभव होने लगता है , शरीर पर रुखे सूखे चकत्ते पड़ जाते हैं । इस विटामिन का रासायनिक नाम "एसकोर्विक एसिड " है ।

(य) <u>विटामिन ए</u> :

विटामिन ए स्वस्थ्य बर्द्धक होता है । शरीर में इसके पर्याप्त मात्रा में होने पर शरीर बलिष्ठ होता है, हड्डी मजबूत और पुष्ट होती है । शारीरिक बृद्धि के साथ-साथ इसके सेवन से शरीर की रोग निरोधक क्षमता भी बढ़ती है । आँखों को स्वस्थ रखने के लिए इसकी बहुत जरुरत पड़ती है । स्वसन तन्त्रों की श्लैष्मिक झिल्लियों को स्वस्थ्य तथा भली प्रकार से कार्यशील रखना भी इसका ही कार्य है । विटामिन ए के अभाव में नेत्रों में रतौंधी, माँड़ी, अंधापन तथा चर्मरोग आदि बीमारियां होती हैं ।

(र) <u>विटामिन डी</u> :

शरीरमें कैल्शियम तथा फास्फोरस के लवणों के शोषित होने में यह विटामिन बहुत अधिक सहायक होता है । हड्डी तथा आंतों को मजबूत बनाए रखने में विटामिन डी का बहुत बड़ा योगदान है । इसके अभाव में गर्भवती तथा स्तनपान कराने वाली महिलाओं को मृदुलास्थि (ओस्टोमलेशिया) रोग हो जाता है, बच्चों में रिकेट्स (सूखा) रोग हो जाता है ।

(ल) <u>विटामिन के</u> :

रक्त को जमाने (थक्का बनाने) के लिए यह विटामिन बहुत जरुरी है । शरीर में इसकी कमी होने से रक्तस्राव अधिक होने की सम्भावना रहती है । शरीर में शीत पित्त हो जाने तथा चोट लग जाने पर रक्त का जल्दी बन्द न होना आदि दोष भी सम्भव हो सकते हैं ।

पोषण सम्बन्धी बीमारियाँ :

इस प्रकार के अध्ययनों का अन्तिम उद्देश्य यह होता है कि अध्ययन क्षेत्र में लोगों से स्वास्थ्य के स्तर का एक चित्र प्रस्तुत कर सके । सामान्यतः यह देखा गया है कि क्षेत्र में प्रचलित अधिकाँश रोग अल्पपोषण तथा कुपोष्ण की देन हैं । क्षेत्रीय चिकित्सकों के अनुसार एड्स तथा कैन्सर के रोगों को छोड़कर अन्य रोग पोषण सम्बन्धी असन्तुलन के कारण जनसंख्या के एक बड़े हिस्से को प्रभावित करते हैं , इस ओर ध्यान देने की अत्यधिक आवश्यकता है ।

पिछले अध्याय में हम विभिन्न वर्गो द्वारा ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थो तथा उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों का विश्लेषण कर चुके हैं जिसमें विभिन्न पोषक तत्वों का आवश्यक मानक स्तर से कम/अधिक ग्रहण किया जाना, जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न कुपोष्ण जनित रोगों की शिकार जनसंख्या का तुलनात्मक विश्लेषण इस अध्याय में किया जा रहा है । यह तथ्य सारिणी क्रमांक 6.81 से 6.85 तक स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न वर्गो द्वारा ग्रहण किए जाने वाला भोजन मात्रात्मक तथा गुणात्मक दोनों ही दृष्टियों से निम्न स्तरीय कहा जा सकता है क्योंकि भोजन में विभिन्न खाद्य पदार्थो का समायोजन केवल उदर पूर्ति की दृष्टि से तो ठीक लगता है , परन्तु सन्तुलित भोजन में विभिन्न खाद्य पदार्थों का मात्रात्मक समायोजन भारी असन्तुलन को दर्शा रहा है । विभिन्न पोषक तत्वों की अधिकाँश मात्रा विभिन्न खाद्यान्नों से ग्रहण की जा रही है जो कि मात्रात्मक दृष्टि से तो कुछ ठीक कही जा सकती है परन्तु गुणात्मक दृष्टि से अत्यन्त निम्न स्तरीय है । उदाहरण के लिए सभी वर्गो में प्रोटीन आवश्यक स्तर से अधिक ग्रहण की जा रही है परन्तु इसका अधिकाँश हिस्सा खाद्यान्नों से प्राप्त होने के कारण उतना श्रेष्ठ नहीं है जितना श्रेष्ठ प्रोटीन अण्डा, दूध, माँस , मछली तथा पनीर आदि खाद्य पदार्थो से प्राप्त होती है । यही तथ्य अन्य पोषक तत्वों के सम्बन्ध में लागू होता है । "पोषक तत्वों की मात्रात्मक एवं गुणात्मक उपलब्धता के आधार पर यह कहा जा सकता है कि अध्ययन क्षेत्र में लोगों की खाद्य आदतें अत्यन्त निम्न स्तरीय हैं जो ग्रामीण निर्धनता की ओर संकेत करती हैं ।[7] " सर्वेक्षण के समय विभिन्न वर्गो में प्रचलित पोषण सम्बन्धी रोगों का विवरण सारिणी 7.1 में दिया जा रहा है ।

सारिणी 7.1 विभिन्न वर्गों में प्रचलित पोषण सम्बन्धी रोगियों का विवरण (प्रतिशत में)

कृषकों का वर्ग	प्रभावित जनसंख्या का प्रतिशत	हाथों तथा पैरों में ऐंठन	पेट के रोग	थकान तथा शरीर में सूजन	शर्दी जुकाम मसूढ़ों में सूजन	होंठ तथा जिव्हा के रोग	पेलेग्रा (त्वचा फटने का रोग	बेरी-बेरी	रिकेट तथा ओस्टो-मैलेशिया	रतौंधी	स्कर्वी	जोड़ों में दर्द	डाइविटीज (मधुमेह)
भूमिहीन	52.23	12.05	7.59	18.75	10.27	6.25	8.48	5.80	3.13	4.46	4.46	9.38	2.23
सीमान्त कृषक	43.54	9.07	9.75	12.24	16.55	7.03	6.80	3.63	2.27	2.49	3.85	5.44	–
लघु कृषक	40.83	5.67	8.32	8.13	8.69	4.54	4.16	1.89	2.08	6.43	2.65	6.05	1.32
मध्यम कृषक	47.08	6.28	5.38	10.76	6.28	9.19	5.38	3.14	1.79	3.59	3.36	7.40	0.67
बड़े कृषक	39.19	2.03	6.70	7.43	8.11	4.73	–	2.70	2.03	1.35	2.03	6.08	3.38
औसत	44.35	7.16	7.72	11.07	10.18	6.54	4.75	3.19	2.18	4.08	3.30	6.66	1.12

सारिणी क्रमांक 7.1 स्पष्ट रूप से दर्शा रही है कि कुल जन संख्या का 44.35 प्रतिशत भाग एक या एक से अधिक पोषण सम्बन्धी रोगों से प्रभावित है जिसमें सर्वाधिक प्रभावित प्रतिशत भूमिहीन (52.23 प्रतिशत) है जिसका पीछा क्रमशः मध्यम कृषक परिवारों (47.08 प्रतिशत), सीमान्त कृषक परिवारों (43.54 प्रतिशत), लघु कृषक परिवारों (40.83 प्रतिशत) तथा बड़े कृषक परिवारों (39.19 प्रतिशत) द्वारा किया जा रहा है । सर्वेक्षण के दौरान यह भी देखा गया है कि महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों तथा बच्चों के खान पान पर विशेष ध्यान दिया जाता है , साथ ही यह भी एक विचित्र तथ्य देखने को मिला कि जिन परिवारों में यदि कोई सदस्य नौकरी द्वारा अथवा अन्य सेवाओं द्वारा नकद द्रब्य अर्जित करता है उसके खान पान का अन्य सदस्यों की अपेक्षा जिसमें बच्चे भी सम्मिलत हैं, अधिक ध्यान रखा जाता है । भूमिहीन परिवारों का प्रतिशत अन्य वर्गो की अपेक्षा अधिक है जिसका मूल कारण है इस वर्ग के परिवारों की आय का स्तर नीचा होना चूँकि इस वर्ग में अधिकाँश सदस्य दैनिक मजदूरी द्वारा अपना तथा अपने परिवार का भरण पोषण कर रहे हैं जिसमें से कुछ सदस्यों को अपनी सेवाओं के बदले कुछ अच्छे खाद्य पदार्थ प्राप्त हो जाते हैं , परन्तु "ये खाद्य पदार्थ इन परिवारों की आवश्यकता की पूर्ति अत्यन्त थोड़े समय के लिए ही कर पाते हैं , शेष समय में इन परिवारों को निम्न खाद्य पदार्थो पर ही निर्भर रहना पड़ता है।[8] सर्वेक्षण के समय अध्ययन क्षेत्र में निम्नलिखित महत्वपूर्ण रोग प्रकाश में आये ।

(1)**हाथों तथा पैरों में ऐंठन** :

हाथों तथा पैरों में ऐंठन भूमिहीन तथा सीमान्त कृषक परिवारों के सदस्यों में क्रमशः 12.05 प्रतिशत तथा 9.07 प्रतिशत औसत 7.16 प्रतिशत से अधिक पाई गई । सामान्य से कम मध्यम कृषक परिवारों में 6.28 प्रतिशत, लघु कृषक परिवारों में 5.67 प्रतिशत तथा न्यूनतम 2.03 प्रतिशत बड़े कृषक परिवारों में देखी गई । यद्यपि किसी रोग के लिए अनेक कारण संयुक्त रूप से उत्तरदायी होते हैं परन्तु शरीर में विटामिन सी (एसकार्विक एसिड) की कमी हाथों और पैरों में ऐंठन के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी होता है । अध्ययन क्षेत्र में सभी वर्गों में एसकार्बिक एसिड मानक स्तर से कम प्राप्त किया जा रहा है ।

(2) पेट के रोग :

पेट के रोगों का मूल कारण अपच होती है जो शरीर की अनेक बीमारियों की मुख्य कारण बनती है । यद्यपि आंत सम्बन्धी गैस की शिकायत प्रत्येक वर्ग में पाई गई परन्तु इस रोग की अधिकतम

शिकायत 9.75 प्रतिशत सीमान्त कृषक परिवारों में पाई गई । दूसरे स्थान पर लघु कृषक परिवार 8.32 प्रतिशत इस रोग से पीड़ित पाये गये । तृतीय और चतुर्थ स्थान पर भूमिहीन तथा बड़े कृषक परिवार क्रमशः 7.59 प्रतिशत तथा 6.70 प्रतिशत इस रोग से ग्रसित देखे गये जबकि इस बीमारी की न्यूनतम आवृत्ति 5.38 प्रतिशत मध्यम आकार वाले कृषक परिवारों में प्राप्त हुई । "भूमिहीन,सीमान्त तथा लघु कृषक परिवारों में इस रोग का मूल कारण निम्न श्रेणी के खाद्य पदार्थो का सेवन माना जा सकता है , खासकर इन वर्गो के सदस्यों का भोजन वर्षात के मौसम में अत्यन्त निम्न श्रेणी तथा कम मात्रामें उपलब्ध हो पाता है क्योंकि इस मौसम में दैनिक मजदूरों के कार्य दिवसों की संख्या में अत्यधिक कमी हो जाती है जिसका प्रभाव इन परिवारों की खाद्य सामग्री पर भी पड़ता है ।"[9] अन्य वर्गो की स्थिति न्यूनाधिक एक समान है जिसमें मध्यम आकार वाले कृषक इस रोग से कुछ कम पीड़ित लगते हैं । सभी वर्गो को अपने सामान्य भोजन में रेशेदार खाद्य पदार्थो के अधिक उपयोग की प्रेरणा दी जानी चाहिए जिससे इस रोग के शिकार कम से कम लोग हो सके । लोगों के भोजन में जब पोषक तत्व थियामिन (विटामिन बी$_1$) की कमी हो जाती है तो अनेक कारणों सहित अपच तथा कब्ज की शिकायतें रहने लगती हैं जो बाद में स्थाई होकर इस रोग को जन्म देती हैं । सर्वेक्षण के दौरान यद्यपि सभी वर्गो में थियामिन आवश्यक मानक स्तर से अधिक ग्रहण किया जा रहा है परन्तु यह अधिकांश खाद्यानों से प्राप्त होने वाला निम्न श्रेणी का होने के कारण शरीर के लिए उतना लाभकर नहीं है जितना कि हरीसब्जियों, दूध, फल तथा अण्डे से प्राप्त होने वाला उत्तम थियामिन शरीर के लिए लाभप्रद होता है । यही कारण है कि पर्याप्त थियामिन न ग्राह्य होकर भी लोग इस रोग के शिकार हो रहे हैं ।

(3) **थकान तथा शरीर में सूजनः**

सम्पूर्ण ग्रामीण जनसंख्या का 11.07 प्रतिशत हिस्सा इस बीमारी से ग्रसित देखा गया है । अध्ययन क्षेत्र में इस औसत से अधिक आवृत्ति वाले वर्गो में भूमिहीन 18.75 प्रतिशत तथा सीमान्त कृषक परिवार 12.24 प्रतिशत आते हैं जबकि औसत से कम पीड़ित वर्गो में लघु, मध्यम तथा बड़े कृषक परिवार हैं इनमें से मध्यम कृषक परिवार के सदस्य सर्वाधिक 10.76 प्रतिशत इस रोग से पीड़ित देखे गये यह रोग बसा, ऊर्जा तथा अनेक विटामिन जिनमें थियामिन तथा नियासिन प्रमुख है की भोजन में कम मात्रा ग्रहण करने से जन्म लेता है । अतःलोगों के भोजनमें वसा तथा ऊर्जा पोषक तत्वों की आवश्यक मात्रा सम्मिलत रहने से यह रोग नहीं पनपने पाता है ।

(4) शर्दी जुकाम तथा मसूढ़ों में सूजन :

ऋतु परिवर्तन तथा वातावरण में तापमान परिवर्तन के कारण शर्दी जुकाम से लोगों का पीड़ित हो जाना एक सामान्य सी बात है , परन्तु जब इस रोग का फैलाव किसी व्यक्ति के लिए वर्षभर बना रहे तो शर्दी जुकाम निस्संदेह किसी घातक बीमारी की ओर संकेत करने लगता है । कभी-कभी जब खासी में रक्त सहित कफ आने लगता है तो यह स्कर्वी रोग के लक्षण होते हैं जो विटामिन सी (एसकार्बिक एसिड) की कमी के कारण होता है । इस रोग से सर्वाधिक पीड़ित वर्ग में सीमान्त कृषक परिवार 16.55 प्रतिशत पाये गये जिनका पीछा कर रहे भूमिहीन परिवार 10.27 प्रतिशत, लघु कृषक परिवार 8.69 प्रतिशत, बड़े कृषक परिवार 8.11 प्रतिशत तथा न्यूनतम 6.28 प्रतिशत मध्यम कृषक परिवारों के सदस्य पाये गये । इस रोग से ग्रसित लघु तथा बड़े कृषक परिवार न्यूनाधिक लगभग एक समान स्थिति का प्रदर्शन कर रहे हैं ।

(5) होठों तथा जिव्हा के रोग :

भोजन में राइवोफ्लेविन (विटामिन बी$_2$) की कमी से मुख के किनारे की त्वचा चटकने लगती है साथ ही इस पोषक तत्व की कमी से फोड़ा फुन्सी का भी शरीर पर आक्रमण होने लगता है । इस रोग के कारण होंठ तथा जिव्हा लाल रंग के हो जाते हैं जिससे मुख में कष्ट बढ़ने लगता है तथा भोजन करने में अत्यन्त कठिनाई का अनुभव होता है । इस रोग का मूल कारण भोजन में "राइवोफ्लेविन " की अल्पता होती है, जिसकी सभी वर्गो में मानक स्तर से कम उपभोग की प्रवृत्ति देखी गई । जिसके कारण मध्यम आकार के कृषकों में सर्वाधिक 9.19 प्रतिशत रोगी प्राप्त हुए जबकि न्यूनतम 4.54 प्रतिशत लघु कृषकों में रोगी पाये गये । अन्य वर्गो में 4.73 प्रतिशत से 7.03 प्रतिशत के मध्य रोगी प्राप्त हुए ।

(6) पेलेग्रा :

"निकोटिनिक एसिड" या "नियासिन" की अल्पता पेलेग्रा रोग का नेतृत्व करता है । यह रोग त्वचा के उन भागों में सूजन, जो सूर्य— के प्रकाश में खुले रहने के द्वारा पहचाना जाता है, दूसरा इसका प्रमुख लक्षण अतिसार, जिव्हा में सूजन तथा अनिद्रा द्वारा प्रकट होता है , यह बीमारी उन क्षेत्रों में अधिक पाई जाती है जहां पर मक्का तथा ज्वार प्रमुख खाद्य के रूपमें ग्रहण किए जाते हैं । क्योंकि इन दोनों खाद्य पदार्थो में नियासिन की मात्रा अधिक होती है और नियासिन की मात्रा आवश्यकता से अधिक ग्रहण करने से भी रोग का आक्रमण होता है । अध्ययन क्षेत्र में इन दोनों खाद्यों के प्रचलन से इस रोग से लोग ग्रसित है । जिसमें सर्वाधिक रोगी भूमिहीन वर्ग में 8.48 प्रतिशत पाये गये जिसका पीछा सीमान्त कृषक परिवारों 6.80 प्रतिशत द्वारा किया जा रहा है । तीसरा स्थान मध्यम आकार के कृषकों का 5.38 प्रतिशत है

जबकि न्यूनतम 4.16 प्रतिशत रोगी लघु कृषक परिवारों के मध्य पाये गये । बड़े आकार वाले कृषक परिवारों में यह रोग अभी तक प्रवेश नहीं पा सका है ।

(7) <u>बेरी – बेरी</u>:

बेरी–बेरी रोग भी सभी वर्गो में एक महत्वपूर्ण रोग के रूप में देखा गया जिसका विस्तार 1.89 प्रतिशत से 5.80 प्रतिशत तक विभिन्न वर्गो में देखा गया । भूमिहीन परिवारों में सर्वाधिक 5.80 प्रतिशत रोगी पाये गये जबकि न्यूनतम रोगी 1.89 प्रतिशत लघु कृषक परिवारों में प्राप्त हुए । सीमान्त कृषक परिवारों में 3.63 प्रतिशत रोगी पाये गये जबकि 3.14 प्रतिशत रोगी मध्यम कृषक परिवारों में देखे गये । बड़े कृषकों में 2.76 प्रतिशत रोगी इस रोग से ग्रसित प्राप्त हुए । बेरी–बेरी रोग का मूल कारण थियामिन (विटामिन $बी_1$) की भोजन में अल्पता होता है । बेरी–बेरी रोग के दो रूप देखने को मिलते हैं । प्रथम तो गीला बेरी–बेरी रोग, दूसरा सूखा बेरी–बेरी रोग तथा एक तीसरा स्वरूप शिशु सम्बन्धी बेरी–बेरी देखने को मिला । सूखा बेरी–बेरी रोग के लक्षणों में भूख कम लगना, हाथों –पैरों में "सनसनाहट तथा चेतनासून्य हो जाना प्रमुख है । इस रोग से मांसपेशियॉ नष्ट हो जाती है जिससे घूमने फिरने में कष्ट होता है । शुष्क बेरी–बेरी के लक्षणों में पैरों में सूजन , हृदय का बढ़ जाना, हृदय का तेज गति से धड़कना तथा सांस तेज चलना आदि प्रमुख हैं ।

(8)<u>रिकेट्स (सूखा रोग)</u>:

शरीर में विटामिन डी की कमी बच्चों में सूखा रोग तथा युवकों तथा स्तनपान कराने वाली महिलाओं को मृदुलास्थि (ओस्टोमलेशिया) रोग हो जाता है । इस रोग के लक्षणों में कमर तथा रीढ़ की हड्डियों में पीड़ा होने लगती है। बच्चों में सूखा रोग के प्रारम्भिक लक्षणों में कपाल के मुलायम स्थान पर गोल घेरा सा बनने लगता है बाद में यह हड्डियों पर आक्रमण करके उनमें विकृति उत्पन्न कर देता है । अध्ययन क्षेत्र में कुल ग्रामीण जनसंख्या का 2.18 प्रतिशत भाग इस रोग से ग्रसित पाया गया, इस औसत से अधिक भागेदारी 3.13 प्रतिशत भूमिहीन परिवार तथा 2.27 प्रतिशत सीमान्त कृषक परिवार कर रहे हैं जबकि न्यूनतम रोगी 1.79 प्रतिशत मध्यम आकार वाले कृषक परिवारों में प्राप्त हुए हैं । लघु तथा बड़े आकार वाले कृषक परिवार इस रोग से सम्बन्धित लगभग समान स्तर का प्रदर्शन कर रहे हैं ।

(9) रतौंधी : (नाइट ब्लाइंडनेस)

शरीर में कैरोटीन या विटामिन ए की कमी से इस रोग को प्रवेश का अवसर प्राप्त होता है । अंधेर अथवा कम प्रकाश में आँखों को आगे का दृश्य देखने के लिए विटामिन ए अत्यावश्यक होता है साथ ही विटामिन ए बच्चों के शारीरिक विकास के लिए भी अत्यावश्यक है । इस विटामिन की कमी प्रारम्भ में आँख की काली पुतली के आस पास के श्वेत भाग को बदरंग करती है, तत्पश्चात काली पुतली को प्रभावित करता है, यदि रतौंधी का समय रहते इलाज नहीं हो पाता है तो यह फिर अंधेपन में परिवर्तित हो जाती है । रतौंधी के साथ साथ विटामिन ए की कमी से आँख का लाल होना, माड़ा, कैराटोमलेशिया, तथा फालीकुलरकैरारोसिस आदि रोग भी हो जाते हैं । अध्ययन क्षेत्र में 3.19 प्रतिशत जनसंख्या इस रोग से प्रभावित है, जिसमें सर्वाधिक 6.43 प्रतिशत रोगी लघु कृषक परिवारों में प्राप्त हुए हैं जबकि 4.46 प्रतिशत रतौंधी के रोगी भूमिहीन परिवारों में प्राप्त हुए । न्यूनतम प्रतिशत 1.35 बड़े आकार वाले कृषक परिवारों में प्राप्त हुआ । सीमान्त कृषक परिवार तथा मध्यम कृषक परिवार क्रमशः 2.49 प्रतिशत तथा 3.59 प्रतिशत रोगियों की सूचना दे रहे हैं ।

(10) स्कर्वी :

शरीर में विटामिन सी की कमी से अस्थियों तथा दाँतों में स्कर्वी अर्थात मांसूखोरा रोग हो जाता है । यह रोग प्रायः उन व्यक्तियों को अधिक होता है तो सूखा मांस, सूखे फल तथा सूखी सब्जियों का सेवन अधिक मात्रा में करते है । स्कर्वी रोग से रक्त वाहिनी नलिकाएँ कमजोर हो जाती हैं, मसूढ़े फूल जाते हैं , मस्तिष्क कमजोर पड़ जाता है । शरीर में आलस्य और थकान का अनुभव होने लगता है , शरीर पर रुखे सूखे चकत्ते पड़ जाते हैं । सिर में रुखापन आ जाता है । "एक सर्वेक्षण के मध्य 3.30 प्रतिशत जनसंख्या स्कर्वी रोग से पीड़ित पाई गई जिसमें भूमिहीन परिवारों में इस औसत से अधिक अर्थात 4.46 प्रतिशत, सीमान्त कृषक परिवारों में 3.85 प्रतिशत तथा माध्यम कृषक परिवारों में 3.86 प्रतिशत रोगी इस रोग से पीड़ित पाये गये । जबकि लघु कृषक परिवारों में 2.65 प्रतिशत स्कर्वी रोग के रोगी प्राप्त हुए जिसका पीछा बड़े आकार वाले कृषक परिवारों द्वारा किया जा रहा है जिनमें 2.03 प्रतिशत रोगी इस बीमारी से पीड़ित दिखाई दिए । स्वामीनाथन[10] के एक प्रतिवेदन के आधार पर उक्त निष्कर्ष निकाले गये हैं ।

(11) **हड्डियों के जोड़ों में दर्द :**

चिकित्सकीय भाषा में इसे गठिया (ग्रंथिबात) तथा ग्रंथि शोथ या बात रोग (हड्डियों के जोड़ों में सूजन) के नाम से जाना जाता है । यह रोग सभी वर्गों में 50 वर्ष की आयु से अधिक के व्यक्तियों में पाया जाता है औसत रूप में 6.60 प्रतिशत जनसंख्या इस रोग से पीड़ित प्राप्त हुई जिसमें सर्वाधिक पीड़ित व्यक्ति भूमिहीन परिवारों में 9.38 प्रतिशत पाये गये जबकि मध्यम कृषक परिवारों में 7.40 प्रतिशत रोगी इस रोग से ग्रसित देखे गये । इस रोग का न्यूनतम प्रभाव सीमान्त कृषक परिवारों में देखा गया जहाँ 5.44 प्रतिशत लोग इस बीमारी से पीड़ित दिखे । लघु कृषक वर्ग में 6.05 प्रतिशत तथा बड़े कृषक परिवारों में 6.08 प्रतिशत रागी इस रोग से पीड़ित पाये गये । जब रक्त में पोषक तत्वों के असंतुलित सेवन से यूरिक एसिड का उच्च स्तर हो जाता है तो सोडियम यूरेट शरीर के कुछ विशेष तन्तुओं में एकत्रित होने लगता है जिससे हड्डियों के जोड़ों में लगातार सूजन बनी रहती है । कभी कभी यह रोग यूरिक एसिड के शरीर में अति उत्पादन के कारण तथा किडनी पर अनावश्यक दबाव के कारण भी हो जाता है । मुलायम तथा अस्थि तन्तुओं दोनों में सोडियम यूरेट का प्रवाह जब बढ़ जाता है तो यह सामान्यता कोमलास्थि तथा हड्डियों के जोड़ों के पास एकत्रित होने लगता है जिससे बृद्धावस्था के समय हड्डियों के जोड़ अत्यधिक कड़े हो जाते है और बृद्धलोगों को चलने फिरने में कठिनाई का अनुभव होने लगता है ।

(12) **डाइविटीज (मधमेह):**

यह रोग शरीर में इनसुलिन की कमी स उत्पन्न होता है । इस बीमारी के मूल कारण में जब प्रोटीन और वसा का अत्यधिक उपाभोग होने के कारण कार्बोहाइड्रेट्स सामान्य ढंग से उपयोग होकर ऊर्जा में परिवर्तित नहीं हो पाते हैं जिससे रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ने लगती है और छोटे छोटे कणों के रूपमें मूत्र के साथ बाहर निकलने लगता है । यदि इसका समुचित इलाज नहीं करवाया जाता है तो यह रोग जानलेवा भी हो सकता है । मधुमेह से पीड़ित रोगी का खून जमने में कठिनाई होती है और यदि शरीर में कोई चोट या घाव हो जाने पर उसके भरने में अधिक समय लगता है । "सर्वेक्षण[11] के अनुसार इस बीमारी से पीड़ित लोगों में सर्वाधिक बड़े कृषक परिवारों में 3.38 प्रतिशत पाये गये जबकि भूमिहीन कृषक परिवारों में 2.23 प्रतिशत, लघु कृषक परिवारों में 1.32 प्रतिशत तथा मध्यम कृषक परिवारों में 0.67 प्रतिशत रोगी इस रोग से ग्रसित पाये गये । सीमान्त कृषक परिवार इस रोग से पूर्णतया मुक्त पाये गये ।"

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि यह ज्ञात करना कोई आसान कार्य नहीं है कि विभिन्न व्यक्तियों को उनकी आयु , लिंग तथा कार्यो के अनुसार विभिन्न विटामिन तथा खनिजों से मुक्त विभिन्न खाद्य पदार्थो की कितनी–कितनी मात्रा आवश्यक है जिससे ईश्वर द्वारा निर्मित इस रासायनिक कारखाने को सामान्य गति से संचालित किया जा सके । इस सम्बन्ध में केवल इतना कहा जा सकता है प्रत्येक परिवार को अपनी आर्थिक स्थिति तथा आय उपार्जन के आधार पर विभिन्न समयों में भिन्न–भिन्न पोषक तत्वों से युक्त उपलब्ध खाद्य पदार्थो को चयन करना चाहिए कि जिससे वे अपनी खाद्य आदतों को संतुलित बनाए रख सकें । अनेक खाद्य पदार्थ जो शरीर के लिए कम कीमत पर आवश्यक पोषक तत्वों को उपलब्ध करा सकते हैं , क्षेत्रीय उत्पादन द्वारा ही समायोजित किए जा सकते हैं परन्तु अज्ञानतावश अथवा उच्च जीवन स्तर के खोखले प्रदर्शन के कारण हम उनका सेवन करने से वंचित रह जाते हैं । प्रयास यह किया जाना चाहिए कि कम कीमत पर उत्तम पोषक तत्वों से युक्त खाद्य पदार्थों का चयन करके शारीरिक विकारों से मुक्त रह सकें ।

****

सन्दर्भ ग्रन्थ सप्तम

1. गोपालन सी0 (1966) "मेजर न्यूट्रीशनल प्रोब्लेम्स ऑफ इण्डिया एण्ड साउथ ईस्ट एशिया " प्रोसीडिंग्स ऑफ सेवेन्थ इन्टर नेशनल ज्योग्रेफिकल कांग्रेस वाल्यूम 3, 1966.

2. सफी एम0 (1967) "फूड प्रोडक्शन इफिसिएन्सी एण्ड न्यूट्रीशन इनइण्डिया"दि ज्योग्रेफर वाल्यूम 14 अलीगढ़ ।

3. साजिद हुसेन (1972) "एग्रीकल्चर माल-न्यूट्रीशन एण्ड डिफीसिएन्सी डिसीजेज इन रुरल यू0 पी0 " दि इण्डियन ज्योग्रेफी जरनल वाल्यूम 16, जन0–मार्च नं0 1–2

4. सुखात्में पी0वी0 (1973) " ह्यूमन कैलोरीज एण्ड प्रोटीन नीड्स एण्ड हाऊ दे आर सेटिस्फाइड टुडे , लन्दन ।

5. अली मुहम्मद (1978)" सिचुएशन ऑफ फूड एण्ड न्यूट्रीशन इन रुरल इण्डिया" के0बी0 पब्लिकेशन्स न्यू डिलही ।

6. जैदी, सैयद साजिद हुसेन (1982)" रुरल इण्डिया एण्ड माल न्यूट्रीशन" कन्सेप्ट पब्लिकेशन कम्पनी नई दिल्ली ।

7. राव वी0के0आर0वी0 (1982) "फूड न्यूट्रीशन एण्ड पावर्टी इन इण्डिया" विकास पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली ।

8. तिवारी पी0डी0 (1985) "फूड इन्टेक सिस्टेम एण्ड डिफीसिएन्सीज इन रुरल एरिया ऑफ मध्य प्रदेश," रुरल सिस्टेम वाल्यूम 3 नं0 4 दिसम्बर ।

9. सिंह सीता राम (1986)" हाऊ टु इम्प्रूव रुरल सीनरियो फास्टर " योजना वाल्यूम 30 नं0 9 मई 16–31

10. स्वामीनाथन एम0 (1986)" हैण्डबुक ऑफ फूड एण्ड न्यूट्रीशन " बैगलोर प्रिंटिंग एण्ड पब्लिशिंग कम्पनी बेंगलोर ।

11. सिंह एस0पी0 (1991)" पावर्टी फूड एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया " चुग पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद ।

*****

अष्टम अध्याय

निष्कर्ष एवं सुझाव :

भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए कृषि का विशेष महत्व है, यह मनुष्य का अति प्राचीन व्यवसाय है, यद्यपि इसका ढंग और प्रणालियाँ समय समय पर बदलती रही हैं । कृषि का उपयोग मानव के लिए खाद्य, वस्त्र तथा गृह निर्माण का साधन मात्र ही नहीं प्रदान करता अपितु यह आवासीय विकास , उद्योग और व्यापार का भी उद्‌बोधक है ।

पृथ्वी की सतह कृषि एवं खाद्यान्न उत्पादन का प्रमुख स्थान है जिस पर मानव का भरण पोषण निर्भर है । इसी लिए मनुष्य अनादि काल से धरती की पूजा करता आ रहा है, वास्तव में यह मनुष्य के आर्थिक विकास की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करती है । यह मनुष्य के सामाजिक , सांस्कृतिक एवं सर्वांगीण विकास की जननी है । पृथ्वी का सम्पूर्ण धरातल कृषि योग्य नहीं है और न ही इसे कृषि योग्य बनाया जा सकता है, क्योंकि इसका एक बड़ा भाग समुद्र जल, पर्वत, पठार, मरुभूमि , दलदल, जंगल, जलाशय आदि से आच्छादित है । कृषि के लिए तो धरातल का वही भाग उपयोगी है जो किसी न किसी रूप में उपजाऊ है । मानवीय प्रयासों द्वारा कृषि अयोग्य भूमि का एक बड़ा भाग भी कृषि योग्य बनाया जा सका है, परन्तु इसका अभी भी अधिकाँश भाग कृषि हेतु अनुपयुक्त ही है । इसलिए मनुष्य को सीमित कृषि योग्य भूमि से ही अपने भरण पोषण का पर्याप्त साधन प्राप्त करना है, यही उसके अनेक उद्यमों का स्रोत भी है । इन उद्‌देश्यों की सफलता भूमि के समुचित उपयोग, उसकी उत्पादन क्षमता, उससे प्राप्त उपलब्धियाँ तथा अन्य लाभों पर निर्भर है । दूसरे शब्दों में भूमि संसाधन के यथासम्भव अधिकतम उपयोग तथा उसके नियोजन द्वारा ही मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति सम्भव है ।

यद्यपि भूमि संसाधन में भारत एक समृद्ध देश है तथापि उन्हें विकसित करनेकी अब भी आवश्यकता है । इसीलिए इस देश की भूमि उपयोग की योजनाओं को अधिक महत्व देना आवश्यक हो गया है क्योंकि कृषि भूमि अनेक देशों के आर्थिक विकास का प्रमुख आधार है , परन्तु जहाँ कहीं भूमि अधिक है, वहाँ तो इसका महत्व औरभी अधिक बढ़ जाता है । भारत ऐसा ही देश है । पर आश्चर्य तो यह है कि इसे भी खाद्य संकट का सामना करना पड़ रहा है । तीब्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या, जीवनस्तर का क्रमिक उत्थान, पौधों और जैविक पदार्थों के औद्योगिक उपयोग में अप्रत्याशित बृद्धि , खाद्यान्न तथा अन्य कृषि उपजों के बीच भूमि उपयोग में उत्पन्न होने वाली प्रतिस्पर्धा, नागरिक तथा औद्योगिक विकास में प्रगति, यातायात साधनों एवं यातायात मार्गों का विस्तार आदि कृषि भूमि का अभाव उत्पन्न करते जा रहे

हैं किन्तु तकनीकी में परिवर्तन से कृषि उत्पादन की सघनता में बृद्धि भी की जा रही है , जिससे भूमि का अधिक नियोजित उपयोग भी होने लगा है जिससे जनसंख्या की निरन्तर बृद्धि होते रहने पर भी खाद्यान्न के अभाव को कुछ हद तक रोका जा सकता है परन्तु वास्तविकता यह है कि भोजन, कपड़ा, गृह तथा ईधन जैसी समस्याएं सर्वदा विद्यमान रहेंगी और समय समय पर उग्ररूप भी धारण करती रहेंगी । जनसंख्या की अनियंत्रित एवं अप्रत्याशित बृद्धि को देखते हुए कृषि साधन के विकास से इन समस्याओं का आंशिक समाधान ही सम्भव है किन्तु उसके लिए भी हमें प्रयत्नशीलरहना आवश्यक है । इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भूमि की क्षमता, उर्वरता तथाउसके समुचित एवं समन्वित उपयोग का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है । इन्हीं दृष्टिकोणों से कृषि भूमि उपयोग पोषण स्तर एवम् मानव स्वास्थ्य शोध अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है । प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का प्रमुख उद्देश्य कृषि प्रधान इटावा जनपद के कृषि भूमि उपयोग, कृषि उत्पादन तथा मानव स्वास्थ्य की समुचित व्याख्या करना है , जिससे जनपद वासियों के आर्थिक उन्नयन हेतु समन्वित वैज्ञानिक नियोजन हेतु कुछ कार्यक्रम प्रस्तावित किए जा सके । इस शोध कार्य में शोधककर्ता को निष्कर्ष रूप में निम्नलिखित तथ्य प्राप्त हुए हैं ।

1– अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा 26^0 21^1 से $27^0 1^1$ उत्तरी अक्षांश तथा 78^0 45^1 से 79^0 45^1 पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है, जिसका कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 436727 हेक्टेयर है जिसमें कृषि फसलों हेतु 289691 हेक्टेयर भूमि का उपयोग किया जाता है, शेष 147036 हेक्टेयर भूमि – अन्य उद्देश्यों की पूर्ति हेतु उपयोग में लाई जाती है अथवा अकृष्य और परती भूमि के रूप में है ।

2– गंगा तथा यमुना नदियों के मध्य स्थित यह क्षेत्र इन दोनों नदियों की जलोद मिट्टी से युक्त समतल मैदानी क्षेत्र है, जिसका ढाल उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर है । उत्तर पश्चिम में समुद्रतल से औसत ऊँचाई 152.44 मीटर तथा दक्षिण पूर्व में यह ऊंचाई मात्र 137.80 मीटर है । यमुना नदी के दोनों ओर तथा सेंगर नदी जो जनपद के लगभग मध्य में पश्चिम से पूर्व की ओर बहती है, के दोनों ओर कुछ भूमि ऊबड़खाबड़ तथा असमतल है जो कृषि कार्य की दृष्टि से अधिक उपजाऊ नहीं है ।

3– अध्ययन क्षेत्र की कृषि अब परम्परागत सिंचाई के साधन वर्षा पर अधिक निर्भर न रहकर क्रत्रिम सिंचाई के साधनों से अधिकांश सुसज्जित हो गई है परन्तु फिर भी औसत वार्षिक वर्ष 792 मिलीमीटर होती है । यहाँ का तापमान उच्चतम 45.6^0 सेन्टीग्रेट तथा न्यूनतम 4.2^0 सेन्टीग्रेट के मध्य रहता है । उच्च्तम तापमान जून के प्रारम्भ में तथा न्यूनतम तापमान जनवरी के प्रारम्भ में पायाजाता है ।

4. अध्ययन क्षेत्र में कृषि के लिए कुल उपलब्ध 289691 हेक्टेयर भूमि को कुल 2124655 जनसंख्या की उदरपूर्ति की जिम्मेदारी वहनकरनी पड़ती है । जनसंख्या बृद्धि की दृष्टि से देखें तो वर्ष 1981 तथा वर्ष 1991 के मध्य 21.90 प्रतिशत की दर से बढ़ी, जिससे अब प्रतिवर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल पर 474 व्यक्ति निवास करने के लिए वाध्य हैं । जबकि 1981 में जनसंख्या घनत्व 403 व्यक्ति था । कृषि घनत्व प्रति हेक्टेयर 1.05 व्यक्ति है । साक्षरता — 41.0 प्रतिशत है । कृषि में लगे हुए कर्मकारों का कुलकर्मकारों से प्रतिशत 67.13 है । कुल कर्मकारों में कृषकों का प्रतिशत 18.82 है ।

5– अध्ययन क्षेत्र में अन्य क्षेत्रों की भाँति जोत के आकार में अत्यधिक असमानता दिखाई पड़ती है, जहाँ एक ओर 68.19 प्रतिशत परिवार जिनके पास 1 या इससे कम कृषि भूमि है मात्र 27.91 प्रतिशत कृषि क्षेत्र से अपने जीवन निर्वाह के साधन जुटाते है वही दूसरी ओर जिन परिवारों के पास 3 हेक्टेयर से अधिक कृषि भूमि है वे संख्या में तो मात्र 6.44 प्रतिशत ही है परन्तु इन परिवारों के पास कुल कृषि भूमि का 30.64 प्रतिशत क्षेत्र अपने भरण पोषण के लिए उपलब्ध है । जिन परिवारों के पास 1 हेक्टेयर से अधिक तथा 2 हेक्टेयर से कम कृषि भूमि है ऐसे 18.67 प्रतिशत कृषक 25.66 प्रतिशत भूमिपर स्वामित्व प्राप्त किए हुए हैं जबकि 2 हेक्टेयर से अधिक तथा 3 हेक्टेयर से कम भूस्वामित्व वाले 6.70 प्रतिशत कृषक 15.79 कृषि भूमि पर कृषि फसलें उगा रहे हैं । 5 हेक्टेयर से अधिक कृषि जोत आकार वाले 1.91 प्रतिशत परिवार 13.54 प्रतिशत भूमि पर अपना अधिपत्य स्थापित किए हुए हैं । स्पष्ट है कि अधिकांश लगभग 87 प्रतिशत कृषक 2 हेक्टेयर से कम कृषि भूमि रखने वाले कृषक है और इन परिवारों के पास कुल कृषि क्षेत्र का लगभग 53 प्रतिशत क्षेत्रफल कृषि कार्य हेतु उपलब्ध है ।

6– अध्ययन क्षेत्र में 436727 हेक्टेयर कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल में से 289691 हेक्टेयर क्षेत्रफल (66.33 प्रतिशत) पर वर्ष में एक या एक से अधिक बार विभिन्न प्रकार की फसलें उगाई जाती हैं । वर्ष में दो या दो अधिक बार विभिन्न फसलों के अन्तर्गत बोया जाने वाला क्षेत्र 135646 हेक्टेयर (46.82 प्रतिशत) है । इस प्रकार वर्ष में विभिन्न फसलों के अन्तर्गत उपयोग में लाया जाने वाला सकल कृषि क्षेत्र 425337 हेक्टेयर है । सिंचाई के साधनों में प्राकृतिक वर्षा के अतिरिक्त कृत्रिम साधनों का भी बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है जिनमें से राजकीय नहरे तथा विद्युत/डीजल चालित नलकूप/पम्पिंग सेट्स महत्वपूर्ण हैं, इनसाधनों द्वारा सिंचाई की सुविधाएँ उपलब्ध रहने के कारण शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल 216566 हेक्टेयर (शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 74.76 प्रतिशत) है जिसके कारण फसल गहनता सूचकांक 146.82 है । वर्ष के तीनों कृषि मौसमों में खरीफ तथा रबी कृषि मौसम में खाद्यान्न, दलहनी तथा तिलहनी फसलों की प्रधानता है जबकि जायद कृषि मौसम में ककड़ी, खरबूजा, तरबूज तथा शब्जियाँ अधिक महत्वपूर्ण फसलें हैं कहीं–कहीं

इस मौसम में उर्द/मूँग तथा सूरजमुखी का भी प्रचलन है । खाद्यान्न फसलों में धान, ज्वार, बाजरा , मक्का, गेहूँ तथा जौ महत्वपूर्ण है जबकि अरहर चना तथा मटर इस क्षेत्र की प्रमुख दलहनी फसलें हैं कहीं–कहीं दलहनी फसलों में मसूर भी देखने को मिलती है । तिलहनी फसलों में राई/सरसों ही प्रमुख फ़सल है । कहीं कहीं तिल तथा मूँगफली भी उगाई जाती है । नकदी फसलों में गन्ना तथा आलू प्रमुख रूप में उगाये जाते हैं । इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र में प्रचलित कृषि प्रारूप में 71.32 प्रतिशत क्षेत्र पर खाद्यान्न फसलें, 14.25 प्रतिशत क्षेत्रफल पर दलहनी फसलें , 6.48 प्रतिशत क्षेत्रफल पर तिलहनी फसलें 3.26 प्रतिशत क्षेत्र फल पर नकदी फसलें तथा 4.69 प्रतिशत क्षेत्रफल पर जायद तथा अन्य फसलें उगाई जाती हैं ।

7.अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न फसलों का उत्पादन निम्न लिखित है ।

1.	खाद्यान्न	(मी0टन)	638396
2.	दालें	"	75481
3.	तिलहन	"	33934
4.	गन्ना	"	143400
5.	आलू	"	181316

8– अध्ययन क्षेत्र में प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष उपलब्ध खाद्यान्न की औसत सकल 300.47 मात्रा किलोग्राम है, दालों की उपलब्ध सकल मात्रा 35.53 किलोग्राम है । इस प्रकार प्रतिदिन प्रति व्यक्ति उपलब्ध खाद्यान्न तथा दालों की मात्रा क्रमशः 823 ग्राम तथा 97 ग्राम है । ग्रामीण क्षेत्र में विभिन्न कृषि उत्पादन से प्रति व्यक्ति प्रतिवर्ष 353.71 किलोग्राम खाद्यान्न की तथा 41.00 किलोग्राम दाल मात्रा उपलब्ध है । प्रति व्यक्ति प्रतिदिन यह मात्रा क्रमशः 969 ग्राम तथा 112 ग्राम है । विभिन्न फसलों के कुल उत्पादन से शुद्ध खाने योग्य हिस्से की गणना करने पर खाद्यान्नों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध शुद्ध मात्रा 754 ग्राम तथा दालों की उपलब्ध शद्ध मात्रा 68 ग्राम है । विकास खण्ड बार खाद्यान्नों की शुद्ध उपलब्ध मात्रा 400 ग्राम से 600 ग्राम तक प्रति व्यक्ति प्रतिदिन बढ़पुरा, चकरपुर तथा अजीतमल विकास खण्डों में रहने वाले लोगों को प्राप्त है । 600 ग्राम से 800 ग्राम तक जसवन्त नगर, महेवा, अछल्दा , औरैया तथा भाग्यनगर विकास खण्डों में उपलब्ध है । 800 ग्राम से 1000 ग्राम तक वसेरहर, भरथना, विधूना, एखाकटरा तथा सहार विकासखण्ड में उपलब्ध है । सर्वोच्च खाद्यान्न उपलब्धता 1000 ग्राम से अधिक ताखा विकास खण्ड में है । इसी प्रकार दालों की शुद्ध उपलब्धता प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 25 ग्राम से 50 ग्राम तक

वसरेहर, ताखा, भरथना, विधूना, अछल्दा तथा एखाकटरा विकासखण्डों में उपलब्ध है । 50 ग्राम से 75 ग्राम तक भाग्य नगर, जसवन्तनगर तथा बढ़पुरा विकास खण्ड है । 75 ग्राम से 100 ग्राम तक दालों की उपलब्धता औरैया तथा सहार विकास खण्डों की है । 100 ग्राम से अधिक दालों की उपलब्धता रखने वाले विकास खण्डों में अजीतमल तथा चकर नगर है । इसमें चकरनगर विकास खण्ड 134 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन दालों का उत्पादन करके सर्वोच्च स्थान पर है ।

9- अध्ययन क्षेत्र में अनुकूलतम भूमि भारवहन क्षमता की गणना करने पर 678 व्यक्ति प्राप्त हुई है । जबकि कायिक घनत्व 499 व्यक्ति है इस प्रकार उत्पादन की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र में 179 व्यक्तियों के लिए अतिरिक्त भूमि भार वहन क्षमता विद्यमान है । दूसरे शब्दों में अध्ययन क्षेत्र में प्रति वर्ग किलोमीटर कृषि क्षेत्र पर 499 व्यक्तियों का भरण पोषण निर्भर है जबकि इतने ही क्षेत्र से प्राप्त होने वाले कृषि उत्पादन से न्यूनतम 678 व्यक्तियों का पोषण किया जा सकता है । जिसका अर्थ है कि अभी भी 179 व्यक्तियों के पोषण के लिए अतिरिक्त कृषि उत्पादन विद्यमान है ।

10- अध्ययन क्षेत्र में दोई की विधि के अनुसार गणना करने पर आठ फसल संयोजन तक प्राप्त होता है, जब कि थामस के अनुसार गणना करने पर दो, तीन, पॉच तथा आठ फसलों के फसल संयोजन क्षेत्र प्राप्त हुए हैं । रफी उल्लाह की विधि से गणना करने पर तीन फसल से लेकर पॉच फसलों तक के शस्य संयोजन क्षेत्र प्राप्त होते हैं । शस्य विभेदीकरण की दृष्टि से अति उच्च विभेदीकरण की श्रेणी में औरैया, महेवा, अजीतमल, जसवन्तनगर, बढ़पुरा तथा अछल्दा कुल 6 विकासखण्ड पाये गये, उच्च विभेदीकरण की श्रेणी में भाग्गनगर, सहार, चकरनगर तथा वसरेहर कुल चार विकास खण्ड प्राप्त हुए । मध्यम शस्य विभेदीकरण में एखाकटरा तथा भरथना कुल दो विकास खण्ड आते है जबकि निम्न शस्य विभेदीकरण की श्रेणी में भी विधूना तथा ताखा दो विकास खण्ड स्थित हैं ।

11- विभिन्न खाद्य पदार्थो से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की गणना करने पर पाया गया कि सभी वर्गो में विभिन्न पोषक तत्वों की अधिकाँश मात्रा खाद्यान्नों तथा दालों से ग्रहण की जा रही है और दूध, घी, मॉस, मछली तथा अण्डों आदि के सेवन का नितान्त अभाव दिखाई पड़ा । इसी कारण आवश्यक मानक स्तर के अनुसार विभिन्न वर्गो द्वारा ग्रहण किए जाने वाले पोषक तत्वों की मात्रा में कोई अधिक अन्तर नहीं दिखाई पड़ता है परन्तु गुणात्मक अन्तर उल्लेखनीय है । प्रतिदिन के भोजन में पोषक तत्वों की आवश्यक

मात्रा का संयोजन असन्तुलित है । भूमिहीनों में यह असन्तुलन अधिक दिखाई पड़ा । जिसमें आवश्यक मानक स्तर से ऊर्जा 21.14 कैलोरी कम, प्रोटीन 32.82 ग्राम अधिक, वसा 2.53 ग्राम कम, खनिज 15.66 ग्राम कम, फाइवर 5.32 ग्राम अधिक कार्वोहाइड्रेटस 48.10 ग्राम कम, कैल्शियम 113.84 ग्राम कम, फास्फोरस 901.24 मिलीग्राम अधिक ,लौह 13.10 मिलीग्राम अधिक, कैरोटीन 812.07 म्यूग्राम कम, थियामिन 0.90 मिलीग्राम अधिक, राइवोफ्लेविन 0.35 मिलीग्राम कम, नियासिन 5.62 मिलीग्राम अधिक, विटामिन ए 832.60 कम, एसकोर्विक एसिड 18 मिलीग्राम कम ग्रहण किए जा रहे हैं ।

इसी प्रकार सीमान्त कृषक परिवार ऊर्जा 152.27 कैलोरीकम, प्रोटीन 29.68 ग्राम अधिक , वसा 3.98 ग्राम कम , खनिज 16.36 ग्राम कम, फाइवर 4.64 ग्राम अधिक, कार्वोहाइड्रेट्स 81.08 ग्राम कम, कैल्शियम 133.17 मि0ग्रा0 कम, फास्फोरस 826 मिलीग्राम अधिक लौह 11.38 मिलीग्राम अधिक, कैरोटीन 708.58 म्यूग्राम कम, थियामिन 0.786 मिलीग्राम कम, राइवोफ्लेविन 0.387 मिलीग्राम कम,नियासिन 4.37 मिलीग्राम अधिक विटामिन ए 843.14 कम तथा एसकोर्विक एसिड 18.45 मिलीग्राम कम ग्रहण कर रहे हैं ।

लघुकृषकों में ऊर्जा 25.48 कैलोरी कम, प्रोटीन 32.67 ग्राम अधिक ,वसा 1.25 ग्राम कम, खनिज 15.21 ग्राम कम, फाइवर 5.15 ग्राम अधिक , कार्वोहाइड्रेट्स 55.15 ग्राम कम, कैल्शियम 90.05 मिलीग्राम कम, फास्फोरस 86.15 मिलीग्राम अधिक , लौह 13.78 मिलीग्राम अधिक, कैरोटीन 421.34 म्यूग्राम कम, थियामिन 0.87 मिलीग्राम अधिक, राइवोफ्लेविन 0.32 मिलीग्राम कम, नियासिन 5.03 मिलीग्राम अधिक, विटामिन ए 819 कम, तथा एसकार्विक एसिड 18.07 मिलीग्राम कम पोषक तत्वों को ग्रहण किया जा रहा है ।

मध्यम कृषक परिवारों में प्रतिदिन ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थो से ऊर्जा 60.4 कैलोरी अधिक, प्रोटीन 30.84 ग्राम अधिक , वसा 4.11 ग्राम अधिक, खनिज 14.38 ग्राम कम, फाइवर 5.07 ग्राम अधिक, कार्वोहाइड्रेट्स 42.90 ग्राम कम , कैल्शियम 69.58 मिलीग्राम कम, फास्फोरस 872.15 मिलीग्राम अधिक, लौह 13.08 मिलीग्राम अधिक , कैरोटीन 347.07 म्यूग्राम कम, थियामिन .88 मिलीग्राम अधिक, राइवोफ्लेविन 0.29 मिलीग्राम कम, नियासिन 5.31 मिलीग्राम अधिक , विटामिन ए 776.23 कम, तथा एसकोव्रिक एसिड 14.83 मिलीग्राम कम पोषक तत्वों को प्राप्त कर रहे हैं ।

बड़े आकार वाले कृषक परिवारों में प्रचलित खाद्य आदतों में विभिन्न पोषक तत्वों की मात्रा आवश्यक — मानक स्तर से ऊर्जा 90.35 कैलोरी अधिक, प्रोटीन 32.07 ग्राम अधिक वसा 7.21 ग्राम अधिक, खनिज 13.60 ग्राम कम, फाइवर 5.00 ग्राम अधिक , कार्वोहाइड्रेट्स 45.05 ग्राम कम, कैल्शियम 19.61 मिलीग्राम कम, फास्फोरस 862.55 मिलीग्राम अधिक, लौह 15.08 मिलीग्राम अधिक कैरोटीन 209.2 म्यूग्राम अधिक थियामिन 0.87 मिलीग्राम अधिक, राइवोफ्लेविन 0.22 मिलीग्राम कम, नियासिन 4.94 मिलीग्राम अधिक विटामिन ए 755.77 कम तथा एसकोर्विक एसिड 9.88 मिलीग्राम कम ग्रहण की जा रही है ।

इस प्रकार औसत रूप में अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न वर्गों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्व क्षेत्रीय मानक स्तर से ऊर्जा 25.83 कैलोरी कम, प्रोटीन 31.47 ग्राम अधिक, वसा 0.05 ग्राम कम, खनिज 15.21 ग्राम कम, फाइवर 5.01 ग्राम अधिक , कार्वोहाईड्रेट्स 56.77 ग्राम कम, कैल्शियम 92.23 मिलीग्राम कम फास्फोरस 867.76 मिलीग्राम अधिक, लौह 13.04 मिलीग्राम अधिक, कैरोटीन 470.42 म्यूग्राम कम थियामिन 0.85 मिलीग्राम अधिक , राइवोफ्लेविन 0.32 मिलीग्राम कम नियासिन 5.00 मिलीग्राम अधिक, एसकोर्विक एसिड 16.67 मिलीग्राम कम तथा विटामिन ए 11.09 कम प्राप्त किए जा रहे हैं ।

12— अध्ययन क्षेत्र में ग्रहण किए जाने वाले भोजन से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों के असंतुलन से विभिन्न वर्गों में अल्पपोषण तथा कुपोष्ण से उत्पन्न एक या एक से अधिक विभिन्न रोगों से ग्रसित 44.35 प्रतिशत जनसंख्या प्राप्त हुई जिसमें 52.23 प्रतिशत भूमिहीन परिवारों में, 43.54 प्रतिशत सीमान्त कृषक परिवारों से 40.83 प्रतिशत लघु कृषक परिवारों में , 47.08 प्रतिशत मध्यम आकार वाले कृषक परिवारों में तथा 39.19 प्रतिशत बड़े कृषक परिवारों में रोगी प्राप्त हुए । इस रोगियों में 7.16 प्रतिशत हाथों तथा पैरों में ऐंठन के रोगी, 7.72 प्रतिशत पेट की बीमारियों से ग्रसित, 11.07 प्रतिशत थकान तथा शरीर में सूजन के रोगी 10.18 प्रतिशत शर्दी जुकाम तथा मसूढ़ों में सूजन से पीड़ित 6.54 प्रतिशत होठों तथा जीभ के रोगों से ग्रसित, 4.75 प्रतिशत पेलेग्रा रोग के रोगी, 3.19 प्रतिशत बेरी—बेरी के रोगी, 2.18 प्रतिशत रिकेट्स तथा मृदुलास्थि के रोग से पीड़ित रोगी 4.08 प्रतिशत रतौंधी के रोग से ग्रसित , 3.30 प्रतिशत स्कर्वी रोग के रोगी 6.66 प्रतिशत हड्डियों के जोड़ों में दर्द के रोगी, तथा 1.12 प्रतिशत डाइविटीज से पीड़ित पाये गये ।

सुझाव :

अनुकूलतम भूमि उपयोग का आशय किसी क्षेत्र विशेष के भूसंसाधन के दुरुपयोग को रोकते हुए सन्तुलित एवं आदर्श भूमि उपयोग को प्रस्तावित करना है । भारत ऐसे विकासशील देश जहाँ की अधिकाँश जनसंख्या गाँवों में निवास करती है जिसकी राष्ट्रीय आय का एक बड़ा हिस्सा कृषि से प्राप्त होता है ,जिसकी जनसंख्या का एक बड़ा भाग अपने जीवन यापन के साधन कृषि से प्राप्त करता है , ऐसी अर्थव्यवस्था के समन्वित ग्रामीण विकास के लिए सन्तुलित ग्रामीण भूमि उपयोग न केवल महत्वपूर्ण है बल्कि अत्यावश्यक भी है ।वास्तव में समुन्नत कृषि ग्रामीण विकास की आधारशिला है, जिससे न केवल ग्रामीण जनसंख्या की विभिन्न आवश्यकताओं की आपूर्ति होती है बल्कि बहुमुखी आर्थिक विकास को प्रोत्साहन मिलता है । भूमि की प्रत्येक इकाई के अनुकूलतम उपयोग द्वारा भूमि की भरण पोषण क्षमता में कई गुना बृद्धि की जा सकती है एवम् ग्रामीण विकास की गति को तीव्र बनाया जा सकता है । इससे पर्यावरण में सुधार के साथ–साथ जीवनयापन की सुविधाओं में भी पर्याप्त सुधार किया जा सकता है ।

अध्ययन क्षेत्र देश का एक ग्राम्य अंचल है अतएव इसके समुचित विकास हेतु उच्चतम भूमि उपयोग क्षमता तथा अधिकतम कृष्योत्पादन आवश्यक है । साथ ही कृषि पर जनसंख्या के भार को कम करने के लिए कृषि पर आधारित उद्योगों एवम् कृष्येत्तर व्यवसायों को प्रोत्साहन देकर रोजगार के अतिरिक्त अवसरों का प्रावधान किया जाना अपेक्षित है । पिछले विवरण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि उपयोग "गहन जीवन निर्वाहक भूमि उपयोग अवस्था " अथवा विकासोन्मुख कृषि तंत्र से सम्बन्धित है । यहाँ कृषि भूमि उपयोग के सुधार में भौतिक कारकों के साथ आर्थिक एवम् सामाजिक कारक अवरोध उपस्थित करते हैं ।

पूर्व अध्यायों के अध्ययन से स्पष्ट है कि भौतिक एवं मानवीय वातावरण के विभिन्न तत्व संयुक्त रूप से किसी क्षेत्र के भूमि उपयोग को विशिष्टता एवम् विविधता प्रदान करते हैं । इनमें भौतिक कारक जहाँ भूमि एवं शस्य संयोजन के सामान्य निर्धारक है वहाँ स्थानीय विशिष्टताओं के साथ–साथ आर्थिक सामाजिक एवम् ऐतिहासिक कारक सामान्य प्रतिरूप में क्षेत्रीय विभिन्नता को जन्म देते हैं । यही कारण है कि क्षेत्र में भौतिक परिवेश के विभिन्न तत्वों की एक रूपता के बावजूद ऐतिहासिक पृष्ठभूमि , सामाजिक परिवेश तथा आर्थिक संसाधनों के अनुरूप भू–वैन्यासिक प्रतिरूप विकसित होता है । प्राकृतिक आपदाए जैसे जल भराव , जलप्लावन, जलाभाव एवम् नदी मार्ग परिवर्तन आदि कृषकों को भारी क्षति पहुँचाती है,

जिनके समक्ष परिश्रमी कृषक भी असहाय हो जाते हैं, और देखते–देखते उनकी सारी आशाओं पर पानी फिरजाता है, अतः इन प्राकृतिक वियत्तियों की रोकथाम ग्रामीण विकास की दिशा में एक अत्यावश्यक एवम् सर्वाधिक महत्वपूर्ण कदम है ।

1. **प्राकृतिक समस्याओं के निवारण हेतु सुझाव :**

प्राकृतिक विपदाओं में जलप्लावन, जलभराव तथासूखा आदि प्रमुख हैं जिनसे प्रतिवर्ष लाखों–करोड़ों रुपये की फसल नष्ट हो जाती है । अध्ययन क्षेत्र में बसरेहर, अछल्दा, भरथना, ताखा, अजीतमल, भाग्यनगर, सहार तथा विधूना विकासखण्डों में अनेक क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ पानी के निकास की समुचित व्यवस्था न होनेके कारण जलभराव की समस्या से पीड़ित हैं । अजीतमल , साहार, भाग्यनगर, विधूना तथा ताखा विकास खण्डों में जलस्तर ऊँचा हो जाने के कारण भूमि के अन्दर का नमक तेजी से ऊपर आरहा है जिससे ऊसर भूमि का क्षेत्रफल बढ़ता जा रहा है । इन समस्याओं के निवारण हेतु निम्न उपायों का प्रयोग किया जा सकता है ।

1– नालों तथा नालियों को गहरा कर जल निकास की समुचित व्यवस्था करना क्योंकि अनियंत्रित सिंचाई के कारण जल निकास , जलक्रान्ति, अनुचित वितरण और छीजन की समस्याएं उत्पन्न हो गई हैं । नहरों के कारण कुछ क्षेत्रों में हर वर्ष बाढ़ की समस्या उत्पन्न हो जाती है । अतः सिंचाई की नीति का निर्माण करते समय यह जरुरी है कि सिंचाई की नई क्षमता के विकास एवम् विद्यमान क्षमता के अपूर्ण उपयोग की समस्याओं को ध्यान में रखा जाय ।इस लिए जल संसाधनों के कुशलतम एवं पूर्णतम उपयोग के आधार पर सिंचाई नीति का निर्माण किया जाना चाहिए ।

2– भूमिगत जल स्रोतों का बेहतर प्रयोग किया जाना चाहिए, फिलहाल कई कारणों से उनका उचित उपयोग नहीं हो पा रहा है जिनमें से फसलों की गहनता में कमी, किसानों में परस्पर सहयोग का अभाव, डीजल , विद्युत शक्ति या शक्ति के किसी अन्य साधन का उपलब्ध न होना आदि प्रमुख है अतः इस दिशा में आवश्यक कदम उठाना चाहिए ।

3– भूक्षरण के गम्भीर परिणाम हमारे सामने आ रहे हैं अतः इसको रोकने के लिए कारगर उपाय करने होगें, इन उपायों में बनों का विस्तार, भूमि के असमतल भागों में वृक्षारोपण करना, चारागाहों में पशुओं को चराने पर भलीभाँति देखभाल तथा नियंत्रण आदि प्रमुख हैं ।

4- क्षेत्र के उत्तरी -पूर्वी भाग जो विधूना, सहार, अछल्दा, भाग्यनगर , अजीतमल ताखा तथा औरैया विकास खण्डों में स्थित है, में नलकूपों तथा पम्पिंग सेट का सिंचाई हेतु अधिकाधिक उपयोग , जिससे ऊँचे होते हुए जलस्तर को रोका जा सके ।

2-ऊसर भूमि सुधार :

अध्ययन क्षेत्र में अनेक क्षेत्रों में नहरों की अनियंत्रित सिंचाई के कारण जलस्तर उठता जा रहा है जिससे भूमि का एक बड़ा भाग अनुर्बर तथा ऊसर में परिवर्तित होता जा रहा है । इस समस्या के निकराकरण हेतु इन क्षेत्रों में नलकूपों तथा पम्पिंग सेटों के द्वारा भूमिगत जल को निकाल कर जलस्तर को ऊपर उठने से रोका जाना चाहिए । ऊसर सुधार हेतु जिप्सम या पायराइट आदि के प्रयोग के लिए विस्तृत कार्यक्रम तैयार किए जाने चाहिए । ऊसर मृदा में प्रायः जिन्क की कमी भी पाई जाती है जिसे कृत्रिम रसायनों द्वारा पूरा किया जा सकता है । इन क्षेत्रों में हरी खाद के साथ साथ गोबर की खाद का प्रयोग अत्यावश्यक है । साथ ही ऐसे क्षेत्रों में सिंचाई की भी पर्याप्त व्यवस्था की जानी चाहिए ।

3-भूमि उपयोग के वर्तमान स्वरूप में सुधार :

निःसन्देह अधिक विस्तृत खेती की सम्भावनाएं बहुत ही सीमित हैं किन्तु फिर भी बंजर भूमि पर सुधार कार्यक्रम अमल में लाकर इन्हें कृषि योग्य बनाने के लिए निरन्तर प्रयास किए जाने चाहिए क्योंकि अध्ययन क्षेत्र में इस मद में 11308 हेक्टेयर कृषि योग्य भूमि बेकार पड़ी हुई है तथा अन्य परती भूमि के अन्तर्गत 17460 हेक्टेयर भूमि पर कृषि फसलें नहीं उगाई जा रही हैं, इस भूमि को यदि कृषि प्रयोग में लाया जा सके तो लगभग 28768 हेक्टेयर भूमि पर विभिन्न फसलें उगाई जा सकती है। । इसी प्रकार जल ग्रस्त खारीय एवं लवणीय भूमि भी एक बड़े क्षेत्र में पाई जाती हे । बहुमुखी उपायों द्वारा इस भूमि को कृषि योग्यय बनाना सम्भव हो सकता है । इन उपायों में -सिंचाई, गहरी जुताई , अपतृण का हटाया जाना, रासायनों काउपयोग, सम्प्रावहन, भूतल का कतरना, जलग्रस्तता के लिए उपयुक्त नालियों का बिछाया जाना आदि प्रमुख हैं ।

4-गहन कृषि का विस्तार :

यह सच है कि विस्तृत खेती की क्षमता सीमित है किन्तु गहरी खेती की अपार सम्भावनाएं हैं जिनका उपयोग किया जाना चाहिए । कृषि की विकसित टेक्नोलाजी का मूल बिन्दु है फसलों की गहनता में विस्तार । अब तक एक से अधिक बार जोती गई भूमि के अन्तर्गत क्षेत्रों में तेज गति से अपेक्षित बृद्धि नहीं हुई है यह आश्चर्य की बात है और विचारणीय है । सम्भवतः इस प्रवृत्ति के दो कारण हैं :

(अ) उन्नत कृषि आदानों के पैकेज पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हुए हैं तथा (आ) जब कभी ये पैकेज उपलब्ध हुए भी हैं तो इनकी कीमतें बहुत ऊँची रही हैं । इस लिये हमारे प्रयास यह होने चाहिए कि उन्नत आदानों को सस्ती दरों पर पर्याप्त मात्रा में किसानों को उपलब्ध करवाया जाये । इसके साथ ही यह भी आवश्यक होगा कि कृषि पदार्थों से सम्बद्ध अर्थपूर्ण कीमत प्रणाली अपनाई जाये ।

भूमि की उत्पादकता एवं उर्वरता बनाए रखने के लिए हमें निरन्तर प्रयास करने होंगे इस वास्ते हमें अनेक कदम उठाने होंगे जैसे भू परीक्षण , ठीक तरह से भूमि को जोतना तथा बीज रोपना, भूमि के नष्ट हो गये तत्वों को बदलना, पर्याप्त मात्रा में उर्वरक प्रदान करना आदि । इसी प्रकार कृषि की विकसित रीतियों को भी अपनाना जैसे फसलों का आवर्तन और मिश्रित फसलें आदि फसलों के प्रतिरूप में वाँछित परिवर्तनों के माध्यम से भूमि की उत्पादकता में सुधार लाया जा सकता है । अतः यह आवश्यक है कि उत्पादकता बढ़ाने के लिए क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं के अनुकूल फसल प्रतिरूप तैयार किए जांय और उन्हें अमल में लाने के लिए सरकारी नीति में वाँछनीय परिवर्तन किए जांय ।

5. मुद्रादायिनी फसलों का विस्तार :

अध्ययन क्षेत्र में मुद्रादायिनी फसलों में गन्ना तथा आलू की फसलों का ही महत्वपूर्ण स्थान है । गन्ना केवल 4366 हेक्टेयर तथा आलू 9491 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर ही उगाया जाता है । गन्ने के क्षेत्रफल में कमी का कारण क्षेत्र में किसी भी चीनी मिल का न होना है, यदि क्षेत्र में चीनी मिल की स्थापना की जाये तो गन्ने के क्षेत्रफल में आशातीत बृद्धि की जा सकती है । आलू का भी उत्पादन आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिए ही किया जाता है क्योंक प्रशीतन सुविधाओं का क्षेत्र में नितान्त अभाव है । प्रशीतनसुविधाएं जो थोड़ी बहुत हैं भी तो उनमें कृषकों को अपनी उपज अत्याधिक ऊँचे शुल्क का भुगतान करके सुरक्षित करनी पड़ती है इसके साथ साथ दूरी तथा अनेक ऐसी समस्याओं का सामना कृषकों को करना पड़ता है जिससे कृषक इस फसल के अधिक उत्पादन के लिए प्रोत्साहित नहीं होता है । अतः आवश्यकता इस बात की है कि इन फसलों के अधिकाधिक उत्पादन को प्रोत्साहित करने के लिए कुछ सुविधाएँ कृषकों को प्रदान की जायें ।

इन फसलों के साथ साथ मूँगफली के उत्पादन की क्षेत्र में अनुकूल परिस्थितियाँ हैं, इस फसल के उत्पादन में दो फायदे हैं, एक तो इसके बोने से खेत की उर्वराशक्ति बढ़ जाती है, साथ ही यह खाने के काम आती है और इसका तेल वनस्पति घी के बनाने में काम आता है , इस फसल को भी

प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए । तेल/चिकिनाई की आपूर्ति क्षेत्र में केवल लाही/सरसों द्वारा ही सम्भव हो पाती है और यह अभी तक 27105 हेक्टेयर क्षेत्रफल में ही उगाई जाती है , परन्तु तिलहनी फसलों में सूरजमुखी तथा सोयाबीन की फसलों को क्षेत्र में उगाने के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ हैं , परन्तु ये फसलें अभी तक क्षेत्र में केवल प्रवेश तो कर सकी हैं , परन्तु विभिन्न फसलों में कोई अपना स्थान नहीं बना सकी हैं । इन फसलों के लिए सबसे बड़ी समस्या इनके विक्रय की है, इन फसलों का बाजार न होने के कारण इनका उत्पादन हतोत्साहित होता है, इन फसलों को प्रोत्साहन देकर कृषकों की आर्थिक स्थित को ऊँचा उठाया जा सकता है ।

इसी प्रकार विभिन्न कृषि मौसमों में सब्जियां तथा मसाले की फसलों (धनियां, प्याज, लहसुन, मिर्च, जीरा, सौंफ. कलौंजी, हल्दी आदि (को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए । इनमें से लहसुन के उत्पादन में ताखा तथा एखाकटरा विकास खण्ड तो विशेषज्ञ क्षेत्र हैं, परन्तु इस फसल के मूल्य में अत्यधिक उतार चढ़ाव होने के कारण कृषकों में एक अनिश्चितता सी बनी रहती है जिससे इस फसल के क्षेत्रफल में विस्तार नहीं हो पा रहा है , यही स्थिति अन्य फसलों के सम्बन्ध में भी बनी हुई है , यदि सरकारी मूल्य नीति में इन फसलों को भी सम्मिलत कर लिया जाये तो इन फसलों के मूल्य सम्बन्धी अनिश्चितता से कृषकों को छुटकारा प्राप्त हो जायेगा और कृषक खाद्यान्न फसलों के स्थान पर नकद मुद्रादायिनी फसलों के उत्पादन के लिए प्रोत्साहित होगा । सिंचन सुविधाओं का अभाव भी इन फसलों के क्षेत्रफल विस्तार को हतोत्साहित करता है ।

6–कृषि से सम्बद्ध क्रियाओं को प्रोत्साहन :

ग्रामीण विकासके लिए कृषि विकास का सर्वोपरि महत्व हो सकता है परन्तु कृषि विकास से ही सामान्य ग्रामीण जीवन में सुधार और उसके पूर्ण उत्थान की सामर्थ्य नहीं होती है । ग्रामीण विकास के वास्ते हमें कृषि से सम्बद्ध अनेक क्षेत्रों में सुधार करने की आवश्यकता पर बल देना होगा । सम्बद्ध क्षेत्रों में प्रमुख है पशु पालन, मत्स्य उद्योग रेशम उत्पादन , वागवानी तथा वानिकी आदि ।

(अ) डेरी फार्मिंग को प्रोत्साहन :

ग्रामीण अर्थ व्यवस्था के विकास में डेरी उद्योग महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की क्षमता रखता है । डेरी उद्योग के माध्यम से निर्बल वर्ग की आर्थिक –सामाजिक दशा में उल्लेखनीय सुधार लाये जा सकते हैं । डेरी उद्योग के विकास के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता तो यह है कि दूध देने वाले पशुओं की उत्पादकता को बढ़ाया जाये जिसके लिए नस्ल में सुधार ही पर्याप्त नहीं होगा बल्कि पशु पालन की रीतियों में भी सुधार करना होगा । डेरी उद्योग के विकास के लिए पशुओं के लिए पौष्टिक चारे की व्यवस्था करना, उनके स्वास्थ्य की देखभाल का प्रबन्ध तथा उत्पादन की समुचित विक्रय व्यवस्था का विकास करना होगा । प्रशासन को भी यह ध्यान देना होगा कि सरकार द्वारा डेरियों, पशुओं के विकास और पशुओं के स्वास्थ्य के लिए जो अनुदान दिया जाता है वह आम जनता के पशुओं तक पहुँच पाता है या नहीं । साथ ही पशुपालकों तक पशु वैज्ञानिकों को भेजकर पशु पालन सम्बन्धी ज्ञान के लिए उचित व्यवस्था करें । खाद्यान्न के मामले में हरित क्रान्ति लाकर हम आत्मनिर्भर की ओर बढ़ रहे हैं वहीं हमें श्वेत क्रान्ति के लिए भी प्रयत्न करने होगें जिससे लोगों को पौष्टिक दूध उपलब्ध हो सके ।

(ब) मुर्गीपालन :

मुर्गीपालन में कुछ ऐसी विशेषतायें हैं जिनके कारण ग्रामीण समुदाय के निर्वलतम वर्ग द्वारा भी इसे आसानी से अपनाया जा सकता है । इस काम के लिए थोड़ी सी पूँजी की आवश्यकता होती है, इसे विभिन्न जलवायु तथा परिस्थितियों में संचालित किया जा सकता है, इससे वर्ष भर आय प्राप्त हो सकती है । मुर्गीपालन में आधुनिक टैक्नोलाजी का विकास किया गया है किन्तु इस टेक्नोलोजी से अभी तक साधन सम्पन्न वर्ग ही लाभान्वित हो सका है, यह वर्ग प्रमुखतः शहरी क्षेत्र में ही पाया जाता है । इसी कारण शहरों और गावों में मुर्गीपालन के तरीकों में भी अन्तर पाये जाते हैं । अतः आवश्यकता इस बात की है कि ऐसी टैक्नोलोजी का विकास किया जाये जो ग्रामीण क्षेत्रों की परिस्थितियों के अनुकूल हो । इन गावों में जो दूर दूर के इलाकों में है और जहाँ साधनों के अभाव के कारण पहुँचना असुविधाजनक है जिसके कारण मुर्गीपालन की पुरातन विधियाँ अपनाई जाती है , वहाँ कम से कम देशी मुर्गियों को विदेशी सुधरे हुए नश्ल के मुर्गो से परसंसचेतन की सुविधाएं उपलब्ध कराई जायें, इससे एक ओर तो अण्डों के उत्पादन में भारी बृद्धिद्ध होगी दूसरी ओर इन सेवाओं की व्यवस्था के लिए किसी प्रकार के तकनीकी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं होगी ।

(स) भेंड एवं सुअरपालन को प्रोत्साहन :

भेंड़, बकरी तथा सुअर पालन का काम लगभग पूरी तरह से ग्रामीण समुदाय के निर्धन परिवारों द्वारा किया जाता है । सुअर पालन तो क्षेत्र में धानुक तथा डोमर दो ही जातियों द्वारा किया जाता है । भेंड़ बकरी का पालन मुख्यरूप से गड़रिया (पाल) तथा अहीर (यादव) जाति के लोगों द्वारा किया जाता है । भेंड़, बकरी तथा सुअर पालन के ऐसे अनेक पहलू हैं जिनकपर विशेषज्ञों को ध्यान देने की आवश्यकता है । ये रैन बैक सीमान " जो विदेशी नस्लों , विशेषकर शीतोष्ण प्रदेश की नस्लों के संकरण हेतु आवश्यक है , के हिमीकरण से सम्बन्धित है । इन किस्मों के लिए आहार संसाधनों के विकास की विशेष रूप से कषि और औद्योगिक सह उत्पादों के विकास और उनके विपणन तथा भेंड़ एवं बकरियों के कृषक अपने जो उत्पाद बेचते हैं उनके पारिश्रमिकोचित मूल्य उन कृषकों को मिल सके, यह सुनिश्चित करने की भी समस्या है । जिसका निराकरण करके ही इस उद्योग को प्रोत्साहित किया जा सकता है ।

(द) मछली पालन को प्रोत्साहन :

मछली पालन भी मुख्यतः ग्रामीण वर्ग का ही व्यवसाय है । किसान जहाँ अनाज की आपूर्ति करते हैं, मछुवारे मछली के रूप में खाद्य सामग्री देते हैं यह सामग्री पौष्टिकता से परिपूर्ण होती है । अध्ययन क्षेत्र में तालाबों , नदियों तथा झीलों में मछली पालन व्यवसाय को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए ।

(य) रेशम उत्पादन उद्योग को प्रोत्साहन :

रेशम उत्पादन भी कृषकों के लिए आय का एक पूरक साधन है । यह व्यवसाय श्रम प्रधान होता है अतः इस उद्योग में अतिरिक्त रोजगार के अवसरों के निर्माण की भारी क्षमता है क्योंकि रेशम की माँग बढ़ती जा रही है न केवल रेशमी कपड़े के रूप में बल्कि अनेक औद्योगिक क्रियाओं में भी । परिणामस्वरूप, रेशम पालन में विकास की बड़ी क्षमताऐं निहित हैं । अध्ययन क्षेत्र में रेशम पालनका कार्य अजीतमल विकास खण्ड मुख्यालय में किया जा रहा है । जहां पर लगभग 10 हेक्टेयर क्षेत्रफल पर शहतूत की खेती करके रेशम के कीड़े पाले जाते हैं जिनसे मलवरी किस्म के रेशम का उत्पादन किया जा रहा है । आवश्यकता इस बात की है कि इस उद्योग का विस्तार अन्य क्षेत्रों में भी किया जाय ।

(र) खाद्य विदोहन उद्योग को प्रोत्साहन :

कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्रों के विकास से सम्बन्धित एक पदार्थ प्रमुख परिकल्पना है, खाद्य विदोहन उद्योग /खाद्य विदोहन उद्योग में उन क्रियाओं को शामिल किया जाता है जो कि खाद्य पदार्थो का रूप परिवर्तन कर उन्हें लम्बे समय तक उपभोग के योग्य बनाते हैं । फसल करने के बाद फलों और शब्जियों को ज्यादा समय तक सुरक्षित नहीं रखा जा सकता है जिससे इनका एक–बड़ा भाग या तो नष्ट हो जाता है या कृषकों को उत्पादन का उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता है जिससे अच्छी फसल के बाद भी कृषकों को आय बढ़ नहीं पाती है । उत्पादन को इस प्रकार की हानि से बचाने के लिए आवश्यक है कि फसल कटाई के बाद की तकनीक में परिवर्तन किया जाये तथा प्रशीतन सुविधाएं सरल तथा आसान शर्तो पर उपलब्ध करवाई जायें और उपलब्ध उत्पाद के वैकल्पिक उपयोगों को पहचाना जाये । जहाँ तक प्रशीतन सुविधाओं का प्रश्न है तो इसमें किसी क्रान्तिकारी परिवर्तन की सम्भावना लगभग नगण्य है । अतः खाद्य विदोहन उद्योगों की सहायता से फलों , शब्जियों तथा अन्य शीघ्र नष्ट होने वले कृष्य उत्पादों के उत्पादकों को राहत दी जा सकती है ।

(7) ग्रामीण उद्योगों को प्रोत्साहन :

ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की प्रकृति शहरी क्षेत्र में पाई जाने वाली बेरोजगारी से भिन्न होती है । हम अपने सामान्य जीवन में देखते हैं कि जिस समय बीजों को रोपित करने के लिए खेत को तैयार करना होता हे अथवा पकी हुई फसल काटना, या साफ करना होता है उस समय श्रमिकों की माँग बढ़ जाती है , उन्हें रोजगार मिल जाता है लेकिन बाकी समय में उन्हें कम अथवा बिल्कुल नहीं कार्य मिल पाता है ।इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में प्रच्छन्न बेरोजगारी विद्यमान रहती है । इस मौसमी तथा प्रच्छन्न बेरोजगारी की तीव्रता कम करने के लिए ग्रामीण उद्योगों को हमें प्रोत्साहन देना ही होगा जिनकी स्थापना की सम्भावनाओं पर विचार आवश्यक है ।

(अ) कृषि पदार्थो का विधायन :

बड़ी संख्या में लोगों को पूर्णकालिक रोजगार के अवसर प्रदान करने के लिए औद्योगिक इकाइयों की स्थापना ग्रामीण क्षेत्रों में की जानी चाहिए । इन उद्योगों में कृषकों एवं उनके परिवारों को सहायक आँशिक रोजगार भी प्राप्त हो सकता है । इस प्रकार के उद्योगों में दूध का विधायन, सुरजमुखी/सोयाबीन/सरसों/लाही से तेल निकालना, खाँडसारी तथा गुड़ बनाने की इकाइयाँ ,फलों तथा शब्जियों का विधायन, सनई के सामान का निर्माण आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है ।

(ब) कृषि के उत्पादन का उपयोग करने वाले उद्योग :

कृषि के गौण उत्पादन का निर्माण उद्योगों में कच्चे माल के रूप में प्रयोग करने के सम्बन्ध में तकनीकी के विकास की पर्याप्त सम्भावनाएं उपलब्ध हैं, जिनका उपयोग किया जा सकता है । इस प्रकार के उत्पादन में शीरे से अल्कोहल, धान की भूसी से गत्ता बनाना, टूटे हुए चावल से शराब बनाना , चावल की भूसी से तेल बनाना, चावल द्वारा नमकीन बरी तथा अन्य नमकीन बनाना , आलू के चिप्स बनाना, गन्ने की खोई से कागज तथा गत्ता बनाना आदि विशेष उल्लेखनीय है । इस प्रकार के उद्योगों की स्थापना से रोजगार के नये अवसर उत्पन्न होगें ।

(स) ग्रामीण दत्तकारी एवं उद्योगों का विकास :

ग्रामीण दत्तकारी एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना और विकास के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त अवसर उपलब्ध हैं । ग्रामीण दस्तकारिता की वस्तुओं के निर्माण को और अधिक प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है । ग्रामीण उद्योगों का प्रयोग न केवल उपभोक्ता वस्तुओं के उत्पादन अपितु कृषि मशीनरी एवं उपस्करों के निर्माण के लिए भी किया जा सकता है । इनमें से कृषि औजारों का निर्माण , चटाई–दरी बनाना, डलियां, टोकरी बनाना, रस्सी बनाना, सिलाई–कढ़ाई, पत्तल दोनों का निर्माण , अचार–मुरब्बा का निर्माण, पशु पालन, मुर्गीपालन , भेंड़–बकरी तथा सुअरपालन, मत्स्य उद्योग, रेशम के कीड़े पालन बागवानी आदि प्रमुख हैं ।

8. **संतुलित भोजन का ज्ञान:**

संतुलित भोजन उसे कहते हैं जिसमें प्रोटीन, बसा, कार्वोज, विटामिन और खनिज लवण उचित मात्रा तथा उचित अनुपात में हो । साधारणतया यह मौलिक तथ्य है कि जब आदमी को पहले पेट भर खाने को मिल जाये तभी वह भोजन के गुणों पर विचार कर सकता है । भारत जैसे देश में जहाँ बढ़िया भोज्य पदार्थ पर्याप्त नहीं हैं, जहाँ उनकी कीमत बढ़ी चढ़ी है और जहाँ लोगों की क्रयशक्ति बहुत ही कम है , वहाँ हर व्यक्ति सन्तुलित आहार पा सके, यह वर्तमान परिस्थितियों में लगभग असम्भव है ।किन्तु अभावों के बीच भी यदि हमारा भोजन विषयक ज्ञान काम चलाऊ हो और हम यह जान सकें कि हमारे लिए कौन सा खाद्य पदार्थ कितना महत्व रखता है तो लोग बिना खर्च बढ़ाए अपने भोजन को वर्तमान रूप से कुछ अच्छा अवश्य बना सकते हैं । इसके लिए प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर लोगों को संतुलित भोजन के बारे में ज्ञान कराया जाना चाहिए । शरीर को पुष्ट और वलिष्ट बनाए रखने के लिए सामान्यतः व्यक्ति को निम्नानुसार भोजन की मात्रा ग्रहण करनी चाहिए ।

अनाज – गेहूँ , चावल , बाजरा, मक्का आदि	400 ग्राम
दाले– अरहर, चना, उर्द , मूँग, मसूर आदि	100 ग्राम
चिकनाई– घी, तेल, मक्खन, पनीर	60 ग्राम
पेय– दूध , दही, मट्ठा (छाछ) आदि	250 ग्राम
फल–आम, सन्तरा, केला, पपीता, खरबूजा, तरबूज,सेब, अमरूद ,खीरा, ककड़ी आदि ।	70 ग्राम
शब्जी–भिण्डी, परवल, टिण्डा, आलू, बैंगन, कद्दू, लौकी, तरोई, अरुई, सिंघाड़ा, चचेड़ा ।	150 ग्राम
शब्जी पत्तेदार– बथुआ, मेथी, पालक, मूली, चौलाई, रामदाना, साग आदि ।	150 ग्राम
कुल भोजन	1180 ग्राम

भोजन की उक्त तालिका वसा, विटामिन, आयरन, कैल्शियम, प्रोटीन आदि सभी पौष्टिक तत्वों को दृष्टि में रखकर एक सामान्यय व्यक्ति के लिए जो हल्का कार्य करता हो, प्रस्तुत की गई है । भारी कार्य करने वालों को अपनी आवश्यकतानुसार अतिरिक्त मात्रा अैर जोड़नी चाहिए ।

(अ) शिशु का भोजन :

शिशु की क्रियाशीलता द्वारा व्यय हुई शक्ति की पूर्ति के लिए उसकी उचित शारीरिक बृद्धि वमानसिक विकास तथा उत्तम स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए माता का दूध ही सर्वोत्तम आहार है, माता के दूध में आवश्यक मात्रा में चिकनाई, विटामिन, प्रोटीन , जल तथा कार्वोहाईड्रेटस होते हैं जो कि शिशु के विकास के लिए आवश्यक है । आवश्यकता पड़ने पर शिशु को गाय का दूध देना चाहिए । गाय के दूध के अभाव में बकरी का दूध देना चाहिए । बकरी के दूध में भी शिशु के लिए आवश्यक पोषक तत्व विद्यमान रहते हैं ।

(ब) बृद्धावस्था का भोजन :

शिशओं के समान ही बृद्ध व्यक्तियों के भोजन का भी विशेष ध्यान रखना चाहिए । इस अवस्था में सुगमता से पचने वाला, विटामिनों और प्रोटीन युक्त भोजन देना चाहिए । इसके लिए ताजी हरी पत्तेदार शब्जियाँ, दूध, फलों का रस आदि देना चाहिए । इस अवस्था में मिर्च मसालेदार गरिष्ठ भोजन

नहीं करना चाहिए । अतः भोजन मुलायम, पौष्टिक और ऐसा होना चाहिए जिसे खाने में श्रम कम करना पड़े किन्तु विटामिन्स, खनिज, प्रोटीन आदि पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में शरीर में पहुँच जाये ।

(स) गर्भवती महिला का भोजन :

सामान्य दशा की तुलना में गर्भकाल में महिला को अधिक मात्रा में विटामिन डी, प्रोटीन, फास्फोरस तथा कैल्शियम युक्त भोजन मिलना चाहिए । क्योंकि इन्हीं के माध्यम से उदरस्थ भ्रूण को पोषण होता है । इन पोष्टिक पदार्थों के अभाव में महिला व शिशु दोनों क्षीण होने लगते हैं । अतः इस काल में महिलाओं को कम से कम 750 ग्राम दूध, 200 ग्राम फल , 1 अण्डा, तथा 50 ग्राम मांस आवश्यक रूप से प्रतिदिन देना चाहिए । शाकाहारी महिलाओं को मांस के स्थान पर दाल की 50 ग्राम मात्रा बढ़ा देना चाहिए ।

(द) स्तनपान कराने वाली महिला का भोजन:

इस दशा में महिलाओं को सुगमता से पचने वाला तथा पर्याप्त पौष्टिक तत्वों से भरपूर भोजन होना चाहिए । क्योंकि शिशु के पोषण के कारण इस स्थिति में महिला को भूख अधिक लगती है अतः प्रोटीन, कैलोरी तथा कैल्शियम युक्त भेजन की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए ।

(य) युवक का भोजन :

इस अवस्था में युवक शारीरिक एवं बौद्धिक विकास करता हुआ समाज में रहकर आत्मनिर्भर बनने का प्रयास करता है अथवा विद्यालयों में अध्ययन करता हुआ बृह्मचर्य जीवन व्यतीत करता है । भोजन का प्रभाव सीधा मन इन्द्रिय एवं बुद्धि पर पड़ता है अतः इस सम्बन्ध में विशेष सावधानी की आवश्यकता पड़ती है । युवकों के भोजन में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए ।

1- भोजन, सादा पौष्टिक तथा ताजा होना चाहिए । भोजन अधिक गरम न हो ।

2- चना, उड़द, गेहूँ आदि अंकुरित अन्न का प्रयोग स्वास्थ्य के लिए अच्छा है ।

3- भोजन में नीबू का प्रयोग पाचन शक्ति में वृद्धि करता है ।

4- भोजन में सी तथा डी विटामिन पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए ।

5-खट्टे , चटपटे, मसालेदार, आचार, मुरब्बा का प्रयोग कम से कम करना चाहिए ।

6- गाय अथवा बकरी का दूध प्रयोग करना चाहिए ।

7-भोजन के साथ देशी खाँड़, गुड़ आदि मीठा लिया जा सकता है ।

8- दोपहर के भोजन के बाद मौसम के अनुसार ताजे फलों का सेवन स्वास्थ्य कर होता है ।

(र) भोजन सम्बन्धी अन्य आवश्यक सुझाव :

1- जाड़े के दिनों में अधिक भोजन करना चाहिए ।

2- भोजन को धीरे-धीरे खूब चबाकर खाना चाहिए ।

3-भोजन एक निश्चित समय पर ही करना चाहिए ।

4- सायंकालीन भोजन कम मात्रा में किया जाना चाहिए ।

(ल) भोजन पकाने सम्बन्धी सुझाव :

1- मोटा तथा चोकरयुक्त आटा खाना पकाने के कुछ समय पूर्व भली प्रकार पानी में गूँथकर रखना चाहिए जिससे वह पर्याप्त मात्रा में फूल सके ।

2- रोटी चूल्हे की आग में दूर से सिंकी हुई स्वास्थ्य बर्द्धक होती है ।

3-यदि रोटी पकाते समय उसमें घी लगा दिया जाये तो स्वास्थ्य बर्द्धक और गुणकारी हो - जाती है । परन्तु खाते समय यदि रोटी पर घी चुपड़ दिया जाता है तो भोजन गरिष्ठ हो जाता है ।

4-शरीरिक श्रम करने वाले व्यक्तियों को बिना चुपड़ी रोटी ही खानी चाहिए ।

5-कच्ची शब्जी खाना बहुत अच्छा रहता है किन्तु प्रत्येक शब्जी कच्ची नहीं खाई जा सकती है ।टमाटर, मूली, गाजर,चुकन्दर,प्याज, शलजम , आदि कच्ची ही खानी चाहिए ।

6- शब्जी तलकर खाने में गरिष्ठ होती है अतः उबालकर खाने में स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छी रहती है ।

7-शब्जी को छौंकने में हींग, अदरख, प्याज, हरा धनियाँ, काली मिर्च आदि का प्रयोग करना चाहिए ।

8- मालपुआ, पूड़ी, कचौड़ी, हलुआ आदि का सेवन भूख से कुछ कम मात्रा में करना चाहिए ।

9-बाजार की विभिन्न मिठाइयां सेवन करने से स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है ।

10- सूप, मक्खन, उबली हुई सब्जी,पनीर , चावल को खाने का अपना एक विशेष जैव वैज्ञानिक ढंग है जिनके द्वारा हम कम खर्चे - में स्वास्थ्य को अच्छा बना लेते हैं ।

11- मांस का सेवन कभी कभी और अपने स्वास्थ्य व जलवायु को ध्यान में रखकर स्वल्प मात्रा में ही करना चाहिए ।

12- कच्चे अण्डे की जर्दी दूध में फेंटकर अथवा वैसे ही लेना अधिक गुणकारी है ।

13- जिन व्यक्तियों को नेत्रों से कम दिखलाई पड़ता हो, अण्डे का सेवन लाभप्रद होता है ।

****

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. अनन्त राम एन0 के0 (1998) – "दि हिन्दू सर्वे आफ इण्डियन एग्रीकल्चर"
2. अनुचिन वी0 ए0 (1973) " थ्योरी आफ ज्याग्राफी इन कोरिया" आर0 जे0 (इड) डायरेक्शन इन ज्याग्रफी, मेथुइन लन्दन पार्ट–1, चैप्टर–3 पी0 पी0 –52 – 54
3. अली एम0 (1976) -- "एग्रीकल्चरल लैण्डयूज एण्ड न्यूट्रीशन" इण्डियन जनरल आफ ज्याग्रफीकल स्टडीज, पटना
4. अली एम0 (1978)-- "फूड एण्ड न्यूट्रीशन आफ इण्डिया" के0 वी0 पब्लिकेशन, नई दिल्ली
5. अली एम0 (1978) – "सिचवेंसंस आफ एग्रीकल्चर फूड न्यूट्रीशन इन रूरल इण्डिया" कन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली
6. अली एम0 (1978)-- "रीजनल इम्वैलेन्सेस इन लेवेल्स एण्ड ग्रोथ आफ एग्रीकल्चरल प्रोडक्टविटी– ए केश स्टडी आफ विहार, कन्सेप्ट पब्लिशिंग क0 दिल्ली
7. अहमद ए0 एण्ड सिद्दीकी (1967)– "क्राप एसोसिएसंस एण्ड पैटर्न इन लूनी बेसिन", दि ज्याग्रफर, वाल्यूम 14, पी0 63
8. आम्बर एस0 आर0 (1964) – "वेजीटेशन एण्ड स्वाइल, ए बर्ल्ड पिक्चर रिप्रिंटिड लन्दन, पी0 130
9. आई0सी0ए0आर0 -- "हैण्डबुक आफ एग्रीकल्चर" पी0 113
10. इण्डियन काउंसिल आफ मेडीकल रिसर्च (1964) – "दि न्यूट्रीशन वैल्यू आफ इण्डियन फूड्स एण्ड प्लानिंग आफ सैटिस्फैक्टरी डाइट्स" नई दिल्ली
11. इन्मेदी (1967) -- "दि चेजिंग फेस आफ एग्रीकल्चर इन ईस्टर्न योरूप " ज्याग्रफीकल रिव्यू 57, पी0 पी0 358–372
12. इग्नतीफ पी0 एण्ड पेज " इफीसिएण्ट यूज आफ फर्टिलाजर्स" एम0 ए0 ओ0 रोम एच0 जे0
13. एकरमैन ई0 ए0 (1938) -- "इन फ्लएन्सिस आफ क्लाइमेट आन दि कल्टीवेशन आफ साइट्रस फ्रूट्स ज्याग्रफीकल रिव्यू, वाल्यूम 28 पी0 पी0 289–302
14. ओल्डहम आर0 डी0 – "दि डीप वोरिंग एट लखनऊ, रिकार्ड्स आफ दि ज्योलोजीकल सर्वे आफ इण्डिया" वाल्यूम 23 पी0 268
15. ओल्डहम आर0 डी0 (1917) – "दि स्ट्रक्चर आफ हिमालयाज एण्ड दि प्लेन" मेमोर्स आफ ज्यॉग्रफीकल सर्वे आफ इण्डिया वाल्यूम 13, पार्ट–2, पी0 82, कलकत्ता

16. कटारिया एम0 एस0 – "स्पेशल चेन्जेज इन सुगरकेन इन करनाल डिस्ट्रिक्ट" नेशनल ज्याग्रफीकल जरनल आफ इण्डिया वाल्यूम 15, पार्ट्स 38, 4 सित0–दिस0, पी0 224–234

17. कूवी एच0 एम0 (1921) – "ए क्रिटीसिज्म आफ ओल्डहम पेपर आन दि स्ट्रक्चर आफ हिमालयाज एण्ड आफ दि गैंगेटिक प्लेन एज एलसिएटिड वाई जियोडेटिक आवजरवेशन इन इण्डिया" मेमोर्स आफ जियोलोजीकल सर्वे आफ इण्डिया, प्रोफेशनल पेपर नं0 18, देहरादूर, पी॰ 6

18. केश ई0 सी0 एण्ड (1996) – "कालेज ज्याग्रफी"
वर्गमोर्का

19. कैण्डाल एम0 जी0 (1993) – "ज्याग्रफीकल डिस्ट्रीव्यूसंस आफ क्राप प्रोडक्टिविटी इन इंगलैण्ड" जरनल आफ रायल स्टैटिस्टीकल सोसायटी, 120, 21, 26

20. कौर सतवन्त (1969) – "चेंजेज इन नेट शोन एरिया इन अमृतसर तहसील" नेशनल ज्याग्रफीकल जरनल आफ इण्डिया, वाल्यूम 15, नं0 1,पी0पी0 24–27

21. कौशिक एस0 डी0 (1956)–इनवायरनमेण्ट एण्ड ह्यूमन प्रोग्रेस"

22. कोल ग्रेविल (1959) – "क्वेटिड वाई आर्थर होम्स इन फिजीकल ज्याग्रफी" पी 112

23. क्लार्क सी0 एण्ड हैसवेल (1967) – "दि इकोनोमिक आफ सवसिसटेंस एग्रीकल्चर" पी0 67

24. कृष्णन एम0 एस0 (1968) – "जियोलोजी आफ इण्डिया एण्ड वर्मा" मद्रास पी0 54

25. क्यूजर आर0 आर0 (1956) – " दि ज्याग्रफी आफ आर्चर्ड इण्डस्ट्री आफ कनाडा" ज्याग्रफीकल वुलेटिन वाल्यूम 7 पी0 30

26. गरू जी0 जे0 आर0 (1934) – "डिस्ट्रीव्यूसंस आफ क्राप्स आफ विशाखापट्टनम डिस्ट्रिक्ट",जरनल आफ मद्रास ज्याग्रफीकल एसोसिएसन,क्वा0 1

27. गांगुली वी0 एन0 (1938) – "ट्रेण्ड्स आफ एग्रीकल्चर एण्ड पापुलेशन इन दि गैंगेज वैली" लन्दन पी0 पी॰ 39–94

28. गोपालन सी0 (1966) – "मेजर न्यूट्रीशन प्रोवलम्स आफ इण्डिया एण्ड ईस्ट एशिया" प्रोसीडिंगस आफ सेवेंथ नेशनल ज्याग्रफीकल कांग्रेस, वाल्यूम 3

29. ग्रेगर एच0 एफ0 (1962) – " दि रीजनल प्राइवेसी आफ सैनजुआकिन वैली एग्रीकल्चरल प्रोक्डसन" जरनल ज्याग्रफी, वाल्यूम 16 पी0 396

30. ग्रेगरी एस0 (1954) – " एकम्यूलेट टेम्प्रेचर मैप्स आफ दि व्रिटिश आइशिल्स", इंस्टीट्यूट आफ व्रिटिस ज्याग्रफर ट्रासलेट एण्ड पेपर्स वाल्यूम 20, पी0पी0 59–73

31. ग्नेली ई0ए0 (1932) – "दि ग्रेविटी एनामलीज इन दि स्ट्रक्चर आफ अर्थ क्रस्ट" मेमोर्स आफ जियोलोजीकल सर्वे आफ इण्डिया, प्रोफेशनल पेपर नं0 27, देहरादून पी0 –22

32. चटर जी एस0 सी0 – "एकोनोमिक रीजन्स आफ इण्डिया इन डा0 एम0 सफी" (इड0)

33. चौहना आर0 वी0 सिंह (1992) – " हमीरपुर तहसील में भूमि उपयोग, पोषण स्वर एवं मानव स्वास्थ" अप्रकाशित शोध ग्रन्थ पी0 91–92

34. जमीर अहमद (1968) – " एसोसिएसंस विटवीन रैनफाल एण्ड क्राप कम्वीनेशन इन डिस्ट्रिक्ट विजनौर," ज्याग्रफीकल आवजर्वर, मेरठ, वाल्यूम 4 पी0पी0 86–87

35. जैदी सैयद, हुसेन साजिद (1982) – "रूरल इण्डिया एण्ड माल न्यूट्रीशन" कन्सेप्ट पव्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली

36. जोगलेकर एन0 एम0 (1963) – "स्टडी आफ क्राप पैटर्न आन एन अरबन फ्रिंज" इण्डियन जरनल आफ एग्री0 इको0 वाल्यूम 18, पी0पी0 48–90

37. झा0 डी0 (1963) – " इकोनोमिक्स आफ क्राप पैटर्न आफ इरीगेटिड फार्म इन नार्थ विहार" इण्डियन जरनल आफ एग्री0 इको0, वाल्यूम 18 नं0 1 पी0 168

38. इन0 ई0 एस0 (1954) – "दि लोकेशन आफ एग्रीकल्चरल प्रोडक्सन" गेनिसविला यूनीवर्सिटी आफ फ्लोरिडा प्रेस

39. डेजी जी0 एफ0 (1941) – " लोकेशन फैक्टर्स इन दि कामर्शियल कोकोनट इण्डस्ट्री" इकोनोमिक ज्याग्रफी, वाल्यूम 17, पी0 130–140

40. डोवी ई0एच0जी0 (1952) – "दि केल्टन डेल्टा" ज्याग्रफीकल रिव्यू, वाल्यूम 41, पी0पी0 226–255

41. ड्यूकोचेव वी0वी0 (1936) – "पीयोलोजी, न्यू व्रंसेविक, न्यू जर्सी

42. तिवारी पी0 डी0 (1985) – "फूड इनटेक सिस्टम् एण्ड डिफीसिएन्सीज इन रूरल एरिया आफ मध्य प्रदेश" रूरल सिस्टम् वाल्यूम 3 नं0 4 दिस0

43. तिवारी पी0 डी0 (1988) – " पैटर्न आफ एग्रीकल्चर प्रोडक्शन, अवेविलिटी एण्ड न्यूट्रीशन इन मध्य प्रदेश" यू0वी0वी0पी0 वाल्यूम 32 नं0 2

44. तिवारी पी0डी0 – "एग्रीकल्चर एण्ड लेविल आफ न्यूट्रीशन इन मध्य प्रदेश" यू0वी0वी0पी0, वाल्यूम 20, नं0 1 जून

45. थापर आर0 एस0 (1981) – "अवर फूड्स" आत्माराम एण्ड संस, नई दिल्ली

46. थामस डी0 (1963) – "क्राप कम्वीनेशन्स इन वेल्स" ज्याग्रफीकल रिव्यू, वाल्यूम 44 पी0पी0–60–67

47. थामस डी0 (1963) – " एग्रीकल्चर इन वेल्स ड्यूरिंग दि नैपोलियन वार," पी0पी0 80–81

48. दत्ता आर तथा (1994) "भारतीय अर्थव्यवस्था" पी0पी0 497–98
सुन्दरम् के0पी0एम0

49. दयाल ई0 – " क्राप एसोसिएसन्स एण्ड चेंजिंग पैटर्न आफ क्राप इन दि गंगा घाघरा दोआव" एन0जी0जे0आई 13 (4) 194–207

50. धींगरा ईश्वर (1991) – " ग्रामीण अर्थव्यवस्था" एस0 चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली पी0 230–245

51. नरोत्मम शाह – "नेचुरल रिसोर्सिज आफ इण्डियन एकोनोमी" पी0–14

52. नित्यानन्द (1972) – "क्राप कम्वीनेशन्स इन राजस्थान" ज्याग्रफीकल रिव्यू आफ इण्डिया, वाल्यूम 44, ,पी0वी0 46–60

53. नुन्तोसुन एम0वाई0 (1972) – " क्राप एण्ड ह्वेदर लैण्ड स्कैप" वाल्यूम 12, पी0 पी0 9–11

54. पपड़ेकिस जे0 (1960) – "ए वर्ल्ड मैप आफ फूड्स एण्ड देयर एग्रीकल्चरल पोटेंशयिलिटीज" व्यूनस आयर्स

55. प्रकाश विश्व (1983) – "भोजन द्वारा पूर्ण स्वास्थ" दिल्ली

56. फाउण्ड डब्लू सी0 (1970) – "टुवार्ड्स ए जरनल थ्योरी रिलेटिंग डिस्टेंस विटवीन फार्म एण्ड होम टु एग्रीकल्चर प्रोडक्सन" ज्याग्रफीकल अनाएन्सिस 2, पी0पी0 165–176

57.A फाउण्ड डब्लू॰सी0 (1971) – "ए थियरीटिकल एप्रोच टु रूरल लैण्ड यूज पैटर्न" एडवर्ड आरनोल्ड, पी0पी0 12–32

57.B ———————— "फर्स्ट फाइव इयर प्लान" पृष्ठ 269–70

58. बर्जर जी0 (1959) – "वेसवर्ल क्रीस इमेण्डिजेन इन एटलस डर ड्येसेन एग्रेर लैण्ड शाफ्ट, इड0 ई0 ओस्ट्रेवा (विसवेडन स्टीनियर) 1962

59. बजर्नी वी0 (1964) – "चेजिंग क्राप लैण्ड इन वेस्ट वंगाल", ज्याग्रफीकल रिव्यू आफ इण्डिया, 24 (1)

60. बक जे0 एल0 (1967) – "लैण्ड यूटिलाइजेशन इन चाइना" वाल्यूम 1, नानकिंग विश्वविद्यालय

61. बसु के0डी0 (1946) – "स्टउीज आन प्रोटीन, फैट एण्ड मिनरल मेटावोलिज्म इन इण्डिया" नई दिल्ली

62. बर्गीज, एनी एण्ड डीन (1962) – "माल न्यूट्रीशन एण्ड हैविट्स" बोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई

63. वरटन टी0एफ0 (1963) – "रैनफाल एण्ड राइस इन थाइलैण्ड" जरनल आफ ज्याग्रफी, बाल्यूम 62, पी0प 414–418

64. वारलो (1954) – " लैण्ड प्रोवलम्स एण्ड पोलिसीज" मैक हिल बुक कम्पनी, न्यूयार्क, पी0 99

65. वर्टन वेन्जामिन टी0 (1986) – "ह्यूमन न्यूट्रीशन" टाटा मैक ग्राहिल पब्लि0, नई दिल्ली

66. बीबर जे0 सी0 (1943) – "क्लाइमेटिक रीजन्स आफ अमेरिकन वारले प्रोडक्शन" ज्याग्रफीकल रिव्यू, वाल्यूम 23, पी0पी0 588–596

67. बियर्ड सी0 एन0 (1948) – " लैण्ड फार्मर्स एण्ड लैण्ड यूज, ईस्ट आफ मोनेटरी वे" इको0 ज्याग्रफी वाल्यू॰ 24

68. कुर्राड एस0 जी0 (1912) – "आन दि ओरीजिन आफ हिमालयाज माउण्टेन" ज्याग्रफीकल सर्वे आफ इण्डिया, प्रोफोशनल पेपर, नं0 12, कलकत्ता पी0 11

69. बुचमैन आर0 ओ0 (1958) – " सम रिलेसंस आन एग्रीकल्चरल ज्याग्रफी", वाल्यूम 44 पी0 5

70. बैनेट एम0 के0 (1060) – "ए वर्ल्ड मैप आफ फूड क्राप क्लाइमेट्स" फूड रिसर्च इन्स्टीट्यूट, वाल्यूम 1 पी0 पी0 285–295

71. वोहरा वी0 वी0 (1981) – " ए पालिसी फार लैण्ड एण्ड वाटर" सरदार मेमोरियल लेक्चर्स, 1980, मैनस्ट्रीट, जनवरी 3,1981

72. वंसल पी0 सी0 (1958) – "इण्डियन फूड रिसर्चेस एण्ड पापुलेशन" वोरा एण्ड कम्पनी, बम्बई

73. व्लैन फोर्ड एच0 एफ0 (1988) – "रैनफाल आफ इण्डिया" मेमो0 नं01, एम0डी0, वाल्यूम 3, पी0 130

74. भाटिया वी0 एम0 (1970) – " इण्डियन फूड प्रोवलम्स एण्ड पालिसीज सिंस इण्डिपेंडेन्स" वाम्बे

75. भाटिया एस0 एस0 (1967) – "ए न्यू मीजर्स आफ एग्रीकल्चरल इफीसेएन्सी इन यू0 पी0 इन इण्डिया" इकोनोमिक ज्याग्रफी 43 (3) 248

76. मजीद अब्दुल (1963) – " क्राप पैटर्न एण्ड साइज आफ कल्टीवेटिड होल्डिंग्स" इण्डियन जरनल आफ एग्री0 इको0, वाल्यूम 18, नं0 1, पी॰पी॰ 97-100

77. मन एच0 एच0 (1955) – " रैनफाल एण्ड फेमिन – ए स्टडी आफ रैनफाल इन वाम्बे" डकन 1865–1938, इण्डियन सोसायटी आफ एग्री0 इको0

78. मण्डल जी0 सी0 एण्ड घोस के॰ (1963) – " सम आसपेक्ट्स आफ दि इको0 आफ क्रापिंग पैटर्न" इण्डियन जरनल आफ एग्री0 इको0 वाल्यूम 18 नं0 1 पी0 पी0 74–83

79. मर्वट सी0 एफ॰ (1925) – " दि राइस डिकलाइन एण्ड रिवाइवल आफ मालथ्यूसियनिज्म इन रिलेशन टु ज्याग्रफी एण्ड करेक्टर आफ स्वाइल्स" एनल्स आफ दि एसोसिएसन आफ अमेरिकन ज्याग्रफर्स, वाल्यूम 15 पी0 पी0 1–15

80. माथुर पी0 एन0 (1963) – "क्रापिंग पैटर्न एण्ड इम्प्लायमेण्ट इन विदर्भ" इण्डियन जरनल आफ़ एग्री0 इको0 वाल्यूम 18, नं01, पी0 39

81. माल्या एम0 (1963) – " अरबनाइजेसन एण्ड क्रापिंग पैटर्न" इण्डियन जरनल आफ एग्री0 इको0, वाल्यूम 18, पी0 पी0 90–96

82. माल्या एम0 एण्ड गोपालन आर0 आर0 (1964) – " नेचर आफ रिस्क एसोसिएटिड विद रैनफाल एण्ड इट्स इफेक्ट आन फार्मिंग, कुर्नूल डिस्ट्रिक्ट" इण्डियन जरनल आफ एग्री0 इको0, वाल्यूम 19, वाम्वे, पी0 पी0 76–81

83. मामोरिया सी0 वी0 (1984) – "एग्रीकल्चरल प्रोवलम्स आफ इण्डिया" किताव महल इलाहाबाद, पी0 पी0 173–220

84. मिकसेल एम0 (1967) – " दि वार्डर लैण्ड्स आफ ज्याग्रफी एज ए सोसल साइंस इन सरीफ एम0 एण्ड सरीफ सी0 (इड) इण्टर डिसीप्लिनरी रिलेशनशिप इन दि सोसल साइंस," एल्डिन, शिकागो

85. मिथोर्पे एफ0 एल0 (1965)– " क्राप रिस्पोन्सेस इन रिलेशन टु दि फोरकास्टिंग आफ ईल्ड्स इन जानसन सी0 जी0 एण्ड स्मिथ एल0 पी0 (इड) दि वायलोजीकल सिग्नीफेकेंस आफ क्लाइमेटिक चेंज इन व्रिटेन" 119–28

86. मिश्रा आर0 एन0 – " उत्तर प्रदेश" वाराणसी, पी0 पी0 202–211

87. मैक ग्रेगर डी0 आर0 (1957) – " सम आवजर्वेशन्स आफ दि ज्याग्रफीकल सिगनीफीकेंस आफ स्लोप्स ज्या. वाल्यूम 42, पी.पी. 167-173

88. मेहता एम0 एम0 (1989) – " फार्म मेकनाइजेसन" दि हिन्दू सर्वे आफ इण्डियन एग्रीकल्चर

89. मुण्डर डब्लू0 जे0 (1966) " क्लामेटिक वैरिएसंस एण्ड एग्रीकल्चरल प्रोडक्शन इन न्यूजीलैण्ड," न्यूजीलैण्ड ज्याग्रफर, वाल्यूम 22 पी0 पी0 58–59

90. रन्धावा एम0 एस0 (1974) – " ग्रीन रिवोल्यूशन" विकाश पव्लिशिंग हाउस, दिल्ली

91. राज कृष्ण (1963) – " रिपोर्टियर्स रिपोर्ट आन इकोनोमिक्स आफ दि क्रापिंग पैटर्न" इण्डियन जरनल आफ एग्री0 इको0, वाल्यूम 18 नं0 1 पी0 पी0 170–78

92. राज कृष्ण (1963) – " दि आप्टीमैलिटी आफ लैण्ड लोकेशन – ए केश स्टडी आफ पंजाब" इण्डियन जरनल आफ एग्री0 इको0, वाल्यूम18 नं0 1, पी0 पी0 63 – 73

93. रामलिंगम सी0 (1963) – " क्राप पैटर्न एण्ड साइज आफ कल्टीवेटिड होल्डिंग्स" इण्डियन जरनल आफ एग्री0 इको0, वाल्यूम 18, नं0 1, पी0 160

94. रामा सुव्वन टी0 ए0 (1963) – " सम स्टेटिस्टीकल मीजर्स टु डिटरमाइन चेंजिंग इन क्रापिंग पैटर्न" एग्रील सिचुएशन इन इण्डिया, वाल्यूम 17, मार्च अप्रैल 1962–63

95. राव टी0 रामा कृष्ण (1965) – " ए नोट आन मेजरमेण्ट आफ शिफ्ट्स इन क्रापिंग पैटर्न विद रिफरेन्स टु डिस्ट्रिक्ट मद्रास" एग्री0 सिचुएशन्स इन इण्डिया, वाल्यूम 20 नं0 1, पी॰ 11

96. राव वी0 के0 आर0 वी0 (1982) – " फूड न्यूट्रीशन सिस्टम एण्ड डिफीसिएन्सीज इन रूरल एरिया आफ मध्य प्रदेश" रूरल सिस्टम, वाल्यूम 3, नं0 4, दिल्ली

97. राय वी0 के0 (1967) – " क्राप एसोसिएसन एण्ड चेंजिग पैटर्न आफ क्राप इन दि गंगा घाघरा दोआब" एन0 जी0 जे0 आई0, 13 (4) 194–207

98. रोज जे0 के0 (1936) – " कार्नईल्ड एण्ड क्लाइमेंट इन दि कार्न वेल्ड" ज्याग्रफीकल रिव्यू, वाल्यूम 26, पी0 पी0 88–101

99. रिपोर्ट (1977) – " नेशनल कमीशन आन एग्रीकल्चर एविज्ड" 1977, पी0 527

100. रिपोर्ट (1959) – "रिपोर्ट आन इण्डियन फूड क्राइसिस एण्ट स्टेप्स टु मीट इट दि एग्रीकल्चर प्रोडक्शन टीम, स्पोन्सोर्ड वाई दि फूड फाउण्टेशन, दि गवर्नमेण्ट आफ इण्डिया," पृष्ट 1–22

101. यू0एन0ओ0 – " नेचुरल रिसोर्सिज आफ डेवलपिंग कण्ट्रीज" पी0 4, क्वेटिड वाई वी0पी0 त्रिपाडी, भारतीय कृषि, पी0 9, 1992

102. शर्मा एस0 सी0 (1966) – " लैण्ड यूटीलाइजेशन इन सादावाद तहसील (मथुरा) यू0 पी0, इण्डिया," अप्रकाशित शोध ग्रन्थ, आगरा विश्वविद्यालय, पृष्ठ 2

103. सिंह जसवीर (1976) – " एन एग्रीकल्चरल ज्योग्रफी आफ हरियाना कुरुक्षेत्र", (1976) पी0 पी0 254 एण्ड 313–320

104. सिंह जसवीर (1994) – " एग्रीकल्चरल ज्योग्रफी" पृष्ठ 126–127, टाटा मैक ग्रहिल, नई दिल्ली

105. सिंह जसवीर (1972) – " ए न्यू टैक्नीक फार मजिरिंग एग्रीकल्चरल प्रोडक्टिविटी इन हरियाणा, इण्डिया" दि ज्योग्राफर–19, पी0पी0 14–33

106. सिंह वी0 आर0 (1986) – " पापुलेशन शोध एण्ड अवेविलिटी आफ फूट ग्रेन्स इन उत्तर प्रदेश" रूरल सिस्टम वाल्यूम–4 नं0 4 दिसम्बर

107. सिंह एस0पी0 (1991) – " पावर्टी फूड एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया" चुग पब्लिकेशन, इलाहाबाद

108. सिंह शुकदेव प्रसाद (1984) – " स्वास्थ्य और भोजन" हिन्द पाकेट वुक्स, दिल्ली

109. सिंह सीताराम (1986) – " हाऊ टु एम्प्रूव रूरल [illegible] फास्टर" योजना वाल्यूम 30, नं0 9, मइ 16–31

110. सिंह सुदामा (1994) – " भारतीय अर्थव्यवस्था समस्याएं और नीतियां", पी0 286-288, नीलकमल प्रकाशन, गोरखपुर

111. सिंह बी0वी0 (1988) – " कृषि भूगोल" पी0 पी0-33–34

112. सिंह ब्रजभूषण तथा सिंह गोविन्द (1974) – " शस्य सम्मिश्रण विधि अध्ययन में एक पुनर्विलोकन" उ0भा0 भू0 पत्रिका, गोरखपुर अंक 7, सं0 2, पी0 85–101

113. सिंह एस0पी0 (1987) – " पावर्टी फूड एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया" पब्लिश्ड इन 1919, चुग पब्लिकेशन, इलाहाबाद

114. सिंह सुदामा (1994) – " भारतीय अर्थव्यवस्था समस्याएं एवं नीतियां" नीलकमल प्रकाशन, गोरखपुर–269–70

115. सिंह हरपाल (1965) – " क्राप कम्बीनेशन रीजन इन मालवा ट्रेक्ट आफ पंजाब" डंकन ज्योग्रफर, वाल्यूम– 8, पी0 21–30

116. सिंह बी0वी0 (1973) – " क्रापिंग पैटर्न आफ बडौत ब्लाक" ज्यो0 आर्ब्जवर बाल्यूम– 9, पी0पी0 51– 60

117. स्टाम्प एल0डी0 (1962) – " दि लैण्ड आफ बिट्रेन इट्स यूजेज एण्ड मिसयूजेज" लन्दन

118. सापर एस0जी0 एण्ड देश पाण्डे (1964) – " इन्टर डिस्ट्रिक्ट वैरियेशन्स इन एग्रीकल्चर इपीसिइन्सी इन महाराष्ट्र स्टेट" इण्डियन जरनल आफ एग्रीकल्चर इकोनोमिक, वाल्यूम–19, नं0 पी0पी0 242–252

119. सिन्हा बी0एन0 (1968) – "एग्रीकल्चरल इफीसिएन्सी इन इण्डिया" दि ज्योग्राफर, वाल्यूम – 15 स्पेशल आई0 जी0 यू0 वाल्यूम

120. सपोजिन्कोवा एस0ए0 एण्ड शाश्को एस0आई0 (1960) – " एग्रो क्लाइमेटिक कण्डीशन आफ दि डिस्ट्रीव्यूशन एण्ड स्पेशलाइजेशन आफ एग्रीकल्चर" सोवियत ज्योग्रफी रिव्यू एण्ड ट्रान्सलेशन, वाल्यूम नं0 9, पी0 पी0 20–35

121. स्वामीनाथन एम0 (1983)– " ह्यूमन न्यूट्रीशन एण्ड डाइट" बैंकलौर प्रिंटिग एण्ड पब्लिशिंग कम्पनी, बैंगलौर

122. सफी एम0 (1984) – " फूड प्रोडक्शन एण्ड कन्जम्पशन इन डिवलपड एण्ड डिवलपिंग कन्ट्रीज" रूरल सिस्टम, वाल्यूम–11 नं0 4 दिसम्बर

123. सफी एम0 (1984) – " एग्रीकल्चरल प्रोडक्टिविटी एण्ड रीजनल इम्वैलेन्स" नई दिल्ली

124. सफी एम0 (1967) – " फूड प्रोडक्शन इफीसिएन्सी एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया" दि ज्योग्रेफर, वाल्यूम – 14 अलीगढ़

125. साजिद हुसैन (1972) – " एग्रीकल्चर माल न्यूट्रीशन एण्ड डिफीसिएन्सी, डिसीजेज इन रूरल यू0 पी0" दि इण्डियन–ज्योग्रेफी जरनल, वाल्यूम–16, जन0 मार्च नं0 1–2

126. सुखात्में पी0वी0 (1973) – " ह्यूमन कैलोरीज एण्ड प्रोटीन नीड्स एण्ड हाऊ दे आर सटिसफाइड" टूडे, लन्दन

127. स्वामीनाथन एम0 (1986) – " हैण्डवुक आफ फूड एण्ड न्यूट्रीशन" बैंग्लोर प्रिटिंग एण्ड पव्लिशिंग कम्पनी, बगलौर

128. सैण्डर्सन – " मैथड आफ क्राप फोर कास्टिंग" हार्बर्ड इकोनोमिक स्टडीज वाल्यूम 10 सी॰3

129. स्टैलिंग जे0एच0(1957) – " स्वाइल कन्जर्वेशन" प्रेन्टिल हाल, डान्क इन्गल्युवुड क्लिाफ्स एन0जे0 पी0 424

130. स्टाम्प एल0डी0 (1940) – " फर्टिलिटी, प्रोडक्टिविटी एण्उ क्लासीफीकेसन आफ लैण्ड इन ब्रिटेन" ज्योग्रेफी जरनल, वाल्यूम–114 (6)

131. सैनी जी0आर0 (1963) – " सम आसपेक्ट आफ चेन्जेस इन क्रापिंग पैटर्न इन वेस्टर्न यू0 पी0" एग्री सिचुएशन इन इण्डिया वाल्यूम–18, पी0 पी0 411–416

132. सफी एम0 (1972) – " मिजरमेन्ट आफ एग्रीकल्चरल प्रोडक्टिविटी आफ ग्रेट इण्डियन प्लेन्स" दि ज्योग्रेफर वाल्यूम 19, नं0 1, पी0 पी0 4–13

133. हिडोरे जे0जे0(1963) – " रिलेशनशिप विटवीन कैशग्रेन फार्मिंग एण्ड लैण्ड फार्म्स" इकोनोमिक ज्योग्रेफी वाल्यूम 39, पी 84–89

134. होर पी0एन0 (1964) – " रेनफाल राइस ईल्ड्स एण्ड इरीगेशन नीडस इन वेस्ट बंगाल" ज्योग्रेफी, वाल्यूम 49 पी0 पी0 114–21

135. हनुमन्तराव सी0एच0 – " साइंस एण्ड टेक्नोलोजी पालिस, इन, ओवर आल व्यू एण्ड ब्रीडर इम्लीकेशन इन एग्रीकल्चरल डिवलमेन्ट इन इण्डिया" इण्डियन सोसायटी आफ एग्रीकल्चर इकोनोमिक्स

136. ह्यूज एल॰(1965) – " कालेज आफ हीट फेल्योर इन दि ड्राई फार्मिंग रीजन, सेन्ट्रल ग्रेट प्लेन्स" 1939-1957, इकोनोमिक ज्योग्रेफी, वाल्यूम 41, पी0 पी0 313

137. हैरिस आर0सी0 (1966) – " दि सीन्यूरियल सिस्टम इन अर्ली कनाडा मैडीसन" पी0पी0 117–38

138. हुसैन मजीद (1978) – " ए न्यू एप्रोच टू दि एग्रीकल्चरल प्रोडक्टिविटी रीजन्स आफ दि सतलज, गंगा प्लेन्स आफ इण्डिया" जयोग्रेफिकल रिव्यू आफ इण्डिया, वाल्यूम 38 नं0 3, पी0 पी0 230–236

139. हुसैन मजीद (1960) – " पैटर्न आफ क्राप कन्सेन्ट्रेशन इन उत्तर प्रदेश" ज्योग्रेफिकल रिव्यू आफ इण्डिय वाल्यूम 32 ,नं0 3, पी0 169–185

140. त्रिपाठी वी0 पी0 (1992) – " भारतीय कृषि" किताव गहल, पी0 64 एवं पी0 215